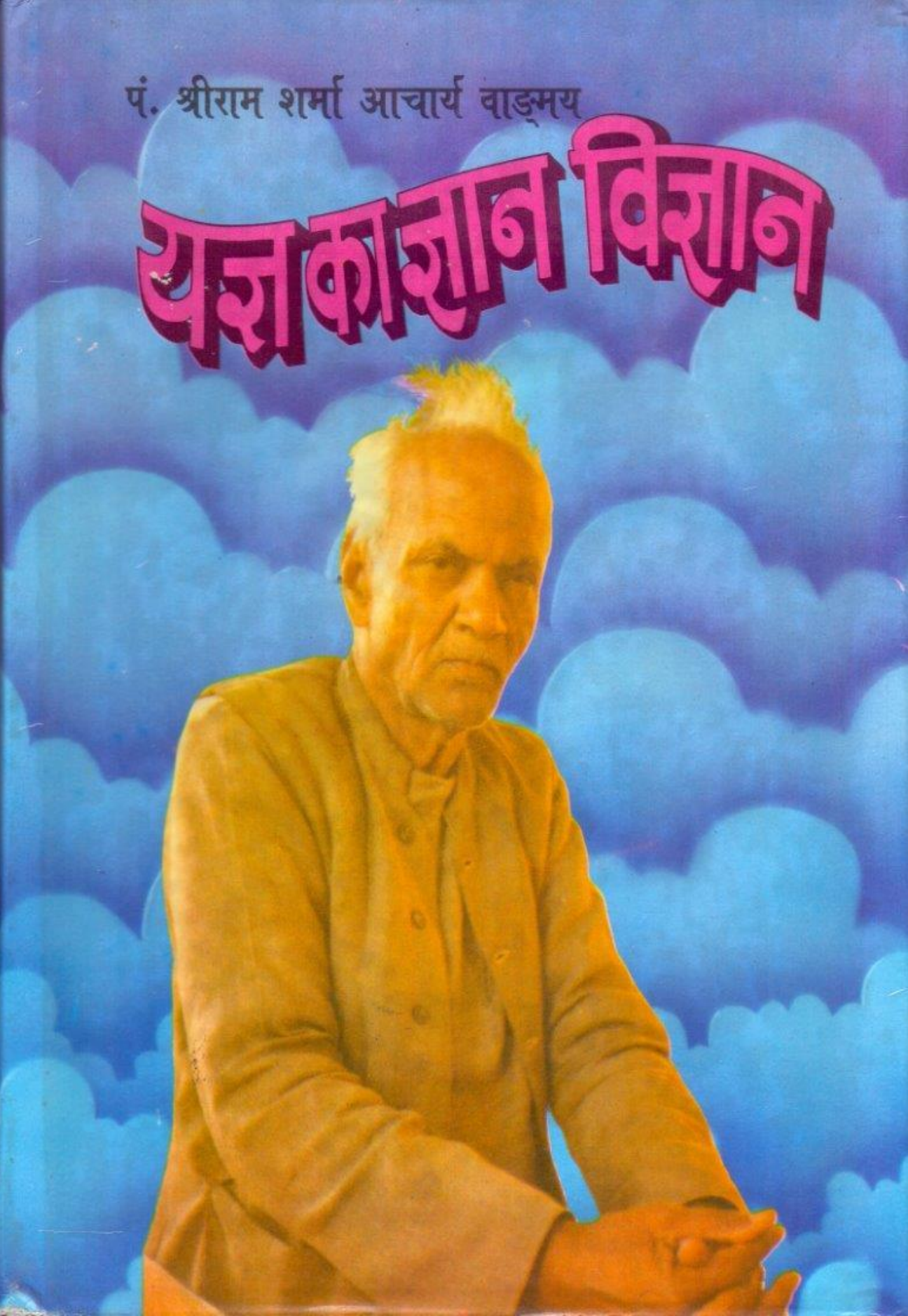
पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

यज्ञ का ज्ञान विज्ञान



www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान

सम्पादक
ब्रह्मवर्चस



प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान
मथुरा - २८१००३

© सर्वाधिकार सुरक्षित

द्वितीय संस्करण १९९८

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org



मूल्य १२५)

मुद्रक
जनजागरण प्रेस, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समर्पणम्

ॐ मातरं भगवतीं देवीं श्रीरामञ्च जगद्गुरुम् ।
पादपद्मे तयोः श्रित्वा प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥

मातृवत् लालयित्री च पितृवत् मार्गदर्शिका ।
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै श्रद्धा-प्रज्ञा युता च या ॥

भगवत्याः जगन्मातुः, श्रीरामस्य जगद्गुरोः ।
पादुकायुगले वन्दे, श्रद्धाप्रज्ञास्वरूपयोः ॥

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै गायत्रीरूपिणे सदा ।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ॥

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

असम्भवं सम्भवकर्तुमुद्यतं प्रचण्डझञ्झावृतिरोधसक्षमम् ।
युगस्य निर्माणकृते समुद्यतं परं महाकालममुं नमाम्यहम् ॥

त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भूमिका

इस समग्र सृष्टि के क्रियाकलाप 'यज्ञ' रूपी धुरी के चारों ओर ही चल रहे हैं । ऋषियों ने "**अयं यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः**" (अथर्व० ९.१५.१४) कहकर यज्ञ को भुवन की-इस जगती की सृष्टि का आधार बिन्दु कहा है । स्वयं गीताकार योगिराज श्रीकृष्ण ने कहा है-

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।

अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्ट कामधुक् ॥ ३/१०

अर्थात्- "प्रजापति ब्रह्मा ने कल्प के आदि में यज्ञ सहित प्रजाओं को रचकर उनसे कहा कि तुम लोग इस यज्ञ कर्म के द्वारा वृद्धि को प्राप्त होओ और यह यज्ञ तुम लोगों को इच्छित भोग प्रदान करने वाला हो ।" यज्ञ भारतीय संस्कृति के मनीषी ऋषिगणों द्वारा सारी बसुन्धरा को दी गयी ऐसी महत्वपूर्ण देन है, जिसे सर्वाधिक फलदायी एवं समग्र पर्यावरण केन्द्र इको सिस्टम के ठीक बने रहने का आधार माना जा सकता है ।

परम पूज्य गुरुदेव की लेखनी-संजीवनी से निकले वाङ्मय के इस खण्ड का एक-एक शब्द देव संस्कृति के दो मूलभूत आधार यज्ञ एवं गायत्री के विज्ञान सम्मत आधार- महाऊर्जा-गायत्री महामंत्र की शब्द-शक्ति एवं साधक की प्राण ऊर्जा के चमत्कारी परिणामों की महिमा को प्रतिध्वनित करता है । गायत्री यज्ञों की लुप्त होती चली जा रही परम्परा और उसके स्थान पर पौराणिक आधार पर चले आ रहे वैदिकी के मूल स्वर को पृष्ठभूमि में रखकर मात्र माहात्म्य परक यज्ञों की शृंखला को पूज्यवर ने तोड़ा तथा गायत्री महामंत्र की शक्ति के माध्यम से संपन्न यज्ञ के मूल मर्म को जन-जन के मन में उतारा । यह इस युग की क्रांति है । इसे गुरु गोरक्षनाथ द्वारा तंत्र साधना का दुरुपयोग करने वालों-यज्ञों को मखों-तांत्रिक यज्ञों के स्तर पर ही प्रयोग करने वालों के विरुद्ध की गयी क्रांति के स्तर से भी अत्यधिक ऊँचे स्तर की क्रांति माना जा सकता है कि आज घर-घर गायत्री यज्ञ संपन्न हो रहे हैं व सतयुग की वापसी का वातावरण स्वतः बनता चला जा रहा है ।

यज्ञ शब्द के अर्थ को समझाते हुए परमपूज्य गुरुदेव समग्र जीवन को यज्ञमय बना लेने को ही वास्तविक यज्ञ कहते हैं । "**यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबंधनः**" के गीता वाक्य के अनुसार वे लिखते हैं कि यज्ञीय जीवन जीकर किये गये कर्मों वाला जीवन ही श्रेष्ठतम जीवन है । इसके अलावा किये गये सभी कर्म बंधन का कारण बनते हैं व जीवात्मा की परमात्म सत्ता से एकाकार होने की प्रक्रिया में बाधक सिद्ध होते हैं । यज्ञ शब्द मात्र 'स्वाहा'- मंत्रों के माध्यम से आहुति दिये जाने के परिप्रेक्ष्य में नहीं किया जाना चाहिए, यह स्पष्ट करते हुए उनने इसमें लिखा है कि यज्ञीय जीवन से हमारा आशय है- परिष्कृत देवोपम व्यक्तित्व । वास्तविक देव पूजन यही है कि व्यक्ति अपने अंतः में निहित देव शक्तियों को यथोचित सम्मान देते हुए उन्हें निरन्तर बढ़ाता चले । **महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः** की मनुस्मृति की उक्ति के अनुसार सर्वश्रेष्ठ यज्ञ वह है, जिसमें व्यक्ति ब्रह्ममय-ब्राह्मणत्व भरा देवोपम जीवन जीते हुए स्वयं-को अपने शरीर, मन, अंतःकरण को परिष्कृत करता हुआ चला जाता है ।

यज्ञ परमार्थ प्रयोजन के लिए किया गया एक उच्चस्तरीय पुरुषार्थ है । अन्तर्जगत् में दिव्यता का समावेश कर प्राण की अपान में और अपान की प्राण में आहुति देकर जीवन रूपी समिधा को समाज रूपी यज्ञ में होम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

करना ही वास्तविक यज्ञ है। भावनाओं में यदि सत्प्रवृत्ति का समावेश होता चला जाय तो यही वास्तविक यज्ञ है । युग ऋषि ने यज्ञ की ऐसी विलक्षण परिभाषा कर वैदिक वाङ्मय के मूलभूत स्वर को ही गुंजायमान किया है । यज् धातु से बना यज्ञ शब्द देवपूजन, परमार्थ के बाद तीसरे अंतिम अर्थ 'संगतिकरण'-सज्जनों के संगठन, राष्ट्र को समर्थ सशक्त बनाने वाली सत्ताओं के एकीकरण के अर्थ में परिभाषित करता है ।

चौबीस अवतारों में एक अवतार यज्ञ भगवान भी है । यज्ञ हमारी संस्कृति का आराध्य इष्ट रहा है तथा यज्ञ के बिना हमारे किसी दैनन्दिन् क्रिया कलाप की कल्पना तक नहीं की जा सकती । यज्ञ का विज्ञान पक्ष समझाते हुए पूज्यवर ने बताया है कि सारी सृष्टि की सुव्यवस्था बनाये रखने के लिए यज्ञ प्रक्रिया कितनी महत्त्वपूर्ण है । देव तत्वों की तुष्टि से अर्थ है- सृष्टि संतुलन बनाये रखने वाली शक्तियों का पारस्परिक संतुलन । यज्ञ एक प्रकार का टैक्स है - कर है - देव सत्ताओं के प्रति इसे न देने पर जैसे राज्य-प्रशासन, जन समुदाय को दण्डित करता है, उसी प्रकार विभीषिकाएँ भिन्न-भिन्न रूपों में आकर सारी जगती पर अपना प्रकोप मचा देती हैं । दैवी प्रकोपों से बचने का वैज्ञानिक आधार है –यज्ञ ।

अपने इस प्रतिपादन की पुष्टि में परमपूज्य गुरुदेव ने यज्ञ की महिमा का वेदों में, उपनिषदों में, गीता में, रामायण में, श्रीमद्भागवत में, महाभारत में, पुराणों में, गुरु ग्रन्थ साहब आदि में कहाँ-कहाँ किस प्रकार वर्णन किया गया है- यह प्रमाण सहित विस्तार से इस खण्ड में दिया है । यज्ञ मात्र समस्त कामनाओं की पूर्त्ति का ही मार्ग नहीं है । **''यज्ञोऽयं सर्वकामधुक्''** अपितु जीवन जीने की एक श्रेष्ठतम विज्ञानसम्मत पद्धति है, यह जानने-समझने के बाद किसी भी प्रकार का संशय किसी के मन में भारतीय संस्कृति की अनादि काल से मेरुदण्ड रही इस त्यवस्था के प्रति नहीं रह जाता ।

- ब्रह्मवर्चस


www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
अध्याय-१	
गायत्री-यज्ञ : उपयोगिता और आवश्यकता	१.१
गायत्री और यज्ञ का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध	१.४
दैनिक जीवन में अग्निहोत्र की आवश्कता	१.८
गायत्री और यज्ञ अजस्र विभूतियों के भण्डार	१.११
गायत्री और यज्ञ का तत्वज्ञान	१.१५
ज्ञान और विज्ञान के शक्ति स्रोत गायत्री और यज्ञ	१.१७
अध्याय-२	
यज्ञ की अनिर्वचनीय महत्ता	२.१
यज्ञोऽयं सर्वकामधुक्	२.६
यज्ञो वै श्रेष्ठतम् कर्म	२.१०
जीवन को यज्ञमय बनाएँ	२.१०
अन्नं ब्राह्मे वेदः	२.१४
यज्ञ शब्द का अर्थ	२.१५
'यज्ञ' भारतीय दर्शन का इष्ट आराध्य	२.२०
यज्ञ विश्व का सर्वोत्कृष्ट दर्शन	२.२८
मनीषियों की दृष्टि में यज्ञ	२.३५
कल्याण का श्रेष्ठ मार्ग-यज्ञ	२.३९
जीवन यज्ञ की रीति-नीति	२.४३
सारा जीवन ही यज्ञमय बने	२.४४
हे पवित्र ! अपने को यज्ञ में झोंक दे	२.४६
यज्ञ द्वारा देवों का आवाहन	२.५१
देव-शक्तियों का सन्तुलन	२.५४
यज्ञ द्वारा देव-शक्तियों की तुष्टि	२.५६
यज्ञों से देव-तत्वों की परिपुष्टि	२.५९
यज्ञ से सम्पूर्ण जगत का पालन कैसे ?	२.६०
यज्ञपुरुष और उसकी महिमा	२.६४
हिन्दू धर्म में यज्ञों का स्थान तथा प्रयोजन	२.६७
वेदों में यज्ञ की महिमा	२.७१
उपनिषदों में यज्ञ-रहस्य का वर्णन	२.७७
गीता में यज्ञ की महिमा	२.७९
रामायण में यज्ञ-चर्चा	२.८०
श्रीमद्भागवत में यज्ञ माहात्म्य	२.८७
महाभारत में यज्ञ	२.९३
पुराणों में यज्ञ-माहात्म्य के कुछ प्रसंग	२.९६
सिख धर्म और यज्ञ-हवन	२.१०२
वेद में यज्ञों का वैज्ञानिक स्वरूप	२.१०२
यज्ञ से रोग निवृत्ति	२.१०४
यज्ञ से सूक्ष्म-शक्ति का प्रादुर्भाव	२.१०५
यज्ञ से परिपूर्ण वर्षा	२.१०६
प्राण-शक्ति की अभिवृद्धि	२.१०७
उत्तम सन्तान की प्राप्ति	२.१०८
पशुओं की परिपुष्टि	२.११०
अक्षय कीर्ति का विस्तार	२.११०
यज्ञ द्वारा मानिसक पवित्रता	२.१११
यज्ञ द्वारा श्रद्धा और मेधाबुद्धि की प्राप्ति	२.११२
यज्ञ द्वारा परमात्म दर्शन	२.११२
यज्ञ द्वारा मोक्ष की प्राप्ति	२.११३
अध्याय-३	
यज्ञ के विविध लाभ	
यज्ञ हवन से सुखों को खरीदते हैं	३.१
यज्ञ से सुसन्तति की प्राप्ति	३.४
शत्रु-संहार में यज्ञ का उपयोग	३.५
यज्ञ द्वारा पापों का प्रायश्चित	३.९
यज्ञ द्वारा तीर्थों की स्थापना	३.१२
यज्ञ से आत्म-शान्ति	३.१३
यज्ञ से स्वर्ग प्राप्ति	३.१७
त्रिशंकु की स्वर्ग यात्रा	३.१९
यज्ञ कर्त्ता ऋणी नहीं रहता	३.१९
यज्ञ द्वारा तीन ऋणों से मुक्ति	३.२०
यज्ञ-अनुष्ठान विभिन्न प्रयोजनों की पूर्ति	३.२१
सकाम यज्ञों का रहस्यमय विज्ञान	३.२५
यज्ञ द्वारा विश्व शान्ति की सम्भावना	३.२८
अध्याय-४	३.३८
विश्व कल्पतरु यज्ञ	
'यज्ञ' ज्ञान और विज्ञान का भाण्डागार	४.१
यज्ञ का महान तत्व ज्ञान	४.६
यज्ञोयत्र पराक्रान्तः	४.११
यह संसार यज्ञ है	४.१२
मानव समुदाय का सुसंगठित स्वरूप ही मनुष्य यज्ञ है	४.१२
मनुष्य का सुव्यवस्थित-जीवन ही चौथा यज्ञ है	४.१२
ब्रह्म-यज्ञ	४.१२
देव-यज्ञ	४.१४
पितृ-यज्ञ	४.१४
	४.१४

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
नृ-यज्ञ	४.१४
भूतबलि या वैश्वदेव-यज्ञ	४.१४
यज्ञों का विस्तृत क्षेत्र	४.१६
यज्ञों के प्रकार	४.१६
यज्ञों के विविध प्रकार	४.१९
विभिन्न प्रयोजनों के लिए विशेष यज्ञ	४.२४
अध्याय-५	
गायत्री यज्ञ विधान	५.१
यज्ञाग्नि की शिक्षा तथा प्रेरणा	५.१
यज्ञ और पशुबलि	५.२
यज्ञों पर असुरता के आक्रमण	५.७
असुरत्त्व से यज्ञ की रक्षा	५.११
यज्ञ महा अभियान की सम्भावित कठिनाइयाँ	५.१६
यज्ञों में सहयोग करना कर्तव्य है	५.१८
यज्ञ में रही हुई त्रुटियाँ	५.२०
यज्ञ में पालन करने योग्य नियम	५.२१
ब्रह्मदेव कृत सामूहिक यज्ञ	५.२२
भ्रान्तियों का निराकरण	५.२६
विरोध की उपेक्षा की जाय	५.२६
हवन सम्बन्धी कुछ आवश्यक बातें	५.२७
हवन-सामग्री	५.३२
समिधाएँ	५.३४
यज्ञ का मुहूर्त	५.३४
कुण्ड एवं मण्डप का निर्माण	५.३५
कुण्डों की रचना एवं भिन्नता का उद्देश्य	५.३८
कुण्ड और उनकी संख्या	५.४२
यज्ञशाला, यज्ञमण्डप और उसका निर्माण	५.४४
श्रौत और स्मार्त्त यज्ञों में प्रयुक्त यज्ञीय पदार्थ एवं पात्र-परिचय	५.४८
यज्ञ में मन्त्र-शक्ति के प्रखर प्रयोक्ता	५.६४
यज्ञ से सूक्ष्म संस्कार का समुद्भव	५.६९
यज्ञ-प्रयोजन में सुसंस्कारिता का समावेश	५.७२
अध्याय-६	
यज्ञीय-कर्मकाण्ड प्रकरण	६.१
हवनों का क्रम	६.१
बड़े हवनों में	६.२
छोटे हवन	६.२
अतिसंक्षिप्त हवन	६.२

विषय	पृष्ठ
यज्ञीय कर्मकाण्ड प्रकरण (कर्मकाण्ड प्रारम्भ)	६.२
साधनादि पवित्रीकरण	६.४
यज्ञ संचालन	६.४
मंगलाचरण	६.४
पवित्रीकरण	६.४
आचमन	६.५
शिखा-बन्धन	६.५
प्राणायाम	६.५
अभिसिंचन	६.६
अघमर्षण	६.६
न्यास	६.६
पृथ्वी-पूजन	६.७
संकल्प	६.८
यज्ञोपवीत परिवर्तन	६.८
चन्दन धारण	६.८
अथ वरण	६.९
आचार्य प्रार्थना	६.९
ब्रह्मावरण	६.९
ऋत्विग्वरण	६.१०
रक्षा-सूत्र	६.१०
कलश-स्थापना	६.११
दीपपूजन	६.१३
गणेश-गौरी पूजन	६.१३
पुरुष-सूक्तम्	६.१४
षोडशोपचार देव पूजन	६.१५
पंचोपचार	६.१७
षोडशोपचार पूजन	६.१७
पुल्लिंग रूप से षोडशोपचार पूजन	६.१७
स्त्री रूप से षोडशोपचार पूजन	६.१८
अथ नवग्रह स्थापना-पूजन	६.२०
प्रार्थना	६.२२
गायत्री-आवाहन	६.२२
गायत्री अष्टक	६.२२
छः दिशाओं में देव स्थापन एवं पूजन	६.२३
देवों का आवाहन	६.२४
सर्व देव नमस्कार	६.२७
पंचवेदी स्थापना	६.२७

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
अथ अन्तरिक्ष सूक्तम् (प्रधान वेदी)	६.२८
अथ अग्नि सूक्तम् (अग्नि कोण)	६.२९
अथ वरुण सूक्तम् (नैऋत् कोण)	६.२९
अथ वायु सूक्तम् (वायव्यकोण में)	६.२९
अथ भू सूक्तम् (ईशान में)	६.२९
स्विष्टकृत भोग	६.३०
सर्वदेव-स्थापन के लिए सर्वतोभद्रचक्र मण्डल वाह्यक श्वेतपरिधौ उत्तरादि क्रमेण	६.३०
गदाद्यष्टायुध देवता स्थापनम् मण्डल बाह्ये रक्तपरिधौ उत्तरादिक्रमेण	६.३५
गौतमाद्यष्ट देवता स्थापनम् मण्डल वाह्ये कृष्णपरिधौ पूर्वादिक्रमेण	६.३६
ऐन्द्र आदिअष्टदेवता स्थापनम्	६.३७
लघु-सर्वतोभद्र-मण्डल पूजन	६.३८
स्वस्ति-वाचन	६.४१
रक्षाविधान	६.४२
पंच भू संस्कार	६.४३
कुण्ड प्रतिष्ठा एवं मेखला पूजन	६.४४
प्रथम मेखला (ब्रह्मा, रंग, सफेद) का पूजन मन्त्र	६.४५
मध्यमेखला पूजन मन्त्र (देवता विष्णु, रंग लाल)	६.४५
अन्तिम मेखला पूजन मन्त्र (देवता रुद्र, रंग काला)	६.४५
पंचामृत	६.४५
कुश-कण्डिका	६.४७
अत्र वा ब्रह्मावरणं कुर्यात्	६.४७
ततो ब्रह्मा वृतोऽस्मि	६.४८
ततो वर्हिषापरिस्तरणम्	६.४८
प्रोक्षण	६.४९
अग्नि स्थापना एवं पूजन	६.५०
स्तवन पाठ	६.५१
अग्नि प्रदीपनम्	६.५२
समिधाधान	६.५२
जल प्रसेचन	६.५३
आज्याहुति	६.५३
पंचवारुणी होम	६.५४
नवग्रहाणां होम	६.५४
नवग्रहाऽधि देवता होम	६.५४
नवग्रह प्रत्यधि देवता होम	६.५५
पंच लोकपाल होम	६.५५
दशदिक्पाल होम	६.५६
सर्वतोभद्र मण्डल देवता होम	६.५६
प्रधान देव का होम गायत्री की आहुति	६.५७
स्विष्टकृत होम	६.५७
पूर्णाहुति होम	६.५८
वसोर्धारा	६.५८
बर्हिहोम	६.५८
ततो ब्रह्मग्रन्थि विमोकः	६.५८
तर्पण	६.५८
नीराजन आरती	६.५९
घृत-अवघ्राण	६.५९
भस्म-धारण	६.६०
क्षमा-प्रार्थना	६.६०
साष्टांग-नमस्कार	६.६०
शुभकामना	६.६०
शान्ति अभिसिंचन	६.६१
पुष्पाजंलि	६.६१
सूर्यार्घ्य दान	६.६१
प्रदक्षिणा	६.६२
दिक्पालों को बलिदान	६.६२
बलिदान क्रिया	६.६७
बुराइयाँ	६.६७
अच्छाइयाँ या सद्गुण	६.६७
बलिदान-संकल्प	६.६७
क्षमा-प्रार्थना	६.६८
यज्ञ भगवान की स्तुति	६.६८
विसर्जन	६.६८
अथाऽभिषेकः	६.६९
तिलक एवं फलदान	६.६९
दक्षिणावाद का स्वरूप	६.७०
अध्याय-७	
दैनिक उपासना में अग्निहोत्र का समावेश	७.१
सरल संक्षिप्त हवन-विधि	७.१
पवित्रीकरण	७.१
आचमनम्	७.१

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
प्राणायम मन्त्र	७.१
न्यासः	७.२
पृथ्वी पूजनम्	७.२
कलश पूजनम्	७.२
देव पूजनम्	७.२
सर्वदेव नमस्कारम्	७.३
षोडशोपचार पूजनम्	७.३
स्वस्तिवाचनम्	७.३
रक्षा विधानम्	७.४
अग्नि स्थापनम्	७.४
गायत्री-स्तवन	७.४
अग्नि प्रदीपनम्	७.५
समिधाधानम्	७.५
जल प्रसेचनम्	७.५
आज्याहुति होमः	७.५
स्विष्टकृत होमः	७.५
पूर्णाहुति	७.५
आरती	७.६
घृत अवघ्राण	७.६
भस्म धारण	७.६
क्षमा-प्रार्थना	७.६
साष्टांग नमस्कार	७.६
शुभकामना	७.६
अभिसिंचनम्	७.६
आरती गायत्री जी की	७.७
यज्ञ की महिमा	७.७
अर्घ्यदान	७.७
प्रदक्षिणा	७.८
विसर्जनम्	७.८
अध्याय-८	
आर्यसमाज की हवन पद्धति	८.१
ईश्वर स्तुति-प्रार्थनोपासना मन्त्राः	८.१
अथ शान्ति प्रकरणम्	८.२
आचमन मन्त्राः	८.३
अंग स्पर्शः	८.३
कार्यारम्भ	८.४
अग्न्याधानम्	८.४
अग्नि प्रदीपनम्	८.४
समिधाधानम्	८.४
घृत सिंचनम्	८.४
जल प्रसेचनम्	८.४
होमाहुति	८.४
आधारावाज्याहुति	८.५
आज्याभागाहुति	८.५
प्रातःकाल हवन मन्त्राः	८.६
सायंकाल हवन मन्त्राः	८.६
गायत्री मन्त्रः	८.६
पूर्णाहुति	८.६
अध्याय-९	
गायत्री यज्ञों की विधि-व्यवस्था	९.१
यज्ञ का आध्यात्मिक स्वरूप	९.१
मानव प्रगति का मूलतत्त्व	९.१
सुख शान्ति की आधारशिला	९.२
विकृतियों का निवारण	९.२
संसार की सर्वोत्तम सेवा	९.३
अग्निहोत्र के लाभ	९.३
वैज्ञानिक आधार	९.४
पुरोहित की मार्मिक शिक्षा	९.४
लोक-शिक्षण का प्रखर माध्यम	९.५
आन्दोलनात्मक व्यापक प्रयत्न	९.६
क्रियाकृत्य की विधि-व्यवस्था	९.७
उपयोगिता ध्यान में रखी जाय	९.८
इन बातों का स्मरण रखें	९.८
इन प्रवृत्तियों को पनपाया जाय	९.८
बलिदान की तैयारी	९.९
गायत्री यज्ञों के स्मारक	९.१०
अवांछनीय मूढ़ताएँ न अपनायें	९.१०
युग निर्माताओं का प्रशिक्षण	९.११
भावनाओं का परिष्कार-मूल प्रयोजन	९.११
अध्याय-१०	
गायत्री यज्ञों की विधि व्याख्या	१०.१
जलयात्रा	१०.४
यज्ञशाला-प्रवेश	१०.४
पवित्रीकरण	१०.४
आचमन	१०.५
शिखा बन्धन	१०.५

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
प्राणायाम	१०.५	अग्नि स्थापना	१०.११
न्यास	१९.५	गायत्री स्तवन	१०.११
पृथ्वी-पूजन	१०.६	अग्नि प्रदीपन	१०.११
यज्ञोपवीत-धारण	१०.६	समिधाधान	१०.११
वरण	१०.६	जल-प्रसेचन	१०.११
संकल्प	१०.७	आज्याहुति होम	१०.१२
दीपपूजन	१०.७	गायत्री मन्त्र की आहुतियाँ	१०.१२
कलशपूजन	१०.७	स्विष्टकृत भोग	१०.१२
पंच वेदी स्थापना	१०.७	बलिदान संकल्प	१०.१२
सर्वतोभद्र मण्डल पूजन	१०.८	स्विष्टकृत होम	१०.१३
षोडशोपचार पूजन	१०.८	पूर्णाहुति	१०.१३
पंचवेदी पूजन	१०.९	वसोधारा	१०.१३
सामान्य देव पूजन	१०.९	आरती	१०.१३
नमस्कार	१०.९	घृत-अवघ्राण	१०.१३
पौराणिक षोडशोपचार और नमस्कार	१०.९	भस्म-धारण	१०.१३
चन्दन-धारण	१०.९	क्षमा-प्रार्थना	१०.१३
स्वतिवाचन	१०.९	साष्टांग नमस्कार	१०.१४
रक्षा-विधान	१०.१०	शुभकामना	१०.१४
पंचभू संस्कार	१०.१०	मन्त्र-पुष्पाजंलि	१०.१४
कुण्ड-प्रतिष्ठा	१०.१०	अभिसिंचन	१०.१४
मेखला-पूजन	१०.१०	सूर्य अर्घ्यदान	१०.१४
कुश-कण्डिका	१०.१०	प्रदक्षिणा	१०.१४
प्रोक्षण	१०.११	सत्संकल्प पाठ	१०.१४



Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गायत्री- यज्ञ : उपयोगिता और आवश्यकता

गायत्री और यज्ञ का युग्म है । एक को भारतीय संस्कृति की जननी और दूसरे को भारतीय धर्म का पिता कहा गया है । दोनों अन्योन्याश्रित माने गये हैं। गायत्री-जप का अनुष्ठान,यज्ञ का समन्वय हुए बिना पूरा नहीं हो सकता । जप का एक अंश हवन भी करना होता है । पुराने समय की सुविधा सम्पन्न स्थिति में जप का दशांश हवन होता था, अब समय को देखते हुए शतांश आहुतियों की व्यवस्था है । इसके बिना अनुष्ठान पूरा नहीं माना जाता । जिनके पास साधन नहीं है, उनके लिए विशेष मार्ग यह निकाल दिया गया है कि वे जप की संख्या का दशांश भाग अलग से जप कर लें और उसे यज्ञ की स्थान-पूर्ति मान लें । इस विकल्प-प्रतिपादन में यज्ञ की उपेक्षा नहीं, वरन् अनिवार्यता बताई गई है, भले ही वह सही रूप से सम्पन्न न हो सकी हो और अपवाद की तरह ही अतिरिक्त जप के रूप में क्यों न अपनाई गई हो ।

जनक और याज्ञवल्क्य का संवाद यज्ञ के साधन न मिल सकने के सन्दर्भ में हुआ है । जनक कठिनाइयाँ बताते रहे हैं और याज्ञवल्क्य उसके लिए आपत्तिकालीन सुझाव बताते हुए अनिवार्यता पर ही जोर देते रहे हैं । जनक पूछते हैं, यदि हव्य चरु सामग्री न मिल सके तो क्या करें? उत्तर में कहा गया है कि नित्य खाये जाने वाले अन्न से ही काम चला लें । अन्न भी न हो तो? वनस्पतियों से काम चला लें । वनस्पतियाँ भी न मिल सकें तो ? मात्र समिधाओं का ही हवन कर लिया जाय । अग्नि ही न मिले तो ? श्रद्धा रूपी अग्नि में ध्यान-भावना की सामग्री होमकर मानसिक हवन कर लिया जाय । यही है उपर्युक्त संवाद के विस्तार का सार-संक्षेप ।

इससे सिद्ध किया गया है कि गायत्री जप के साथ यज्ञ-कर्म की भी अनिवार्य आवश्यकता है । अनुष्ठानों में तो दोनों परस्पर सम्बद्ध ही हैं । गायत्री जप एवं पंच यज्ञ आवश्यक कृत्य हैं । सभी जानते है कि उपासना कृत्य में बलिवैश्व विधि भी जुड़ी हुई है, जिसका अर्थ होता है-संक्षिप्त हवन । कठिनाई के दिनों में यह बलि वैश्व इतना संक्षिप्त हो गया था कि महिलायें चूल्हे में से अग्नि निकालकर उस पर प्रथम सिकी रोटी के पाँच कण गायत्री मन्त्र का पाँच बार उच्चारण करते हुए हवन कर लेती थीं । नैष्ठिक उपासक भी ऐसा ही करते थे । वे भोजन के समय सामने परोसे भोजन के पाँच छोटे-छोटे ग्रास पास में अग्नि मँगाकर, हवन कर लिया करते थे । अब भी यह परम्परा जहाँ-तहाँ जीवित है । युग निर्माण मिशन द्वारा इस संक्षिप्त परम्परा को पुनर्जीवित करने का प्रयत्न किया जा रहा है ।

भारतीय परम्पराओं के प्रचलन में तत्त्वदर्शी ऋषियों ने बुद्धिमत्ता, सूक्ष्म दृष्टि, उपयोगिता एवं तथ्य स्थिति को पग-पग पर ध्यान में रखकर ही कदम उठाये हैं । धर्मकृत्यों में यज्ञ को प्राथमिकता देते हुए भी उनने अनेकानेक तथ्यों को ध्यान में रखा है । उपयोगिता रहित प्रचलन वे कर ही नहीं सकते थे । प्रमुखता देने के क्रम में भी उन्होंने किसी कृत्य की प्रतिक्रिया और उपलब्धि को ही ध्यान में रखा है । यज्ञ को धर्मकृत्यों में प्रधानता मिलने में भी उसकी भौतिक एवं आत्मिक उपलब्धियों को ही ध्यान में रखा गया है ।

शास्त्रों में भगवान् का एक नाम 'यज्ञ-पुरुष' भी है । शतपथ की 'यज्ञो वै विष्णु' श्रुति में यज्ञ को निश्चित रूप से विष्णु ही माना गया है । ऋग्वेद के आरम्भ में यज्ञ को मार्गदर्शक, पुरोहित, सद्गुरु बताया गया है । भजन करने वाले को 'देव' संज्ञा देते हुए उस कृत्य की प्रतिक्रिया को रत्न राशि की उपमा दी गई है । वेद वाङ्मय में जितना प्रकाश यज्ञ-विद्या पर डाला गया है और यज्ञादि का जितना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

महात्म्य बताया गया है,उतना और किसी का नहीं । **अग्ने नय सुपथा राये.....** । ऋचा में इस सर्व-समर्थ शक्ति से सन्मार्ग पर घसीट ले चलने की अभ्यर्थना है । गायत्री मन्त्र के **धियो यो नः प्रचोदयात्** भाग का यही अभिप्राय है ।

सामान्य जीवन के परम्परागत धर्म-कृत्यों में यज्ञ अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है । जन्म से लेकर मरण तक षोडश-संस्कारों का विधान है । ये सभी यज्ञ परक हैं । यज्ञ के बिना इनमें से एक भी संस्कार सम्पन्न नहीं हो सकता । यज्ञोपवीत का तो नाम ही यज्ञ की प्रधानता का बोधक है । गायत्री की भावना और यज्ञ की क्रिया का समन्वित रूप ही यज्ञोपवीत है । विवाह-संस्कार में यज्ञ की वर-वधू द्वारा परिक्रमा किया जाना एक प्रधान कृत्य है । भाँवरें फिरना ही विवाह की दृश्य घोषणा है । अन्तिम संस्कार अन्त्येष्टि है । चिता को विशुद्ध रूप से बड़ी आकृति का यज्ञ ही समझा जा सकता है । उसे पूरे या अधूरे विधान के अनुसार किसी प्रकार क्यों न जलाया जाय, यज्ञ से सम्बन्धित कितने ही नियम उसमें पलते हैं । पूर्णाहुति के रूप में कपाल-क्रिया घृत आहुति के साथ सम्पन्न की जाती है ।

वार्षिक यज्ञ, होली, का प्रचलन अभी भी किसी न किसी रूप में सर्वत्र पाया जाता है । देवी-देवताओं की पूजा में किसी न किसी रूप में हवन अवश्य ही जुड़ा रहता है । न्यूनतम विधान के रूप में अगरबत्ती और दीपक जलाकर सामान्य पूजा विधान में यज्ञ कृत्य की चिह्न पूजा कर ली जाती है । अगरबत्ती को हवन सामग्री का और दीपक को घृत आहुति का प्रतीक मान लिया जाता है । शुभ कर्मों के शुभारम्भ में यज्ञ का कोई न कोई रूप अवश्य ही बनता है । भले ही वह मोमबत्तियाँ-धूपबत्तियाँ जलाने जैसी प्रथाओं के रूप में ही क्यों न कर लिया जाता है ।

विचारणीय यह है कि हमारी महान् सांस्कृतिक परम्परा में यज्ञ कर्म को ऐसी प्रमुखता क्यों मिली ? उत्तर प्राप्त करने के लिए जितनी गहराई में उतरा जाता है-जितना अन्वेषण अध्ययन किया जाता है, उतनी ही रहस्यमय परतें खुलती चली जाती हैं और प्रतीत होता है कि इस प्रचलन में ज्ञान और विज्ञान का पूरी तरह समावेश है । आत्मिक और भौतिक प्रगति के सभी तथ्य इसमें बीज रूप में विद्यमान हैं । व्यक्ति और समाज की सुख-शान्ति के अति महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों का प्रशिक्षण इस पुण्य प्रक्रिया के माध्यम से भली प्रकार किया गया है ।

यज्ञ का भावार्थ है-परमार्थ, उदार कृत्य । संस्कृति की यज् धातु से यज्ञ शब्द बना है, जिसके तीन अर्थ होते हैं-(१) देवत्त्व (२) संगठन (३) दान । इन तीनों ही प्रवृत्तियों को व्यक्ति और समाज के उत्कर्ष की दिव्य धारायें कहा जा सकता है । देवत्त्व का अर्थ है-परिष्कृत व्यक्तित्त्व, दैवी सद्गुण । संगठन अर्थात् एकता, सहकारिता, संघबद्धता । दान अर्थात् समाज परायणता, विश्व कौटुम्बिकता, उदार सहृदयता । इन तीन प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्त्व 'यज्ञ' करता है । उसे इन विविध प्रतिपादनों की ज्वलंत प्रतिमा धवल ध्वजा कहा जा सकता है । ज्ञानयज्ञ की लाल मशाल को इसी यज्ञाग्नि का प्रतिनिधि समझा जा सकता है । विचार क्रान्ति को, ऋतम्भरा प्रज्ञा को, गायत्री की प्राण प्रतिष्ठा कहा जा सकता है। यज्ञ अभियान में सद्भावनाओं को सत्कर्मों के रूप में परिणत करने की प्रेरणा है । ज्ञान और कर्म का समन्वय ही प्रगति का आधार खड़ा करता है । सत्कर्म को तप और सद्ज्ञान को योग कहा गया है। आत्मिक प्रगति के ये आधार हैं । भौतिक प्रगति के लिए भी श्रम और शिक्षा को ही प्रधान माना गया है । इनमें गायत्री और यज्ञ के सिद्धान्तों को झाँकते हुए देखा जा सकता है ।

जीवन यज्ञ का तत्त्वज्ञान ही व्यक्ति को महान् बनाता है । विराट् ब्रह्म की कल्पना के साथ-साथ यज्ञावशिष्ट ही खाने का निर्देश है । जो दिये बिना खाता है, सो चोर है । देवताओं ने यज्ञ में देवत्त्व प्राप्त किया जैसी सूक्तियाँ मिलती हैं । इन प्रतिपादनों में समाज-परायणता की प्रेरणा है । संक्षेप में यज्ञदर्शन-व्यक्तिगत जीवन में चरित्रनिष्ठा और लोक व्यवहार में समाज निष्ठा के आदर्श को अपनाये जाने की प्रेरणा देता है । व्यक्ति और समाज की सर्वतोमुखी प्रगति और सुख-शान्ति का यही एक मार्ग है ।

यज्ञ की प्रतीक प्रतिमा में सन्निहित सूक्ष्म प्रेरणाओं की व्याख्या करते हुए व्यक्ति को पवित्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और समाज को समर्थ बनाने का लोक-शिक्षण जितनी अच्छी तरह दिया जा सकता है, वैसा अन्य किसी धर्मकृत्य के माध्यम से सम्भव नहीं हो सकता। यज्ञाग्नि की कितनी ही विशेषतायें हैं । यथा (१) सदा ऊँचा सिर रखना-कैसा भी दबाव पड़ने पर भी शिर नीचे न झुकाना । (२) जो भी सम्पर्क में आये उसे अपने समतुल्य बना लेना । (३) जो मिले, उसका संचय न करके विश्व वसुधा के लिए बिखेर देना । (४) अपने अस्तित्त्व में गरमी और रोशनी की कमी न पड़ने देना । (५) अपनी सामर्थ्य को लोकहित में नियोजित किये रहना आदि । यज्ञाग्नि ऋग्वेद के अनुसार ईश्वर प्रेरित पुरोहित है और वाणी के मूक रहने पर भी अपनी गतिविधियों से सर्वसाधारण को समग्र प्रगति और सुख-शान्ति की प्रेरणा देता रहता है । इन पाँचों विभूतियों का महत्त्व समझने और प्रेरणाओं को व्यवहार में उतारने का लोक-शिक्षण यदि ठीक तरह दिया जा सके तो मनुष्य में देवत्त्व के उदय और धरती पर स्वर्ग के अवतरण की प्राचीनकाल जैसी सतयुगी परिस्थितियाँ भी फिर उत्पन्न हो सकती हैं । तिरंगे झण्डे में लगे हुए तीन रंगों की व्याख्या राष्ट्रीय प्रगति के आधारभूत तीन सिद्धान्तों के रूप में की जाती रही है । यज्ञाग्नि की उपरोक्त पाँच प्रेरणाओं की यदि भावभरी, बुद्धि संगत व्याख्या की जा सके तो उसमें व्यक्ति एवं समाज के विभिन्न पक्षों पर लागू होने वाले कितने ही पंचशीलों के साथ तालमेल भली प्रकार बैठ जाता है । युग-परिवर्तन के लिए, उज्ज्वल भविष्य संरचना के लिए जनमानस में इन्हीं आदर्शों की प्रतिष्ठापना की जाती है ।

कहा गया है-देवताओं ने 'यजन' करके देवत्त्व प्राप्त किया । कहा गया है कि नर-पशु में ब्राह्मणत्त्व का उदय यज्ञ कार्य से ही होता है । ब्राह्मण के छः कर्मों में एक-तिहाई योजना यज्ञ करने और यज्ञ कराने की है । इन प्रतिपादनों में परोक्ष रूप से पवित्रता और प्रखरता के उन तथ्यों की गरिमा बताई गई है जो यज्ञ कृत्य के प्राण और विश्व शान्ति के आधार हैं । व्यक्ति और समाज का, प्रकृति और सृष्टि का सारा क्रम यज्ञ चक्र की धुरी पर ही परिभ्रमण कर रहा है । उदार सहयोग का यज्ञ-दर्शन ही सर्वत्र सजीवता, सुव्यवस्था, प्रगतिशीलता और सुख-शान्ति की परिस्थितियाँ बनाये हुए है । शरीर के अवयव एक-दूसरे के साथ सघन सहयोग करते हैं, तभी जीवन-रथ चलता है । यदि उनमें संकीर्णता, स्वार्थपरता घुस पड़े, आपा-धापी पर उतर आयें और सहयोग से जी चुरायें तो फिर जीवन-यात्रा एक दिन भी न चल सकेगी । जल चक्र स्पष्ट है-समुद्र से बादलों को, बादलों से धरती को, धरती से नदियों को, नदियों से समुद्र को जल मिलता है । इस जल-चक्र में कहीं भी व्यवधान पड़ेगा, तो धरती तवे की तरह जलने लगेगी । प्राणि-चक्र में, वनस्पति को प्राणी खाते हैं । प्राणियों के मल-मूत्र से वनस्पति को खुराक मिलती है । दोनों अन्योन्याश्रित हैं । पेड़ों से छोड़ी ऑक्सीजन प्राणियों का आहार है । प्राणियों की छोड़ी कार्बन-डाई-आक्साइड पर पेड़ों का जीवन निर्भर है । पशुओं और मनुष्यों के बीच भी ऐसा ही उदार सहयोग है । यही यज्ञ-प्रवृत्ति है, जिसके सहारे विश्व-चक्र घूमता है । इसी को अपनाकर मनुष्य को सामान्य प्राणियों से अधिक ऊँचा उठने का अवसर मिला है । जब इस आदर्श की उपेक्षा होने लगती है, तो संसार में असंख्य संकट खड़े होते हैं । इन सत्प्रवृत्तियों को ठीक तरह अपनाने पर हर समस्या का सरल समाधान निकल आता है मानव-कल्याण और यज्ञीय आदर्शों को एक ही तथ्य के दो पक्ष कह सकते हैं । इसी से गीताकार ने कहा है कि प्रजापति ने यज्ञ और मनुष्य को साथ-साथ सृजा और कहा कि दोनों के बीच सघन सम्बन्ध रहेगा तो सुख-शान्ति की कमी न रहेगी । विश्व-कल्याण के इस महान् सिद्धान्त को यज्ञीय तत्त्वज्ञान कहा गया है और उसका लोकशिक्षण करने के लिए अग्निहोत्र को प्रतीक उपचार के रूप में प्रमुख धर्मकृत्य का सम्मान दिया गया है ।

यज्ञ का भौतिक विज्ञान भी है । वायु-शोधन की दुर्गन्ध को सुगन्ध से दमन करने की-यह प्रक्रिया मनुष्य की सबसे बड़ी खुराक, प्राण-वायु के परिशोधन में महत्त्वपूर्ण योगदान करती है । आज जब वायु प्रदूषण की समस्या विश्व-संकट का रूप धारण करती जा रही है, तो परिशोधन के प्रमुख अस्त्र यज्ञोपचार को फिर से प्रखर बनाना होगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रोग-कीटाणुओं को मारने की जितनी शक्ति यज्ञ ऊर्जा में है, उतनी सरल, व्यापक और सस्ती पद्धति अभी तक नहीं खोजी जा सकी है । यज्ञ में प्राचीन काल में शारीरिक व्याधियों और मानसिक आधियों के खोये पृष्ठ यदि फिर से ढूँढ़े जा सकें और इस विज्ञान को नये सिरे से सुव्यवस्थित किया जा सके, तो ऐसे सत्परिणामों की पूरी-पूरी सम्भावना है कि शारीरिक ही नहीं मानसिक रोगों का भी सफल उपचार किया जा सकता है । चिकित्सा पद्धतियों में यज्ञ-चिकित्सा को इसलिए वरिष्ठता मिल सकती है कि ओषधियों को सूक्ष्मतम वायुभूत बनाकर शरीर में अत्यन्त सरलता से पहुँचाया जा सकता है । ओषधि-उपचार में स्थूल प्रक्रिया अपनाये जाने के कारण इतनी गहरी पैठ इतनी जल्दी नहीं हो सकती। आज की गणना का पर्यवेक्षण करने से प्रतीत होता है, कि शारीरिक रोगों से भी अधिक खर्च विक्षिप्तता, सनकें, बुरी आदतें, अपराधी प्रवृत्तियाँ, उच्छृंखलता, आवेशग्रस्तता, अचिन्त्य चिन्तन, दुर्भावना जैसी मानसिक व्यथाएँ मनुष्य को कहीं अधिक दु:ख दे रही हैं और विपत्ति का कारण बन रही हैं । इस संकट का निवारण यज्ञोपचार का सुव्यवस्थित रूप बन जाने पर भली प्रकार से भी किसी न किसी रूप में शारीरिक और मानसिक व्याधियों के समाधान में बहुत कुछ सहायता मिलती है ।

यज्ञ-प्रक्रिया का समष्टिगत व्यापक प्रभाव पर्जन्य वर्षा के रूप में होता है । पर्जन्य का मोटा अर्थ होता है-बादल । सूक्ष्म अर्थ होता है-प्राण-वर्षण । प्राचीन काल के यज्ञ-युग में सर्वत्र विपुल वर्षा होती थी । इससे यज्ञ-कर्म और मेघ-वर्षा के निमित्त विशिष्ट अग्निहोत्रों के प्रयोग हुए हैं और बहुत बार सफल भी रहे हैं, पर वस्तुत: पर्जन्य, इससे आगे का वह प्राण तत्त्व है, जो यज्ञ के माध्यम से आकाश में उत्पन्न होता है और पवन तथा बादलों के माध्यम से धरती पर बरसता है । इस पर्जन्य प्राण-वर्षा से समस्त जड़-चेतनों को नवजीवन एवं समर्थ उल्लास प्राप्त होता है । घास-पात, ओषधियाँ-जल, अन्न, वायु, दूध आदि को पर्जन्य से विशिष्ट परिपोषण मिलता है । उनका सामर्थ्य स्तर कहीं अधिक बढ़ जाता है । फलत: उन्हें जो भी पशु या मनुष्य प्रयोग करते हैं उनकी प्रखरता कहीं अधिक बढ़ जाती है। यह उपलब्धि सर्वतोमुखी प्रगति में हर दृष्टि से सहायक सिद्ध होती है ।

वायु-शोधन से भी अधिक लाभ वातावरण के परिष्कार का होता है । वायु की शुद्धता का स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव पड़ता है । वातावरण से व्यक्तित्व का हर पक्ष प्रभावित होता है । उससे चिन्तन को दिशा मिलती है । प्रवृत्तियों के परिशोधन का आधार खड़ा होता है । जन-मानस के परिष्कार का जो लक्ष्य लेकर युग-निर्माण मिशन चल रहा है, उसके लिए प्रचारात्मक, रचनात्मक कार्यक्रम तो अपनाने ही होंगे, लेखनी और वाणी का प्रयोग तो करना ही होगा, किन्तु स्थूल प्रयत्नों से अन्त:करणों के मर्मस्थलों को प्रभावित, परिष्कृत करने में इतने साधन ही पर्याप्त न होंगे । उसके लिए सूक्ष्म जगत् का प्रवाह भी उलटना होगा । सर्दी, गर्मी, वर्षा का वातावरण पर प्रभाव पड़ता है और उससे परिस्थितियों में भारी अन्तर देखा जाता है । ठीक इस प्रकार सूक्ष्म वातावरण में भी उत्कृष्टता के तत्त्वों का अनुपात बढ़ सके तो लोक-प्रवाह को उपयुक्तता की दिशाधारा में चलाना कुछ अधिक कठिन न रह जायगा । हवा के रुख पर नाव की गति सहज ही तेजी पकड़ती है । उज्ज्वल भविष्य की संरचना में जिस प्रकार का वातावरण अभीष्ट है उसे बनाने में गायत्री यज्ञों की शृंखला से अति महत्त्वपूर्ण अनुकूलता उत्पन्न हो सकती है ।

गायत्री और यज्ञ का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध

यज्ञ एवं गायत्री का अभिन्न सम्बन्ध है । यज्ञ की और यज्ञ पुरुष की महिमा इन निम्नलिखित पंक्तियों में देखिये-

यो यज्ञे यज्ञ परयैरिज्यते संज्ञित: ।
तं यज्ञपुरुष विष्णुं नमामि प्रभुमीश्वरम् ।।

जो यज्ञ द्वारा पूजे जाते हैं, यज्ञमय हैं, यज्ञरूप हैं उन यज्ञरूप विष्णु भगवान को नमस्कार है ।

यज्ञ मनुष्य की अनेक कामनाओं को पूर्ण करने वाला तथा स्वर्ग एवं मुक्ति प्रदान करने वाला है । यज्ञ

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को छोड़ने वालों की शास्त्रों में बहुत निन्दा की गई है-

यज्ञेन पापैः बहुभिर्विमुक्तः प्राप्नोति लोकान् परमस्य, विष्णोः ।

-हारीति

यज्ञ से अनेक पापों से छुटकारा मिलता है तथा परमात्मा के लोक की भी प्राप्ति होती है ।

यज्ञों की इस महान महत्ता को देखकर ही अनेक प्रकार के यज्ञों का प्रचलन इस देश में हुआ था । उनसे अपनी-अपनी तरह के प्रयोजन सिद्ध होते थे । बलिवैश्व यज्ञ पारिवारिक जीवन, आस्तिकता, आध्यात्मिकता और पवित्रता बनाये रखने के लिए, बाजपेय यज्ञ जनमानस की प्रसुप्त आत्मिक, बौद्धिक तथा नैतिक चेतना को जाग्रत करने के लिए, राजसूय यज्ञ शासन तन्त्र की समस्याओं को सुलझाने के लिए हुआ करते थे । गायत्री यज्ञों को इन सब का प्रतीक माना गया । गायत्री संहिता की उक्ति है-

अग्निहोत्रं तु गायत्री मन्त्रेण विधिवत् कृतम् ।
सर्वेष्ववसरेष्वेव शुभमेव मतं बुधैः ।।

-गायत्री संहिता ७०

गायत्री मंत्र से विधिपूर्वक किया गया अग्निहोत्र भी सब अवसरों पर विद्वानों ने शुभ माना है ।

यज्ञो वै तमं कर्म, अयाज्ञियो हत वर्चः ।
नाग्निहोत्रोत्परोधर्मः गायत्री पर सर्वात् ।।

-गौतम ५/७/१२

यज्ञ ही संसार का सर्वश्रेष्ठ शुभ कार्य है, जो यज्ञ नहीं करते उनका तेज नष्ट हो जाता है । यह सत्य है कि अग्निहोत्र से श्रेष्ठ कोई धर्म नहीं, पर समस्त अग्निहोत्रों में भी गायत्री सर्वश्रेष्ठ है ।

यज्ञ याग संहिता में प्रत्येक शुभ कार्य को गायत्री यज्ञ के साथ आरम्भ करने का निर्देश दिया गया है-

गायत्री यज्ञं प्रणतया सस्वाय ।

गार्गीय संहिता में कहा गया है-

यो यज्ञैरिज्यते देवो आद्य शक्ति वेदमातरः ।
ये सर्वे दैवत तनुः पूज्यते परमेश्वर ।।

जो यज्ञ के द्वारा आद्य शक्ति गायत्री की उपासना करता है, वह सब देवों के शरीर रूप परमात्मा को भजता है, अर्थात् वेदमाता गायत्री के यज्ञ-भजन से सब देवताओं का भजन होता है ।

सकाम भाव से किया गया गायत्री यज्ञ भी तुरन्त फलदायी बताया गया है-

सकामोयसिवम् कुर्यात् गायत्री होमदक्षते ।
शतं काममवाप्नोति पदं यानत्यमश्नुते ।।

जो मनुष्य सकाम भावना से गायत्री यज्ञ करता है, उसकी इच्छित कामनायें पूरी होती हैं और अन्त समय में वह परमपद को प्राप्त करता है ।

इस महान महत्ता को समझकर ही गायत्री यज्ञों की परम्परा प्रचलित की गई थी । उसे छोड़ देने से अपनी दुर्गति हुई । उसे फिर से ठीक किया जाना चाहिए । अग्निहोत्र की परम्परा घर-घर चलनी चाहिए । जब घर-घर में यज्ञ की प्रतिष्ठा थी, तब यह भारत भूमि स्वर्ग-सम्पदाओं की स्वामिनी थी । आज यज्ञ को त्यागने से ही हमारी दुर्गति हो रही है।

यज्ञ शब्द का सामान्य संस्कृत अर्थ दान, संगठन, देव-पूजन है । भावार्थ है-दिव्य प्रयोजनों के लिए संगठित रूप से अनुदान प्रस्तुत करना । यही है वह पुण्य प्रवृत्ति, जिसके कारण नर-पशु को नर-नारायण बनने का अवसर मिलता है । मानवी गरिमा इसी उदार सेवा-साधना पर अवलम्बित है । अग्नि में पकाये जाने पर जिस तरह स्वर्ण की कलुषता मिटती और आभा निखरती है, उसी प्रकार यज्ञ-दर्शन को अपनाकर मनुष्य उत्कृष्टता के शिखर पर चढ़ता और देवत्त्व की ओर अग्रसर होता है ।

ईश्वर की वाणी वेद है । इस अनादि ब्रह्मज्ञान को कहने-सुनने की प्रक्रिया श्रुति कहलाती है । लिपिबद्ध होने पर वह छन्द बन जाता है और उसे जब शब्द-ब्रह्म, नाद-ब्रह्म-शक्ति रूप में परिणत किया जाता है, तब मन्त्र कहलाता है । वेद की ऋचायें श्रुति एवं छन्द मन्त्र कहलाते हैं । उनमें ज्ञान एवं विज्ञान की अति रहस्यमय एवं अत्यन्त शक्तिशाली दिव्य क्षमताएँ भरी पड़ी हैं । वेदों में सर्वप्रथम ऋग्वेद का अवतरण हुआ । ऋग्वेद का प्रथम मंत्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है- **अग्नि मीडे पुरोहितं.....** । इस ऋचा में सर्व प्रथम ईश्वर का नाम अग्नि बताया गया है और उस पुरोहित के अग्नि, अनुग्रह से वह सब कुछ उपलब्ध किया जा सकता है, जो मनुष्य को अभीष्ट है ।

ईश्वर सर्वव्यापी होने से निराकार है । उसकी अनुभूति सत्-चित्-आनन्द की दिव्य संवेदनाओं में ही हो सकती है । यदि उसका प्रयत्न परिचय प्राप्त करना हो, तो कारण शरीर में सद्भावना-सूक्ष्म शरीर में सद्विचारों के और स्थूल शरीर में सत्कार्यों के रूप में उसे क्रियाशील होते देखा जा सकता है या फिर इस समस्त ब्रह्माण्ड को ईश्वर का विराट् रूप मानकर उसे समुन्नत, सुविकसित बनाने के रूप में सेवा, साधना का कर्मयोग साधा जा सकता है । किन्तु यदि उसके लिए पूजा प्रतीक की आवश्यकता हो तो वह 'अग्नि' से बढ़कर दूसरा कुछ और नहीं हो सकता । ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र में ईश्वर की प्रतीक प्रतिमा के रूप में 'अग्नि' का प्रतिपादन किया है और परमात्मा को दिव्य अग्नि कहा है । इसी को ब्रह्म तेजस् साधना, लेटेन्ट लाइट, डिवायन लाइट, पवित्र प्रकाश आदि नामों से पुकारते हैं ।

भारतीय धर्म की आदि उपासना को खोजने वाले शोध कर्त्ताओं ने उसे अग्नि पूजन की संज्ञा दी है । ईरान में रहने वाले आर्य, अपने को पारसी कहते हैं, किन्तु उनकी पूजा-पद्धति में भी अग्नि उपासना ही मुख्य है । अग्नि-मन्दिर ही उनके उपासना-गृह कहलाते हैं । भारत में भी पंजाब का ज्वालामुखी मन्दिर प्रसिद्ध है, जिसमें अग्नि की उपासना होती है । अखण्ड अग्नियाँ ऋषियों के आश्रमों में अखण्ड धूनी के रूप में प्रतिष्ठापित रहती थीं । वैदिक कर्मकाण्डों में पंचाग्नियों की स्थापना और उनके नित्य-यज्ञ का विधान है । पौराणिक काल में पंचयज्ञों को नित्य कर्मों में तो सम्मिलित रखा गया, पर उससे अन्नदान जैसे कुछ अन्य विधान जोड़ दिये गये ।

प्रतीक रूप में अग्नि-प्रतिमा को ईश्वर-आराधना के रूप में प्रयुक्त करने को अग्निहोत्र कह सकते हैं । अग्निहोत्र का प्रत्येक शुभ कर्म में, पर्व प्रयोजन में, विशिष्ट कर्मकाण्डों में प्रमुख रूप से समावेश है । होली सामूहिक वार्षिक यज्ञ है । नई फसल के नवीन अन्न को संस्कृत में 'होली' कहते हैं । होली का होम जिसमें किया जाय वह 'होली' । हर्षोत्सव है, जो सामूहिक यज्ञ के रूप में मनाया जाता है । अब तो उस महान परम्परा का विकृत खण्डहर मात्र ही दृष्टिगोचर होता है । ऐसे ही लकड़ी, उपले जलाकर लोग वह लकीर पीट लेते हैं । तो भी जलाने से पूर्व उसकी जो पूजा-विधि सम्पन्न होती है और बाद में मस्तक पर भस्म लगाने से लेकर परिक्रमा तक के जो क्रिया-कृत्य होते हैं, उनसे स्पष्ट है कि यह सामूहिक वार्षिक यज्ञ की पुण्य परम्परा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । दीवाली के दीपकों में अग्निदेव की ही प्रतिष्ठापना है । अन्य सभी पर्वों पर छोटे-बड़े रूप में हवन की चिह्न पूजा होती रहती है । महिलाएँ चूल्हे में से अंगार निकालकर उस पर घृत, लोंग, मिष्ठान्न, पकवान आदि चढ़ाती हैं और उसकी जल-परिक्रमा करके अग्निहोत्र की प्रतीक-पूजा स्वयं कर लेती हैं ।

पुंसवन से लेकर अन्त्येष्टि तक के सोलह संस्कार हैं । इनमें से प्रत्येक में हवन अनिवार्य रूप से आवश्यक है । दो में तो उसी की प्रधानता है । अग्नि की साक्षी देकर ही प्रतिज्ञायें पूर्ण होती हैं और चार या सात भाँवरें, परिक्रमाएँ उसी की वर-वधू मिलकर करते हैं । समझा जाता है कि यज्ञाग्नि ने वर-वधू की आत्मा को उसी तरह अटूट बन्धनों में बाँध दिया है, जैसे कि दो लोहे के टुकड़े 'बैल्डिंग' द्वारा जोड़ दिये जाते हैं । मरण के उपरान्त हिन्दू का शरीर यज्ञाग्नि में ही होमा जाता है । चिता विशुद्ध रूप से अन्त्येष्टि-यज्ञ है । उसमें घृताहुति की अनिवार्यता से लेकर सभी छुटपुट क्रिया-कृत्य ऐसे होते हैं, जिन्हें अग्निहोत्र का ही भौंड़ा रूप कहा जा सकता है । वानप्रस्थ संस्कार यज्ञ-कर्म द्वारा ही सम्पन्न होता है । यज्ञोपवीत का नामकरण ही यज्ञ के नाम पर हुआ है । यज्ञ-प्रक्रिया के साथ ही पवित्र सूत्र को कन्धे पर धारण कराने से उपनयन कृत्य सम्पन्न होता है । अन्य संस्कारों के सम्बन्ध में भी यही बात है । उनमें अग्निहोत्र भी अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है । अन्य धर्मों में भी दीपक, धूपबत्ती, अगरबत्ती, मोमबत्ती, लोबान आदि के रूप में पूजा-उपकरणों में अग्नि की स्थापना भी सम्मिलित है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधनाओं में भी हवन अनिवार्य है । जितने भी पाठ, पुरश्चरण, जप, साधन किए जाते हैं, वे चाहे वेदोक्त हो, चाहे तान्त्रिक, हवन उनमें किसी न किसी रूप में अवश्य करना पड़ेगा । गायत्री उपासना में भी हवन आवश्यक है । अनुष्ठान या पुरश्चरण में जप से दसवाँ भाग हवन करने का विधान है । परिस्थितिवश दसवाँ भाग आहुतियाँ न दी जा सकें तो शतांश (सौ वाँ भाग) आवश्यक है ही । गायत्री को माता और यज्ञ को पिता माना गया है । इन्हीं दोनों के संयोग से मनुष्य का आध्यात्मिक जन्म होता है जिसे 'द्विजत्त्व' कहते हैं । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को द्विज कहते हैं । द्विज का अर्थ है, दूसरा जन्म । जैसे अपने शरीर को जन्म देने वाले माता-पिता की सेवा-पूजा करना मनुष्य का नित्यकर्म है, उसी प्रकार गायत्री माता और यज्ञ पिता की पूजा भी प्रत्येक द्विज का आवश्यक धर्म-कर्त्तव्य है ।

धर्म ग्रन्थों में पग-पग पर यज्ञ की महिमा का गान है । वेद में यज्ञ का विषय प्रधान है, क्योंकि यज्ञ एक ऐसा विज्ञान मय विधान है, जिससे मनुष्य का भौतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से कल्याण कारक उत्कर्ष होता है । भगवान यज्ञ से प्रसन्न होते हैं । कहा गया है :-

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोस्त्विष्टकामधुक् ।।
देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ।।
इष्टान्भोगान्हिवो देवा दास्यन्ते यज्ञ भाविता ।

-गीता ३-१०-११

ब्रह्माजी ने मनुष्यों के साथ ही यज्ञ को भी पैदा किया और उनसे कहा कि इस यज्ञ द्वारा तुम्हारी उन्नति होगी, यह यज्ञ तुम्हारी इच्छित कामनाओं-आवश्यकताओं को पूर्ण करेगा । तुम लोग यज्ञ द्वारा देवताओं को पुष्ट करो, वे देवता तुम्हारी उन्नति करेंगे । इस प्रकार दोनों अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए परम कल्याण को प्राप्त होंगे । यज्ञ द्वारा पुष्ट किए हुए देवता अनायास ही तुम्हारी सुख-शान्ति की वस्तुएँ प्रदान करेंगे ।

असंख्यों शास्त्र-वचनों में प्रमाण दिये गए हैं, जिनसे यज्ञ की महत्ता का अनुमान सहज ही हो जाता है । पूर्व काल में भी आध्यात्मिक एवं भौतिक उद्देश्यों के निमित्त बड़े-बड़े यज्ञ हुआ करते थे । देवता भी यज्ञ करते थे, असुर भी यज्ञ करते थे, ऋषियों द्वारा यज्ञ किये जाते थे, राजा लोग अश्वमेध आदि विशाल यज्ञों का आयोजन करते थे, साधारण गृहस्थ भी अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार समय-समय पर यज्ञ किया करते थे । असुर लोग यज्ञों के विध्वंस करने का सदैव इसलिए प्रयत्न किया करते थे, कि उनके शत्रुओं का लाभ एवं उत्कर्ष न होने पावे। इसी प्रकार असुरों के यज्ञों का ध्वंस भी कराया गया है । रामायण में राक्षसों के एक ऐसे यज्ञ का वर्णन है जिसे हनुमान् जी ने नष्ट किया था । यदि यज्ञ सफल हो जाता तो राक्षस अजेय हो जाते।

राजा दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञ करके चार पुत्र पाये थे । राजा नृग यज्ञों के द्वारा स्वर्ग जाकर इन्द्रासन के अधिकारी हुए थे । राजा अश्वपति ने यज्ञ द्वारा सन्तान प्राप्त करने का सुयोग प्राप्त किया था । इन्द्र ने स्वयं भी यज्ञों के द्वारा ही सब पाया था । भगवान राम ने अपने यहाँ अश्वमेध कराया था । श्रीकृष्ण जी की प्रेरणा से पाण्डवों ने राजसूय यज्ञ कराया था जिसमें श्रीकृष्ण जी ने आगन्तुकों के स्वागत सत्कार का भार अपने ऊपर लिया था । पापों के प्रायश्चित्त स्वरूप अनिष्टों और प्रारब्ध जन्य दुर्भाग्यों का शान्ति के निमित्त, किसी अभाव की पूर्ति के लिए, कोई सुयोग या सौभाग्य प्राप्त करने के प्रयोजन से रोगनिवारणार्थ, देवताओं को प्रसन्न करने के हेतु, धन-धान्य की अधिक उपज के लिए, अमृतमयी वर्षा के निमित्त, वायु मण्डल में से अस्वास्थ्यकर तत्त्वों का उन्मूलन करने के निमित्त हवन यज्ञ किए जाते थे और उनका परिणाम भी वैसा ही होता था ।

यज्ञ एक महत्त्वपूर्ण विज्ञान है । जिन वृक्षों की समिधाएँ काम में ली जाती हैं, उनमें विशेष प्रकार के गुण होते हैं । किस प्रयोग के लिए किस प्रकार की हव्य वस्तुएँ होमी जाती हैं । इसका भी विज्ञान है । उन वस्तुओं के आपस में मिलने से एक विशेष गुण संयुक्त सम्मिश्रण तैयार होता है जो जलने पर वायु मण्डल में एक विशिष्ट प्रभाव पैदा करता है । वेद मन्त्रों के उच्चारण की शक्ति से उस प्रभाव में और भी अधिक वृद्धि होती है । फलस्वरूप जो व्यक्ति उस यज्ञ में सम्मिलित होते हैं उन पर तथा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

निकटवर्ती वायु मण्डल पर उसका बड़ा प्रभाव पड़ता है । सूक्ष्म प्रकृति के अन्तराल में जो नाना प्रकार की दिव्य शक्तियाँ काम करती है, उन्हें देवता कहते हैं । इन देवताओं से अनुकूल सम्बन्ध स्थापित करना यह देवताओं को प्रसन्न करना है । यह प्रयोजन यज्ञ द्वारा आसानी से पूरा हो जाता है ।

दैनिक जीवन में अग्निहोत्र की आवश्यकता

अग्नि को पुरोहित धर्मोपदेशक मानकर उसका पूजन-अभिनन्दन करने का तात्पर्य है-अग्नि में पायी जाने वाली विशेषताओं से आदर्शवादी प्रेरणाएँ ग्रहण करना । यह विशेषतायें इस प्रकार हैं-(१) अग्नि सर्वदा उष्ण और प्रकाशवान रहती है । उसकी प्रेरणा है कि पुरुषार्थ पराक्रम की गर्मी, यशस्विता तेजस्विता और विवेकशीलता को सदा प्रकाशवान रहना चाहिए । (२) अग्नि की लौ सदा ऊपर को ही रहती है । कितना ही दबाव पड़ने पर भी वह अधोमुखी नहीं बनती । हमारी विवेक-दृष्टि एवं दिशाधारा भय और प्रलोभनों का कितना ही दबाव पड़ने पर भी पतनोन्मुख-नीची, निकृष्ट नहीं बननी चाहिए । (३) अग्नि में जो भी वस्तु डाली जाती है, उसे वह अपने सदृश्य ही बना लेती है । हमारी श्रेष्ठता ऐसी होनी चाहिए कि जो भी सम्पर्क में आवें, वे श्रेष्ठता ही अपनाते चले जाएँ । श्रेष्ठ बनकर सम्पर्क क्षेत्र को श्रेष्ठ बनाने की प्रेरणा अग्नि की रीति-नीति से सीखी जा सकती है । (४) अग्नि को जो भी सौंपा जाता है, वह उसे अपने पास जमा नहीं करती, वरन् वायुभूत करके सर्वत्र बिखेर देती है, विश्व सम्पदा बना देती है । हमारा उपार्जन कितना ही अधिक क्यों न हो, उपलब्धियाँ, समृद्धि तथा विभूतियाँ कितनी ही क्यों न हों, उनका उपयोग लोकमंगल के लिए होना चाहिए । हमें संग्रही नहीं अपरिग्रही, उदार और जनहित में अपनी विभूतियों को लगाते रहने के स्वभाव वाला होना चाहिए । (५) अग्नि का अवशेष भस्म है । मनुष्य का अवशेष भी मुट्ठी भर भस्म है । यज्ञ भस्म मस्तक पर लगाई जाती है, इसका तात्पर्य है सदा जीवन की अन्तिम परिणति को, भस्मावशेष को ध्यान में रखते हुए मृत्यु की अनिवार्यता को समझा जाय और उपलब्ध जीवनकाल के एक-एक क्षण का श्रेष्ठतम सदुपयोग किया जाय । यह पाँच शिक्षाएँ पञ्चाग्नि विद्या के अन्तर्गत आती हैं । उन्हें अग्नि पुरोहित मनुष्य मात्र को सिखाता है, जो उन्हें अच्छी तरह समझता और अपने व्यवहार में आचरण में उतारता है । उसे यज्ञीय जीवन जीने का अवसर मिलता है । यज्ञ की प्रतीक-पूजा में इतना प्रशिक्षण प्राप्त कर लेने वाला, उस सद्ज्ञान को जीवनचर्या में उतार लेने वाला सच्चे अर्थों में कृत-कृत्य बनता है।

यज्ञ एक पवित्र धर्म-कृत्य तो है ही, साथ ही वह उत्कृष्ट जीवन-दर्शन भी है । यज्ञ, पवित्रता और परमार्थ का प्रतीक है । अग्नि स्वयं पवित्र होती है और उसके सम्पर्क से अपवित्र वस्तुयें भी पवित्र बन सकती हैं । अग्नि अपने लिए कुछ नहीं करती उसके समस्त क्रियाकलाप परमार्थ के लिए ही सम्पन्न होते रहते हैं । यज्ञ-कृत्य का तो प्रधान उद्देश्य जन साधारण में परमार्थ की, सत्प्रवृत्तियों को, सत्प्रेरणाओं को भर देना ही है । यज्ञकर्ता अपने काम आ सकने वाले घृत, मेवा, मिष्ठान्न आदि उपयोगी पदार्थों को पेट काट कर परमार्थ के लिए निकालता है । आहुतियों के रूप में उसे वायुभूत बनाता और वायु-मण्डल में बिखेर कर प्राणिमात्र के उपयोग के लिए प्रस्तुत करता है । प्राणी साँस लेते हैं, उसके साथ उन्हें वह यज्ञीय स्वास्थ्यवर्धक पदार्थ उपलब्ध होते हैं । इस प्रकार यज्ञकर्ता अपने आहुति अनुदान से प्राणिमात्र का प्रीतिभोज करता है और असंख्यों का ब्रह्मभोज करने का पुण्य फल पाता है । अन्न की तुलना में वायु अधिक मूल्यवान है । प्राणवान वायु मिलने से उस क्षेत्र के सभी मनुष्य बलिष्ठ, निरोग और दीर्घजीवी बनते हैं । जबकि अन्न का प्रभाव थोड़े ही समय तक रहता है । घटिया अन्न से कुछ समय काम चल सकता है, पर घटिया वायु से दम ही घुट जायगा । यज्ञ द्वारा प्राणवान् वायु तैयार करना और उसे न केवल थोड़े से लोगों को वरन् प्राणिमात्र को परोस देना, थोड़े से लोगों को दावत खिलाने की तुलना में अधिक परमार्थ है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अग्निहोत्र का वास्तविक स्वरूप ही त्याग, संयम, सेवा, सदाचार, परोपकार, उदारता, सहृदयता, आत्म-निर्माण आदि को जीवन में चरितार्थ करना है । इस दृष्टि से अग्निहोत्र एक आध्यात्मिक नाटक है, जिसे देखकर उपरोक्त भावनाएँ जागृत होती हैं । स्वार्थपरता की प्रवृत्ति के स्थान पर परमार्थ-परायणता का विकास होता है । जब तक यह परम्परा रही, हमारा सामाजिक जीवन हर दृष्टि से सुखद, समुन्नत और फलता-फूलता रहा , किन्तु इन प्रवृत्तियों के निर्बल होते ही सारा सामाजिक तन्त्र ही लड़खड़ा गया । कलेवर तो आज भी जीवित है, किन्तु वह निष्प्राण ही है । एक समय जब वशिष्ठ के सम्मुख महाराज दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञ का आग्रह किया, तो उन्होंने शब्दों में अनभिज्ञता प्रकट करते हुए शृंगी-ऋषि को उचित पात्र बताया । यज्ञ का पुरोहित शैक्षणिक दृष्टि से कितना योग्य है यह प्रश्न नहीं मूल तथ्य है कि उसे भावनात्मक दृष्टि से उत्कृष्ट चिन्तन वाला होना चाहिए । आज यह स्थिति कहीं नहीं । दक्षिणा और चढ़ोत्तरी के लोभ में ही यह कृत्य होते मिलते हैं, देव-दक्षिणा के रूप में जन-मानस के परिष्कार का आवश्यक अंग इनमें से समाप्त है । यही कारण है कि उसका अभीष्ट प्रतिफल जनजीवन को मिलता नहीं ।

ऐसे आचार्यों की आज भारी कमी है, जो स्वयं मन से, अपने आचरण से ऐसा ही यज्ञ करें और यजमान को भी ऐसा ही आत्म-त्याग का हवन करना सिखावें । यह भी इस संसार में एक बड़ा भारी अभाव है । इस अभाव को पूरा करने के लिए प्रार्थना की गई है-

य इमं यज्ञं मनसा चिकेत प्रणोवोच स्तमि हेहे ब्रवः ।

-अथर्व

हे प्रभो ! ऐसा गुरु भेजो, जो हमें मन से यज्ञ करना सिखावे ।

जब तक मन से यज्ञ करना न आवे तब तक हवन मात्र से यज्ञ का वास्तविक उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता । यज्ञ का वास्तविक उद्देश्य अपने आपको परमात्मा के चरणों में सौंप देना है । मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का अन्तःकरण चतुष्टय, दसों इन्द्रियाँ, दसों प्राण, आन्तरिक सम्पदाओं को भी जीव जब परमात्मा को सौंपता है, उनकी आहुति, भगवान में लगा देने का होम करता है तभी सच्चा यज्ञोद्देश्य प्राप्त होता है । इस यज्ञ की चर्चा उपनिषदों में इस प्रकार है-

तस्यैवं विदुषो यज्ञस्यात्मा यजमानः श्रद्धा पत्नीः उरो वेदीवेद शिखा वाग्होता, प्राण उद्गाता, चक्षुरध्वर्युः मनो ब्रह्मा, श्रोतमग्नीत यन्युरवं तदाह्वनीयः उद्गाता ।

इस आध्यात्मिक यज्ञ में आत्मा यजमान, श्रद्धा यजमान की पत्नी, हृदय वेदी, वेद शिखा, वाणी होता, प्राण उद्गाता, चक्षु अध्वर्यु, मन ब्रह्मा, कान आग्नीध्र, मुख आहवनीय है ।

इसी प्रकार का वर्णन और भी है -

वाग्वै यज्ञस्य होता ।
चक्षुर्वै यज्ञास्याध्वर्युः ।
प्राणो वै यज्ञरयोद्गाता ।
मनो वै यज्ञस्य ब्रह्मा ।

-बृहदारण्यक ३/१/३-६

वाणी यज्ञ की होता, चक्षु यज्ञ का अध्वर्यु, प्राण यज्ञ का उद्गाता और मन यज्ञ का ब्रह्मा है ।

यज्ञ पुरुष परमात्मा ही है । उसके चरणों में अपने को समिधा की भाँति समर्पित कर देने से अपना स्वरूप भी वैसे ही यज्ञमय हो जाता है, जैसे हवन की अग्नि में पड़ी हुई समिधा तथा सामग्री अग्नि रूप हो जाती है । परमात्मा की आज्ञाएँ, प्रेरणाएँ, वैराग्य, स्वाध्याय, भक्ति आदि साधनों से ईश्वरीय प्रकाश को अपनी अन्तः भूमिका में अधिकाधिक धारण करना ही यज्ञ है । सर्व व्यापक परमात्मा को सबमें समाया हुआ देखकर गुप्त दुष्कर्मों से बचना चाहिए । कोतवाल को खड़ा देखकर चोर जिस प्रकार ठीक उसके सामने ही चोरी करने का साहस नहीं करता, उसी प्रकार परमात्मा को सर्वव्यापक समझने वाला व्यक्ति भी कोई कुविचार एवं कुकर्म नहीं कर सकता, क्योंकि जब उसे अपने अन्तःकरण में परमात्मा दिखाई पड़ता है, तो कुविचार कैसे करे ? इसी प्रकार विश्व के कण-कण में जब प्रभु दिखाई पड़ता है तो कौन-सा गुप्त स्थान ऐसा हो सकता है, जहाँ वह अपनी चोरी को छिपा ले । इसी प्रकार जो सर्वत्र प्रभु की विद्यमानता अनुभव करेगा, वह सभी जड़-

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

चेतनों के साथ सद्व्यवहार के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकता । इसलिए यज्ञ पुरुष भगवान को सर्वव्यापी मानकर उसे अपनी अन्तरात्मा में धारण करना ही आध्यात्मिक यज्ञ है । इस यज्ञ निष्ठा को सर्वत्र यज्ञ पुरुष का ही रूप देखने की ब्रह्म दृष्टि को योगीजन सदैव अपनाते रहते हैं । शास्त्रों में भी इसका समर्थन है-

सर्व व्यापक ब्रह्मा, सदैव यज्ञ में रहता है ।

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना ।।

- गीता ४/२४

अर्पण (हवन क्रिया) ब्रह्म है, हवि ब्रह्म है, ब्रह्म रूप अग्नि में हवन किया जाता है और ब्रह्म ही हवन करता है । इस प्रकार जिसकी बुद्धि में सभी कर्म ब्रह्म रूप हो जाते हैं, वह ब्रह्म को ही प्राप्त होता है ।

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम् ।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् ।।

- गीता ९/१३

मैं क्रतु हूँ, मैं यज्ञ हूँ, मैं स्वधा हूँ, मैं ओषधि हूँ और मैं ही मन्त्र, घृत, अग्नि और हवन हूँ ।

गीता में आध्यात्मिक यज्ञ को भली प्रकार समझाने के लिए उसके छोटे विभाग भी किये हैं । दैवयज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, आत्मयज्ञ, तपयज्ञ, योगयज्ञ, स्वाध्याय यज्ञ, ज्ञानयज्ञ, प्राणयज्ञ, संयमयज्ञ आदि की चर्चा करते हुए यह बताया है, कि आत्म-कल्याण के, प्रभु प्राप्ति के मार्ग पर चलते हुए जो भी साधन काम में लाये जाते हैं, वे सब यज्ञ रूप ही हैं ।

द्रव यज्ञ से अदृश्य आकाश में जो आध्यात्मिक विद्युत तरंगें फैलती हैं, वे लोगों के मनों में से द्वेष, पाप, अनीति, वासना, स्वार्थपरता, कुटिलता आदि बुराइयों को हटाती हैं । फलस्वरूप उससे अनेकों समस्याएँ हल होती हैं । अनेकों उलझनें, गुत्थियाँ, पेचीदगियाँ, चिन्ताएँ, भय, आशंकाएँ तथा बुरी संभावनाएँ समूल नष्ट हो जाती हैं। राजा, धनी, सम्पन्न लोग, ऋषि, मुनि बड़े-बड़े यज्ञ कराते थे, जिससे दूर-दूर तक का वातावरण निर्मल होता था और देशव्यापी, समाजव्यापी, विश्वव्यापी बुराइयाँ तथा उलझनें सुलझती थीं । साधारण गृहस्थ छोटे-छोटे हवन कराते थे, जिससे उनके घर की, कुटुम्ब की ग्राम की छोटी-छोटी समस्याएँ हल होती थीं । व्यापक सुख, समृद्धि, वर्षा, आरोग्य, सुख-शान्ति के लिए बड़े-बड़े यज्ञों की आवश्यकता पड़ती है, पर छोटे-छोटे हवन भी अपनी छोटी सीमा और मर्यादा के भीतर अपने लाभों से प्रजा को लाभान्वित करते हैं । जितना खर्च हवन में होता है, उससे हजारों गुने मूल्य की सुख समृद्धि की प्राप्ति एवं आपत्तियों से निवृत्ति मिलती है । इस तरह किसी भी प्रकार यज्ञ घाटे का सौदा नहीं रहता ।

बड़े रूप में यज्ञ करने की जिनकी सामर्थ्य है , उन्हें वैसे आयोजन करने चाहिए । अग्नि का मुख ईश्वर का मुख है । उसमें जो कुछ खिलाया जाता है वह सच्चे अर्थों में ब्रह्मभोज है । ब्रह्म अर्थात् परमात्मा, भोज अर्थात् भोजन, परमात्मा को भोजन कराना यज्ञ के मुख में आहुति छोड़ना ही है । भगवान हम सबको खिलाता है, हमारा भी कर्त्तव्य है कि अपने उपकारी के प्रति पूजा करने में कंजूसी न करें । जिनकी आर्थिक स्थिति वैसी नहीं है, वे कई व्यक्ति थोड़ा-थोड़ा सहयोग करके सामूहिक यज्ञों की व्यवस्था कर सकते हैं । जहाँ वैसा सुयोग न हो , वहाँ यदा कदा छोटे-छोटे हवन किए जा सकते हैं । अथवा जहाँ नियमित यज्ञ होते हैं, वहाँ अपनी ओर से कुछ आहुतियों का हवन कराया जा सकता है । कोई अन्य व्यक्ति यज्ञ कर रहे हों, तो उसमें समय, सहयोग एवं सहायता देकर उसे सफल बनाने का प्रयत्न करना भी यज्ञ में भागीदार होना ही है ।

नित्य का अग्निहोत्र बहुत सरल है । उसमें कुछ इतना भारी खर्च नहीं होता कि मध्यम वृत्ति का मनुष्य उस भार को उठा न सके । जो लोग नित्य हवन नहीं कर सकते वे सप्ताह में एक बार रविवार को अथवा अमावस्या पूर्णमासी को अथवा महीने में एक बार पूर्णमासी को थोड़ा या बहुत हवन करने का प्रयत्न करें । विधि-विधान भी इन साधारण हवनों का कोई कठिन नहीं है । गायत्री-यज्ञ-विधान पुस्तक में उसकी सरल विधियाँ बताई गयी हैं । उनके आधार पर बिना पण्डित पुरोहित की सहायता के कोई भी द्विज उसे आसानी से कर सकता है । जहाँ कुछ भी विधान न मालूम हो वहाँ केवल शुद्ध घृत की आहुतियाँ गायत्री मन्त्र के अन्त में 'स्वाहा' शब्द लगाते हुए दी जा सकती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किसी न किसी रूप में यज्ञ-परम्परा को जारी रखा जाय तो वह भारतीय संस्कृति की एक बड़ी भारी सेवा है और वह छोटा सा कर्मकाण्ड भी अपने घर के वायुमण्डल को शुद्ध करने और घर के सब लोगों पर सतोगुणी प्रभाव डालने में बड़ा सहायक होता है । जिन घरों में हवन होते रहते हैं, वहाँ पाप-कर्मों का प्रवेश नहीं होता, प्रेत पिशाच, दुःख-दुर्भाग्य, अभाव-दारिद्र एवं क्लेश तथा कलह का शमन होता रहता है । अग्निहोत्र से देवता प्रसन्न होते हैं और वे सुख शान्ति की वर्षा करते रहते हैं ।

यज्ञ किसी भी प्रकार घाटे का सौदा नहीं है । साधारण रीति से किये हुए हवन में जो धन व्यय होता है, एक प्रकार से देवताओं की बैंक में जमा हो जाता है और वह सन्तोषजनक ब्याज समेत लौटकर अपने को बड़ी महत्त्वपूर्ण आवश्यकता के समय पर वापिस मिलता है । विधि पूर्वक, शास्त्रीय पद्धति विशिष्ट उपचारों एवं विधानों के साथ किए हवन तो और भी महत्त्वपूर्ण हैं । ऐसे यज्ञ एक प्रकार के दिव्य अस्त्र हैं । दैवी सहायताएँ प्राप्त करने के अचूक उपचार हैं । पूर्व काल में यज्ञ द्वारा मनोवांछित वर्षा होती थी । यज्ञ-शक्ति से सुसज्जित होकर योद्धा लोग अजेय बनते थे । यज्ञ द्वारा योगी लोग अपनी तपस्या पूर्ण करके आत्म साक्षात्कार करते थे । यज्ञ समस्त ऋद्धि-सिद्धियों का पिता है । यज्ञ को वेदों ने कामधुक कहा है, वह मनुष्यों के अभावों का पूरा करने वाला और बाधाओं को दूर करने वाला है ।

गायत्री उपासकों के लिए यज्ञ आवश्यक है, उन्हें यज्ञ परम्परा जारी रखनी चाहिए । अपने घर का, अपनी मनोभूमि का वातावरण यज्ञमय रहे, यज्ञ भगवान की पूजा होती रहे, यह प्रयत्न करना प्रत्येक द्विज के लिये आवश्यक है ।

साधारण होम भी बहुत उपयोगी होता है । उससे घर की वायु-शुद्धि, रोगनिवृत्ति, अनिष्टों से आत्म रक्षा होती है । फिर विशेष आयोजन के साथ विधि विधान पूर्वक किये गये यज्ञ तो असाधारण फल उत्पन्न करते हैं । यज्ञ एक विद्या है, पाँचों तत्वों का हाल में एक वैज्ञानिक सम्मिश्रण होता है, जिससे एक प्रचण्ड दुर्धर्ष शक्ति का आविर्भाव होता है । यज्ञ की इस प्रचण्ड शक्ति का द्वि मूर्धा, द्वि नासिक, सप्त हस्त, द्वि मुख, सप्त जिह्वा, उत्तर मुख, कोटि द्वादश मूर्त्या द्वि पञ्च शत्कला युतम् आदि विशेषणों से युक्त कहा गया है । इस रहस्य पूर्ण संकेत में यह बताया गया है कि यज्ञाग्नि की मूर्धा भौतिक और आध्यात्मिक दोनों हैं । यह क्षेत्र सफल बनाये जा सकते हैं । स्थूल और सूक्ष्म प्रकृति, यज्ञ की नासिका है, उस पर अधिकार प्राप्त किया जा सकता है । सातों प्रकार की सम्पदाएँ यज्ञाग्नि के हाथ हैं वाम मार्ग और दक्षिण मार्ग ये दो मुख हैं । सातों लोक जिह्वाएँ हैं, इन सब लोकों में जो कुछ भी विशेषताएँ हैं, वे यज्ञाग्नि के मुख में मौजूद हैं । उत्तर ध्रुव का चुम्बकत्त्व केन्द्र अग्नि मुख है । ५२ कलाएँ यज्ञ की ऐसी हैं, जिनमें से कुछ को प्राप्त करके ही रावण इतना शक्तिशाली हो गया था । यदि यह सभी कलाएँ उपलब्ध हो जायँ तो मनुष्य साक्षात् अग्नि रूप हो सकता है । यज्ञ की महिमा अनन्त है । उसका थोड़ा आयोजन भी फलदायक होता है । गायत्री उपासकों के लिए तो यज्ञ पिता तुल्य पूजनीय है ।

गायत्री और यज्ञ
अजस्र विभूतियों के भण्डार

भारतीय तत्त्वज्ञान का प्रतीक यज्ञ और वैदिक अध्यात्म विद्या की जन्मदात्री गायत्री मानी गई है । इन्हें भारतीय ज्ञान और विज्ञान का माता-पिता भी कहा गया है । दोनों के संयोग से समग्र अध्यात्म का जन्म होता है । माता और पिता दोनों का मिलन ही नवजात शिशु को जन्म देता है । यह तथ्य गायत्री के सम्बन्ध में पूरी तरह चरितार्थ होता है ।

द्विजत्त्व का अर्थ है दूसरा जन्म होना । उपनयन धारण को द्विजत्त्व का संस्कार कहते हैं । इस अवसर पर व्यक्ति का देवसंस्कृति में प्रवेश होता है। नर पशु को देवयोनि में प्रवेश पाने के लिए विधिवत् गायत्री को माता और यज्ञ को पिता के रूप में वरण करना होता है । यही है देवसंस्कृति का अवधारण।

नौ शब्द और चौबीस अक्षरों वाली गायत्री गुरुमन्त्र है । इसका अवधारण करने के उपरान्त समझा जाता है, कि नरपशु की कुसंस्कारिता से मुक्ति पाकर देव-परम्परा अपनाई गई है । मनुष्य के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

नौ गुण हैं । यही नरपशु को नरदेव बनाते हैं । इनको जीवन-क्रम में विधिवत् अवधारण किये रहने वाले को द्विज कहते हैं । बात यहीं समाप्त नहीं होती । उस सुसंस्कारिता का धर्मधारण यज्ञ के रूप में भी करना होता है । ज्ञान और कर्म का युग्म ही गायत्री-यज्ञ है । इसे ज्ञान और विज्ञान दोनों ही प्रकार से जीवनचर्या में अवधारण करना होता है । प्रत्येक भारतीय धर्मावलम्बी के लिए गायत्री का जप आवश्यक है । भले ही वह न्यूनतम एक माला जितना ही क्यों न हो । यह धर्मकृत्य पाँच मिनट में पूरा हो जाता है । जो स्नान-ध्यान समेत विधिवत् उसे नहीं कर सकते, उनके लिए शास्त्रकारों ने इतनी सुविधा दान की है कि बिना स्नान के भी मौन मानसिक जप के रूप में इतना जप-स्मरण तो कर ही लिया करें ।

नित्य गायत्री जप की तरह ही पाँच यज्ञों का धर्म कृत्य करने का विधान है । संध्या-वन्दन की तरह पंचयज्ञ की पाँच आहुतियाँ यदि मन्त्र समेत विधिवत् न बन पड़ें तो भोजन से पूर्व पाँच छोटे ग्रास अग्निदेव को समर्पित करने का धर्मकृत्य तो किसी न किसी प्रकार निबाहा ही जाय । जिन्हें नियमितता का अभ्यास नहीं है, वे गौग्रास के रूप में चौके में बनी प्रथम रोटी गौमाता को दिया करें । शिर पर शिखा एवं कन्धे पर जनेऊ धारण करना गायत्री को काय-मन्दिर पर धारण करना है । इसी प्रकार गौग्रास निकालना ब्रह्मयज्ञ है । इतने से भी पंच आहुतियों की प्रतीक पूजा हो जाती है । गायत्री की प्रतीक उपासना शिखा या यज्ञोपवीत के रूप में- यज्ञ की प्रतीक पूजा गौग्रास के रूप में देव संस्कृति की पूजन प्रक्रिया में अनिवार्य मानी गई है ।

आत्मिक उत्थान के लिए गायत्री की उच्चस्तरीय उपासना करने के लिए कहा गया है । साथ ही यज्ञ-कर्म को नित्यकर्म के साथ अविच्छिन्न रूप से जोड़ रखने के लिए कहा गया है । गायत्री जप तो मन की एकाग्रता और वाणी की जप साधना भर से बन पड़ता है । पर, अग्निहोत्र के लिए-चरु प्रयोजन के लिए कई प्रकार के साधन चाहिये । जिनके लिए वे सुलभ नहीं हैं, उनके लिये शास्त्रकारों ने समिधा के ईंधन मात्र से अग्निपूजन करने के लिए कहा है । उनका प्रयोजन है कि साधनों का अभाव रहते हुए भी शरीर श्रम एवं उपलब्ध सरलतम साधनों से ही अग्निहोत्र के नित्यकर्म का निर्वाह करना चाहिए । उसकी उपेक्षा, अवज्ञा नहीं करनी चाहिए ।

भौतिक विज्ञान में पदार्थ तथा प्रहार की दो शक्तियों को अनिवार्य माना गया है । इसके बिना प्रकृतिगत शक्तियों का प्रकटीकरण सम्भव नहीं होता । ठीक इसी प्रकार आत्म-शक्तियों के प्रकटीकरण एवं अभिवर्धन के लिये गायत्री एवं यज्ञ का उपयोग आवश्यक है । इसे ही कहना चाहिए कि इन दोनों महाशक्तियों को पूजा-पाठ की साम्प्रदायिकता के साथ जोड़ दिया गया है । पूजा-अर्चा का विधि-विधान साम्प्रदायिक भिन्नताओं के आधार पर भिन्न-भिन्न भी हो सकता है, किन्तु गायत्री और यज्ञ तो सार्वभौम हैं । जप, गायत्री की ही प्रक्रिया है । आध्यात्मिक ऊर्जा ही यज्ञाग्नि है । दोनों के साथ जितना ईंधन होमा जायगा उतनी ही वह उग्र होगी, गायत्री-जप के कई स्तर हैं । वाणियाँ चार हैं । वैखरी, मध्यमा, परा, पश्यन्ती । मनुष्य, महामानव, ऋषि, देवता इन्हें बोलते हैं । इनमें से जिसके सहारे जिस स्तर की गायत्री साधना की गई होगी, उसी स्तर की विद्युतधारा उत्पन्न होगी । अग्निहोत्र में होता, आचार्य, उद्गाता, अध्वर्यु ये चार प्रकार के याजक होते हैं । उनका व्यक्तित्व और विनिर्मित चरु जिस स्तर का होगा । उसी स्तर की यज्ञाग्नि प्रदीप्त होगी और देव प्रयोजनों की पूर्ति करेगी । सुनने में गायत्री मन्त्रों का उच्चारण समान जैसा है । उस प्रकार अग्निहोत्र में जलती हुई ऊर्जा कुछ भी पदार्थ जलाने पर एक जैसी गर्म होती है । किन्तु उनके सूक्ष्म प्रभाव में जमीन-आसमान जितना अन्तर होता है ।

गायत्री-उपासना को यदि अधिक तत्परता और तन्मयता के साथ विधिवत् किया जा सके तो व्यक्तित्व के निखार का उद्देश्य अधिक बड़ी मात्रा में सम्पन्न किया जा सकता है । यों गुण, कर्म, स्वभाव में आदर्शवादिता और उत्कृष्टता का अधिक समावेश करने से सहज ही व्यक्तित्व का स्तर ऊँचा उठता है और व्यक्ति की गौरव-गरिमा अनायास ही विकसित होती है, किन्तु इन सब उपायों में गायत्री उपासना की अपनी विशेषता है । उसकी पहुँच

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तरंग की गहराई तक है । सद्गुण तभी पनपते हैं जब उन्हें अवसर और परिस्थितियों की अनुकूलता उपलब्ध होती है । उनके अभाव में मनुष्य लड़खड़ाने लगता है और कई बार प्रतिकूलताओं की ओर मुड़ जाता है । गायत्री-उपासना में यह बात नहीं है । वह अन्तराल की बहुत गहरी परतों तक उतर जाती है । दुर्गुणों और कुसंगों का भी उस पर प्रभाव नहीं पड़ता । ऋषियों को अनेक बार दुष्ट-दुराचारियों का विरोध और आक्रमण सहन करना पड़ा है, किन्तु वे विचलित नहीं हुए । सुधार प्रयोजनों के लिए भी उन्हें बुरे लोगों के बीच रहना पड़ा है, पर इससे उन्हें कोई विचलित नहीं कर सका । कारण एक ही है कि गायत्री उपासना मनुष्य के गहन अन्तराल तक उतर जाती है और प्रतिकूलताएँ उन्हें अभ्यस्त श्रेष्ठता से पथ-भ्रष्ट नहीं कर पातीं ।

व्यक्तिगत पवित्रता और प्रखरता के निमित्त गायत्री-उपासना बहुत ही कारगर उपचार है । भोजन द्वारा रक्त उत्पन्न करना एक सरल स्वाभाविक उपाय है, किन्तु कभी-कभी अतीव आवश्यकता के समय किसी दूसरे के शरीर का अनुकूल एवं प्रतिकूल रक्त पिचकारी से भी चढ़ाया जा सकता है और रक्ताल्पता की पूर्ति की जा सकती है । उच्चस्तरीय जीवन-यापन से व्यक्ति की पवित्रता एवं प्रखरता बढ़ती है, इसे सभी जानते हैं, किन्तु यह कार्य गायत्री-उपासना जैसे विशिष्ट उपचार से भी सम्भव होते देखा गया है । गायत्री पुरश्चरण के कितने ही विधि-विधान ऐसे हैं, जो व्यक्ति में विशेष सामर्थ्य का संचार करते हैं और उस सामर्थ्य से विशेष कठिनाइयों का निवारण अथवा विशेष आवश्यकता की पूर्ति होती देखी गई है । इसलिए जहाँ यह नित्यकर्म है, वहाँ विशेष संकट का निवारक ब्रह्मास्त्र भी है ।

साधना ग्रन्थों में गायत्री को ब्रह्मास्त्र कहा गया है । यह शामक भी है और मारक भी। गायत्री तन्त्र के विश्वामित्र कल्प में गायत्री के मारक प्रयोजन का वर्णन किया गया है । लंकाकाण्ड-प्रकरण में मेघनाद ने लक्ष्मण पर इसी ब्रह्मास्त्र का प्रहार किया था और उन्हें मरणासन्न बना दिया था । हनुमान ने सुषेण वैद्य के कथनानुसार संजीवनी बूटी प्राप्त की थी और उसके द्वारा उनका अर्धमृतक स्थिति से उद्धार किया था । महाभारत में कितने ही प्रसंगों में इसी ब्रह्मास्त्र के प्रयोगों का वर्णन है । साथ ही उसके द्वारा ऐसे उपचारों का वर्णन है, जिनमें उस प्रहार के प्राणघातक प्रयोगों से जीवन रक्षा हुई बताई गयी है ।

महर्षि विश्वामित्र को गायत्री महामन्त्र का परम द्रष्टा बताया गया है । उन्होंने इस विद्या में प्रवीण-पारंगत होने की चरम सिद्धि प्राप्त की थी । यज्ञ-रक्षा के निमित्त राम-लक्ष्मण को दशरथ से प्राप्त किया था । चिरकाल तक उन्हें बला और अतिबला विद्यायें अपने आश्रम में सिखाई थीं । वशिष्ठ जी ने इस निमित्त परामर्श और प्रोत्साहन दिया था । छोटे बालकों द्वारा सुबाहु, मारीच, ताड़का जैसे दुर्दान्त असुरों का निधन किया जाना बाल्यकाल के आरम्भिक प्रयोगों का ही प्रतिफल था । आगे चलकर लंकाकाण्ड में राम की सहायता के निमित्त कितने संयोग हुए हैं । प्रत्यक्ष युद्ध तो राम-रावण के मध्य ही हुआ था, पर परोक्ष रूप से विश्वामित्र की ब्रह्मशक्ति का सूत्र संचालन अनेकानेक भूमिकायें निभाता रहा है । हनुमान के द्वारा पर्वत उखाड़ा जाना, लंका-दहन, अशोक वाटिका में प्रवेश होना और दुर्दान्त प्रहरियों की दृष्टि से अदृश्य रहना, सुरसा का मान-मर्दन जैसे कितने ही प्रसंग हैं, जिन्हें अलौकिक ही कहा जा सकता है । यह रहस्यपूर्ण विद्याएँ हनुमान के निजी पराक्रम की देन नहीं थीं वरन् समय-समय पर गायत्री के महासिद्ध विश्वामित्र की सहायता से ही प्राप्त होती रही थीं ।

ऋषि-रक्त से घट का भरा जाना और उससे असुरनिकन्दिनी सीताजी का जन्म होने का आलंकारिक वर्णन ग्रंथों में मिलता है । वस्तुतः विश्वामित्र के तत्त्वावधान में अनेकानेक ऋषियों द्वारा गायत्री का सामूहिक महापुरश्चरण सम्पन्न हुआ था । उसकी संयुक्त सामर्थ्य से मायावी असुरों की अनेक दुर्धर्ष शक्तियों को निरस्त करने का प्रयोजन सिद्ध हुआ था । रावण, अहिरावण, मेघनाद, कुम्भकर्ण की शक्तियाँ सामान्य नहीं थीं । उनका निराकरण इतनी जल्दी और इतनी सरलता पूर्वक नहीं हो सकता था, जैसा कि हुआ । इस संग्राम में शस्त्रबल एवं अस्त्र-शस्त्रों का चमत्कार भी कुछ नहीं कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सका । आत्मिक शक्ति ने ही अपनी गरिमा प्रकट की थी ।

इतिहास-पुराण की गाथाओं में ऐसे अनेक प्रसंग उपलब्ध हैं, जिनमें अध्यात्म बल के सहारे न केवल व्यक्ति विशेष को कठिनाइयों से उबारा है, स्वल्प साधनों और अल्प समय में सफल सम्पन्न बनाया गया है, वरन् ऐसा भी हुआ है कि दुर्भिक्ष, महायुद्ध जैसे व्यापक संकटों के निवारण में सफलता प्राप्त की गई है । जिस प्रकार भौतिक साधनों के सहारे मनुष्य कष्टों से उबरता और सम्पन्नताओं का अधिपति बनता है, उसी प्रकार आत्मबल के सहारे भी त्राण पाने और समुन्नत बनने का लाभ प्राप्त करता है ।

पाण्डिचेरी के महातपस्वी अरविन्द घोष अपने समय के असाधारण गायत्री-उपासक हुए हैं । वे स्वतंत्रता अर्जित करने के लिए कोई महापराक्रम करना चाहते थे । जिसके राज्य में सूर्य अस्त नहीं होता था, ऐसी महाप्रतापी सरकार का मुकाबला करने के लिए दो हजार वर्ष से अन्धकार में भटकती हुई भारतीय जनता किस प्रकार लोहा ले, यह कठिन प्रश्न था । इसके लिए देश के अनेकों बुद्धिजीवी अपने सभी हथियार आजमा चुके थे, पर प्रकाश की कोई किरण कहीं से दृष्टिगोचर न होती थी । जो भी उपाय अपनाया गया, असफल होता रहा । ऐसे समय में योगी अरविन्द ने एकाकी मौन तपश्चर्या का शस्त्र उठाया । उसका परिणाम अद्भुत हुआ । उन बीस वर्षों में भारतभूमि में ऐसे महामानव उत्पन्न हुए, जिनने जनता और सरकार दोनों को हिलाकर रख दिया । यों संसार के इतिहास में राजनेता, समाज सुधारक और विज्ञ, विद्वान समय-समय पर अनेकों उत्पन्न होते रहे हैं, पर एक साथ जितने महामानव भारत में उत्पन्न हुए, उतने संसार में कभी किसी भाग में नहीं जन्मे । जिस प्रकार ग्रीष्म ऋतु के मध्याह्न में अनेकों चक्रवात एक ही समय में उठते और भारी उथल-पुथल करते देखे जाते हैं, ठीक ऐसा ही परिणाम योगी अरविन्द की मौन एकाकी तपश्चर्या से सम्भव हुआ । इस प्रकार अंग्रेज सरकार सत्ता छोड़कर पलायन करेगी , इसकी कोई आशा नहीं करता था । पर जो असम्भव था, सो सम्भव होकर रहा । कांग्रेस ने स्वराज्य प्राप्त किया । यह संसार में अपने ढंग की अनहोनी घटित हुई है । योगी अरविन्द के निकट सम्पर्क में रहने वालों को विदित है कि महायोगी की प्रेरणा से महामाताजी तथा अन्य ऐसे कितने ही अप्रख्यात साधक गायत्री-साधना में उसी प्रयोजन के लिए संलग्न रहे हैं ।

महर्षि रमण, योगी रामकृष्ण पमहंस, समर्थ रामदास जैसे अनेक अध्यात्म तत्त्वज्ञानियों ने एक सुनियोजित योजना के अन्तर्गत अपने-अपने ढंग से गायत्री की उच्चस्तरीय तपश्चर्याएँ की हैं । प्रकट रूप में अनेकों युग ऋषियों ने भारतीय जनता को गायत्री मन्त्र की साधना के लिए प्रेरित किया और उसे वेदमाता के नाम से पुकारा । अनेकानेक मुनि मनीषियों ने गायत्री को वेदमाता ही नहीं, विश्वमाता, देवमाता, तरणतारिणी, कामधेनु, अमृत, पारस, कल्पवृक्ष आदि नाम दिये हैं । गायत्री की योग परक देव-साधना और तन्त्र परक असुर साधना के अनेकानेक विधि विधान हैं । इसलिए उसे भारतीय संस्कृति की जन्मदात्री कहा है । यहाँ यह भी स्मरणीय है कि यज्ञ गायत्री-साधना के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है ।

गायत्री को शब्दबेध शब्द-बाण कहा गया है । यह ब्रह्मास्त्र है । इसके प्रयोग असाधारण हैं और परिणाम भी । इसी प्रकार अग्निहोत्र में अग्नि-प्रज्ज्वलन क्रियाएँ एक जैसी ज्वलनशील प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करती हैं । देखने, छूने में उनके मध्य कोई विशेष अन्तर नहीं होता । किन्तु यदि उनका गहन विश्लेषण किया जाय तो प्रतीत होगा कि उनके मध्य जमीन-आसमान जितना अन्तर है । जठराग्नि एक गुण-धर्म भी है, किन्तु दावानल, बड़वानल की परिणति । यज्ञाग्नि के कई भेद हैं । दृश्य रूप में वे आह्वानीय दक्षिणाग्नि, गार्हपत्याग्नि तीन हैं । किन्तु अध्यात्म क्षेत्र में ये पाँच प्रकार की हैं । उपनिषद् में यम-नचिकेता सम्वाद में उन्हें पाँच भेद वाली बताया गया है । पाँच की पंचाग्नि है । पाँच प्रणाली भी अग्नि स्वरूप हैं । पाँच देवता भी अग्निस्वरूप हैं। पाँच देवता इन्हीं को कहते हैं । वस्तुतः यह प्राण तत्त्वों की, पाँच प्राणों की दिव्य ऊर्जायें हैं । जिन्हें प्रज्ज्वलित करने कि लिये अग्नि या ईंधन की

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवश्यकता नहीं पड़ती । गीता में इसी के सम्बन्ध में कहा गया है, कि योगी प्राणों में प्राण का हवन करते हैं ।

कुण्डलिनी शक्ति को प्राणाग्नि कहा गया है । उसकी सामान्य गरमी को जीवनी शक्ति कहते हैं । किन्तु जब उसके छः चक्रवात, छः चक्रों के रूप में गतिशील होते हैं तो उनका स्वरूप ऋद्धि-सिद्धि के रूप में परिलक्षित होता है । इस ज्योति-ज्वाला की प्रचण्डता विभिन्न प्रकार की होती है । न चूल्हे में जलने वाली आग जैसी, न ज्वर से शरीर को तपा डालने जैसी । यही बात गायत्री की शब्द-संवेदना के सम्बन्ध में है । वह मनुष्यों, पशु-पक्षियों, कीट-पतंगों, वाद्ययन्त्रों आदि किसी में नहीं मिलती । वह जड़ पदार्थों से सर्वथा भिन्न चेतनात्मक शब्द प्रवाह से उद्भूत होती और उसी क्षेत्र में विलय होती है ।

यह असाधारण शब्द-धारा गायत्री है । इसी का वर्णन प्राणाग्नि के प्रवाह के रूप में किया जाता है । जो इस परम ज्योति गायत्री और परम ऊर्जा यज्ञाग्नि को जानते हैं, उनके लिए और कुछ जानने को शेष नहीं रह जाता । इससे कोई नरतनुधारी वंचित न रहे इसलिए हर विज्ञजन को गायत्री एवं यज्ञ की उपासना के लिए कहा गया है । चाहे वह सामान्य प्रतीक पूजा के रूप में ही क्यों न बन पड़े ।

देव-संस्कृति की महत्ता जिस अध्यात्म विज्ञान पर अवलम्बित है, उसे गायत्री और यज्ञ का सम्मिलन कहना चाहिए । इस मार्ग पर जो जितना चल सकेगा, उतना ही दिव्य विभूतियों से सम्पन्न होगा । कोई मानवी गरिमा की इस विशिष्टता से-विलक्षणता से वंचित न रहने पाये, इसलिए शास्त्रकारों का निर्देश है कि गायत्री और यज्ञ का नित्यकर्म में समावेश रहना ही चाहिये ।

गायत्री और यज्ञ का तत्त्वज्ञान

आत्म-परिष्कार मनुष्य जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है । गुण, कर्म, स्वभाव में प्रखरता, प्रामाणिकता और प्रतिभा का विकास, विस्तार इसी आधार पर सम्भव होता है । मनःस्थिति ही परिस्थितियों को जन्म देती है । अनुकूलता प्रतिकूलता यों बाह्य वातावरण से भी किसी कदर जुड़ी रहती हैं, पर उनका उद्गम स्रोत अन्तस्तल ही है । मनुष्य अपने भाग्य का निर्माणकर्त्ता आप है, वह स्वेच्छापूर्वक उत्थान और पतन के मार्ग पर चलता है । इसी आधार पर उसके सामने उत्थान एवं पतन के अवसर सामने आते हैं । सम्पन्नता और विपन्नता भी इसी आधार पर बहुत कुछ निर्भर करती है ।

आत्म-परिष्कार उपक्रम में उपासना का अपना विशिष्ट स्थान है । वह सीधे भावना-क्षेत्र को स्पर्श करती है । भावनाएँ, विचारणाओं और कल्पनाओं का इच्छानुसार मोड़ती हैं । यह प्रक्रिया, क्रिया-कलाप के रूप में फलित होती है । यही है उत्कर्ष और अपकर्ष का केन्द्र बिन्दु, जिसे उपासना-साधना के आधर पर प्रभावित किया जाता है । भली या बुरी उपासनाएँ अपने-अपने विकास और विनाश के आधार खड़े करती हैं ।

आस्तिक समुदाय में अपने-अपने स्तर की उपासनाओं का विधान और प्रचलन है । परम्परावादी उन्हें सम्पर्क क्षेत्र के वातावरण से अपना लेते हैं, किन्तु विचारशीलों के सामने एक कठिनाई यह आती है कि अनेकानेक प्रचलनों में से किसे अपनाएँ किसे न अपनाएँ । इस असमंजस को दूर करने के लिए उन्हें तर्क, तथ्य और प्रमाण की कसौटी लगानी पड़ती है और जानना पड़ता है कि अनेकानेक प्रचलनों में से समाधानकारक क्या है ? किसे छोड़ा और किसे अपनाया जाये ?

यों उपासना का प्रमुख आधार श्रद्धा है । श्रद्धा के साथ आत्म-क्षेत्र की विशिष्टताएँ, विभूतियाँ जुड़ती हैं । अश्रद्धा रहने पर कोई भी पूजा, पाठ, विधि-विधान, जप-तप एक खिलवाड़ बन कर रह जाता है । कौतुक कौतूहल की तरह कई व्यक्ति उपासना, साधना करते तो हैं, पर उनको कोई कहने लायक परिणाम न मिलने पर और भी अधिक अश्रद्धालु बन जाते हैं । यहाँ भूल विधि-विधान के किसी भी क्रम में नहीं खोजी जानी चाहिए, वरन् देखा यह जाना चाहिए, कि उस प्रयोग में श्रद्धा का समावेश कितना रहा ? श्रद्धालु को देव प्रतिमाएँ रामकृष्ण परमहंस की तरह, मीरा की तरह, एकलव्य की तरह शक्ति और यथार्थता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परिलक्षित होती हैं, जबकि अश्रद्धालु प्रतिमाओं का उपहास उड़ाते रहते हैं । मूर्तिकारों के लिए देव प्रतिमाएँ विक्रयार्थ रखी गईं वस्तु मात्र होती हैं, जबकि भावनाशील उनके सहारे अपनी श्रद्धा को परिपक्व करते और भाव-संवेदनाओं को परिष्कृत करते हैं । यहाँ श्रद्धा-विश्वास की शक्ति ही प्रधान रूप से काम करती है । उसके अभाव में साधनाएँ एक प्रकार की चिह्न पूजा भर बन कर रह जाती है।

इतने पर भी मनुष्य विवेकशील होने के नाते पूजा पद्धतियों में से विशिष्टता की खोज-बीन करे और उनमें से अधिक प्रभावी को चुनने का प्रयत्न करे, तो इसमें कुछ भी आश्चर्य की बात नहीं है ।

गायत्री मन्त्र की अपनी विशेषताएँ हैं । उसका शब्द गुन्थन इस प्रकार का है कि जप या उच्चारण करने वाले के आन्तरिक क्षमता केन्द्र प्रभावित और प्रकाशित होते हैं । इस तथ्य को परीक्षा की कसौटी पर कस कर भी जाना जा सकता है । प्रयोग परीक्षण के रूप में कोई कुछ गायत्री उपासना करके देखे तो उसे अनुभव होगा कि श्रम और समय निरर्थक नहीं गया । उसने अपना प्रभाव उत्पन्न किया। भाव-संवेदनाओं में उत्कृष्टता की मात्रा बढ़ी। बुद्धि में आदर्शवादिता का पक्षधर रुझान आरम्भ हुआ । क्रिया-कलाप में सात्त्विकता का अनुपात बढ़ा और प्रतिभा तथा प्रखरता का अनुपात पहले की अपेक्षा अधिक समुन्नत हो चला । इस तथ्य को आत्म-निरीक्षण, परीक्षण के आधार पर देखा समझा जा सकता है । जिन्हें साधना-विज्ञान की क्षमता पर विश्वास नहीं है, वे भी इसे प्रयोग परीक्षणों के रूप में कुछ समय कार्यान्वित कर सकते हैं । अनुसंधानों में बहुत समय, श्रम लगता रहता है । कोई चाहे तो गायत्री उपासना को अनुसंधान के रूप में प्रयोग, परीक्षण की तरह कसौटी पर कस सकता है । अनेकों का अनुभव सत्परिणाम का साक्षी है ।

यदि साधना में श्रद्धा का समावेश हो, तब तो कहना ही क्या ? इस समन्वय से सोना-सुगन्ध के सम्मिश्रण जैसा उदाहरण सामने आता है । श्रद्धा की सिंचाई पाने पर साधना का वृक्ष तेजी से बढ़ता और फलता, फूलता देखा गया है । यों अश्रद्धालुओं का प्रयोग-परीक्षण भी सर्वथा निरर्थक नहीं जाता । वे अपने में आस्तिकता, आध्यात्मिकता और धार्मिकता की मात्रा क्रमशः आगे बढ़ती हुई देखते हैं ।

शब्द-साधना की दृष्टि से भी गायत्री के वाचक, उपांशु और मानसिक जप के अपने-अपने महत्त्व हैं। उनके कारण स्नायु संस्थान और मनःसंस्थान उस प्रकार प्रभावित होते हैं कि अनुपयुक्तताओं का निराकरण और उपयुक्तताओं का अभिवर्धन अनुभव में आने लगे ।

अर्थ की दृष्टि से गायत्री में सद्बुद्धि की देव प्रज्ञा की आराधना है । मनुष्य जीवन में यदि इस तत्त्व के अभिवर्धन की महत्ता समझी जा सके, तो सहज ही यह लालसा उठती है कि विचार-संस्थान का परिमार्जन किया जाय, बुद्धि को न्यायनिष्ठ और विवेकवान बनाया जाये । कल्पनाओं और आकांक्षाओं को अनगढ़ न रहने देकर उन्हें आदर्शवादिता के सघन रूप से जोड़े रखा जाय । बुद्धिमत्ता या दूरदर्शी और नीति-निष्ठ रहे तो व्यक्ति का सुसंस्कारी बनना स्वाभाविक है । ऐसे ही व्यक्ति महामानव स्तर के बनते और महान कार्य करते देखे गये हैं । गायत्री मन्त्र की प्रेरणा इसी दिशा में अग्रसर होने के लिए इंगित करती है । यदि कोई व्यक्ति इस दिशाधारा को अपना सके तो उसका आत्मिक और भौतिक क्षेत्र समुन्नत हो सकना निश्चित है ।

गायत्री मंत्र में 'अहम्' नहीं 'वयम्' का प्राधान्य है । उसके नः शब्द का अर्थ होता है-हम सब । जो कुछ भी सोचा जाय, जो कुछ भी चाहा जाय, जो कुछ भी किया जाय, वह ऐसा होना चाहिए , जिससे सर्वजनीन हित-साधन होता हो । सार्वभौम प्रगति एवं सुख-शान्ति का आधार खड़ा होता है । यही विराट् ब्रह्म की, विश्व-मानव की अर्चना अभ्यर्थना है। इसमें निजी स्वार्थ की संकीर्ण लोभ-मोह की अवहेलना की गई है ।

गायत्री के चौबीस अक्षरों की जो व्याख्या परिभाषा शास्त्रकारों ने की है, उसका गम्भीरतापूर्वक अवलोकन करने से प्रतीत होता है कि धर्म-निष्ठा और समाज व्यवस्था के समस्त आदर्शवादी सूत्र इन अक्षरों में गागर में सागर की तरह भर दिये गये हैं । इन्हें विश्व के सभी धर्मों का तत्त्वज्ञानों का सार संक्षेप कहा जा सकता है । इस आधार पर गायत्री

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मंत्र को मानव धर्म की व्याख्या करने वाला अति संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित शास्त्र कहा जा सकता है । इस आधार पर उसे मानवी आस्था का उच्चस्तरीय निर्धारण भी कहा जा सकता है ।

भारत में अनेक धर्म सम्प्रदाय हैं, उनकी अपनी-अपनी उपासना विधियों पर गायत्री की अपेक्षा अवज्ञा किसी में भी नहीं है । भले ही वे उसे प्रयोग में न लाते हों । ऐसी दशा में गायत्री उपासना को उसकी व्याख्याओं और प्रेरणाओं को ध्यान में रखते हुए सर्वजनीन उपासना कहा जाये तो कोई अत्युक्ति न होगी ।

गायत्री में भगवान को नारी-रूप में मान्यता दी गई है । उसे वेदमाता, देवमाता, विश्वमाता कहा गया है । उसकी प्रतिमाएँ नारी रूप में ही बनी हैं । इससे यह सिद्ध होता है कि नारी की वरिष्ठता और महत्ता को भारतीय संस्कृति में प्रमुखता दी गई है । उसके लिए श्रद्धा रखने, गरिमा स्वीकारने, सम्मान देने और प्रगति के उच्चशिखर तक पहुँचाने में योगदान देने की मान्यता है । इस तथ्य को यदि व्यावहारिक रूप दिया जा सके और नारी उत्कर्ष के लिए सर्वतोमुखी प्रयास चल पड़े तो समझना चाहिए कि देवयुग का इसी धरती पर इन्हीं परिस्थितियों में अवतरण हो सकता है । सतयुग की वापसी जैसा कायाकल्प दृष्टिगोचर हो सकता है ।

गायत्री का दूसरा पक्ष 'यज्ञ' है । दोनों को मिलाकर माता, पिता जैसा युग्म बनता है । यज्ञ का शब्दार्थ है पुण्य, परमार्थ, पराक्रम संगठन । इन उद्देश्यों का प्रतीक अग्निहोत्र के रूप में भी क्रियान्वित होता है, पर वह इतने तक ही सीमित नहीं है । उसके भावार्थ में वे सभी तत्त्व आते हैं जो व्यक्तित्त्व को परिष्कृत बनाते हैं । एक शब्द में यज्ञ को सत्कर्म भी कह सकते हैं ।

गायत्री को सद्ज्ञान का प्रतीक और यज्ञ को सत्कर्म का प्रतिनिधि माना जा सकता है । इसके अभ्यास में गायत्री का जप और यज्ञ का अग्निहोत्र यजन हो सकता है । पर इन दोनों ऊर्जा भरी प्रेरणाओं को इतने तक सीमित नहीं माना जाना चाहिए । जो इन कर्म-काण्डों को कर नहीं पाते, उन्हें भी गायत्री और यज्ञ का विरोधी नहीं कह सकते । इसी प्रकार यह भी हो सकता है कि जो लोग जप और यजन के कर्मकाण्डों को नियमित रूप से करते हैं, वे मात्र क्रिया ही चरितार्थ करते हैं और इन दोनों की प्रकाश-प्रेरणाओं से वंचित रहते हैं । क्रियाओं का मूल्यांकन उनके साथ जुड़ी रहने वाली भावनाओं के आधार पर ही किया जाता है । भावना-रहित क्रिया तो मात्र शारीरिक हलचल भर है । उनसे अंगों की हलचल और पदार्थों का स्थानान्तरण भर होता है । यह समग्र लाभ प्राप्त करने के लिए पर्याप्त नहीं है । गायत्री और यज्ञ का तत्त्व-ज्ञान समझना और उन्हें चिन्तन, चरित्र एवं व्यवहार में उतारना होगा ।

गायत्री के महत्त्व-माहात्म्य के सम्बन्ध में शास्त्रकारों ने बहुत कुछ कहा है । यज्ञ के दर्शन और विज्ञान को भी अनेक प्रसंगों और प्रतिपादनों से बहुत महत्त्व दिया गया है । इन प्रतिपादनों की सचाई जाननी है, तो उनका कर्मकाण्ड ही नहीं तत्वज्ञान भी समझना होगा । न केवल समझना होगा, वरन् जीवन-विधा के साथ जुड़ कर उसके परिणामों की प्रतीक्षा करनी होगी । प्राचीन काल में इस प्रकार के प्रयोग परीक्षण चिरकाल तक होते रहे हैं । एक को दूसरे के अनुभवों से लाभ मिलता रहा है और उस पारस्परिक प्रोत्साहन से वातावरण ऐसा बनता रहा है, जिसे सतयुग के नाम से पुकारा जाता रहा । मनुष्यों में देवत्त्व का उदय और धरती पर स्वर्ग का अवतरण परिलक्षित होता रहा है । भारतीय संस्कृति का प्रगति-रथ जिन पहियों पर आधारित रह कर अग्रगामी बनता रहा, उन्हें गायत्री और यज्ञ कहा जाये तो कुछ अत्युक्ति न होगी । इस प्रयोग परीक्षण को व्यक्तिगत जीवन में और सामूहिक व्यवस्था-क्रम में सम्मिलित करके अब भी वैसा ही लाभ उठाया जा सकता है । सद्ज्ञान और सत्कर्म ही सर्वतोमुखी अभ्युदय के आधारभूत कारण हैं ।

ज्ञान और विज्ञान के शक्ति-स्रोत गायत्री और यज्ञ

भारत-भूमि की प्रसुप्त अंतरात्मा को जगाने के लिये ज्ञान और विज्ञान की प्रतिष्ठापना करना सर्वप्रथम कार्य है । ज्ञान और विज्ञान इन दोनों के बल पर ही कोई व्यक्ति या राष्ट्र उन्नति कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकता है । जब इन दोनों में एक की भी कमी हो जाती है, तो अध:पतन आरंभ हो जाता है । ज्ञान का अर्थ है-विद्या, बुद्धिमत्ता, विवेक, दूरदर्शिता, सद्भावना, उदारता, न्याय प्रियता । विज्ञान का अर्थ है-बल, योग्यता, साधन शक्ति, संपन्नता, शीघ्र सफलता प्राप्त करने की सामर्थ्य, आत्मिक और भौतिक दोनों ही क्षेत्रों में जब संतुलित उन्नति होती है, तभी इसे वास्तविक विकास माना जाता है । प्राचीन काल में भारत भूमि इन दोनों से ही परिपूर्ण थी । साधारण जनता से लेकर राजपरिवार तथा ऋषि आश्रमों में, ज्ञान और विज्ञान की समुचित प्रतिष्ठा थी । राजकुमार भी ऋषियों के आश्रमों में जाकर ज्ञान प्राप्त करते थे और विज्ञान की रहस्यमय नाना कलाओं से विज्ञ बनते थे । दिव्य शस्त्रास्त्रों, दिव्य वाहनों, दिव्य सामर्थ्यों के आश्चर्यजनक वर्णन प्राचीन इतिहास पुराणों में भरे पड़े हैं । ऋषि लोग आत्म चिन्तन में परमार्थ साधनाओं में संलग्न रहते थे तो भी उनको अष्ट-सिद्धि नवनिधि सरीखी लोकोत्तर शक्तियाँ उपलब्ध रहती थीं । भारत प्राचीन काल में बुद्धिमान बनने के लिये, ज्ञान की और बलवान बनने के लिये, विज्ञान की उपासना करने में सदैव संलग्न रहता था । योगी लोग जहाँ भक्ति-भावना द्वारा भगवान में संलग्न होते थे वहाँ कष्ट-साध्य साधनाओं तथा तपश्चर्याओं द्वारा अपने में अनेक प्रकार की सामर्थ्य भी उत्पन्न करते थे । भावना से भगवान और साधना से शक्ति प्राप्त होती है, यह निर्विवाद है ।

आज का ज्ञान प्रत्यक्ष दृश्यों, अनुभवों तथा विज्ञान मशीनों पर अवलंबित है । भौतिक जानकारी तथा शक्तियों को प्राप्त करने के लिये भौतिक उपकरण ही आज के वैज्ञानिक प्रयोग कर रहे हैं । यह तरीका बहुत खर्चीला, श्रमसाध्य, स्वल्प, अस्थायी है । जो ज्ञान बड़े-बड़े विद्वानों, प्रोफेसरों, रिसर्च स्कालरों द्वारा उत्पन्न किया जा रहा है, वह भौतिक जानकारी तो काफी बढ़ा देता है, पर उससे अंत:करण में आत्मिक महानता, उदार दृष्टि तथा लोकसेवा के लिये आत्म-त्याग करने की भावना पैदा नहीं होती । आज का तथाकथित ज्ञान मनुष्य को अधिक स्वार्थी,धूर्त्त खर्चीला एवं बनावट पसंद बनाता जा रहा है । दूसरी ओर जो एक वैज्ञानिक उन्नति हो रही है उससे एक ओर जहाँ थोड़ा-सा लाभ होता है, दूसरी ओर उससे अधिक हानि हो जाती है । रासायनिक खाद देकर खेती की पैदावार बढ़ाई जा रही है, पर इस प्रकार के खाद से जो खाद्य पैदा होता है, उसमें अनेक हानिकारक तत्त्व रहते हैं, जो स्वास्थ्य को बिगाड़ते हैं । कल-कारखानों में वस्तुयें बड़ी मात्रा में तैयार होती हैं, पर उनके धुँएँ से, शोर से वहाँ काम करने वालों पर तथा निकटवर्ती लोगों पर क्या प्रभाव पड़ता है, हानि का अंदाजा लगाया जाय तो उसकी हानि भी कम भयंकर नहीं है । वैज्ञानिक चिंतित हैं, कि एक शताब्दी के भीतर पत्थर का कोयला, जलाऊ तेल, पेट्रोल आदि पृथ्वी में भरे हुए ईंधन समाप्त हो जायेंगे , तब आज की मशीनें बिलकुल बेकार हो जायेंगी । बिजली बनाने के स्रोत भी दिन-दिन सूखते जावेंगे और अणु-विस्फोट से यदि अधिक शक्ति पैदा की जाने लगी, तो उसका प्रभाव वायुमण्डल पर बुरा होगा ।

प्राचीनकाल में ज्ञान और विज्ञान के आधार आज से भिन्न थे । आज जिस प्रकार हर वस्तु जड़ जगत् में से, भौतिक परमाणुओं में से खोजी जाती और उपलब्ध की जाती है, उसी प्रकार प्राचीन काल में प्रत्येक बात, प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक शक्ति आत्मिक जगत में से ढूँढी जाती थी । आज का आधार भौतिकता है, प्राचीन काल का आधार आध्यात्मिक था । विज्ञान का यह सर्वविदित तथ्य है कि जितना कुछ पदार्थ प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर हो रहा है, स्थूल है । उसकी अपेक्षा असंख्यों गुना वही पदार्थ अदृश्य-सूक्ष्म रूप से इस अखिल आकाश में भ्रमण करता रहता है । पृथ्वी पर यदि सौ टन पानी माना जाय, तो आकाश में करोड़ों टन पानी हर समय अदृश्य रूप से घूमता हुआ माना जायगा । हमारा विचार और संकल्प भी एक पदार्थ है । इस पदार्थ में एक प्रकार की चुम्बक-शक्ति उत्पन्न की जा सकती है और उसकी सहायता से अदृश्य जगत में भ्रमण करते रहने वाले किन्हीं विशेष पदार्थों के परमाणुओं को खींचकर अपनी ओर लाया जा सकता है । विज्ञान के इस आधार को पकड़कर ऋषियों ने यह देखा, कि जब सृष्टि के सभी पदार्थ के अणु अपने शरीर क्षेत्र तथा मन: क्षेत्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में विद्यमान हैं, तो उनमें से उपयोगी अणुओं को विकसित करके उसी जाति के असंख्य अणुओं को जगत में से खींचकर अभीष्ट वस्तु प्राप्त कर लेने का प्रयोजन सिद्ध क्यों न किया जाय ? उन्होंने इसी आधार पर विज्ञान की खोज की और अपने शरीर तथा मन में छिपी हुई नाना प्रकार की शक्तियों को विविध साधनाओं द्वारा जाग्रत किया । फलस्वरूप उनकी पकड़ने की शक्ति इतनी बलवती हो गई कि जिस प्रकार सारस अपनी लम्बी गर्दन पानी में डुबोकर चाहे जहाँ से मछली पकड़ लेता है, उसी प्रकार वे आकाश क्षेत्र में से नाना प्रकार की वस्तुएँ , सामर्थ्य तथा शक्तियाँ पकड़ लेते थे ।

ज्ञान और विज्ञान की हमारी प्राचीन शोध गायत्री और यज्ञ के आधार पर होती थी, क्योंकि यही दोनों आध्यात्म विद्या के माता-पिता हैं । गायत्री ज्ञान रूपिणी है, यज्ञ, विज्ञान प्रतीक है । गायत्री मंत्र के २४ अक्षरों में मनुष्य-जाति का ठीक प्रकार प्रदर्शन करने वाली शिक्षाएँ भरी हुई हैं । इसके अतिरिक्त उन अक्षरों का गुंथन रहस्यमयी विद्या के रहस्यमय आधार पर भी है । इन २४ अक्षरों को यदि शास्त्रोक्त उपासना विधान के अनुसार भी उपयोग किया जाय तो शरीर और मन में भरी हुई अलौकिक शक्तियाँ अपने-अपने ढंग से अपने-अपने समय पर स्वयमेव उद्‌भव होती जाती हैं । आध्यात्मिक गुणों की तेजी से अभिवृद्धि होती है, बुद्धि तीव्र होती है तथा ऐसी दूरदर्शिता का विकास होता है, जिसके आधार पर जीवन की समस्या की अनेक गुत्थियों को सरल किया जा सके ।

यज्ञ का विज्ञान अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है । वेदमंत्रों की शब्द-शक्ति को विशिष्ट कुण्डों, समिधाओं, हवियों चरुओं के साथ उत्पन्न की हुई विशेष सामर्थ्यवान अग्नि में सम्मिश्रित कर देने पर रेडियो सक्रिय तरंगों का आविर्भाव होता है । यह शक्ति तरंगें रडार यंत्र की तरह संसार के किसी भी भाग में भेजी जा सकती हैं, किसी व्यक्ति-विशेष प्रयोजन के शरीर में भरी जा सकती हैं, प्रकृति के गुह्य-गह्वर में किसी विशेष प्रयोजन के लिये प्रविष्ट कराई जा सकती हैं । वर्षा, धान्य, दूध, आरोग्य, प्राण जीवन आदि की पृथ्वी पर अभिवृद्धि कराने के लिये उनका उपयोग किया जा सकता है । भावनाओं, विचारधाराओं तथा परिस्थितियों के परिवर्तन के लिये यज्ञ से उत्पन्न शक्तियों का उपयोग हो सकता है । इस प्रकार के अगणित कारण और लाभ हैं, जिनके कारण यज्ञ को एक अत्यन्त आवश्यक प्रक्रिया माना गया है । हिन्दू धर्म में प्रत्येक पर्व, उत्सव, पूजन, कर्मकाण्ड, व्रत, संस्कार, त्यौहार, उपासना, साधन-यज्ञ के साथ ही होता है । प्रसूति गृह में अखंड अग्नि की स्थापना के साथ हिन्दू बालक का जन्म होता है और जीवन लीला समाप्त होने पर यज्ञ भगवान को अन्त्येष्टि के साथ शरीर सौंप दिया जाता है । यज्ञ को इतना महत्त्व ऋषियों ने इसलिये दिया था, कि वह न केवल अनेकों भौतिक शक्तियों को देने वाला है, वरन् आत्मा का कल्याण करने वाला शरीर और मन को निर्मल, निर्विकार बनाकर शान्तिदायक परिस्थितियाँ उत्पन्न करने वाला भी है ।

सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिये हमें ज्ञान और विज्ञान की आवश्यकता होगी । इसके बिना वह महान कार्य सम्पन्न न हो सकेगा । भारतीय संस्कृति का बीज मंत्र गायत्री है । उसी की शिक्षाओं तथा शक्तियों के आधार पर हमारा सारा ढाँचा खड़ा हुआ है । अग्नि के समान तेजस्वी रहना, यही तो हिन्दू जीवन का आदर्श है । भौतिक माता-पिता हमें शरीर सम्पत्ति, शिक्षा सुविधा आश्रय सहयोग, स्नेह आदि बहुत कुछ देते हैं । गायत्री माता और यज्ञ पिता की यदि हम प्रतिष्ठा और उपासना करें, तो इसके द्वारा हम और भी उत्तम एवं महत्त्वपूर्ण वस्तुएँ प्राप्त कर सकते हैं ।

अपनी थोड़ी-सी वस्तु को वायु रूप बनाकर उन्हें समस्त जड़-चेतन प्राणियों को बिना किसी अपने-पराये, मित्र-शत्रु का भेद किए साँस द्वारा इस प्रकार गुप्तदान के रूप में खिला देना कि उन्हें पता भी न चले कि किस दानी ने हमें इतना पौष्टिक तत्त्व खिला दिया-सचमुच एक श्रेष्ठ ब्रह्मभोज का पुण्य प्राप्त करता है, कम खर्च में बहुत अधिक पुण्य प्राप्त करने का यज्ञ एक सर्वोत्तम उपाय है ।

यज्ञ सामूहिकता का प्रतीक है । अन्य उपासनायें या धर्म-प्रक्रियायें ऐसी हैं, जिन्हें कोई अकेला कर या करा सकता है, पर यज्ञ ऐसा कार्य है, जिसमें अधिक सहयोग की आवश्यकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होली आदि बड़े यज्ञ तो सदा सामूहिक ही होते हैं । यज्ञ आयोजनों से सामूहिकता, सहकारिता और एकता की भावनाएँ विकसित होती हैं ।

प्रत्येक शुभ कार्य, प्रत्येक पर्व- त्यौहार संस्कार यज्ञ के साथ सम्पन्न होता है । यज्ञ भारतीय संस्कृति का पिता है । यज्ञ भारत की एक मान्य एवं प्राचीनतम वैदिक उपासना है । धार्मिक एकता एवं भावनात्मक एकता को लाने के लिए ऐसे आयोजनों की सर्वमान्य साधना का आश्रय लेना सब प्रकार दूरदर्शितापूर्ण है ।

गायत्री सद्बुद्धि की देवी और यज्ञ सत्कर्मों का पिता है । सद्भावनाओं एवं सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्धन के लिए गायत्री माता और यज्ञ पिता का युग्म हर दृष्टि से सफल एवं समर्थ सिद्ध हो सकता है । गायत्री यज्ञों की विधि-व्यवस्था बहुत ही सरल, लोकप्रिय एवं आकर्षक भी है । जगत के दुर्बुद्धिग्रस्त जन-मानस का संशोधन करने के लिए सद्बुद्धि की देवी गायत्री महामंत्र की शक्ति एवं सामर्थ्य अद्भुत भी है और अद्वितीय भी ।

नगर, ग्राम अथवा क्षेत्र की जनता को धर्म प्रयोजनों के लिए एकत्र करने के लिए जगह-जगह पर गायत्री यज्ञों के आयोजन करने चाहिए । गलत ढंग से करने पर वे मँहगे भी होते हैं और शक्ति की बर्बादी भी बहुत करते हैं । यदि उन्हें विवेक बुद्धि से किया जाय तो कम खर्च में अधिक आकर्षक भी बन सकते हैं और उपयोगिता भी बहुत हो सकती है ।

अपने सभी कर्मकाण्डों, धर्मानुष्ठानों, संस्कारों, पर्वों में यज्ञ आयोजन मुख्य है । उसका विधि-विधान जान लेने एवं उनका उद्देश्य प्रयोजन समझ लेने से उन सभी धर्म-आयोजनों की अधिकांश आवश्यकता पूरी हो जाती है ।

लोग-मंगल के लिए, जन-जागरण के लिए, वातावरण के परिशोधन के लिए स्वतंत्र रूप से भी यज्ञ-आयोजन सम्पन्न किए जाते हैं । संस्कारों और पर्व आयोजनों में भी उसी की प्रधानता है ।

प्रत्येक भारतीय धर्मानुयायी को यज्ञ-प्रक्रिया से परिचित होना ही चाहिए । इसी का वर्णन-विवेचन अगले पृष्ठों पर किया जा रहा है ।

***

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ की अनिर्वचनीय महत्ता

शास्त्रों में यज्ञ की महत्ता पर बहुत कुछ कहा गया है-

यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म

-शतपथ

यज्ञ ही संसार का सर्वश्रेष्ठ शुभ कार्य है ।

अयज्ञियो हत वर्चाभवति ।

-अथर्व

यज्ञ न करने वाले का तेज नष्ट हो जाता है ।

नाग्निहोत्रोत्परो धर्म :

-कूर्म पुराण

अग्निहोत्र से बढ़कर और कोई धर्म नहीं ।

यज्ञं जनयन्तु सूरयः

-ऋग्वेद १०/६६/२

हे विद्वानो, संसार में यज्ञ का प्रचार करो ।

यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः

-अथर्व

यज्ञ ही समस्त विश्व ब्रह्माण्ड का मूल केन्द्र है ।

अनाहूतोऽध्वरं व्रजेत्

-याज्ञवल्क्य

बिना बुलाये भी यज्ञ में सम्मिलित होना चाहिए ।

अयज्ञियो हत वर्चो भवति

-अथर्व

यज्ञ रहित मनुष्य का तेज नष्ट हो जाता है

यज्ञोऽयं सर्व कामधुक्

-अंगिरा

यह यज्ञ सब कामनाएँ पूर्ण करने वाला है ।

प्राचं यज्ञं प्रणतया सस्वाय

-ऋग्वेद १०/१०१/२

प्रत्येक शुभ कार्य को यज्ञ के साथ आरम्भ करो ।

ईजानाः स्वर्ग यान्ति लोकम्

-अथर्व १८/४/२

यज्ञ करने वाले को स्वर्ग सुख प्राप्त होता है

सर्वेषां देवानां आत्मा यद् यज्ञः

-शतपथ १३/३/२/१

सब देवताओं की आत्मा यज्ञ ही है ।

अतप्त तनूर्न तदामो अश्नुते

-ऋग्वेद ९/८३/१

जो तप नहीं करता वह सुख नहीं पाता ।

भद्रोनो अग्नि राहुतः

-यजु १५/३८

यज्ञ में दी हुई आहुतियाँ कल्याणकारक होती हैं

असंस्तोथ वा एष यज्ञः

-तै० ब्रा० १/४/९

यज्ञ का पुण्य फल कभी नष्ट नहीं होता ।

मा सुनोनेति सोमम्

-ऋग्वेद २/३०/७

यज्ञानुष्ठान की महान् उपासना बन्द न करो ।

सम्यञ्चो अग्नि सपर्यत

-अथर्व ३/३०/६

सब को मिलकर यज्ञानुष्ठान करना चाहिये ।

अग्ने होत्रिणे प्रणुदे सपत्नाम्

-अथर्व ९/२/६

यज्ञ करने से शत्रु नष्ट हो जाते हैं ।

सप्रेद्धो अग्निजिंह्वाभि रुदेतु हृदयादधि

-अथर्व

जो हवन करते हैं उनके हृदय में परमात्मा का तेज प्रकाशित होता है ।

यजभाग भुजः सर्वे ।

-दुर्गा सप्तीशती १३/३४

सभी यज्ञ-भाग के भागीदार होते हैं ।

यज्ञा कल्याण हेतवः

-विष्णु०

यज्ञ से सबका कल्याण होता है ।

कस्मै त्व विमुञ्चति तस्मै त्वं विमुञ्चति

-यजु०

जो यज्ञ को त्यागता है, उसे परमात्मा त्याग देता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यज्ञादिभिर्देवाः शक्ति सुखदीनाम्

यज्ञ से देवत्व, शक्ति सुख आदि सम्पत्तियाँ मिलती है ।

यज्ञेषु देवास्तुष्यन्ति

-कालिका पुराण

यज्ञ से देवता प्रसन्न होते हैं

अग्निहोत्रात्परंनान्यपवित्रमिह पठ्यते

-पद्म पुराण

अग्निहोत्र से बढ़कर पवित्र कर्म संसार में अन्य नहीं है ।

निष्कामः कुरुते यस्तु स परब्रह्मं गच्छति

-मत्स्यपुराण

निष्काम भाव से हवन करने वाले को निश्चय ही परब्रह्म की प्राप्ति होती ।

सर्वा बाधा निवात्यर्थं सर्वान् देवान् यजंत बुधः

-शिव पुराण

सभी बाधाओं की निवृत्ति के लिये, बुद्धिमान पुरुषों को देवताओं की यज्ञ द्वारा पूजा करनी चाहिये ।

सर्व सपापं तरतियो ऽत्वमेधं यजेतवै

-पद्म पुराण

सब पापों में रत व्यक्ति भी यज्ञ करने से पाप मुक्त हो जाता है ।

ब्राह्मण, ग्रन्थों, संहिताओं तथा उपनिषदों में अनेक स्थलों पर यज्ञ का ईश्वर परक, देव परक एवं अत्यन्त प्रतिष्ठित एवं महत्वपूर्ण शब्दों में स्मरण किया गया है ।

यज्ञो वै विष्णुः

-शत० ब्रा० १/१/१/२

यज्ञो वै विष्णुः

-तैत्तिरीय संहिता १/७/४

पुरुषो वै यज्ञः ।

-शत० ब्राह्मण १/२/४/३/२

इन वाक्यों में यज्ञ को परमात्मा का रूप माना गया है । क्योंकि परमात्मा के अधिकांश गुण यज्ञ की अग्नि में मौजूद होते हैं ।

यज्ञो वै स्वरहर्देवाः सूर्यः

-शव० ब्रा० १/१/१/२/२

यज्ञ एव सविताः

-गो० ब्रा० पू० १/३३

स यः स यज्ञोऽसौ स आदित्यः

-शत० ब्रा० १४/१/१/६

इन्द्रो वै यज्ञः

-मै० शा० ४/३/७

वै प्रत्यक्ष यज्ञो यत्प्रजापतिः

-शत० ब्रा० ४/३/४/३

प्रजापतिर्वै यज्ञः

-तैत्ति० १/१/१०/१०

प्रजापतिर्वै यज्ञः

-गोपथ० ब्रा० पू० २/१८

प्रजापतिर्यज्ञः

-शत० ब्रा० १/१/१/१

यज्ञो वै प्रजापतिः

-कौ० १०/५

यज्ञः प्रजापतिः

-शत० ब्रा० ११/६/३/९

इन वाक्यों में यज्ञ को सूर्य इन्द्र एवं प्रजापति माना गया है । जिस प्रकार सूर्य से प्रकाश उष्णता आरोग्य प्राप्त होता है, इन्द्र से वर्षा एवं वनस्पति उपलब्ध है, प्रज्ञापति प्रजा का पालन करते हैं वैसे ही यज्ञ भी इन तीनों देवताओं के कार्य को पूरा करता है । इसलिए उसे प्रत्यक्ष सूर्यः इन्द्र एवं प्रजापति माना गया है ।

प्रथमो हि यज्ञः

-कपि० शा० ४०/२०

यज्ञो वै कर्म

-शत० ब्रा० १/१/१/१

यज्ञो वै श्रेष्ठतरं कर्म

-कपि० शा० ४६/६

यज्ञो वै श्रेष्ठतरं कर्म

-१/७/१/५

इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञ भाविताः

-गीता

यज्ञ से प्रसन्न होकर देवता अभीष्ट सुख प्रदान करते है ।

सप्रद्धो अग्निर्जिह्वाभि रुदेतु हृदयादधि ।

-अथर्व

जो हवन करते हैं उनके हृदय में परमात्मा का तेज प्रकाशित होता है ।

महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीय क्रियते तनुः ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ और महायज्ञों द्वारा यह शरीर 'ब्राह्मण' बनता है ।

कस्मैत्वं विमुञ्चति तस्मै त्वं विमुञ्चति ।

जो यज्ञ को त्यागता है, उसे परमात्मा त्याग देता है ।

यज्ञादिभिर्देवाः शक्ति सुखादीनाम् ।

यज्ञ से देवत्व, शक्ति, सुख आदि सम्पत्तियाँ मिलती हैं ।

निष्कामः कुरुते यज्ञ सपरं ब्रह्म गच्छति ।

निष्काम भाव से यज्ञ करने से परमात्मा की प्राप्ति होती है ।

यज्ञेन धियते पृथ्वी यज्ञ स्तारयति प्रजाः ।

यज्ञ ही पृथ्वी को धारण किए हुए हैं । यज्ञ से ही जनता का निस्तार होता है ।

यज्ञैरेव महात्मानो वभू बुरधिकाः सुराः ।

यज्ञों द्वारा सत्पुरुष देवता बन जाते है ।

अग्नि होत्रिणे प्रणुदे सपत्नाश्र ।

-अथर्व० १/२/६

यज्ञ करने से शत्रु नष्ट हो जाते हैं ।

शत्रुता को मित्रता में बदल देने का सर्वोत्तम उपाय यज्ञ है ।

तां वेद विहितमिष्टमारोग्यार्थी प्रयोजयेत् ।

आरोग्य चाहने वाले को वेदोक्त रीति से हवन करना चाहिए ।

नायं लोकोऽस्त्य यज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम् ।

-गीता

यज्ञ न करने वाले को लोक और परलोक कुछ भी प्राप्त नहीं होता ।

नास्ति यज्ञ समं दानं, नास्तियज्ञ समोविधिः ।

-महाभारत

यज्ञ के समान और कोई दान नहीं । यज्ञ के समान और कोई विधान नहीं ।

यज्ञेन हि देवा दिवङ्गता यज्ञेनासुरा नपानुदन्तेः ।

-नारायणो पनिषद्

यज्ञ से ही देवताओं ने स्वर्ग का अधिका प्राप्त किया और असुरों को हराया ।

यज्ञार्थत्कर्मणोऽन्यत्रलोकोऽयं कर्म बन्धनः ।

-गीता

यज्ञ के निमित्त किए हुए कर्मों के अतिरिक्त और सब कर्म बन्धन रूप है ।

भद्रो नो अग्नि राहुतः ।

-यजु० १५/३२

यज्ञ में ही हुई आहुतियाँ कल्याणकारक होती है जो अपना कल्याण चाहते हैं वे यज्ञ किया करें ।

मा सुनोतेति सोमम्

-ऋग्० २/३०/७

यज्ञानुष्ठान की महान उपासना बन्द न करो । जहाँ यज्ञ बन्द हो जाते हैं वहाँ से सुख-शान्ति चली जाती है ।

सर्वेषां देवानां आत्मा यद् यज्ञः ।

-शतपथ १३/३/२/१

सब देवताओं की आत्मा यह यज्ञ है । यज्ञ करने वाले देवताओं की आत्मा तक पहुँचते हैं ।

इन वाक्यों में यज्ञ को सर्वश्रेष्ठ कर्म, सबसे आवश्यक प्राथमिकता देने योग्य कर्म कहा है । क्योंकि संसार में जितने भी श्रेष्ठ कर्म है उन सब में यज्ञ का स्थान निश्चय ही सर्वोपरि है । जितने कार्य संसार में आवश्यक है, सबसे पहले करने योग्य हैं उनमें यज्ञ का पहला नम्बर है, क्योंकि अन्य कार्य मनुष्य का जितना हित साधन करते हैं, यज्ञ उन सबसे अधिक लाभ दायक है ।

यज्ञो वै परशुः

-शत० ब्रा० ३/६/४/१०

यज्ञो वै आपः

-शत० ब्रा० १/१/१/१

यज्ञो वै अन्नः

-शतः० ब्रा० १/१/२/२

यज्ञो वै प्राविन्रम्

-शत० ब्रा० १/४/३/५२

इन वाक्यों में यज्ञ को परशुः, आपः, अन्नः , प्राविन्रम् सदृश्य महत्वपूर्ण शक्तियों का प्रतीक बताया गया है । इन सूक्ष्म शक्तियों का लाभ प्राप्त करके मनुष्य प्रकृति पर अपना आधिपत्य स्थापित कर सकता है ।

यज्ञ की महिमा साधारण नहीं है । भारतीय धर्म में प्रत्येक शुभ कार्य यज्ञ हवन के साथ आरम्भ होता है । इतना ही नहीं आगे चलकर अपने सब कर्मों को यहाँ तक कि अपने आपको यज्ञमय, यज्ञ रूप बना लेने का विधान है । मनुष्य का जीवन यज्ञ के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साथ आरम्भ होता है और यज्ञ के साथ ही उसकी समाप्ति होती है । गर्भाधान का आरम्भिक संस्कार- जिनमें रजवीर्य के संयोग से देह का प्रथम कलल उत्पन्न होता है, यज्ञ के साथ होता है । जब देह में से प्राण निकल जाता है तब भी देह को यज्ञ भगवान का भेंट करने के लिए अन्त्येष्टि की जाती है ।

निर्विकार प्रजनन क्रिया को भी धार्मिक दृष्टि से यज्ञ ही माना गया है ।

तद्वस्तेव प्रजननस्य रूपम् । अग्निर्ज्योति ज्योतिर्ग्निः स्वोहति । तदुभयतो ज्योती रेतो देवतया परिगृहणाति उभयतः परिगृहीतं वै रेतः प्रजायते तदुभवतः एवैत्परिगृह्य प्रणयति ।

-शतपथ

यह अग्नि ज्योति की आहुति सन्तानोत्पत्ति का रूप है । इसलिए ज्योति के दोनों ओर वीर्य के देवता अग्नि को बिठाया है, क्योंकि स्त्री के रज को जब पुरुष का वीर्य दोनों ओर से घेर लेता है तब ही सन्तान उत्पन्न होती है ।

शतपथ में गर्भाधान क्रिया में भी यज्ञ भावना की स्थापना की है ताकि उससे उत्पन्न बालक यज्ञ उद्देश्यों की पूर्ति करने वाला हो ।

सवा एष आत्मैव यत्सौत्रामणी योनि रेव वरुणः रेत इन्द्र,
तस्या वेदिरुपस्थो लोमानि बीर्हिश्चम्प्राधिपवर्ण समिद्धो मध्यस्तस्तौ मुष्कौ स याबान्ह वै वाजपेयेन यज्ञ यानस्य लोको भवति तावानस्य लोको भवति य एवं विद्वानधोत्पहासञ्चरति ।

-शतपथ

यह आत्मा ही सौत्रामणी यज्ञ है । इस यज्ञ में स्त्री योनि वरुण देवता है । पुरुष वीर्य इन्द्र देवता है, स्त्री अंग यज्ञ वेदी और पुरुष अंग अग्नि है । जो कुत्सित उद्देश्य से नहीं परमार्थ उद्देश्य के लिए सन्तानोत्पादन करता है सो यज्ञ के फल को प्राप्त करता है ।

इन्हीं यज्ञ भावनाओं के साथ भारतीय आत्माएँ माता के गर्भ में स्थापित होती और जन्म लेती हैं । यज्ञमय जीवन जीती है और जीवन नाटक को समाप्त करके उस देह को चिता रूपी यज्ञ में समर्पित कर देती है ।

भगवान् राम ने चारों भाइयों सहित अपने शरीर धारण में यज्ञ को ही आधार बनाया । राजा दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञ कराके अपने आँगन में अलौकिक आनन्द को अवतीर्ण किया । दशरथ जैसे पुत्रेष्टि यज्ञ भले ही सब लोग नहीं कर सकते पर गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्त, नामकरण, जातकर्म आदि संस्कारों में यज्ञ को प्रथम स्थान देकर बालक पर शुभ संस्कारों से आच्छादित एवं परिवेष्टित करते थे ।

यज्ञ में वेद मन्त्रों के साथ आहुति देने के अनेक सत्परिणाम उत्पन्न होते हैं, उन परिणामों में सबसे प्रथम यह है कि मनुष्य की आत्मा शुद्ध होती है, उसके चिर संचित कुसंस्कार नष्ट होते हैं, मनोविकार घटते हैं और शुभ संकल्प एवं ब्रह्म तेज की तीव्र गति से अभिवृद्धि होती है । शास्त्रों में ऐसे अनेक प्रमाण मौजूद हैं-

य एनं परिषीदन्ति समादधतिचक्षसे ।
संप्रेद्धो अग्निजिव्हाभिरुदेतु हृदयादधि ।

-अथर्व ६/७५/१

जो इस अग्नि के चारों ओर बैठकर हवन आदि करते हैं और दिव्य उद्देश्य से हवि चढ़ाते हैं उनके हृदय में परमात्मा का तेज प्रकाशित होता है ।

प्रहोत्रे पर्वयं वचोग्नये भस्ता बृहत ।
विषां ज्योतीं विभृते न विद्यते ।

-सा० म० ३८

यज्ञ करने से सद्बुद्धि, तेज और भगवान् की प्राप्ति होती है ।

ॐ बसोः पवित्रमसि द्यौरसि पृथिव्यसि मातरिश्वनो धर्मोसि विश्वधा असि । परमेण धाम्ना हऊँ हस्वमा न्होमीं ते यज्ञ पतिमाह्वायाति ।

-यजु. १/२

हे यज्ञ ! तू पवित्र है एवं पवित्रता का हेतु है । तू द्यौ लोक है, तू ही पृथ्वी लोक है । तू वायु को चलता एवं शुद्ध करता है । तू विश्व को धारण करता है । तू परमधाम से सुख को बढ़ाता है । हे यज्ञ, तू यजमान को मत त्याग यह यजमान तुझे कभी न त्यागे

दत्तमिष्टं हुतंचैव तप्तानि च तपांसिच ।
वेदाः सत्य प्रतिष्ठानास्तंस्तमात्सत्य परोभवेत ।

-वाल्मीक० १०९/१४

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दान, यज्ञ, होम, तपस्या और वेद, इनका आश्रय लेना ही सत्य है । अतः सब को सत्यनिष्ठ होना चाहिए । अर्थात् यज्ञादि उपरोक्त सत्य कर्तव्यों में संलग्न होना चाहिए ।

यज्ञाः कल्याण हेतवः

-विष्णु पुराण ६/१/१८

यज्ञ ही कल्याण का हेतु है ।

यज्ञ के द्वारा जो आध्यात्मिक आनन्द मिलता है वह अलौकिक है । उसे स्वर्ग सुख कहते हैं । यों यज्ञ द्वारा अनेक कामनाओं की पूर्ति भी होती है पर उसका मुख्य लाभ आत्मकल्याण है । आत्मा में ईश्वरीय प्रकाश का अविर्भाव करना है । यह ब्रह्म तेज किसी जीव में जितना ही बढ़ता है उतना ही उसे-देवताओं को ही उपलब्ध हो सकने वाला-स्वर्गीय सुख प्राप्त होता है । कहा भी है-

नौह वा एषा स्वर्ग्या । यदग्नि होत्रम् ।

-शतपथ २/३/३/१५

यह अग्नि निश्चय ही स्वर्ग सुख प्राप्त करने वाली विशेष नौका है ।

अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्ग कामः ।

स्वर्ग की कामना करने वाले को अग्निहोत्र करना चाहिए ।

यज्ञ दान तपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ।।

-गीता १८/५

यज्ञ, दान, तप और कर्म का त्याग नहीं ही करना चाहिए । इन्हें करना ही उचित है । यह यज्ञ दान और तप मनीषियों को भी पवित्र करता है ।

यज्ञेन देवां विमला विभांति,
यज्ञेन देवा अमृत्वमाप्नुयुः ।
यज्ञेन पापैर्बहुभिर्विमुक्तः,
प्राप्नोति लोकान् परमस्य विष्णो ।।

-हारीत

यज्ञ से समस्त लोक निर्मल और सुन्दर बनते हैं । यज्ञ से देवता अमर होते हैं । यज्ञ से अनेक पापों से छुटकारा तथा परमात्मा के लोक की प्राप्ति होती है ।

देह में जो असुरता-मय, पाप रूप कुसंस्कार असुर प्राण भरे रहते हैं, तथा वे कुविचारों के दूषित वातावरण के रूप में संसार में भ्रमण करते रहते हैं, यज्ञ द्वारा उनका विनाश होकर देव प्राण की बुद्धि होती है । अर्थात् असुरता घटकर देवत्व पनपता है । यथाः-

ये रूपाणि प्रति मुञ्चमाना असुराः सन्तः स्वधया चरन्ति । परापुरो निपुरो ये भरन्त्याग्निष्टां लोकात् प्रणुदात्य स्मात् ।।

-यजु २/३०

जो असुर प्राण इस पृथ्वी पर असुर रूप से विचरण करते रहते हैं वे यज्ञ की अग्नि द्वारा शरीर में से निकाल बाहर किये जाते हैं ।

यज्ञ होम आदि द्वारा इस शरीर को ब्राह्मण बनाया जाता है, उसमें ब्राह्मी गुण स्थापित किये जाते हैं । इन आवश्यक धर्मकृत्यों की उपेक्षा करने से मनुष्य ब्राह्मणत्व से वंचित हो जाता है ।

स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येन ज्यायासुतः ।
महायज्ञैश्च यज्ञश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः ।।

-मनु०

स्वाध्याय, व्रत, होम, वेदाध्ययन, सुप्रजनन, यज्ञ तथा महायज्ञों द्वारा यह शरीर ब्राह्मण किया जाता है ।

यज्ञ ऐसा आवश्यक कर्म है कि उसे करते ही रहना चाहिये क्योंकि इससे परमात्मा प्रसन्न होता है, प्रभु की प्राप्ति होती है, जिस पर परमात्मा प्रसन्न है उसे किसी वस्तु की कमी नहीं रहती । यज्ञ परित्याग करने से मनुष्य अनेक सत्परिणामों से वंचित होकर अधोगामी बनता है ।

यस्य राष्ट्रे पुरे चैव भगवान् यज्ञपूरुषः ।
इज्यते स्वेन धर्मेण जनैर्वर्णाश्रमान्वितैः ।
तस्य राज्ञो महाभाग भगवान् भूत भावनः ।
परितुष्यति विश्वात्मा तिष्ठतो निज शासने ।
तास्यिंस्तुष्टे किमप्राप्यं जगतामीश्वरेश्वरे ।।
लोकाः सपाला ह्येतस्मै हरन्ति बलिकाहता ।।

-भागवत ४ । १४ । १८-२०

जिस राष्ट्र या नगर में भगवान यज्ञ पुरुष का यजन होता है उस पर भगवान प्रसन्न होते हैं । जहाँ भगवान प्रसन्न होते हैं वहाँ कोई वस्तु अप्राप्य नहीं रहती ।

कस्त्वा विमुञ्चति सत्वा विमुञ्चति कस्मैत्व विमुञ्चति तस्मै त्वं विमुञ्चति । पोषाय रक्षसा भागोऽसि ।

-यजु २ । २३

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भला कौन सुख चाहने वाला, यज्ञ को छोड़ता है ? जो यज्ञ को छोड़ता है उसे यज्ञ रूप परमात्मा भी छोड़ देता है । सब की पुष्टि एवं उन्नति के लिए हविष्य यज्ञ में छोड़ा जाता है । जो नहीं छोड़ता वह राक्षस हो जाता है ।

इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि यज्ञ परमात्मा की अर्चना का सर्वश्रेष्ठ स्वरूप है । वह मनुष्य के जीवन क्रम से-उसकी जीवनचर्या से अनिवार्य रूपेण जुड़ा हुआ है । इसीलिए कहा गया है -

ॐ आदित्य रास्नासि विष्णोर्वेष्णोऽस्यूर्जेत्वाऽदब्धेन त्वा चक्षुषावपश्यामि । आग्नेजिह्वासि सुहूर्देवेभ्यो धाम्ने मे भव यजुषे यजुषे ।

-यजुर्वेद १ । ३०

अर्थात्-जिस प्रकार परमात्मा वेद के प्रत्येक मन्त्र से प्रतिपादित है तथा सर्वव्यापी एवं उपासना करने योग्य है उसी प्रकार यज्ञ भी वेद के प्रत्येक मन्त्र से प्रतिपादित, सब प्राणियों को बल तथा सुख साधन पहुँचाने वाला है ।

यो यज्ञे यज्ञ परमैरिज्यते यज्ञसंज्ञितः ।
तयज पुरुषं विष्णु नमामि प्रभुमीश्वरम् ।

जो यज्ञ द्वारा पूजे जाते हैं, यज्ञमय हैं, यज्ञ रूप हैं उन यज्ञ रूप परमेश्वर को नमस्कार है ।

भारतीय धर्म शास्त्रों में यज्ञ को ईश्वर रूप माना गया है । सब वेदों में ज्येष्ठ ऋग्वेद के सर्व प्रथम मन्त्र **''अग्निमीड़े पुरोहितं''** में अग्नि रूप परमात्मा की वन्दना एवं प्रार्थना की गई है । इससे प्रतीत होता है कि वेद के अवतरण से भी पूर्व अग्नि रूप भगवान् की महिमा प्रकट थी ।

यज्ञोऽयं सर्वकामधुक्

वैदिक काल सृष्टि का आरम्भिक काल माना जाता है । सृष्टि के आदि में हमें भगवान् का ज्ञान वेद समाधिगत तत्व दृष्टि वाले ऋषियों द्वारा प्राप्त हुआ । वेद हमारी जाति का प्राण है, हमारे धर्म का सिर है । उसका प्रभाव क्या देश-विदेश सब स्थानों में छा रहा है । उस वेद का प्रादुर्भाव यज्ञ के लिये ही हुआ है ।

प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रन्थ 'सिद्धान्त शिरोमणि' में कहा है-

वेदास्तावद् यज्ञ कर्मप्रवृत्ताः

-गणिताध्याय म. अधि. काल, मानाध्याय, ९ श्लोक

यहाँ पर वेदों की प्रवृत्ति यज्ञकार्मार्थ बताई गई है । यही बात 'लग्न ज्योतिष' में भी आई है ।

वेदाहि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः

-७ खण्ड

वेद का ब्राह्मण भाग भी यही बताता है-

चत्वारो वै वेदाः तैर्यज्ञैस्तायते

-गोपथ ब्राह्मण १ । ४ । २४

केवल यही नहीं, अन्यत्र भी यही बताया है-

यज्ञो वेदेषु भाष्य प्रतष्ठितः

-गोपथ १/१/२८

प्रसिद्ध तार्किक दर्शन न्याय वात्स्यायन में भी यही सूचना मिलती है-

यज्ञयोमन्त्रः ब्राह्मणस्य

-वेदस्य विषम० ४। १६२

प्रसिद्ध स्मृति 'मनुस्मृति' भी यही कहती है-

दुदोह यज्ञसिध्यर्थमृग्यजुः सामलक्षणम्

-१ । २३

प्रसिद्ध भगवद्गीता भी यही मानती है-

एवं बहुविधायज्ञा विंतता ब्रह्मणो वेदस्य मुखे

-४ । ३७

प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थ महाभारत में भी यही सूचित किया है-

देवर्यज्ञा समुत्पन्नाः

-वन पर्व १५० ।२८

प्रसिद्ध ग्रन्थ निरुक्त में भी लिखा है-

यज्ञस्य चत्वारि शृङ्गा इति वेदा वा एते उल्कः । विधा वद्ध मन्त्र ब्राह्मणकल्पैः । *-१३ । ७१*

प्रसिद्ध व्याकरण ग्रन्थ पातंजलि महाभाष्य में कहा है-

'न सर्वैलिगैर्न च सर्वाभिर्विभक्तिर्वेद, मन्त्रा निगिदिताः । ते चावश्यमेव यज्ञगतेन पुरुषेण यथायथ विपरिनमयितव्याः

-पस्पशाह्निक

इन सब प्रमाणों से सिद्ध हो रहा है कि वेद का विषय यज्ञ है ।

स्वयं वेद का मन्त्र भाग भी यही बताता है-

एदमगन्य देव यजनं. . ऋक्सामाभ्यो संतरन्त यजुर्भिः

-यजुः वा० सं० ४-१

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्म (वेदः) यज्ञेन कल्पताम्

-यजुः वा० सं० १८ । २९

अन्य उसकी बड़ी साक्षी यही है कि वेद के अधिकार के प्राप्त्यर्थ यज्ञोपवीत धारण करना पड़ता है और वह यज्ञोपवीत यज्ञ के वस्त्र होने से ही उस नाम को धारण करता है । इससे स्पष्ट हुआ कि- वेदों का आविर्भाव ही यज्ञ करने कराने के लिये हुआ है । तब वेद की भाँति यज्ञ की भी महत्ता स्वतः सिद्ध हुई ।

यज्ञ भारतीय धर्म का मूल है । आत्म-साक्षात्कार, स्वर्ग-सुख, बन्धन मुक्ति, मनः शुद्धि, पाप-प्रायश्चित, आत्म-बल वृद्धि-सिद्धियों के केन्द्र भी यज्ञ ही थे । यज्ञों द्वारा मनुष्य को अनेक आध्यात्मिक एवम् भौतिक शुभ परिणाम प्राप्त होते हैं । वेद मन्त्रों के साथ-साथ शास्त्रोक्त हवियों के द्वारा जों विधिवत् हवन किया जाता है, उससे एक दिव्य वातावरण की उत्पत्ति होती है । उस वातावरण में बैठने मात्र से रोगी मनुष्य निरोग हो सकते हैं । चरक ऋषि ने लिखा है कि "आरोग्य प्राप्त करने की इच्छा करने वालों को विधिवत् हवन करना चाहिए" बुद्धि शुद्ध करने की यज्ञ में अपूर्व शक्ति है । जिनके मस्तिष्क दुर्बल हैं या बुद्धि मलीन है वे यदि यज्ञ करें तो उनकी अनेकों मानसिक दुर्बलतायें शीघ्र ही दूर हो सकती हैं । यज्ञ से प्रसन्न हुए देवता मनुष्य को धन, सौभाग्य, वैभव तथा सुख साधन प्रदान करते हैं । यज्ञ करने वाला कभी दरिद्री नहीं रह सकता । यज्ञ करने वाले स्त्री-पुरुषों की सन्तान बलवान् बुद्धिमान्, सुन्दर और दीर्घजीवी होती है । राजा दशरथ को यज्ञ द्वारा ही चार पुत्र प्राप्त हुए थे । गीता आदि शास्त्रों में यज्ञ को आवश्यक धर्मकृत्य बताया गया और कहा गया है कि यज्ञ न करने वालों को यम लोक और परलोक कुछ भी प्राप्त नहीं होता । यजुर्वेद में कहा गया है जो कि यज्ञ को त्यागता है उसे परमात्मा त्याग देता है यज्ञ के द्वारा ही साधारण मनुष्य देव योनि को प्राप्त करते हैं और स्वर्ग के अधिकारी बनते हैं । यज्ञ को सर्व कामना पूर्ण करने वाली कामधेनु और स्वर्ग की सीढ़ी कहा गया है । याज्ञिकों की आत्मा में ईश्वरीय प्रकाश उत्पन्न होता है और इससे स्वल्प प्रयत्न द्वारा ही सद्गति का द्वार खुल जाता है । आत्म साक्षात्कार और ईश्वर प्राप्ति का तो यज्ञ अमोघ साधन हैं । यज्ञ से अमृतमयी वर्षा होती है, उससे अन्न, पशु, वनस्पति, दूध, धातु, खनिज पदार्थ आदि की प्रचुर मात्रा में उत्पत्ति होती है और प्राणियों का पालन होता है । यज्ञ से आकाश में अदृश्य रूप से ऐसा सद्भावनापूर्ण सूक्ष्म वातावरण पैदा होता है जिससे संसार में फैले हुए अनेक प्रकार के रोग, शोक, भय, क्लेश, द्वेष, अन्याय अत्याचार नष्ट हो सकते हैं और सब लोग प्रेम और सुख-शान्तिपूर्वक रह सकते हैं ।

प्राचीन काल में ऋषियों ने यज्ञ के इन लाभों को भली प्रकार समझा था इसलिये वे उसे लोक-कल्याण का अतीव आवश्यक कार्य समझकर अपने जीवन का एक तिहाई समय यज्ञों के आयोजन में ही लगाते थे । स्वयं यज्ञ करना और दूसरों से यज्ञ कराना उनका प्रधान कर्म था । जब घर-घर में यज्ञ की प्रतिष्ठा थी तब यह भारत भूमि स्वर्ण सम्पदाओं की स्वामिनी थी, आज यज्ञ को त्यागने से ही हमारी दुर्गति हो रही हैं ।

वेदों में यज्ञाग्नि की पग-पग पर प्रशंसा और प्रार्थना है । इस प्रशंसा और प्रार्थना में यज्ञ में सन्निहित शक्तियों और लाभों का वर्णन है । इन पर थोड़ा ध्यान देने से यह सहज ही जाना जा सकता है कि यज्ञ की अग्नि कितनी उपयोगिताओं और महानताओं से परिपूर्ण है । नीचे कुछ ऐसी ही प्रार्थनायें दी जाती हैं -

शिवो नामासि स्त्रिधितिस्ते पता नमस्तऽअस्तु मा मा हिꣳसीः । निवर्त्त याम्यायुषेऽन्नाध्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ।

-यजु० ३ । ६३

अर्थ-हे यज्ञ ! तू निश्चय से कल्याणकारी है । स्वयम्भू परमेश्वर तेरा पिता है । तेरे लिये नमस्कार है तू हमारी रक्षा कर दीर्घ आयु, उत्तम अन्न, प्रजनन शक्ति, ऐश्वर्य समृद्धि, श्रेष्ठ सन्तति एवं मंगलोन्मुखी बल पराक्रम के लिये हम श्रद्धा विश्वास पूर्वक तेरा सेवन करते हैं ।

त्वामग्ने यजमानाऽअनु द्यून विश्वावसु दधिरे वार्याणि त्वया सह द्रविणमिच्छमाना व्रज गोमैत मुशिजो विवव्रः ।

-यजुर्वेद १२ । २८

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थ-हे देव अग्ने ! जो सदा यज्ञ करते रहते हैं, ऐसे सदगृहस्थ सदा ही श्रेष्ठ सम्पत्तियों के स्वामी होते हैं, उन्हें इस यज्ञ के पुण्य प्रभाव से सदैव ज्ञानियों की सत्संगति के साथ ही धन की प्राप्ति होती रहती है ।

पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसनीथ यज्ञैः घृतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ।

-यजुर्वेद १२ । ४४

अर्थ -हे ऐश्वर्य को प्राप्ति कराने वाले यज्ञाग्ने ! तुझे ये यज्ञकर्ता आदित्य यज्ञ, वसुयज्ञ एवं रुद्र यज्ञ के द्वारा बारम्बार प्रदीप्त करें । इन यज्ञों से तुम अपने तेजों की अभिवृद्ध करके यज्ञ कर्त्ताओं क़ी कामना पूर्ण करो या पूर्ण करने में समर्थ होओ ।

अयमग्निः पुरीष्यो रयिमान् पुष्टिवर्द्धनः ।
अग्ने पुरिष्याभि द्युम्नमभि सहऽआयच्यस्व ।।

-यजुर्वेद ३ । ४०

अर्थ-यह यज्ञाग्नि वृष्टि कराने वाली, धन देने वाली तथा पुष्टि और शक्ति को बढ़ाने वाली है । पुरीष्य अग्नि ! तुम हमारे सब ओर बल और यश का विस्तार करो ।

तिष्ठद्धाम विराजति वाक् तंगाय धीयते ।
प्रति वस्तोरह द्युभि ।

अर्थ-यह यज्ञ को प्रतिदिन किया जाता है, वह अपनी प्रदीप्त ज्वालाओं से युक्त निरन्तर यज्ञकर्त्ता के अन्तर में विराजता रहता है, फिर ऐसी दशा में किसी अन्धकार, असुर अज्ञान को ठहराने को (यहाँ) अवकाश ही कैसे हो सकता है ? सच्चे यज्ञकर्त्ता एक दिन सम्पूर्ण अन्धकार और अज्ञान से मुक्त होकर दिव्य परमात्मा के चरणों में पहुँच जाते हैं ।

शर्मास्य वधूत ध्वं रक्षोऽवधूताऽरातयोऽदियास्त्वगसि प्रति त्वादितिर्वेत्तु । अद्रिरसि वानस्पत्यो ग्रावसी पृथुबुध्नः प्रति त्वादित्या स्त्वग्वेत्तु ।।

-यजु. १/१४

अर्थ-हे यज्ञ तुम सुख कारक एवं आश्रय लेने योग्य हो, तुम से रोग विनिष्ट होते हैं, तुम पृथ्वी के लिये त्वचा की भाँति रक्षक हो । तुम हरितमा पूरित वनस्पतियों से आच्छादित पर्वत के सदृश सुन्दर, सुहावने और हितकारी हो, तुम इन सुविस्तृत आकाश में बल से लवालव भरे वर्षाभिमुख बादलों के सदृश हो ।

धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वोदानायत्वा व्यनाय त्वा । दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धां देवोव, सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्यणात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि ।

-यजुर्वेद १/२०

अर्थ-हे यज्ञ ! तुम देवों के धान्य (भोजन) हो, अतः इस हवि के द्वारा तुम उन्हें प्रसन्न करो, जिससे वे प्रसन्न होकर यज्ञकर्त्ता को सुख और कल्याण प्रदान करें हम तुम्हें प्राण, उदान, व्यान आदि प्राणों में, आयु में तथा जीवन की व्यापक उन्नति करने के लिये धारण करते हैं, आपके अनुग्रह से यह सब वस्तुयें हम प्राप्त करेंगे ।

आदित्यै व्युन्दनमसि विष्णो स्तुपोऽस्यूर्णम्रदसं त्वा स्तृणामि स्वासस्था देवेभ्यो भवपतये स्वाहा, भुवन पतये स्वाहा भूतानां पतये स्वाहा ।

-यजुर्वेद १/२/२

अर्थ-हे यज्ञ ! तुम पृथ्वी को सींचने वाले हो, अर्थात् पृथ्वी निवासियों की सर्वांगीण अभ्युन्नति और कल्याण के अमृत से अभिसिंचन करते हो । हे देवों को सुखद स्थिति देने वाले एवं सभी भाँति रक्षा करने वाले यज्ञ ! हम' तुम्हें सुविस्तृत और सूक्ष्मतर बनाना चाहते हैं ।

अग्ने वाजजिद्वाजं त्वां सारिष्यन्त वाजितं, सम्मार्ज्मि । नमो देवेभ्यः सुधा पितृभ्यः सुयमे मे भूयास्तम् ।

-यजु. २/७

अर्थ-हे बलप्रापक और बल के विजेता यज्ञाग्नि ! मैं तुम्हें प्रदीप्त करता हूँ । देवों के लिए तुम संस्कार एवं पितरों के लिए शक्ति स्वरूप हो । ये दोनों मुझे संयम से जलाने वाले हों ।

अस्कन्नमद्य देवैभ्यऽआज्यँ, सध्रियासमड्भिधृणा विष्णो मा त्वावक्रमिषं वसुमतीमग्ने तेच्छायामुपस्थेषं विष्णो स्थानमसीतऽइन्द्रो वीर्य्यमकृणोदूर्ध्वोऽध्वरआस्थात् ।

-यजु. १/२/८

अर्थ-आज मैं दिव्य गुणों के लिये, अविचलित आज्य को गति के साधक अग्नि के द्वारा अच्छे प्रकार धारण करता हूँ । हे यज्ञ ! मैं धन-धान्य से युक्त तुम्हारे आश्रय को प्राप्त होऊँ ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तश्चरति रोजनास्य प्राणादपानतीं । व्यख्यन महिषो दिव्यम्'।

-यजु. ३/७

अर्थ-यज्ञाग्नि की दीप्ति प्राण से अपान तक अन्तर में विचरण करती है । यह महान् अग्नि द्यौलोक को प्रकाशित करता है । यह यज्ञ, अपने प्रभाव को भौतिक लाभ देने तक में ही सीमित नहीं करता । इसका प्रभाव यज्ञकर्त्ता के अन्तर भी संक्रमित होता है जिससे प्राण और आपान को अलग करने वाले कपाट जल जाते हैं और जहाँ प्राण और अपान एकीभूत हुए कि दिव्यलोक में जाने का पथ और शक्ति एवं प्रकाश एक साथ मिल जाता है ।

अयमग्निर्गृहपतिर्गार्हपत्यः प्रजाया वसुवित्तमः ।
अग्ने गृहपतेऽभिद्युम्नभि सह आयच्छस्व ।।

-यजु. ३/३९

अर्थ-यह पोषण करने वाली गार्हपत्य अग्नि, प्रजा के लिये अतिशय ऐश्वर्य देने वाली है । (इसलिए यज्ञकर्त्ता प्रार्थना करते हैं) हे गृहपति अग्ने ! आप हमारे लिये सब और ऐश्वर्य, यश एवं बल का विस्तार करें ।

अग्निमूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथ्व्याऽअयम् अपां रेतांसिजिन्वति ।

-यजु० १ । ३१२

यह महान् यज्ञाग्नि, पृथ्वी में व्याप्त होकर इसका पोषक और सञ्चालक बन जाता है, अन्तरिक्षलोक में यह पर्जन्य से एकीभूत होकर वृष्टि (जल) का रूप धारण कर लेता है और यही एक यज्ञाग्नि द्युलोक में व्याप्त और सामञ्जस्यसित होकर सूर्य रूप को प्राप्त होता है । अतः यज्ञ के द्वारा मनुष्य प्रत्येक लोक की ऊँची स्थिति को प्राप्त कर लेता है ।

गृहा मा विभीत वैपध्वमूर्ज विभ्रऽएमसि उर्ज विभ्रद्वः सुमनः सुमेधा ग्रहानैमि मनसा मोदमानः ।

-यजु० १ । ३ । ४१

यज्ञ भगवान् यज्ञ कर्त्ताओं को आश्वासन देते हैं-'हे गृहस्थो ! डरो मत, घबराओ मत, बल-वीर्य को धारण करने वाले हम तुम्हारे पास आये हैं । ओज को धारण करते हुए, शुद्ध मन और बुद्धि वाले, हृदय में प्रसन्न होते हुए हम तुम्हें कल्याण के लिये प्राप्त होते हैं ।

कुक्कूटोऽसि मधुजिह्वऽइषमूर्जमावद त्वया वयं स घात संघातजेष्म वर्षवृद्धमसि प्रति त्वा वर्ष वृद्धं वेत्तु परापूत रक्षःपरापूता अरातयोऽपहत रक्षो वायुर्वो विविनवतु दवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रति-गृभ्णात्वविंच्छणेपाणिना ।।

-यजु० १ । १ । १६

हे यज्ञ ! तुम जल के मालिन्य आदि दोष उसमें रहे अभाव की परिपूर्ति करने वाले हो, मधु जिह्वा वाले हो अर्थात् माधुर्य्य तत्त्व से तुम ओत-प्रोत हो, तुम वृष्टि के बर्द्धक हो, मनुष्यों को यह जानना चाहिए कि यज्ञ वृष्टि बर्द्धक है । तुम हमारे लिये अन्न और रस को सिद्ध करो, जिससे उसे भक्षण कर हम अन्तर और बाह्य संग्रामों में विजयशील हो सकें । तुम्हारे द्वारा हमारे बाहरी विघ्न नष्ट हो जायें और हमारी अदानशीलता के भाव विचार भी विनष्ट होवें तुम आहुति में दिये गये पदार्थों को सूक्ष्मतर बनाकर उसे परिव्यापक सूर्य किरणों के सहारे सर्वत्र फैला दो ।

देव सवितः प्रसुव यज्ञ प्रसुव यज्ञपतिं भगाय । दिव्यो गन्धर्वः केतपूतेःकेत नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ।

-यजु० १ । ११ । ७

"हे सर्व तत्वों के उत्पादक यज्ञ ! हमें सुख एवं ऐश्वर्य को देने वाले श्रेष्ठतम कर्म यज्ञानुष्ठान में प्रवृत्त करो और यज्ञ के अनुष्ठान वालों को अपने दिव्य गुणों की उपलब्धि के लिये उत्प्रेरित करो, जिससे हम लोग दिव्य वाणी और दिव्य वाणी के अधिष्ठाता की पवित्रता से अपने ज्ञान और वाणी के साधनों को पवित्र करें, जिससे हमारा ज्ञान अमृत से और हमारी वाणी आस्वाद से परिपूर्ण हो जाय ।

इन्द्रस्य स्यूरसीद्रस्यध्रुवोऽसि ऐन्द्रमसि वैश्वदेवमसि ।

-यजु० १ । ५ । ३०

हे यज्ञ ! तुम ऐश्वर्यवान् इन्द्र या परमेश्वर के लिए सुनिश्चित रूप से आकर्षण के साधन हो, क्योंकि तुम्हारे द्वारा आह्वान होने पर परमेश्वर से आये बिना रहा ही नहीं जाता । इन्द्र के इन्द्रत्व और विश्व देवों के विश्वदेवत्व सभी तुम पर ही अवलम्बित हैं यानी तुम्हारे द्वारा ही इन दिव्य गुणों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को अभिप्राप्ति सबों को होती है ।

ध्रुवोसि पृथ्वीं वृह ध्रुवक्षिदस्यन्तरिक्षम् ।
वृहच्युमक्षिदसि दिव वृहाग्नेः पुरीषमसि ।।

-यजु० १ ।१ ।१९

हे यज्ञ ! तू अच्युत स्थान में वास करने वाला है, तू स्वयं ध्रुव है यानी तेरी क्रिया का फल अत्यन्त ही सुनिश्चित है, इसीलिये प्रार्थना है कि तू पृथ्वी लोक को शुभ में दृढ़ कर, अन्तरिक्ष लोक को मङ्गलमयता में स्थिर कर और द्युलोक को कल्याण में चिर प्रतिष्ठित कर ।

अत्र पितरो मादयध्वं यथाभागमावृषायध्वम् ।
अमीमदन्त पितरो यथा भागमावृषयिषत ।।

-यजु० १ ।२ ।३१

हे यज्ञ के द्वारा आहुत देवताओ और पितरगणो ! आप लोग इस यज्ञ में आकर आनन्द और पुष्टि को प्राप्त कीजिये और हमें भी आनन्द और पुष्टि दीजिये । जिस भाँति सवितादेव निष्काम भाव से विश्व को सुख पहुँचाते हैं उसी भाँति हम सब भी आपके समान ही विश्व सेवा में संलग्न रहें ।

असुराश्च सुराश्चैव पुण्यहेतोर्मख क्रियाम् ।
प्रयतन्ते महात्मानस्तस्मद्यजः परायणम् ।
यज्ञैरेव महात्मानो बबुधुराधिका सुराः ।

-महाभारत

असुर और सुर सभी पुण्य के मूल हेतु यज्ञ के लिये प्रयत्न करते हैं सत्पुरुषों को सदा यज्ञ परायण होना चाहिए । यज्ञों से ही बहुत से सत्पुरुष देवता बने हैं ।

नास्त्य यज्ञस्य लोको वै ना यज्ञो विन्दते शुभम् ।
अयज्ञो न च पूतात्मा सश्यश्तिन्छिन्न पूर्णवत् ।।

-शंख

यज्ञ न करने वाला मनुष्य लौकिक और परलौकिक सुखों से वञ्चित रह जाता है । यज्ञ न करने वाले की आत्मा पवित्र नहीं होती और वह पेड़ से टूटे हुए पत्ते की तरह नष्ट हो जाता है ।

यज्ञेन पापैः बहुभिर्विमुक्तः प्राप्नोति लोकान् परमस्य, विष्णो ।

-हारीत

यज्ञ से अनेक पापों से छुटकारा मिलता है, तथा परमात्मा के लोक की भी प्राप्ति होती है ।

यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म

आत्मोत्कर्ष के इच्छुकों को वेद भगवान ने यजन कृत्य को प्रमुखता देने के लिए कहा है और उस अवलम्बन को अपनाने का निर्देश किया है । ऋग्वेद में कहा गया है-

यज्ञेन वर्धत् जातवेदसमाग्निम् । यज्ञग्वं हविषा तना गिरा ।

अर्थात्-हे मनुष्यो ! यज्ञ द्वारा इस यज्ञाग्नि को प्रज्वलित करो एक उत्तम हवियों द्वारा श्रद्धा, भक्ति, उदारता से यजन करो ।

आयुर्यज्ञेन कल्पताम् ।

-यजु०

जीवन को यज्ञमय बनायें।

अथर्ववेद के अनुसार प्राणि जगत दैवी चैतन्य शक्तियों के जागृत होने पर अगणित लाभ प्राप्त करता है ।

उत्तिष्ठं ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधप ।
आयुः प्राणं प्रजां पशून् कीर्तिं यजमानं च वर्धय ।।

अर्थात् -हे ब्रह्मणस्पते । अब आप उठ खड़े हों । आलस्य न करें । उठकर यज्ञ द्वारा विश्व की दैवी शक्तियों को जाग्रत करें । इस जाग्रत दैवी शक्तियों से यजमान को सुखमय साधनों से अभिपूरित करें तथा प्राणीमात्र की आयु, जीवनी शक्ति उचित प्रजा, अच्छे पशु, यश तथा कीर्ति को भी बढ़ा दें ।

वेदों-ब्राह्मण ग्रन्थों आदि में 'यज्ञ' को श्रेष्ठतम कर्म माना गया है-

यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म ।

-शतपथ० १ ।७ ।३ ।५

यज्ञ निश्चित रूप से श्रेष्ठतम कर्म है ।

यज्ञो हि श्रेष्ठतम कर्म ।

-तैत्तिरीय ३ । २ ।१ ।४

निश्चित रूप से यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म है ।

न ये शेकुर्यज्ञियां नावमारुहम् ईर्मैव ते न्यविशन्त केपयः ।

-ऋग्वेद १० ।४४ । ६, अथर्व० २० ।९४ । ६

अर्थात्-जो ग्रन्थरूपी नौका पर चढ़ने में समर्थ नहीं होते, वे कुत्सित आचरण वाले होकर, इसी लोक में अधः पतित होते जाते हैं ।

यः कामयेत् ब्रह्मवर्चसी स्यामिति तर्हि हस जुहुयात् ।।

-शतपथ० २ । ३ । २ । १३

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात्-जो व्यक्ति चाहे कि मैं ब्रह्मवर्चस् से सम्पन्न बन जाऊँ, तो उसे यज्ञ करना चाहिए । क्योंकि यज्ञ से ब्रह्मवर्चस् की प्राप्ति होती है ।

आध्यात्मिकं चाधिदैवमाधिभौतिकमेव च ।
एतत् तापत्रयं प्रोक्तमात्मवद्भिर्नराधिप ।।
यस्माद् वै त्रायते दुःखाद् यजमानं हुतोऽनलः ।
तस्माद् तु विधिवत् प्रोक्तमग्निहोत्रमिति श्रुता ।।

-महा० आश्व० पर्व अध्याय ९२

अर्थात्-हे राजन् ! आध्यात्मिक, आधि दैविक तथा आधिभौतिक-ये तीन ताप आत्मवेत्ताओं ने कहे हैं । विधिपूर्वक हवन करने पर अग्नि यजमान का इन तीन दुःखों से रक्षा करता है । इसलिए वेदों में इसे अग्निहोत्र कहा गया है ।

आग्नेयोऽयं यज्ञः । ज्योतिरग्निः पाप्मनो वग्धा सोऽस्य पाप्मानं दहति स इह ज्योतिरेव श्रिया यशसा भवति ज्योतिरमुत्र पुण्य लोक त्वैतन्नु तद्यस्मादाद्धीत ।।

-शतपथ २ । २ । ३ ६

अर्थात्-यह अग्नि का यज्ञ है । अग्नि ज्योति है । यह पापों को जलाती है । यह (यजमान के) पापों को जलाती है । यह ज्योति, शोभा और यश को प्रदान करने वाली है । यह ज्योति परलोक में भी पुण्य प्रदान करती है । इसीलिए अग्निहोत्र करना चाहिए ।

अग्निहोत्र के अनेक लाभ बताये गये हैं जिनमें आत्मबल का सम्बर्धन प्रमुख है । मनुष्य जन्म से शूद्र उत्पन्न होता है । संस्कारों से द्विज अर्थात् मानवी गरिमा को अवधारण करने वाला बनता है । संस्कारों का सामान्य अर्थ वातावरण एवं सम्पर्क में पड़ने वाले प्रभाव से किया जाता है किन्तु सूक्ष्म अध्यात्म विज्ञान के अनुसार यह प्रक्रिया यज्ञाग्नि के सान्निध्य में सम्पन्न होती है । मनुस्मृति के अनुसार-

महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीय क्रियते तन्न अर्थात्-यज्ञों और महायज्ञों के माध्यम से यह नगण्य महल , हाड़-मांस का पुतला, ब्रह्मत्व को उपलब्ध करने में सफल होता है । ब्राह्मण के छः कर्त्तव्य उत्तरदायित्वों में दो "यज्ञ करना-यज्ञ कराना भी निर्धारित है । इसके द्वारा अनेकानेक लाभ मिलते हैं जिनका सूत्र संकेत इस प्रकार किया गया है -

निखिल ब्रह्माण्ड में संव्याप्त प्रत्यक्ष और परोक्ष दिव्य शक्तियों को देवता कहा गया है । प्रत्यक्ष देवताओं में पंच तत्वों और पंच प्राणों की गणना है । उनसे जीवन मिलता-स्थिर रहता और सुविधाएँ उपलब्ध करता है । इसलिए जीव जगत के प्रधान अवलम्बन जल, अग्नि, वायु आदि का देव संज्ञा दी गई है और उन्हें शुद्ध संतुलित रखने के रूप में देव पूजन करते रहने का निर्देश किया गया है । इसके अतिरिक्त दैवी प्रवाह की वे लहरें भी हैं जो अपने स्वरूप एवं स्वभाव के कारण अनेक क्षेत्रों के उत्तरदायित्व निभाती हैं सम्पर्क साधने वालों की गुण कर्म, स्वभाव की-चिन्तन चरित्र की उदात्त दृष्टिकोण एवं उत्कृष्टता की पक्षधर साहसिकता की विभूतियाँ प्रदान करती है । जो इन्हें जितनी मात्रा में ग्रहण धारण करता है वा उसी अनुपात स्तर का महामानव, ऋषि, मनीषी, सिद्ध पुरुष एवं देवदूत बनता चला जाता है । देवत्व की उपासना का यही सत्परिणाम है । देवता जिस पर भी प्रसन्न होते हैं इन्हें अपनी गहरी हलकी प्रसन्नता के अनुरूप सत्प्रवृत्तियों को अपनाने की उमंग भरते हैं । यह दैवी वरदान है । यह जितना जिसे मिलेगा वह उतना ही श्रेष्ठवरिष्ठ बनता चला जायगा । कहना न होगा कि व्यक्ति की विशिष्टता वरिष्ठता ही लौकिक जीवन में अनेकानेक सफलताएँ प्रदान करती और शक्ति सम्पदाओं का अधिष्ठाता बनाती है ।

यज्ञ के माध्यम से देव सान्निध्य एवं अनुग्रह अर्जित करने के सम्बन्ध में शास्त्र कहता है -

सहयज्ञाःप्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः अनेन प्रसविष्यध्वमेष वो.... कामधुक् ।

-गीता ३/१०

अर्थात्-प्रजापति ने सर्वप्रथम यज्ञ देवता का सृजन किया और जन-साधारण से कहा "आप लोग इसका यजन अर्चन करें । बदले में यह आपकके लिए कामधेनु की तरह कामनाप्रद सिद्ध होगा ।

देवताओं में सर्वप्रथम सर्व समर्थ अग्निदेव की उत्पत्ति हुई इसके और भी कितने ही प्रमाण मिलते हैं ।

ब्रह्मत्वेनासृजश्च लोकानहमादौ महाद्युते ।।
सृष्टोऽग्निर्मुखतः पूर्व लोकानां हितकाम्यया ।।

-महाभारत अश्वमेधिक पर्व, ९२ वाँ अध्याय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अर्थात्-श्री भगवान् ने कहा महातेजस्वी राजन् ! मैंने सबसे पहले ब्रह्म स्वरूप से लोकों को बनाया । लोगों की भलाई के लिऐ मुख से सबसे पहले अग्नि को प्रकट किया ।

तदग्नि होत्रं सृष्टं वै ब्रह्मणा लोक कर्तृणा ।
वेदाश्चाप्याग्निहोत्रं तु जज्ञिरे स्वयमेव तु ।।

-महा० आश्व० पर्व, अध्याय ९२

अर्थात्-सृष्टि रचयिता ब्रह्माजी ने सर्वप्रथम अग्निहोत्र प्रकट किया । वेद और अग्निहोत्र स्वयं ही पैदा हुए हैं ।

यस्मादग्रे स भूतानां सर्वेषां निर्मितो मया ।
तस्मादग्रीत्यभिहितः पुराणज्ञैर्मनीषिभिः ।।

अर्थात्-सभी भूतों से पहले अग्नि तत्व मेरे द्वारा पैदा किया गया, इसलिए पुराण ज्ञाता मनीषी उसे 'अग्नि' कहते हैं ।

यस्मात् तु सर्व कृत्येषु पूर्वमस्मै प्रदीयते ।
आहुतिर्दीप्यमानाय तस्मादग्नीति कथ्यते ।।

-महा० आश्व० पर्व, वैष्णव पर्व, अध्याय ९२

अर्थात्-सभी कार्यों में सबसे पहले प्रज्वलित अग्नि में ही आहुति दी जाती है, इसलिए इसे अग्नि कहा जाता है ।

यज्ञ के द्वारा देव शक्तियों के साथ सम्पर्क सधता है और वह उस आधार पर से यजन कर्त्ता पर उतरती है । इसी से यज्ञ को देवों की प्रसन्नता अनुकूलता का कार्य बताया गया है कहना न होगा कि इस अनुग्रह के सहारे आत्मिक और भौतिक क्षेत्र की अनेकों सिद्धियाँ, सफलताएँ प्राप्त होती हैं ।

तथा कृतेषु यज्ञेषु देवानां तोषणं भवेत् ।
तुष्टेषु सर्व देवेषु यज्वा यज्ञ फलं लभेत् ।।

-महा०, अनु० पर्व,अध्याय १४५

अर्थात्-यज्ञों से देवताओं को सन्तुष्टि होती है, और सर्व देवों के सन्तुष्ट होने पर यज्ञ करने वाले को पूरा-पूरा फल प्राप्त होता है ।

तेन सप्तर्षयः सिद्धाः संयतेन्द्रिय बुद्धयः ।
गता ह्यमर सायुज्यं ते ह्यग्न्यर्चन तत्पराः ।।

-महा०, आश्व० पर्व अध्याय ९२

अर्थात्-इन्द्रियों और बुद्धि पर संयम रखने वाले सिद्ध सप्तर्षिगण ने अग्नि की अर्चना में तत्पर रहने के कारण ही देवताओं के स्वरूप को प्राप्त किया हैं ।

यज्ञ की महिमा शास्त्र वचनों में सतत् वर्णित होती रही है । यज्ञ के अनेकानेक लाभ हैं । आयुष्य में वृद्धि नीरोगता -समस्वरता तो इससे उपलब्ध होती ही है-मानवी गरिमा को बढ़ाने वाला देवत्व और वर्चस् भी प्राप्त होता है इस तरह यज्ञ के लाभ आध्यात्मिक भी है और भौतिक भी पद्म पुराण में कहा गया है:-

यज्ञोऽयं सर्वकामधुक्

अर्थात्-यह यज्ञ सब कामनाओं को पूर्ण करने वाला है । और भी कुछ प्रमाण देखिए -

यज्ञाद्देवाः प्रजाश्चैव यज्ञादन्ननियोगिनः ।
सर्वयज्ञात्सदाभावि सर्वयज्ञ मयंजगत् ।।

-कालिका पुराण ३१ ।४०

यज्ञ से देव, यज्ञ से प्रजा, यज्ञ से ही समस्त अन्न जीवी प्राणी स्थिर रहते हैं । यज्ञ पर ही सब का भविष्य निर्भर है यह समस्त जगत् यज्ञ मय है ।

यज्ञेन यज्ञपुरुषो विष्णुः संप्रीणितो नृप ।
अस्माभि भवतः कामाव्सर्वानेव प्रदास्यति ।

-श्री वि. पु. प्र . अं. ३

हे नृप ! इस प्रकार यज्ञों के द्वारा यज्ञपुरुष भगवान विष्णु प्रसन्न होकर हम लोगों के साथ तुम्हारी भी सकल कामनायें पूर्ण करेंगे ।

यज्ञै र्यज्ञेश्वरोयेषां राष्ट्रे संपूज्यते हरिः ।
तेषां सर्वोप्सितावाप्ति ददाति नृप भूभृताम् ।।

-श्री वि. पु. अं. १३

हे राजन् ! जिन राजाओं के राज्य में यज्ञेश्वर भगवान् हरि का यज्ञों द्वारा पूजन किया जाता है वे उनकी सभी कामनाओं को पूर्ण कर देते हैं ।

पुत्रार्थी लभते पुत्रान् धनार्थी लभते धनम् ।
भार्यार्थी शोभनां भार्या कुमारी च शुभम् पतिम् ।।
भ्रष्टराज्यस्तथा राज्य श्री कामः श्रियमाप्नुयात् ।
यं यं प्रार्थयेत् कामः सर्वे भवति पुष्कल ।।
निष्कामः कुरुते यज्ञ स परंब्रह्म गच्छति ।

-मत्स्यपुराण ९३।११७

यज्ञ से पुत्रार्थी को पुत्र लाभ, धनार्थी को धन लाभ, विवाहार्थी को सुन्दर भार्या, कुमारी को सुन्दर पति, श्री कामना वालों को ऐश्वर्य प्राप्त होता है और निष्काम भाव से यज्ञानुष्ठान से परमात्मा की प्राप्ति होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

न तस्य ग्रह पीड़ा स्यान्नच बन्धु धनक्षयः।
ग्रह यज्ञ व्रतं गेहे लिखितं यत्र तिष्ठति ।।
न यत्र पीड़ा पापानां न रोगो न च बन्धनम् ।
अशेषा यज्ञ फलदमशेषाघौघ नाशनम् ।।

-कोटि होम पद्धति

यज्ञ करने वाले को ग्रह पीड़ा बन्धु नाश, धन क्षय पाप, रोग, बन्धन आदि की पीड़ा नहीं सहनी पड़ती । यज्ञ का फल अनन्त है।

देवा सन्तोषिता यज्ञोर्लोकान् सम्बर्धयन्त्युत ।
उभयार्लोकयो देव भूतियज्ञ प्रदृश्यते ।।
तस्माद्यद्देज्ञावं याति पूर्वजः सहमोदते ।
नास्ति यज्ञ समंदानं नास्ति यज्ञ समोविधिः ।
सर्व धर्म समुद्देव्यो देवि यज्ञ समाहिताः ।

-महाभारत

यज्ञों से सन्तुष्ट होकर देवता संसार का कल्याण करते हैं यज्ञ द्वारा लोक-परलोक का सुख प्राप्त हो सकता है । यज्ञ से स्वर्ग की प्राप्ति होती है । यज्ञ के समान कोई दान नहीं, यज्ञ के समान कोई विधान नहीं. यज्ञ में ही सब धर्मों का उद्देश्य समाया हुआ है ।

हव्यं कव्यं च विविध निष्पूर्तहुतमेव च
अदशं मशकादेशा नष्ट व्याल सरीसृपाः

-महा०द्रोण पर्व ५९/१६

विभिन्न प्रकार की मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए हवन में आहुति डाली जाती है । वर्र, मच्छर, हिंस्र पशु, साँप विच्छू आदि दुष्ट जीवों का उस प्रदेश में नाश होता है ।

यज्ञ से शक्तियों का लाभ मिलता है मत्स्य पुराण में कहा गया है:-

यज्ञैश्च देवानाप्नोति ।

-मत्स० १४ । ३ । ३३

अर्थात् -यज्ञ से देवों की प्राप्ति होती है ।

यज्ञ से देव शक्तियों का बल बढ़ता है, वे अधिक सक्रिय एवं परिपुष्ट होती हैं और मनुष्य जाति को एवं समस्त संसार को उसके द्वारा विशेष लाभ होते हैं । यदि यज्ञ विद्या का लोप हो जाय तो सृष्टि में जो सूक्ष्म आध्यात्मिक धाराऐं प्रवाहित हो रही है नष्ट हो जायँ और लोग पशुत्व को प्राप्त होकर एक दूसरे को खाने लगें और आपस में ही कट मर कर नष्ट हो जायँ । आज यज्ञ के अभाव में ऐसा ही हो रहा है । परमाणुबमों से पृथ्वी को नष्ट करने की तैयारी हो रही है और जनता के निस्तार का मार्ग सूझ नहीं पड़ता । वह मार्ग यज्ञ ही है । इस पर आज सबसे अधिक जोर देने की आवश्यकता है ताकि सूक्ष्म जगत में असुर शक्तियों की जो तीव्रगति से बढ़ोत्तरी हो रही है वह रुके और क्षीण देव परिपुष्ट एवं संतुष्ट होकर शान्तिमय वातावरण की सृष्टि करें -

यज्ञेषुदेवास्तुष्यन्ति यज्ञे सर्व प्रतिष्ठितम् ।
यज्ञेन ध्रियते पृथ्वी यज्ञरतारयति प्रजाः ।।

-कालिका पुराण ३२ ।७ । २

यज्ञों में देवता संतुष्ट होते हैं । यज्ञ ही समस्त जगत में प्रतिष्ठित है । यज्ञ ही पृथ्वी को धारण किये हुए है । यज्ञ से ही जनता का निस्तार होता है ।

व्यक्तिगत एवं सामूहिक आपत्तियों को टालने के लिए यज्ञ एक अमोध अस्त्र है । देखिए-

यज्ञेन हि देवा दिवङ्गता यज्ञेनासुरानपानुदन्तः ।
यज्ञेन द्विषन्तो मित्रा भवन्ति, यज्ञे सर्व प्रतिष्ठितम् ।
तस्माद्यज्ञं परमं वदन्ति ।

-महा नरायणोपनिषद्

यज्ञ से ही देवताओं ने स्वर्ग का अधिवार प्राप्त किया और असुरों को हराया । यज्ञ से शत्रु भी मित्र वन जाते हैं । यज्ञ में सब लाभ हैं । इसलिए विद्वज्जन यज्ञ को महान् कहते हैं ।

संसार में जो कुछ विभूतियाँ हैं । सुख, शान्ति, एश्वर्य एवं वैभव है उनका स्वामी यज्ञ है । यज्ञ कृपा से उन सबको हम प्राप्त कर सकते हैं:-

अग्नीपोमयोहैंतावती विभूतिः प्रजातिः ।

-ऋत १६ । २ । २ । ३

यह जितनी भी विभूति है सब अग्नि सोम की हैं । अग्नि हमारा पुरोहित है वह देवताओं तक हमारी श्रद्धा को तथा पूजा को पहुँचाता है । देव और मनुष्य के बीच में सम्बन्ध स्थापित करने वाला देव दूत अग्नि ही है । अग्नि के मुख में वस्तुऐं डालकर उन्हें हम देवों तक पहुँचाते हैं । वेद में अग्नि को देवदूत और पुरोहित कहा गया है ।

अग्नि दूतं वृणीमहे

हे अग्नि देव हम आपको दूत नियुक्त करते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अग्नेमीलं पुरोहितं. . . . . .

हे अग्नि ! आप हमारे पुरोहित है ।

अग्निदेव निस्सन्देह पूर्ण विश्वस्त और पूर्ण ईमानदार पुरोहित एवं दूत हैं वह अपने पास कुछ भी नहीं रखते । हजारों रुपयों की सामग्री हवन कर दीजिए कुण्ड में उनने कुछ भी बचा कर न रखा होगा । केवल उसका भस्मावशेष साक्षी रूप में पड़ा होगा कि अग्नि देव बुझ गये, चले गये, पर अपने लिए वे भस्म तक नहीं ले गये । ऐसे ही पुरोहितों और दूतों को देव कहते हैं । आज मनुष्य जाति में ऐसों की बड़ी कमी है । यद्यपि पुरोहित बनने के लोभ में अनेक लालची ब्राह्मण यजमानों की खुशामद करते और आपस में सिर फटते सर्वत्र दिखाई देते हैं ।

अग्नि को बढ़ाने से-यज्ञानुष्ठान करने से हमारी स्वयं की ही उन्नति होती है । यज्ञ भगवान हमें सन्तान, पशु, ज्ञान अन्न आदि से सब प्रकार सुखी बनाते हैं:-

ॐ अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्मस्व वर्धस्व च इद्धय वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चनेन अद्येन समेधय स्वाहा ।

-आश्वलायन गृह्य सूत्र १ । १० । १२

हे अग्नि तुम प्रदीप्त होओ और हमें प्रदीप्त करो । तुम बढ़ो और हमें बढ़ाओ । सन्तान, पशु, ज्ञान और अन्न से हमें सुखी करो ।

यज्ञ का उद्देश्य देवों का आवाहन है । अग्नि में जो सामग्री होमी जाती है उसे आहुति कहते हैं । आहुति का अर्थ है-बुलाना, देवों को बुलाने के लिए ही आहुति रूपी पुकार की जाती है:-

ह्वयति देवानया सा आहुतिः जुहोति प्रक्षिपति हविरनया इति वा । आहूतयो नामैता यदाहुतयः एताभिर्देवान् यजमानो ह्वयति तदाहूतीनामाऽहूतित्वम् ।

-ऐतरेयब्राह्मण १ । १ । २२

जिसमें देवताओं को बुलाया जाय उसे आहुति कहते हैं । तथा जिससे हवि को अग्नि में डाला जाय उसे 'आहुति' कहते हैं । इसके द्वारा यजमान देवताओं को आहुत करता है (बुलाता है) इसलिए वह आहुति कहलाती है ।

यह आहुति पूर्ण श्रद्धा भावना एवं देव शक्तियों का ध्यान करते हुए देनी चाहिए । बेगार भुगतने की तरह सामग्री झोंकना और चित्त कहीं का कहीं रखना यज्ञ के महत्व को नष्ट करता है:-

यादृग्वैरेतः सिंचतेतादृग्जायते तद्यदेतया सवितार रेतोभूत सिंचति सावित्रराणि तस्माद्वा एता माहुर्ति जुहोति ।

गर्भाधान के समय जैसा सत्व प्रधान वीर्य होगा वैसी ही सत्व प्रधान सन्तान होगी । इसी प्रकार अग्नि में जैसी श्रद्धा के साय आहुति दी जायगी वैसे ही सत्व प्रधान देवताओं से सम्बन्ध होगा ।

मनुष्य जिस समय । उत्पन्न होता है उस समय माता के गर्भस्थान की अशुद्धि का माता के रज की अशुद्धि का एवं पिता के वीर्य की आहुति का संसर्ग होने से अपवित्र माना जाता है ऐसी अवस्था में उस मनुष्य को संस्कार रूप । यह ही पवित्र करता है और वैदिक कर्मों के करने का अधिकारी बनाता है । जैसा कि मनुजी ने लिखा है ही ।

गर्भे होर्मेजात कर्मचौड मौन्जी निवन्धनैः
वैजिकं गार्भिकं चैनो द्विजानामय मृज्यते ।

-मनु अ० २-२२७

अन्नम् बाह्यो वेदः

वेद के सिद्धन्तानुकूल अन्न का एक नाम ब्रह्म, और जीवो ब्रह्मैवना परं शकराचार्य के कथनानुसार मानव का और अन्न का सम्बन्ध सुतराय सिद्ध है और अन्न बिना मानव जीवन का चलना असम्भव है उस अन्न की भी उत्पत्ति का साधन एक मात्र यज्ञ ही है ।

अग्नौ प्रास्ताहुति : सम्यगादित्य सुप्रतिष्ठते ।
आदित्याजायते बृष्टिर्वष्टेरन्नं ततः प्रजा ।।

-मनु अ.३/७६

जो कि इस श्लोक में बताया गया है । यज्ञ के द्वारा अन्न उत्पन्न होता है यही कारण है कि शास्त्र सस्येष्टी का विधान करता है ।

सस्यान्त नवसस्येष्टघा तथतर्त्वन्ते द्विजोऽध्वरैः ।
पशुना त्वयनस्यादौ समान्ते सौमिकैर्मखैः ।।

-म० अ० ४/२

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसे शुभ कार्य के लिए अत्यन्त पवित्रतम् स्थान की आवश्यकता है क्योंकि पवित्रतम् का पवित्रतम् के साथ सम्बन्ध होने पर ही फलोत्पत्ति होती है, इसलिए मनुजी ने यज्ञार्हः देश की व्यवस्था की । यथा:-

कृष्ण साररतु चरति मृगो यत्र स्वभावतः ।
स ज्ञेयो यज्ञियो देशो म्लेच्छ देशस्त्वतः पर ।।

-म०अ० २२/२३ ।।

इसी देश के पवित्रतम् होने के कारण यज्ञ का विधान और यज्ञ का प्रचलन हमारे भारतवर्ष में ही है ।

जैसा यज्ञ पवित्रतम् है और उस यज्ञ के लिए पवित्रतम् स्थान की व्यवस्था की गई उसी प्रकार कर्त्ता का भी पवित्रतम् होना अत्यन्त आवश्यक है, इसी विज्ञान की भिति पर हमारी वर्ण व्यवस्था सुसज्जित है जैसा कि मनुजी के कथन से सारांश स्पष्ट होता है ।

लोकानां तु विवृद्धयर्थं मुख बाहू रुपादत्तः ।
ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं शूद्रं च निरवर्तयत् ।।

-म० अ० १/३१

जब सभी पवित्रतम है तो उसकी विधि को बतलाने वाले और उस यज्ञ के अधिष्ठात्रों के समीप यज्ञ की हवि को वाक्य योजना पूर्वक पहुँचाने वाला भी पवित्रतम् होना चाहिये यही कारण है, कि वेद को पवित्रतम् कहा गया है ।

पितृ देव मनुष्याणां वेदश्चक्षु सनातनम् ।
अशक्यं चाप्रमेयं च वेद शास्त्र मितिस्थितिः ।।

-म० अ०१२/९४

इसी विज्ञानी की भित्ति पर हमारे यहाँ वेद का अधिकारियों द्वारा पवित्रतम् अवस्था में पवित्रतम् आचार्य के समीप सस्वर अध्ययन होता है दूसरे देशों में इसी कारण वेदपाठी नहीं मिल सकते भले ही इधर-उधर करके अर्थ लगाने का स्वांग रचें ।

यज्ञ का नाम 'कामधुक्:' है, इसलिए इससे सभी कामनाऐं पूर्ण होती हैं, हमें वह दिन याद है कि जिस समय जर्मन देश में टेली-पैथी विज्ञान का आविष्कार हुआ था । परन्तु वे बेचारे ३९ मील तक ही सफल हो सके जब कि हम यज्ञ द्वारा चन्द्रमा के ऊपरी भाग में भी मन को प्रतिदिन प्रेषित और आहूत करते हैं ।

मनो नु आह्वामहे नाराशसेन-
स्तोमेन । पितृणां च मन्मभिः ।।

-शुक्ल य०वे० अ० ३/५३ ।।

अर्थ-जिन स्तोत्रों को मनुष्य श्रेष्ठ मानते हैं और पितरों से भी जो स्तोत्र माने गये हैं उनके द्वारा पितृलोक में गाये हुए मन को हम शीघ्र बुला रहे हैं ।

प्रत्येक कामनाओं में प्रार्थव्य होने क्रियाओं का पार्थक्य भी नैसर्गिक है इसी कारण पृथक-पृथक कामनाओं की पूर्ति के लिए पृथक-पृथक यज्ञों का विधान है स्वराज्य के लिए वाजपेय यज्ञ का, स्वर्ग के लिए दर्शपौर्ण मास का, अग्नि साम का. ज्योतिष्टोम का पुत्र प्राप्ति के लिए पुत्रेष्टि का, और शत्रुमारण के लिए श्येन यज्ञ का, विधान है यज्ञ के द्वारा विविध कामनाओं की पूर्ति होती है तभी तो यज्ञ का कामधुक नाम प्रजापति ने रक्खा है ।

यज्ञ शब्द का अर्थ

'यज्' धातु से यज्ञ शब्द बना है । जिसका अर्थ है-देव पूजा, सङ्गति करण और दान । ईश्वरीय दिव्य शक्तियों की आराधना, उपासना, उनकी समीपता सङ्गति तथा अपनी समझी जाने वाली वस्तुओं को उनके अर्पण करना यह यज्ञ की आध्यात्मिक प्रक्रिया है । देव गुण सम्पन्न सत्पुरुषों की सेवा एवं संगति करना तथा उन्हें सहयोग देना भी यज्ञ है । व्यवहारिक अर्थों में इसे यों भी कह सकते हैं कि बड़ों का सम्मान बराबर वालों से संगति, मैत्री, अपने छोटों को, कम शक्ति वालों को दान सहायता करना यज्ञ है । इस प्रकार ईश्वर उपासना, सत् तत्व का अभिवर्धन एवं पारस्परिक सहयोग भी यज्ञ माने जाते हैं । यों हवन के अर्थ में यज्ञ शब्द का प्रयोग तो प्रसिद्ध ही है । हवन द्वारा भी उपरोक्त तीनों प्रयोजन पूर्ण होते हैं ।

देवानां द्रव्य हविषां ऋक् साम यजुषांतथा ।
ऋत्वजां दक्षिणानां च संयोगी यज्ञ उच्चते ।

-मत्स्य पुराण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देवों का हवि प्रदान, वेद मन्त्रों का उच्चारण, ऋत्विजों को दक्षिणा इन तीनों कार्यों का संयोग यज्ञ कहलाता है ।

इज्यन्ते चत्वारो वेदाः साङ्गः सरहस्याः सच्छिष्येभ्यः सम्प्रदीयन्ते (उपदिश्यन्ते) सदाचार्य्यैयेन वा सा यज्ञः ।

विद्वान आचार्यों द्वारा सत्पात्र शिष्यों को अङ्ग उपाङ्गों सहित वेदों का पढ़ाना यज्ञ है ।

येन सदनुष्ठानेन इन्द्रादि देवाः सुप्रसन्नाः सुवृष्टिं कुर्युस्तत् पदाभिधेयम् ।

जिस कार्य से इन्द्रादि देव प्रसन्न होकर उत्तम वर्षा करें उसे यज्ञ कहते हैं ।

येन सदनुष्ठानेन स्वर्गादि प्राप्तिः सुलभाः स्यात् तत् यज्ञ पदाभिधेयम् ।

जिस आयोजन द्वारा स्वर्ग आदि सद्गति को प्राप्त करना सुलभ हो वह यज्ञ है ।

येन सदनुष्ठानेन सम्पूर्ण विश्व कल्याणं भजेत् तत् यज्ञ पदाभिधेयम् ।

जो आयोजन विश्व कल्याण करने वाला हो उसे यज्ञ कहते हैं ।

येन सदनुष्ठानेन आध्यात्मिक आधिदैविक आधिभौतिक तापत्रयोन्मूलनं सुकरं स्यात् तत यज्ञ पदाभिधेयम् ।।

जिस सदनुष्ठान द्वारा आध्यात्मिक, आधि दैविक, आधि भौतिक तीनों प्रकार के कष्टों का निवारण हो वह यज्ञ कहा जाता है ।

वेदमन्त्रैर्देवतामुद्दिश्य द्रव्यस्य दानं यागः

वेदमन्त्रों द्वारा देवोद्देश्य के लिए दान करना यज्ञ है ।

देव पूजा

यजनं देवानां पूजनं सत्कार भावनं यज्ञः ।

देवों का पूजा सत्कार भाव यज्ञ है ।

यज्यन्ते देवा अनेनेति यज्ञः ।

जिस कार्य के द्वारा देवताओं का सम्मान किया जाय वह यज्ञ है ।

इज्यन्ते देवा अस्मिन्निति यज्ञः ।

जिससे देवों का पूजन किया जाय उसे यज्ञ कहते हैं ।

इज्यन्ते सम्पूजिताः तृप्तिमासाद्यन्ते देवा अत्रेति यज्ञः ।

जिससे देवों को पूजित एवं तृप्त किया जाय वह यज्ञ है ।

संगति करण

यजनं धर्म देश जाति मर्यादा रक्षायै महापुरुषाणा - मेकीकरणं यज्ञः ।

श्रेष्ठ पुरुषों को धर्म, देश, जाति की मर्यादा की रक्षा के लिए संगठित एवं एकत्रित करना यज्ञ है ।

इज्यन्ते सङ्गतिक्रियन्ते विश्व कल्याणा महात्तो विद्वांसः वैदिक शिरोमणयः निमन्त्रयन्ते अस्मिन्निति यज्ञः

जहाँ विश्व कल्याण के लिए श्रेष्ठ, विद्वान, वेदज्ञ पुरुषों को आमन्त्रित एकत्रित किया जाता है वह यज्ञ है ।

इज्यन्ते स्वकीय वन्धुवान्धवादयः प्रेम सम्मान भाजः सङ्गति करणाय आहूयन्ते प्रार्थ्यन्ते च येन कर्मणेति यज्ञः

जिस आयोजन में वन्धु वान्धवों, स्नेह सम्बन्धियों को पारस्परिक संगठन के लिए प्रेम एवं सम्मान के साथ एकत्रित किया जाता है वह यज्ञ है ।

दान

यजनं यथा शक्ति देश काल पात्रादि विचार पुरस्सर द्रव्यादि त्यागः

देश काल पात्र का विचार करके सदुद्देश्य के लिए जो धन दिया जाता है उसे यज्ञ कहते हैं ।

इज्यते देवतोद्देशेन श्रद्धा पुरस्सरं द्रव्यादि त्यज्यते यस्मिन्निति यज्ञः ।

देवों के निमित्त श्रद्धा पूर्वक जिसमें दान किया जाता है उस कार्य को यज्ञ कहते हैं ।

इज्यन्ते भगवति सर्वस्वं निधाप्यते येन वास यज्ञः ।

भगवान को आत्म समर्पण करने की क्रिया यज्ञ है ।

इज्यन्ते सन्तोष्यन्ते याचका येन कर्मण स यज्ञः ।

याचकों को सन्तुष्ट करना यज्ञ है । इस तरह यज्ञ शब्द के तीन अर्थ है (१) देव शक्तियों की पूजा (२) संगति करण (३)दान ।

परमात्मा अपने आपको सर्वप्रथम दिव्य शक्तियों के रूप में प्रकट करता है यह शक्तियाँ ही संसार के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नियम नियंत्रण, पालन-पोषण और विकास में सहायक होती है । उनकी पूजा द्वारा उन्हें प्रसन्न करना उनकी उपासना अर्थात् उनके समीप बैठकर उन दिव्य शक्तियों से ओत-प्रोत होना तथा अपनी प्रिय वस्तुयें उन्हें समर्पित करना जिससे कि उनकी भी शक्ति का विस्तार हो और वे विश्व के कल्याण का कार्य निरन्तर करती रहें ।

मनुष्य की शक्ति और उसकी पहुँच बहुत सीमित है, स्थूल रूप से वह इन दिव्य शक्तियों से सम्पर्क स्थापित नहीं कर सकता है । सूर्य के पास जाकर कोई बैठना चाहे तो उसका अस्तित्व ही न रह पायेगा । अग्नि, इन्द्र, वरुण यह सभी शक्तियाँ है । शक्तियों से स्थूल सम्पर्क नहीं साधा जा सकता इसलिए तत्ववेत्ताओं ने उसके लिए एक विज्ञान की खोज की । वेद मन्त्रों के उच्चारण के साथ अग्नि के मुख में आहुतियाँ डालते हैं । शब्द शक्ति भावनाओं के साथ पदार्थ को सूक्ष्म बनाकर ऊर्ध्व लोकों तक पहुँचती है । अग्नि को 'हुत वाह' हुत को वहन करने वाली और देवताओं का पुरोहित कहा है मन्त्र से जिस शक्ति की प्रेरणा होती है अग्नि उस आहुति को उस देवता तक पहुँचा देती है । इस विज्ञान को अपनी सूक्ष्म दृष्टि से ऋषियों ने खोजकर मानव जाति की कठिनाई दूर करदी और किसी भी देव शक्ति से सम्पर्क स्थापित कर लाभान्वित होने का मार्ग प्रशस्त कर दिया ।

आहुतियों से देवता प्रसन्न होते हैं उनका आदर होता है । स्तुति होती है । यही उनकी पूजा है । प्रत्युपकार में वे अपनी शक्ति देते हैं अग्नि का गुण है गर्मी, तेजस्विता और सक्रियता । अग्नि की उपासना का अर्थ है अपने में इन गुणों और शक्तियों का विकास । मरुत का गुण है हलकापन, सर्वगमन की शक्ति, प्राण संवर्धन । मरुतों की उपासना से प्राणों पर नियन्त्रण, दूर श्रवण, दूर दर्शन आदि की शक्ति का विकास आदि होता है । सभी देवता विभिन्न शक्तियों सामर्थों वाले हैं । जब उन गुणों का अपने में प्रस्तुतीकरण होता है तो वह गुण अपने भीतर खिंचे चले आते हैं । यह शक्तियाँ ही सिद्धि और चमत्कार के नाम से जानी जाती हैं । वस्तुतः उसमें मनुष्य का कुछ नहीं होता सब शक्तियाँ ही होती हैं जो चमत्कार के रूप में प्रकट होती हैं । यह मनुष्य को देवताओं की संगति से मिलती है यह यज्ञ का दूसरा चरण है ।

व्यक्ति के पात्रत्व, समय और परिस्थितियों के अनुरूप किसी की आवश्यकता को पूरा करना, दान देना भी यज्ञ है । दिया किस को जाये यह एक जटिल पहेली है । तथापि उसका उचित हल भी ऋषियों ने प्रस्तुत किया कि अपनी प्रिय वस्तुएँ देवताओं को दी जावें चूँकि देवता किसी वस्तु का संचय नहीं करते वरन् पाई हुई वस्तु का हजारों गुना विस्तार करके लौटा देते हैं । इसलिये देवताओं को दी हुई वस्तुएँ स्वतः सैकड़ों लोगों तक पहुँच जाती हैं । इसलिये सर्वप्रथम देवताओं को दिया जाये-भगवान को समर्पित किया जाये यह यज्ञ है । इन तीनों अर्थों का विचार करने से आज की परिस्थितियों में जो निष्कर्म निकलते हैं वे इस प्रकार हैं ।

(१) संसार में जो दैवी और आसुरी शक्तियाँ काम कर रही हैं, उनमें से देवत्व की, सतोगुण की, न्याय और धर्म पक्ष की पूजा उपासना एवं सहायता की जाय, उसी में श्रद्धा रखी जाय और अपना प्रत्येक कदम उसी दिशा में अग्रसर किया जाय । असुरता को हटाने, उससे लड़ने और उसका विरोध करने के लिये सदैव तत्पर रहना चाहिए । यदि मजबूरी के कारण बुराई की परिस्थिति में रहना पड़े तो भी उसको मानसिक रूप से कभी स्वीकार न करना चाहिए । वरन् कम से कम उससे मानसिक घृणा तो रखनी ही चाहिए और उस परिस्थिति से छुटकारा पाने के लिए प्रभु-प्रार्थना तथा प्रयत्न भी करते रहना चाहिए । असुरता का पक्ष ग्रहण करना और उसी में तल्लीन हो जाना असुर-पूजा है । यज्ञ में श्रद्धा रखने वालों को इससे बचना चाहिए ।

(२) संसार में फूट, द्वेष, विलगाव, घृणा के भाव पहले से ही बहुत ज्यादा हैं, उनको बढ़ावा न देकर ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि एकता, मेल, प्रेम, सङ्गठन, सहयोग तथा पारस्परिक आत्मीयता का वातावरण बढ़े । एक दूसरे के साथ उदारता तथा सेवा सहायता का व्यवहार करें । जाति-जाति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में, राष्ट्र-राष्ट्र में, प्रान्त-प्रान्त में, धर्म-धर्म में वर्ग-वर्ग में, जो विद्वेष, छीन-झपट, आपा-धापी, फूट-फिसाद, चढ़ा -ऊपरी फैली हुई है उसे बढ़ाने का नहीं घटाने का प्रयत्न करना चाहिए और अनेकता को एकता में, मतभेद को समन्वय में परिवर्तित करना चाहिए । हिन्दू धर्म सहिष्णुता एवं अनेकता में एकता देखने का धर्म है, इसमें अनेकों संस्कृतियाँ, विचारधारायें, मान्यतायें, मौजूद हैं, कई तो परस्पर विरोधी भी हैं, इतने पर भी सबकी एकता कायम है । अनेक दर्शन, अनेक वाद, अनेक सिद्धान्त, अनेक मत, रहते हुए भी मनुष्य सद्भाव और सहिष्णुता पूर्वक आपस में रह सकते हैं और लड़ने-झगड़ने की अपेक्षा प्रेम पूर्वक विचार, विनिमय द्वारा सङ्गतिकरण द्वारा, परम लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं । इस सङ्गतिकरण को दृष्टि में रखना यज्ञ का आवश्यक अङ्ग है ।

(३)परमात्मा ने जो कुछ हमें दिया है वह हमारे ही भोगने या सञ्चय करने के लिए नहीं है । कुए, नदी, वृक्ष,पुष्प , गाय, घोड़ा आदि तक अपनी सम्पत्ति को दूसरों को देते हैं फिर हम मनुष्य होकर उनसे भी पीछे रहें, यह यज्ञ-भावना के विपरीत है । हमारे पास जो कुछ बल, बुद्धि, विद्या, धन, वैभव, ऐश्वर्य, प्रभाव आदि है उसे अपने से छोटों को ऊपर उठाने में और अपने से बड़ों को आगे बढ़ाने में लगाना चाहिए । अपनी निजी आवश्यकतायें कम से कम रखें, पूर्ण श्रम एवं लगन के साथ अपनी सांसारिक, मानसिक, शारीरिक, एवं आत्मिक शक्तियों को बढ़ावें, पर उस बढ़ोत्तरी का उद्देश्य-"सौ हाथ से कमा हजार हाथ से दान कर कर" होना चाहिए । बेटे, पोतों को जायदादें खड़ी करके उन्हें हरामखोर बना जाने की अपेक्षा, अपनी कमाई को संसार में सद्गुण , सद्विचार, सद्भाव एवं सुख-शान्ति बढ़ाने में लगाना चाहिए ।

आज दान का दुरुपयोग खूब होता है, अनधिकारी लोग दूसरों को उल्लू बनाकर मुफ्त का माल उड़ाने में बहुत प्रवीण होते हैं, इनसे बचना उचित है, परन्तु अपनी शक्तियों को सत्कर्मों के लिऐ दिल खोलकर खर्च करने में भी कंजूसी न करना उचित है ।

दान से अभिप्राय अपनी क्षमता, प्रतिभा एवं सम्पन्नता को लोक-कल्याण के लिए समर्पित करने के लिए मन को तैयार कर लेना । यह उदारवादी दृष्टिकोण ही मनुष्य को त्याग बलिदान के लिए-परमार्थ पथ पर बढ़ने के लिए प्रेरित करता है । दान प्रवृत्ति पर ही सृष्टि का अस्तित्व है । संसार की गतिशीलता कायम है । पिण्ड से लेकर ब्रह्माण्ड तक में यही परम्परा क्रियारत है । सृष्टि के सन्तुलन एवं सुव्यवस्था का कारण है । एक भ्रूण के लिए भी यह भंग हो जाय तो सम्पूर्ण गतिचक्र में अवरोध उत्पन्न हो जायेगा । मनुष्य से लेकर मनुष्येत्तर जीवों का अस्तित्व इस बात पर ही निर्भर करता है । सहयोग की-त्याग की प्रवृत्ति पर ही व्यक्ति एवं समाज का विकास निर्भर करता है । मनुष्य को जीवन्त अस्तित्व स्वयं में माँ के त्याग एवं बलिदान का परिचायक है । अपने रक्त से माँ परिपोषित करती हुई नौ माह तक कष्ट सहती है । इस उत्कृष्ट त्याग के फलस्वरूप ही सुन्दर आकर्षक मनुष्य आकृति प्रकट होती है । पिता के संरक्षण, परिपोषण से लेकर सामाजिक सहयोग की परम्परा में यज्ञ में दान की ही प्रवृत्ति काम करती दृष्टिगोचर होती है । मनुष्य ही नहीं मनुष्येत्तर जीवों और वृक्ष वनस्पतियों में भी सहयोग की प्रवृत्ति ही उनके अस्तित्व को बनाये रखती है । परस्पर एक दूसरे को आबद्ध करती है । दान के महत्व और इसके व्यक्ति एवं समाज के उत्कर्ष में योगदान के रहस्य से ऋषि अवगत थे । यही धारण है कि उन्होंने हर सूक्ष्म एवं समर्थ व्यक्ति को अपनी क्षमता एवं प्रतिभा को समाज के लिए उत्सर्ग करने की प्रेरणा दी है । समर्थों का अनुदान अभावग्रस्तों, निर्बलों को न मिले तो समाज की सुव्यवस्था स्थिर नही रह सकती । समर्थ यदि अपनी समर्थता को समाज के लिए न प्रस्तुत करें तो अव्यवस्थाएँ फैलती हैं । यह प्रवृत्ति मानवी गरिमा के प्रतिकूल और कठोरता अमानवता की परिचायक है ।

यज्ञीय प्रेरणा

यज्ञ की प्रेरणा है-दान-त्याग एवं बलिदान के लिए सहर्ष अपने को प्रस्तुत करने के लिए प्रेरित सहमत करना । दूसरा आधार भी कम महत्वपूर्ण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

नहीं है । संगतिकरण-से अभिप्राय है-एक रूप कर लेना । समान बन जाना । आकृति एवं प्रकृति में एकरूपता स्थापित हो जाना । यज्ञ संगतिकरण की प्रेरणा देता है । ईश्वर के प्रतीक स्वरूप विश्व से तादात्म्य स्थापित कर-सब में उसका दर्शन कर एक रूप हो जाना । अपनी चेतना को विश्व चेतना में विलीन कर देना । लकड़ी अग्नि के सम्पर्क में आकर उसी का रूप ग्रहण कर लेती है । सामान्य नदी नाले भी गंगा में मिलकर गंगाजल बन जाते हैं । ईश्वर श्रेष्ठ एवं दिव्यताओं से ओत-प्रोत है । उसकी संगति व्यक्तित्व में इन्हीं विशेषताओं के रूप में परिलक्षित होनी चाहिए । संगतीकरण सम्पूर्ण प्रकृति में आमूल-चूल परिवर्तन कर देता है । आकृति भी बदल जाती है । विश्व चेतना-विश्व मानव के साथ संगतिकरण अन्तः की उदात्तता एवं महानता के रूप में दृष्टिगोचर होती है । विश्व चेतना के साथ तादात्म्य **'आत्मवत् सर्वभूतेषु वसुधैव कुटुम्बकम्'** की भावना के रूप में प्रकट होती है ।

सामान्यतया मनुष्य का संगतिकरण पदार्थों से होता है । फलतः पदार्थों के जड़ संस्कार को ही ग्रहण करता है । भौतिक वस्तुओं की आसक्ति मृग तृष्णा के समान है । अतृप्ति एवं असन्तोष का कारण बनती है । चेतना की दिव्यता, सरसता एवं मधुरता की अनुभूति नहीं हो पाती । संगतिकरण पदार्थों से होता है । फलतः शाश्वत सुख से सदा वंचित बने रहते हैं । यज्ञ अपनी सत्ता से चेतना का-विश्व चेतना के साथ संगतिकरण करने की प्रेरणा देता है । अपनी सत्ता-सत्ता के रूप में सभी प्राणियों में विद्यमान है । उसको परम सत्ता से-प्राणी साथ में समायी चेतना के साथ सम्पर्क जोड़ा जा सके-एकरूपता बन सकें तो विश्व चेतना की विशेषताओं एवं विभूतियों से सम्पन्न बना जा सकता है । यज्ञ उसी की प्रेरणा देता है ।

संगतिकरण की फलश्रुति है-मानव मात्र-प्राणि मात्र में अपनी ही सत्ता की अनुभूति करना । यही है वह मानवी आधार जिसकी भाव-अभिप्रेरणा द्वारा मनुष्य उदात्त बन जाता है । जब सब में अपनी ही सत्ता विद्यमान है तो अपने पराये का भेद कैसा ? प्रत्येक के दुःख अपने जैसे लगने लगेंगे । मनुष्य को समाज के-समष्टि की प्रगति में ही अपनी उन्नति दिखाई देगी । संकीर्णताओं के बन्धन कट जाते हैं । परमार्थ में-मनुष्य मात्र के कल्याण में ही सुख की अनुभूति होती है । संगतिकरण का सिद्धान्त विश्व वन्धुत्व की-वसुधैव कुटुम्बकम् के सपने को साकार करने में सशक्त भूमिका सम्पादित कर सकता है ।

यज्ञ का तीसरा अर्थ होता है-देवपूजन । लोक व्यवहार में उसे सेवा कहते हैं । देव पूजन अर्थात् देवप्रवृत्तियों की अभ्यर्थना, आराधना । इसके लिए सेवा का मार्ग अपनाना होता है । समाज में देवत्व बढ़े-स्वर्गीय परिस्थितियों का निर्माण हो यह सेवा अवलम्बन द्वारा ही सम्भव है । सेवा अर्थात् अपनी शारीरिक एवं मानसिक क्षमता को पीड़ा एवं पतन में नियोजित करना । यह मनुष्यता का मेरुदण्ड है । करुण हृदय भाव दूसरों की पीड़ा को देखकर द्रवित ही नहीं हो उठता वरन् कुछ ठोस कदम उठाने के लिए प्रेरित भी करता है । देवता की पूजा इसी रूप में हो सकती है । अन्तः की करुणा उभरकर बाहर आ जाय-सहयोग करने के लिए हृदय मचलने लगे यही है देवत्व और देव पूजन का लक्ष्य । देव प्रवृत्तियों के संरक्षण, प्रचलन एवं परिवर्धन की आपूर्ति सेवा मार्ग के अवलम्बन से होती है । अभावग्रस्तों-पीड़ितों को राहत मिलती और समाज में सत्प्रवृत्तियाँ पनपती हैं ।

दान, संगतिकरण और देवपूजन का यज्ञीय दर्शन मनुष्य को उदार एवं उदात्त बनाने में हर दृष्टि से सक्षम है । इन तीनों सिद्धान्तों में मानवी विकास के लिए असीम सम्भावनाएँ सन्निहित है । मानवी अन्तःकरण में महानता का बीजारोपण करने एवं आस्थाओं को सुदृढ़ बनाने में इन तीनों की असाधारण भूमिका होती है । मनुष्य को उदार एवं उदात्त बनाने वाले इन तीन आधारों में किसी प्रकार का कोई मतभेद नहीं हो सकता । थोड़े समय के लिए आस्तिकवादी सिद्धान्तों को लेकर विभिन्न दर्शनों में विभेद हो सकता है और होता भी है । पर मानवी मूल्यों की प्रतिष्ठापना करने वाले, व्यक्ति और समाज को श्रेष्ठ समुन्नत और शालीन बनाने वाले शाश्वत सिद्धान्तों के प्रति नही । यज्ञ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दर्शन विवादों से परे ऐसा ही एक दर्शन है जिसमें वे सारे सिद्धान्त समाहित है जिनके अवलम्बन से व्यक्ति एवं समाज की उन्नति एवं शान्ति निर्भर करती है । सदियों से चली आ रही ऋषि प्रणीत इस परम्परा में सन्निहित प्रेरणा एवं शिक्षा को समझा एवं अपनाया जा सके तो समस्त मनुष्य जाति की समग्र प्रगति, सुख और शान्ति का पथ प्रशस्त हो सकता है ।

यज्ञ शब्द विशुद्ध रूप से सामूहिक प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त हुआ है । इसके एकाकी प्रयोग को निरुत्साहित किया गया है गीता में इस संदर्भ में विस्तृत विवेचना की गई है और उसे परमार्थ भावनाओं के साथ जोड़ा गया है । आप्टे की संस्कृत टू इंग्लिश डिक्शनरी में यज्ञ ''टू सेक्रीफाइस'' बलिदान त्याग के अर्थ में परिभाषित किया गया है । इसे व्यक्तित्व-निर्माण के अर्थ में भी प्रयुक्त किया जा सकता है । उत्कृष्ट भावनाओं के लिए भी । नेत्रदान यज्ञ, भूदान, यज्ञ, ज्ञानदान यज्ञ आदि शब्दों में हम शब्द को परमार्थ प्रयोजनों के लिए ही प्रयुक्त किया गया है, जिसका लक्ष्य लोक सेवा के माध्यम से आत्म-कल्याण का लक्ष्य प्राप्त करना भी समझा जा सकता है ।

एन. सी. वंद्योपाध्याय ने अपने ग्रन्थ ''डेवलपमेण्ट ऑफ हिन्दू पॉलिटी एण्ड पॉलिटिकल थीअरीज'' में इस तथ्य को स्वीकारते हुए ऋग्वेद के मण्डल २ से मण्डल ९ तक की अनेक ऋचाओं का हवाला दिया है । पश्चिमी मनीषी ए. बार्थ ने ''रिलीजंस ऑव इण्डिया'' में यज्ञ को मानव समाज और प्रकृति के बीच मधुर सम्बन्धों की व्यवस्था बताया है ।

सजोश-स्त्वादिवो नरो यज्ञस्यकेतुमिन्धते ।।
मानुषोजनः सुम्नायुर्जुहवे अध्वरे ।

-ऋग्वेद ६/२/३

अर्थात्-लोग यज्ञ की सूचक (अग्नि) को प्रदीप्त करते हैं और मानव जाति (मानुषो जनः) पवित्र अनुष्ठान में अग्नि को आमंत्रित करती है । मंत्र का हवाला देते हुए यज्ञ को समाजनिष्ठ सहकारिता का अलौकिक प्रयोग बताया है । सचाई भी यही है-यज्ञीय प्रवृत्ति यह है कि उपयोगी पदार्थों को निज के लिए सार्वजनिक हित के लिए वायुभूत बनाकर बिखेर दिया जाय । वसोधारा में समष्टि में व्यष्टि के समर्पण की ही भावाभिव्यक्ति है ।

यज्ञ कृत्य के प्रायः सभी क्रियाकलाप ऐसे हैं जिनमें अनेकों के सहयोग की आवश्यकता पड़ती है । पवित्र जलाशयों का जल, पवित्र वनस्पतियों का संग्रह, कुण्ड, मण्डप निर्माण आदि में आरम्भ से अन्त तक होने वाले क्रिया-कृत्यों में सामूहिकता सहकारिता की आवश्यकता पड़ती है । मंत्रोच्चारण से लेकर आहुतिदान, परिक्रमा जैसे सभी कृत्यों में एकरूपता समस्वरता का यह तत्वदर्शन ही व्यक्ति को महान बनाता है । विराट् ब्रह्म की कल्पना के साथ-साथ यज्ञावशिष्ट ही खाने का निर्देश है । जो दिए बिना खाता है, सो चोर है । देवताओं ने यज्ञ से देवत्व प्राप्त किया जैसी सूक्तियाँ मिलती हैं । इन प्रतिपादनों में समाज परायणता की प्रेरणा है । संक्षेप में यज्ञ दर्शन व्यक्तिगत जीवन में चरित्रनिष्ठा और लोक व्यवहार में-समाज निष्ठा के आदर्श को अपनाए जाने की प्रेरणा देता है । व्यक्ति और समाज की सर्वतोमुखी प्रगति और सुख शान्ति का यही एक मार्ग है ।

'यज्ञ' भारतीय दर्शन का इष्ट आराध्य

अध्यात्म विज्ञान के तत्व दर्शन एवं क्रिया प्रयोजन के दोनों ही पक्ष यज्ञ विधा से सम्बन्धित हैं । कठोपनिषद् में यम नचिकेता सम्वाद में जिन पंच प्राणाग्नियों का विवेचन हुआ है वे अग्निहोत्र से सर्वथा भिन्न प्राण परिष्कार की चिन्तनपरक दिशा धाराएँ हैं । मीमांसा, सूत्र-ग्रन्थ ब्राह्मण एवं आरण्यकों में 'यज्ञ' शब्द यजन कृत्य के साथ सम्बद्ध है । जीवन यज्ञ का तात्पर्य है चिन्तन और चरित्र को पवित्र एवं प्रखर बनाना । अग्निहोत्रों का तात्पर्य ऐसी ऊर्जा उत्पन्न करना है जो न केवल शरीर को ओजस्, मन को तेजस्, आत्मा को वर्चस् दे सके वरन् इस प्रकृति ब्रह्माण्ड में भी अनुकूलताओं का अनुपात बढ़ा सके ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ में अग्नि का प्रयोग होता है इस परम्परा में शास्त्रकारों ने यह स्पष्ट किया है कि इस ब्रह्माण्ड में अग्नि के अनेक स्वरूप है । वे सभी अपने-अपने प्रयोजन के लिए समर्थ शक्तिवान हैं । किन्तु 'यज्ञाग्नि' उनमें विशिष्ट है । वह ज्वलनशील होते हुए भी आध्यात्मिक विशेषताओं से सम्पन्न होती है और देव संज्ञा में गिनी जाती हैं । यजन पूजन उसी का होता है और वही याजक की पवित्रता प्रखरता का सम्बर्धन करती हुई अभीष्ट सत्परिणाम प्रदान करती है ।

अग्नि देव का भारतीय देव मण्डल के प्राचीनतम सदस्य के रूप में वैदिक संहिताओं और ब्राह्मण ग्रन्थों में महत्वपूर्ण स्थान है । ऋग्वेद का प्रथम मंत्र एवं शब्द अग्निदेव की स्तुति से ही आरंभ होता है । यह अग्नि ही यज्ञ का मुख्य अग्रणी, पुरोहित एवं संचालक है, क्योंकि उसी से इस विश्व ब्रह्माण्ड में रूप है, दर्शन है और प्रकाश है । उसी के आलोक से समस्त विश्व आलोकित है । उसी ज्ञान स्वरूप प्रकाशक, चेतना शक्ति की शासिका एवं अधिष्ठात्री अग्नि की अभ्यर्थना, उपासना से जीवन बनता, आत्मोन्नति होती और अमृतत्व की प्राप्ति होती है ।

देवताओं में सर्व प्रथम एवं सर्व समर्थ अग्निदेव की उत्पत्ति हुई । इसके गीता से वेद-पुराणों तक में कितने ही प्रमाण मिलते हैं । महाभारत अश्वमेधिक पर्व, ९२ वें अध्याय में उल्लेख है -

ब्रह्मात्वेनासृजं लोकानहमादौ महाद्युते ।
सृष्टोऽग्निर्मुखतत: पूर्व लोकानां हितकाम्यया ।।

अर्थात् श्री भगवान ने कहा-महातेजस्वी राजन् ! मैंने सबसे पहले ब्रह्मस्वरूप से लोकों को बनाया । लोगों की भलाई के लिए मुख से सबसे पहले अग्नि को प्रकट किया । इसी अध्याय के वैष्णव पर्व में कहा गया है-सभी भूतों से पहले अग्नि तत्व मेरे द्वारा पैदा किया गया, इसलिए पुराण ज्ञाता मनीषी उसे 'अग्नि' कहते हैं । अग्नि के तीन स्थान और तीन मुख्य रूप जाने जाते हैं- (१) व्योम में सूर्य (२) अन्तरिक्ष (मध्याकाश) में विद्युत, (३) पृथ्वी पर साधारण अग्नि रूप ।

ऋग्वेद में सबसे अधिक सूक्त अग्नि की स्तुति में ही अर्पित किए गऐ हैं । अग्नि के आदिम रूप संसार के प्राय: सभी धर्मों में पाए जाते हैं । वह 'गृहपति'है और परिवार के सभी सदस्यों से उसका स्नेहपूर्ण घनिष्ठ सम्बन्ध है (ऋ० २.१. ९, ७. १५. १२. और १. १. ९, ४. १. ९) वह अन्धकार निशाचर, जादू-टोना, राक्षस और रोगों को दूर करने वाला है ऋ० ३. ५. १, १९४. ५, ८. ४३ ३२, १०.८८. २२ ।

अग्नि का यज्ञीय स्वरूप मानव सभ्यता के विकास का लम्बा चरण है । परिपाक और शक्ति-निर्माण की कल्पना इसमें निहित है । यज्ञीय अग्नि वेदिका में निवास करती है (ऋ ०११. १४० . १) । वह समिधा, सोम और घृत से शक्तिमान् होता है । (ऋ० ३. ५५. १०, १. ९४. १४), वह मानवों और देवों के बीच मध्यस्थ और सन्देश वाहक है (ऋ० वे० १, २६. ९, १. ९४ ३, १. ५९ ३, १. ५९. १, ७. २. १, १. ५८. १, ७. २. ५, १. २७. ४, ३, १. १७., १०. २. १, १. १२ ४ आदि) । अग्नि की दिव्य उत्पत्ति का वर्णन भी वेदों में विस्तार से पाया जाता है (ऋ०३. ९. ५, ६. ८. ४) । वह देवताओं का पौराहित्य करता है । वह यज्ञों का राजा है **राजा त्वमध्यवराणाम्** ऋ० वे० ३.११.१८. ७.११, ४, २. ८. ३, ८. ४३. २४ आदि ।

नैतिक तत्वों से भी अग्नि का अभिन्न सम्बन्ध है । अग्नि सर्वदर्शी है । उसकी १०० अथवा १००० आँखें हैं जिनसे वह मनुष्य के सभी कर्मों को देखता है -ब्रा.ऋ० १०. ७९. ५ । उसके गुप्तचर हैं । वह मनुष्य के गुप्त जीवन को भी जानता है । वह ऋत का संरक्षक है -ऋ० १०. ८. ५ । अग्नि पापों को देखता और पापियों को दण्ड देता है-ऋ० ४. ३. ५-८, ४. ५.- ४-५ । वह पाप को भी क्षमा करता है - ऋ० ९. ७. ०३. ७ ।

अग्नि की तुलना वृहस्पति और ब्रह्मणस्पति से भी की गई है । वह मन्त्र, धी (बुद्धि) और ब्रह्म का उत्पादक है । इस प्रकार का अभेद सूक्ष्मतम तत्व से दर्शाया गया है । वैदिक साहित्य में अग्नि के जिस रूप का वर्णन है उससे विश्व व्यवस्था के वैज्ञानिक और दार्शनिक पक्ष पर काफी प्रकाश पड़ता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वेदों को भारतीय तत्वज्ञान का उद्गम स्रोत माना गया है । उनमें श्रद्धा, निष्ठा और प्रज्ञा के तीनों दिव्य तत्वों की गरिमा उपलब्ध करने की प्रक्रिया समझाई गई है । वेद त्रयी ही-त्रिपदा गायत्री है । इन्हीं के प्रतिपादन सत्-चित आनन्द, सत्यं, शिवं, सुन्दरं एवं ज्ञान भक्ति कर्म कहलाते हैं । यह वेद ज्ञान त्रिविध होते हुए भी त्रिवेदी संगम की तरह एक ही केन्द्र पर केन्द्रित होता है और वह है-यज्ञ । संक्षेप में वेदों का विस्तृत विवेचन विस्तार 'यज्ञ विद्या' को समझने-समझाने के लिए हुआ है ।

विद् ज्ञाने धातु से निष्पन्न 'वेद' शब्द का तात्पर्य ज्ञान के भाण्डागार से होता है । वेदों में जिस 'ज्ञान' प्रतिपादन है, उसका प्रमुख माध्यम 'यज्ञ' है । 'यज्ञ' के प्रयोजन से ही वैदिक ज्ञान आविर्भूत हुआ है, दूसरे शब्दों में हम यों कह सकते हैं कि 'वेद का ज्ञान यज्ञों में ओत-प्रोत है । यज्ञाग्नि ही शक्ति प्रकाश और ब्रह्मज्ञान दाता है । हम भारतीय अग्नि को देवता मानते हैं उनकी पूजा करते हैं, आहुतियाँ भेंट करते हैं और चूँकि उन्हें ''अग्नि मीले पुरोहितं '' देवताओं तक आहुतियाँ पहुँचाने वाले पुरोहित मानते हैं इसलिए वह विश्वास करते हैं कि अग्नि देव हमारी भावनाओं एवं कामनाओं से युक्त आहुतियाँ देवताओं तक पहुँचाते हैं, जिससे देवता हम पर आयु, प्राण, बल, बुद्धि , ज्ञान और सुखों की वृष्टि करेंगे ।

कोई भी पदार्थ जलकर गैस रूप में असंख्य गुना व्यापक हो जाता है यह बात अब वैज्ञानिक भी मानते हैं १९६६ में आयोजित कैलीफोर्निया यूनिवर्सिटी की एक अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक गोष्ठी में वैज्ञानिकों ने माना कि अग्नि में किसी भी हव्य को ''आक्सीकृत ''कर अनन्त आकाश में पहुँचा देने की क्षमता है । यही नहीं अग्नि को आश्चर्यों का आश्चर्य कहा गया और उस पर विस्तृत खोज की आवश्यकता पर जोर दिया गया ।

हवा का झोंका आये तो आग बुझ जायेगी फिर अग्नि हवा में ही क्यों जलती है ? वायु-शून्य में क्यों नहीं जलती ? अग्नि ज्वाला के मध्य भाग का तापमान कम रहता है जब कि बाहरी भाग सबसे गर्म होता है ? बाहरी भाग में भी ऊपर जिस तरफ लौ उठती है उधर का तापमान सर्वाधिक क्यों रहता है ? लौ सदा ऊपर को ही क्यों उठती है ? आदि जो कुछ जाना जा सका है वह अत्यन्त न्यून है ।

मामूली मोमबत्ती जलाई जाये तो उसकी गर्मी १५०० से० के लगभग होती है । कोल-गैस और वायु के मिश्रण से जलाई गई अग्नि २००० डिग्री सेन्टीग्रेड तक गर्म होती है जबकि परमाणवीय हाइड्रो-आक्सीजन की उपस्थिति में यही तापमान ३८०० तक या ४००० डिग्री सेन्टीग्रेड तक पहुँच जाता है, इस गुत्थी का कोई सुलझाव वैज्ञानिकों के पास नहीं है । इलेक्ट्रान, प्रोट्रान, न्यूट्रॉन की तरह अब प्रकाश के अणु ''फोटोन्स'' के सम्बन्ध में काफी कुछ ज्ञात हुआ है पर अग्नि-स्फुल्लिंग की कोई भौतिक या रासायनिक व्याख्या अब तक नहीं हुई । एक नया खुला हुआ विस्तृत क्षेत्र है । इसलिये संसार के अनेक शोध संस्थानों विशेषकर इंग्लैड के विश्व-विद्यालयों में इन दिनों अग्नि ज्वाला पर तेजी से अनुसन्धान चल रहा है ।

वैदिक ऋचायें जिन 'देवताओं' के लिए प्रयुक्त होती है उन पर दृष्टि डालने से पता चलता है कि भारतीय तत्व दर्शियों ने 'अग्नि-तत्व' पर जितनी गवेषणायें की हैं उतनी अन्य किसी पर शायद ही की हों । उन्होंने अग्नि का रासायनिक और भौतिक ही नहीं, उसकी आध्यात्मिक शक्तियों का विस्तार से विश्लेषण किया है । पृथ्वी पर सामान्य स्थिति में पाई जाने वाली अग्नि को उन्होंने इतना 'असामान्य' पाया कि एक स्वतन्त्र वेद ''यजुर्वेद'' की ही रचना करनी पड़ी । यह अग्नि ही है जिसके कारण प्राणि मात्र जीवन धारण किये हैं । प्रजा की उत्पत्ति, बल और वीर्य की उत्पत्ति अग्नि के ही कारण है । मनुष्य के मुख मंडल पर विद्यमान चमक, तेज और आकर्षण अग्नि की ही उपस्थिति का परिणाम होता है । 'अग्नि' का शरीर से समाप्त हो जाना-शरीर का ठण्डा पड़ जाना ही मृत्यु मानी जाती है । यह गवेषणायें प्रमाण है कि ऋषियों ने अग्नि तत्व की सूक्ष्माति सूक्ष्म अवस्था तक का ज्ञान प्राप्त किया था । अग्नि-पूजा को आज कई भौतिकवावादी व्यक्ति एक बेकार का काम समझ कर भारतीयों को अल्प-

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुद्धि मानते हैं पर उनने यह नहीं जाना कि अग्नि का ही बल था जो भारत वर्ष ने सारे विश्व को प्रभाव में ले डाला था ऐसा कोई देश पृथ्वी पर न था जो इसके चक्रवर्ती साम्राज्य में सम्मिलित न हुआ हो, भविष्य में भी हमारा गौरव, शौर्य और संसार के पथ-प्रदर्शन की क्षमता का विकास इन - देवता की कृपा और तत्व-ज्ञान पर ही निर्भर होगा ।

'आकाश,वायु, अग्नि,जल और पृथ्वी' इन पंच महाभूतों में अग्नि का स्थान तीसरा है । शतपथ ब्राह्मण में आता है-

दिवस्परि प्रथमं जज्ञेऽअग्निः इति प्राणो वै दिवः प्राणादु वा एष प्रथम जायत । अस्मद् द्वितीयं परिजातवेदा इति । यदेन मदो द्वितीय पुरुष विधौऽजनयत् । तृतीयम् अपिस्वति । यदेन मदस् तृतीयम् अद्भ्योऽजनयत्

-६/७/४/३

अर्थात्-अग्नि का प्रथम जन्म प्राण अथवा वायु से हुआ । (वायु न होने से अग्नि जल नहीं सकती) अग्नि में जो ज्योति है वह प्राण का ही प्रकट रूप है । दूसरा जन्म जब अण्ड हिरण्यगर्भ या गर्भ बना तब हुआ (वीर्य के प्रजनन-कोष स्पर्म-जो स्त्री के ओवम् से मिलते हैं वह अग्नि रूप ही है) पृथ्वी उत्पत्ति के समय वह अग्नि का दहकता हुआ गोला थी ऐसा इतिहासकार भी मानते हैं यह हिरण्यं गर्भ या गर्भ में अग्नि रूप प्रतिष्ठित जीवकोष ही पुरुष होता है (पुरुष का अर्थ एक ऐसे अस्तित्व से है जो ज्ञाता अर्थात् सब कुछ जानता, अनुभव करता, बोलता, सुनता आदि क्रियायें करता है) इस दृष्टि से अग्नि ही पुरुष रूप में मनुष्य शरीर में अवतरित होता है । अग्नि की लौ में मध्य भाग 'जातवेद अग्नि' कहलाता है वही सब वस्तुओं का ज्ञाता होता है (वेदों का गहन अनुसंधान करने वाले विद्वान् एग्लिग ने भी जातवेद का अर्थ 'दि नोअर आफ बीइंग्स' माना है) तीसरा अग्नि का 'अपो' में हुआ अर्थात् अग्नि से ही जल की उत्पत्ति हुई और जिस तरह प्रत्येक भूत दूसरे भूत तत्व में समाया रहता है अग्नि भी जल में समाविष्ट हो गये ।

ऋग्वेद का **अपां नपात् परितस्थुरापः** -२/३५/३ कथन इसी तथ्य का प्रतिपादन करता है अर्थात् अपां नपात् (अग्नि) को चारों ओर से आपः ने घेर लिया । आपः की परिभाषा महाभारत में इस तरह की है-

अपां शैत्यं रसः क्लेदो द्रवत्वं स्नेह सौम्यता ।
जिह्वा विस्यन्दनं चापि भौमानां श्रवणं तथा ।।

-२६१/४

अर्थात्-भूमिगत अपों (जल) का गुण, शैत्य, रस, गीलापन द्रवत्व, स्नेह, सौम्यता, जिह्वा, विस्यन्दन एवम् उबलना भी है ।

आपः का दूसरा रूप गैस या सूक्ष्म तत्व प्राण के रूप में है । आपः को विधा (यजु १४/७) अर्थात् वह जो सब कुछ बनाता है । प्राण रूप में गैस (नोबुला) ही सृष्टि की उत्पत्ति का कारण है यह अब खगोल शास्त्री भी मानते हैं । दिव्या आपः *(जैमिनी ब्राह्मण १/४५)* अर्थात् उनका रूप दिव्य था । प्राण वस्तुतः एक चमकदार तत्व है जिसमें अग्नि के सभी गुण होते हैं ।

उपरोक्त कथन में अग्नि के दिव्य गैस रूप (प्राण) से जल से उपस्थित होने तक का सारा विज्ञान दिया हुआ है इससे भी सूक्ष्म विज्ञान वैदिक ऋचाओं में है उसी की जानकारी और अनुभूति के फलस्वरूप भारतीय तत्वदर्शियों ने प्राण संचालन, इच्छा मृत्यु, अपने प्राणों से औरों का भला करना, आग्नेयास्त्र, परकाया प्रवेश औरों के मन की बात जान लेना आदि दिव्य शक्तियाँ प्राप्त की थीं । पंचाग्नि विद्या के नाम से शरीर में अग्नि-तत्व या प्राण के विकास का ही ज्ञान कठोपनिषद् में यमाचार्य ने नचिकेता और भृगु ने वरुण को कराया था । प्राण-विद्या वस्तुतः गूढ़ साइन्स है जो किसी भी प्रामाणिक क्षमता से अधिक महत्वपूर्ण है ।

जैमिनी ब्राह्मण में अग्नि की तीन संज्ञायें दी गई हैं भूपति, भुवनपति, भूतानां पतिः विष्णु पुराण में इन तीनों के १५-१५ भेद करके ४५ अग्नियाँ बताई हैं । महाभारत में अग्नि के दस गुण गिनाते हुए बताया गया है कि अग्नि तत्व के विकास से ही मनुष्य ऊर्ध्वमुखी शक्तियों से सम्बन्ध जोड़ता है-

अग्ने दुर्धर्षता ज्योतिस्तापः पाकः प्रकाशनम् ।
शौचं रागो लघुस्तैक्ष्ण्यं सततं चोर्ध्वगामिता ।।

-शान्ति पर्व (महाभारत)

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात्-अग्नि के (१) दुर्घर्षता, (२) ज्योति (३) ताप, (४) पाक (५) प्रकाश, (६) शौच, (७) राग, (८) लघु, (९) तैक्ष्ण्य, (१०)ऊर्ध्वगमन यह अग्नि के दश गुण शरीर में प्रकट होते हैं अर्थात् शरीर में बल का संचार, चमक, गर्मी अग्नि के गुण है वही अन्न पचाता है, वही ज्ञान करता है, शरीर की अशुद्धता को वही जलाता या दूर करता है । उसी में आकर्षण का गुण है, शरीर को हलका और शक्तिशाली रखता है । मानसिक शक्तियों को वही ऊपर उठाकर ले जाता है और देव शक्तियों से मेल कराकर आत्मा का विकास करता है ।

यह दस गुण पाँच प्राण और पाँच उपप्राणों की अलग-अलग क्रियायें तथा गुण हैं । इनके विकास का अपना अलग विज्ञान है जो यज्ञ, प्राणायाम, ध्यान, वैदिक मन्त्रों के उच्चारण आदि के रूप में व्यवहृत हुआ है । आज यह सब बातें लोग भूलते जा रहे हैं इसीलिए आयु, शक्ति, बल, तेजस् और दिव्य शक्तियों के सम्पर्क से प्राप्त होने वाले लाभ नष्ट होते चले जा रहे हैं । संयमित जीवन से अपने आप शरीर में अग्नि तत्व के विकास का एक नैसर्गिक उपाय था वह भी नष्ट हो चला । इस तरह अग्नि देवता को कुपित कर संसार स्वत: दु:ख की अग्नि में जलता जा रहा है । यदि शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक और आध्यात्मिक, धार्मिक उन्नति के द्वार खोलने हैं तो हमें फिर से अग्नि तत्व जैसे महाभूत की नये सिरे से खोज करनी होगी, प्रतिष्ठा देनी होगी और ऋषियों के दिये ज्ञान को धारण करना होगा ।

विज्ञान की अब तक की थोड़ी-सी जानकारियाँ इन्हीं तथ्यों की पुष्टि करती हैं । अग्नि-ज्वाला को आज एक रासायनिक क्रिया माना जाता है और विज्ञान यह मानता है कि उसमें वायु मंडलीय आक्सीजन की उपस्थिति मुख्य है । जो पदार्थ जलता है वही आक्सीजन के साथ प्रतिक्रिया उत्पन्न करके ऊष्मा पैदा करता है यदि आक्सीजन के साथ रासायनिक क्रिया अपूर्ण और जटिल हुई और पूरी तरह आक्सीकरण नहीं हो पाया तो गर्मी कम होगी यदि आक्सीकरण पूरा हो जाता है तो कार्बन डाई-आक्साइड गैस जो धुयें के रूप में निकलती है प्राप्त होती है । "शुचि अग्नि जलाशी" है जब हमारे तत्वदर्शी यह कहते थे तब लोग उपहास करते थे कि अग्नि से जल का क्या सम्बन्ध पर आज का विज्ञान भी इस बात को मानता है कि लौ से लगाकर पानी निकलता है पर यह पानी गैस रूप में होता है हिन्दी डाइजेस्ट सन् १९६८ के एक अंक में भी इस तथ्य को स्वीकार किया गया है । सं० पृष्ठ ४९ में "आपो वा इदं सर्वमाप्न वन" अर्थात् वह आप: सर्वव्यापी है ऐसा कहा है । तैत्तरीय सं० ५/२/१ अग्नि का प्रियतनू छन्द अर्थात् प्रवाह या 'वेव्स' बताया है उससे इस बात में सन्देह नहीं रह जाता कि आकाश में जो सूक्ष्म अग्नि तत्व है या आप: के संवाहक 'नोबुलाज' है उनमें मन रूपी प्राण स्फुल्लिंग को प्रवाहित कर सूक्ष्म लोकों की गतिविधियों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है ।

अभी तो भौतिक शक्तियों के उद्भव एवं उपयोगी परिवर्तनों में ही अग्नि का उपयोग प्रधान रूप से होता है । भोजन पकाने से लेकर धातु परिशोधन तक के अनेकानेक कार्य अग्नि द्वारा सम्पन्न होते हैं । तेल, कोयला, भाप, वारूद जैसे ईधनों के सहारे अपने युग में यन्त्रों का संचालन और अस्त्रों का संचालन होता है । अग्नि का उपयोग केवल मनुष्य ही जानता है । अन्य प्राणी तो उससे दूर भागते हैं मानवी प्रगति के लिए प्रयुक्त हुए साधनों में जितना भाग अग्नि का है उतना और किसी का नहीं । विद्युत भी अग्नि का एक विशेष प्रकार ही है । अणु विखण्डन एवं विकरण माध्यमों से प्रकट की जाने वाली ऊर्जा अग्नि ही है । जो एक विशिष्ट ताप धारा कही जा सकती है ।

आत्मिक प्रयोजनों में अग्नि का और भी विशिष्ट उपयोग है । तपश्चर्या योग साधना में अग्नि की समीपता एवं सहायता से अनेकों उपासनात्मक उपचार होते हैं । अग्नि पूजा ही यज्ञ प्रधान विषय है । न्याय दर्शन -४/१/६२ , मनुस्मृति -१-२२ सिद्धान्त शिरोमणि (गणिताध्याय) गोपथ ब्राह्मण -१/४/२४, गीता -४, २२, ऋग्वेद -१/१/१ आदि अनेकानेक शास्त्र वचनों में उपासनात्मक एवं आध्यात्मिक एवं आध्यात्म प्रयोजनों में अग्नि को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रमुख भाष्य माना गया है । इस प्रकार के उपयोग में आने वाली अग्नि को यज्ञाग्नि कहते है । उसके प्रकटीकरण एवं क्रियान्वयन की पद्धति को अग्निहोत्र कहते हैं ।

भौतिक अग्नि से जब तक मनुष्य का परिचय नहीं था तब की पिछड़ेपन और आजश्च उस महाशक्ति के सहारे संभव हुई प्रगति वाली स्थिति की तुलना करते हैं तो दोनों के मध्य जमीन आसमान जैसा अन्तर दिखाई पड़ता है । वही बात दैवी अग्नि के सम्पर्क के बिना और उसकी सहायता से सम्भव आत्मिक प्रगति के बारे में भी कही जा सकती दैवी शक्तियों, के साथ सम्पर्क बनाने और अनुग्रह पाने में अग्नि का सहयोग असाधारण है । अगरवत्ती, धूप, दीप, में अग्नि की ही गरिमा है । यज्ञाग्नि तो प्रत्यक्ष ही विष्णु स्वरूप है ।

ऋग्वेद ७/११/१ के अनुसार अग्नि के बिना देवता की अनुकम्पा प्राप्त नहीं होती । ऋग्वेद ७/१/७-७/११/१ तथा अथर्ववेद ५/१२/२ के अनुसार हमारे अनुदान और प्रतिवेदन देवताओं के पास तक अग्नि के माध्यम से पहुँचते हैं । शतपथ ब्राह्मण ३/७/४/१० शांखायन ब्राह्मण३/७ महाभारत ७/७/१० के अनुसार अग्नि ही देवताओं का गुण है । वे इसी माध्यम से मनुष्यों की भेंट स्वीकार करते और अपने बरदान उस पर उडेलते हैं ।

स्वर्ग तक आत्मा को पहुँचाने वाला वाहन क्या हो सकता है ? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए शास्त्रों ने कहा है-'यज्ञाग्नि अथर्व ११८/४/२, एतरेय ब्राह्मण १/२/१० शतपथ ब्राह्मण १२/४//७ में इसी मत का विस्तार पूर्वक प्रतिपादन किया गया है ।

यज्ञीय सत्कर्मों से प्रसन्न हुए देवता मनुष्यों की सुख सुविधा का सम्वर्धन करते हैं । उन्हें श्रेष्ठ समुन्नत बनाते हैं इस तथ्य की पुष्टि अथर्व ११/७ २३-१८/४/३ ऋग्वेद १०/६४/२-११/१/१० में की गई है । गायत्री माता का अनुग्रह प्राप्त करने के लिये-सविता देवता का भर्ग (तेजस) प्रचुर मात्रा में अपने लिये उपलब्ध करने के लिये गायत्री उपासक का यज्ञ परायण होना आवश्यक है । उनके लिये ऐसा सर्वसुलभ विधान बना दिया गया है जिसमें न कोई जटिलता है न कठिनाई हर उपासक सुविधानुसार उसे अपना सकता है ।

शतपथ ब्राह्मण के ९/१०/१४ में कहा गया है **यज्ञो भुवनस्य नाभि ।**

अर्थात् यज्ञ संसार की धुरी है । उसी के सहारे विश्व ब्रह्माण्ड का गति चक्र घूमता है ।

यज्ञ का तत्वदर्शन उदारता पवित्रता और सहकारिता की त्रिवेणी पर केन्द्रित है । यही तीन तथ्य ऐसे हैं जो इस विश्व को सुखद , सुन्दर और समुन्नत बनाये हुए हैं । ग्रह नक्षत्र पारस्परिक आकर्षण में बँधे हुए ही नहीं है एक दूसरे को महत्व पूर्ण आदान-प्रदान भी करते रहते हैं । परमाणु और जीवाणु जगत भी इन्हीं सिद्धान्तों के सहारे अपनी गतिविधियाँ सुनियोजित रीति से चला रहा है । सृष्टि संरचना, गतिशीलता और सुव्यवस्था में संतुलन-इकोलॉजी का सिद्धान्त ही सर्वत्र काम करता हुआ दिखाई पड़ता है । हरियाली से प्राणि पशु निर्वाह, प्राणि शरीर से खाद का उत्पादन, खाद उत्पादन से पृथ्वी को खाद-खाद से हरियाली वह सहकारिता चक्र घूमने से ही जीवधारियों की शरीर यात्रा चल रही है । समुद्र से बादल बादलों से भूमि में आर्द्रता, आर्द्रता से नदियों का प्रवाह नदियों से समुद्र की क्षति पूर्ति -यह जल चक्र धरती और वरुण का सम्पर्क बनाता और प्राणियों के निर्वाह की उपयुक्त परिस्थितियाँ उत्पन्न करता है । शरीर के अवयव एक दूसरे की सहायता करके जीवन चक्र को घुमाते हैं । समाज संरचना के आधार पर अर्थ तन्त्र शासन तन्त्र तथा दूसरे प्रगति क्रम चलते हैं । यह यज्ञीय परम्परा ही है जिसके कारण जड़ और चेतना वर्ग के दोनों ही पक्ष अपना सुव्यवस्थित रूप बनाये हुए हैं । इसी से यज्ञ तत्व को विश्व की नाभि-धुरी कहा गया है ।

व्यक्ति या सामूहिक अनुष्ठानों के साथ उसी के अनुरूप छोटे बड़े मन्त्र अनिवार्य रूप से जोड़े गये हैं । यज्ञ प्रक्रिया को अपना कर सर्व किल्विषों से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छुटकारा पाया जा सकता है । किल्विष पाप कर्मो और उनके कारण उत्पन्न आधि व्याधियों के समुदाय को कहते हैं । आयुर्वेद में यज्ञ को शारीरिक व्याधियों और मानसिक आधियों का निवारण कर्ता कहा गया है । यथा-**देव, गौ, ब्राह्मण गुरु वृद्ध सिद्धाचापति अर्थवेद अग्नि मुचरेते ।**

-चरक-सूत्र स्थान ५/८

अर्थात् देव, गौ, ब्राह्मण, गुरु वृद्धजन सिद्ध पुरुषों के सान्निध्य तथा यज्ञाग्नि के सहयोग में स्वास्थ्य रक्षा होती है ।

भगवद् गीता के अध्याय ३ श्लोक १०/११/१२ में यज्ञ की महत्ता बताते हुए भगवान कहते हैं-

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः
अनेन प्रसविष्यध्वमेबवोऽस्त्विष्ट कामधुक् ।।
देवान् भावयतानेन, ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ।
इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते ।

-यज्ञ भविताः

तैर्दत्तान् प्रदायैभ्यो यो भुक्तेस्तेन एवस ।।

इन श्लोकों का भावार्थ है-प्रजापति ने मनुष्य और यज्ञ को साथ-साथ उत्पन्न किया और कहा दोनों परस्पर सहयोग करें और श्रेय प्राप्त करें । यज्ञ द्वारा परिपुष्ट हुए देवता ही मनुष्यों को श्रेय प्रदान करते हैं । जो उन्हें दिये बिना (यज्ञ किये बिना) खाता है सो चोर है ।

नारायणोपनिषद् ७९ में यज्ञीय विकरण से शत्रुओं के नाश होने की बात कही गई है । यह नाश किसी को क्षति पहुँचाने के रूप में नहीं वरन् शत्रुता का मित्रता के रूप में परिवर्तित हो जाने के रूप में होता है । कहा गया है-

यज्ञेन द्विषन्तो मित्राभवन्ति यज्ञे सर्व ।
प्रतिष्ठितम् तस्माद् यज्ञं परमं वदन्ति ।

अर्थात् यज्ञ से शत्रुता-मित्रता में बदल जाती है इसलिए उसे परम कहा गया है ।

श्रीमद्भावगत पुराण ४/१४ के १८/१९/२० श्लोकों में कहा गया है कि यज्ञ से भगवान प्रसन्न होते हैं और उस प्रसन्नता से विश्व कल्याण की पृष्ठभूमि बनती है । यथा-

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाःतानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ते ह नाकं महिमान सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।

देवताओं ने यज्ञ कर्मो द्वारा उस यज्ञ पुरुष परमात्मा का यजन किया । इससे उन्हें परम धर्म की प्राप्ति हुई । सामान्य मनुष्य भी इसी मार्ग पर चलकर देवत्व और वर्चस्व की प्राप्ति कर सकते हैं ।

अग्नि होवात्परं न्यत्यावत्र मिह विद्यते ।

-पद्म पुराण

अग्निहोत्र से अधिक पवित्र इस संसार में और कोई सत्कर्म नहीं है ।

यस्य राष्ट्रे पुरे चैव भगवान् यज्ञ पुरुषः । इज्यते स्वेन धर्मेण जर्नवर्णाश्रमान्वितैः । तस्यराजा महाभागगायत्र्यैपरितुष्यति विश्वात्मा तिष्ठतो निजशासने । तस्मिस्तुष्टे किमप्राप्यं जगत-मीश्वरेश्वरम् ।

अर्थात् -जिस देश या नगर के निवासी धर्म का पालन करते हुए पुरुष को प्रसन्न करते हैं वहाँ गायत्री माता का अनुग्रह बरसता है और सुख शान्ति बढ़ती है ।

पद्म पुराण सृष्टि खण्ड के ३/१२४ में कहा गया है -

यज्ञेनाप्यायिता देवां वृष्युत्सर्गेण मानवाः आप्यानं वै कुर्वन्ति यज्ञाः कल्याणहेतवः

अर्थात्-यज्ञ में प्रसन्न हुए देवता मनुष्यों पर कल्याण की वर्षा करते हैं ।

आत्म संयम भी यज्ञ है । वासना, तृष्णा, अहंता आदि लिप्सा लालसाओं को परब्रह्म में हवन कर देना ब्रह्म यज्ञ है । इसी को ईश्वरार्पण आत्म समर्पण आदि कहते हैं । लौकिक महत्वाकांक्षाओं को-ऐषणाओं को महान् आदर्शों में विसर्जन कर दिया जाय तो वह आत्माहुति ब्रह्मयज्ञ बन कर आत्मकल्याण ईश्वरीय अनुग्रह और लोक श्रद्धा के आधार पर मिलने वाली अगणित विभूतियाँ सिद्धियाँ उत्पन्न करेंगी । ऐसे यज्ञ को भगवान मनु ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्राह्मणत्व के उद्भव का प्रमुख आधार बताया है । वे कहते है-**महायज्ञश्च यज्ञैश्च ब्राह्मी यं कुरुते तनु** अर्थात्-यज्ञों और महायज्ञों की सहायता से इन्हीं सामान्य शरीरों को ब्राह्मण बनाया जाता है । ब्राह्मण किसी वंश विशेष में पैदा नहीं होता वरन् वह यज्ञोपचार से बनाया ढाला जाता है । मकरध्वज रसायन की विशिष्टता प्रसिद्ध है उसमें पदार्थ तो साधारण ही होते हैं पर विशेष अग्नि संस्कारों की पद्धति से उसे अमृतोपम बनाया जाता है । उसी प्रकार यज्ञ सम्पर्क में निरन्तर रहने वाले शरीरबल एवं मनोबल के ही नहीं आत्मबल के भी धनी बनते हैं । इन्हीं विशेषताओं से सुसम्पन्न व्यक्ति ब्राह्मण कहलाते हैं । उन्हें सर्व समर्थ माना जाता था और श्रद्धावन्दन प्रस्तुत करके आशीर्वाद मागा जाता था । उनके आर्शीवाद जिस दिव्य सामर्थ्य के सहारे फलित होते थे । उसका उर्पाजन विशिष्ट साधनाओं के सहारे किया जाता था । इन साधनाओं में यज्ञ साधना का स्थान और महत्व सदा असाधारण माना जाता रहा है ।

ब्राह्मण परम्परा में यज्ञ को एक अनिवार्य आवश्यकता माना गया है । ब्राह्मण के छः कर्म बताये गये हैं । इसे तीन युग्म भी कहा जाता है-(१) विद्या पढ़ना-विद्या पढ़ाना (२) दान देना दिलाना (३) यज्ञ करना, यज्ञ कराना । इन तीन युग्मों में एक-एक यज्ञ से सम्बन्धित है । दूसरा अर्थ हुआ कि ब्राह्मण का एक तिहाई जीवन यज्ञ प्रक्रिया यज्ञ से सम्बन्धित है । सन्ध्या की तरह अग्निहोत्र भी उसके नित्य कर्म में सम्मिलित रखा गया है । इस अनुशासन का विशिष्ट लाभ यह है कि लोकसेवी परमार्थ परायण जीवन को शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से निरोग-समर्थ होना चाहिए । यज्ञ सानिध्य से यह उभयपक्षीय समर्थता उपलब्ध होती है । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए उच्चस्तरीय समर्थता प्राप्त करने के लिए ब्रह्म कर्म में यज्ञ कृत्य को प्रमुख स्थान दिया गया है ।

यज्ञ से वायुमण्डल का शोधन, वातावरण में व्याप्त विषाणुओं का नाश और आरोग्य रक्षा की कल्पना प्रायः हर भारतीय करता है । आरोग्य संदर्भ में यज्ञोपचार की सहायता से रोग निवारण और शक्ति संवर्धन के दोनों ही उद्देश्य पूरे हो सकते हैं । यह कार्य अन्य साधनों के सहारे भी सध सकता है पर उनमें सात्विकता के उच्चस्तर का अभाव ही रहता है । मास मदिरा से बने खाद्य-पदार्थ भी शक्ति संवर्धन में किसी तरह सहायक हो सकते हैं पर उन अभक्ष्यों में जुड़ी रहने वाली तामसिकता का प्रवेश भी उपयोग कर्त्ता के शरीर में होगा । फलतः उपलब्ध सामर्थ्य का दिया प्रवाह निकृष्ट स्तर की दुष्प्रवृत्तियों को अपनाने चरितार्थ करने में ही होता रहेगा । ऐसी दशा में वह बढ़ा हुआ बल कुमार्गगामी होने के कारण अन्ततः उपार्जन कर्त्ता के लिए हानिकारक ही सिद्ध होता है । बलिष्ठ होने की उपयोगिता आवश्यकता से इनकार नहीं किया जा सकता पर उसका वास्तविक लाभ तभी है जब उसमें उत्कृष्टता के मात्रा भी बनी रहे । यज्ञ माध्यम से सूक्ष्मीकृत पुष्टई अपने प्रभाव क्षेत्र में ऐसी सामर्थ्य उत्पन्न करती है जो सच्चे अर्थों में बलिष्ठ बना सके और उस उपलब्धि का उपयोग उच्चस्तरीय प्रयोजनों में सम्भव हो सके ।

ब्राह्मण के लिए यह आत्मिक बलिष्ठता अनिवार्य घोषित की गई और वह लौकिक सुखोपभोग में संचरण करने वाला जीव नहीं उत्कृष्ट विचारों और श्रद्धासिक्त भावनाओं में रमण करने वाला देवता कहा जाता है । ब्राह्मण की गरिमा प्राप्त करना चाहे जिस किसी के बस की बात नहीं उस आचरण की उत्कृष्टता और पात्रत्व की परीक्षा पग-पग पर देनी होती है । कहीं की भी फिसलन उसे पदच्युत कर देती है । इन्हीं तथ्यों का बार-बार स्मरण करते रहने के लिए ब्राह्मण के लिए यज्ञ कर्म अनिवार्य बताया गया है । संगति के गुण आने स्वाभाविक है । अग्नि के सान्निध्य में उपार्जित ऊष्मा, तेजस्विता, ऊर्ध्वचिन्तन और परमार्थ के भाव उसे यज्ञ भगवान से ही प्राप्त होते हैं । जो इस सत्य को पहचान कर अपने आचरण में ढाल लेता है वही ब्राह्मण कहलाने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का अधिकारी हो सकता है । सद्ज्ञान सत्कर्म और सदभावों का समन्वय यज्ञ है ।

यज्ञाग्नि के क्रियाकलापों में इसी जीवन यज्ञ की प्रेरणा है । प्रस्तुत कर्मकाण्ड का सहारा लेकर हम देवत्व प्राप्त करने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ सकते हैं और ये विभूतियाँ प्राप्त कर सकते हैं जो देवात्माओं को उपलब्ध होती रही है ।

'यज्ञ' विश्व का सर्वोत्कृष्ट दर्शन

आस्था को प्रभावित करने वाले विचार प्रवाह को दर्शन कहते हैं । समय, देश एवं काल की परिस्थितियों के अनुरूप विश्व के सभी दर्शन इसी लक्ष्य की आपूर्ति करते आये हैं । उनके स्वरूप एवं प्रतिपादनों में भिन्नता हो सकती है-पर मूल प्रयोजन में नहीं । प्रकारान्तर में सभी दर्शनों का एक ही लक्ष्य है -मानवी चिन्तन को आदर्शनिष्ठ और सिद्धान्त निष्ठ बनाना । ऐसे विचार प्रवाह देना जिससे मनुष्य उत्कृष्टता की ओर चल पड़े । विश्व भर में प्रचलित समस्त आस्तिकवादी दर्शन अपने -अपने ढंग से इस लक्ष्य की ही आपूर्ति करते हैं । मनुष्य श्रेष्ठ कैसे बने-आदर्शों भरा जीवनयापन कैसे अपनाये, यही है मूलभूत लक्ष्य जिसके लिए अनेकों प्रकार के दर्शन समय-समय पर बने । मानव चिन्तन प्रवाह को श्रेष्ठता की ओर घसीट ले जाने में दर्शन की असामान्य भूमिका होती है ।

विश्वभर में प्रचलित सभी दर्शनों में विवादों की भरमार है । प्रयोजन स्पष्ट होते हुए स्वरूप में मतभेद को देखते हुए सामान्य व्यक्ति दिग्भ्रान्त हो जाता है और मुख्य लक्ष्य को भी भूल जाता है । स्वरूप की अस्पष्टता अनेकों को भटकाती है । भारतीय ऋषियों की यह विशेषता रही है । मानव के लिए सबसे उपयोगी एवं कल्याणकारी रहस्यों एवं अपनाने में कोई कठिनाई न हो । 'यज्ञ' इसका सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है । यज्ञ-दर्शन में समाहित विचार एवं प्रेरणाएँ आस्था परिशोधन एवं आदर्शों की प्रतिष्ठापना की एक सशक्त माध्यम है । इसमें सन्निहित विचार प्रवाह में मनुष्य को श्रेष्ठ, उदार एवं उदात्त बनाने के सारे तत्व विद्यमान है । उतने छोटे शब्द में उत्कृष्ट दर्शन के वे सारे तत्व विद्यमान हैं जो आस्था को परिशोधित परिमार्जित करते हों । ऐसे किसी दर्शन की खोज करनी हो जो विवादों से रहित एवं बोधगम्य हो तो वह यज्ञ दर्शन ही हो सकता है ।

यज्ञ अपने में एक समर्थ और समग्र दर्शन है । इसकी सरल और सुबोध प्रेरणाओं में मनुष्य को उदार एवं उदात्त बनाने के वे सारे तत्व मौजूद हैं जो संसाार अन्य किसी भी दर्शन में नहीं है । यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में उसे सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है । यज्ञ को भारतीय संस्कृति का पिता कहा गया है । पिता अर्थात् पालनकर्त्ता । समाज का परिपालन एवं संरक्षण देने वाला । यही है वह प्रमुख आधार है, जिससे समाज प्रगति करता एवं समुन्नत बनता है । यज्ञीय दर्शन व्यक्ति एवं समाज को श्रेष्ठ, शालीन एवं समुन्नत बनाने में समर्थ है । अपने में वह समग्र है और असीम सम्भावनाएँ समाहित किए हुए हैं । यज्ञीय प्रेरणाओं को व्यवहार में उतारा जा सके तो स्थायी सुख-शान्ति का मजबूत आधार बन सकता है ।

यज्ञ के क्रिया पक्ष में कोई आस्था व्यक्त करने से इनकार कर सकता है । पर उसका दर्शन पक्ष इतना सशक्त एवं प्रेरणादायक है जिसकी देखकर किसी प्रकार के मतभेद की गुंजाइश नहीं हो सकती । वह इतना जबरदस्त है कि एक नास्तिक भी सन्निहित प्रेरणाओं की उपयोगिता को नकार नहीं सकता । महत्व तो क्रिया पक्ष का भी कम नहीं है । आस्था परिशोधन एवं आदर्शवादिता की स्थापना में यज्ञ प्रक्रिया एक सशक्त आध्यात्मिक पद्धति सिद्ध होती है । मनोविज्ञान के विशेषज्ञ जानते हैं कि मनुष्य स्वभावत: स्थूल प्रतीकों के माध्यम से कोई भी बात शीघ्रता से सीखता है । शिक्षण, प्रेरणायें उद्बोधन उतना काम नही करते ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ प्रक्रिया मनोवैज्ञानिक शिक्षण की एक सशक्त विधि है जिसके द्वारा परोक्ष किन्तु स्थायी प्रभाव मनुष्य के मन पर पड़ता है । सुसंस्कारों की प्रतिष्ठापना होती है । दृष्टि खुली रखी जाय तो यज्ञ के प्रत्येक कर्मकाण्ड मनुष्य को उपयोगी प्रेरणाएँ देने में सक्षम हैं । वे मात्र क्रिया-कृत्य नहीं है । अन्तः करण में श्रेष्ठ संस्कारों की स्थापना की एक सफल मनोविज्ञानिक विधि है ।

मतभेद यज्ञ-प्रक्रिया को देखकर उठ सकता है । उस पक्ष को छोड़ भी दिया जाय तो भी यज्ञीय दर्शन स्वयं समस्त मानव जाति को उपयोगी प्रेरणाएँ देने में सक्षम है । यज्ञ शब्द के तीन अंर्थ शास्त्रों में बताये गये हैं । (१) दान (२) संगति करण (३) देवपूजन (सेवा) इन्हें व्यक्ति एवं समाज निर्माण के तीन महत्वपूर्ण आधार तीन सिद्धान्त समझा जा सकता है । यज्ञ में सन्निहित इन तीनों आधारों को अपनाया जा सके तो नव-निर्माण की समग्र प्रगति की सुदृढ़ आधारशिला तैयार हो सकती है ।

मनुष्य की उन्नति का एक मात्र साधन यज्ञ ही है । अथर्ववेद -४/११/५ में लिखा है कि-

विश्वजित् विश्वभृद्विश्वकर्मा ।

जो विश्व में सुख, फैलाने के लिये कर्म करता है, जिसके कर्मों से प्राणी मात्र आनन्द की साँस लेकर समृद्ध होते हैं, वही (विश्वजित्) विश्व बिजयी होता है ।'' अर्थात् जो जगत के लिये आत्म समर्पण करता है, उसी का विश्वविजेता होना सम्भव है । छांदोग्य उपनिषद् में इसी विषय की पुष्टि में लिखा है कि-

अथ खलु क्रतुमयोऽयं पुरुषो ।
यथा क्रतुरस्मिल्लोके पुरुषो भवति ।।

मनुष्य यज्ञ रूप है और उसे यज्ञ रूप जीवन ही बनाना चाहिये क्योंकि यज्ञमय जीवन के अतिरिक्त उन्नति का दूसरा मार्ग नहीं है । यह सभी ज्ञानी पुरुषों का कथन है, कि यज्ञमय जीवन या परमार्थ के अभाव में मानव, मानव नहीं रहता । उसे दैत्य, दानव या राक्षस आदि ही कहा जाता है । कहा भी क्यों न जाये ? क्योंकि विश्व का समस्त संचालन और सृजन केवल यज्ञ कर्मों पर ही आधारित है । ज्ञान पूर्वक किया जाने वाला कर्म ही यज्ञ कर्म कहाता है । जड़ कही जाने वाली प्रकृति का कण कण, और भोग योनियों में जीवन व्यतीत करने वाले समस्त जीवधारियों की कार्य पद्धति यह प्रकट करती है कि व्यवहार में परमार्थ को पहिला स्थान देने वाला तत्व ज्ञानी पुरुष ही, अहंकार रहित सुख मूल, स्वार्थ को प्राप्त करता हुआ, कीर्ति, यश और मोक्ष का अधिकारी होता है । मानव जो परमात्मा की कृति का अनुपम रत्न कहा जाता है वह यदि कर्मों से रहित होकर केवल स्वार्थ कर्मों को ही प्रधानता देता है तो उसे, पतित, या मूर्ख अधम पुरुष ही कहना चाहिये ।

जड़ प्रकृति द्वारा-जो यज्ञ चलता है उसकी झलक निम्नलिखित पंक्तियों में पाठक अवलोकन करें । पृथ्वी समस्त जड़ चेतन को अपने में आधार स्थान देकर परमार्थ करती है । हमारे खोदने, जलाने, पीटने पर भी उसे तनिक क्षोभ नहीं होता । वह माता की गोद के समान सब को सुख देती है । उसकी उदारता यह स्पष्ट करती है कि सब के उपकारार्थ ही उसका अस्तित्व है । भिन्न-भिन्न ऋतुओं में नाना प्रकार के कन्द, मूल, फल, अन्न, ओषधी और वनस्पति, तथा खनिज पदार्थ जैसे, लोहा, ताँवा, चाँदी, सोना आदि असंख्य वस्तुयें देना उसका स्वभाव है । प्राणियों के जीवन रक्षणार्थ अनेक पर्वत, वन, उपवन, नदी, महल और गुफाओं को अपने अञ्चल में स्थान दिये हुए परोपकार पालने में अचल है । समस्त सुगन्धियों से जन जीवन हरा-भरा बनाये रखने के कार्य में कभी उससे चूक नहीं होती । संकेत मात्र से हमें समझना चाहिये कि पृथ्वी का कण-कण मूक किन्तु प्रेरणापूर्ण शब्दों में मानव की सुषुप्त हुई धमनियों को झंकृत करता हुआ प्रति क्षण परमार्थ का उपदेश दे रहा है । यह कौन नहीं जानता कि खटास, मिठास चरपराहट आदि षट्-रस, पृथ्वी, जल के संयोग से ही संसार को प्रदान करती है । प्राण धारण के लिये अमृत स्वरूप जल किसे नहीं चाहिये । ऐसा कौन है जो अग्नि, वायु और आकाश से प्राप्त होने वाले असंख्य गुणों का अनुभव नहीं करता । प्रकृति द्वारा प्राप्त इन समस्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वस्तुओं से मानव लाभान्वित ही नहीं वरन् सुखी और तृप्त भी होता है ।

अनन्त ज्ञान राशि ऋग्वेदादि वेदों द्वारा मानव मात्र के चतुर्मुखी विकास और कल्याण के लिये परमात्मा का अक्षय भंडार आठों पहर खुला है । कोई दरिद्र हो या धनवान, रंक हो या राजा, बालक, बूढ़ा हो या युवा, किंवा स्त्री हो या पुरुष, छोटे से कीट पतङ्ग से लेकर कुञ्जर पर्यन्त, अन्डज, पिण्डज, स्वेदज और उद्भिज, सभी भगवान के भण्डार में समान रूप से भागीदार हैं । सब स्व सामर्थ्यानुसार लाभ पाने में स्वतंत्र है । प्रभु ने अपने बनाये हुए पदार्थों के उपभोग में गरीब, अमीर ऊँच और नीच का भेद नहीं बनाया । उसके यहाँ कोई भी बड़ा और कोई छोटा नहीं । प्रभु का प्यार और आशीर्वाद सबको समान प्राप्त है । अपने परमार्थों कर्तव्यों द्वारा हम उत्तम सुख प्राप्त करते हैं और पश्चाताप । ईश्वर से प्राप्त वस्तुओं का उपभोग जीवधारी अपनी समझ से करते हैं । इतनी पृथ्वी मेरी है, ये नदी, वृक्ष, यह बल, यह ज्ञान, यह परिवार, यह शरीर आदि मेरा है, ऐसा जान और समझ कर व्यवहार में लाते हैं । किन्तु यह सब व्यतिक्रम होते हुए भी प्रभु के दान कोष में कोई अवाँछनीय विकार उत्पन्न नहीं होता । निरन्तर दान चल रहा है और निस्वार्थ । मानव को प्रकृति और परमात्मा के परमार्थ यज्ञ से शिक्षा लेकर यज्ञमय जीवन बनाना चाहिये ।

किन्तु स्वार्थी मानव-ने संसार आज विषाक्त बना दिया है । मानव निर्मित पदार्थों का, समान रूप से एक मात्रा में सभी उपभोग न कर सकें तो कोई आश्चर्य की बात नहीं । आश्चर्य तो यह है कि भगवान के बनाये बनाये हुये पदार्थों पर भी स्वार्थी मानव इतना छा जाना चाहता है, कि निर्बल, असहाय, अज्ञान और पीड़ित जीवधारियों को उन पदार्थों का दर्शन भी दुर्लभ हो जाये । परोपकार तो दूर रहा, स्वार्थ से कलुषित विचार स्वार्थियों के समक्ष ताण्डव नृत्य करते हुये प्रायः दृष्टिगोचर होते हैं । स्वार्थी अपना महल बनाने के लिये, पड़ोस में बसे हुए गरीब असहाय की झोपड़ी को भी नष्ट भ्रष्ट करने में हिचकिचाता नहीं । उसके स्वाद के लिये यदि किसी की जान जाती है तो उसे चिन्ता नहीं । वह केवल अन्याय पूर्ण धन कमाने के लिये लोगों को मार सकता है, डराता है । देश, जाति, समाज, राष्ट्र, परिवार, धर्म उसकी बला से पतन के गहरे गर्त में चले जायँ, उसे सुख चाहिये केवल अपने इच्छित सुख । आज की केवल भौतिक उन्नति से मानव की आवश्यकतायें सीमा का अतिक्रमण करके उत्तरोतर बढ़ती जा रही है । आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये त्याग और परमार्थ के स्थान पर स्वार्थ की वृद्धि होने से मानव परस्पर ईर्षा, द्वेष, घृणा और संघर्ष के बीज बो रहा है । जिस ज्ञान, विज्ञान, चातुर्य और बल तथा धन का उपयोग परमार्थ के लिये होना चाहिये था, उन्हीं का अधिकांश उपयोग आज विश्व को विषाक्त, त्रसित और दुखी बनाने, तथा धोखा, ठगई, राहजनी व्यवहार आदि के नये आविष्कारों के लिए किया जाता है । अत्यधिक शोचनीय बात तो यह है कि, जिस मानव वर्ग को शिक्षित, उन्नत या जागरूक कहा जाता है, उनमें से ही बहुतों की कथनी और करनी में आज आकाश-पाताल जैसा अन्तर है । इस सत्य को छिपाया नहीं जा सकता कि जिस, राष्ट्र, देश, जाति, समाज और परिवार में स्वार्थियों की संख्या अधिक बढ़ जाती है, उनका गौरव, कीर्ति सम्मान तो समाप्त होता ही है साथ में अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है ।

केवल स्वार्थ की प्रवृत्ति अज्ञान से पनपती है । जिसमें थोड़ा भी विवेक है उन्हें समझना चाहिये । उदाहरण के लिये आप चार स्वार्थी पुरुषों को एकत्रित कीजिये और उन्हें छूट दीजिये कि वे परस्पर में अपना स्वार्थ सिद्ध करलें । परिणाम में आप देखेंगे कि स्वार्थ तो किसी का किसी से पूरा हो नहीं सकेगा, क्योंकि सब एक से एक चालाक और सतर्क है, हाँ जब खिसियानापन आवेगा तो यह सम्भव है कि वे परस्पर लड़ मरें । जो हाल इन चार पुरुषों का पाठक देखते हैं, वही हाल स्वार्थियों के बहु संख्यक समाज का बनेगा, यह सहज कल्पना से समझा जा सकता है ।

सामान्य, मानव में यदि सत्संगति के प्रभाव से अपने जीवन को परमार्थ प्रधान बनाने वाले पुरुषों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को, मनु जी का निम्नलिखित वाक्य मनन करना आवश्यक है ।

सर्वेषामेव शौचाणां अर्थ शौच्य विशिष्यते ।

अर्थात् सब प्रकार की पवित्रताओं से सर्वोपरि पवित्रता आदान प्रदान की वस्तु है । जिसका व्यवहार पवित्र नहीं, वह किसी प्रकार भी उत्तम नहीं हो सकता । प्रभु का प्यारा नहीं हो सकता । ऊँचा उठने या अपना भविष्य सुधारने के लिये, सर्व प्रथम हमें अपना दैनिक व्यवहार पवित्र करना होगा ।

जिन कार्यों को आज आप कर रहे, उनमें अपना दृष्टिकोण बदल दीजिये । यदि आप डाक्टर हैं तो आपको चाहिए कि मरीज के मर्ज का सही निदान करके उसे ऐसी भावना से दवा दें कि उसका रोग शीघ्रातिशीघ्र चला जाये । ओषधि की कीमत लेते समय, ओषधि की असल कीमत पर अधिक से अधिक २५ प्रतिशत ही लाभ लें । आपके व्यवहार में पवित्रता और मिठास हो । यदि आप ऐसा करते हैं तो निश्चय समझिये कि आप उन डाक्टरों से कई गुना अधिक धन कमायेंगे, जो कि मरीज को झमेले में डालकर, लापरवाही से सामान्य ओषधि देकर अधिक पैसा लेते हैं । आपके मरीज प्रतिदिन बढ़ेंगे और उनसे आपका यश यथा धन भी बढ़ेगा । अत: परार्थ भी होगा और स्वार्थ भी ।

यदि आप दुकानदार हैं, तो आपको चाहिये अपने ग्राहक को बिना मिलावट का शुद्ध, सही नाप-तोल के साथ, उचित कीमत पर, बिना सड़ा-गला सामान बेचें । आपकी बातचीतों में मिठास और सत्यता तथा आत्मीयता होनी चाहिए । ऐसा करने से ग्राहकों का विश्वास आपके प्रति बढ़ेगा और वे अधिक संख्या में आप से सामान खरीद कर आपको लाभान्वित करेंगे । ऐसा करने से आप ग्राहकों का हित करते हैं और आपका स्वार्थ भी पूरा होता है ।

यदि आप नौकरी करते हैं तो निश्चय कीजिये कि अपनी जिम्मेदारी का काम बिना किसी चोरी के हम पूरा करेंगे । ऊपर की आमदनी करने के इच्छुक पाप और चोरी से ऊपर की आमदनी करते हैं । ऐसा करने से उनकी आत्मायें गिरती हैं । वह यह नहीं जानते कि उन्हें मिलता तो उतना ही है जितना उनके भाग्य में बदा है, वह यदि यह पाप कर्म त्याग दें तो भी उनका बदा हुआ भोग नष्ट नहीं होगा, किन्तु किसी दूसरे माध्यम से मिलने लगेगा । यह पाप, अज्ञान और हृदय दौर्बल्य के कारण ही पनपता है, यदि जनता जो उसके सम्पर्क में आती है उसे वह अपना मित्र, साथी या मानव समझ कर प्रेमपूर्ण उत्तम व्यवहार करे तो उसका अपना कल्याण हो और पारलौकिक उन्नति भी । यजुर्वेद ४० में लिखा है कि-

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ।।

हे मानव ! चाहे तू किसी भी वर्ण, आश्रम और विश्व के भूभाग में क्यों न रहे । तू केवल अपने कर्मों के भोग से ही राजा, रङ्क, नेता, प्रजा, स्वस्थ, रोगी (लँगड़ा, बहरा, अन्धा) मालिक, सेवक आदि रूपों में रहकर भोग भोगता है । इसलिये तू उत्तम वेदोक्त परमार्थी के कर्म करता हुआ सौ वर्ष तक जीने की इच्छा कर । उत्तम कर्म तेरे दुख के कारण नहीं होंगे । उत्तम कर्मों से ही तुझे शाश्वत सुख मिल सकता है, अन्य किसी कारण से नहीं । परमार्थ ही उत्तम कर्म है । जब तुम किसी दुखी या दरिद्र की धनादि से सहायता करके उसे सुखी करते हों, तो उसकी आत्मा आपके इष्ट चिन्तन में लगी रहती है । यह प्राय: देखा जाता है कि यदि आप किसी की गाढ़ी मुसीबत में तन, मन और धन से सहयोगी हुये हैं तो वह आपके आड़े समय में आपके उपकार का बदला चुकाने के लिये अपनी जान की बाजी लगाने में भी हिचकिचाता नहीं । जो लोग कृतघ्नी या पतितात्मा हैं, उनकी आत्मायें कभी भी उपकारी का प्रत्युपकार करलें तो उसके प्रभाव से स्वार्थपूर्ण अन्धकारयुक्त कर्मों में परमार्थ की क्षीण प्रकाश-रश्मि का समावेश हो भी जाय तो वहाँ अहंकार का बाहुल्य रहता है । यदि वह किसी के दु:खपूर्ण आँसुओं को पोंछकर उसके जीवन को कुछ भी सुखपूर्ण बना पाया है, यदि वह संकट के समय किसी पराये का सहायक है, यदि उसने कभी किसी को दान दिया है तो उसके हृदय में अहंकारयुक्त इन विचारों का समुद्र उमड़ पड़ता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कि ''मैं महादानी हूँ, मैं उच्चकोटि का परमार्थी और जन-सेवक हूँ आदि-आदि ।'' अरे क्षुद्र-बुद्धि अहंकारी मानव ! ईश्वर के विशाल यज्ञ से कुछ तो प्रेरणा ग्रहण कर । तू ईश्वर के आलम्बन पदार्थों का तो अमर्यादित ढंग से स्वेच्छानुसार उपयोग करता है किन्तु स्वयं के अनुपयोगी पदार्थों को किसी अत्यन्त दीन-हीन को भी देते हुए तेरा जी टूटता है । यह कैसा न्याय है और कैसा ज्ञान ? परमात्मा का महान यज्ञ सम्मुख होते हुए भी उसका अनुसरण करना क्या एक पाप लज्जापूर्ण विषय नहीं है ? यह स्मरण रखना चाहिये बिना परमार्थी जीवन के सुख उपलब्धि की आशा आकाश-पुष्प की तरह कल्पनामात्र ही है । अहंकार से सर्वदा परे परार्थ भावना से ओतप्रोत कर्म करना ही मानवता है । अथर्व वेद में लिखा है कि-

सहृदयं सांमनस्यमविद् कृणोमि वः ।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाध्न्या ।। १ ।।

हे मनुष्यो ! तुम सबका परस्पर प्रेमपूर्ण हृदय, परार्थ भावना से परिपूर्ण मन और निर्वैरता से भरपूर चित्त होना चाहिये । तुम एक दूसरे से इतना प्रेम करो, जितना कि अपने नवजात बछड़े से गौ प्यार करती है । मानव को निजी स्वार्थ की दलदल बाहर निकाल कर परमार्थ की सुदृढ़ चट्टान पर खड़ा होना चाहिये । अन्तर केवल भावना का है । ऐसा करने से आप टोटे में नहीं, लाभ में रहोगे । अच्छे मानव स्वार्थ और अहंकार से ऊपर उठकर जब दुखी, असहाय और गरीब जनता की सेवायें करते हैं, तब परमात्मा के विधानानुसार उन्हें उस परमार्थी कृत्य का फल, सम्मान, कीर्ति और मोक्ष के रूप में मिलता है । आज देश की दुर्दशा का सब से बड़ा कारण, निजी स्वार्थपरता ही है । हमें इसके ठीक विपरीत 'बहुजन हिताय' 'बहुजन सुखाय' की भावना से करना होगा । स्वार्थ की तुच्छ भावनाओं को तिलाञ्जलि देकर हृदय को विशाल बनाते हुये सच्चे त्याग से प्राणीमात्र का परमार्थ करना ही भगवान की पूजा है ।

भारत के इतिहास पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि यज्ञमय जीवन के पुजारी विभिन्न परमार्थियों ने परमार्थ की जो विमलधारायें प्रवाहित कीं, उनमें आज भी अखिल विश्व निमज्जन कर आदर्श ग्रहण कर सकता है । उदाहरण स्वरूप, श्री शंकर जी ने प्राणिमात्र के हित के लिये हलाहल विष का पान किया । महर्षि दधीचि ने परार्थ के महत्व को जानते हुये और दानवीय प्रवृत्ति के उन्मूलन के लिये अपनी अस्थियों का भी सहर्ष दना दिया । इन्द्र ने इन्हीं अस्थियाँ से वज्र बनाकर वृत्रासुर जैसे स्वार्थी को मारा था । प्राचीन इतिहास के पृष्ठ उलटने से आप इस निर्णय पर पहुँचेंगे कि एक-दो नहीं लगभग सभी महापुरुषों का समूचा जीवन केवल परमार्थ भावना से ओत-प्रोत था । महात्मा गाँधी ने देश के लिये स्वतन्त्रता माँगी । केवल अपने लिये नहीं । श्री सुभाषचन्द्र बोस ने आजाद हिन्द सेना अपनी आजादी के लिये नहीं बनाई, उन्हें देश आजाद करना था । इसी प्रकार और भी जितने महापुरुष अब तक हुये हैं उनने दूसरों के हित के लिये नवीनतम खोज की, कष्ट सहे, बलिदान दिये । आज हम उनकी पूजा करते हैं, उनकी जय बोलते हैं और किसी न किसी प्रकार उनकी याद करते हैं । हमारा इतिहास यह बताता है कि परमार्थी भावना से प्रेरित अधिकांश मानव जब परार्थ को अपने प्रत्येक कर्तव्य में स्थान देते हैं तब विश्व में सुख और शांति बढ़ती है । परार्थ के अभाव में ही संघर्ष और दुख बढ़ता है । संसार को बस में करने का यदि कोई वशीकरण मन्त्र हो सकता है तो वह परमार्थ से बढ़ कर कोई नहीं । सत्संगति से, जिनके पवित्र मन में परार्थ की भावना स्वाभाविक रूप से प्रतिक्षण नृत्य करती है, वास्तव में वही ऋषि, देवता या मनुष्य कहलाने के अधिकारी हैं ।

केवल स्वार्थ बुरा है और केवल परार्थ भी अच्छा नहीं किन्तु जिसमें स्वार्थ और परार्थ दोनों एक रूप हो जाते हैं उसे परमार्थ (परम+अर्थ) अर्थात् विशेष अर्थ कहते हैं । यह परमार्थ ही यज्ञ कहलाता है जिसमें अपना और दूसरों का हित बिना किसी विरोध के सम्पन्न होता है । जिसमें प्राणी मात्र का सच्चा कल्याण और मानव मात्र का मोक्षाभिमुखी मार्ग दर्शन निहित हो उसे यज्ञमय जीवन कहते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दयालु परमात्मा ने अपनी असीम अनुकम्पा से मानव को यज्ञमय जीवन बिताते हुए मोक्ष पाने का सरल मार्ग बनाया है । यदि हम चाहें तो जीवन के प्रत्येक क्षण और प्रत्येक पहलू में उसका सहज पालन कर सकते हैं । यजुर्वेद के अध्याय ४० में लिखा है-

ईश-वास्यमिदं सर्वंयत्किञ्चजगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥ ४ ॥

हे मानव ! तू समस्त विश्व के कण-कण में परमात्मा को व्यापक जानता हुआ उसकी दी हुई समस्त शक्तियों को त्याग भाव से परमार्थ के लिये उपयोग कर और प्राणी मात्र के अधिकार धन और भोगों को हड़पने का कभी लालच न कर । परमात्मा का न्याय हर समय तेरे कर्मों के साथ है ।

परोपकारी कर्मों को वेद में ''यज्ञ कर्म'' कहा गया है इन यज्ञ कर्मों से ही आत्मा की उन्नति होती है यजुर्वेद के अध्याय ३१ में लिखा है कि-

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानिधर्माणि प्रथमान्यासन ।
ते ह नाकं महिमान सचन्त यत्र पूर्वे साध्या सन्तिदेवाः ॥

अर्थात् ''देव पुरुष यज्ञ के द्वारा यज्ञ का यज्ञ करते थे । यह मानव का प्रथम धर्म है । इस यज्ञ को करने वाले उन्नत होकर स्वर्ग सुख को प्राप्त हुए जिस सुख को पूर्व समय के साधक प्राप्त कर चुके थे ।'' शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि-स्वयंभू मनु ने तप किया और देखा कि तप में अनन्ततत्व नहीं है तब उसने अपनी आत्मा का सब भूतों के लिये हवन किया ऐसा करने से उनको श्रेष्ठता, स्वराज्य और अधिपत्य प्राप्त हुआ ।

तथैवैतद्यजमानः सर्व त्रेधे सर्वन् मेध्यान् ।
हुत्व सर्वेषां भूतानां श्रेष्ठयं स्वराज्यमाधिपत्यं पर्येति ॥

अर्थात्-इसी प्रकार जो मनुष्य अपने सर्वस्व का यज्ञ सर्वभूत मात्र के लिये करता है वह श्रेष्ठता, स्वराज्य और अधिपत्य प्राप्त करता है ।

आप देखते हैं कि परमात्मा का विशाल यज्ञ हर समय सर्वत्र हो रहा है, हर एक प्राणी अपने ज्ञान और पुरुषार्थ से यथेच्छ लाभ पा रहे हैं । प्रभु के बनाये हुए सूर्य और चन्द्र जगत को जीवन , ज्योति, रस आदि देकर पृथ्वी व प्राणीमात्र को स्थान, अन्न, ओषधि, वनस्पति आदि देकर, वायु, जल, आकाश, विद्युत आदि अनेक अन्य सुख सामग्री देकर, निष्काम सेवा भाव और परोपकार का पाठ मानव मात्र को सिखाते हैं । वास्तव में यज्ञ ही मानव मात्र की उन्नति का एक मात्र साधन है । यज्ञ जीवन के बिना यह किसी प्रकार सम्भव नहीं है कि मानव मनोवाँछित सुख प्राप्त कर सके ।

'यज्ञ' शब्द का एक अर्थ-देव पूजा, है । जिन महापुरुषों में अहिंसा सत्य, अक्रोध, निर्भयता, दान, क्षमा, दम, स्वाध्याय, तपश्चर्या,सरलता, आदि गुण होते हैं वे देव कहलाते हैं, ऐसे देवों का सत्कार, संगठन और सत्संग देव पूजा कहलाता है । जनता के सुख और संगठन के लिये जो काम निष्काम भाव से किया जाय उसे संगतिकरण कहेंगे । कूआ, तालाब, घाट, गुरुकुल, विद्यालय पुस्तकालय आदि उत्तम परोपकारी संस्थाओं को दिया गया धन, दान कहलाता है । आप जानते हैं कि जितने मनुष्य आज तक उच्चकोटि के हुए हैं उनके जीवन किसी न किसी रूप में, अवश्य यज्ञमय ही थे ।

यह निर्भ्रान्त सत्य है कि लौकिक सुख जैसे आयु, शक्ति, सन्तान, विद्या, धन, कीर्ति, आदि प्राप्त करने के लिये भी यज्ञ ही सर्वोपरि साधन है । पुत्रेच्छा से राजा दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञ किया, चक्रवर्ती राज्य की कामना से अनेकों अश्वमेध यज्ञ किये गये तथा लोक प्रियता और ब्रह्मोपासना के लिये गो मेध यज्ञ प्रसिद्ध ही है । शास्त्रों में अश्वमेध यज्ञ का अर्थ पृथ्वी को अधिकाधिक उपजाऊ बनाना और गो मेध यज्ञ का अर्थ -समस्त इन्द्रियों पर विजय पाना बताया गया है । संन्यासी नरमेध यज्ञ द्वारा ही, वसुधैव कुटुम्बकम् और कृणवन्तो विश्वमार्यम् का वृत लेकर संसार के उपकारार्थ ही भ्रमण करता है । परमात्मा को प्राप्त करने की प्रबल इच्छा वाला भक्त दैनिक प्राहपत्याग्नि में यज्ञ करता हुआ छै बार प्रतिज्ञा करता है कि-

अयन्त इध्म आत्मा जातवेद स्तेनेधस्व वर्धस्व चेद्ध वर्द्धय । हे परमात्मा तेरा जो विश्व में परोपकार रूप यज्ञ निरन्तर चल रहा है । उस यज्ञ की भली प्रकार वृद्धि के लिये मैं अपनी आत्मा को समिधा स्वरूप आहूत करता हूँ आपके परोपकार रूप यज्ञ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

को बढ़ाने के लिये मैं अपनी समस्त मानवीय शक्तियों सहित तन मन और धन से पूर्ण चेष्टा करता रहूँगा ।

याज्ञिक जीवन बनाने के प्रबल इच्छुक परमात्मा से किन-किन शब्दों में प्रार्थना करते हुए तदानुकूल बर्तते हैं इनका उज्वल चित्र निम्नलिखित वेद मन्त्रों से देखिये । यजुर्वेद के १८ वें अध्याय में लिखा है कि-

आयुर्यज्ञेन कल्पतां, प्राणो यज्ञेन कल्पतां ।
चक्षुर्यज्ञेन कल्पतां, श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां ।।
वाग्यज्ञेन कल्पतां, मनो यज्ञेन कल्पतां ।
आत्मा यज्ञेन कल्पतां, ज्योतिर्यज्ञेन कल्पतां ।।
स्वर्यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् ।।

हमारी आयु यज्ञ के लिये हो और हम यज्ञ के लिये संसार में जीवित रहें । हमारी सामाजिक आत्मिक तथा शारीरिक शक्तियाँ सब यज्ञ के लिये हों हमारे नेत्र यज्ञ के लिये हों अर्थात् हम अपने नेत्रों का उपयोग परोपकार के लिये, हमारे नेत्र पराई बहिन बेटियों को माता के समान और पराये धन को मिट्टी के ढेले के समान और दूसरों की आत्मा को अपनी आत्मा के समान देखें । हमारे कान पवित्र वेदों को सुनने वाले हों, दूसरे प्राणियों पर मुसीबत आने पर मुसीबत आयी हुई सुनकर उनकी निष्काम सेवा करने का साहस इनमें हो । इन कानों से हम किसी की व्यर्थ निन्दा न सुनें हमारी वाणी समयानुकूल संयत और सत्य व प्रिय बोलने वाली हो हमारी वाणी में ओज और बल हो ताकि हम अपने गर्जन से दुष्टाचारियों की दुष्टता को दूर कर सकें और सदाचारी पुरुषों को परमार्थ के लिये संगठित करके लोकोपकार में लगा सकें । हमारे मन और आत्मा विकार रहित होकर प्राणी मात्र का शुभ चिन्तन करें । हमारा ज्ञान और स्वर यज्ञ के लिये हो और इन समस्त यांत्रिक इन्द्रियों द्वारा किया गया परमार्थ यज्ञ भी यज्ञ के लिये ही हो ताकि हमें कभी इन यज्ञ रूप कर्मों के कर्त्ता होने का अभिमान न हो सके ।

यज्ञ एक प्रशस्ततम कर्म है यह बिना यथार्थ ज्ञान के कभी होता नहीं । यथार्थ ज्ञान के जिज्ञासु को देव पुरुषों को संगति करनी चाहिये देवों के सत्संग और निरन्तर अभ्यास से ही स्वार्थ बुद्धि समाप्त होकर मानवता आती है सच्चे मानव को परमात्मा के दर्शन के लिये भटकना नहीं पड़ता । उसे तो प्राणीमात्र की आत्मा और परमार्थ कर्मों में, प्रतिक्षण भगवान के दर्शन होते हैं गीता में लिखा है कि-

तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठतम्

अर्थात्-सर्व व्यापक परमात्मा नित्य ही यज्ञ में प्रतिष्ठित है । पुनः मानव शरीर व सद्गति चाहने वाले पुरुषों को महाभारत शान्ति पर्व में लिखे निम्नलिखित श्लोक का मनन करना जरूरी है ।

"नायं लोकोऽस्त्यज्ञानां परश्चेति विनिश्चयः ।

अर्थात् बिना यज्ञ के इस लोक तथा परलोक किसी भी लोक में सद्गति नहीं होती है

मनुष्य प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ कहा जाता है किन्तु जितनी गंदगी इसके शरीर से पैदा होती है उतनी अन्य से नहीं । शरीर से निकली हुई गंदगी ही फैला कर इसे संतोष हो जाता हो इतना ही नहीं वरन् एटम बम आदि के परीक्षणों, विषैली गैसों के प्रयोगों व नाना प्रकार के विषों के उत्पादन और धूम्रपान आदि से प्रभू के सुगन्धित विश्व को क्षण-क्षण में विषाक्त बनाना आज के मानव ने अपना धर्म समझ रखा है । अन्य प्राणियों में श्रेष्ठ होने के नाते चाहिये तो यह था कि वह यज्ञमय जीवन बना कर संसार में मानवता की सुगंधि प्रवाहित करते, दैनिक भौतिक यज्ञ में सुगंधित पुष्टिवर्धक, रोग नाशक ओषधि आदि से तैयार की गई सामग्री डाल कर समस्त वायुमंडल को सुगंधित करते जिससे अन्न की वृद्धि होती, संसार में रोग कम होते, उत्तम अन्न से उत्तम मन बनते तथा उत्तम मनों के योग से सदाचारी श्रेष्ठ संतान पैदा होती ।

सात्विक गुप्त दान का सर्वोत्तम प्रकार हम यज्ञ द्वारा सीखें जो सामग्री यज्ञ में आहुत दी जाती है, उसकी सुगंधि वायु द्वारा अनेकों प्राणियों की नासिका में जाती है, वे उस सुगंधि से आनन्द अनुभव करते हैं । इधर यज्ञ करने वाला अपने कर्म से सुख अनुभव करता है । सुगंधि पाने वाले व्यक्ति याज्ञिक को नहीं जानते और न याज्ञिक ही उन्हें जानता है । उपकार हो रहा है और निष्काम । इसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

प्रकार जब तक भारत देश में निष्काम कर्मों द्वारा परमार्थ रूप यज्ञ चलता रहा तब तक देश सुखी, समृद्धिशाली और विश्व का शिक्षक माना जाता रहा था । आज परमार्थ रूप यज्ञ और भौतिक यज्ञ के अभाव से विशव दुखी संतप्त और भयभीत है ।

मनुष्य अपनी शक्तियों का उपयोग परमार्थ के लिए जितना अधिक करेगा । उसका प्रतिफल भी उतना ही अधिक पायेगा ।

मनीषियों की दृष्टि में यज्ञ

थियोसॉफिकल सोसायटी की संस्थापिका श्रीमती एनीबेसेण्ट ने यज्ञ के वास्तविक स्वरूप की व्याख्या करते हुए कहा है कि-यज्ञ हिन्दू धर्म का एक सबसे बड़ा सिद्धान्त है । गीता के कथनानुसार यह सृष्टि यज्ञ द्वारा ही उत्पन्न हुई है और यज्ञ से ही उसकी स्थिति है । उसके तीसरे अध्याय के ८ वें श्लोक में बताया गया है कि "जिस आदि यज्ञ से भूत मात्र उद्‌भव होते हैं वही कर्म है ।" इसी प्रकार १४ वें अध्याय के तीसरे श्लोक में कहा गया है कि "इस जगत में जो कुछ उत्पन्न होने वाला है उसका गर्भ देने वाला पिता ईश्वर है ।" ईश्वर इस सृष्टि का आरम्भ यज्ञ के रूप में ही करता है । 'पुरुष सूक्त' में भी कहा गया है कि "यज्ञ अर्थात् स्वार्थार्पण से ही ईश्वर इस जगत की रचना के लिये व्यक्त हुआ इस जगत की स्थिति भी यज्ञ से ही है । यज्ञ से ही मनुष्य परम पद को प्राप्त होता है ।" इस लिये यज्ञ के विस्तृत अर्थ पर विचार करना और उसकी महिमा को हृदयंगम करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है ।

साधारणत: लोग मानते हैं कि यज्ञ या स्वार्पण दु:खमय है । यह हमारा भ्रम है । 'यज्ञ' का सारांश अपनी इच्छा से आनन्द पूर्वक त्याग करना है जिससे कि दूसरे लोगों को भी उसका भाग मिले । मनुष्य के दैवी अंश या उच्च प्रकृति को स्वार्थ त्याग में आनन्द मिलता है । इसके विपरीत मनुष्य की आसुरी या नीच प्रकृति को ग्रहण करने या पकड़ रखने में आनन्द मिलता है । यज्ञ से दुख का अनुभव तभी होता है जब कि यज्ञ कर्त्ता की उच्च और नीच प्रकृति में विरोध होवे । इस विरोध के कारण ही यज्ञ में दुख का प्रवेश होता है ।

सृष्टि को उत्पन्न करने के हेतु से ईशवर ने अपनी इच्छा से अपने अनन्त जीवन का त्याग कर उस जीवन की मर्यादा बाँध ली जिसमें वह व्यक्त हो सके । यह उसका यज्ञ है । **एकोऽहं बहुस्यां प्रजायेय** (मैं एक हूँ बहुत होऊँ) इस सूत्र में इसी यज्ञ का स्वरूप बताया गया है । प्रकाशमय अनन्त समूह में जिसका केन्द्र सर्वत्र है और परिधि कहीं नहीं है, मान लो एक दिव्य गोल जीवित ज्योति प्रकट होती है । व्यक्ति होने के लिये अपनी मर्यादा बाँधने की इच्छा करता है वह इच्छा इस ज्योति की हद है । यह हद उसकी माया है जिसे वह जगत रचने के लिये धारण करता है । इस प्रकार ब्रह्ममय स्थिति के पूर्ण आनन्द का त्याग कर व्यक्त अवस्था में आना-यह ईश्वर का यज्ञ है ऐसा सदैव माना गया है । इससे ईश्वर अपने को बंधन में डाल लेता है, क्योंकि जब तक जगत की स्थिति है तब तक यह यज्ञ क्रिया भी जारी रहेगी, क्योंकि ईश्वर ही सब अंशों का आधार है । ईश्वर से जो अखण्ड रूप निकलते हैं उस सब में उसके अंश भरे हैं और वह इन उपाधियों के बंधनों को ग्रहण करता है । वह प्रत्येक उपाधि में प्रवेश करके उसकी अपूर्णता और बंधन को तब तक सहन करता है जब तक उसमें पूर्णता न आ जावे और जब तक उसका रचा जीव उसके समान दिव्य होकर उसमें मिल न जावे । ईश्वर का इस प्रकार इन सब उपाधियों में अपना अंश भरना ऊपर लिखे "आदि यज्ञ" का भाग है ।

इसके विपरीत प्रकृति की असल क्रिया ग्रहण करना है । प्रकृति पर आत्मा की क्रिया होने से प्रकृति के रूप बनते हैं और उसी आत्मा से उनका निर्वाह होता है । उस आत्मा के खिंच जाने से उन रूपों का नाश हो जाता है । इस लिये प्राकृतिक रूप जितना बने अपने लिये ग्रहण करना चाहता है और अपने थोड़े अंश का भी त्याग करना उसे बुरा मालूम होता है । उसकी प्रसन्नता-पकड़ रखने अथवा ले लेने में ही है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ या स्वार्पण दुख रूप है यह विचार कैसे उत्पन्न हुआ यह बात उपर्युक्त विवेचन से समझ में आ जायेगी । आत्मा स्वार्पण द्वारा ही आनन्द पाता है । देहधारी अवस्था में भी जीव इस बात की परवाह नहीं करता कि स्वार्पण करने में शरीर का नाश होगा या नहीं, क्योंकि उसे मालूम है कि शरीर हमारा उद्देश्य नहीं है वरन् हमारे व्यक्त रूप के विकास का एक साधन मात्र और अल्पकालीन रूप मात्र है । अर्पण काल में देह अपने प्राण रूपी बल को जाते देख दुखी होती है और प्राण को निकालने से रोकने का प्रयत्न करती है । यज्ञ रूप कर्म से वे प्राणबल घट जाते है जिन्हें देह अपना समझती थी और तब देह का भी नाश हो जाता है । नीचे की श्रेणी वाले नाम और रूप युक्त लोकों में यज्ञ का यही रहस्य है और देह का प्राण जाने के कारण उसे दु:ख प्रतीत होता है । तो फिर इसमें आश्चर्य क्या है कि लोग माया युक्त होकर और असल रहस्य को न जानकर स्वार्पण काल में देह के दु:ख को देखकर यज्ञ को भी दुखमय समझने लगे और उस यज्ञ में आत्मा के आनन्द को न समझ सके । आत्मा ऐसे यज्ञ में यह कहता है कि -हे ईश्वर हम तुम्हारी इच्छा का पालन करते हैं और हमें संतोष है ।

इस प्रकार यज्ञ नियम जगत में आत्मा के विकास का नियम है । विकास रूप नसेनी का प्रत्येक डंडा इस स्वार्पण द्वारा चढ़ा जाता है । आत्मा अपना अर्पण कर ऊँची योनि में जन्म लेती है और उसकी उस अपित देह का नाश हो जाता है । जो लोग केवल उपाधि-रूप के नाश की ओर निगाह रखते हैं उन्हें सारी सृष्टि-प्रकृति-एक महान कसाईखाने की तरह जान पड़ती है । पर जिन्हें उस बध में यह दिखाई पड़ता है कि आत्मा नीची उपाधि को त्याग कर उच्च उपाधि ग्रहण करने के लिये स्वार्पण करती है उन्हें दुख और बध के बदले विकास द्वारा ऊँची योनि के जन्म का आनन्द ही सुन पड़ता है ।

इसमें संदेह नहीं कि मनुष्य, जिसकी बुद्धि हमेशा उन्नति पाती जाती है, युगों के अनुभव से यह बात ढूँढ़ निकालता है कि जीवन का नियम यज्ञ या स्वार्पण ही है । पर इस प्रयत्न में और ऐसे अन्य बहुत से प्रयत्नों में मनुष्य को बाहरी सहायता भी मिली है । मनुष्य जाति की वाल्यावस्था में ऋषि उसको सिखाने और सुमार्ग बताने के लिये आये थे और उन्हीं ने इस नियम का उपदेश दिया । मनुष्य जाति की उदय होती बुद्धि को सहायता देने के लिये,उनने जो धर्म रचे, उसमें भी इस नियम को बहुत सीधी सादी रीति से शामिल कर दिया । फिर भी इन आरम्भिक जीवों से यह आशा नहीं की जा सकती थी कि बिना बदले के ये लोग अपने बहुत प्रिय पदार्थों का त्याग कर सकेंगे, जिन पर उनके शरीर का जीवन ही निर्भर था । इसलिए यह आवश्यक था कि धीरे-धीरे उनको ऐसे मार्ग से ले जावें जिससे अंत में ये अपनी इच्छा से स्वार्पण करें । इसलिये प्रथम यह सिखाया गया कि मनुष्य जाति का संबंध उससे ऊपर और नीचे की योनियों से है और मनुष्य बाकी सब सृष्टि से जुदा नहीं है । उसे यह बताया गया था कि तुम्हारे स्थूल शरीर का पोषण खनिज और वनस्पतियों और दूसरे छोटे जीवों द्वारा होता है और इनके खाने से तुम पर ऋण होता है जिसका चुकाना तुम्हारा धर्म है । इससे मनुष्य को यह ज्ञान प्राप्त हुआ कि हम पर प्रकृति का ऋण सदैव बना रहता है और उसे सदैव चुकाते रहना चाहिये । इस प्रकार यज्ञ से प्रिय वस्तु के त्याग का अर्थ निकलने लगा और लोग ऋण चुकाने और अपने कल्याण के हेतु से यज्ञ करते थे । आगे की शिक्षा के फल से यज्ञ का फल स्थूल लोक का न होकर सूक्ष्म लोक का हो गया और क्रमश: वह स्वार्पण की सीढ़ी बन गई । महात्मा गाँधी के अनुसार यज्ञ का अर्थ है इस लोक या परलोक में बिना किसी प्रकार का बदला लिये या बदले की इच्छा किये परार्थ किया गया कोई भी काम । यह कायिक वाचिक या मानसिक तीनों प्रकार का हो सकता है । काम या कर्म का यहाँ विशाल अर्थ करना चाहिये । 'पर' अर्थात् केवल मनुष्य वर्ग ही नहीं, पर जीवमात्र । इसलिए एवं अहिंसा की दृष्टि से भी मनुष्य जाति की सेवा के लिए ही क्यों न हो, दूसरे जीवों की बलि चढ़ाना या नाश करना यज्ञ नहीं माना जा

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकता । वेदादि में अश्व, गाय इत्यादि को बलि चढ़ाने का उल्लेख मिलता है । हम उसका खण्डन करते हैं । सत्य और अहिंसा की तराजू में, पशु-हिंसा के अर्थ में होम या यज्ञ चढ़ नहीं सकते । हमने इतने ही से सन्तोष माना है । धार्मिक कहे जाने वाले वचनों के ऐतिहासिक अर्थ लगाने के लिये हम नहीं कह सकते और ऐसे अर्थों को शोध करने की अपनी अयोग्यता को हम स्वीकार करते हैं । ऐसी योग्यता प्राप्त करने का प्रयत्न भी हम नहीं करते । क्योंकि ऐतिहासिक अर्थ जीव-हिंसा को पसन्द करता हो तो भी सत्य और अहिंसा को सर्वोपरि धर्म स्वीकार कर चुकने के बाद हमारे लिये वह आचार-त्याज्य है, तो ऐसे अर्थ को पसन्द हो । उक्त व्याख्या की दृष्टि से विचार करने पर हम देख सकते हैं कि जिस कर्म से अधिक से अधिक जीवों का विशाल क्षेत्र में-व्यापक रूप से कल्याण हो, जो कर्म अधिक से अधिक सेवा होती हो, यह महायज्ञ है-अथवा अच्छे से अच्छा यज्ञ है । अर्थात् किसी की भी सेवा के लिये दूसरे किसी का अकल्याण चाहना या करना, कदापि यज्ञ कार्य नहीं और यह बात तो भगवद्गीता तथा अनुभव दोनों हमें सिखाते हैं कि यज्ञ व्यक्तिरिक्त कर्म-बन्धन है । ऐसे यज्ञ के बिना यह जगत् एक क्षण भी नहीं टिक सकता । इस लिए गीताकार ने दूसरे अध्याय में ज्ञान की थोड़ी झाँकी कराने के बाद तीसरे अध्याय में उसकी प्राप्ति के साधनों का दिग्दर्शन कराया है, और स्पष्ट शब्दों में कह दिया है कि जन्म से ही हम यज्ञ को अपने साथ लाये हैं-अर्थात् हमें यह देह केवल परमार्थ के लिए मिली है, और इसलिए जो बिना यज्ञ किये जीमता है, यह चोरी का अन्न खाता है । गीताकार ने अपना यह कठोर निर्णय दिया है । शुद्ध जीवन व्यतीत करने की इच्छा रखने वाले के समस्त कार्य यज्ञ रूप होने चाहिये । हम यज्ञ को साथ लेकर पैदा हुए हैं-अर्थात् सदा के ऋणी हैं, देनदार हैं । अतः हम जगत के सदा के सेवक-गुलाम हैं और जैसे गुलाम को उसका स्वामी सेवा के बदले में अन्न वस्त्रादि देता है, वैसे ही हमें जगत् का स्वामी हमारी सेवा के बदले या हम से सेवा लेने के कारण जो अन्न वस्त्रादि दे उसे हम आभारपूर्वक ले लें । इतने के भी हम हकदार हैं ऐसा न मानें, अर्थात् न मिलने पर स्वामी को बुरा भला न कहें । यह शरीर उसका है, वह अपनी इच्छानुसार इसे रक्खे या नष्ट करे । यह स्थिति न तो दुःखद है, न दयनीय । यदि हम अपना स्थान समझ लें तो स्वाभाविक है और इसीलिए सुखद तथा वाञ्छनीय भी । इस परमसुख का अनुभव करने के लिये अविचल श्रद्धा की आवश्यकता है ही । मैंने तो सब धर्मों में यही आदेश पाया है कि अपनी चिन्ता ही न करनी -सब परमेश्वर के भरोसे छोड़ देना ।

पर इस वचन से डरने का किसी के लिए कारण ही नहीं है । जो मन साफ रखकर सेवा का आरम्भ करता है, उसे उसकी आवश्यकता दिन प्रतिदिन स्पष्ट होती जाती है । जो स्वार्थ छोड़ने की तैयार ही नहीं है, उसके लिए अलवत्ता सेवा मार्ग कठिन है । उसमें स्वार्थ की गन्ध आया ही करेगी , पर दुनिया में ऐसे स्वार्थी बिरले ही पाये जायँगे । हम सब कुछ न कुछ निःस्वार्थ सेवा तो जाने-अजाने करते ही हैं । इसको हम विचारपूर्वक करने लगे तो हमारी सेवा-वृत्ति-परमार्थिक सेवा-वृत्ति, उत्तरोत्तर बढ़ती ही जावेगी इसी में हमारा सच्चा सुख और संसार का कल्याण है ।

जिस वस्तु को जन्म से साथ लेकर हमने इस जगत में प्रवेश किया है, उसका कुछ और विचार करना निरर्थक न होगा । यह सोचते हुए कि यज्ञ नित्य का कर्त्तव्य है, चौबीसों घण्टे आचरण करने की चीज है, और यह जानते हुए कि यज्ञ का अर्थ सेवा है, **परोपकाराय सतां, विभूतयः**, जैसा वचन खटकता है । निष्काम सेवा परोपकार नहीं, अपना उपकार है । जैसे कर्ज अदा करना परोपकार नहीं वल्कि निज की सेवा है, अपना उपकार है । अपने सिर का बोझ हलका करना है, अपने धर्म को निभाना है । दूसरे, यह कि सन्त की ही पूँजी-विभूतित-'परोपकार के लिए' अर्थात् अधिक उपयुक्त शब्दों में 'सेवा के लिए' है, ठीक नहीं, बल्कि मनुष्य की पूँजी मात्र सेवा के लिए है और यही बात है तो जीवन मात्र से भोग का उच्छेद हो जाता है और यह त्यागमय बनता है, अथवा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

त्याग को ही भोग समझता है । मनुष्य का त्याग ही उसका भोग है । यह है पशु और पुण्य के बीच का भेद । बहुतेरे लोग इस पर यह आपत्ति करते हैं कि जीवन का ऐसा अर्थ करने से जीवन शुष्क बन जाता है, कला का नाश हो जाता है । इसी कारण वे उक्त विचार को दोषपूर्ण मानते हैं । पर मेरे विचार में ऐसा कहने में त्याग का अर्थ संसार से भागकर अरण्यवास करना नहीं, बल्कि जीवन की समस्त प्रवृत्ति में त्याग की भावना का होना है । गृहस्थ-जीवन त्यागमय भी हो सकता है और भोगमय भी । मोची के जूते बनाने में, किसान के खेती करने में, व्यापारी के व्यापार में, ओर नाई के हजामत बनाने में त्याग की भावना हो सकती है, अथवा भाग की लालसा । यथार्थ व्यापार करने वाला करोड़ों का व्यापार करता हुआ भी लोकसेवा का ही विचार करेगा । वह किसी को धोखा न देगा, सट्टेवाजी न करेगा, न उठाने योग्य जोखिम नहीं उठायेगा और करोड़ों का स्वामी होते हुए भी सादगी से रहेगा । करोड़ों की कमाई करते हुए भी वह किसी का नुकसान नहीं करेगा किसी का नुकसान होता होगा तो करोड़ों पर लात मार देगा । कोई मेरी इस बात को काल्पनिक समझकर हँसे नहीं । संसार के सौभाग्य से ऐसे व्यापारी पश्चिम में भी है और पूर्व में भी । भले ही इनकी संख्या उँगुली पर गिने जाने योग्य हो । पर एक भी जीवित उदाहरण के रहते हुए ऐसा व्यापारी काल्पनिक नहीं रह जाता । ऐसे दरजी को तो हमने बढ़वाण (काठियावाड़ एक देशी राज्य की राजधानी) में ही देखा है । ऐसे एक नाई, को मैं जानता हूँ और ऐसे जुलाहे को हम में से कौन नहीं जानता ? विचार करने और शोध करने से हमें सब धन्धों में केवल यज्ञार्थ जीवन बिताने वाले और अपना धन्धा करने वाले लोग-दिखाई पड़ेंगे । यह सच है कि ऐसे याज्ञिक अपना धन्धा करते हुए अपनी आजीविका कमाते हैं । पर वे आजीविका के लिए धन्धा नहीं करते आजीविका तो उनके लिए उस धन्धे का गौण फल है । मोतीलाल पहले भी दरजी था और ज्ञान के होने पर भी दरजी ही रहा । उसकी भावना बदल गई, इससे उसका धन्धा यज्ञ रूप बना । उसमें पवित्रता ने प्रवेश किया । उस धन्धे में दूसरे के सुख का विचार समाया, तब उसके जीवन में कला ने प्रवेश किया । यज्ञमय जीवनकला की पराकाष्ठा है । रस ही उसमें है क्योंकि उसमें से इसके नित नये झरने झरते हैं । मनुष्य उसे पीते हुए थकता नहीं, झरने कभी सूखते नहीं । जो यज्ञ बोझ रूप लगे, वह यज्ञ नहीं, खटके वह त्याग नहीं । भोग का परिणाम नाश है । त्याग का फल अमरता है । रस स्वतन्त्र वस्तु नहीं । रस हमारी वृत्ति में है । एक को नाटक के पर्दों में मजा आवेगा, दूसरे को आकाश में जो नित नये परिवर्तन रहते हैं , उसमें मजा आवेगा । अर्थात् रस तालीम या अभ्यास का विषय है । बचपन में रस के रूप में जिनका अभ्यास कराया जाता है, रस के रूप में जिनकी तालीम जनता लेती है, वे रस माने जाते हैं । एक राष्ट्र या प्रजा को जो रसमय प्रतीत होता है, यह दूसरे राष्ट्र या दूसरी को रसहीन लगता है । इसके उदाहरण हमें मिल सकते हैं ।

यज्ञ करने वाले बहुतेरे सेवक यह मानते हैं कि हम निष्काम भाव से सेवा करते हैं, इसलिए लोगों से जो चाहिये वह और जिसकी जरूरत नहीं है, वह भी लेने का परवाना मिल गया है, यह विचार जिस सेवक के मन में जिस वक्त आता है, तभी से वह सेवक मिटकर बनता है । सेवा में अपनी सुविधा के विचार को कोई स्थान ही नहीं है । सेवक की सुविधा को देखने वाला स्वामी ईश्वर है । उसे जो सुविधा देनी होगी, वह देगा । यह सोचकर सेवक को चाहिये कि जो मिले उसे, अपना समझ कर बैठ न जाय, बल्कि जितनी आवश्यकता है, उतना ही ले और बाकी का त्याग करे । अपनी सुविधा की रक्षा न होने पर भी ऐसा सेवक शान्त रहेगा, रोष-रहित रहेगा, मन में भी नहीं झुँझलाएगा । याज्ञिक का बदला सेवक की मजदूरी, यज्ञ-सेवा ही है । उसे उसी में सन्तोष होगा ।

साथ ही सेवा-कार्य में बेगार कदापि नहीं टाली जा सकती, उसे आखिरी स्थान नहीं दिया जा सकता । अपनी चीज को सजाना और दूसरे की उपेक्षा करना अथवा मुफ्त में करना है, इसलिए जैसा और जब करेंगे तो भी काम चलेगा, इस तरह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के विचार करने वाला या ऐसा आचरण करने वाला यज्ञ के मूलाक्षर भी नहीं जानता । सेवा में तो शृङ्गार सजाने होते हैं, अपनी समस्त कला उसमें उडेलनी होती है, वह है पहली चीज और बाद में है अपने सेवा । सारांश यह की शुद्ध यज्ञ करने वाले का अपना कुछ भी नहीं है, उसने सब भगवदर्पण किया होता है ।

कल्याण का श्रेष्ठ मार्ग-यज्ञ

यज्ञ का ज्ञान पक्ष तथा विज्ञान पक्ष दोनों ही यह सम्मान पाने के योग्य हैं । विज्ञान पक्ष के अन्तर्गत इसके कर्मकाण्ड आते हैं । वेद मन्त्रों के उच्चारण के साथ आहुतियाँ करने से वातावरण शुद्धि, अन्तरिक्ष में श्रेष्ठ विचारों का संचरण तथा मानवीय भावनाओं के जागरण जैसे अनेक दुर्लभ लाभ प्राप्त होते हैं । यज्ञ का ज्ञान पक्ष इससे भी सबल है । आज वैज्ञानिक युग में लोग यज्ञीय विज्ञान पर पुनः शोध करने के बाद ही उसे प्रामाणिक मानने की बात कह सकते हैं किन्तु ज्ञान पक्ष तो निर्विवाद रूप से सभी को स्वीकार कर ही लेना पड़ता है । यज्ञीय दर्शन मनुष्य जीवन की अनिवार्यता है ।

गीता में कहा गया है कि प्रजापति ने यह सृष्टि यज्ञ के साथ ही बनाई है । स्पष्ट है कि यह सारा जगत यज्ञमय है, प्रकृति अपने आप में एक यज्ञ है । यज्ञ का अर्थ है त्याग, बलिदान, सहकारिता आदि । समाज में जब तक ये वृत्तियाँ जाग्रत एवं सक्रिय रहें । तब तक समाज के विकास में कभी बाधा नहीं आ सकती । यज्ञ के माध्यम से इन भावनाओं को उभार कर, स्वार्थपरता का अनीतिपूर्ण कुचक्र तोड़कर धरा पर स्वर्ग लाना सम्भव है । जो हमारे लिए उपयोगी है उसे हम समाज के लिए अर्पित कर दें । सबके हित में उसका उपयोग होने दें । यज्ञ कर्मकाण्ड द्वारा यही भाव पुष्ट किया जाता है । अपनी चीज केवल अपने लिए की भावना विकार पैदा करती है । शास्त्र वाक्य है कि जो व्यक्ति किसी वस्तु का अकेले ही उपयोग करता है वह पाप करता है इस पाप का दण्ड सारा समाज पाता है ।

यह जीवन ही यज्ञमय है । कहते है, भगवान राम, अश्वत्थामा, द्रौपदी आदि यज्ञ से पैदा हुए थे । भावनात्मक दृष्टि से हम भी यज्ञ से पैदा हुए है । माँ ने स्वार्थ भावना रखी होती तो हमारा अस्तित्व सम्भव नहीं था । ९ माह तक अपने गर्भ में माँ अपने रक्त, माँस द्वारा शरीर को पुष्ट करती, निर्मित करती रहती है । तभी व्यक्ति का जन्म हो पाता है । बाद में भी अपने रक्त को दूध के रूप में परिवर्तित करके हमें पिलाती है । पिता अपनी आवश्यकतायें काटकर हमें पोषण न देते तो हमारा विकास न होता । छोटे से बच्चे को सँभालने पालने के कष्ट से माता-पिता बच भी सकते यदि यह त्यागवृत्ति न होती तो ।

हमारे शरीर का संचालन भी यज्ञीय आधार पर हो रहा है । शरीर का हर अवयव अपनी सुरक्षा के साथ -साथ शरीर के सारे अङ्गों की पुष्टि और सुरक्षा का ध्यान रखता है । हाथ जो कमाता है वह अपने ही पास नहीं रख लेता । हाथ में आया भोजन मुँह तक पहुँचते देर नहीं लगती । मुँह उसे दबाकर उसमें और भी रस मिलाकर उसे आगे बढ़ा देता है । पेट उसका पाचन करता है, परन्तु रोकता कुछ वह भी नहीं । रस को रक्त में मिला देता है और मल को आगे बढ़ाता रहता है । रक्त भी उस प्राप्त रस को सारे शरीर में पोषण के लिए संचारित होता रहता है । हृदय के पास रक्त का भण्डार रहता है-किन्तु वह किसी भी क्षण उसे अपने पास रोकता नहीं । स्नायु मण्डल मस्तिष्क सभी का एक ही क्रम है । अपने को प्राप्त उपयोगी वस्तु सबके उपयोग के लिए आगे बढ़ाते रहने का क्रम यदि रुक जाय तो शरीर में रोग फूट पड़े तथा अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाय ।

प्रकृति का सन्तुलन भी यज्ञीय क्रम से ही चल रहा है । प्रकृति हर चरण पर एक वस्तु को दूसरे चरण के लिए उपयोगी बनाकर आगे बढ़ाती रहती है । बर्फ जल बनकर वह उठती है । नदियाँ जल को वितरित करती आगे बढ़ती हैं । जल वाष्प बनकर बादल बनता है और बादल सारी पृथ्वी पर घूम-घूमकर जल वृष्टि द्वारा भूमि की आवश्यकता पूरी करते रहते हैं । यही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

क्रम पोधों वायु जमीन खाद तथा अन्य रूपों में समझा जा सकता है ।

यह यज्ञीय भावनात्मक सहयोग मनुष्य-मनुष्य एवं पशु तथा वनस्पतियों के बीच में भी होना चाहिए । जहाँ यह वृत्तियाँ जाग्रत रहेंगी वहाँ सुख-शान्ति का निवास रहेगा तथा जहाँ इनका अभाव होगा, वहाँ सम्पन्नता भी नरक तुल्य कष्टदायक बन जावेगी ।

संसार में बहुत से राष्ट्र ऐसे हैं जहाँ सम्पत्ति बेहिसाब है । राजकीय स्तर पर वस्तुओं का थोड़ा उपयोग करके उन्हें नष्ट करते रहने के कानून बनाये गये हैं ताकि उत्पादन का सन्तुलन बना रहे । किन्तु भावनात्मक स्तर पर एक दूसरे के प्रति आत्मीयता के अभाव में जीवन कष्ट बन रहा है । पागलों की संख्या उन देश में सर्वाधिक हो रही है । एक तिहाई व्यक्तियों को नींद की गोली खाये बिना नींद नहीं आती । पति-पत्नी, माता-पिता आदि के सम्बन्धों में कोई स्थापित नहीं किसी को किसी पर विश्वास का भरोसा नहीं है । हर व्यक्ति शंकित विक्षुब्ध सा बना रहता है । भयङ्कर मानसिक तनाव की स्थिति बनी रहती है । व्यक्ति-व्यक्ति, परिवार-परिवार समाज-समाज, भलों और राष्ट्रों के बीच इसी ढंग का तनाव बना हुआ है । इसका समाधान कहाँ से निकले ? इससे मुक्ति कैसे मिले ।

यह कार्य सम्पन्नता बढ़ाकर नहीं किया जा सकता एक समय वह भी था जब लोग भौतिक दृष्टि से इतने सम्पन्न नहीं थे पर मुखी थे खाने को रूखा-सूखा, पहनने का मोटे-झोटे वस्त्र होते थे । एक साफा, एवं शाल सारे परिवार के लिए समय-समय पर काम आता रहता था । शरीर लोहे की तरह मजबूत थे । आज ढेरों सामान होने पर भी हम लड़ते हैं, ओषधियाँ हमारे रोग दूर करने में असमर्थ हैं ।

समाधान अध्यात्म के पास है । गायत्री और यज्ञ मिलकर अध्यात्म की पूरी व्याख्या कर लेते हैं । यज्ञ आध्यात्मिक जीवन क्रम का कुशल शिक्षक है । अग्नि को इसीलिए ऋग्वेद में पुरोहित कहा है ।

ऋग्वेद प्रथम वेद है । उसका प्रथम मन्त्र **अग्नि मीड़े पुरोहितं यज्ञस्य देव ऋत्विजम् । होतारं रत्नधातमम** है । इस मन्त्र में अग्नि पुरोहित कहा गया है और साथ ही यह भी कहा गया है कि वह यजन करने वाले को देवोपम बना देता है सद्गुणों के रत्न भण्डार से परिपूर्ण कर देता है ।

वेदों और शास्त्रों में सर्वत्र ही यज्ञ की महिमा गाई गई है और उसे लोक कल्याण और परमेश्वर की प्राप्ति का एक मुख्य साधन बतलाया गया है । वैदिक धर्म को यदि यज्ञ धर्म के नाम से कहा जाए तो भी अत्युक्ति न होगी क्योंकि वेदों में यज्ञों का विस्तृत अर्थ में (जिसमें आत्मकल्याण और लोकहित के लिये किये गये सब उत्तम कर्मों का समावेश हो जाता है) प्रतिपादन करते हुए स्पष्ट कहा है कि **यज्ञेनयज्ञमयजन्त देवास्तानिधर्माणि मथमान्यासन् । तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।।**

-ऋ०/९०/९०/१६ यजु. ३१/१६

अर्थात् सत्यनिष्ठ विद्वान्लोग **सत्य संहिता वैदेवाः** *ऐत. १/६* **सत्य मममया उ देवाः** । *कौषीतकी २/८* **विद्वांसो हि देवाः** *शतपथ ३/७/३/१०* इत्यादि ब्राह्मणग्रन्थोक्त प्रमाणों के आधार पर देव का यह अर्थ स्पष्ट है यज्ञ के द्वारा ही यज्ञ अर्थात् पूजनीय परमेश्वर की (यज्ञोवैविष्णुः) पूजा करते हैं । यज्ञ के अन्तर्गत वे धर्म देवपूजा, संगतिकरण और दान प्रथम अथवा प्रथम सर्वोत्कृष्ट है । इनका अनुष्ठान करते हुऐ सत्यनिष्ठ विद्वान् लोग महामहिमा शाली बन कर मोक्ष तक को प्राप्त कर लेते हैं जहाँ सब ज्ञानी पहुँचते हैं ।

इस प्रकार के मन्त्रों में यज्ञ के परमेश्वर की पूजा का भाव स्पष्ट है । यज्ञ को सर्वोत्तम धर्म कहने का कारण यह है कि इसमें मनुष्य को अपने बड़ों लगभग समान कोटि के लोगों और अपने से किसी भी अवस्था में छोटों के प्रति कर्तव्यों का देव पूजा, सङ्गतिकरण और दान के रूप में समावेश हो जाता है । यज्ञ को अध्वर के नाम से भी वेदों के सैकड़ों मन्त्रों में कहा गया है जिसका **अर्थ निरुक्तकार महर्षि यास्काचार्य के अनुसार- अध्वर इति यज्ञि नाम ध्वरतिर्हिंसा कर्मातत्प्रतिषेधः ।**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात्-हिंसा रहित शुभ कर्म । ऐसे कर्म के सम्बन्ध में यह वैदिक प्रार्थना है कि-

'भद्रोनो अग्निराहुतो भद्राएतिः सुभग भद्रोनोअध्वरः । भद्रा उत प्रशस्तयः

-ऋ० ८/१९/१९ यजु १५/३८ साम १११

अर्थात्-**आहुतः अग्नि नः भद्रः** यह अग्नि जिसमें हम ने सुगन्धित, रोग नाशक, पुष्टिदायक पदार्थों की आहुतियाँ दी हैं हमारे लिये कल्याण और सुख का कारक हो । हमारा (रातिः) दान कल्याण दायक हो (**नः अध्वरः भद्रः**) हमारा हिंसा रहित यज्ञ रूप शुभ कर्म सदा कल्याण और सुख देने वाला हो तथा हमारी **प्रशस्तयः भद्राः** आहुतियाँ कल्याण कारिणी हों । इस प्रकार इस द्रव्य यज्ञ की कल्याण कारकता का वेदों में अनेक स्थानों पर प्रतिपादन है साथ ही यह भी प्रार्थना है कि ऐसे शुभ यज्ञ कार्य और उसकी स्वार्थ त्याग तथा परोपकार की पवित्र भावना से हम कभी पृथक नहीं ।

मा पुगाम पथोवयं मायज्ञादिन्द्र सोमिनः । मान्तः स्थुर्नो अरातयः ।।

-ऋ० १०/५७/अपर्व ११३/१/५९

हे परमैश्वर्य सम्पन्न प्रभो ! हम **पथः मा प्रगाम** उत्तम धर्म मार्ग से कभी विमुख न हों (सोमिनः) ज्ञानमय भक्ति रस का सेवन करते हुए हम (यज्ञात् मा प्रगाम) यज्ञ से कभी विमुख न हों तथा (अरातयः) अदानभाव-कृपणता-स्वार्थ तत्परता और काम क्रोध लोभ मोहादि (**नः अन्तः मा स्थः**) हमारे अन्दर कभी न ठहरें । यज्ञ का कभी परित्याग न करने के विषय में यह कितनी उत्तम प्रार्थना है ? यह निषेधात्मक प्रार्थना ही नहीं विधानात्मक प्रार्थनाएँ भी इसके सम्बन्ध में अनेक मन्त्रों में पाई जाती है **यथा देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञयति भगाय । यजु. ११/७ हे सवितः देवः** सर्वोत्पादक सुख शान्ति आनन्द दाता परमेश्वर हमारे यथर (यज्ञ प्रसुव) यज्ञ भावना और यज्ञ विषयक प्रेम को उत्पन्न करो और (यज्ञपतिम्) यजमान को (भगाय प्रसुव) धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, यश और शोभा रूप भग के लिये प्रेरित करो । यजु में कहा है कि **यंयं लोकम् अगन् यज्ञस्त्रतस्तता ने भद्रमभूतः ।।**

अर्थात्-जहाँ-जहाँ भी यज्ञ किया जाए या हमारे लिए सुख और कल्याणकारक हो ।

वेदों के अनुसार यज्ञ से न केवल जलवायु शुद्धि होती है वल्कि ज्ञान, बृद्धि और बल की भी वृद्धि होती है जैसे कि ऋग्वेद के-

मधुमन्तं तनूनपाद् यज्ञ देवेपुनः कवे ।

अद्याकुणहिवीतये ।। इस १/१३/२ के भाष्य में लिखा है ।

अर्थात्-जब अग्नि में सुगन्धित पदार्थों का हवन होता है तभी वह यज्ञ वायु आदि पदार्थों को शुद्ध तथा शरीर औषधि आदि की रक्षा करके अनेक प्रकार के रसों को उत्पन्न करता है तथा उन यज्ञ द्वारा शुद्ध पदार्थों के भोग से प्राणियों के विद्या ज्ञान और बल की भी बृद्धि होती है ।

स्तृणीत वर्हिरानुषग् घृतपृष्ठं मनीषिणः । यवामृतास्य चक्षणम् ।।

-ऋ १/१३/५ ।।

इस मन्त्र के भावार्थ में महर्षि ने लिखा है अर्थात्-विद्वान् लोग अग्नि में जो घृत आदि पदार्थ डालते हैं वे अन्तरिक्ष को प्राप्त होकर वहाँ ठहरे हुए जल को शुद्ध करता है और वह शुद्ध हुआ जल सुगन्ध आदि गुणों से सब पदार्थों को आच्छादित करके सब प्राणियों को सुख युक्त करता है ।

यजुर्वेद १/२३ के भाष्य में यज्ञों के विषय में लिखा है-

एतैरेव सुप्रजा शारीरिक वाचिकमानसानि निश्चलासि सुखानि प्राप्तु शक्यामि ।।

अर्थात्-इन यज्ञों के द्वारा ही उत्तम सन्तान, शारीरिक, वाचिक और मानसिक स्थिर सुख प्राप्त किये जा सकते हैं ।

इस प्रकार वेदों में यज्ञ को लोक कल्याण का प्रमुख साधन बताया गया है । जिसके अनुष्ठान और बल की प्राप्ति हो तथा बुद्धि शुद्ध और तीव्र हो जाये लोगों में परस्पर प्रेम उत्पन्न होकर सामाजिक सङ्गठन दृढ़ बने उसके लोक कल्याण कारक होने में सन्देह ही क्या हो सकता है ! इसीलिये वेदों में कहा है-**अग्निमिन्धानो मनसा धियं सचेत मर्त्यः । अग्निमीधे विवस्वभिः ।।** -ऋ० ८/१०२/२० सोम में,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

१९ के अनुसार जब हवन की अग्नि को प्रदीप्त करते हुई उसके साथ मन और बुद्धि को जोड़ दिया जाता है और अपने अन्दर ज्ञान की अग्नि को जलाने का प्रयत्न किया जाता है तो उससे आध्यात्मिक उन्नति में भी बड़ी सहायता मिलती है ।

इसलिए भारतीय देवसंस्कृति में यज्ञ का सर्वोपरि महत्व दिया गया है और ज्वलन्त अग्नि के रूप में भगवान की प्रतिमा को मान्यता दी गई है तथा दिव्य तत्व अग्नि को पुरोहित कहा गया है । वह वाणी से तो उपदेश नहीं देता किन्तु अपनी क्रिया पद्धति का अनुकरण करने की प्रेरणा देता है । उन्हें कार्यान्वित करने पर ही गुरु का उपदेश और शिष्य का कर्तव्य पूरा होता है । यज्ञाग्नि जो उपदेश देता है उन्हें सूत्र रूप में इस प्रकार समझा जा सकता है ।

(१) अग्नि जब तक जलती है तब तक वह गरम और प्रकाशवान रहती हैं । हमें भी आजीवन गरम अर्थात् क्रियाशील रहना चाहिए और प्रकाश वितरित करने में ज्ञान चेतना को व्यापक बनाने में प्रयत्नशील रहना चाहिए । ऐसे कृत्य करना चाहिए जिनका अनुगमन करने वाले भी प्रकाशपूर्ण जीवन जी सकें और क्रियाशीलता को गतिवान बनाये रह सकें ।

(२) अग्नि का दूसरा गुण है कि उसका सिर सदा ऊँचा रहता है । कितना ही दबाव पड़ने पर भी वह सिर नीचा नहीं होने देता । अपना मस्तक चिन्तन भी सदा ऊँचा रहे परिस्थितियाँ प्रतिकूल होने पर भी निकृष्ट चिन्तन न करे । अनीति के सामने सिर न झुकायें । न्याय के समर्थन में तन कर खड़े रहे उत्कृष्ट रहें और उसी रीति-नीति को अपनाने की साधारण प्रेरणा दें ।

(३) अग्नि में भी वस्तु डाली जाती है वह अशुद्ध होते हुए भी उसी के समतुल्य बन जाती है । लकड़ी धातु या गंदगी तक अग्नि के सान्निध्य में पहुँचे तो वह उसी के समतुल्य बन कर रहती है । अपने सम्पर्क में भले ही खोटे लोग आये पर वे शुद्ध होकर जायँ । विरानों को अपना बनाने की कला हमें आनी चाहिए । दूसरों के दुर्गण ग्रहण न करें । शिवजी के गले में सर्प पड़े रहते हैं, पर वे उनके विषैले प्रभाव को ग्रहण नहीं करते, उलटे शिव सान्निध्य में रहने के कारण विषधर होने पर भी वे देवता बन जाते हैं । नागपंचमी पर नाग देवता की पूजा होती है । इस प्रकार शिव सान्निध्य ने उस पूरे समुदाय को ही श्रेय प्रदान किया । हमारी रीति-नीति भी विरानों को अपनाने आत्मसात् कर लेने की होनी चाहिए ।

(४) अग्नि में जो भी डाला जाय उन सब को वह अपने लिए बचा कर नहीं रखती दूसरों के निमित्त ही खर्च कर देती है । संग्रह की उसकी वृत्ति होती ही नहीं । हमें भी अपने दिव्य पुरोहित का अनुकरण करना चाहिए । कृपण एवम् संग्रही कहीं बनना चाहिए । क्षमताओं एवम् साधनों को गतिशील रखना चाहिए ।

(५) अग्नि का अन्त भस्म रूप में होता है । हममें से प्रत्येक को यह ध्यान रखना चाहिए कि हमारे अस्तित्व का अन्त भी दो मुट्ठी भस्म के रूप में ही होने वाला है । इसलिए न तो अहंकार करें, न विग्रह उत्पन्न करें न पाप कमाएँ । मृत्यु को सदा ध्यान में रखें । अपने अस्तित्व का अन्त स्मरण रखें और ऐसे काम करें जिसके लिए पीछे पश्चाताप न करना पड़े ।

यह पाँच शिक्षाएँ पाँच रत्नों से भी बढ़कर हैं । रत्न तो पत्थर के होते हैं और उनके चोरी जाने गुम होने का भी डर रहता है । पर यह पाँच गुण ऐसे हैं जो अपनाने वाले ऋत्विज् को देवोपम बना देते हैं । साथ ही सद्गुणों के साथ जुड़ी रहने वाली प्रशंसा तथा सहयोग भावना को संजोते हुए निहाल भी कर देते हैं ।

निराकार भगवान की साकार प्रतिमा यज्ञ को इसलिए माना गया है, कि अन्य देवताओं की तरह उसके पीछे कोई ऐसा इतिहास नहीं है, जिसमें गुणों के साथ एक दोष भी सम्मिलित है । अन्य देवताओं के सम्बन्ध में उनकी कथा गाथाएँ ऐसी हैं, जिनमें यह असमंजस उत्पन्न होता है कि उन्हें उपास्य माना जाता है, तो सहज ही गुणों के साथ उनके दुर्गुण भी मान्यताओं में प्रवेश करें । यह संकट अग्नि पूजा में यज्ञ में नहीं है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञाग्नि के सम्बन्ध में देव मान्यता स्थापित करनी पड़ती है । उसे ईश्वर का मूर्तिमान स्वरूप मानना पड़ता है । इस प्रकार यज्ञ के साथ यज्ञीय भावना तथा यज्ञीय जीवन जिस तीव्रता से अपनाया जायेगा उसी तीव्रता से नवयुग की पृष्ठभूमि बनती चलेगी ।

भारत में यज्ञीय जीवन क्रम जब तक अपनाया जाता रहा तब तक सब प्रकार की सम्पन्नता बनी रही तथा भारत अपने आदर्शों द्वारा विश्वभर को प्रेरणा और प्रकाश देता रहा । आज हमें उस सोयी हुई चेतना को पुनः जगाना है । किन्तु यह केवल द्रव्य यज्ञ से सम्भव नहीं । हमें उसके साथ यज्ञीय दर्शन ज्ञान यज्ञ भी जोड़ना भी पड़ेगा यज्ञीय प्रेरणाओं को आत्मसात करना पड़ेगा तभी आत्मकल्याण और लोक कल्याणका अभीष्ट उद्देश्य पूरा होगा । इस संदर्भ में यज्ञ की व्याख्या करते हुए शास्त्रकारों ने कहा है-**येन सदनुष्ठानेन सम्पूर्ण विश्वं कल्याणं भजेत तत् पदाभिधेयम् ।**

अर्थात् जिस कृत्य को करने से सम्पूर्ण विश्व का कल्याण होता है वह यज्ञ है ।

उपरोक्त प्रतिपादनों से यज्ञ की गरिमा और व्यापकता समझी जानी चाहिए । उसे साम्प्रदायिक क्रिया भर नहीं मान लेना चाहिए ।

ऋग्वेद में भगवान ने सच ही कहा है कि-यज्ञाग्नि ही मनुष्य का पुरोहित सद्गुरु और सच्चा मार्ग दर्शक है । यजन करने वाला ऋत्विज् देवता बना जाता है और हवन कर्त्ता उसे रत्न भण्डार के रूप में पाता है । यह दैवी सम्पदा के दिव्य रत्न हैं जो जन्म जन्मान्तरों तक साथ बने रहते है । विभूतियों से इतना लबालब भर देते हैं कि मनुष्य कुबेर से भी बढ़कर अपने को सुसम्पन्न अनुभव करते लगता है ।

यज्ञीय जीवन अपनाने की प्रक्रिया ही ऐसी है कि उसके साथ भौतिक सम्पदा एवम् आत्मिक विभूतियों का सुयोग सहज ही जुड़ा हुआ है ।

जीवन यज्ञ की रीति-नीति

सुगन्धित पदार्थों का हवन करना इस दिशा में इंगित करता है कि हम अपनी आन्तरिक सद्भावनाओं और सत्प्रवृत्तियों को प्रसुप्त स्थिति में पड़ी न रहने दें उन्हें दीप्तिमान और तेजस्वी बनायें । उन्हें सीमित क्षेत्र में प्रतिबंधक न रहने देकर विस्तृत और व्यापक बनायें ।

हव्य वस्तुओं की विपुल मात्रा भण्डारों में संग्रहीत रहती हैं । इसका कुछ पुण्य नहीं । संग्रहकर्त्ता को इससे थोड़ा आर्थिक लाभ भर हो सकता है, जनसाधारण को लाभ तो तभी मिलता है जब वे वितरित की जाती हैं हर मनुष्य के पास ऐसी विशेषताएँ होती है जिन्हें वह चाहे तो वितरित कर सकता है और असंख्यों को ऊँचा उठाने आगे बढ़ाने एवं आनन्दित करने में सहायता कर सकता है । जहाँ ऐसी भावनाऐं और चेष्टाऐं उभर रही हों, समझना चाहिए जीवन को यज्ञमय बनाया जा रहा है ।

चन्दन, कपूर, आदि की सुगन्ध उनके जलने पर ही व्यापक बनती है अथवा उनकी सुवास रखे गये स्थान तक ही सीमित रहेगी । सद्गुणों को चाहे तो मनुष्य अपने निजी कामों तक सीमित रख सकता है, उससे उसका अपना हित साधन भी है पर जब कोई अपनी विभूतियों से दूसरों को लाभान्वित करने की परमार्थ प्रवृत्ति अपनाता है तो भले ही निजी लाभ सीमित होता दिखाई पड़े किन्तु असंख्यों को लाभ मिलने की जो मङ्गलमयी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं, उन्हें देखते हुए वह हानि नगण्य है जो अमीरी पर अंकुश रखने जैसी दृष्टिगोचर होती है ।

अपने दोष दुर्गुणों को भस्मसात करने के लिए अपनाया गया साहस और उठाया गया कदम वस्तुतः यज्ञीय धर्मानुष्ठान है । काठ-कवाड़ जहाँ-तहाँ बिखरा पड़ा रहे तो उससे क्या बनेगा पर जब वह अग्निदेव के सम्पर्क में आकर ज्योतिर्मय बनता है तो उसकी शक्ति देखते ही बनती है । एक जलती लकड़ी को अवसर मिले तो वह दावानल का रूप धारण कर सकती है और योजनों लम्बे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जटिल जङ्गलों से भूखण्डों को स्वच्छ कर सकती है । उससे कितनी वस्तुयें पकाई जा सकती है और कच्ची चीजों की तुलना में पकी चीजों का मूल्य महत्व अनेक गुना हो सकता है । अग्नि संस्कार के कारण जो उपलब्धियाँ प्राप्त होती हैं वे असीम हैं । पर यह सब लाभ मिलते तभी हैं जब अग्नि को ज्वलन्त होने का अवसर देने वाला ईंधन पर्याप्त मात्रा में मिल सके । अपनी बिखरी हुई अनगढ़ और अस्त-व्यस्त आदतों को जब उत्कृष्टता की अग्नि में ईंधन बनाकर होम दिया जाता है तो उससे ज्योर्तिमय अग्निदेव प्रकट होते हैं और उससे यज्ञ प्रयोजन की आवश्यकता पूरी होती है । यज्ञ से स्वर्ग मिलता है । यह खुला रहस्य है । इसे हर कोई कभी भी प्रत्यक्ष देख सकता है । नन्हा सा बीज जब यज्ञीय परम्परा अपनाकर गलने को तत्पर होता है तो उसका वह आत्मदान विशाल वृक्ष के रूप में चिरकाल तक यशगान करने के लिए गर्वोन्नत मस्तक करके खड़ा हो जाता है । कोई भी मनुष्य अपनी स्वार्थ भरी संकीर्णता की परिधि को तोड़कर विराट् के सम्मुख अपना आत्म समर्पण करके यह देख सकता है कि संग्रही परिग्रही की तुलना में उसने कितना अधिक प्राप्त कर लिया ? उन्नति के उच्च शिखर पर चढ़ने क उत्सुक जल कण अग्नि के सम्पर्क में आकर अपना भारीपन गँवाते और हलके बनते हैं । जो जितना हलका होगा वह उतना ऊँचा उठेगा । जोहड़ का सड़ा पानी वरुण बनकर आकाश में उड़ता देखा जा सकतता है पर उसके लिए ताप के सम्पर्क में आने-हलका बनने और सीमा परिधि को तोड़कर विस्तृत क्षेत्र में विचरण करने की रीति तो अपनानी ही पड़ती है । यही यज्ञ का आध्यात्मिक स्वरूप है । हम ताप सहने का साहस करें -हलके बनें और उन्मुक्त आकाश में विचरण करें तो तुच्छ दीखने वाला व्यक्ति देखते-देखते महामानव बन सकता है । ऐसा महामानव जो यज्ञ की तरह श्रद्धास्पद दिखाई पड़े और असंख्यों का हितसाधन कर सकने का श्रेय प्राप्त करे ।

यदि यज्ञ शब्द को इतने व्यापक अर्थों में समझ लिया जाये तो विश्व की समस्त कलायें एवं विज्ञान इस के अन्तर्गत आ जाते हैं, साथ ही यज्ञ के फलस्वरूप जितने भौतिक एवं अतिभौतिक लाभों का वर्णन शास्त्रों से मिलता है वे अर्थवाद अथवा केवल विश्वास की वस्तु न रह कर इसी जन्म में प्रत्येक व्यक्ति के अनुभव की वस्तु बन जाते है, यज्ञ का सबसे बड़ा फल स्वर्ग प्राप्ति है । यदि संसार का प्रत्येक व्यक्ति लोककल्याण की भावना को अपने व्यवहार का मान दण्ड बनाले तो मृत्यु के उपरान्त मिलने वाला कोई स्वर्गलोक हो या न हो यह संसार अवश्य स्वर्ग बन जायेगा संसार की सभी प्रयोगशालाएँ एवं निर्माणशालाएँ वस्तुतः यज्ञ शालायें ही हैं, दुर्भाग्य यह है कि उनमें से सब लोककल्याण की भावना से प्रेरित होकर नहीं चल रही है इसीलिये वे हमें वह फल नहीं दे पा रही हैं जो यज्ञ से मिलना चाहिये ।

सारा जीवन ही यज्ञमय बने

जीवन यज्ञ है । उसकी प्रत्येक साँस एक आहुति है जो इस को विधिवत् सम्पन्न करता है उसे रुग्णता का कष्ट नहीं सहना पड़ता और वह पूर्णायुष्य प्राप्त करता है । छान्दोग्य उपनिषद में इस तथ्य और रहस्य पर अच्छा प्रकाश डाला गया है ।

उपनिषदकार ने जीवन को वर्णाश्रम धर्म के अनुकूल चार भागों में बाँटा है । पूर्ण आयु ९६ वर्ष क्रियाशील जीवन की मानी है । शतायु के अन्तिम चार वर्ष थकान, असमर्थता भरे होने की बात सोचकर ९६ को ही पूर्ण मान लिया है । प्रत्येक चरण २४ वर्ष का माना है । चौबीस इसलिए भी, कि गायत्री महामन्त्र में २४ अक्षर हैं । द्वितीय चरण यौवन की उपमा मध्याह्न काल से दी है । इसके बाद शेष दो चरण वानप्रस्थ और संन्यास की परमार्थ युग्म में गणना करते हुए उन्हें एक में गिन लिया गया है । इस प्रकार त्रिपदा गायत्री के तीन चरणों में जीवनक्रम के तीन विभाजनों की संगति बिठा दी गई है । इस प्रकार संयम, पराक्रम, प्रखरता और परमार्थ के तीन भागों में विभक्त जीवन यज्ञ, प्रकारान्तर से गाय भी यज्ञ बन जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन तीन विभागों के तीन देवता हैं-प्रथमचरण के वसु, द्वितीय के रुद्र, तृतीय के आदित्य । वसु संयम के वसु संयम के, रुद्र पराक्रम के और आदित्य तेजस्विता के अधिष्ठाता है । जीवन का सदुपयोग भी इसी क्रम से होना चाहिए । यदि यह गतिचक्र ठीक तरह चलता रहे तो फिर रोग-शोक का, पतन पराभव का कोई कारण नहीं रह जाता ।

उपनिषद्कार के अनुसार यदि बीच में कोई विकृति विपत्ति आ खड़ी होती हो तो समझना चाहिए कि नियति के निर्धारण को व्रत पूर्वक अपनाये रहने में कहीं कोई चूक हो रही है । उसे ढूँढ़ना और सुधारना चाहिए । साथ ही दैवात्मा सत्ता से विनय अनुरोध करना चाहिए कि वह अपनी प्रेरणा से वर्तमान को ऐसा बनाये जिसमें वह भविष्य की सम्भावनाओं को समुज्वल बनाये रहने के लिए समुचित सतर्कता वरते । ऐसे मार्ग पर न चले जिसके कारण जीवन क्रम की अगली शृंखला को गड़बड़ाने-लड़खड़ाने की दुर्गति का सामना करना पड़े ।

गलती के सुधर जाने पर उस कारण प्रस्तुत हुई विकृतियाँ और विपत्तियाँ भी निरस्त हो जाती है रुग्णता का शमन हो जाता है । शरीर मन और लोक-व्यवहार के क्षेत्र में जो दुर्भाग्यपूर्ण अवरोध उत्पन्न हो गये थे, उन भव रोगों को टिके रहने का आधार नहीं रह जाता, फलतः वे निरस्त होकर वापस लौट जाते हैं ।

सुख-शान्ति का यही मार्ग है । जीवन का विभाजन उद्देश्य और उपयोग समझ लेने, तद्नुरूप गतिविधियाँ निर्धारित करने, भूलों को सुधारने, सर्वशक्तिमान सत्ता से सन्मार्ग गमन में प्रेरणा सहायता उपलब्ध करने वाली प्रार्थना करने से उन शोक-सन्तापों का शमन हो जाता है जो जीवन-क्षेत्र के किसी न किसी वर्ग को रुग्ण एवं संकटग्रस्त रखे रहती हैं ।

जीवन यज्ञ है । गायत्री उसका इष्ट । समय उसका हविष्य संयम, पराक्रम और परमार्थ के रूप में उसे वसु, रुद्र आदित्य के अनुशासन में चलना चाहिए । जो इस अध्यात्म रहस्य को समझ लेते हैं वे रोग, शोक, सन्ताप में से किसी के भी चँगुल में नहीं फँसते । यदि फँस भी जायँ तो भूल-सुधार की प्रायश्चित प्रक्रिया तथा परमात्मसत्ता से सन्मार्ग पर चलने की साहसिकता माँगनी चाहिए । यह है चिरस्थायी एवं समग्र आरोग्य की उपलब्धि का मार्ग ।

छान्दोग्यकार ने इस तथ्य का वर्णन इस प्रकार किया है:-

पुरुषो वाव यज्ञः तस्य यानि चतुर्विंशति वर्षाणि,तत् प्रातः सवनं, चतुर्विंशति अक्षरा गायत्री, गायत्रं प्रातः सवनं, तदस्य वसवो अन्वायत्ताः, प्राणा वाव वसवः एते हीदं सर्व वासयन्ति ।। १ ।।

तं चेदस्मिन् वयसि किंचिदुपतपेत् स ब्रूयात् प्राणा वसवः । इदं मे प्रातः सवनं माध्यन्दिनं सवनं अनुसन्तनुत इति माऽहं प्राणानां वसूनां मध्ये यज्ञो विलोप्सीय इति, उद्धैव तत एति, अगदो ह भवति । ।। २ ।।

-छान्दोग्य ३/१६/१-२

मनुष्य का जीवन एक यज्ञ है । मनुष्य की आयु के प्रथम चौबीस वर्ष का प्रातः सवन (प्रातः कालीन यज्ञ) है । गायत्री छन्द चौबीस अक्षरों वाला है, प्रातःसवन में गायत्री छन्द का ही प्रयोग होता है , इस यज्ञ वसु देवता का सम्बन्ध होता, प्राण ही (समस्त शक्तियों के निवास से) वसु देवता कहलाते हैं । यदि कहीं इन चौबीस वर्षों में मनुष्य को कोई रोग हो जाय, तो उसे ऐसा कहना चाहिए, हे वसुगणों (प्राणों) ! यह मेरा प्रातः सवन, माध्यन्दिन सवन के साथ संयुक्त करो (अर्थात् जीवन के प्रथम चौबीस वर्ष को जीवन के शेष आयु से युक्त कर उसे आगे बढ़ाओ) वसुगणों (प्राणों) का यह यज्ञ हमारे बीच में ही विलुप्त न हो जाय । यह अनुरोध आरोग्य का पथ प्रशस्त करेगा । जीवन के प्रथम चौबीस वर्ष तो इस प्रकार व्यतीत हुए । उसके आगे के लिए पुनः कह गया-

'अथ यानि चतुश्चत्वारिशद्वर्षाणि तन्माध्यन्दिनं सवनं चतुश्चत्वारिशदक्षरा त्रिष्टुप, त्रिष्टुप माध्यन्दिनं सवनं तदस्य रुद्रा अन्वायत्ताः प्राणा वाव रुद्रा, एते हीदं सर्व रोदयन्ति ।। ३ ।।

तं चेदेतस्मिन् वयसि किंचिदुपतपेत् स ब्रूयात् प्राणा रुद्राः । इदं मे माध्यन्दिनं सवनं, तृतीय सवनं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मनुसन्तनुतेति, माऽहं प्राणानां रुद्राणां मध्ये यज्ञो विलोप्सीय इति, उद्धैव तत एत्यगदोह भवति । । ४ ।।

-छान्दोग्य ३/६/३, ४

(मनुष्य के जो यौवन वाले) अगले चौवालीस वर्ष हैं, वह माध्यन्दिन-सवन का समय है । त्रिष्टुप् छन्द चौवालीस अक्षरों का होता है, इस माध्यन्दिन सवन में इसी त्रिष्टुप छन्द का प्रयोग होता है । इस यज्ञ के साथ रुद्र देवता का सम्बन्ध है । रुद्र ही प्राण हैं । ये ही सब कोई रोग हो जाये तो उसे इस प्रकार कहना चाहिए हे रुद्र रूपी प्राणो । मेरे इस माध्यन्दिन यज्ञ की अवधि को तृतीय सवन के अगली आयु से सम्बद्ध कर दो) मेरे द्वारा सम्पन्न होने वाला यह रुद्र देवता (प्राण) प्रधान माध्यन्दिन-यज्ञ बीच में ही विलुप्त न हो जाय ।

४८ वर्ष के शेष जीवन भी यज्ञ रूप है इसका वर्णन इस प्रकार किया गया है-

अथ यान्यष्टाचत्वारिंशद्वर्षाणि, तत् तृतीय सवनं, अष्टाचत्वारिंश अन्वायत्ताः प्राणा वाव आदित्या : एते हीदं सर्व आददते ।। ५।।

तं चेदस्मिन् वयसि किंचिदुपपेत् स ब्रूयात्-प्राणा आदित्या ! इदं मे तृतीयसवनं आयुरनुसंततनुतत इति, माऽहं प्राणानामादित्यानां मध्यं यज्ञो विलोप्सीय इति, उद्धैव तत् एत्यगदोह भवति ।। ६ ।।

-छान्दोग्य ३/१६/५,६

मनुष्य जीवन का शेष अगला ४८ वर्ष, जीवन रूपी दिन का तृतीय सवन है-सायंकालीन यज्ञ है । जगती छन्द अड़तालीस अक्षरों का होता है और इस यज्ञ में इसी जगती छन्द का प्रयोग होता है । इस तृतीय सवन के साथ आदित्य नामक प्राण का सम्बन्ध है आदित्य ही प्राण है क्योंकि यह ही सभी को ग्रहण करते हैं । इस अवधि में रोग होने पर मनुष्य को यह कहना चाहिए कि हे आदित्य नामधारी प्राणो ! यह मेरी आयु का तीसरा खण्ड-तृतीय सवन है, इसे पूर्ण आयु तक ले चलो । आदित्य (प्राण) प्रधान इस यज्ञ के बीच में ही मेरा यह जीवन यज्ञ विलुप्त न हो जाय ऐसी प्रार्थना करने से आरोग्य का पथ प्रशस्त होता है ।

उपर्युक्त तथ्य का समापन और फलश्रुति बताते हुए उपनिषद्कार ने अन्त में इस आधार का अवलम्बन करके रोग मुक्त हुए महर्षि ऐतरेय का प्रमाण उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहा है ।

एतद्ध स्म व तद्विद्वान आह महीदासः ऐतरेयः स किं म एतदुपतपसि योऽहमनेन न प्रेष्यामीति, स ह षोडशं वर्षशतं अजीवत् । प्र ह षोडशं वर्ष शतं जीवति य एवं वेद ।। ६ ।।

-छान्दोग्य ४/४६/७

जीवन तथ्य (जीवन-यज्ञ) को जानने वाले विद्वान महीदास ऐतरेय एकबार रोगी हुए और उस स्थिति में उन्होंने रोग से कहा-हे रोग ! तू मुझे क्यों कष्ट देता है ? सन्ताप देता है ? मैं इससे नहीं मरूँगा । ऐसा दृढ़ निश्चयात्मक प्रश्न करने से वे रोग-मुक्त हो गये और पूर्ण आयु तक जीवित रहे जो व्यक्ति जीवनयज्ञ के इस तत्वज्ञान को जानता है वह पूर्णायु तक जीवित रहता है ।

हे पवित्र ! अपने को यज्ञ में झोंक दे

स्वयं यजस्व दिवि देव देवान् किं तते पाकः कृणवद प्रचेताः । यथा यज ऋतुभिर्देवानेवा यजस्व तन्व सुजात ।

-ऋग्वेद १०/७/६

हे (देव) दिव्य स्वभाव वाले ! तू (स्वयम्) अपने आप (दिवि) मस्तिष्क में विद्यमान (देवान्) देवों को, दिव्यभावों को (यजस्व) यज्ञ कर, समर्पण कर, (अप्रेचताः) मूढ़ अज्ञानी, (पाकः) परिपक्व पवित्र (ते) तेरा (किं) क्या (कृणयत्) कर सकता है । (यथा) जैसे तू (ऋतुभिः) ऋतुओं के अनुसार (देवान्) देवों को (अयजः) यजन करता है (एवा) ऐसे ही है (सुजात) उत्तम से उत्पन्न हुए ! (तन्वे) शरीर को (यजस्व) यजन कर ।

हे दिव्य स्वभाव वाले, यज्ञ कर । साधारण पाँच यज्ञ तो नित्य ही होते हैं । अलग-अलग ऋतुओं में पर्वों पर, संस्कारों, उत्सवों, आयोजनों, अनुदानों के अवसर नैमित्तिक यज्ञ भी होते ही रहते हैं । आज वेद भगवान इन नित्य के, निमित्त के यज्ञों से अग्निहोत्रों से भिन्न प्रकार का यज्ञ करने के लिये तुझे बुलाते हैं । यह यज्ञ विशिष्ट प्रकार का होगा । यह अभ्यास यज्ञ है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह यज्ञ कहाँ होगा ? कौन करेगा ? किस देवता के लिये यह यज्ञ किया जायगा ? किस सामग्री से हवन होगा ? यह प्रश्न विचारणीय है । क्योंकि जब यह यज्ञ विशेष प्रकार का है तो उसका विधिविधान भी विशेष प्रकार का ही होगा । वेद ने इसी मन्त्र में वह सब कुछ समझा दिया है । उसने कहा है कि-तू अपने आप यज्ञ कर, स्वयं ही होता, स्वयं यजमान, स्वयं पुरोहित बन । इस यज्ञ का स्थान होगा-द्विविध लोक, मस्तिष्क । यह यज्ञ देवताओं के लिये किया जायगा । कौन देवता ? वे देवता जो दिव्य भाव बनकर तेरे अन्दर निवास करते हैं । सामग्री के स्थान पर तुझे अपना शरीर ही होमना पड़ेगा । ऐसे दिव्य यज्ञ की वेद भगवान माँग करते हैं । हे दिव्य स्वभाव वाले । हे सर्वोत्तम परमात्मा से उत्पन्न हुए आत्मा ! तू ऐसा यज्ञ कर सकता है । क्योंकि तू परिपक्व है ! पवित्र है ।- गीता का कथन है-

सह यज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापति ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्ट कामधुक् ।
इष्टन्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञ भाविताः ।

-३/१०/१२

प्रजापति, परमात्मा ने यज्ञ सहित प्रजा को रच कर कहा कि इस यज्ञ द्वारा तुम लोग उन्नति को प्राप्त होओ और यह यज्ञ तुम लोगों की मनोकामनाओं को पूरा करने वाला होवे । यज्ञ द्वारा प्रसन्न किये हुए देवता लोग तुम्हारे लिये बिना माँगे ही वांछित भोगों को देंगे ।

मनोवांछित अभिलाषाओं को देव पूरा करते है, मनुष्य स्वयं उन्हें पूरा नहीं कर सकता । इच्छा पूर्ति का साधन जुटाया जाता है परन्तु इच्छा साधन से बढ़ जाती है । चाहे जितने साधन जुटाये जायँ पर वे बड़े से बड़े साधन इच्छा की अपेक्षा छोटे ही रहते हैं । एक वस्तु मिली कि दूसरी की चाह हुई । धन, मान, बढ़ाई, प्रशंसा स्त्री, पुत्र, आदि चाहे कितने ही अधिक क्यों न हों मन उससे न अघाता है, न तृप्त होता है । मनोवाञ्छा पूरी होती ही नहीं, फलस्वरूप यह सदा अशान्त, इच्छुक, अभावग्रस्त जरूरत मन्द बना रहता है । इस विषम स्थित से बचाने की शक्ति देवों में है । वे देव यज्ञ से उत्पन्न होते हैं और प्रसन्न होने पर मनोवाञ्छा पूरी करते हैं ।

दिव्य भावों को देव कहते हैं, वे द्यु लोक में मस्तिष्क के मध्य केन्द्र ब्रह्मरन्ध्र में रहते हैं । दया, प्रेम, मैत्री, करुणा, सेवा, सहायता, आत्मीयता, प्रसन्नता सरीखे सूक्ष्म भावों में जब मनुष्य रमण करने लगता है उसे ऐसा उच्चकोटि का आत्मिक आनन्द आता है जिसकी तुलना में विषय भोग, धन और गर्व पोषण के सुख बहुत ही तुच्छ, बहुत ही नीचे दर्जे के दृष्टिगोचर होने लगते हैं । जिसने मिश्री नहीं चखी है उनके लिये गुड़ बढ़िया चीज है, पर जब वह मिश्री चख लेता है तो गुड़ को छोड़ कर उसे ही अपनाता है । मन जिन सांसारिक भोगों की तृष्णाओं में भटक रहा था, उनसे ऊँची अधिक स्वादिष्ट, अधिक रसमयी, कोई वस्तु उसके अनुभव में आती है तो वह घटिया चीज को छोड़ देता है । इस परिवर्तन के होते ही मनोवाञ्छा पूर्ण होने लगती है । दिव्य भावों का, दिव्य ज्ञान का, प्रकाश मानस लोक में फैलते ही अन्धकार दूर हो जाता है । मन अंधेरे में टटोलना, अनिमित दिशाओं में भटकता छोड़ कर एक सुनिश्चित आधार प्राप्त कर लेता है । छोटा बालक दुकानों की रंगविरंगी सभी चीजों के लिये ललचाता है, माँगता है और कभी-कभी मचल भी जाता है पर बड़ा आदमी उन चीजों की असलियत समझता है और उनकी ओर आँख उठा कर भी नहीं देखता । यदि कोई चीज खरीदता है तो उपयोगिता और आवश्यकता को ध्यान में रखता है, बालक की तरह ''चमकीली चीजों का संग्रह'' उनकी नीति नहीं होती । बालक की तृष्णा वयस्कता आने पर, चीजों की वास्तविकता का ज्ञान होने पर, अपने आप शान्त हो जाती है उसी प्रकार अज्ञानियों को हर घड़ी बेचैन बनाये रहने वाली अनेकों तृष्णाऐं तब आप शान्त होती हैं जब आत्मिक वयष्कता आती है, जब ज्ञान का, दिव्यता का प्रकाश होता है । सांसारिक सम्पदाओं की तुच्छता का तब अनुभव होता है, जब दिव्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भावों में रमण करने का रस उसे चखने को मिलता है । यह रसास्वादन उसकी तृष्णाओं को मनोवाञ्छाओं को शान्त कर देता है और एक ऐसी स्थिति सामने ला देता है जिसे पाकर और कुछ पाने की अभिलाषा नहीं होती इस प्रकार देवता-दिव्य भाव-हमारी सब मनोकामनाओं को पूरी कर देते हैं ।

यह देवता-दिव्य भाव-बढ़ते किस समय है ? जाग्रत किस तरह होते हैं ? प्रसुप्त किस तरह होते हैं ? इसका उत्तर गीता और श्रुति दोनों एक स्वर में देती हैं-देवता यज्ञ से प्रसन्न होते हैं । सत्कर्म को यज्ञ कहा है । कर्म से भावों की पुष्टि होती है । केवल मात्र विचार करते रहने से, कल्पना की तरंगों पर उड़ते रहने से, मनसूवे बाँधते रहने से, योजनाऐं बनाते रहने से, संकल्प करते रहने से कुछ अधिक प्रयोजन सिद्ध नहीं होता । मन के मोदक खाने भूख नहीं बुझती । भूख बुझाने के लिये तो थाली में परोसा हुआ अन्न सामने आना चाहिये । यह सत्य है कि कर्म से भाव की पुष्टि होती है । दो पहिये मिल कर जैसे एक गाड़ी को गतिवान बनाते हैं वैसे ज्ञान और कर्म मिलकर एक 'साधन' बनता है । देवता यज्ञ से बढ़ते हैं । सत्कर्म करने से देवताओं का, दिव्य भावों का बल बढ़ता है, इसलिये यदि हम मनोवाञ्छाऐं पूर्ण करने का अतुलित आनन्द उठाना चाहते हैं तो देवताओं को-दिव्य भावों को बढ़ाने वाले यज्ञों को, सत्कर्मों को करना चाहिये ।

जो दिव्य भाव मन में उत्पन्न होते हैं, उन्हें कार्य रूप में परिणत करना चाहिये । अपनी भीतरी बुराइयों को ध्यान पूर्वक देखना चाहिये जो त्रुटियाँ अपने में हों उन्हें हटाने के लिये उनके विरोधी आचरण करने चाहिये । जैसे प्रात: दिन चढ़े तक सोने की आदत हो तो बलात्, हठ पूर्वक जल्दी उठने की व्यवस्था करनी चाहिये । घड़ी में एलार्म भर कर या कोई जगाने वाला नियुक्त करके उस बुरी आदत का विरोधी आचरण आरम्भ कर देना चाहिये । इस विरोधी आचरण से ही उसका निवारण हो सकता है । इसी प्रकार जिन अच्छाइयों को बढ़ाने की आवश्यकता हो, उन्हें हठ पूर्वक बलात् करना चाहिये, मन न लगता हो तो भी बल पूर्वक इस काम को करना चाहिये । स्वाध्याय आत्मचिन्तन, सेवा, परमार्थ, आदि कार्यों में प्राय: मन की रुचि कठिनता से झुकती है । पर दृढ़ निश्चय के साथ लगातार, प्रतिदिन, उन कार्यों की पुनरावृत्ति करने पर फिर उसी प्रकार की आदत पड़ जाती है और उसी प्रकार के आचरण करने का स्वभाव बन जाता है । दिव्यता की स्थापना का विचार ही करना संकल्प है । क्या दिव्यता स्थापित की जाय ? किस प्रकार की जाय ? यह योजना मिश्रित करना मन्त्र है, उस योजना के अनुसार कार्य आरम्भ कर देना यज्ञ है ।

उस यज्ञ के लिये सामग्री क्या पड़े ? श्रुति कहती है-हे उत्तम से उत्पन्न हुए ! हे परमात्मा के युवराज ! **'यजस्व तन्वं'** अपने शरीर को यजन कर डाल । अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों को सत्कर्म में लगा डाल । जैसे पैसे खर्च करके बाजार से हवन सामग्री खरीद ली जाती है और दक्षिणा देकर जप करने वाले, अग्निहोत्र कराने वाले बुला लिये जाते हैं उस प्रकार इस अध्यात्म यज्ञ में काम नहीं चल सकता । इस यज्ञ में तो अपना शरीर हवन करना पड़ेगा । अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों को लगाना पड़ेगा । केवल धन खर्च करके कोई विद्या नहीं खरीद सकता, कोई बल नहीं खरीद सकता, कोई प्रेम नहीं खरीद सकता, इसी प्रकार धर्म भी नहीं खरीदा जा सकता, दिव्य ज्ञान भी नहीं खरीदा जा सकता । इस महान् यज्ञ में तो आत्म बलिदान करना पड़ेगा । मन को नियोजित करना पड़ेगा । और शरीर का श्रम लगाना पड़ेगा ।

शरीर की परवा मत करो । शरीर की इन्द्रियाँ जिन-जिन विषयों की ओर दौड़ती हैं उनकी परवा मत करो, मन की परवा मत करो, मनकी सायामयी भौतिक इच्छा, आकांक्षा और तृष्णाओं की परवा मत करो । इनको सत्कर्म रूपी यज्ञ में झोंक दो । वेद कहता है-हे सुजात् ! हे पवित्र ! हे दिव्य यज्ञ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर, देवताओं के लिये यज्ञ कर, अपने तन मन को सत्कर्म रूपी यज्ञ में झोंक दे । आत्ममेघ की आहुति देकर, इस महान् यज्ञ को पूरा कर ।

यह श्रुति की वाणी, पुकार, याचना सुनकर आत्मन् ! झिझको मत । यह मत सोचो कि पुराना स्वभाव, संस्कार, आत्म बलिदान के मार्ग से रोकेगा । पुराने साथियों का समाज विघ्न डालेगा और कहेगा, "सत्कर्म के त्याग , बलिदान और लोक सेवा के पथ पर मत चलो, इस मार्ग में कठिनाई है, वह पुराना संचय और भोग प्रधान मार्ग ही अच्छा है ।" पर तुम इस विघ्न से मत डरो । इससे मत झिझको, इस संकोच में मत रुको । क्योंकि यह अप्रचेता है, अज्ञान और मूढ़तामय है, तुच्छ है, उपेक्षणीय है । यह तुच्छ सा विघ्न तुम्हारा मार्ग नहीं रोक सकता । वह **किं ते कृणवत्** तेरा क्या कर लेगा ? ठुकरा देने पर तेरा क्या बिगाड़ कर सकेगा ? ठुकरा देने में किसी प्रकार का कुछ बिगाड़ नहीं है इस मूढ़मय को हटा देना ही श्रेयष्कर है ।

वेद कहता है । हे मनुष्य तू उत्तम से उत्पन्न हुआ है, नीच से नहीं । हे मनुष्य ! तू दिव्य है, घृणित नहीं । हे मनुष्य ! तू पवित्र है , अपवित्र नहीं । इसलिये अपने आत्म गौरव के अनुसार काम कर । देवता को बढ़ाने वाला यज्ञ कर । उस यज्ञ में अपने आप को झोंक दे । तेरा सारा जीवन ही यज्ञमय बन जाय । प्राचीनकाल में यज्ञों का महत्व केवल शास्त्र चर्चा या स्वाध्याय सतसंग तक ही सीमित नहीं था, अपितु जीवन का प्रत्येक क्षेत्र यज्ञमय रखने की साधना की जाती थी । एक अर्धनिष्ठ व्यक्ति के द्वारा जीवन भर जो कुछ भी किया जाता है, उसे शिक्षा दी जाती है कि वह सब यज्ञमय हो । श्रीमद्-भागवद् गीता में यज्ञ का महत्व बताते हुए भगवान श्रीकृष्णने कहा है-

देवान भावयताऽनेन ते देवा भावयंतुवः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवापस्यथ ।।

अर्थात्-इस यज्ञ से ही तुम-देवताओं सृष्टि की सम्पूर्ण कल्याणकारी शक्तियों को प्रसन्न करो । तब वे देवता स्वाभाविक ही तुमको भी प्रसन्न करेंगे । इस प्रकार परस्पर एक दूसरे को प्रसन्न करते हुए तुम सबका परम कल्याण होगा । क्योंकि-

इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।
तैर्दत्तान ऽप्रदायैभ्यो यो भुंक्ते स्तेन एव सः ।।

वे यज्ञ से प्रसन्न किये हुए देवता लोग तुमको सब प्रकार के सुख देंगे । परन्तु उनके दिये हुए उन सुखों की यदि तुम फिर उनको अर्पित किये बिना भोगोगे, तो चोर बनोगे । क्योंकि यज्ञ से प्रसन्न होकर, देवतालोग तुमको जो पदार्थ देंगे उन्हें फिर यज्ञ के द्वारा उनको अर्पित करके तुम सुख भोग करो । इस प्रकार यह सुख भोग का काम चलता रहेगा । यज्ञ करके जो सुख प्राप्त किया जाता है यही कल्याणकारी भी है ।

हमारे देश में चिरकाल, से यही परम्परा रही है । अग्निहोत्र तो मात्र इस तथ्य की ओर जन-सत्ता को लगाये रहने के लिये हुआ करता था । यह प्रकट सत्य है कि मनुष्य अपने समाज के साथ जितना अधिक स्नेह आलीयत, सहयोग सहकार सहानुभूति, प्रेम, करुणा, उदारता, स्थान आदि सद्गुणों का जितने अंशों में व्यवहार करता है उसके अनुरूप ही वह दूसरों को आत्मीयता, स्नेह, सहयोग और सच्ची सहानुभूति प्राप्त करता है । सुख के यथार्थ आधार यही है ।

धन हो, सम्पत्ति हो, शरीर भी सुन्दर और स्वस्थ हो पर उससे कोई प्रेम करने वाला न हो कोई दया करने वाला, सहयोग करने वाला न हो तो उसका जीवन, शुष्क नीरस और निष्प्राण सरीखा व्यतीत ही होगा । यह लाभ मनुष्य को तब मिलते हैं जब वह स्वयं भी दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करता है । हमें दूसरा व्यक्ति उतना ही प्रेम करता है जितना हम उसे करते हैं ।

परिवार को ही लीजिये । धर्मपत्नी बच्चे, छोटे भाई छोटी बहनें कमाई की दृष्टि से अनुपयोगी होते हैं फिर भी उनका प्रतिपालन प्रेम, स्नेह, करुणा, दया और उदारता के साथ उससे भी अधिक किया जाता है जितना मनुष्य अपने आपका नहीं करता । आगे चल कर जब वही व्यक्ति बुड्ढा हो जाता है तो बालकों की वह पूर्व कृतज्ञता ही उस पर बरसती है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

और वह अक्षम-स्थिति में भी शानदार जिन्दगी बिता लेता है । यही ब्रह्म यज्ञ है ।

मनुष्य अपनी शक्तियों का उपयोग परमार्थ के लिए जितना अधिक करेगा उसका प्रतिफल भी वह उतना ही अधिक पायेगा ।

सामान्यतः सत्कर्मों का एक क्षेत्र परिवार मान लिया गया है, पर मनुष्य की शारीरिक और बौद्धिक शक्ति और सामर्थ्य को देखते हुए वह सीमा विलकुल छोटी है । परमात्मा ने मनुष्य को जो विभूतियाँ और विशेषतायें दी हैं वह इस बात के लिए हैं कि वह सृष्टि के अन्य अबोध जीवधारियों के रक्षा, उत्पादन और विकास की बात सोचे । सत्कर्मों का दायरा व्यक्ति के रुधिर सम्बन्धों तक ही न रह कर समस्त मानव जाति और प्राणधारियों के लिए ही होना चाहिये । मनुष्य को उपलब्ध हुई विभूतियाँ इन्हीं ईश्वरीय प्रयोजनों की पूर्ति में व्यय होनी चाहिए । जो व्यक्ति ईश्वर की भाँति ही उसकी सृष्टि को सुखी एवं सुन्दर बनाने में अपने अस्तित्व, योग्यता, शक्ति, साधन और सामर्थ्य सौंपते रहते हैं ये मनुष्य जीवन के संयोग को सार्थक करते और आत्म-कल्याण का लाभ पाते हैं ।

यदि ऐसा न किया जाय तो मनुष्य से बढ़कर और कोई कृतघ्न न होगा । हमें इस संसार में जो कुछ प्राप्त है वह यज्ञ का प्रसाद ही है । अर्थात् दूसरों ने वह वस्तुयें उदारतापूर्वक हमारे लिए दान की हैं तभी हम आज भी समुन्नत स्थिति में खड़े हुए हैं । पिता ने वीर्य और माँ ने अपना रज, रक्त, मांस एवं पोषण देकर हमें अवतीर्ण किया, गुरुजन, शिक्षकगण ज्ञान देते हैं, वह पुस्तकें जो हम पढ़ते हैं सैकड़ों लोगों के श्रम और सहयोग से बनी हैं उन्होंने इन वस्तुओं के बनाने में अपनी शक्ति और समय न लगाया होता तो वह हमें कहाँ से मोहैया होतीं ? हमारे कपड़े, हमारा अन्न, हमारा निवास सब दूसरों के प्रत्युपकारों के मूर्तिमान स्वरूप हैं । जिस भावना से वह हमारे लिए उपलब्ध की गई हैं वही भावना और उदारता हम दूसरों के लिए व्यक्त न करें तो हम चोर ही कहे जायेंगे । स्वार्थ और परमार्थ के समन्वय से ही जीवन की पूर्णता का तलमेल बैठता है केवल स्वार्थ ही स्वार्थ का ध्यान रखा जाए तो मनुष्य जीवन अपूर्ण माना जायेगा । यही नहीं उसको सब ओर से निन्दा, भर्त्सना, असहयोग के दुष्परिणाम भी भुगतने पड़ रहे होंगे और वह निश्चय ही दुःखी भी होगा । संग्रही, स्वार्थी, तृष्णाएँ जिनकी कभी शांत नहीं होतीं जो दूसरों की बात कभी मन में भी नहीं लाते वे कभी सुखी नहीं रह सकते । उनके पीछे सैकड़ों अड़ेगे, सहयोग संघर्ष और अशान्ति के क्षण जुड़े हुए होंगे ।

इन दुःखों से छुटकारा पाने का एकमात्र यज्ञीय जीवन ही है । अग्निहोत्र तो उसका प्रतीक है, उसका ही महत्व है पर मूल बात यह है कि मनुष्य को त्यागी, परमार्थी और परोपकारी होना चाहिए । सत्कर्मों के द्वारा उसे अपनी उन्नति करनी चाहिए और अपनी योग्यता के द्वारा दूसरों की सुख, शान्ति और सुविधाएँ बढ़ाने में भी पूरा-पूरा सहयोग करना चाहिए ।

शास्त्रीय वाङ्मय इस तरह के उदाहरणों से भरा हुआ है कि जब तक इस देश में यह परम्पराएँ चलती रहीं यह देश सब प्रकार सुखी और सम्पन्न रहा, पुराण काल की सामाजिक स्थिति का वर्णन करते हुए मनीषा ने लिखा है-

ग्रामे ग्रामे स्थितो देवः देशे देशे स्थितो मरवः ।
गेहे गेहे स्थितो द्रव्यम् धर्मश्चैव जने-जने ।।

-भविष्य पुराण

हे राजन् ! इस देश में प्रत्येक गाँव में सुनिश्चित देवालय हैं प्रत्येक प्रांत में यज्ञ होते हैं घर-घर द्रव्य विद्यमान है । कोई दरिद्री नहीं । प्रत्येक मनुष्य यहाँ धर्म परायण है ।

बिना यज्ञ किये यहाँ कुछ भी ग्रहण न करने की परम्परा रही और उस जीवन पद्धति में भावनात्मक आदान-प्रदान ही आधारभूत रहा है ।

आज जीवन यज्ञ की इस परम्परा के घनिष्ट हो जाने के कारण ही सर्वत्र दुर्गति के लक्षण दिखाई दे रहे हैं । सामाजिक अशान्ति, उद्विग्नता के परिहार के लिए यज्ञीय परम्परायें ही एक मात्र आधार हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ द्वारा देवों का आवाहन

यज्ञों का महत्व बताते हुए शास्त्राकारों ने इसे देवों और मानवों में सम्पर्क सम्बन्ध व सहयोग के सघन सूत्र स्थापित करने वाला अमोघ उपाय कहा है । किसी भी कार्य में सफलता की प्राप्ति के लिए मात्र पुरुषार्थ ही पर्याप्त नहीं है और न केवल दैवी शक्तियाँ ही सब कुछ कर सकने में समर्थ होती हैं । कल्याणकारी प्रयोजनों की पूर्ति दोनों के सहयोग से ही होती है । इसी रहस्य को भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में इस प्रकार व्यक्त किया है-

सहयज्ञा प्रजाः सृष्टवा पुरोवाच प्रजापतिः ।
अनेन प्रसविंष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ।।
देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ।।
इष्टान्भोगान्हि वो देव दास्यन्ते यज्ञ भाविताः ।।
तैर्दत्तान प्रदायैभ्यो योभुङ्क्तेतेन एव सः ।।

-गीता ३/१०/११/१२

प्रजापति ब्रह्मा ने कल्प के आदि में यज्ञ संहिता प्रजा को उत्पन्न करके उससे कहा-इस यज्ञ द्वारा तुम लोग वृद्धि को प्राप्त होओ और यह यज्ञ तुम लोगों की इच्छित कामनाओं को देने वाला हो ।

तुम लोग इस यज्ञ द्वारा देवताओं को बढ़ाओ, वे देवता लोग तुम्हारी उन्नति करें । इस प्रकार आपस में कर्त्तव्य समझ कर उन्नति करते हुए परम कल्याण को प्राप्त होंगे ।

यज्ञ द्वारा बढ़ाये हुए देवता तुम्हारे लिए बिना मांगे ही अभीष्ट भोगों को प्रदान करेंगे ।

आयुर्यज्ञेन कल्पताम् प्राणौयज्ञेन कल्पताम् चक्षु योर्यज्ञेन कल्पताम् वाग्यज्ञेन कल्पताम् मनोयज्ञेन कल्पताम् आत्मा यज्ञेन कल्पताम् ।

अर्थात्- अपनी आयु, प्राण, इन्द्रियाँ, मन, आत्मा, आदि सर्वस्व को यज्ञ के समर्पण करो । इस मन्त्र में मनुष्यों को यह आदेश किया गया है कि वे अपना सर्वस्व यज्ञ के लिए लगादें । यज्ञ के द्वारा देवों से सम्बन्ध स्थापित करने की पूरी तत्परता से प्रयत्न करने के लिए मनुष्यों जैसी प्रेरणा देवों को भी दी गई है:-

देवो यजमानश्च सीदत ।

हे देवताओ! यजमान और तुम पास बैठो और इकट्ठे यज्ञ करो ।

मनुष्य का लाभ देवताओं से सम्बन्ध स्थापित करने, उन्हें सहयोग देने और बढ़ाने में ही है, क्योंकि इस प्रकार सन्तुष्ट और परिपुष्ट हुए देवता मनुष्य को अनेक सुख साधन एवं सुअवसर प्रदान करते हैं । महर्षि अङ्गिरा का वचन है:-

यज्ञादिभिर्देवाः शक्ति सुखादीनाम् ।

अर्थात्-यज्ञादि शुभ कर्मों से देवताओं को प्रसन्न करके मनुष्य शक्ति, सुख आदि सम्पदाएँ प्राप्त करता है ।

अब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि यह देव कौन हैं ? कहाँ रहते हैं ? इनसे हमारा क्या सम्बन्ध है और यज्ञ द्वारा वह क्यों सन्तुष्ट होते हैं ? यज्ञ द्वारा उनका पोषण किस प्रकार होता है ? उनका सहयोग मनुष्य को किस प्रकार प्राप्त होता है ? और उनमें ऐसी कौन सी सामर्थ्य है जिसके द्वारा संसार को लाभ पहुँचा सकें ? बिना यज्ञ के संसार को लाभ पहुँचाने में उन्हें क्या अड़चन होती है ? इन सब प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक है, ताकि उपरोक्त अभिवचनों का तात्पर्य ठीक प्रकार समझ में आ जावे ।

देव शब्द का स्थूल अर्थ देने वाला-सत्पुरुष ज्ञानी, विद्वान् आदि श्रेष्ठ व्यक्ति है । ऐसे पुरुषों को सहयोग देना, उनकी शक्तियों एवं कार्य पद्धतियों को सहायता करना यज्ञ है । ऐसे लोगों का भाव बढ़ाकर, उनके पक्ष में वातावरण तैयार करके तथा अन्य मार्गों से उनके उद्देश्यों को सफल बनाने में सहयोग देकर उनकी पूजा की जाती है । उपासना का अर्थ समीपता स्थापित करके, लाभ उठाना भी देव पूजा है । यदि हमारे मन में सत्पुरुषों के प्रति या उनके कर्मों के प्रति श्रद्धा न हो, उनका सहयोग या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अनुसरण न करें, अनुशासन न मानें तो वे इच्छा करते हुए भी हमारी सेवा नहीं कर सकते, हमें कोई लाभ नहीं पहुँचा सकते । इसलिए दोनों पक्षों में पारस्परिक स्नेह सम्बन्ध सहयोग एवं सद्भावना होना आवश्यक है । इस एकता को स्थापित करना ही यज्ञ है । जहाँ सदुद्देश्य के लिए सच्चे मन से दो व्यक्ति मिलते हैं वहाँ एक और एक मिलकर दो होने का नहीं वरन् एक+एक=ग्यारह (११) होने का सिद्धान्त लागू होता है उनकी सम्मिलित शक्ति दूनी नहीं, ग्यारह गुनी हो जाती है । इसी बढ़ी हुई शक्ति से दोनों ही पक्षों को अपरिमित लाभ होता है । यहाँ 'स्थूल यज्ञ की सांसारिक देव पूजा' हुई ।

दूसरे देवता वे हैं जो अदृश्य हैं । यह देवता ईश्वर की विविध प्रकार की सूक्ष्म शक्तियां हैं । वैसे तो ईश्वर एक ही है, उस की विभिन्न शक्तियाँ अलग-अलग हैं, उसके गुण और कार्य भिन्न-भिन्न हैं इन्हें ही देव कहते हैं । इसी प्रकार प्रकृति के अन्तराल में काम करने वाली सृष्टि में रचना, विकास, पोषण और संहार करने वाली अनेक शक्तियाँ हैं, यह भी देव कहलाती हैं । अनेकों ग्रहों और मण्डलों से जो प्रभाव किरणें हम तक आती हैं । उन्हें भी देव कहते हैं । सूर्य की किरणों में जो सप्त रंग एवं विविध गुणों वाली अल्ट्रावायलेट एल्फा, बीटा, गामा, एक्सरेज आदि धाराएँ काम करती हैं यह भी देव हैं ।

ग्रन्थों में ३३ कोटि देवताओं का वर्णन है । ३३ प्रकार के परिचय इस प्रकार हैं-वसु ८, रुद्र ११, आदित्य १२, अश्विनी कुमार १, पूषा १ यह देव शक्तियाँ इस विश्व के वातावरण में नाना प्रकार के परिवर्तन, उपद्रव, उत्कर्ष उत्पन्न करती रहती हैं ।

देवता ३३ प्रकार के, पितर ८ प्रकार के, असुर ९९ प्रकार के, गन्धर्व २७ प्रकार के, पवन ४९ प्रकार के बताये गये हैं । यह आश्चर्य, कौतूहल एवं अविश्वास की बात नहीं हैं । यह भरतीय सूक्ष्म विज्ञान के चिरकालीन प्रयत्नों एवं अन्वेषण के साथ की हुई खोज है । किसी समय इन शक्तियों की भारतीयों को भली प्रकार जानकारी थी और वे उनसे लाभ उठाकर समस्त प्रकृति के स्वामी बने हुए थे । कहा जाता है कि रावण के यहाँ देवता कैद रहते थे, उसने देवों को जीत लिया था या अपने वश में कर लिया था, वस्तुतः उसने इन अदृश्य शक्तियों की खोज करके उनका उपयोग, नियन्त्रण, संचालन, आह्वान और विसर्जन भली प्रकार जान लिया था । इसे ही अलंकारी रूप से देवताओं को कैद करना कहते हैं ।

पूर्व काल में अन्य लोकों तथा ग्रह नक्षत्रों तक मनुष्यों का आना जाना होता था । शरीर को अणु के समान छोटा या अदृश्य बना लेना, आकाश में अत्यन्त विशाल रूप में फैल जाना, जल पर चलना, आकाश में उड़ना आदि अष्ट-सिद्धि नवनिधि अनेक सिद्ध पुरुषों को करतलगत होती थी । यह सब कार्य सूक्ष्म प्रकृति की उन शक्तियों द्वारा सम्पन्न होते थे जिन्हें देव नाम से पुकारते हैं । प्रत्येक सूक्ष्म शक्ति को अध्यात्म विज्ञान के अनुसार एक-एक देव माना गया है । पंच तत्व देव-जल को वरुण देव, गर्मी को अग्नि, पवन को वायु देव, धरती को गौरी, आकाश को इन्द्र देव माना गया है । इसी प्रकार सृष्टि के अन्तराल में जो अनेक शक्तियाँ काम कर रही हैं । उनको भी देव संज्ञा दी गई है ।

अदृश्य शक्तियों के दो भाग हैं-एक चेतना दूसरा क्रिया, क्रिया प्रकृति से सम्बन्धित है, चेतना ब्रह्म का अंश है । जैसे सूर्य का स्थूल रूप अग्नि पिण्ड मात्र है, भौतिक विज्ञानी सूर्य को केवल अग्नि का गोला या भ्रमण शील एक ग्रह समझते हैं पर अध्यात्म विज्ञान के अनुसार स्थूल रूप के अतिरिक्त सूर्य में एक चैतन्य प्राण भी है । जो ब्रह्म से प्रेरणा प्राप्त करता है ब्रह्म रूप है । इसी प्रकार जल,वायु, अग्नि देवों के जो स्थूल रूप हैं, उनके अतिरिक्त उनमें एक चैतन्य आत्मा भी है जो ब्रह्म से सम्बन्धित है । जैसे मनुष्य के शरीर भीतर की प्राण चेतना के अनुसार कार्य करता है वैसे ही इन देवों की अन्तः चेतना ही उनकी दृश्य क्रिया का संचालन करती है । उस देव आत्मा से जब सम्बन्ध स्थापित हो जाता है तो उसके अनुसार इन जल वायु आदि के चलाने और रोकने का कार्य होने लगता है । इन्द्र की चैतन्य सत्ता को उपासना द्वारा प्रसन्न कर लिया जाय तो मनुष्य मन चाही वर्षा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कराने में सफल हो सकता है । गंगा की देव आत्मा को प्रसन्न करके भगीरथ पृथ्वी पर गंगा नदी को लाये और उसी जल धारा को इच्छित मार्ग से समुद्र तक ले गये । पूर्व काल में इसी प्रकार अन्य देवों को लोगों ने प्रसन्न किया है और अभीष्ट लाभ प्राप्त किये हैं ।

गणेश, सरस्वती, लक्ष्मी, काली, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, पूषा, अश्विनी कुमार, क्षेत्रपाल, भैरव, योगिनी, आदि देवता भी इसी प्रकार के हैं । यह शक्तियाँ मनुष्य पर अनेकों प्रभाव डालती हैं । जब इन देवों की स्थिति और मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति एक ही केन्द्र पर केन्द्रित होती है तो दोनों में पारस्परिक घनिष्ट सम्बन्ध हो जाता है । इसे ही देवता को प्रसन्न करना या सिद्ध करना कहते हैं । दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि किन्हीं साधना विशेष द्वारा अपने शरीर की धातुओं, चक्रों उपत्यकाओं, ग्रन्थियों को तथा ब्रह्मरंध्र के मस्तिष्कीय चुम्बक केन्द्र को ऐसा ढाल दें कि वे आकाश में फैली हुई अभीष्ट देव शक्ति को अपनी ओर खींच सके तो उस साधन को 'देवोपासना' कहेंगे । ऐसी देवोपासना जब सफल, हो जाती है तो अभीष्ट सत्परिणामों से उपासक को तृप्त कर देती है । पश्चिमी देशों के भौतिक विज्ञानी मशीन बनाने में संलग्न होकर रुद्र की बारात को प्रसन्न कर रहे हैं, हमारे पूर्वज आत्म साधना, तपश्चर्या मन्त्र, योगाभ्यास, यज्ञ आदि क्रियाओं से देव तत्वों की सूक्ष्म आत्मा से अपना सम्बन्ध स्थापित करके उनकी महान् शक्तियों का भरपूर लाभ उठाते थे ।

देव शक्तियों का परिचय उनके गुण धर्म, उनके सान्निध्य से प्राप्त होने वाले लाभ, उनकी आकृति एवं बाहनों का रहस्य उनकी उपासनाओं की विधियों का अन्तर, साधना मार्ग की कठिनाई, सफलता के रहस्य आदि का बहुत विस्तृत विज्ञान है । प्रस्तुत प्रसंग में उन सब बातों का वर्णन संभव नहीं इस समय तो इतना ही कहना पर्याप्त है कि यज्ञ द्वारा 'देव' प्रसन्न होते हैं । यज्ञों में जिन मंत्रों का पाठ किया जाता है । उनका उपरोक्त प्रतिपादन से गहरा सम्बन्ध है ।

वेद मंत्रों का गठन ऐसे विलक्षण एवं विज्ञान सम्मत ढंग से हुआ है कि उनका विधि पूर्वक शुद्ध उच्चारण करने से आकाश में एक विशेष प्रकार के कम्पन उत्पन्न होते हैं । विशेष उद्देश्यों या विशेष कार्यों के लिए, विशेष मंत्रों का उच्चारण करने से एक ऐसी ध्वनि लहर उत्पन्न होती है जो अपनी देह के कुछ देव केन्द्रों को झंकृत करती है और आकाशस्थ देव शक्तियों को प्रभावित करती है । जिस प्रकार ब्रह्माण्ड में सभी देव शक्तियाँ व्याप्त हैं, उसी प्रकार पिण्ड (देह) में भी उनका कोई विशिष्ट स्थान निर्धारित है । मन्त्र को शब्द ब्रह्म कहा गया है, मन्त्र की शक्ति को बज्र या ब्रह्मास्त्र भी कहते हैं इस शक्ति का उद्भव मन्त्रोच्चारण से होता है और पिण्ड (देह) गत तथा ब्रह्माण्ड (आकाश) गत वह देव शक्ति आपस में सम्बन्ध स्थापित करती है । परस्पर आलिंगन करती है और दोनों में सान्निध्य एवं सामीप्य स्थापित होता है । यजमान और देव में सम्बन्ध स्थापित करने की महान शक्ति मौजूद है । स्थूल रूप से मन्त्रों में ईश्वर की प्रार्थना है तथा कुछ शिक्षाप्रद उपदेश हैं यह बातें कुछ अधिक महत्व की नहीं हैं । यह कार्य गद्य प्रार्थना तथा पद्य कविता आदि से भी हो सकता है । जैसे सूर्य स्थूल रूप से अग्नि पिण्ड और सूक्ष्मरूप से प्रसविता सविता है, उसी प्रकार मन्त्र स्थूल रूप से 'शिक्षाप्रद प्रार्थना' और सूक्ष्म रूप से सृष्टि की अत्यन्त ही महत्वपूर्ण एवं प्रचण्ड शक्ति शाली देव शक्तियों से जीवन का सान्निध्य कराने वाले रहस्य पूर्ण माध्यम हैं । मन्त्र की शक्ति महान् है इसीलिए तुलसी दास जी ने कहा है-

मन्त्र परम लघु जासु बस, विधि हरि हर सुर सर्व ।
महामंत्र गजराज कहुँ, वश कर अंकुश खर्व ।।

मन्त्र शब्द ब्रह्म है । शब्द की महान शक्ति से हमारे ऋषि परिचित थे । नवीन विज्ञान से ईश्वर तत्व में शब्द तरंगों के द्रुत गति से भ्रमण करने की गति विधि का पता लगाकर बेतार के तार का आविष्कार किया । शब्द एक सजीव सत्ता है जो हजारों मील प्रति सैकण्ड की गति से दौड़ती है । ईश्वर तत्व में विद्युत प्रवाह के दौड़ने की गति विधि का पता लगाकर विज्ञान ने प्रक्षेपास्त्र (मिसाइल) बनाये हैं जो बटन दबाते ही अपने आप आकाश में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उड़ जाते हैं और शब्द बेधी बाण की तरह वहीं गिरते हैं, जहाँ गिरने के लिए उन्हें प्रेरित किया जाता है । यह यन्त्र विद्युत प्रवाह की प्रेरणा से स्वच्छन्द आकाश में अपने आप दौड़ते हैं और प्रेरक की इच्छानुसार गति दिशा एवं दूरी के लिए वे आज्ञाकारी दूत की तरह दौड़ते हैं । मन्त्र को आध्यात्मिक 'मिसाइल' कह सकते हैं ।

मन्त्र की रचना शब्द विज्ञान रहस्यों के आधार पर होती है । किस शब्द के बाद कौन-सा शब्द रखने से किस प्रकार का, किस विद्युत शक्ति का प्रवाह उत्पन्न होता है इस रहस्य को अभी पाश्चात्य विज्ञान नहीं जान पाया है, पर हमारे पूर्वज जानते थे । अमुक क्रम शब्दों को रखने से, मुख के अमुक-अमुक अंगों का अमुक क्रम में संचालन होता है और उनके कारण शरीर के अमुक ज्ञान तन्तुओं, चक्रों, संस्थानों, ग्रन्थि गुच्छकों एवं उपत्यकाओं में अमुक प्रकार की हलचल उत्पन्न हो जाती है । उस हलचल की क्रिया प्रतिक्रिया की उथल-पुथल से एक विशेष प्रकार का विद्युत प्रवाह आकाश में उत्पन्न होता है, और उस विद्युत प्रवाह को मिसाइल यन्त्र की तरह अभीष्ट स्थान तक भेजा जा सकता है । वैज्ञानिक लोग अब ऐसा उपकरण बना रहे हैं जो चन्द्र लोक तक यात्रा कर सके । मन्त्र का प्रक्षेपास्त्र इसी प्रकार का है जो लोक लोकान्तरों तक आसानी से पहुँच जाता है । उसकी पहुँच देवों तक, देव लोकों तक, देव शक्तियों तक भली प्रकार हो जाती है ।

मारण-किसी व्यक्ति को जान से मार डालना, मोहन-किसी व्यक्ति को मोहित कर लेना, उच्चाटन किसी व्यक्ति का मन जमे हुए काम, स्थान या विचार पर से उचाट देना, वशीकरण हिप्नोटिज्म की भाँति किसी व्यक्ति को आज्ञानुवर्ती बना लेना, स्तम्भन किसी की शक्तियों को जड़ बना देना, आदि निकृष्ट कोटि के चमत्कार तो मन्त्र बल से छोटे तांत्रिक भी दिखा देते हैं । जिनने योग साधना की है उनके मन्त्र अष्ट सिद्धि और नवनिधि के चमत्कारों से परिपूर्ण हो जाते हैं । वे प्रकृति के प्रत्येक भाग पर काबू पा लेते हैं । प्रकृति के नियम उनके कार्य में बाधक नहीं होते, वे ऐसे कार्य भी कर सकते हैं । जो देखने में प्रकृति विरुद्ध एवं असम्भव दिखाई पड़ते हैं । शस्त्र और यन्त्रों का संचालन मन्त्रों द्वारा करने की विद्या तो हमारे देश में किसी समय बहुत साधारण हो गई थी । मन्त्र बल से परम पद को प्राप्त करने तथा आत्मा को परमात्मा बना देने तक की सफलता ऋषियों ने प्राप्त की थी । मन्त्र की शक्ति को तुच्छ समझना एवं उसका उपहास करना भूल है । हमें भली प्रकार जान लेना चाहिए कि यह एक अत्यन्त ही प्रभावशाली विज्ञान है आज विद्या अपनी हीन अवस्था में भले ही पहुँच गई हो पर किसी समय वह उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर थी और ऐसी आशा करनी चाहिए कि उनका पुनः उत्कर्ष होगा ।

शब्द की शक्ति महान् है, फिर वेदों में जिस वैज्ञानिक ढंग से शब्दों का गुम्फन हुआ है उसकी महत्ता तो अनिवर्चनीय ही है । इन शब्दों का मर्म एवं रहस्य कोई ठीक प्रकार समझ ले, इनकी शिक्षाओं के अनुसार आचरण करे अथवा इन दिनों में छिपी विद्याओं एवं शक्ति से अवगत हो जाए तो उसके लिए यह मन्त्र कामधेनु के समान सब कुछ दे सकने वाले बन जाते हैं । महर्षि पंतजलि का ऐसा ही अभिमत है-

एक शब्दःसम्यग् ज्ञातः सुप्रयुक्त, स्वर्गे लोके कामधुग्भवति ।

-महाभाष्य

श्रुति का एक शब्द भी ठीक प्रकार जानकर उसको भली प्रकार काम में ले आवे, तो एक शब्द ही कामधेनु तथा स्वर्गीय सुख का दाता होता है ।

देव शक्तियों का संतुलन

वेद ने यज्ञ के तीन क्षेत्र माने हैं (१) ब्रह्माण्ड (२) देह (३) संसार ।

(१) निखिल विश्व ब्रह्माण्ड में अनेकों ज्ञात एवं अज्ञात प्रक्रियाएँ चलती रहती हैं, उनके पीछे अनेक अदृश्य शक्तियाँ काम करती हैं, ग्रह नक्षत्रों का प्रभाव, ऋतुओं का परिवर्तन, इन्द्र, वरुण, रुद्र, मरुत आदि देव शक्तियों की गतिविधि, मानव जाति के भावों एवं कर्मों की प्रतिक्रिया आदि के कारण अखिल ब्रह्माण्ड में जो सूक्ष्म हलचलों होती रहती हैं उनको आकाशी यज्ञ माना गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(२) पंच तत्वों से देह का संचालन, प्राण, अपान, त्याग आदि वायु, बात पित्त, कफ, मनबुद्धि चित्त अहंकार, एवं पंच कोषों की गतिविधि को देह गत यज्ञ कहते हैं । इन दोनों यज्ञों के सुसंचालित रहने से संसार की सुख शान्ति स्थिर रहती है । दोनों में से जो भी यज्ञ बिगड़ जाता है उसी से अनेक प्रकार की विकृतियाँ एवं आपत्तियाँ पैदा हो जाती हैं । ब्रह्माण्ड यज्ञ में गड़बड़ी हो तो भूकम्प, दुर्भिक्ष, तूफान, अति वृष्टि, अनावृष्टि, रोग, महामारी आदि सामूहिक विद्वेष, विक्षोभ, युद्ध, भय, शोक सामने आते हैं । देह के यज्ञ में गड़बड़ी हो तो अस्वस्थता, दुर्बलता, अल्पायु, निराशा, चिन्ता दुर्भाव, मतिभ्रम, आदि की उत्पत्ति होती है ।

(३) तीसरा यज्ञ 'हवन' है । इसके द्वारा उपरोक्त दोनों यज्ञों का विकृति एवं क्षति की पूर्ति की जाती है । जब वायु मण्डल में शीत की अधिकता होती है तो आग जला कर कमरे को गरम कर लेते हैं । जब शरीर में कोई विटामिन आदि पदार्थ कम पड़ जाता है तो उसे ओषधियों या इंजेक्शनों द्वारा शरीर में पहुँचाते हैं । इसी प्रकार हवन द्वारा हव्य पदार्थों एवं शक्तिशाली वेदमंत्रों द्वारा पिण्ड एवं ब्रह्माण्ड में हो रहे यज्ञों का संतुलन ठीक करके संसार में सुख शान्ति की स्थापना की जाती है ।

इन तीनों प्रकार के यज्ञों का वर्णन शास्त्रों में जगह जगह पर आता है । ब्रह्माण्ड गत देव शक्तियाँ लोक लोकान्तरों के जीवों की शान्ति सुरक्षा तथा उन्नति के लिए सदैव संलग्न रहती हैं । अपने आपको उनका निरन्तर परमार्थ में जुटाये रहना यह यज्ञ ही तो है ।

अखिल ब्रह्माण्ड में देव शक्तियों का जो कार्य-यज्ञ-चल रहा है उसका वर्णन कई स्थानों पर आता है । *गोपथ ब्राह्मण १/१३* में कहा गया है-

तमाहरत् येना यज्ञत तस्याग्निर्होताऽऽसीत् वायु-रध्वर्युः ।
सूर्य उद्गाता चन्द्रमा ब्रह्मा पर्जन्य सहदस्यः ।।

अर्थात्-अग्नि होता, वायु अध्वर्यु, सूर्य उद्गाता, चन्द्रमा ब्रह्मा और मेघ सदस्य हैं । यजुर्वेद में कहा गया है-

सप्तस्यासन परिधय त्रिसप्त समिधः कृताः देवा यज्ञ मतन्वानाऽअवध्नन्पुरुषं पशुम् । यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत, वसन्तो स्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ।

अर्थात्-यज्ञ की वेदी सात परिधियों वाली है। उसमें २१ समिधाएँ हैं । ऐसा यज्ञ देवताओं द्वारा फैलाया हुआ है, पशु रूप पुरुष इस यज्ञ से बँधा हुआ है । पुरुष की हवि प्राप्त करके देवता इस यज्ञ को विस्तृत करते हैं ।

अथर्व वेद ११/१०/२९ में देह को यज्ञ बताया गया है ।

अस्थि कृत्वा समिधं तदष्टापो असादयन् ।
रेतः कृत्वाऽऽज्यं देवाः पुरुषमाविशन् ।।

अर्थात्- अस्थियों को समिधा, वीर्य को घी, मानकर आठ प्रकार के रसों को लेकर सब देवताओं ने पुरुष की देह में प्रवेश किया ।

शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है-

पुरुषो वै यज्ञः पुरुषस्तेन यज्ञो यद्वेनं पुरुषस्तनुते ।।

अर्थात्- यह पुरुष देह ही यज्ञ है क्योंकि इसी से यज्ञ किया जाता है ।

जो देव शक्तियाँ आकाश में सृष्टि संचालन करती हैं वे ही मनुष्य शरीर में प्रवेश किये हुए हैं, दोनों का परस्पर घनिष्ट संबंध है । सर्दी, गर्मी, प्रकाश, वायु, अन्न, जल आदि ब्रह्माण्ड से पिण्ड को मिलते हैं । इसी प्रकार इन्द्रियाँ देव शक्तियों के अधीन हैं । प्रकाश न हो तो नेत्र क्या करें ? वायु न हो तो नेत्र बेकार हैं, शब्द न हो तो कान क्या सुनें ? पिण्ड और ब्रह्माण्ड गत दोनों ही क्रिया कलाप यज्ञ-आपस में सम्बन्धित हैं । एक यज्ञ से दूसरा यज्ञ होता है । शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है-"यज्ञाद्यज्ञं निर्मिता इति" अर्थात् मैं यज्ञ से ही यज्ञ को बनाता हूँ । ऐसा ही वेद वचन भी है । **"यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् । यज्ञेन यज्ञ मयजन्त देवाः ।"** अर्थात् यज्ञ द्वारा ही यज्ञ बने हैं । देवता यज्ञ से ही यज्ञ कर रहे हैं । उस यज्ञ का घी-बसन्त ऋतु, ईंधन-ग्रीष्म ऋतु और हवि शरद ऋतु है ।

इसी प्रकार देह में जो देव शक्तियां काम कर रही हैं उनके परमार्थ यज्ञ के कारण ही हम जीवन धारण किये हुए हैं । वायु द्वारा श्वाँस प्रश्वास, अग्नि द्वारा पाचन, वरुण द्वारा रस रक्त का प्रवाह,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पृथ्वी से हड्डियाँ, सूर्य द्वारा नेत्र, पूषा द्वारा श्रवण शक्ति, आदि का संचालन होता है । इनके अतिरिक्त देह के विभिन्न भागों में विभिन्न देवताओं के स्थान हैं । मस्तक का ब्रह्मरंध, सहस्त्रदल कमल, कुण्डिलिनी शक्ति का कर्म, आज्ञा चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र, मणिपूर चक्र, अनाहत चक्र, सूर्य चक्र, इडा पिंगला सुपन्ना आदि में देवों का निवास है । मन बुद्धि चित्त अहंकार एवं अनेक मानसिक संस्थानों से भी अदृश्य लोकों की देव शक्तियां सम्बन्धित है ।

सवह्याास्मिन्देवता शरीरेऽधि समाहिताः ।

-प्राणाग्नि उपनि

इस शरीर में ही सब देवता समाये हुए हैं ।

स्माद्वै विद्वान् पुरुषमिदं ब्रह्मेति मन्यते सर्वाह्यरिमन्देवता गावो गोष्ठ इवासते ।।

-अथर्व ११ ८/३२

इस पुरुष को जानने वाला ज्ञानी यह ब्रह्म है ऐसा कहता है । क्योंकि जैसे गौशाला में गौएँ रहती हैं वैसे ही इसमें सब देवता रहते हैं । इस पिण्ड और ब्रह्माण्ड के मध्य में निरन्तर होते रहने वाले यज्ञों में परस्पर बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है । जब तक इन दोनों का सम्बन्ध सूत्र ठीक रहता है तब तक शरीर और मन पूर्ण स्वस्थ रहता है जब यह सम्बन्ध बिगड़ने लगता है तो उनमें विकृति पैदा हो जाती है ब्रह्माण्ड गत देव शक्तियों की स्थिति में थोड़ा भी हेर फेर हो जाने पर लोक लोकान्तरों में नाना प्रकार के उपद्रव आरम्भ हो जाते हैं । आकस्मिक विपत्तियाँ एवं बाधाऐं खड़ी होती हैं ।

देहगत एवं आकाशगत देवताओं की अप्रसन्नता अव्यवस्था एवं असंतुलन को ठीक करने की चिकित्सा 'यज्ञ' है । वेद मंत्रों के महत्व पूर्ण उच्चारण, विशेष वृक्षों की समिधा, विशेष प्रकार के हव्य एवं विशेष, विधि विधानों का सामूहिक आयोजन इन देवों को सन्तुलित प्रसन्न एवं परिपुष्ट बनाकर सभी प्रकार की स्थिरता एवं सुखदायक अनुकूलता उत्पन्न करता है ।

यज्ञ द्वारा देव-शक्तियों की तुष्टि

सृष्टि-संचालन करने वाली ईश्वर की शक्तियों का नाम देवता है । यह अनेक शक्तियाँ अनेक देवताओं के नाम से कही जाती है । इनका समस्त संसार की विभिन्न समस्याओं से तथा मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन की सुख-समृद्धि, उन्नति-अवनति, हानि-लाभ, रोग, शोक आदि से अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है । इन देव शक्तियों की अनुकूलता प्राप्त करके मनुष्य बड़ी सरलता पूर्वक अपनी उन्नति का द्वार खोल सकता है और यदि वे देव प्रतिकूल हों तो मनुष्य का कठोर परिश्रम भी निष्फल चला जाता है । देव शक्तियों को अनुकूल बनाने के लिए जितने भी साधन आदि याज्ञिक क्षेत्र में गिनाये गये हैं उनमें यज्ञ सर्वश्रेष्ठ है । यज्ञ से देवता आदि प्रसन्न होते हैं और अभीष्ट परिणाम प्रदान करते हैं, इसके अनेक प्रमाण उपलब्ध होते हैं । उनमें से कुछ नीचे दिये जाते हैं-

मत्स्य उवाच-

प्रीयतां पुंडरीकाक्षः सर्वयज्ञेश्वरो हरिः ।
तस्मिन्स्तुष्टे जगत् तुष्टं प्रीणिते प्रीणित भवेत् ।।

- अध्याय २३९ श्लो. ३८

अर्थ- कमलनयन भगवान् विष्णु यज्ञ से प्रसन्न होते हैं । उनके सन्तोष में जगत् सन्तुष्ट है, प्रसन्नता में जगत प्रसन्न होता है ।

दैत्यराज बलि के यज्ञ में स्वयं वामन रूप धारण कर भगवान् जनार्दन को आना पड़ा । अतिथि रूप में नहीं अपितु अभ्यागत रूप में ।

व्रतोपवासैर्विविधैः प्रतिसंग्राह्यतेहरि ।
स चेद्वक्ष्यति देहीनि गोविन्दः किमतोऽधिकम् ।।२०।।

-अध्याय २४६ श्लोक २०

जो प्रभु नाना प्रकार के व्रत, उपवास करने पर दुर्लभता से प्राप्त होता है, वही गोविन्द यदि दान देने के लिये कहे, इससे अधिक और क्या हो सकता है । यह सब बलि के यज्ञ का ही प्रभाव है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किन-कर्मों से किन फलों की प्राप्ति होती है ऐसी ऋषियों के पूछने पर हंस ने कहा-

यज्ञेनलोकानाप्नोति पाप नाश हुतेन च ।
जप्येनकामानाप्नोतिसत्येनचपरां गतिम् ।।

-विष्णु धर्मोत्तर पुराण, अध्याय १३७, श्लोक

अर्थ- मनुष्य यज्ञ करने से विष्णु इत्यादि लोकों को प्राप्त करते हैं, हवन करने से पापों का नाश होता है, जप करने से कामादि भोगों को प्राप्त करते हैं और सत्य बोलने से परम पद की प्राप्ति होती है ।

हंस यज्ञ की प्रशंसा वर्णन कर रहे हैं-

यज्ञेनदेवा जीवन्ति यज्ञेन पितरस्तता ।
देवाधीनाः प्रजासर्वा यज्ञाधीनाश्चदेवताः ।। १।।
यज्ञोहि भगवान्विष्णुर्यत्र सर्व प्रतिष्ठितम् ।
यज्ञार्थं पशवः स्त्रष्टा देवास्त्वौषधयस्तथा ।। २ ।।
यज्ञार्थं पुरुषाः स्त्रष्टाः स्वयमेवस्वयं भुवा ।
यज्ञश्च भूत्यै सर्वस्य तस्माद्यज्ञ परो भवेत् ।। ३।।
यज्ञाशिष्टासिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ।
धनंयद्यज्ञ लानाँदेवस्वं तविदुबुधाः ।। ४ ।।
यज्ञेन सम्यक्पुरुषस्तु नाके सम्पूज्यमानास्त्रिदशै र्महात्मा ।
प्राप्नोति सौख्यानि महानुभावास्त स्मात्प्रयत्नेन यछेत यज्ञैः ।। ७ ।।

-विष्णु धर्मोत्तर पुराण, अध्याय १६२

अर्थ- यज्ञ से देवता जीते हैं तथा पितृगण जीते हैं । देवताओं के अधीन सब प्रजा है और यज्ञ के आधीन सब देवता हैं । यज्ञ ही भगवान् विष्णु हैं, जिन विष्णु भगवान् में सब प्रतिष्ठित हैं । यज्ञ के लिये देवता तथा ओषधियों की सृष्टि की गई है ।

स्वयम्भूजी ने यज्ञ के लिये ही मनुष्यों की सृष्टि की और कहा -यज्ञ सबका कल्याणकारी है, इसलिये यज्ञ में तत्पर रहो । यज्ञावशिष्ट का भोजन करने वाले सब पापों से मुक्त हो जाते हैं, यज्ञशीलों के धन को पण्डितों ने देवस्थ 'दिव्य' माना है ।

यज्ञ के द्वारा महात्मा पुरुष स्वर्ग में जाकर देवताओं द्वारा अच्छी तरह पूजित होते हैं । हंस ऋषियों से कह रहे हैं हे महानुभाव ऋषियो ! यज्ञकर्त्ता महात्मा पुरुष स्वर्ग में जाकर अनेक सौख्यों को प्राप्त करते हैं, इसीलिये प्रयत्न पूर्वक यज्ञों द्वारा भगवान् का यजन करें ।

हंस जी हवन-विधि का ऋषियों से वर्णन कर रहे हैं-

अग्निर्मुख देवतानां सर्वभूत परायणम् ।
तस्यशुश्रूणादेव सर्वान्कामान्समश्नुते ।।
सा मूर्तिपरमाविष्णोस्तदत्त प्राप्नुते रविः ।
सूर्याद् वृष्टिस्तत स्त्वन्नात्प्रभवेत जगत् ।।
अधप्रवर्षिणोदेवा सौमास्तूर्ध्व प्रवर्षिणः ।
ऊर्ध्व प्रवर्षिणं मुख्य भौमदत्तं हुताशने ।।
वह्निदत्तेन हविषा तृप्ति मायान्ति देवताः ।
तास्तृप्ता स्तर्पयन्त्येन नरकाप्तसमृद्धिभिः ।।
होमेन पापं पुरुषो जहाति होमेन नाकं च तथा प्रयाति
होमस्तु लोके दुरितं समग्रं विनाश यत्येव न संशयोऽत्र ।।

-विष्णु धर्मोत्तर पु. अ. २८७ श्लोक ३,४,५,७,१५

अर्थ-सर्वभूतपरायण देवताओं का मुख अग्नि है, देवताओं की शुश्रूषा करने से ही कामों की प्राप्ति होती है । यज्ञाग्नि ही विष्णु की परम मूर्ति है उसी अग्नि में आहुति देने से सर्व हव्य को सूर्य प्राप्त करता है । सूर्य से वृष्टि से अन्न और अन्न से जगत् की उत्पत्ति होती है । ।।३,४।।

देवता नीचे की तरफ वर्षा करते हैं और मनुष्य लोग ऊपर की तरफ वर्षा करते हैं, अग्नि में ''भूमि से उत्पन्न'' हव्यों का हवन करना मुख्य ऊर्ध्वप्रवर्षण है । ।।५।।

अग्नि में हवि का हवन करने से देवताओं की तृप्ति होती है । वे देवता तृप्त होकर उस मनुष्य को इच्छित समृद्धि के द्वारा सन्तुष्ट करते हैं ।। ६।।

यज्ञ करने से आत्मा का मल दूर होता है और यज्ञ करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है, यज्ञ से लोक के समस्त दुष्कर्म नाश होते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं ।। १५।।

दैवेकर्मणियुक्तोहि विभर्तीदं चराचरम् ।।७५।।
अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्य मुपतिष्ठते ।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ।।७६।।

-मनुस्मृति, तीसरा अध्याय

अर्थ-जो देव होम कर्म में युक्त हैं, वह चराचर का पोषण करता है, क्योंकि अग्नि में डाली आहुति आदित्य को पहुँचती है और सूर्य से वृष्टि होती है, वृष्टि से अन्न, अन्न से प्रजा होती है । इसलिये जो यज्ञ करता है, वह सम्पूर्ण प्रजा का पालन करता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञैराप्यायिता देवा वृष्टयुत्सर्गेणवैप्रजाः ।
आप्याययन्तेधर्मज्ञयज्ञाः कल्याण हेतवः ।।८।।

-श्रीविष्णु-पुराण प्र. अंश अध्याय ६

अर्थ-हे धर्मराज ! यज्ञ से तृप्त होकर देवगण जल बरसाकर प्रजा को तृप्त करते हैं । यज्ञ सर्वथा कल्याण का हेतु है ।

भरद्वाज उवाच-

यो यज्ञैरिज्यते देवो वासुदेवः सनातनः ।
स सर्वे दैवत तनुः पूज्यते परमेश्वर ।।

-कूर्मपुराण पूर्वार्ध अ. २० श्लोक ४०

अर्थ- जो यज्ञों में सनातन वासुदेव का भजन करते हैं वह सब देवों के शरीर रूप परमेश्वर का पूजन करते हैं, अर्थात् सनातन वासुदेव का यज्ञों में यजन करने से सर्व देवताओं का यजन होता है ।

ब्रह्माजी ऋषियों को भगवान् शिव के प्रसन्न करने का साधन बताते हैं ।

तस्मादीश प्रसादार्थऽ यूयं गत्वा भवद्विजाः ।
दीर्घसत्र समाकृध्वं यूयं वर्ष सहस्त्रकम् ।।१।।

-शिवपुराण वि. स. १ अ. ४

अर्थ-(यज्ञ शिव को प्रसन्न करने का श्रेष्ठ साधन है) इसीलिये हे ऋषिगणो ! तुम सभी पृथ्वी पर जाकर एक सहस्त्र वर्ष तक दीर्घकालीन-विशाल यज्ञ करों ।

श्रीनारदीय महापुराण से ये वाक्य लिये गये हैं-

ये विष्णुभक्ता निष्कामा यजति परमेश्वरम् ।
त्रिसप्ताकुला संयुक्तास्ते याति हरिमन्दिरम् ।।

-वृहद नारदपुराण अ. ३९ श्लोक ६१

इसका भाव प्रायशः ऐसा है-

''जो निष्काम भाव से यज्ञ के द्वारा परमात्मा का पूजन करता है वह अपनी इक्कीस पीढ़ियों को हरि-मन्दिर पहुँचाता है ।''

ये यजाति स्पृहा शून्या हरि भक्तान् हरिस्तथा ।
त एव भुवनं स पुनाति स्वाँघ्रिपाशुना ।।१।।

-वा. पु.अ. ३९ श्लोक ६४

सूतजी ऋषियों से कहते हैं-

''जो ममता के बिना ईश्वर तथा ईश्वर-भक्तों को यज्ञ के द्वारा पूजते हैं, वही अपने चरण-रज से सारे संसार के पवित्र बनाते हैं ।

देव देव पतिः साक्षाद्विष्णुर्वामनरूप धृक् ।
तुष्टाव यज्ञं वह्निं च यजमानमथर्पित्वजः ।।
यज्ञ कर्माधिकार स्थानसदस्यान्द्रव्यसंपदः ।।

-वामन पुराण ३७/४६

अर्थ- देवाधिदेव साक्षात् विष्णु भगवान् वामन रूपधारी ने यज्ञ तथा अग्निदेव को सन्तुष्ट किया, जैसे ऋत्विज् यजमान को करता है ।

शिवजी कहते हैं-

इज्यया चैव मन्त्रैण मामेव हि यजन्ति ये ।
न तेजां भयमस्तीति भव रुद्रं यजन्ति यत् ।। ४३।।

-मत्स्य पुराण अध्याय १८३/१ ला. ४२

अर्थ- यज्ञ व मन्त्र से जो मेरा ही पूजन करते हैं, जो रुद्र का यजन करते हैं, वे भय रहित हो जाते हैं ।

अविमुक्तें यजन्ते तु मद्भक्ताः कृतनिश्चया : ।
तेषां पुनरावृत्तिं कल्प कोटिशतैरपि ।।२४।।

-अध्याय १८३/१ ला. २४

अर्थ- दृढ़ निश्चययुक्त मेरे भक्त मुक्ति के लिये यदि यज्ञ से मेरा यजन करें तो सैकड़ों, करोड़ों कल्पों तक उनकी संसार में पुनरावृत्ति नहीं होती ।

यज्ञाद्देवाः प्रजाश्चैव यज्ञादन्नानि योगिनः ।
सर्वसज्ञात्सदाभाविस् सर्वयज्ञमयज्जगत ।।१४०।।

-कालिका पुराण अध्याय ३१

अर्थ- यज्ञ से देवता व प्रजा सन्तुष्ट होते हैं । यज्ञ से अन्न की उत्पत्ति होती है । यज्ञ करने से ही संसार हमेशा शोभा पाता है । यह सारा संसार यज्ञ रूप ही है ।

यज्ञेषु देवास्तुष्यन्ति यज्ञे सर्वम्प्रतिष्ठितम् ।
यज्ञेन धियते पृथ्वीयज्ञस्तारयति प्रजा ।।७।।

-कालिका पुराण अध्यायय ३२

यज्ञों से देवता सन्तुष्ट होते हैं । यज्ञों में सारा संसार प्रतिष्ठित है । पृथ्वी माता यज्ञ से धारण की हुई हैं । यज्ञ ही प्रजा को तारता है ।

भोक्ता स सर्व यज्ञानां शंकर परमार्थ ।

-सौर पुराण अ. ७ श्लो. १४

अर्थ- भगवान् शंकर यज्ञ के भोक्ता हैं अर्थात् भगवान् शंकर यज्ञ से प्रसन्न होते हैं ।

इज्यते सर्वयज्ञेषु ।

-सौ. पु. ७/३६

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थ- यज्ञ से भगवान् शंकर की पूजा होती है ।

यज्ञश्चान्येयजन्त्येवतर्पयन्ति जनार्दनम् ।
तेनचान्नेनदेवेशतृप्तिमच्छन्ति देवता ।।३८।।

-पद्म पुराण ५ वाँ खण्ड

''सत्पुरुष यज्ञ द्वारा भगवान् का पूजन करते हैं जिसके द्वारा देवता तृप्त होते हैं ।''

श्री पराशरजी इस सम्बन्ध में कह रहे हैं-

यज्ञ निष्पत्तये सर्वमेतद् ब्रह्मा चकार वै ।
चातुर्वर्ण्य महाभाग यज्ञ साधन मुत्तमम् ।।

अर्थ- हे महाभाग! ब्रह्माजी ने यज्ञानुष्ठान के लिये ही यज्ञ के उत्तम साधन रूप इस सम्पूर्ण चातुर्वण्य की रचना की थी ।

भगवान् ने ही यज्ञ को मानव का साक्षात् धर्म बतलाया है क्योंकि यज्ञ ने सारा संसार धारण किया है । इसका प्रतिपादन यजुर्वेद ने किया है-

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्चये ।।
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्द ꣳ सि जज्ञिरे तस्माद्यजुतस्माद अजायत ।।

-यजु. ११/६/७

अर्थ- परमात्मा ने यज्ञ से संसार के सब पशुओं को और ऋचाओं अर्थात् वेद ज्ञान ऋग्, यजु, साम, अथर्व से ही रचा और प्रकट किया और यज्ञ से ही इनको धारण कर रक्खा है ।

यज्ञ द्वारा देवताओं को जब उनका भाग प्राप्त नहीं होता, वे दुर्बल हो जाते हैं, फलस्वरूप संसार पर नाना प्रकार की आपत्तियाँ आती हैं यथा-

मार्कण्डेय उवाच-

यज्ञाभावातु देवानामन्नं सर्वक्षयंगतम् ।
पर्जन्याश्च ततोनष्टा स्ततो वृष्टिर्न्नचाभवत् ।११२।
वृष्टभावेतु लोकानामाहाराः क्षीणतांगता ।
दुर्भिक्षे व्यसनोपेते सर्वलोके द्विजोत्तमा ।।१३।।

-कालिका पुराण अध्याय २०

अर्थ-मार्कण्डेयजी कहते हैं कि यज्ञ के अभाव से देवों के अन्न का क्षय होता है । फिर बादलों के नष्ट होने से वर्षा का होना बन्द हो जाता है । वृष्टि के अभाव होने से मनुष्यों को भोजन की कमी हो जाती है और सब लोक अकाल-दुर्भिक्ष से ग्रस्त हो जाते हैं ।

यज्ञे विनष्टे सकलाः प्रजाः क्षुद्भयकातराः ।
वृष्टयभावान्महददुःखम्प्राप्यनेष्टाश्चात्मन ।।१६।।

-कालिका पुराण अध्याय २०

यज्ञों के बन्द होने पर सारी प्रजा भय से दुःखी हो जाती है और वर्षा के अभाव से प्रजा बहुत कष्ट पाकर नष्ट हो जाती है ।

नयज्ञा सम्प्रवर्त्तन्तेनतपस्यन्ति तापसाः ।
आहार दुःखानि श्री काः प्रजा क्षीणाभयातुराः ।।

यज्ञों और तपस्या के न करने से प्रजा आहार की कमी से उत्पन्न दुःख से, धन की कमी से तथा भय से व्याकुल हो जाती है ।

यज्ञ की महिमा अपार है । उसको विश्व क्षेत्र में विचरण करने वाला एक निर्द्वन्द्व साँड़ कहा गया है । इसकी शक्ति का सर्वत्र विजय घोष हो रहा है । यह यज्ञ रूपी साँड़ अपनी दहाड़ से संसार को कम्पायमान करता रहता है ।

चत्वारि श्रृंगा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्ता सो अस्य ।
त्रिधा वृद्धो वृषभो रोरवीति महोदेवो मर्त्या अविशेषे ।।

-गो. ब्रा. ३/७

अर्थ- ऋग्, यजुः, साम अथर्व चारों वेद इसके सींग हैं । प्रातः मध्यान्ह और सायंः सवन-ये इसके तीन पैर हैं । ब्रह्मौदन, प्रवर्ग्य दो मस्तक हैं । मन्त्र, कल्प, ब्राह्मण इन तीनों से मर्यादित है । इसके सात हाथ गायत्री आदि सातों छन्द हैं । ऐसा यज्ञ-वृषभ संसार में रोक कर रहा है ।

यज्ञों से देव-तत्वों की परिपुष्टि

'यज्ञ' शब्द 'यजयाचयतविच उप्रक्चरक्षो नङ्'

-३/३/९०

इस पाणिनिसूत्र से नङ् प्रत्यय करने पर बनता है और यज्ञ धातु का अर्थ 'देव पूजा सगंतिकरण दान' ऐसा पाणिनीय धातु पाठ में आया है । अतः देवताओं की पूजा, हरि द्वारा देवताओं की अर्चना का नाम ही यज्ञ है । जैसे इस जगत में प्रत्येक राष्ट्र को सुव्यवस्थित करने वाली राज-शक्ति विविध रूप में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हुआ करती है, उससे प्रजा पर आई व आने वाली आपत्ति को दूर किया जाता है, वैसे ही सम्पूर्ण भूमण्डल को आवश्यक वृष्टि आदि द्वारा सुव्यवस्थित करने वाली परमात्मा की विविध शक्तियों का नाम ही देवता हुआ करता है । जैसे राज्य-शक्ति को अनिवार्य कर (टैक्स) ठीक-ठीक प्रयोग न होने से चोरी, डाका आदि से प्रजा यदा-कदा संत्रस्त रहती है, वैसे ही दैव-शक्ति के खमुपवृहक यज्ञ यज्ञादि न होने से **'यज्ञे नष्टे देवनाशः ततः सर्व प्रणश्यति'** *(६०/६)* इस वायु पुराण के कथानुसार जल, वायु आदि भूतों पर देव-शक्ति के ठीक नियन्त्रण न रहने से अतिवृष्टि, अनावृष्टि, जलाप्लावन आदि प्रजा को संतप्त करने वाली भीषण विपत्तियाँ हुआ करती हैं ।

निरुक्त में **यज्ञःकस्मात् ? प्रखायातं यजति कर्म इति नैरुक्ता, यजुरन्नो भवतीति वा, यजूति एन यजनतीति वा'** *(३/१९/६)* यह कहकर यजन-देव-पूजन हवनादि का नाम 'यज्ञ'बताया गया है । इसमें देवों का सन्तर्पण होता है, जिससे वे जल-शक्ति, अग्नि-शक्ति आदि को नियन्त्रण में रखते हैं- जिससे इनके कारण प्रजा नष्ट नहीं होती । पर आजकल शासन के धर्म निरपेक्ष होने से उसमें वेदों तथा यज्ञों का यह महत्व नहीं रहा- जिससे हमें आये दिन उक्त दैवी विपत्तियों का सामना करना पड़ रहा है । पर यज्ञ-याग आदि दैवी कर्म करने से आधिदैविक विपत्तियाँ न आने से जगत् सुख की साँस ले सकता है ।

यज्ञ से सम्पूर्ण जगत् का पालन कैसे ?

बात यह है कि देवताओं को हमें उनका हव्य देना है । हम हैं स्थूल, पर देवता हैं सूक्ष्म । हम उन्हें हव्य देंगे, तो उन्हें कैसे प्राप्त होगा ? उन्हें तो सूक्ष्म हव्य चाहिए, तभी वे प्रसन्न होंगे । इसका उपाय सोचा गया था 'यज्ञ'। इसका दृष्टान्त भी समझ लेना चाहिए । हमें अपने आत्मा को भोजन देना है । हम भी स्थूल हैं, हमारा दिया हुआ भोजन भी स्थूल है, पर आत्मा हमारी सूक्ष्म है । उसे यह स्थूल भोजन कैसे मिल सकता है ? उसे चाहिए सूक्ष्म भोजन । उसका उपाय यह सोचा गया था कि हम उस स्थूल भोजन को मुख के द्वारा अपनी जठराग्नि में होम करें । ऐसा करने से वह जठराग्नि उस स्थूल भोजन को सूक्ष्म कर देती है । वही सूक्ष्म अन्न हमारे आत्मा को प्राप्त हो जाने से वह हमारे शरीर को स्वस्थ रखता है । यदि आत्मा को वह स्थूल अन्न न पहुँचाया जायगा, तो हमारा शरीर, मन, इन्द्रिय आदि सभी अस्वस्थ हो जावेंगे । फिर हम न अपना कोई लाभ कर सकेंगे, न दूसरों का उपकार । न कुछ बुद्धि द्वारा दूसरों का, न अपना कुछ हित सोच सकेंगे ।

जब हम अग्नि में हव्य डालते हैं, तब स्थूल अग्नि उस हवि को सूक्ष्म कर देती है और शान्त होकर स्वयं भी सूक्ष्म हो जाती है । तब वह सूक्ष्म अग्नि सूक्ष्म महाग्नि के साथ मिलकर उसे सूक्ष्म वायु की सहायता से आकाशाभिमुख जाती हुई द्युलोक में पहुँचकर देवों को सपर्पण करती है । वे देवता उस सूक्ष्म हवि से तृप्त होकर प्रजा के हित के लिये धान्य आदि की उत्पत्ति के लिये यथोचित वृष्टि कर देते हैं। जैसे कि मनुस्मृति में कहा गया है और उसी का बीज वेद में मिलता है-

'हविष्यान्तमजरं स्वविदि दिविस्पृशि आहुतं जुष्टमग्नौ' -

ऋ . सं. १०/८/८८

यहाँ श्री दुर्गाचार्य ने लिखा है-**'हवि पानतंदेवानां च पुरोडाशादि निर्दग्धस्थील भावमग्निता क्रियते । स्वः -आदित्यः, यं वेत्ति, यधाऽसौ वेदितव्यः-इति स्वविंद् अग्निः । दिविस्पर्शः- द्यामसौ स्पृशति हविरुपनयन् आदित्यम्'** ।

-निरुक्त ७/२५/१

इससे स्पष्ट हुआ कि जब हम देवताओं को प्रसन्न कर लेंगे, तो वह सम्पूर्ण चराचर स्थावर जङ्गम पालित रहेगा, क्योंकि सभी का निर्वाह वृष्टि एवं अन्न पर है । उन देवताओं को प्रसन्न करने का उपाय है-यज्ञ तो यज्ञ से देवपूजा सिद्ध हुई, अतः यज्ञ का महत्व सिद्ध हुआ ।

शास्त्रों की यह घोषणा है कि यज्ञ देवों को प्रसन्न करने के लिए किया जाता है, विचारिये ये देव कौन हैं ! इनका हमसे क्या सम्बन्ध है ? हम यज्ञ में इनकी उपेक्षा नहीं कर सकते और हमारे प्रति उनका भी कुछ कर्त्तव्य है । श्रीमद्भागवत्गीता में लिखा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देवान् भावयताऽनेन ते देवाः भावयन्तुवः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेय परमवाप्स्यथ ।।

प्रजापति ने कहा- इस यज्ञ के द्वारा देवों को प्रभावित करो- तृप्त करो, तृप्त हुए देव तुमको तृप्त करें । परस्पर तृप्त करते हुए आप सब परम कल्याण को प्राप्त करेंगे । विचारना चाहिए कि वे कौन से देव हैं, जिनको प्रजा यज्ञ के द्वारा तृप्त करती है और उसके बदले में सुख की अथवा अनुकूल स्थितियों की वर्षा से प्रजा को तृप्त कर देते हैं ।

इसकी खोज में जब हम निकलते हैं, हमें अग्नि, चन्द्र, पृथ्वी, सूर्य, ओषधि, वनस्पति आदि नामों में व्यवहृत देवों का पता लगता है । यज्ञ से इनकी तृप्ति कैसे होती है, यह भी विचार करना आवश्यक है । इसका एक स्थूल रूप मनु के श्लोक द्वारा स्पष्ट किया जाता है-

अग्नौ प्रस्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते ।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ।।

अग्नि में डाली हुई आहुति सूर्य किरणों में उपस्थित होती है । उनके संसर्ग से अन्तरिक्ष में इस प्रकार का वातावरण निर्मित हो जाता है, जिससे मेघों का संग्रह होने लगता है, वे समय पाकर पृथ्वी पर बरसते हैं, उस पर वृष्टि से यहाँ ओषधि, वनस्पति, लता, फल, फूल आदि विविध खाद्य पदार्थ न केवल मानव के, अपितु प्राणिमात्र के लिए उत्पन्न हो जाते हैं । ओषधि, वनस्पति, लता,फूल, फल आदि खाद्यों में विविध प्रकार की जीवन शक्तियाँ (खाद्योज) रहती हैं, जो फलादि का उपभोग करने से प्राणियों को जीवन प्रदान करती हैं । वे जीवन शक्तियाँ इनमें अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र पृथ्वी, जल आदि के प्रभाव से ही उत्पन्न हो पाती हैं । यदि हम यज्ञादि अनुष्ठान करके आज्य एवं अन्य विविध सामग्री को अग्नि के द्वारा उन देवों कर पहुँचाते रहते हैं, तो वे उन जीवन शक्तियों को अधिक और उत्तम रूप से उत्पन्न करने में समर्थ रहते हैं । यही यज्ञ के द्वारा देवों की तृप्ति का स्वरूप है । यदि हम यज्ञ नहीं करते तो यह विराट् रूप से प्रजापति के जो यज्ञ हो रहा है-सूर्य, चन्द्र किरणों द्वारा रस वर्षा करते हैं, ताप पहुँचाते हैं, वायु प्राण संचार करता है, जल अनुकूल रसों को प्रदान करता है और जो अत्यन्त सूक्ष्म कीटाणुओं के रूप में अनन्त राक्षस या असुर हमारे जीवन को चाट जाने के लिये हमारे चारों ओर मँडराते हैं, ये सब देव मिलकर उन असुरों का ध्वंस करने के लिए बराबर प्रयत्न करते रहते हैं । पर हमारे द्वारा यज्ञादि रूप में उन्हें सहयोग न मिलने पर, दूसरे मलीनता आदि का प्रसार करने वाले कार्यों से असुरों की संख्या में कल्पनातीत वृद्धि हो जाती है जिससे प्रजा में रोग आदि महामारी के रूप में फैल जाते हैं । प्रजा नष्ट होने लगती है । पर वह इसके आधार-भूत कारणों को नहीं समझ पाती और कष्ट उठाती है ।

यदि हम यज्ञ का बराबर अनुष्ठान करते हैं तो देवों को उससे पुष्ट बनने में पूरा सहयोग प्राप्त होता है । यज्ञ से वायु की शुद्धि का यही अभिप्राय है, केवल वायु पद तो उपलक्षण मात्र है उसका तात्पर्य सभी देवों की शुद्धि अर्थात् पुष्टि होने से है । समस्त वातावरण की शुद्धि ही यहाँ अपेक्षित है । इस प्रकार पुष्ट व तृप्त होकर समस्त देव उन असुरों का विनाश करने में पूर्ण समर्थ होते हैं, जिससे हमको दीर्घ जीवन प्राप्त होता है । यह शास्त्रों में स्पष्ट लिखा है कि यज्ञ देवों की खुराक है । शतपथ ब्राह्मण के वाक्य हैं-

प्रजापतिर्देवानब्रवीत् यज्ञो वोऽन्नम् ।
यज्ञ उ देवानामन्नम् ।।

प्रजापति ने देवों को बताया-यज्ञ आपका अन्न है खाद्य है, यज्ञ ही देवों का अन्न है । अब यदि हम यज्ञ न करके देवों को भूखा मरने देंगे तो निश्चय ही असुर बढ़ जायेंगे । मानव रोगी और क्षीण आयु होगा, जो आज सम्मुख स्पष्ट दीख रहा है ।

यह बात निश्चय है कि देव यज्ञ के द्वारा ही अपने कार्य सम्पादन करने के लिए शक्ति प्राप्त करते हैं । शतपथ ब्राह्मण में लिखा है-

यदु ह किंच देवाः कुर्वते स्तामेनैव त कुर्वते ।
यज्ञा वै स्तोमो यज्ञेनैव तत्कुर्वते ।।

देव अपना जो कुछ कार्य करते हैं वे स्तोम रूप साधन के द्वारा ही करते हैं । स्तोम यज्ञ का नाम है, इसलिए यज्ञ के द्वारा ही वे अपना कार्य करने में समर्थ होते हैं ।

प्रत्येक व्यक्ति इसको अनुभव कर सकता है कि यज्ञ के द्वारा चारों ओर के वातावरण में कुछ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुकूल प्रभाव पड़ता है या नहीं । जब अग्नि में आज्य अथवा अन्य उपयोगी शाकल्य द्रव्य आहुत किये जाते हैं, उनके दग्ध होने पर दूर अवस्थित व्यक्ति को विशेष प्रकार की सुगन्ध का स्पष्ट अनुभव होता है । आहुत द्रव्यों की जीवनोपयोगी शक्तियाँ अग्नि के द्वारा अति सूक्ष्म अवस्था में परिवर्तित होकर वायु आपस्, पृथ्वी, सूर्य-रश्मि आदि देवों में निहित उन जीवनी शक्तियों में अनुपम स्फूर्ति प्रदान करती हैं, जो खाद्य के रूप में आकर प्राणिमात्र को जीवन प्रदान करने वाली हैं ।

बहुत लोग डरते हैं कि यज्ञ में जो घृत आदि दग्ध कर दिया जाता है, यदि उसे किसी व्यक्ति को दे दिया जाय और वह उनका उपयोग करले, तो उसका भला हो जाय, उसे व्यर्थ जला देने से क्या लाभ ? वस्तुतः ऐसा विचार रखने वाले लोग जान-बूझकर अज्ञानी बनते हैं । एक व्यक्ति के द्वारा प्रयुक्त किया हुआ घृत आदि केवल उसी व्यक्ति को थोड़ा -बहुत लाभ पहुँचायेगा, पर उतने ही घृत का यज्ञाग्नि द्वारा यदि प्रयोग किया जाय, तो वह सहस्त्रों व्यक्तियों के लिये लाभप्रद होगा । इसीलिये तो यज्ञ त्यागमय व परोपकारमय है इसमें प्रत्येक व्यक्ति की सेवा की भावना निहित रहती है । यज्ञाग्नि में प्रदत्त एक आहुति सूक्ष्म होकर देवों में अनन्त जीवन शक्तियों को स्फूर्ति प्रदान करती है, जिनका लाभ सहस्राधिक व्यक्तियों को पहुँचने वाला होता है । यज्ञ सम्बन्धी इन भावनाओं को लेकर शतपथ ब्राह्मण में कुछ सन्दर्भ लिखे गये हैं, जो इन अर्थों पर सुन्दर प्रकाश डालते हैं-

ततोऽसुरा उभयीरोषधीर्याश्च मनुष्या उपजीवन्ति याश्च पशवः कृत्ययेव त्वन् विषेणंवं त्वत् प्रतिलिलिपुः उतैव चिद्देवानधि--भवेमेति, ततो न मनुष्या आशुर्न पशव आलिलिशिरे ता हेमाः प्रजा अनाशकेन नात्परावभूवुः । ... ते देवा होचुर्पन्तद मासामपि जघाँसामेति, केनेति ? तज्ञेनैवेति ।

-२/४, ३/२२/

असुरों ने उन समस्त ओषधियों को मारक तत्व अथवा विष से मानो लिप्त कर दिया, उसका उपयोग कर समस्त मानव व पशु अपना जीवन निर्वाह करते हैं, ऐसा करके उन्होंने यह सोचा, कि इस प्रकार हम देवों को परास्त कर लेंगे । पर उन औषधियों को उस अवस्था में पशुओं ने चुगा, उनका उपयोग न करने से समस्त प्रजा असुरों के द्वारा पराजित न की जा सकी ।

इस ब्राह्मण वर्णन में यह ध्यान देने योग्य है कि औषधियों में जब स्वास्थ्यनाशक असुर रूप कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं, उस समय उनका उपयोग न करना ही श्रेयस्कर है । इस प्रकार अन्नादि ओषधियों में प्रादुर्भूत असुर उनके उपयोग से प्राणियों के स्वास्थ्य को नष्ट कर देवों के कार्यक्रम को विध्वस्त कर देना चाहते हैं । यह ठीक है, कि ऐसी अवस्था में उन अन्नों का उपयोग न करने से भी तो कार्य नहीं चलता । बिना अशनपान के प्राणी कब तक जीवित रह सकता है ? फिर असुर भी ऐसे कपटी व धूर्त हैं, कि वे अपने आपको इतने स्पष्ट रूप में कब आने देते हैं, कि उन्हें कोई भी जान पहचान सके और उनकी मार से अपने आपको बचा सके । इसलिये असुरों को प्रायःछद्मवेषी कहा गया है, ये लुक-छिपकर आते हैं और देवों को चक्कर में डालकर परेशान करते हैं । इसीलिए उनसे सुरक्षित रहने के लिए उपर्युक्त ब्राह्मण सन्दर्भ की अन्तिम पंक्तियों में बताया गया है कि असुरों के आक्रमण को देखकर देवों ने आपस में सलाह की कि हमें इन ओषधियों में अन्तर्निविष्ट असुरों का हनन करना चाहिए । किसी ने पूछा, कि वह किस उपाय से किया जा सकता है ? उत्तर मिला, वह यज्ञ से ही किया जा सकता है । इस प्रसंग से यह स्पष्ट है, कि वे अन्नादि ओषधियों में अन्तःप्रादुर्भूत स्वास्थ्य नाशक तत्वों का यज्ञ के द्वारा ही अपावरण किया जा सकता है । जहाँ पर नियमित रूप से यज्ञों का अनुष्ठान होता है, वहाँ के विस्तृत वातावरण में उत्पन्न अन्नादि ओषधियों में स्वास्थ्यनाशक तत्वों के प्रादुर्भाव की सम्भावना ही नहीं रहती ।

शतपथ ब्राह्मण में इस प्रसंग का उपसंहार करते हुए आगे लिखा है-

एतेन वै यज्ञेनेष्ट, वोधीनामौषधीनां याश्रच मनुष्या उपजीवति याश्रच पशव कृत्यामिवत्वत् विषतिव्रत्वत् अपजध्नुः तत आश्नन् मनुष्या आलिशत पशवः ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस यज्ञ के द्वारा ही उन समस्त ओषधियों के स्वास्थ्यनाशक विष-प्रभाव को नष्ट कर दिया गया, जिनका उपयोग मनुष्य अथवा पशु करते हैं, परिणाम स्वरूप मनुष्य उन अन्नादि ओषधियों का उपयोग करने लगे और पशु भी चुगने लगे ।'' यज्ञ के द्वारा वायु अथवा वातावरण की शुद्धि के लिये अधिक और किस प्रमाण की आवश्यकता है ब्राह्मण ग्रन्थों में इस प्रकार के अनेक प्रसंग अनेक स्थलों में हैं । इसके लिये आप गोपथ ब्राह्मण के उत्तर भाग (१/१९) और कौषीतकि ब्राह्मण (५/१) को देख सकते हैं ।

संक्षेप में चाहे काम्य यज्ञ का अनुष्ठान करते हैं अथवा नित्य यज्ञ का और उसका चाहे कोई दूसरा भौतिक फल हो अथवा आध्यात्मिक,पर उन समस्त प्रकार के यज्ञों से वातावरण की शुद्धि, रूप, फल का निराकरण तो किया ही नहीं जा सकता । यज्ञ, अनुष्ठान किये जाने पर उनके परिणाम से बचकर हम निकल नहीं सकते । यह यज्ञों का अनिवार्य और अनिर्वाध फल है । यज्ञ के किसी भी दूसरे लक्ष्य पर पहुँचने के लिये हमें इस मार्ग से जाना ही होगा । यह देव और मानवों का अटूट सम्बन्ध है । इस रूप में मानव-समाज की समृद्धि का यह मूल आधार है ।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन

मानव यज्ञ के द्वारा ही देव अपने यज्ञ का अनुष्ठान यथावत् कर पाते हैं । ये सर्वश्रेष्ठ धर्म है, ये अद्वितीय है, उत्तम है, इसकी तुलना अन्य किसी से नहीं की जा सकती ।

यास्क महर्षि वैदिक शब्दों का निर्वाचन करते हुए देव शब्द के विषय में ऐसा लिखते हैं-**देवः कस्मात् ? देवो दानाद् वा दीपनाद् वा द्योतनाद् वा द्युस्थानोभवतीति वा ।** देव क्यों कर देव कहलाता है ? देव इसलिए कि वह दान देता है, प्रकाशित करता है, प्रकाशित होता है अथवा द्युस्थान में रहता है । इन यास्क महर्षि के निर्वचन से हमें यह स्पष्ट रीति से मालूम हुआ 'कि दा द्योतन' अर्थात् प्रकाशित होना, दीपन- दूसरी वस्तुओं को प्रकाशित करना अथवा आकाश के अन्दर रहना ये गुण जिसमें पाये जायें वह देव व देवता है । इन लक्षणों से देवों को पहचानने में आसानी होगी । परीक्षक लोगों का कहना है कि लोक में किसी वस्तु की सिद्धि करना चाहो तो दो चीजों की आवश्यकता होती है । वह दोनों चीजें कौन हैं ? एक है लक्षण, दूसरी है प्रमाण ।**'लक्षण प्रमाणाक्ष्या हि वस्तु सिद्धिः'** लक्षणा और प्रमाण से ही वस्तु की सिद्धि होती है, यह शास्त्रीय वचन है । उपर्युक्त लक्षण से सूर्य,चन्द्र, नक्षत्र,पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आदि पदार्थ देव शब्द वाच्य है ऐसा सिद्ध होता है ।

यजुर्वेद में चौदहवें अध्याय के अन्दर एक मंत्र आता है कि पृथ्वी आदि पदार्थ स्पष्टोक्ति से देवता कहलाते हैं ।

आग्निर्देवता, वातो देवता, सूर्योदेवता, चन्द्रमा देवता, रुद्रो देवता, आदित्या देवता, मरुतो देवता, बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता, वरुणो देवता ।।

-यजु. अ. १४ म. २०

मंत्र का अर्थ स्पष्ट है । इसमें कौन-कौन पदार्थ देवता पदवाच्य हैं, पाठक भली-भाँति जान सकते हैं । यज्ञ के द्वारा इन देवताओं का सत्कार करने से मनुष्य को विविध शक्तियाँ प्राप्त हो जाती हैं । यह कैसे हमें जान लेना चाहिए ।

नित्य अग्निहोत्र को शास्त्रों में देवयज्ञ कहा गया है । देवयज्ञ का अभिप्राय है-देवताओं को उद्देश्य करके किये जाने वाली क्रिया । एक यज्ञकुंड के अन्दर अग्नि को आधार करके और उस अग्नि को प्रदीप्त करने के पश्चात् ओषधि आदि से सिद्ध किये हुए हव्य पदार्थों की आहुति नित्य दी जाती है । इस तरह करने से देवता प्रसन्न हो जाते हैं अर्थात् शुद्ध हो जाते हैं ।

'अग्नि वै देवानां मुखम्' अग्नि देवताओं का मुख है । इसलिये अग्नि के अन्दर जो भी कोई प्रदार्थ डाला जाता है वह सभी देवताओं को प्राप्त हो जाता है । जैसे अपने मुख के अन्दर डाली हुई चीज सारे शरीर के अन्दर पहुँच जाती है उसी तरह अग्नि के अन्दर डाली हुई वस्तु जल, वायु, अन्तरिक्ष आदि देवताओं को आसानी से प्राप्त हो जाती है ।

जब अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी आदि पदार्थ जो देव हैं यज्ञ से शुद्ध हो जाते हैं, यही उन देवताओं का सत्कार कहलाता है । इसी यज्ञ क्रिया से देव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संत्कृत होती हैं । अर्थात् शुद्ध हो जाती हैं । इस तरह प्रसन्न-शुद्ध हुए देवताओं को गृहस्थ प्राणी उपयोग में लाते हैं । उन पदार्थों को सभी प्राणी अपनी इन्द्रियों को द्वारा ग्रहण करते हैं ।

इससे हमारी इन्द्रिय शक्तियाँ बढ़ जाती हैं । इन्द्रिय शुद्ध होती हैं, जीवन पवित्र होता है, नीरोग रहता है । शुद्ध और पवित्र अन्न, जल के प्रयोग से जो हमारे शरीर के अंग बनते हैं, वह भी पवित्र होते हैं । यदन्नं तन्मनः जैसा अन्न वैसा ही मन होता है । इन्द्रियों को शक्ति प्राप्त होना, मन शुद्ध और पवित्र बनाना क्या शक्ति का मिलना नहीं ? इससे बढ़कर शक्ति कौन-सी होती है ? मनुष्य शुद्ध मन से न जाने क्या-क्या कार्य साध सकता है ।

यज्ञ पुरुष और उसकी महिमा

प्रलयावस्था में चहुँ ओर तम ही तम था । सृष्टि के सृजनहार भगवान् ने ''ईक्षणा'' किया तो साम्यावस्था में शांत भाव में पड़ी त्रिगुणात्मक प्रकृति में एक विशिष्ट प्रकार की गति व क्रिया प्रारम्भ हुई । उस समय भगवान् 'यज्ञ पुरुष ' (यजु. ३१ अध्याय यज्ञो वैभुवनम् । तै. ब्रा. ३/३/७५) नाम से सम्बोधित हुए । इसी यज्ञ पुरुष से अन्य अनेक यज्ञों की उत्पत्तियाँ प्रारम्भ हो गईं और कालान्तर में विविध यज्ञों का समूह यह सृष्टि (यजु. ३१ अध्याय यज्ञो वैभुवनम् । (तै. ब्रा. ३/३/७५) यज्ञ परिपूर्ण रूप में सामने आ उपस्थित हुआ जब भगवान् स्वयं यज्ञ रूप हैं और तदुत्पन्न सम्पूर्ण सृष्टि भी यज्ञ है तो यज्ञ के अतिरिक्त संसार में कुछ है ही नहीं, यह हम निस्संकोच भाव से कह सकते हैं चारों वेद भी इस यज्ञ रूप भगवान् से उत्पन्न हुए हैं (*यजु. ३१/७* **सैषात्रयी विद्या यज्ञः** । *श. प. १/१/४/३*) अतः ये भी यज्ञ रूप हैं और इनमें जो कुछ भी है वह यज्ञ के अतिरिक्त कुछ नहीं, और होता भी क्या ? यज्ञ से पृथक कुछ हो तभी तो । जो यज्ञ के क्षेत्र से बाहर हुआ वही विनष्ट हो गया । यज्ञों की विद्या तक जो आसुरी शक्ति कही जाती है, वह तो भगवान् की माया (**मायेन्सा ते यति युद्धान्याहुर्नाध शत्रुं ननुपुराविवित्से** *ऋ. १०/५५/२*)

श्रीमद्भगवत् गीता में आता है कि प्रजापति ने यज्ञों व प्रजाओं को साथ-साथ उत्पन्न कर प्रजाओं को यह आदेश दिया कि अपनी अभीष्ट की प्राप्ति हम इन यज्ञों द्वारा किया करें । अथर्ववेद के उच्छिष्ट सूक्त में प्रायः सब यज्ञों का परिगणन किया गया है । और वहाँ यह भी बताया दिया गया है । कि भगवान् से ही इनकी उत्पत्ति हुई है । वे यज्ञ दर्शपौर्णमास, वाजपेय, अश्वमेध, राजसूय आदि नामों से प्रख्यात हैं । इन यज्ञों की उत्पत्ति प्रमुख रूप से मनुष्यों को लिये की गई है । वेद में आता है-

ऋषीणां ज स्तुतीरूप यज्ञं च मानुषाणाम् ऋ. १/८४/२

अर्थात् वह इन्द्र ऋषियों की स्तुति में और मनुष्यों के यज्ञों में पहुँचता है ।

इस मंत्र से ऋषियों और मनुष्यों में क्या विशेषता है, यह स्पष्ट हो गया है । और भी मंत्र हैं जहाँ ऋषियों और मनुष्यों का पृथक् रूप से वर्णन मिलता है । इस उपर्युक्त मंत्र का यही भाव नहीं समझना चाहिये कि ऋषि यज्ञ नहीं करते-करते थे । वे यज्ञ भी करते थे । परन्तु मंत्र की ध्वनि यह है कि अभीष्ट की सिद्धि में मनुष्यों के पास प्रमुख रूप से यज्ञ ही साधन है । मनुष्य यज्ञ द्वारा जो कुछ प्राप्त कर सकता है वह सब ओर उससे भी अधिक ऋषि लोग संकल्प एवं (**त आजयन्त दविणं समस्या ऋषियः पूर्वे रिवारो न भूना** । *यजु. १७/२८*) स्तुति से प्राप्त कर लेते थे । परन्तु ऋषियों का यह स्तुति बल अग्नि (**येन ऋषियो बलदद्योतमन् युजा** । *अ. ४/२३/५* **अग्नि ऋषियः सहस्त्रासनोति** । *ऋ. १०/८०/४*) पूजा से ही प्रकट हुआ था। ३(**त्रेतायुगादौ च ततो विवस्वान् मनवे ददौ** । *महाभारत शान्तिपर्व*) त्रेतायुग के प्रारम्भ में वैवम्वत मनु हुए । अतः मानव सृष्टि त्रेतायुग के प्रारम्भ में हुई । यज्ञों का विशेष प्रचलन भी इसी काल में आकर हुआ । क्योंकि युगह्रास से संकल्प व स्तुति में वह बल नहीं रहा अतः यज्ञों द्वारा ही अभीष्ट की प्राप्ति की जाने लगी । इसी बात को दृष्टि में रखकर मंत्र ने यज्ञों का मनुष्य के साथ विशेष सम्बन्ध बताया है । कृतयुग देवयुग है । इससे प्राकृतिक यज्ञ सुचारु रूप से यथाकाल चलते रहते हैं, अतः मानव को यज्ञों की इस समय विशेष आवश्यकता नहीं । इस समय याज्ञिक विधियों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी विभिन्नता व बहुलता नहीं होती । पृथ्वी पर उस समय देवयुग था । जब देव ही स्वयं पृथ्वी पर अवतरित हों तो आहुति किसके लिये ? उस समय के ऋषि व देव विश्वयज्ञों के ही कर्ताधर्ता थे ।

ये मानव यज्ञ विश्व यज्ञों के समझने के साधन मात्र ही नहीं है अपितु विश्व यज्ञों के सहायक नियामक भी हैं । पिण्डयज्ञों को ब्रह्माण्ड यज्ञों के समक्ष बनाने वाले हैं । कल्पना **कल्पनात् कल्पः** करने के कारण इन यज्ञों का नाम कल्प नहीं है अपितु दिव्य सामर्थ्य वाले (सामर्थ्ये) होने से ये कल्प कहलाते हैं विधि के अनुसार यज्ञ करने वाले में वह ब्राह्मी शक्ति पैदा हो जाती हैं कि वह विश्वयज्ञों पर नियन्त्रण कर सके । उस यज्ञ रूप प्रभु द्वारा रचित इन विश्वयज्ञों में कभी कभी व्याघात हो जाता है यथा अतिवृष्टि, अनावृष्टि, अकाल आदि । प्रश्न यह है कि क्या ये भगवान् की देन है ? नहीं नहीं, यह भगवान् की देन नहीं हैं । यह तो हमारे कर्मों की उपज है । भगवान् ऐसा निर्दयी नहीं है, कि अकाल ऋतु विकार, व्याधि आदि आपत्तियों को पैदा कर अपने पुत्रों को कष्ट देवे । उसने तो प्रारम्भिक कृतयुग इन व्याधि आदि आपत्तियों से रहित किया था । अतः ये सब विकृत दोष हमारे पैदा किये हुए हैं । जब हम अति वृष्टि आदि पैदा कर सकते हैं तो सुवृष्टि, सुकाल व श्रेष्ठ ऋतुओं को भी पैदा कर सकते हैं । एक प्रकार से ऋतुनियंत्रण व परिवर्तन करने वाले हम ही तो हैं । इस प्रकार विश्वयज्ञों को समय-समय पर नियमित व निश्चित करने के लिये भगवान् ने यज्ञ रूपी नियामक यन्त्र सृष्टि के आदि में ऋषियों को प्रदान कर दिये थे । भगवान् के नित्य नियमों द्वारा समय पर वृष्टि का विधान है पर हम देखते यह हैं कि उसमें व्याघात हो जाता है । ऋषि कारीरिष्ठ द्वारा वर्षा ऋतु को पैदा करते हैं । प्राकृतिक घर को, स्थानों व ऋतुओं में उत्पन्न रोगजनक कृमिकीटों को ऋषि भैषज्य यज्ञों द्वारा विनष्ट करते हैं । निःसन्तान दम्पती में पुत्रेष्टि यज्ञ द्वारा पुत्रोत्पत्ति की सामर्थ्य पैदा करते हैं । अश्वमेध, राजसूय, वाजपेय आदि महायज्ञों द्वारा पिण्डान्तर्गत आंशिक यज्ञों को व उनकी शक्तियों को विश्वयज्ञों के समकक्ष बना देते । अतः हम यह कह सकते हैं कि ये मानव यज्ञ विश्वयज्ञों को समझने के लिये साधन मात्र ही है, वे उनके नियामक सहायक, सुधारक आदि भी हैं । पापों के विनाशक, ऐश्वर्य व दिव्य शक्ति के सम्पादक हैं ।

अग्निहोत्र आदि जो यज्ञ हम करते हैं उसमें प्रदीप्त अग्नि को हमें सामान्य भौतिकि अग्नि ही नहीं समझना चाहिये । (**अग्नावग्निश्चरति प्रविष्ट ऋषीणां पुत्रो अभिशस्तिपावाः । स नः स्योनः सुयजा यजेह देवेभ्यो हव्यं समप्रयुच्छन्स्वाहा ।।** *यजु. ५/४*) वेद कहता है कि इस भौतिक अग्नि में एक और अग्नि प्रविष्ट हुई है । उस अग्नि को दिव्य दृष्टि व दिव्य शक्ति सम्पन्न ऋषि लोग ही देख पाते हैं । अथवा यह भी कहा जा सकता है उस भौतिक अग्नि में अपनी शक्ति द्वारा एक और अग्नि पैदा कर देते हैं क्योंकि इस गुहानिहित अंतराग्नि को ऋषियों का पुत्र कहा गया है । वे ऋषि उस अग्नि को किस प्रकार पैदा कर देते हैं । इसका सामान्य उत्तर यह है कि मन्थन द्वारा, रगड़ द्वारा यह मन्थन द्वारा दिव्य दृष्टि दिव्यवाणी व दिव्य विचार का सूक्ष्म मन्थन है ।

इससे पूर्व के मंत्रों में (**गायत्रेणत्वा छन्दसा मन्थाग्नि त्रैष्टुधेनत्वा छन्दसा मन्थाग्नि ।।** *यजु.५/२०*) मंत्रों द्वारा अग्नि का मन्थन कहा गया है । विचारणीय यह है कि मन्थन द्वारा उत्पन्न यह दूसरी अग्नि सर्व व्यापक अग्नि रूप भगवान् है या अन्य कोई अग्नि है । इस पर विद्वान लोग विचार करें । परन्तु हमारा कथन इतना ही है कि सामान्य यज्ञाग्नि को भौतिक अग्नि ही न समझा जाये । इसमें अन्तर्निहित अन्य भी अग्नि है जिसकी ओर वेद संकेत कर रहा है । इसी आन्तरिक अग्नि के उद्देश्य करके हमें (**उपप्रयन्तो अध्वरम् मन्त्र वोचोमाग्नये । आरेअस्मेच शृण्वते ।** *यजु. ३ /११*) मंत्रोच्चारण करना चाहिये । और (**स यः श्रद्दधानो यजते तस्येष्टं तक्षीयते ।** *कौ. ६/४*) श्रद्धा से करना चाहिये । यदि श्रद्धा नहीं है तो यज्ञ की सफलता असम्भव है । यज्ञ में ही ऐश्वर्य है । यज्ञ ही सबका रक्षक हा यज्ञ सा ही सभ पापों का विनाश है । यज्ञ से ही अग्नि अद्भुत कर्म करने वाला बनता है । यज्ञ में श्रद्धा रखने वाले व्यक्तियों के समक्ष एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

महान् उत्तरादायित्व है और वह यह कि यज्ञों को प्रभाव व शक्ति को सत्य सिद्ध करें । (**यज्ञो बसु :।** *यज. १/२* **यज्ञोविदिद्वसु ।** *ता. ब्रा. ८/३/३* **यो वा भवति ।** *ता. ब्रा. ६/४/५* **भव यज्ञोमिरीमहविभिः ।** *ऋ. १/२४/१४* **नाहोस्तेतशते न प्रदीमः। ऋ. ६/३/५ यज्ञोभिरद्ध तक्रतुं ।** *ऋ. ८/२३/८)* अन्त में वेद सूक्ति सबको चेतावनी दे रही है कि-**अयाज्ञियो हतवर्चा भवति ।** *अथर्व, १२/२/३७ ।*

अर्थात् यज्ञ न करने वाले का तेज नष्ट हो जाता है । तेजस्विता की रक्षा के लिये भी यज्ञ आवश्यक है । वेदों के पुरुष-'सूक्त' में परमात्मा को बारबार 'यज्ञ' नाम से पुकारा गया है । इसका अर्थ यही है कि परमात्मा ने ही इस विश्व की रचना ठीक-ठीक ढंग से की है, जिससे उसका संचालन बिना किसी अनियमितता से हो रहा है । दूसरे यह संसार यज्ञ है । इसके सब कार्य अटल नियमों द्वारा इस तरह हो रहे हैं कि सब चीजें यथा स्थान ठीक-ठीक सम्बन्ध रखती हुई स्थिर रहती है । जिस तरह संसार एक बड़ा यज्ञ है उसी प्रकार मनुष्य जीवन भी अपने अनुपातानुसार एक यज्ञ ही है । इसका उद्देश्य यह है कि मनुष्य अपनी भीतरी बाहरी सब वस्तुओं में मेल मिलाये रहे और संसार के साथ भी उचित सम्बन्ध स्थिर रखे ।

इस विवरण से ज्ञात होता है कि प्राचीनकाल में यज्ञ किसी विशेष साधना या जंत्र-मंत्र की तरह नहीं समझे जाते थे, वरन् वे मनुष्य जीवन का एक स्वाभाविक अंग थे । यज्ञों के जो विभाग किये गये थे, उनमें से कुछ ऋतुओं के आधार पर थे, कुछ मनुष्यों के कर्तव्य कर्म को दृष्टिगोचर रखकर नियत किये थे और कुछ राष्ट्रीय व्यवस्था से सम्बन्ध रखते थे । इस प्रकार आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक समस्याओं की पूर्ति के लिये जो सामुदायिक और सामाजिक कार्य किये जाते थे वे यज्ञों के रूप में ही किये जाते थे । इस प्रकार भारतीय समाज और संस्कृति का रूप ही यज्ञमय था । 'गोपथ ब्राह्मण' में इन यज्ञों के जो नाम और क्रम मिलते हैं उससे यह बात स्पष्ट जान पढ़ती है कि प्राचीन भारत वासियों ने अपना सम्पूर्ण जीवन ही यज्ञमय बना लिया था जिसके फल से उनको उत्तम स्वास्थ्य, सुसंतति, सुवर्षा, सुराज्य, विद्या, ज्ञान और परमात्मा की प्राप्ति होता थी । यज्ञों से इन कार्यों की पूर्ति निम्न प्रकार होती थी-

१- आरोग्यता दो प्रकार की होती है, एक व्यक्तिगत और दूसरी समाज की । जुकाम, बुखार, दस्त और शरीर पीड़ा आदि मौसमी तथा चेचक, हैजा, प्लेग आदि संक्रामक बीमारियाँ ऐसी होती हैं जो सब पर एक साथ आक्रमण करती हैं । अकेला व्यक्ति उनका निवारण करने में असमर्थ होता है । विभिन्न ऋतुओं के यज्ञों द्वारा इन रोगों के विकारों का शमन होता रहता था और समाज का स्वास्थ्य उत्तम दशा में रहता था । इसी से गोपथ ब्राह्मण में इनको ' 'भैषज्य-यज्ञ '' के नाम से अभिहित किया गया है ।

२-संतान न होती हो, तो सन्तान उत्पन्न करने वाले, उत्तम और दीर्घ जीवी सन्तान प्राप्त कराने वाले 'पुत्र कामेष्टि यज्ञ' का विधान है । इस यज्ञ का कुछ भाग गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन संस्कारों में और कुछ पितृयज्ञ में मिला हुआ है ।

३- यज्ञ का वर्षा से विशेष सम्बन्ध है, क्योंकि भारतीय जनता के जीवन-निर्वाह का मुख्य आधार सुवर्षा पर ही था । अवर्षणा के समय प्राचीन ऋषि यज्ञ द्वारा वर्षा करा देते थे इसका उल्लेख अनेक स्थानों पर मिलता है, और अब भी इसके अनेक उदाहरण मिला करते हैं ।

४- सम्पत्ति का वास्तविक तात्पर्य जीवनोपयोगी पदार्थों से है । रुपया या नोट आदि को तो केवल क्रय-विक्रय का माध्यम बना लिया है जो चाहे जब बदला जा सकता है । इसलिये वास्तव में सम्पत्ति का अर्थ अन्न, पशु, वस्त्र, आदि जीवन के लिए आवश्यक पदार्थों से ही है । यज्ञों को भली प्रकार सम्पन्न करने के लिये भी इस सम्पत्ति की आवश्यकता होती है ? इसके लिये विशेष रूप से गोमेध यज्ञ का विधान किया गया था, जिससे समाज की सम्पत्ति की वृद्धि होती थी ।

५- राज्य का स्वरूप प्राचीन सभ्यता में यह माना गया था कि उसके द्वारा समाज में सुव्यवस्था रहे और समस्त संसार के मनुष्यों को एक सूत्र में बाँधकर शान्ति स्थिर रखी जाय जिससे सब लोग लड़ाई-झगड़े के भय से मुक्त रहकर अपनी शक्ति और समय का उपयोग निजी तथा सामाजिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कल्याण के कार्यों में कर सकें । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन किया गया था । इसके द्वारा असंगठित और अनुशासन विहीन प्रदेशों को नियंत्रण में लाया जाता था, जिससे वे सार्वजनिक शान्ति को भंग करके जनता को हानि न पहुँचावें ।

६- पंच महायज्ञों द्वारा सौर और चान्द्र संसार को अप्लावित करके अतिथिओं, वृद्धों, रोगियों, पतितों, पशु -पक्षियों और कीट-पतंगों तक को आहार पहुँचाने से बढ़कर सेवा की भावना और पुण्य कार्य क्या हो सकता है ? इससे मनुष्यों में करुणा, क्षमा, अहिंसा के भावों की वृद्धि होती है और उनका जीवन केवल भौतिक में न रह कर दैवी गुणों से सम्पन्न होता है ।

७- जो मनुष्य इतना सब करके भी निस्वार्थ भाव से कहता है कि **'इदं न मम'** अर्थात् यह मेरा नहीं है, जो कुछ है सब ईश्वर का ही है, वह सांसारिक प्रपंच और कर्म- बन्धन में नहीं फँस सकता है । यही निष्काम भावना **'यज्ञ'** की सबसे बड़ी विशेषता है । जैसा भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है-**यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्म बन्धनः** यज्ञीय कर्मों के अतिरिक्त समस्त कर्म बन्धन करने वाले ही हैं । इस प्रकार यज्ञ का मर्म समझने वाला और तदनुसार आचरण करने वाला मोक्ष का अधिकारी हो जाता है ।

यह पूर्ण रूप से सिद्ध हो चुका है कि प्राचीन भारतीय सभ्यता में यज्ञ का महत्व सर्वोपरि था और यहाँ से संसार भर में उनका प्रचार हुआ था । यह तो स्पष्ट है कि देश और समाज भेद से यज्ञ की विधियाँ, क्रियायें, सामग्री आदि सर्वत्र एक सी नहीं रह सकतीं पर मूल रूप से यज्ञ की भावना सब देशों और जातियों में पाई जाती थी । प्राचीन भारतीय सभ्यता में यज्ञ का महत्व सर्वोपरि था और यहाँ से संसार भर में उनका प्रचार हुआ था । यह तो स्पष्ट है कि देश और समाज भेद से यज्ञ की विधियाँ, क्रियाऐं, सामग्री आदि सर्वत्र एक सी नहीं रह सकतीं पर मूल रूप से यज्ञ की भावना सब देशों और जातियों में पाई जाती थी । प्राचीन समय के यूनानी और रोमन लोगों में यज्ञ का प्रचलन था और पारसियों में तो अभी तक पूर्ण रूप से पाया जाता है । जैनियों और बौद्धों में भी धूप-दीप यज्ञ का ही सूक्ष्म रूप है । यहूदी, ईसाई, मुसलमान आदि सेमेटिक जातियाँ में भी धूपबत्ती लोवान आदि जलाने की प्रथाएँ पाई जाती हैं । चीन वाले यज्ञ को 'घोम' कहते हैं, जो 'होम' का ही विगड़ा हुआ रूप है । मिश्र के प्राचीन निवासियों और अमेरिका के रैड इंडियन लोगों में भी यज्ञ की प्रथा पाई जाती थी । इससे यह सिद्ध होता है कि यज्ञ मनुष्य जाति का मूल-धर्म रहा है और उसका प्रचलन भारतीय आर्यों द्वारा ही सर्वत्र हुआ है । जब तक यहाँ के निवासी यज्ञ के विज्ञान को समझते रहे और उसका पालन करने में दृढ़ रहे तब तक यह देश संसार का मुकुटमणि बना रहा और जगद्गुरू के पद पर अधिष्ठित रहा । पर जब यज्ञ की भावना को लोग भूलने लगे और उसका स्थान पशुवलि और अखाद्य सेवन आदि ने ले लिया तभी से भारत का पतन होने लग गया और उसके भीतर तरह-तरह की निर्वलताएँ घुस गईं । अब भी भारतीय समाज का उद्धार और उत्थान तभी हो सकता है जब समाज में यज्ञों का सच्चे स्वरूप में प्रचार किया जायगा ।

हिन्दू धर्म में यज्ञों का स्थान तथा प्रयोजन

'नायं लोकोस्तय यज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ! '

-गीता ४/३१

यज्ञहीन को ऐहिक लोक भी नहीं मिलता, परलोक भला क्या मिलेगा ।

सनातन हिन्दू धर्म में यज्ञों का बड़ा महत्त्व माना गया है । इस धर्म में वेदों का जो महत्त्व यज्ञों को भी प्राप्त है क्योंकि वेदों का प्रधान विषय ही यज्ञ है, जैसे कि देखिये इस पर *न्यायदर्शन (४/१/६२), मनुस्मृति (१/२३), सिद्धान्तशिरोमणि-गणिताध्याय, मध्यमाधिकारस्य कालामानाध्याय ९ पद्य, गोपथ ब्राह्मण (१/४/२४), भगवद्गीता (४/३२) ।*

यह याद रखने की बात है कि-अग्नि मानव समाज की एक विशेष विभूति है । प्राणियों में मनुष्य

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही केवल अग्नि द्वारा काम लेते हैं । शेष तो अग्नि से दूर रहते हैं । वन में हिंस्र जन्तुओं से अपनी रक्षा का उपाय ही यही है कि- अपने चारों ओर अग्नि जला कर रखी जाय । मनुष्य ही अग्नि द्वारा विविध कृत्यों को पूर्ण करता है । अग्नि द्वारा ही वह शक्ति उत्पन्न होती है, जिससे रेलगाड़ी चलती है, तार जाते हैं , विमान उड़ते हैं । अग्नि द्वारा ही पाकक्रिया सम्पन्न होती है । जिससे मनुष्य जीवन धारण करता है । बहुत कहने से क्या, गर्भाशय की अग्निद्वारा ही मनुष्य आदि का शरीर पैदा होता है, और पुष्ट होता है सुवर्ण आदि धातुओं की उत्पत्ति में जिनसे संसार का व्यवहार चलता है उसका कारण भी खान की अग्नि ही है । जैसा कि-ऋग्वेद संहिता में कहा है-

'रत्नधातमम्'

-१/१/१

महायुद्धों में जो महान् जन संहार होता है, वह भी अग्नि के ही बल से । उसी के आश्रय से बन्दूक चलती है, तोप चलाई जाती है, सर्वसंहारक अस्त्र चलते हैं, गैंसें चलती हैं, बम डाले जाते हैं । जिस राजा को पास तेल कोयला आदि अग्नि का भोजन नहीं होता, वही अन्त में हारता है । इसी कारण आक्रमणकारी राजा दूसरे राष्ट्र के पैट्रोल और कोयला की खानें नष्ट करने की चेष्टा करते हैं । जिससे दूसरे की पराजय और अपनी विजय होवे ।

अग्नि के उत्पादन और उससे संहार के नवीन प्रकारों का उद्भावन आज की साइंस ने किया है परन्तु प्राचीन युग में अग्नि द्वारा दिव्य शक्ति के उत्पादन का अन्य ही प्रकार था । जैसे आजकल विधान विशेष से अग्नि पैट्रोल और कोयले की आहुति देकर भौतिक शक्ति पैदा की जाती है, वैसे ही पुरा काल में प्राचीन ऋषि-मुनि विधान विशेष एवं मन्त्र विशेष से द्रव्य विशेष का आहुति देकर दिव्य शक्ति को उत्पन्न करके इपने तथा दूसरों के मनोरथों को पूर्ण करते थे । आजकल यद्यपि उसका प्रचार लुप्त प्राय है, तथापि सर्वथा अभाव नहीं हुआ । अर्वाचीन जड़ विज्ञान जिन बाधाओं को हटाने में सर्वदा असमर्थ है, प्राच्य विज्ञान उन बाधाओं को यज्ञ के द्वारा तथा उसके अंगभूत जप-पाठ आदि से हटा सकते हैं । वेदों में यज्ञ विद्या भरी हुई है, कल्पसूत्र में उनके विनियोग को दिखलाया गया है, अब चाहिये उसके प्रयोगकर्ता ।

फलतः जब तक हमें व्यवहार में रहना है तब तक हमें अग्निचयन करना ही पड़ेगा, अग्नि ही यज्ञ का देव एवं आधार है-**'यज्ञस्य देवम्'** ऋ. १/१/१ अग्नि का त्याग और व्यवहार का त्याग समान वस्तु है । सम्भवतः इसी व्यवहार त्याग के कारण संन्यासियों का अग्नि-परित्याग शास्त्रों को इष्ट हो ।

वेदों का विषय यज्ञ है- यह बतलाया जा चुका है कि वेद उपास्य देवता हैं-**'यज्ञ देव पूजा संगति करणादानेषु'** ऐसा श्रीपाणिनि के धातु पाठ में कहा है । यज्ञ विविध कामनाओं की पूर्ति के लिए किये जाते हैं, उन कामनाओं की पूर्ति देवता लोग करते हैं । ऋग्वेद संहिता में कहा गया है-**न मंडिता विद्यते अन्य एभ्यो, देवेषु मे अधिकाया असंयत ।**

-१०/६४/२२

अर्थात् देवताओं से भिन्न अन्य कोई सुख प्रदाता नहीं, अतः मेरी कामनाएँ भी देवताओं में नियमित होती हैं ।

देवता परमात्मा के ही अंग होते हैं, जैसे कि अथर्ववेद संहिता में कहा है-**यस्य त्रयस्त्रिंशददेवा अङ्गे गात्रा विभोजिरे'**

-१०/७/२७

अंगों के बिना अंगों की पूजा नहीं हो सकती । अंश के बिना भला अंशी की पूजा किस प्रकार हो ? इस कारण देव पूजन यज्ञ रूप भगवान् का आराधना ही है, यह सिद्ध हुआ । यही बात ब्राह्मणाभागात्मक वेद में भी लिखी है-**तद् यद् इदमाहु,-इति एकैकं देवम् एतस्यैव सा विसृष्टि, एव उह्येव सर्वे देवाः ।**

-१४/४/२/२/१२

अर्थात् देवता-परमात्मा की ही सृष्टि है वह परमात्मा सर्वदेवमय हैं । इस प्रकार मनुस्मृति में भी कहा गया है-**आत्मैव देवताः सर्वाः, सर्वमात्मन्यवंस्थितम् ।**

-१२/११९

यहाँ पर श्रीकुल्लूक भट्ट ने ऐसी ही व्याख्या की है-**इन्द्राद्याः सर्वदेवताः परमात्मैव सर्वात्मात्वात् परमात्मनः**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अब प्रश्न यह उठता है- जो देव पूजनात्मक यज्ञ है, वह अग्नि द्वारा ही कैसे होता है ? इस पर उत्तर ऋग्वेद संहिता में कहा गया है कि अग्नि के बिना देवता प्रसन्न नहीं होतै -ऋ. सं. ७/११/१ अग्नि में दिया हुआ यज्ञ देवताओं को पहुँचता है- यह भी ऋग्वेद संहिता-१/१/४ में कहा गया है । यही बात -ऋ. सं. ७/११/५ , तथा अथर्ववेद वेद संहिता-५/१२/२ में मानी गई है । क्योंकि-अग्नि को देवताओं का मुख कहा गया है -शतपथ ३/७/४/१० यही बात शाङ्ग्वायान ब्राह्मण -३/६ तथा महाभारत आदिपर्व -७/७/१०/११ में भी अग्नि के वचन में सूचित की गई है, तब देवताओं की हवि का भी अग्नि में डालना समूल सिद्ध हुआ ।

यज्ञ के बहुत से प्रयोजन हुआ करते हैं, उनमें स्वर्ग की प्राप्ति एक पारलौकिक प्रयोजन है, जैसे कि अथर्ववेद संहिता में कहा है-**'यैरीजानाः स्वर्गं यान्ति लोकम्'** -१८/४/२ । इसी प्रकार न्यायदर्शन -१/१/३ ऐतरेय ब्राह्मण -१/२/१० शतपथ ब्राह्मण -१२/३/३/७ तथा महाभाष्य -६/१/८१ में भी कहा गया है । यज्ञ में प्रत्येक देवता के नाम से आहुति दी जाती है, यह देवताओं की पूजा ही है । तब उनकी प्रसन्नता से स्वर्ग की प्राप्ति स्वाभाविक है । तभी भगवद्गीता में कहा है- **देवान् देवयजो यान्ति'**-७/२३ । देवताओं का निवास होता है स्वर्ग में । जैसे कि वेद में कहा है-**'दिवि देवाः'** -अथर्व ११/७/२३, और अथर्ववेद -१८/४/३ ।

यज्ञ का प्रयोजन केवल स्वर्ग की प्राप्ति नहीं होती अपितु विविध कामनाओं की पूर्ति भी प्रयोजन हुआ करती है, उसमें भी कारण देव पूजा ही हुआ करती है, क्योंकि-देवता विविध कामनाओं को पूर्ण किया करते हैं । जैसे कि ऋग्वेद संहिता -१०/६४/२ में कहा है, वह मंत्र हम पहले लिख चुके हैं । तभी तो ऋग्वेद सं. में कहा है-**'यत्कामास्ते जुह्वा तन्नो अस्तु'**(ऋ. १०/१२१/१०) इस मंत्र में भी हवन से विविध कामनाओं की पूर्ति सूचित की गई है । **'वयं स्याम पतयो रयीणाम्'** इस उक्त मंत्र के अन्तिम अंश से यज्ञ से विविध ऐश्वर्यों की प्राप्ति बताई गई है । इस मंत्र में प्रजापति देवता का वर्णन है, इयीलिए हवन में 'प्रजापतये स्वाहा' यह कहा जाता है ।

यज्ञों के विविध कामनाओं के पूर्ण करने वाले होने से ही महाभाष्य -१/१/६३ में **'चक्षुष्ठान या जपांचकार'** इस उदाहरण में यज्ञ द्वारा नेत्रशक्ति दान रूप फल भी सूचित किया गया है । न्याय दर्शन के -२/१/६८ सूत्र के भाष्य में **'ग्रामकामा यजेत्'** का वैदिक प्रमाण देकर यज्ञविशेष का फल ग्राम की प्राप्ति हो जाना भी कहा है । -२/१/५७ सूत्र के न्याय के भाष्य में **'पुंकामः पुत्रेष्टया यजेत'** इस वैदिक प्रमाण से यह विशेष का फल पुत्र प्राप्ति भी सूचित किया गया है । इस प्रकार वृष्टि का कामना में कारीरी इष्टि (यज्ञ) भी हुआ करती है । इस भाँति शतपथ -१३/२/६/३ में अश्वमेध का फल तेज, इन्द्रिय, पशु, ब्रह्महत्या दूर होनी लक्ष्मी ने कहा है । राजसूय यज्ञ का फल अकाल मृत्यु निवारण कहा गया है । यह कामनाएँ यदि स्वार्थ पूर्ति के लिए न की जाएँ, किन्तु प्रजा के लिए वा देश के लिए की जाएँ तब यज्ञ समष्टिगत हो जाने से उसका महत्त्व बढ़ जाता है ।

यज्ञ का प्रयोजन केवल वायुशुद्धि नहीं है । केवल वायु शुद्धि ही फल होता तो बहुत मँहगे घृत का उपाय वहाँ पर व्यर्थ था, उससे भी सस्ते उपायों से वायु शुद्धि हो सकती थी, तब तो म्यूनिसिपैलिटी कूड़े के पात्रों में, पाखानों में, या नालियों के पास होना ठीक होता । वहाँ तो वेद मंत्रों को बिना भी वायु शुद्ध हो जाती है ।

वस्तुतः यज्ञ देवताओं का पूजन वा तर्पण हुआ करता है-यह पहले कहा ही जा चुका है । देवताओं का भक्ष्य घृत होता है । जैसे कि- स्वर्गलोक से यहाँ आयी हुई उर्वशी ने पुरूरवा को कहा था-**'घृतं मे ही भक्ष्यं स्यात्,** *श्रीमद्भागवत्* ९/१४/२२ यज्ञ पुराण में ही नहीं, ब्राह्मणभागात्मक वेद में भी कहा है-**घृतस्य स्तोकं सकृद अह्न आश्नाम, देव इदं तातृयाणा चरामि** -*शतपथ.* ११/५/१/१०) में भी उर्वशी कहने वाली है । केवल ब्राह्मणभागात्मक में ही नहीं, प्रत्युत मन्त्र भागात्मक वेद में भी उर्वशी ने यही कहा है- **घृतस्य स्तोकं सकृद् सह्य देवनाम्** -ऋ. १०/९५/१६ इस मंत्र में उर्वशी के पुरूरवा ऋषि-देवता हैं । उर्वशी देव-अप्सरा थी, इस कारण घृत उसका भक्ष्य माना गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी कारण देव पूजनात्मक यज्ञ में भी घृत भक्षित होता है । तभी शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है- **यद् वै देवानां प्रियं धाम यद् आज्यम्**-(घृतम्)-*१/३/३/६/३* **'आज्येन जुहोति'** -*शत. १३/३/६/२* इसी कारण यज्ञ के अंग हवन में-जिसका उद्देश्य देवताओं का पूजन वा तर्पण है- घृत डाला जाता है । वहाँ मुख्य कारण देवताओं की प्रसन्नता है, वायुशुद्धि नहीं ।

इसके अतिरिक्त यज्ञ में वेद मन्त्र भी इसीलिए माने जाते हैं, क्योंकि-यज्ञ वेद का विषय है और यज्ञ होता है देव पूजार्थ, इस कारण उसमें वेद मेत्रों की आवश्यकता भी पड़ती है, क्योंकि वेदमन्त्रों के उपास्य वा विषय भी देवता ही होते हैं इस कारण यज्ञ के समय के लिए निरुक्त में कहा है-**यस्यै देवतायै हविं गृहीतं स्यात्, तां मनसा ध्यायेत्** -*८/२२/११* अर्थात् यज्ञ के समय तत्तद् देवता का मन से ध्यान भी करें । इस कारण वेद मन्त्रों का उच्चारण यज्ञ में सफल है ।

यज्ञ से वायुशुद्धि अवान्तर उद्देश्य होता है-साक्षात् नहीं, उसका प्रकार गीता एवं मनुस्मृति में कहा है-**'अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः। यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः'** -*गीता ३/१४* **अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते । आदित्याज्जायते वृष्टिवृष्टेरन्नं ततः प्रजा'** -*मनु. ३/७* अर्थात् यज्ञ करने पर उसे अग्नि, सूर्य, चन्दर आदि आकृष्ट कर लेंगे, उससे मेघ बनेंगे, जिससे वृष्टि होगी, वृष्टि से अन्न भी होगा, वायुशुद्धि भी होगी । प्राणियों की तृप्ति भी होगी । वेद में भी कहा है-**'अहं वृष्टिं'(वर्षणां, मनोरथवर्षणं) (हविः) दाशुषे मर्त्याय (अददाम्)** -*ऋ. ४/२६/२ ।*

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यज्ञ का मुख्य उद्देश्य वायुशुद्धि नहीं है, किन्तु मुख्य उद्देश्य देवताओं का प्रसन्न करना है, उससे सारे जगत की तृप्ति होती है-यही यज्ञ का महत्त्व है । यही बात 'मनुस्मृति' में कही है- **दैवे कर्मणि युक्तो हि बिभर्तीदं चराचरम्** -*३/७५* यज्ञाग्नि में डाला हुआ घृत आदि व्यर्थ नहीं जाता, किन्तु भूमि में बोये हुए बीज की तरह सूक्ष्म होकर अधिक शक्ति सम्पन्न होकर देवताओं के पास जाता है, और अधिक फलप्रद होता है । भदवद्गीता में भी यज्ञ को देवताओं की प्रसन्नता के लिए ही माना जाता है। जैसे कि- **'सहयज्ञाः प्रजाः सृष्टवा पुरोवाच प्रजापतिः । अनेन प्रसविष्यध्वम् एवं वोस्त्विष्टकामधुक्** -*३/१०* **देवान् भावयतानेन (यज्ञेन) ते देवा भावयन्तु वः । परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्सयथ** -*३/११* **इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञ- भाविताः । तैर्दत्तान् प्रदायैभ्यो यो भुङ्क्तेस्तेन एव स'**-*३/१२* इससे स्पष्ट सिद्ध है कि-यज्ञ देवपूजा का पर्यायवाचक तथा उसका अन्यतम साधन है । उससे विविध कामनाओं की पूर्ति होती है । शतपथ ब्राह्मण में भी कहा है- **'सर्वाह वै दैवता अध्वर्यु हविर्गृहीशन्तम् उपतिष्ठन्ते-मम नाम ग्रहीष्यति, मम नाम ग्रहीष्यतीति'**-*१/१/२/१८* इससे देवताओं के नाम से आहुति देना देवताओं के प्रसन्नार्थ है, इससे प्रसन्न होकर देवता आहुतिदाता के मनोरथों की पूर्ति करते हैं । इस कारण यज्ञों का हिन्दू धर्म में बहुत महत्त्व माना गया है ।

नारायणोपनिषद् में कहा गया है -**यज्ञेन द्विषन्तो मित्राभवन्ति, यज्ञे सर्वं प्रतिष्ठितम्, तस्माद् यज्ञं परमं वदन्ति** -७९ यहाँ पर यज्ञ से शत्रुओं का भी मित्र बनना कहा है । श्री मद्भागवत् पुराण में तो यहाँ तक कहा है कि- जिस देश में यज्ञ पुरुष भगवान् की पूजा होती है, वहाँ पर भगवान् प्रसन्न होते हैं । भगवान् प्रसन्न हुए, तो कोई वस्तु अप्राप्य नहीं रहती **तस्य राष्ट्रे पुरे चैव भगवान् यज्ञ पूरुषः । इज्यते तेन धर्मेण जनैर्वर्णाश्रमान्वितैः । तस्य राज्ञो महाभाग ! भगवान् भूत भावनः । परितुष्यति विश्वात्मा तिष्ठतो निजशासने । तस्मिँस्तुष्टे किमप्राप्यं जगतमीश्वरेश्वरे** -*४/१४/१८-१९-२०* । पद्मपुराण सृष्टि खण्ड में भी कहा है-**यज्ञेनाप्यायिता देवा वृष्टयुत्पर्गेण मानवाः । अप्यायनं वै कुर्वन्ति यज्ञाः कल्याणहेतेवः'** -*३/१२४* इसी कारण अथर्ववेद संहिता में कहा है-**'यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः ।** -*९/१०/१४* यहाँ यज्ञ को सारे भुवन का केन्द्र कहा है ।

यज्ञों के न होने से देवताओं का कोप होता है, उसी देश में अकाल, युद्ध-महायुद्ध, उनके कारण महर्घता-पिशाची का अकाण्ड ताण्डव हुआ करता हैं । देवताओं के कोप से अतिवृष्टि वा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनावृष्टि, अतिवायु, अतिग्रीष्म, अतिशीत आदि हुआ करते हैं, जिनसे अकाल की कराल ज्वालाएं फैलती हैं । देवताओं के कोप से दूसरा चिन्ह होता है हमारी बुद्धि का नाश । महाभारत में कहा है-देवता डण्डा उठाकर पुरुषों की रक्षा नहीं करते । जिसकी रक्षा करना चाहते हैं उसकी बुद्धि बढ़ा देते हैं. जिसे गिराना चाहते हैं, उसकी बुद्धि छीन लिया करते हैं उद्योग पर्व -३४/८०/८१ कौन नहीं जानता कि युद्ध-महायुद्ध आदि उसी बुद्धिभ्रंश के परिणाम हैं, जिससे महँगाई फैलती है ।

इन्हीं देवताओं के प्रसादनार्थ यज्ञ तथा उसके अङ्गभूत जपपाठ, देवमूर्ति पूजा आदि आवश्यक सिद्ध होते हैं । उसमें गायत्री के जप से वा यज्ञ से ग्रहों की प्रतिकूलता भी दूर हो जाती है, जैसे कि-महभारत में कहा -**ये चास्य दारुणाः केचिद् ग्रहाः सूर्यादयो दिवि । ते चास्यसौम्या जापन्ते शिवाः शिवतराः सदा** -*वनपर्व २००/८५* । देवताओं की प्रसन्नता से ही भगवान् भी प्रसन्न होते हैं, क्योंकि भगवान् अङ्गी हैं, देवता अंग हैं । इसी कारण हिन्दू धर्म में यज्ञों को स्वीकृत किया गया है । देवगण की सहायता से ही सकल अनर्थकारी अधर्म हटता है, और विश्व-कल्याणकारी धर्म की स्थापना होती है-'**यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ।** -*गीता ३/१३* । अधर्म के कारण ही जनपदों का ध्वंस होता है । जैसा कि-सुश्रुतसंहिता के सूत्रस्थान -६/२० और चरक संहिता (के विमानस्थान ३/२१-२२) में भी बड़े स्पष्ट शब्दों में कहा है, उसी को दूर करने के लिए **देव-गो-ब्राह्मण, गुरु, वृद्ध, सिद्धाचापनि अर्चयेद्, अग्निमुचरेत् ।** -*चरकसूत्रस्थान ५/१८* **जप होमोपहारेज्यांजलिनमस्कार तपोनियमदयादानदीक्षाभ्युपगम, देवता ब्राह्मण गुरुपरैर्भवितव्यम्'** -*सुश्रुत, सूत्र ६/२१* देवपूजनादि कहा है ।

यज्ञों में वेदज्ञ ब्राह्मण सम्मिलित होते हैं, तो यज्ञ में जहाँ देवपूजन होता है, उसके साथ ही साथ भूदेवों का सत्कार भी हो जाता है, जो वे विविध वृत्तियों को छोड़ कर भोग विलासों को दूर करके वेदों की रक्षार्थ कठोर ब्रह्मचर्य कर चुके हैं उन विद्वान् ब्राह्मणों का दर्शन भी हो जाता है । उनकी पूजा से भी देवता प्रसन्न हो जाते हैं । जैसा कि कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीयारण्यक में कहा गया है-**यावतीर्वै देवताः ताः सव वेदविदि ब्राह्मणे वसन्ति । तस्माद् ब्राह्मणोभ्यो वेदविद्भ्यो दिवे दिवे नमस्कुर्याद, नाश्लीलं कीर्तवेद्, एता एव देवताः प्रीणाति** -*२/१५)।* तब द्विजों को उचित है कि-देवताओं की कृपाप्राप्त्यर्थ यज्ञों को करो, जिससे देवताओं का कोप दूर होने से देश में शान्ति रहे, जिससे देशवासी शान्ति की श्वास ले सकें । पुराणों में जो यज्ञों के माहात्म्य कहे गये हैं-उसमें अर्थवाद न समझ कर वास्तविकता ही समझनी चाहिये । सृष्टि के सर्वादिम याज्ञिक काल में ही भारत सुखी एवं समृद्ध था । यह नहीं भूलना चाहिए । इय यज्ञ की 'अखण्ड ज्योति' को भारतीय कभी बुझने न दें, कभी बुझने न दें, यह उन्हें हमारी प्रेरणा है ।

वेदों में यज्ञ की महिमा

वेदों में यज्ञ की पग-पग पर प्रसंशा और प्रार्थना है । इस प्रशंसा और प्रार्थना में यज्ञ में सन्निहित शक्तियों और लाभों का वर्णन है । इन पर थोड़ा ध्यान देने से हयह सहज ही जाना जा सकता है कि यज्ञ कितना उपयोगिताओं और महानताओं से परिपूर्ण हैं । नीचे कुछ ऐसी ही प्रार्थनाऐं की जाती हैं-

शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्तेऽअग्तु मा मा हि ७ सीः । निवर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ।

-यजु.३/६३

अर्थ- हे यज्ञ! तू निश्चय से कल्याणकारी है । स्वयम्भू परमेश्वर तेरा पिता है । तेरे लिए नमस्कार है । तू हमारी रक्षा कर । दीर्घ आयु, उत्तम अन्न, प्रजनन शक्ति, ऐश्वर्य-समृद्धि, श्रेष्ठ सन्तति एवं मंगलोन्मुखी बल पराक्रम के लिए हम श्रद्धा-विश्वासपूर्वक तेरा सेवन करते हैं ।

त्वामग्ने यजमानाऽअनुद्यून विश्वावसु दधिरे वार्याणि त्वया सह द्रविणमिच्छमाना व्रजं गोमंत मुशिजो विवव्रुः ।

-यजु. १२/२८

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थ- हे देव अग्ने ! जो सदा यज्ञ करते रहते हैं, ऐसे सद्गृहस्थ सदा ही श्रेष्ठ सम्पत्तियों के स्वामी होते हैं, उन्हें इस यज्ञ के पुण्य प्रभाव से सदैव ज्ञानियों की सत्संगति के साथ ही धन की प्राप्ति भी होती रहती है ।

पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसुनीथ यज्ञैः । घतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ।।

-यजु. १२/४४

अर्थ- हे ऐश्वर्य को प्राप्त कराने वाले यज्ञाग्ने ! तुझे ये यज्ञकर्ता आदित्य यज्ञ, वसु यज्ञ एवं रुद्र यज्ञ के द्वारा बारम्बार प्रदीप्त करें । इन यज्ञों से तुम अपने तेजों की अभिवृद्धि करके यज्ञकर्ता की कामना पूर्ण करो या पूर्ण करने में समर्थ होओ ।

अयमग्निः पुरीष्यो रयिमान् पुष्टि वर्द्धनः ।
अग्ने पुरीष्याभि द्युम्नमभि सहऽआयच्छस्व ।।

-यजु. ३/४०

अर्थ- यह यज्ञाग्नि वृष्टि कराने वाली, धन देने वाली तथा पुष्टि और शक्ति को बढ़ने वाली है । हे पुरीष्य अग्नि ! तुम हमारे सब ओर बल और यश का विस्तार करो ।

तिष्ठ्शद्धाम विराजति वाक पतङ्गाय धीयते ।
प्रीत वस्तोरह द्युमिः ।।

-यजु. ३/८

अर्थ- यह यज्ञ जो प्रतिदिन किया जाता है, वह अपनी प्रदीप्त ज्वालाओं से युक्त निरन्तर यज्ञकर्ता के अन्तर में विराजता रहता है, फिर ऐसी दशा में किसी अन्धकार असुर अज्ञान को ठहरने का (यहाँ) अवकाश ही कैसे हो सकता है ? सच्चे यज्ञकर्त्ता एक दिन सम्पूर्ण अन्धकार और अज्ञान से मुक्त होकर दिव्य परमात्मा के चरणों में पहुँच जाते हैं ।

शर्मास्यवधूत्ष्ठरक्षोऽवधूताऽरातयोऽदित्यास्त्वगसि प्रति त्वादितिर्वेत्तु ।। अद्रिरसि वानस्पत्यो ग्रावासि पृथुबुध्नः प्रति त्वादित्यास्त्वग्वेत्तु ।

-यजु. १/१४

अर्थ- हे यज्ञ! तुम सुखकारक एवं आश्रय लेने योग्य हो, तुम से रोग विनष्ट होते हैं तथा रोग के कीटाणु भी ध्वस्त होते हैं, तुम पृथ्वी के लिये त्वचा की भाँति रक्षक हो । तुम हरीतिमा पूरित वनस्पतियों से आच्छादित पर्वत के सदृश्य सुन्दर, सुहावने और हितकारी हो, तुम इस सुविस्तृत आकाश में जल से लवालव भरे वर्षाभिमुख बादलों के सदृश हो ।

धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा । दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धां देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि ।।

-यजु. १/२०

अर्थ- हे यज्ञ! तुम देवों का धान्य (भोजन) हो, अतः इस हवि के द्वारा तुम उन्हें प्रसन्न करो, जिससे वे प्रसन्न होकर यज्ञकर्त्ता को सुख और कल्याण प्रदान करें । हम तुम्हें प्राण, उदान, व्यान आदि प्राणों में, आयु में तथा जीव की व्यापक उन्नति करने के लिए धारण करते हैं, आपके अनुग्रह से यह सब वस्तुऐं हम प्राप्त करेंगे ।

आदित्यै व्युन्दनमसि विष्णो स्तुपोऽस्यूर्णम्रदसं त्वा स्तृणामि स्वासस्थां देवेभ्यो भुवपतये स्वाहा भुवन पतये स्वाहा भूतानां पतये स्वाहा ।

-यजु. १/२/२

अर्थ- हे यज्ञ! तुम पृथ्वी को खींचने वाले हो, अर्थात् पृथ्वी निवासियों को सर्वाङ्गीण अभ्युन्नति और कल्याण के अमृत से अभिसिंचन करते हो । हे देवों को सुखद स्थिति देने वाले एवं सभी भाँति रक्षा करने वाले यज्ञ ! हम तुम्हें सुविस्तृत और सूक्ष्म से सूक्ष्मतर बनाना चाहते हैं ।

अग्ने गृहपते सुगृहपतिस्त्वयाऽग्नेहं
गृह पतिना भूया : ।
अस्थूरिणौ गार्हपत्यानि सन्तु शतष्ठ हिमाः
सूर्यस्यावृतमन्वावर्ते ।।२७।।

-यजुर्वेद प्र. ख., द्वितीय अध्याय

अर्थ- हे गृहपते यज्ञाग्ने ! तुम निश्चयतः पुण्य स्वरूप हो, अतः तुम्हारे साथ रहने से मैं भी अवश्य ही पुण्यवान बनूँगा । इस भाँति हम दोनों साथ रहते हुए सूर्य के आवर्तन सदृश एक सौ वर्ष तक संयम-नियमपूर्ण जीवन बिताते हुए सविता की भाँति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही निष्काम भाव से लोक कल्याण भाव से लोक-कल्याण करें ।

अग्ने वेर्होत्रं वेर्दूत्यमवतां त्वां द्यावा पृथिवीऽअव त्वं द्यावापृथिवी स्विष्टकृद्देवेभ्य ऽइन्दऽआज्येन हविषा भूत्स्वाहा सं जयोतिषा ज्योतिः ।।९।।

-यजुर्वेद प्र. ख.,द्वितीय अध्याय

अर्थ- हे यज्ञाग्ने ! तुम यज्ञ के द्वारा प्राप्त होने वाले, दिव्य गुण, शक्ति, समृद्धि, धन-वैभव आदि के परिवाहक-ले जाने तथा देने वाले दूत के समान हो । द्यौ के निवासी देवगण तथा पृथ्वी निवासी मानव, दोनों को ही तुम्हारी रक्षा करनी चाहिए, क्योंकि तुम दोनों को ही आवश्यक वस्तु और शक्ति के देने वाले हो । द्यौ और पृथिवी तुम्हारी रक्षा करें और तुम देवलोक और मनुष्य लोक की रक्षा करो । सम्यक् जयोति स्वरूप सूर्यदेव हमारे दिये हव्य और आज्य से सन्तुष्ट होकर, दिव्य सुख और सम्पत्तियाँ हमें प्रदान करें । हमारे तेज, उनके दिव्य तेज से समन्वित हों ।

मा भेर्मा संविक्थाऽतमेरुर्यज्ञोषतमेरुर्यजमानस्य प्रजा प्रजा भूयात् । व्रताय त्वा द्वितीय त्वैकताय त्वा ।।२३।।

-यजु. प्र. ख., अध्याय

अर्थ- हे यज्ञ कर्त्ताओ ! भय मत करो ! फल मिलने में देर होने ले विचलित मत होओ । यज्ञ में ग्लानि की कोई बात ही नहीं । यज्ञ करने से यज्ञ कर्त्ताओं के साथ उसके परिवार और परिजन भी दु:खों से छूट जायेंगे । मैं एक, दो, तीन, यानि त्रिचेताग्नि के लिये तेरा अनुष्ठान करता हूँ । इससे यज्ञ कर्त्ता की कामनायें अवश्य ही पूरी होती रहेंगी ।

आदित्यै रास्नासि विष्णोर्वेष्यो ।।
स्यूर्जे त्वाऽब्धेन त्वा चत्रुषाव पश्यामि ।
अग्नेर्जिह्वा सि सुहूर्देवेयो धाम्ने
धाम्ने मे भव, यजुषे यजुषे ।।३०।।

-यजु. प्र. ख., प्र. अ.

अर्थ- हे यज्ञ क्रिया ! तू पृथ्वी निवासियों को कल्याणकारी मर्य्यादाओं में संचालित करने वाली है । यज्ञ की व्यापक शक्ति का तू सत्कार रूप है । पापों को जला डालने वाली अग्नि तेरी जिह्वा है । देवताओं को यहाँ बुलाने वाली क्रियाओं में तुम सर्वश्रेष्ठ हो, हमारा घर यज्ञमय हो ।

अग्नेस्तनूरसि वाचो वियर्जनं देववीतये त्वा गृहणामि बृहद ग्रावासी वानस्पत्यः सऽइदं देवेभ्यो हवि शमीष्व सुशमि शमीष्व । हविष्कृदेहि ।।१५।।

-यजु. प्र. ख., प्र. अ.

अर्थ- हे यज्ञ ! तुम अग्निदेव के साक्षात् स्थूल रूप हो । वेदवाणी के प्रयोग के स्थान हो- यानि वेदों के मन्त्र, यज्ञ करने से ही मनुष्यों और विश्व मात्र को लिए कल्याणकारी परिणाम उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं । हम दिव्य गुणों की प्राप्ति के लिए तुम्हें ग्रहण करते हैं अर्थात् यज्ञ करते हैं, तुम हमारे लिए वनस्पतियों का संवर्द्धन करने वाले मेघ हो । जिसने हविष्य के ग्रहण कर लिया है, ऐसे हैं यज्ञ ! तुम आओ और देवों के लिए दिए इस हवि को संस्कृत करो-भली भाँति संस्कृत करो, जिससे देव इसे ग्रहण कर हमारे लिए कल्याण की वर्षा करें ।

अग्निनां रयिमश्नवत्पोपमेव दिवे दिवे ।
यशसं वीरवत्तमम् ।।३।।

-ऋग्वेद १/१/३

अर्थ- अग्नि के द्वारा यानि, अग्नि को आहुति द्वारा प्रसन्न करके मनुष्य, पुष्टि, कीर्ति, वीरत्व, ऐश्वर्य (धन समृद्धि) को प्राप्त करता है ।

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि ।
स इद्देवेषु गच्छति ।

-ऋग्वेद १/१/४

अर्थ- हे विश्व में परिपूर्ण रूप से (अन्तर्वाह्य सर्वत्र) व्याप्त रहने वाले अग्ने ! यज्ञ और अध्वर से मनुष्य निरन्तर इस देव की यानि दिव्यता की ओर जाता रहता है ।

धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्वं तं योऽस्मान्धूर्वति
तं धूर्वं यं वयं धूर्वाम् ।।
देवानामसि वांहनतमꣳसस्नितमं
पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम् ।।८।।

अर्थ- हे यज्ञाग्नि ! तू नाशक है । उस हिंसक का तू नाश कर, जो हमारा (बिना अपराध के) नाश करता है, और तू उसे भी तू नाश करदे, जिसे (दुष्टता के कारण) मैं नाश करना चाहता हूँ या जिस दुष्ट प्रवृत्ति का मैं नाश करना चाहता हूँ । देवताओं को वहन करने वालों में हे यज्ञाग्नि ! तुम ही श्रेष्ठ और बड़े हो, तुम ही सबसे अधिक शुद्धि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करने वाले हो, सबसे बड़ा परिपूरक, प्रिय और देवों को यहाँ बुलाने में सबसे अधिक समर्थ हो ।।८।।

गन्धर्वास्त्वा विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यरिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिडऽईडितः । इन्द्रस्य बाहुरसि दक्षिणो विश्वस्यरिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्नि रिडऽईडितः । इन्द्रावरुणौ त्वोत्तरतः परिधत्तां ध्रुवेण धर्मणा विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधि रस्यग्निरिडऽईडितः ।

-यजु. १/२/३

अर्थ- संसार को बसाने वाले तथा पृथ्वी को धारण करने वाले सूर्यदेव, विश्व के सुख एवं रक्षा के लिए यज्ञ को सर्वत्र प्रसारित करें । यज्ञ में स्तुति करने योग्य हे अग्निदेव ! तुम इन्द्र देवता का दाहिना हाथ और यज्ञकर्त्ता की रक्षा करने वाले हो, विश्व की भलाई करने में तुम यज्ञकर्त्ता के सहायक और रक्षक हो ।

अग्नेऽदब्धायोऽशीतम पाहि मा दिद्योः पाहि प्रसित्यै पाहि दुरिष्ट्यै पाहि दुरद् मन्याऽअविषीनः पितुं कृणु । सुपुदा योनौ स्वाहा वाडग्नेय संवेशपतये स्वाहा सरस्वत्यै यशो भगिन्यै स्वाहा ।।२०।।

-यजु. १/२/२०

अर्थ- हे अहिंसित यजमान वाले और अत्यन्त व्याप्त यज्ञाग्ने ! तुम दैवी गुण वाले वाणों से हमारी रक्षा करो, जिससे हम यज्ञ की साधना करने वाले, किसी आसुरी मोह-ममता के बन्धन में न पड़ें, हमारा यजन (यज्ञ क्रिया) किसी दुष्ट भाव से नहीं हो, हमारा आहार राजसी और तामसी न हो, कदाचित् कभी हो भी तो हे यज्ञ ! उसे तू हमारे लिए विष रहित बना देना । हम तुम्हारी वेदी में, जो कि सदा सुख देने वाली है, बैठकर गार्हपत्य अग्नि में स्वाहा पूर्वक हवन करें । हमें यश और ऐश्वर्य देने वाली वाणी और विद्या की प्राप्ति हो, इसीलिए स्वाहापूर्वक हम आहुति देते हैं । उक्त यश और ऐश्वर्य को धारण करने वाली के अनुकूल ही सदा-सर्वदा हमारा आचरण हो, इसीलिए हम आहुति देते हैं ।

आतं भज सौशअरवसेप्वरनऽउक्थ॥ उक्थ आभज शस्यमाने प्रिय सूर्ये प्रियो ऽ अग्ना भवात्युज्जातेन भिनददुज्जनित्वैः ।।२७।।

-यजु. १/१/२/२७

अर्थ- हे देवताओ ! तुम द्रव्य देने वाले पुरुष को ऐसे श्रेष्ठ कार्य में प्रेरित और नियुक्त करो जिससे उसकी उज्जवल कीर्ति विस्तार को प्राप्त करे, सूर्य देवता उसे प्रिय पात्र के रूप में वरण करे, वह अग्नि के लिए परम प्यारा बने और वह पुत्र-पौत्रादि की उत्कर्षता भी प्राप्त करें । यज्ञकर्त्ता के कुल में श्रेष्ठ सन्ततियों की आविर्भूति होती है ।

अस्य प्रत्नामनु द्युतꣳशुक्रं दुदुहे अह्रयः ।
पयः सहस्र सामृषिम् ।।१६।।

अर्थ- इस प्राचीन प्रकाशमय पथ का अनुसरण कर दिव्य ज्ञान सम्पन्न महर्षि गण, इस यज्ञ रूपी कामधेनु से शुक्र, सात्विकतारूपी सुधा, शक्ति ज्ञान एवं आनन्द रूप दूध दुहते हैं ।

तनूपाऽअग्नेऽसि तन्वं मे पाह्यायुर्दाऽअग्नेऽस्यायुर्मे देहि वर्चोदाऽअग्नेऽसि वर्चो मे देहि । अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्मऽआपृण ।।१७।।

-यजु. ३/१/१७

अर्थ- हे यज्ञाग्ने ! तू शरीर रक्षक है, अतः हमारे शरीर की रक्षा करो, हे अग्नि ! तब आयु प्रदाता है, अतः मुझे पूरी आयु प्रदान कर । हे अग्ने ! तू तेज देने वाला है अतः हमें तेजस्वी बना ले, हे यज्ञाग्ने हम में जहाँ भी हो कुछ वैषम्य, दोष और त्रुटियाँ हैं, उन्हें बाहर निकाल कर हमें समता, शुद्धता एवं पूर्णता से पूर्ण करो ।

वेदों में इस तरह यज्ञ की महिमा का वर्णन करते हुए उसे प्रत्येक शुभ कार्य में सम्मिलित रखने के लिए कहा गया है-

प्राचं यज्ञं प्रणतया सस्वायः ।

-ऋग्वेद १०/१०/१२

प्रत्येक शुभ कार्य को यज्ञ के साथ प्रारम्भ करो ।

भद्रो नो अग्नि राहुतः ।

-यजुर्वेद १५/३०

यज्ञ में हुई आहुतियाँ कल्याण कारक होती हैं ।

अयज्ञियो पतबर्चः ।

-अथर्व

ईजानाः स्वर्गं यान्ति लोकम् ।

-अथर्व १८/४/२

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ न करने वाले का तेज नष्ट हो जाता है यज्ञ करने वाले को स्वर्ग सुख प्राप्त होता है ।

यज्ञोदय सर्व कामधुक् ।

-अङ्गिरा

यह यज्ञ सब कामनायें पूर्ण करने वाला है ।

असंस्थतो वा एष यज्ञः ।

-तैं. ब्रा. १४/९

यज्ञ का पुण्य फल कभी नष्ट नहीं होता ।

पूर्णा दर्वि परा पत सुपूर्णा पुनरापत ।
यत्तेन विक्रीणा यहाऽदषभूर्जदश्ष शतक्रतो ।।४९।।

-यजु., प्र. ख., तृ. अ.

अर्थ- हे दर्वि! तू होतव्य द्रव्य से परिपूर्ण होकर ऊपर जाओ और वहाँ से भली- भाँति पूर्ण होकर पुनः हमारे पास वापस लौट आओ । हे सूर्य ! जैसे कोई मूल्य के माध्यम से कोई वस्तु खरीदते और बेचते हैं, उसी भाँति हम लोग इस यज्ञ कर्म में, आहुति क्रिया द्वारा, अन्न और रस, भोजन और पुष्टि, शक्ति और आनन्द का विनिमय-आदान-प्रदान किया करते हैं ।

एत ते रुद्र भागः सह स्वस्राम्बिकया तं ।
जुषस्व स्वाहैष ते रुद्र भागाऽआखुस्ते पशुः ।।५७।।

-यजु., प्र. ख., तृ. अ.

अर्थ- हे यज्ञ! तेरा भाग है । तू इस आहुति देने के कारण अपनी सर्वगत रोगनाशक शक्ति से हमें प्राप्त हो । हे यज्ञ! यह (हवि) तेरा भाग है । तेरी सोम आदि हवि रोगों को भूल से ही विनाश करने वाला है ।

अव रुद्रमदी महाव देवं त्र्यम्बकम् ।
यथा नो वस्यसस्करद्यथा नः श्रेयस्करद्यथा नो व्यवसाययात् ।।५८।।

-यजु., प्र. ख., तृ. अ.

अर्थ- हे तीन उत्पत्ति स्थान वाले अग्ने ! हम लोग तुझे देव को आहुतियों से तृप्त करते हैं, जिससे हमें, सम्पत्ति, श्रेय और उद्योगशीलता की प्राप्ति हो ।

अग्ने वाजजिद्वाजं त्वां सरिष्यन्तं वाजयजेत सम्मार्ज्मि ।
नमो देवेभ्यो सुधा पितृभ्यः सुयने मे भूयास्तम् ।।७।।

-यजु., प्र. ख., तृ. अ.

अर्थ-हे बल प्रापक और बल के विजेता यज्ञ अग्नि ! मैं तुझे प्रदीप्त करता हूँ । देवों के लिये तुम सत्कार एवं पितरों के लिये शक्ति स्वरूप हो । ये दोनों मुझे संयम से चलाने वाले हों ।

अस्कन्नमद्य देवेभ्यऽआज्य संप्रियासम-
ङ्गिरणा विष्णो मा त्वावक्रमिषं वसुमतीमग्ने
तेच्छावामुपस्थेषं विष्णो स्थानम्सीतऽइन्द्रो
वीर्य्यमकृष्णो दूर्ध्वोऽध्वरऽआस्थात् ।।८।।

-यजु. प्र. ख.; तृ. अ.

अर्थ- मैं आज दिव्य गुणों के लिये, अविचलित आज्य को गति के साधक अग्नि के द्वारा अच्छे प्रकार धारण करता हूँ । हे यज्ञ! मैं धन-धान्य से युक्त तुम्हारे आश्रय को प्राप्त होऊँ । हे अग्ने! तू यज्ञ का आधार है । इससे वायु पराक्रम करता है, यह आकाशस्थ रहे ।

अन्तश्चरति रोचानास्य प्राणादपानती ।
व्यख्यन महिपो दिवम् ।।७।।

-यजु. प्र. ख., तृ. अ.

अर्थ- यज्ञाग्नि दीप्तिप्राण से अपान तक अन्तर विचरण करती है । यह महान अग्नि द्यौलोक को प्रकाशित करती है यह यज्ञ, अपने प्रभाव को भौतिक लाभ देने तक में ही सीमित नहीं करता । इसका प्रभाव यज्ञकर्त्ता के अन्तर में भी संक्रमित होता है, जिससे प्राण और अपान को अलग करने वाले कपाट जल जाते हैं और जहाँ प्राण और अपान एकीभूत हुए कि दिव्यलोक में जाने का पथ और शक्ति एवं प्रकाश एक साथ ही मिल जाता है ।

अयमग्निर्गृहपतिर्गार्हपत्यः प्रजाया वसुवित्तम् ।
अग्ने गृहपतेऽभि द्युम्नभि सहऽआयच्छस्व ।।३९।।

-यजु., प्र. ख., तृ. अ.

अर्थ- यह पोषण करने वाली गार्हपत्य अग्नि, प्रजा के लिये अतिशय ऐश्वर्य देने वाला है । इसलिये यज्ञकर्त्ता प्रार्थना करते हैं- हे गृहपति अग्ने! आप हमारे लिये, सब ओर से, ऐश्वर्य, यश एवं बल का विस्तार करें ।

अग्निमूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् ।
अपाश्ष रेतश्सि जिन्वति ।।१२।।

-यजु. प्र. ख., तृ. अ.

अर्थ - यह महान् यज्ञाग्नि, पृथ्वी में व्याप्त हो कर इसका पोषक और संचालक बन जाता है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अन्तरिक्ष लोक में यह पर्जन्य से एकीभूत होकर वृष्टि (जल) का रूप धारण कर लेता है और यही यज्ञाग्नि द्युलोक में व्याप्त और सामंज्यसित होकर सूर्य रूप को प्राप्त होता है अतः यज्ञ के द्वारा मनुष्य प्रत्येक लोक की ऊँची से ऊँची स्थिति को प्राप्त कर लेता है ।

गृहा मा विभीत मा वेपध्वमूर्ज विभ्रतऽएमसि । ऊर्ज विभ्रद्वः सुमनाः सुमेधा गृहानैमि मनसा मोदमानः ।।४१।।

-यजु., प्र. ख., तृ. अ.

अर्थ- यज्ञ भगवान यज्ञ कर्त्ताओं को आश्वासन देते हैं- हे गृहस्थो ! डरो मत । घबड़ाओ मत, बल-वीर्य्य को धारण करने वाले हम तुम्हारे पास आये हैं । ओज को धारण करते हुए हम शुद्ध मन और बुद्धि वाले हृदय प्रसन्न होते हुए । हम तुम्हें कल्याण के लिए प्राप्त होते हैं ।

कुक्कुटोऽसि मधुजिह्वऽइषमूर्जमावद त्वया वय संघात संघातंजेष्म वर्षवृद्धमसि प्रति त्वा वर्षवृद्धं वेत्तुं परापूत रक्षः परापूता अरातयोऽपहत रक्षो वायुर्वो विविनक्तु देवो वः सविता हिरण्य पाणिः प्रति-गृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना ।।१६।।

-यजु., प्र. ख., प्र. अ.

अर्थ- हे यज्ञ! तुम जल के मालिन्य अदि दोष तथा उसमें रहे अभाव की परिपूर्ति करने वाले हो, मधुजिह्वा वाले हो अर्थात् माधुर्य्यतत्व से तुम ओत-प्रोत हो, तुम वृष्टि के वर्द्धक हो, मनुष्यों को यह जानना चाहिए कि यज्ञ, वृष्टि वर्द्धक है । तुम हमारे लिये अन्न और रस को सिद्ध कर, जिससे उसे भक्षण कर हम अन्तर-वाह्य दोनों संग्रामों में विजयशील हो सकें, तुम्हारे द्वारा हमारे बाहरी विघ्न नष्ट हो जायँ और हमारी अदान शीलता के भाव विचार भी विनष्ट होंवे । तुम आहुति में दिये गये पदार्थों को सूक्ष्म से सूक्ष्मत्तर बनाकर उसे परिव्यापक सूर्य किरणों के सहारे सवर्त्र फैला दो ।

देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय । दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ।।७।।

-यजु., प्र. ख. एकादश अध्याय

अर्थ- हे सर्वतत्वों के उत्पादक यज्ञ! हमें सुख एवं ऐश्वर्य्य को देने वाले श्रेष्ठतम कर्म, यज्ञानुष्ठान में प्रवृत्त करो और यज्ञ के अनुष्ठान करने वालों को अपने दिव्य गुणों की उपलब्धि के लिए उत्प्रेरित करो । जिससे हम लोग दिव्यवाणी और दिव्य वाणी के अधिष्ठाता की पवित्रता से अपने ज्ञान और वाणी के साधनों को पवित्र करें, जिससे हमारा ज्ञान अमृत से और हमारी वाणी आस्वाद से परिपूर्ण हो जाय ।

इन्द्रस्य स्यूरसीद्रस्यध्रु वोऽसि ऐन्द्रमसि वैश्वदेवमसि ।।३०।।

-यजु., प्र. ख. पंचम अ.

अर्थ- हे यज्ञ! तुम ऐश्वर्यवान इन्द्र या परमेश्वर के लिये सुनिश्चित रूप से आकर्षण के साधन हो, क्योंकि तुम्हारे द्वारा आह्वान होने पर परमेश्वर से आये बिना रहा ही नहीं जाता । इन्द्र के इन्द्रत्व और विश्व देव के विश्वदेवत्व सभी तुम पर अवलम्बित है-यानि तुम्हारे द्वारा ही इन दिव्य गुणों की अभिप्राप्ति सबों को होती है ।

ध्रुवोसि पृथिवी दृह ध्रुवक्षिदस्यन्तरिक्षम् दृहच्युमक्षिदसि दिवं दृहाग्नेः पुरीपमसि ।।

-यजु., प्र. ख. पंचम अध्याय, श्लोक १

अर्थ- हे यज्ञ! तू अच्युत स्थान में वास करने वाला है, तू स्वयं ध्रुव है यानि तेरी क्रिया का फल अत्यन्त ही सुनिश्चित है, इसीलिए प्रार्थना है कि तू पृथ्वी लोक को शुभ में दृढ़ करो, अन्तरिक्ष लोक को मंगलमयता में स्थिर करो और द्युलोक को कल्याण में चिर प्रतिष्ठित करो ।

रक्षोहणो वो वलगहनः प्रोक्षामि वैष्णावात्रक्षोहणो वो वलगहनोऽवनयामि वैष्णवात्रक्षोहणो वो वलगहनोऽवस्तृणामि वैष्णावात्रक्षोहणो वां वलगहनाऽउपदधामि वैष्णवी रक्षोहणो वां वलगहनो पर्युहामि वैष्णवी वैष्णावमसि वैष्णवा स्थ ।।२५।।

-यजु., प्र. ख. पंचम अ.

अर्थ-रोग कृमि नाशक तथा विषाक्त रोग-नाशक यज्ञ प्रयोगो! हम तुम को सिक्त करते हैं । रोग-कृमि नाशक तथा विषाक्त-रोग नाशक यज्ञ-प्रयोगो ! हम तुम्हें स्वाधीन करते हैं । हे

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रोग-कृमि नाशक तथा विषाक्त-रोग नाशक यज्ञ प्रयोगो! हम तुम्हें विस्तृत करते हैं । हे रोग-कृमि नाशक, विषाक्त-रोग नाशक तथा यज्ञ से संगत द्यावा पृथ्वी! हम तुम्हारा आश्रय लेते हैं । हे रोग कृमि-नाशक, विषाक्त रोग-नाशक एवं यज्ञ से संगत द्यावापृथ्वी! तुमको हम यज्ञ प्रयोगों से परिपूरित करते हैं । हे हव्य! तू यज्ञ के योग्य है तथा हे ऋत्विजो! तुम यज्ञ को सम्पन्न करने योग्य हो । तुम हमारे रोग-शोकों को निवृत्त करो ।

ये रूपाणि प्रतिमुंचमानाऽअसुराः सन्तः स्वधया चरन्ति । परापुरो निपुरो ये भरन्त्यग्निष्टाँल्लोकात्प्रणुदात्यस्मात् ।।३०।।

-यजु., प्र. ख., दू. अ.

अर्थ- जो रूप को बदलने वाले, जो घातक अन्न से आकृष्ट होकर विचरते तथा जो दूरस्थ और निकटस्थ स्थानों में रहते हैं, उनको यज्ञ-अग्नि इस लोक से दूर करो । सूक्ष्म जगत् में सदा ही आसुरी शक्तियाँ चक्कर लगाया करती हैं, जहाँ किसी ने भी शरीर, प्राण और मन से जरा भी घातक अन्नों का सेवन किया कि आसुरी शक्तियाँ उनमें प्रवेश कर जाती हैं और उसे क्रियात्मक असुर बना डालती है अतः शरीर, प्राण और मन से हमें सावधानी पूर्वक सात्विक तत्व ही ग्रहण करना चाहिये । किंतु यज्ञ की दिव्य और प्रचण्ड शक्ति इन असुरों को जलाये डालती है, इसीलिये यज्ञकर्त्ताओं पर आसुरी शक्तियों का कुछ बल नहीं चलता ।

अत्र पितरो मादयध्वं यथाभागमावृषायध्वम् ।
अमीमदन्त पितरो यथा भागमावृषायिषत ।।३१।

-यजु., प्र. ख., दू. अ.

अर्थ- हे यज्ञ के द्वारा आहुत देवताओ और पितरगणो ! आप लोग इस यज्ञ में आकर आनन्द और पुष्टि को प्राप्त कीजिये और हमें भी आनन्द और पुष्टि दीजिये । जिस भाँति सविता देव निष्काम भाव से विश्व को सुख पहुँचाते हैं, उसी भाँति हम सब भी आपके समान ही विश्व सेवा में संलग्न रहें ।

उपनिषदों में यज्ञ-रहस्य का वर्णन

उपनिषदों के पन्ने - पन्ने यज्ञ की महिमा से भरे हैं ।

कठोपनिषद् प्रथम अध्याय, प्रथम, बल्ली में यम और नचिकेता सम्वाद में यज्ञों को स्वर्ग-प्राप्ति का प्रथम साधन बताया गया है-

नचिकेता ने यमराज से पूछा-

सत्वमग्निं स्वर्गमध्येषि मृत्यो प्रब्रूहि त्वं श्रद्धानाय मह्यम् स्वर्गलोका अमृतत्त्व भजन्त एतद्द्वितीयेन वृणे वरेण ।१३।

अर्थ- हे मृत्युदेव ! स्वर्ग की प्राप्ति के साधन रूप अग्नि को (यह प्रक्रिया को) आप भली-भाँति जानते हैं. अतः उस अग्नि विद्या को मुझ श्रद्धालु को अच्छी तरह समझाकर कहिए, जिसे जानकर लोग स्वर्गलोक में रहकर अमृतत्व को प्राप्त होते हैं यह मैं आपसे दूसरा वर माँगता हूँ ।।१३।।

प्र ते ब्रवीम तदु मे निबोध स्वर्ग्यमग्निं नचिकेत -प्रजानन ।

अनन्त लोकाप्ति प्रमयो प्रतिष्ठां विद्वित्वमेतं निहितं गुहायाम् ।।१४।।

अर्थ- हे नचिकेता ! स्वर्गदायिनी अग्नि विद्या (यज्ञ-विधि) का भली-भाँति जानने वाला मैं तुम्हारे लिये उसे अच्छी तरह बतलाता हूँ । उसे मुझसे भली-भाँति जान लो । तुम इस विद्या को अनन्त लोक प्राप्ति कराने वाली, उसकी आधार स्वरूप तथा बुद्धि रूपी गुहा में निहित (छिपी हुई) जानो ।

अग्नि विद्या यानी यज्ञ-प्रकरण की सारी विधियाँ बताने के उपरान्त उस अग्नि विद्या का फल यमराज बताते हैं ।

त्रिणाचिकेतस्त्रिभिरेत्य सर्धि त्रिकर्मकृत्तरति जन्ममृत्यु । ब्रह्मजज्ञं देव मीड्यं विदित्या निचोय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति ।।१७।।

अर्थ- इस अग्नि का शास्त्रोक्त रीति से तीन बार अनुष्ठान करने वाला पुरुष ऋक्, यजु, साम-तीनों वेदों के साथ सम्बन्ध जोड़कर, यज्ञ, दान, तप रूप तीनों कर्मों को करता रहने वाला मनुष्य, जन्म-मृत्यु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से तर जाता है । ब्रह्मा से उत्पन्न सृष्टि को जानने वाले स्तवनीय इस अग्नि को भली-भाँति जानकर, ठीक रीति से चयन करके उस अनन्त शान्ति को प्राप्त कर लेता है जो मुझको प्राप्त है ।।१७।।

एतेषु यश्चरते भ्राजमानेषु यथाकालं चाहुतयो ह्यददायन् । तं नयन्त्येता सूर्यस्य रश्मियो यत्र देवानां पतिरेकोऽधिवासः ।।५।।

-मुण्डकोपनिषद् द्वितीय खण्ड श्लोक ५

अर्थ- जो कोई भी अग्निहोत्री इन दैदीप्यमान ज्वालाओं में ठीक समय पर अग्निहोत्र करता है, उस अग्निहोत्र का निश्चय ही अपने साथ लेकर ये आहुतियाँ, सूर्य की किरणें बनकर उस स्वर्गलोक में पहुँचा देती हैं, जहाँ देवताओं का एक मात्र पति निवास करता है ।

एह्येहीते तमाहुतयः सुवर्चसः सूर्यस्य रश्मिभिर्यजमान वहन्ति । प्रियां वाचमभिवदन्त्योऽचयन्त्य एषः वः पुण्य सुकृतो ब्रह्मलोकः ।।६।।

अर्थ-उन प्रदीप्त ज्वालाओं में दी हुई आहुतियां, आओ, आओ, यह तुम्हारे शुभ कर्मों से प्राप्त पवित्र ब्रह्मलोक है, इस प्रकार की प्रिय वाणी बारबार कहती, उसका आदर सत्कार करती हुई उस (यज्ञकर्त्ता) यजमान को सूर्य की रश्मियों द्वारा ब्रह्मलोक में ले जाती है ।

सरस्वती उपनिषद् १४ में-

यज्ञ वष्टु धिया वसु वचन है, जिसका तात्पर्य है-यज्ञ से ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है आगे चलकर मन्त्र १७ में **'यज्ञ दधे सरस्वती'** वचन है । जिससे प्रकट होता है कि यज्ञ से ही सरस्वती प्रसन्न होती है ।

छान्दोग्योपनिषद् द्वितीय अध्याय, तृतीय खण्ड के श्लोक १ और २ में यज्ञ द्वारा वर्षा कराने की विद्या का संकेत किया गया है ।

वृष्टि में पाँच प्रकार के साम की उपासना करे । पूर्व वायु हिकार है, मेघ, यह प्रस्ताव है, बरसता है, यह उद्गीत है, चमकता और गर्जन करता है, यह प्रतिहार है, जल ग्रहण करता है यह निधन है . इस प्रकार जानने वाले पुरुष वृष्टि में पाँच प्रकार से साम की उपासना करता है, उसके लिये वर्षा होती है और वह स्वयं भी वर्षा करा लेता है ।

छान्दोग्योपनिषद्, चतुर्थ अध्याय, दशम खण्ड । उपकौशल को अग्नियों द्वारा ब्रह्म-विद्या का उपदेश देने तथा यज्ञाग्नि की महानता पर प्रकाश डालने वाला बड़ा ही सारगर्भित उपाख्यान है जो इस प्रकार है-

'उपकौशल नाम से प्रसिद्ध कमल का पुत्र सत्यकाम जावाल के यहाँ ब्रह्मचर्य ग्रहण करके रहता था । उसने बारह वर्ष तक आचार्य की अग्नियों की सेवा की, किन्तु आचार्य ने अन्य ब्रह्मचारियों का तो समावर्तन संस्कार कर दिया, किन्तु केवल इसी का नहीं किया । आचार्य से उसकी भार्या ने कहा-'यह ब्रह्मचारी खूब तपस्या कर चुका है, इसने अच्छी तरह अग्नियों की सेवा की है । देखिये, अग्नियाँ आपकी निन्दा न करें, अतः इसे विद्या का उपदेश कर दीजिये । किन्तु वह उसे उपदेश किये ही बिना ही बाहर चला गया । उस उपकौशल ने मानसिक खेद से अनशन करने का निश्चय किया । इस आचार्य की पत्नी ने कहा-अरे ब्रह्मचारिन् ! तू भोजन कर, भोजन क्यों नहीं करता ? वह बोला-इस मनुष्य में अनेक ओर जाने वाली कामनायें रहती हैं । मैं व्याधियों से परिपूर्ण हूँ इसलिये भोजन नहीं करूँगा ।

फिर अग्नियों ने एकत्रित होकर कहा-यह ब्रह्मचारी तपस्या कर चुका है, इसने हमारी अच्छी तरह सेवा की है । अच्छा, हम इसे उपदेश करेंगे ।

गार्हपत्याग्नि ने उपकौशल को अपना स्वरूप बताते हुए कहा-पृथ्वी, अग्नि, अन्न, और आदित्य-ये मेरे चार शरीर हैं । आदित्य के अन्तर्गत जो यह पुरुष, दिखाई देता है वही मैं हूँ । वह पुरुष जो इसे इस प्रकार जानकर इसकी उपासना करता है, पाप कर्मों को नष्ट कर देता है, लोकवान होता है, पूर्ण आयु के प्राप्त होता है, उज्ज्वल जीवन व्यतीत करता है तथा जो इस प्रकार जानकर इसकी उपासना करता है, इसका हम इस लोक और परलोक में भी पालन करते हैं ।

फिर उसे अन्याहार्यपचन ने शिक्षा दी-जल, दिशा, नक्षत्र और चन्द्रमा-ये मेरे चार शरीर हैं । वह जो विद्युत में पुरुष दिखाई देता है, वह मैं हूँ, वही मैं हूँ । वह पुरुष जो इसे इस प्रकार जानकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस (चार भागों में विभक्त अग्नि) की उपासना करता है, पाप कर्म को नष्ट कर देता है, लोकवान होता है, पूर्ण आयु को प्राप्त करता है, उज्ज्वल जीवन व्यतीत करता है इसके पीछे होने वाले पुरुष क्षीण नहीं होते तथा जो इस प्रकार जानकर इसकी उपासना करते हैं, हम उसका इस लोक और परलोक में भी पालन करते हैं ।

त्रयोदशखण्ड-

तदन्तर उसे आहवनीय-अग्नि ने उपदेश किया-प्राण, आकाश, भूलोक और विद्युत-ये मेरे चार शरीर हैं । यह जो विद्युत में पुरुष दिखाई देता है, वही मैं हूँ । वह पुरुष जो इसे इस प्रकार जानकर इसकी उपासना करता है, (वह) पाप कर्म को नष्ट कर दता है, लोकवान होता है, पूर्ण आयु को प्राप्त करता है । और उज्जवल जीवन व्यतीत करता है । इसके पश्चात् होने वाले पुरुष क्षीण नहीं होते तथा जो इस प्रकार जानकर इसकी उपासना करते हैं उसका हम इस लोक और परलोक में भी पालन करते हैं ।

इसी प्रकार अन्य अग्नियों द्वारा भी उपकौशल को अपना स्वरूप बताया गया । अन्यान्य उपनिषदों में भी यज्ञ अग्नि को अनिर्वचनीय महत्ता पर बहुत कुछ प्रकाश डाला है । प्राचीनकाल में ऋषिगण इस यज्ञाग्नि को इस लोक का सर्वोपरि तत्व मानते थे और उसके द्वारा समस्त प्रयोजनों को पूर्ण करने में समर्थ होते थे । इस विद्या का रहस्य जानने वाले के लिए संसार में कोई वस्तु दुर्लभ नहीं रहती ।

गीता में यज्ञ की महिमा

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्म बन्धनः ।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्ग समाचर ।।३/९।।

अर्थ- यज्ञ के निमित्त किये गये कर्मों के सिवाय दूसरे कर्मों को करने से यह मनुष्य कर्म-बन्धन में बंधता है, इसीलिए हे अर्जुन ! मुक्त सङ्ग रहकर तदर्थ का ही भलीभाँति आचरण कर ।

सहयज्ञाः प्रजा सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वो ऽस्त्विष्ट कामधुक् ।।३/१०।।

अर्थ- कल्प के प्रारम्भ में प्रजापति ने यज्ञ सहित ही प्रजाओं की रचना की और कहा कि इससे (यज्ञ के) द्वारा तुम लोग वृद्धि को प्राप्त करो और यह यज्ञ ही तुम लोगों की कामनाओं को पूर्ण करने वाला होवे ।

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ।।३/११।।

अर्थ -इस यज्ञ के द्वारा देवताओं की उन्नति (भावयत) करो और वे देवगण तुम लोगों की उन्नति करें । परस्पर उन्नति करते हुए श्रेय को प्राप्त होओगे ।

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञ भविताः ।
तैर्दत्तान् प्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः ।।३/१२।।

अर्थ- यज्ञभाविताः देवगण तुम लोगों को इष्ट भोग प्रदान करेंगे । उनके द्वारा दिये हुए भोगों को जो पुरुष उनको बिना दिये ही भोग करता है, वह निश्चय ही चोर है ।

यज्ञ शिष्टाशिनः सन्तोमुच्यन्तेसर्वकिल्विषैः ।
भुञ्जते ते त्वधं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ।।३/१३।।

अर्थ- यज्ञ से बचे हुए अन्न को खाने वाले श्रेष्ठ पुरुष सब पापों से छूटते हैं और जो पापी लेग अपने ही शरीर, पोषण के लिए पकाते हैं, वे तो पाप को ही खाते हैं ।

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्न सम्भवः ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्भवः ।।३/१४

अर्थ- सम्पूर्ण प्राणि अन्न से उत्पन्न होते हैं और अन्न की उत्पत्ति पर्जन्य (वृष्टि) से होती है और वृद्धि यज्ञ से होती है और यज्ञ कर्म से ही उत्पन्न होने वाला है ।

कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षर समुद्भवम् ।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ।।३/१४

अर्थ- कर्म ब्रह्म (वेद) से उत्पन्न हुआ है ऐसे जानों और ब्रह्म, अक्षर (अविनासी तत्त्व) से उत्पन्न हुआ है, इससे सर्वगतम् (सर्वव्यापी) ब्रह्म नित्य ही यज्ञ में प्रतिष्ठित है ।

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थित चेतसः ।
यज्ञायाचरतः कर्मः समग्रं प्रविलीयते ।।४/२३

अर्थ- आसक्ति से रहित, ज्ञानावस्थित चेतसः (चित्त वाले) यज्ञ के लिए ही आचरण करते हुए मुक्तपुरुषों के सम्पूर्ण कर्म प्रविलीन हो जाते हैं ।

ब्रह्मार्पण ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्ने ब्रह्मणा हुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्म कर्म समाधिना ।।४/२४

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थ- अर्पण (स्रुवादिक) भी ब्रह्म है, हवि भी ब्रह्म है, ब्रह्म-रूप अग्नि में ब्रह्मरूप कर्त्ता के द्वारा जो हवन किया गया है तथा ब्रह्म-रूप कर्म में समाधिस्थ हुए उस पुरुष के द्वारा जो प्राप्त होने योग्य है, ब्रह्म ही है ।

यज्ञशिष्टामृत भुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।
नायं लोकोऽस्त्यज्ञस्य कुतोऽन्य कुरुसत्तमः ।।४/३१

अर्थ- हे करुश्रेष्ठ ! यज्ञों के परिणाम रूप अमृत को भोगने वाले योगीगण सनातन ब्रह्म को प्राप्त होते हैं । यज्ञ से रहित जो पुरुष हैं, उन्हें तो यह (मनुष्य) लोक भी सुखदायक नहीं है, फिर परलोक की तो बात ही क्या ?

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधामहमौषधम् ।
मन्त्रोऽहममेवाज्यमहमग्निरहं हुतुम् ।।९/१६

अर्थ-(भगवान कहते हैं) श्रौतकर्म मैं हूँ, स्वधा मैं हूँ, ओषधि मैं हूँ, मन्त्र मैं हूँ, आज्य(घृत) मैं हूँ और हवन रूप क्रिया भी मैं ही हूँ ।

त्रैविद्या मां सोमपाः, पूतपापा, यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गति प्रार्थयन्ते ।
ते पुण्यतासाद्य सुरेन्द्रलोक मश्नन्ति दिव्यान्दिवि देव भोगान् ।।९/२०

अर्थ-त्रैविद्याः (तीन वेदों में विधान किये हुए कर्मों को करने वाले) एवं सोमरस पीने वाले, पापों से पवित्र हुए पुरुष मुझे यज्ञों द्वारा पूजकर स्वर्ग को चाहते हैं, वे पुरुष इन्द्रलोक को प्राप्त कर स्वर्ग में दिव्य देवताओं के भोगों को भोगते हैं ।

अफलाकाडिक्षभिर्यज्ञो विधि दृष्टो य इज्यते ।
यष्टव्यमेवेति मनः समाधायं स सात्विकः ।।१७/११

अर्थ-जो यज्ञ शास्त्रीय विधि से नियत किया हुआ है (विधि दृष्टः) तथा करना ही कर्तव्य हैं, ऐसे मन को समाधान करके फल को न चाहने वाले पुरुषों द्वारा किया जाता है वह सात्विक है ।

यज्ञं तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते ।।१७/२७

अर्थ- यज्ञ, तप तथा दान में स्थित है, वह भी सत् है, ऐसे कहा जाता है ।

यज्ञ दानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेवतत् ।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ।।१८/५

अर्थ-यज्ञ, दान, और तप रूप कर्म त्यागने योग्य नहीं है, वरन् वह कर्म तो करने ही योग्य है-करना कर्तव्य ही है । यज्ञ दान और तप यह तीनों तो मनीषियों को पवित्र करने वाले हैं ।

रामायण में यज्ञ-चर्चा

सृष्टि के प्रादुर्भाव काल में जब पहले-पहले मनुष्य इस धरती पर अवतीर्ण हुआ तो यहाँ उसने बड़े अभाव, अशांति और कष्ट दिखाई दिये । मनुष्य अपने पितामह ब्रह्माजी के पास गये और सारी व्यथा कह सुनाई । ब्रह्माजी कुछ देर तक विचार करते रहे, इसके बाद उन्होंने मनुष्य से कहा-जाओ यज्ञ करो, आहुतियों से सन्तुष्ट हुए देवता तुम्हारी कामनायें पूर्ण करेंगे, शक्ति प्रदान करेंगे जिससे तुम्हारा जीवन सभी प्रकार से सुखी होगा ।

इसके बाद ब्रह्माजी ने 'यजुर्वेद' का निर्माण किया । जिस प्रकार ऋग्वेद के मन्त्रों में विश्व-दर्शन, सूक्ष्मातिसूक्ष्म ज्ञान, तथा तात्विक मीमांसायें भरी हुई हैं उसी प्रकार यजुर्वेद में यज्ञों से कामनाओं की पूर्ति होने का विशद विज्ञान भरा पड़ा है । इस यज्ञ विद्या का पंडित होने के कारण ही भारतवर्ष किसी समय धन-धान्य से परिपूर्ण, सर्व सुखी एवं सर्व समुन्नत रहा है । यज्ञ की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए शास्त्रकार ने उसे भारतीय संस्कृति का पिता कहा है और उसके द्वारा मनुष्य की सम्पूर्ण कामनाओं की पूर्ति होने की बात को प्रमाणित किया है । यही कारण था कि किसी जमाने में घर-घर अग्नि-होत्र हुआ करता था । यज्ञ किये बिना लोग आहार नहीं ग्रहण करते थे, यज्ञ के बिना कोई मंगल कार्य नहीं पूरा होता था । दुष्ट प्रवृत्ति के लोग भी यज्ञ के तान्त्रिक विधानों से अपना मनोरथ सफल किया करते थे । इससे पता चलता है कि उस जमाने में यज्ञ-विद्या की कितनी गहन शोध हुई थी ।

हमारा कोई ऐसा ग्रन्थ नहीं जिसमें यज्ञ के महत्व पर प्रकाश न डाला गया हो । वेदों के अतिरिक्त भी उपनिषद, दर्शन, पुराण, स्मृति, ब्राह्मण-ग्रन्थ, गीता आदि सभी ग्रन्थों में यज्ञ को संसार की सुख-शान्ति का प्रमुख उपाय बताया गया है । अनेक स्थलों पर बड़े-बड़े यज्ञों के विधान और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वर्णन मिलते हैं । भारतीय-संस्कृति में एक नये अध्याय के प्रणेता महाकवि तुलसीदास जी की दृष्टि से भी वह महत्व छुप नहीं सका । रामायण में अनेक प्रसंग ऐसे हैं जिनमें यज्ञ की महान महत्ता पर प्रकाश डाला गया है ।

भगवान राम का जन्म भी यज्ञ के फलस्वरूप ही हुआ था । वे अपने अवतार का श्रेय यज्ञ भगवान को ही देते हैं । यज्ञ ही रामावतार का जनक है । पुत्र की इच्छा से प्रेरित होकर दशरथ जी ने पुत्रेष्टि यज्ञ किया और उन्हें सत्परिणाम की प्राप्ति हुई । इसका वर्णन तुलसी कृत रामायण में इस प्रकार मिलता है-

एक बार भूपति मन माँही ।
भै गलानि मोरे सुत नाहीं ।।
गुरुगृह गयउ तुरत महिपाला ।
चरण लागि करि विनय बिसाला ।।
श्रृंगी ऋषिहिं वसिष्ठ बोलावा ।
पुत्र काम शुभ यज्ञ करावा ।।
भगति सहित मुनि आहुति दीन्हें ।
प्रगटे अगिनि चरु कर लीन्हें ।।
यह हवि बाँटि देहु नृप जाई ।
जथा जोग जेहि भाग बनाई ।।
तबहि रायँ प्रिय नारि बुलाईं ।
कौशल्यादि तहाँ चलि आईं ।।
अर्ध भाग कौशल्यहिं दीन्हा ।
उभय भाग आधे कर लीन्हा ।।
कैकेई कहँ नृप सो दयऊ ।
रह्यो सो उभय भाग पुनि भयऊ ।।
कौसल्या कैकेई हाथ धरि ।
दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि ।।
एहि विधि गर्भ सहित सब नारी ।
भईं हृदय हरषित सुख भारी ।।

बाल्मीकि रामायण में यही प्रसंग इस प्रकार वर्णित है-

अयोध्या नरेश श्री दशरथ जी अपने यज्ञ करने वाले ब्राह्मणों से कहते हैं, जिनमें से कुछ नीचे दिये जाते हैं:-

धर्मार्थं सहितं युक्तं श्लक्ष्णं वचनमब्रवीत् ।
ममता तप्यमानस्य पुत्रार्थं नास्ति वैसुखम् ।।८।।

-बाल्मीकि रामायण, आ. ख., द्वादश सर्ग

अर्थ- हे विप्रगणो ! मैं पुत्र प्राप्ति की कामना से बहुत ही सन्तप्त और व्याकुल हूँ । मुझे कहीं जरा भी सुख नहीं मिल रहा है । मैंने पुत्र प्राप्ति के लिए यज्ञ करने का विचार किया है ।

ऋषि पुत्र प्रभावेण कामान्प्राप्स्यामि चाप्यहम्
तद्यथा विधि पूर्वं मे क्रतुरेषु समाप्यते ।
तथा विधानं क्रियतां समर्थाः करणेष्विह ।।१९।।

अर्थ-ऋषि पुत्र श्रृङ्गी ऋषि के यज्ञ क्रिया की निपुणता के प्रभाव से अवश्य ही हमारी पुत्र-कामना पूरी होगी । अतः आप विधि पूर्वक यज्ञ करने-कराने में समर्थ द्विजगण सावधान होकर यज्ञ करावें, जिससे यह सांगोपांग विधिपूर्वक पूर्ण हो जाय ।

राक्षस-पति रावण भी यज्ञ-शक्ति का पूरा विश्वास है । इसे प्रकट करते हुए अपने अनुचरों को आदेश करता है कि जहाँ कहीं भी यज्ञ होते दिखाई दें, उन्हें नष्ट करने और विघ्न डालने का प्रयत्न करो ।

सुनहु सकल रजनीचर जूथा ।
हमरे बैरी विबुध बरूथा ।
तिन कर मरन एक विधि होई ।
कहहुँ बुझाई सुनहु अब सोई ।।
द्विज भोजन मख होम सराधा ।
सब कै जाइ करहु तुम बाधा ।।
छुधा छीन बलहीन सुर, सहजेहिं मिलिहहिं आइ ।
तब मारिहऊँ कि छाड़िहऊँ, भली भाँति अपनाइ ।।

रावण पण्डित भी था, इसलिए वह भली-भाँति जानता था कि यज्ञादि धर्मानुष्ठान देवगणों का पोषक है, इसलिए अन्य राक्षसों की अपेक्षा उसमें (रावण में) ऐसे सत्कार्यों को रोकने को अत्याधिक उतावली थी-जैसा निम्नोक्त छन्द से बोध होता है

जप जोग विरागा तप मख भागा,
श्रवण सुनइ दशशीशा ।
आपुन उठि धावइ रहै न पावइ,
धरि सब घालइ खीसा ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ में असुर सदा ही विघ्न फैलाते हैं । मित्र और शत्रु के रूप में, पण्डित और मूर्ख के रूप में, सहयोगी और विरोधी को रूप में नाना प्रकार के वेष बनाकर असुर लोग यज्ञ की प्रक्रिया को नष्ट करने के प्रयत्न करते हैं । कारण यह है कि यज्ञ से दैवी तत्त्व बलवान् होते हैं और असुरता दुर्बल होती है । असुरों को अपनी हानि और अपने विरोधी देवताओं की शक्ति का बढ़ना सहन नहीं होता इससे वे यज्ञ को नष्ट करने के लिए जो कुछ कर सकते हैं, सो अवश्य करते हैं । विश्वामित्र ऋषि के यज्ञ को नष्ट करने में भी असुर लोग भारी विघ्न कर रहे थे । उनसे रक्षा करने के लिए विश्वामित्र जी, दशरथ के पास गये और रामचन्द्र जी तथा लक्ष्मण जी को माँगकर लाये । बाल्मीकि रामायण में इस प्रसङ्ग का वर्णन इस प्रकार है-

अहं नियममातिष्ठे विद्धयर्थं पुरुषर्षभः ।
तस्य विघ्न करो द्वौतु राक्षसो काम रूपिणौ ।।४।।
नृतश्रमो निरुत्साहस्तथ्माद्देसादया क्रमे ।
वच मे क्रोध मुत्त्रटुंबुद्धिर्भवति पार्थिव ।।७।।
तथाभूतहिसाचर्या न शापस्तत्र मुच्यते ।
स्वपुत्र राजशार्दूल रामंसत्य पराक्रमम् ।।८।।
काकपक्षधरं बीर ज्येठमेदातुमर्हसि ।।९।।

-बाल्मीकि रामायण आदि काण्ड ११सर्ग

अर्थ-(विश्वामित्र) दशरथ से कहते हैं कि हे राजन् ! आजकल मैं एक महायज्ञ में दीक्षित हुआ हूँ । कामरूपी दो राक्षस उसकी समाप्ति न होते-होते ही विघ्न कर देते हैं ।।४।। जब हमारे यज्ञ की प्रतिष्ठा भ्रष्ट हो जाती है, तो हमें केवल श्रम ही होता है, इस कारण भग्नोत्साह होकर मैं यहाँ चला आया हूँ । हे पार्थिव ! मैं उनको शाप दे सकता हूँ, परन्तु इस यज्ञ साधन काल में किसी को शाप नहीं देना चाहिए । हे राजाओं में सिंह ! आपसे यह प्रार्थना है कि सत्य पराक्रमी रामचन्द्र को जो काक पक्ष धारण किये महावीर श्रेष्ठ हैं, इनको मेरे हाथ में सौंप दीजिये । यह मेरे दिव्य तेज के प्रभाव से मुझे रक्षित किये जाकर, मेरे यज्ञ की रक्षा करने में समर्थ होंगे ।

तुलसीकृत रामायण में इसका वर्णन यों मिलता है-

जँह जप यज्ञ जोग मुनि करहिं ।
अति मारीच सुबाहुहि डरहीं ।।
देखत जग्य निसाचर धावहिं ।
करहिं उपद्रव मुनि दुःख पावहिं ।।
गाधि तनय मन चिंता व्यापी ।
हरि बिनु मरहिं न निशिचर पापी ।।
तब मुनिवर मन कीन्ह विचारा ।
प्रभु अवतरेउ हरन महिं भारा ।।
बहुविधि करत मनोरथ, जात लागि नहिंबार ।
करि मज्जन सरयू जल, गये भूप दरबार ।।

स्वागतादिक के उपरान्त राजा ने पूछा-

केहि कारण आगमन तुम्हारा ।
कहहु सो करत न लावउँ बारा ।
असुर समूह सतावहिं मोहि ।
मैं जाँचन आयऊँ नृप तोहि ।।
अनुज समेत देहु रघुनाथा ।
निशिचर बध मैं होब सनाथा ।।

दशरथ जी ने राम, लक्ष्मण को यज्ञ की रक्षा के लिये भेज दिया-

प्रात कहा मुनि सन रघुराई ।
निर्भय यज्ञ करहु तुम जाई ।।
होम करन लागे मुनि झारी ।
आपु रहे मख की रखवारी ।।
सुनि मारीच निशाचर कोही ।
लै सहाय धावा मुनि द्रोही ।।
बिनु फर बाण राम तेहि मारा ।
शत जोजन गै सागर पारा ।।
पावक सर सुबाहु पुनि जारा ।
अनुज निशाचर कटकु संहारा ।।

अर्थ-हे कौशिक । आप तभी यज्ञ भागार्थी देवताओं को देखेंगे ।

जनक के शिव-यज्ञ में देवता साक्षात् रूप से पधारेंगे ऐसा योगीवर जनक को विश्वास है । सीता जी का विवाह जैसे महान् कार्य सम्पन्न करने के लिए राजा जनक ने स्वयंवर यज्ञ करना ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उचित समझा था । सीता जी का विवाह अन्ततः एक विशाल यज्ञ द्वारा ही सम्पन्न हुआ । राम का जन्म और सीता का विवाह यह दोनों ही कार्य यज्ञ की महत्ता द्वारा प्रतिप्रादित हुए हैं ।

रावण को जब अपनी पराजय होती दिखाई देती है तो वह चिन्तित और दुःखी होकर अन्तिम ब्रह्मास्त्र (यज्ञ) का ही सहारा लेता है । अपने पुत्र मेघनाद को एक बड़ा तान्त्रिक यज्ञ करके ऐसी शक्ति प्राप्त करने के लिए आदेश करता है जिससे वह अजेय हो जाय और राम को सेना समेत परास्त कर सके । मेघनाद निकुम्भिला नामक स्थान में जाकर अपने पिता के बताये हुए विधान के अनुसार तान्त्रिक होम करने लगा । वाल्मीकि रामायण में इसका वर्णन इस प्रकार है-

एतस्तुहुतु भोक्तारं हुत भुक्सदृशप्रभः ।
जुहुवे राक्षस श्रेष्ठो विधिवन्मन्त्र सत्तमैः ।।
सहबिर्लाज सत्कारैर्माल्य गन्ध पुरस्कृतैः ।
जुहुवे पावकंतत्र राक्षसेन्द्रः प्रतापवान ।।१९।।
शस्त्राणि शर पत्राणि समिधोथ विभीतकाः ।
लोहिता निचवासांसिस्त्रुवं काष्णांयसंतथा ।।२०।।

अर्थ-इस स्थान का नाम निकुम्भला था । अग्नि तुल्य तेजस्वी इन्द्रजीत यहाँ पर विधिपूर्वक अग्नि में होम करने लगा ।।१९ ।। उस प्रतापशाली राक्षसों में श्रेष्ठ ने प्रथम अग्नि में माला और सुगन्धित द्रव्य चढ़ाकर उसके बाद खीर एवं अक्षत से उसका संस्कार पूरा करके हवन कर्म को प्रारम्भ किया ।।१९ ।। उस हवन कुण्ड के चारों ओर जहाँ शरतप बिछाना चाहिये, वहाँ उसने सब शस्त्र बिछाये व बहेड़े की लकड़ी को ईंधन बनाया, समस्त लाल वस्त्र धारण किये और लोहे का स्त्रुवा बनाया । मारण में यही पदार्थ काम आते हैं ।

तस्मिन्नहूयानेस्त्रे हयमाने च पावक ।
सार्वग्रहेन्दुनक्षत्रं वितत्रावास नमः स्थलम् ।।२५।।
सपावकपावकं दीप्ततेजा हुत्वा महेन्द्रा मतिक प्रभाव ।
सचापवाणासिर यथाश्च शूलः खेंतर्दध
आत्मानंमचिन्त्यवीर्यः ।।

अर्थ- जब उस वीर मेघनाद ने अग्नि में आहुति दी और सब अस्त्रों को मन्त्रों से अभिमन्त्रित किया उस समय चन्द्र, सूर्य आदि ग्रह, नक्षत्र गणों के सहित समस्त आकाश मण्डल त्रसित हो गया ।।२५।। इन्द्र के समान प्रभावशाली और अग्नि के समान प्रदीप्त वह अप्रमेय वीर्य वाला इन्द्रजीत इस प्रकार से अग्नि में आहुति दे धनुष, वाण, शूल अश्व और रथ के सहित आकाश में जाकर अन्तर्धान होगया व नाना प्रकार की मायावी शक्तियाँ प्राप्त करके राम-दल को भ्रम में डालने लगा उसने माया मन्त्र से एक नकली सीता बनाई और उसका वध करके राम तथा उनकी सेना को शोक तथा चिन्ता में डालकर अपना काम बना लेना चाहा । इस सब मायाचर का भण्डाफोड़ करते हुए विभीषण ने रामचन्द्रजी से कहा-

चैत्यं निकुम्भिलामद्यप्रायं होमं करिष्यति ।
हूतवानुपातोहिदेवैरपिसवसवैः ।।१४।।
दुराध र्षोभवत्येषसंग्रामेरावणात्मजः ।
तेन मोह्यतानूनमेषा माया प्रयोजिता ।
विघ्नमन्विच्छातातत्रवान राणां पराक्रमे ।।१५।।

-बाल्मीकि युद्ध. ८५ सर्ग

अर्थ-आज निकुम्भला में जाकर मेघनाद होम यज्ञ करेगा । इन्द्रादि देवताओं सहित अग्निदेव वहाँ पहुँचे हैं । जबकि यह यज्ञ में होम करके अग्नि को प्रसन्न कर लेगा, तब देवताओं सहित इन्द्र को भी संग्राम में मेघनाद दुर्धर्ष हो जायगा, हम निश्चय कहते हैं कि अपनी अभिलाषा सिद्ध करने के लिए और वानरों का पराक्रम नष्ट करने के लिये ही उसने एसी माया प्रगट की है ।

ससैन्यास्तत्रगच्छामोयावतत्र समाप्यते ।
त्यजैननरेशार्दूल मिथ्यांसन्तापमागत ।।१६।।

अर्थ-जब तक उसका यज्ञ समाप्त न हो जाय तब तक हम सेना सहित उस तांत्रिक यज्ञ को विध्वंस करने के लिए वहाँ पहुँच जायँ ।

विभीषण जी सेना सहित लक्ष्मण को साथ लेकर मेघनाद का यज्ञ विध्वंस करने गये हैं । वह स्थान सेना से घिरा हुआ है । विभीषण जी लक्ष्मण से कहते हैं-

सत्वमिन्द्राशनिप्रख्यैः शरैरव किरन्यरान् ।
अभिद्राशुवाद्वै नैतत्कर्मसमाप्यते ।।४।।

-बाल्मीकि रा.युद्ध का. सर्ग ८६

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अर्थ-जब तक यह अभिचारिक होम पूरा नहीं होता तब तक इन्द्र वज्र सदृश वाणों से आप राक्षसों की सेना को पीड़ा देते रहिये ।

ऐसा ही किया गया, तदुपरान्त-

स्वमनीक विपण्णतु श्रुत्वा शत्रुभिर दितम् ।
उदतिष्ठत दुर्धषः सकर्मण्यनतुष्टिते ।।१४।।

अर्थ-इस ओर अजेय रावण पुत्र अपनी सेना को शत्रु दलों से मर्दित और व्याकुल देख अपने यज्ञ को बिना पूरा किये ही उठ बैठा ।

इस प्रकार उस यज्ञ के असफल हो जाने पर असुरों को वह शक्ति प्राप्त न हो सकी, जिससे वे राम सेना को नष्ट करने और स्वयं अजेय बनने में समर्थ होते ।

रावण भी इस युद्ध में विजय पाने के लिए यज्ञ का ही आश्रय ग्रहण करता है ।

तुलसीकृत रामायण में इस प्रसंग का वर्णन इस प्रकार है-

इहाँ दशानन जागि कर,
करै लाग कछु जग्य ।
राम विरोध विजय चहु,
शठ हठ बस अति अग्य ।।
इहाँ विभीषण सब सुधि पाई ।
सपदि जाइ रघुपतिहिं सुनाई ।
नाथ करहि रावण एक जागा ।
सिद्ध भये नहिं मरहि अभागा ।।
पठवहु नाथ बेगि भट बन्दर ।
करहि विधंस आव दशकन्धर ।।
प्रात होत प्रभु सुभट पठाये ।
हनुमदादि अङ्गद सब धाये ।।
जग्य करत जब ही सो देखा ।
सकल कपिन्ह भै क्रोध विशेषा ।।
रण ते निकस भागि घर आवा ।
इहाँ आइ शठ ध्यान लगावा ।।
अस कहि अङ्गद मारी लाता ।
चितव न शठ स्वारथ मन राता ।।
छन्द-नहिं चितव जब करि कोप कपि,
गहि दसन्ह लातन्ह काटहीं ।
धरि केश नारि निकारि बाहेर तेति दीन पुकारहीं ।।
तब उठे क्रुद्ध कृतान्त सम गहि चरन वानर डारई ।
इहिं बीच कपिन्ह विधंस कृत मख देखि मन महुँ हारई ।।

रावण ही नहीं, उसके पुत्र मेघनाद को भी यज्ञ के द्वारा शक्ति प्राप्त करने का अनुभव है-

मेघनाद कै मुरछा जागी ।
पितहि विलोकि लाज अति लागि ।।
तुरत गयउ गिरवर कन्दरा ।
करौं अजय मख अस मन धरा ।।
इहाँ विभीषण मन्त्र विचारा ।
सुनहु नाथ बल अतुल अपारा ।।
मेघनाद मख करइ अपावन ।
खल मायावी देव सतावन ।।
जौं प्रभु सिद्ध होइपाइहि ।
नाथ बेगि पुनि जीत न जाइहि ।।

विभीषण के विश्वास का राम समर्थन करते हैं और तुरन्त कहते हैं-

लछिमन सङ्ग जाहु सब भाई ।
करहु विधंस यज्ञ कर जाई ।।
जाय कपिन्ह सो देखा वैसा ।
आहुति देत रुधिर अरु भैंसा ।।
कीन्ह कपिन्ह जब यज्ञ विधंसा ।
जब न उठहिं तब करहि प्रशंसा ।।
तदपि न उठहि धरेन्हि कच जाई ।
लातन्हि हनि-हनि चले पराई ।।
लै त्रिशूल धावा कपि भागे ।
आये रामानुज के आगे ।।

वनवास से वापिस लौटने पर श्री रामचन्द्र को उस कार्य के करने की इच्छा हुई जो समस्त प्रजा के लिये, समस्त संसार के लिये समस्त प्राणी मात्र के लिए एक अतीव उपयोगी आयोजन है । रामचन्द्र जी के पूर्वज भी बड़े-बड़े यज्ञ करते रहे थे । श्रेष्ठ क्षत्री और श्रेष्ठ ब्राह्मण सदा ही विश्व कल्याण के लिये यज्ञों के विशद् आयोजन करने का प्रयत्न करते थे । राज्य-शासन हाथ में लेने के बाद, वैसा आयोजन करने का राम का विचार उचित, आवश्यक और स्वाभाविक ही था वाल्मीकि रामायण के उत्तर काण्ड ८३ वां सर्ग में, इस प्रसंग का वर्णन यों हैं-

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

श्री रामचन्द्र जी ने भरत एवं लक्ष्मण जी को बुलाया और प्रेम भाव सहित पूछने लगे-

कृतंमयायथातथ्यं द्विज कार्य मनुत्तम् ।
धर्मसेतुमथो भूयः कर्तुमिच्छामि राघवौ ।।३।।
अक्षयश्चाव्ययश्चैवधर्मसेतुमतोमम् ।
प्रवचनचैव सर्वं पाप प्रणाशनम् ।।४।।

अर्थ-मैंने द्विज का सम्पूर्ण कार्य किया परन्तु अब एक (राजसूयादि यज्ञ) धर्मसेतु करने की इच्छा है । मेरे मन में धर्मसेतु, अक्षय-अव्यय धर्म को बढ़ाने वाला पापों का नाश करने वाला है ।।३-४।।

युवाभ्यामात्मभूताभ्यां राजसूयमनुत्तमम् ।
सहितो यष्टुमिच्छामि तत्रधर्नस्तु शाश्वतः ।।५।।
इष्ट्वा तु राजसूयेन मिश्रः शत्रुनिवर्हणः ।
सुहुतेन सु यज्ञेन वरुणत्वमुपागत ।।६।।
सोमश्च राजसूयेन इष्ट्वा धर्मेण धर्मवित् ।
प्राप्तश्च सर्व लोकेषु कीर्तिस्थानं शाश्वतम् ।।७।।

अर्थ-तुम दोनों अपने भाईयों की सहायता से मैं यज्ञ-श्रेष्ठ राजसूय का अनुष्ठान करना चाहता हूँ, इसके करने में अक्षय धर्म होता है ।।५।। शत्रुतापन मित्र भी सम्यक् प्रकार से राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान करके वरुण की पदवी को उपलब्ध करने में समर्थ हुए है । धर्मात्मा सोम भी धर्मपूर्वक राजसूय यज्ञ करके अत्यन्त कीर्ति और अक्षय स्थान को प्राप्त हुए हैं ।।७।।

भरत तथा राम में विचार होने के उपरान्त श्री लक्ष्मण जी यज्ञ के सम्बन्ध में अपना विचार देते हैं ।

अश्वमेधो महायज्ञ पावन, सर्व पावनाम्।
पावनस्तव दुर्धर्षो रोचतां रघुनन्दन ।।१।।
श्रूयतेहि पुरावृत्तं वासवेसु महात्मनि ।
ब्रह्मं हत्यावृत्ता शक्रो हयमेधेन पावितः ।।३।।

-बाल्मीकि रामायण ८४ वाँ सर्ग उत्तर काण्ड

अर्थ-हे रघुनन्दन! सम्पूर्ण पापों से पवित्र करने वाला अश्वमेध यज्ञ है। हे दुर्धर्ष! यदि आपकी इच्छा है तो वही यज्ञ कीजिये।। २।। ऐसा सुना है कि पूर्वकाल में महात्मा इन्द्र को ब्रह्म हत्या लगी थी, वह इसी अश्वमेध यज्ञ के करने से पवित्र हुए थे।।३।।

रामचन्द्र के पूछने पर लक्ष्मण जी ने वृत्रासुर को तपस्या करते समय निरपराध मारने के कारण इन्द्र को जो ब्रह्महत्या लगी थी, वह कथा कह सुनाई । उसके उपरान्त अग्नि आदि सभी देवता विष्णु भगवान से इन्द्र की ब्रह्महत्या रूपी पाप निवारण का उपाय पूछते हैं-

हतश्चायत्वयावृत्रो ब्रह्महत्या च वासव ।
बाधाते सुर शार्दूल मोक्षं तस्य विनिर्दश ।।१९।।
तेषां तद्व वनं श्रुत्वा देवानां विष्णुरब्रवीत ।
मामेव यजतां शक्रः पावयिष्यामि वज्रिणा ।।२०।।

अर्थ- हे देवताओं में श्रेष्ठ (विष्णु भगवान्)! वृत्रासुर मारा गया परन्तु इन्द्र को ब्रह्महत्या बाधा करती है। उसके छुटकारे का कोई उपाय बताइये।। १९।। उन देव के वचनों को श्रवण कर विष्णु जी बोले हे देवताओ! इन्द्र हमारा, यज्ञ करे हम उन्हें पवित्र कर देंगे ।।१९/२०।।

पुण्येनहयमेधेनमामिष्ट् पाक शासनः ।
पुनरेष्यति देवानामिन्द्रत्वमकृतोभय ।।२१।।

अर्थ- हे इन्द्र! पुण्यमय अश्वमेध यज्ञ से मेरा यजन करके तुम पुनः देवपति की पदवी को प्राप्त करोगे।

विष्णु भगवान् के निर्देशानुसार देवताओं ने यज्ञानुष्ठान की सारी तैयारी की।

ते तु भद्रष्ट्वा सहस्त्राक्षमावृत-ब्रह्महत्यया ।
तं पुरस्कृत्यदेवेशमश्वमेध प्रचक्रिणा ।।८।।
ततोश्वमेधः सुमहान्महेन्द्रस्य महात्मनः ।
ववृते ब्रह्महत्याया पावनार्थ नरेश्वर : ।।९।।
ततो यज्ञे समाप्ते तु ब्रह्महत्या महात्मनः ।
अभिगम्याब्रवीद्वारक्ष्मे स्थानं विधानस्यथ ।।१९।।

-बाल्मीकि रामा० उत्तर काण्ड सर्ग ८६

अर्थ- इन देवताओं ने इन्द्र को ब्रह्महत्या से मुक्त देख इन्हें दीक्षा में बैठाकर यज्ञ करना आरम्भ किया। ।१८।। हे राजन ! तब महात्मा इन्द्र को ब्रह्महत्या से मुक्त करने के लिए अश्वमेध यज्ञ होने लगा ।।९।। जब यज्ञ पूर्ण हुआ तब वह ब्रह्महत्या इन्द्र के शरीर से निकल गई ।

प्रशान्त च जगत्सर्व सहस्त्राक्षे प्रतिष्ठते ।
यज्ञं चाद्भूत संकाशं तदाशक्रोभ्यपूजयत् ।।१९।।
ईदृशोहयश्वमेधस्य प्रसादो रघुनन्दन ।
यजुस्य सु महाभागा हयमेधेनपार्थिव।।२०।।

अर्थ- जब इन्द्र अपने स्थान पर आकर विराजे, तब सब जगत् शान्त हो गया और फिर इन्द्र ने बड़े अद्भुत् यज्ञ का यजन और पूजन किया ।।१९।। हे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रघुनाथ जी! अश्वमेध यज्ञ की ऐसी ही महिमा है। हे महाभाग भगवान्! इस कारण आप भी अश्वमेध यज्ञ कीजिये ।।२०।।

एतदाख्यायकाकुत्स्थो भ्रातृभ्यामतिप्रभः ।
लक्ष्मणं पुनरेवाहधर्मयुक्तभिर्दवच ।।१।।
वशिष्ठं वामदेवं च जावालिमथ कश्यपम् ।
द्विजांश्च सर्वप्रवरानश्वमेध पुरस्कृतान् ।।२।।

अर्थ-अमित पराक्रमी रामचन्द्र अपने भ्राताओं से ऐसा कह फिर लक्ष्मण जी से धर्म पूर्वक वचन बोले ।।१।। कि अश्वमेध यज्ञ कराने वाले, वशिष्ठ, वामदेव, जाबालि-कश्यप इन श्रेष्ठ ब्राह्मणों को बुलाओ ।

सबों के आने के बाद रामचन्द्र जी ने अश्वमेध यज्ञ करने के सम्बन्ध में चर्चा की ।

तेपिरामस्य तच्छुत्वा नमस्कृत्त्वा बृषध्वज ।
अश्वमेधं द्विजाः सर्वे पूजयन्तिस्मसर्वशः ।।७।।

अर्थ-वे ऋषि रामचन्द्र जी की वाणी श्रवण कर शिवजी को प्रणाम कर सब (ब्रह्मवादी ऋषि) अश्वमेध यज्ञ की प्रशंसा करने लगे ।

इस यज्ञ में अविरत दान चलता रहता है । सीताजी ने आकर पृथ्वी की गोद ग्रहण की और रामचन्द्र यज्ञ को महत्वपूर्ण धर्मकार्य समझकर प्रतिवर्ष करते रहे ।

नसीतायां पराभार्य्या वव्रेस रघुनन्दनः ।
यज्ञे-यज्ञे चपत्स्यर्थ जानकी कांचनीभवत ।।७।।
दसवर्ष सहस्त्राणि वाजमेधानथा करोत ।
वाजपेयांदसगुणांस्थता बहु स्वर्णकान् ।।८।।
अग्निष्टोमातिरात्राभ्यांगोसर्वेश्च धनैः ।
ईजेक्रतु मिरन्यैश्च स श्रीमानाप्त दक्षिणैः ।।

-बाल्मीकि रामा. उत्तर काण्ड ९९ सर्ग

अर्थ-जानकी के बिना रघुनाथ जी ने और कोई भार्य्या नहीं की किन्तु जब यज्ञ करते, सोने की सीता से यज्ञ का कार्य पूर्ण किया जाता ।।७।। इस प्रकार से प्रति वर्ष अश्वमेध यज्ञ, दस सहस्त्र वर्ष तक किये और सहस्त्रवर्ष के पीछे उनने दशगुना फलदायक वाजपेय यज्ञ किया जिसमें बहुत-सा स्वर्णदान किया जाता है, ।।८।। अग्निष्टोम, अतिरात्र, गोमेधादि यज्ञ तथा और अनेक यज्ञ महादक्षिणा और दान देकर किये ।

तुलसीकृत रामायण में अनेक प्रसंगों में यज्ञों की महत्ता का प्रतिपादन है । देखिये-

श्रद्धा-भक्ति के संग करने से देवता तुरन्त ही साक्षात् होते हैं । जैसे सीता-राम के विवाह में-

होम समय तनु धरि अनल, अति सुख आहुति लेंहि ।
विप्र वेष धरि वेद सब, कहि विवाह विधि देंहि ।।

देवताओं को यज्ञ में सम्मिलित होने का आकर्षण होता है । वे दक्ष के यज्ञ में प्रसन्नता पूर्वक जाते हैं-

दच्छ लिए मुनि बोलि सब, करनलगे बड़याग ।
नेवत सादर, सकल सुर, जो पावत मख भाग ।।२७।।
किन्नर नाग सिद्ध गन्धर्वा ।
बधुन्ह समेत चले सुर सर्वा ।।

सर्व शक्ति सुख सम्पन्न चक्रवर्ती राजा भी अपने श्रेय की चिरंतना के लिए यज्ञ ही करते ही रहते हैं ।

जहँ लगि कहे पुरान श्रुति, एक-एक सब जाग ।
बार सहस्त्र-सहस्त्र नृप, किये सहित अनुराग ।।

-तुलसीकृत (रामचरित लङ्का काण्ड)

राक्षस राज रावण ने यज्ञ में अपने सिर काट करआहुति दी थी यह यज्ञ निश्चित फलदायकता का प्रमाण है ।

सूर कवन रावण सरिसि स्वकर काटि जेहिं सीस ।
हुते अनल अति हरष बहु बार साखि गौरीस ।।

राजा प्रतापभानु के दुश्मन कपटी मुनि को भी यज्ञ पर विश्वास है ।

करहिं विप्र होम मख सेवा । तेहि प्रसंग सहजेहि वश देवा ।।

अर्थ-विप्र लोग हवन, यज्ञ और सेवा करते हैं, इसलिये स्वभावतया ही देवगण उनके वश में रहते हैं ।

कंकेय (वर्तमान काश्मीर) देश के राजा प्रतापभानु जब तक निष्काम भाव से यज्ञादि सदनुष्ठान करते रहे तब तक इनका प्रताप भी भानु सदृश ही रहा ।

स्वयं भगवान् राम भी राज्य ग्रहण करने के बाद यज्ञ करना आवश्यक समझते हैं-

कोटिन्ह बाजिमेध प्रभु कीन्हें ।
दान अनेक द्विजन्ह कहँ दीन्हें ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

श्री मद्भागवत में यज्ञ माहात्म्य

श्रीमद्भागवत में यज्ञों की महत्ता का विस्तारपूर्वक प्रतिपादन किया है । अनेकों ऐसे प्रसंगों का भागवत में वर्णन है जिससे महाशक्ति का पूरा परिचय मिलता है । सृष्टि का आरम्भ यज्ञ से ही हुआ, इसका वर्णन इस प्रकार किया गया है ।

जिज्ञासा के अनुसार उत्तर रूप में ब्रह्माजी विराट् भगवान् के स्वरूप का वर्णन करते हैं ।

यदास्य नाभ्यां नलिनादहमासं महात्मनः ।
नाविदं यज्ञ संभारान्पुरुषा वयवाहते ।।
तेषु यज्ञस्य पशवः सवनस्पतयः कुशा ।
इदं च देवयजनं कालञ्चो सगुणान्वित ।।
वस्तून्योषधयः स्नेहारसलोम मदोजलम् ।
ऋचोयजूँषि सामानि चतुर्होत्र च सत्तम् ।।

-भागवत, स्क., २, अ. ६ श्लोक २२, २३, २४

अर्थ-जिस समय व्यापक ब्रह्मा की नाभि से मैं उत्पन्न हुआ, तब पुरुष के अवयव को छोड़कर यज्ञ की कुछ भी सामग्री नहीं देखी । उनने यज्ञ के लिए पशु, वनस्पति कुशा और देवताओं के यज्ञ करने योग्य भूमि और जिसमें बहुत से गुण भरे हों, ऐसे समय की रचना की । सब पात्रादि रचे ओषधि, घृतादिक, मधुरादिक, स्वर्णादि धातु मृत्तिका, जल, ऋक्, यजु, साम व अथर्ववेद, चार ब्राह्मण और जिससे हवन किया जाय, ऐसे कर्मों की भी सृष्टि की ।

गतयोमतप्रायश्चित्तम् समर्पणम् ।
पुरुषावयवैरेने संभारा संभृता मया ।। २६ ।।
इति सम्भृतसंभार पुरुषावयवैरहम्: ।
तमेव पुरुषं यज्ञ तेनैवायजमीश्वरम् ।।२७ ।।
ततश्च मनव काले ईजिरे ऋषयोऽपरे ।
पितरो विबुधा देत्या मनुष्याः क्रतुर्भिविभुम् ।। २९।।

अर्थ-विष्णु क्रमादि गीत, देवताओं का ध्यानादि मति, प्रायश्चित्, उसे भगवदर्पण करना, आदि पुरुष अवयवों से ही मैंने रचना की । पुरुष के अवयवों की ऐसी सब सामग्री से ही पूजनीय परमात्मा ने पुरुष का यज्ञ किया । उसके पीछे अपने-अपने समय में सभी मनुष्य, ऋषि, पितर, देवगण तथा दैत्यादिकों ने भी यज्ञ के द्वारा यज्ञेश्वर और यज्ञस्वरूप भगवान् का पूजन किया । राजा दक्ष ने अपने यज्ञ का विध्वंस होते तथा सुपुत्री सती के निधन के उपरान्त बहुत अधिक दुःख माना और शिवजी से क्षमा माँगने के पश्चात् अपनी भूल के प्रायश्चित रूप में ही विशद यज्ञ को पूरा किया । उसका वर्णन भागवत चतुर्थ स्कन्ध के सातवें अध्याय में इस प्रकार है-

क्षमार्ण्यैव स मीढ्वासं ब्रह्मणा चनुमन्त्रितः ।
कर्म सन्तानयामास सोपाध्यायर्त्विगादिभिः ।।
वैष्णवं यज्ञ संतत्यै त्रिकपालं द्विजोत्तमाः ।
पुरोडाशं निरप्रवपन् वीर संसर्ग शुद्धये ।।
अध्वर्युगुणाऽऽत्त हविषा यज्ञमानो विशाम्पते ।
धिया विशुद्धयादध्यौ तथा प्रादुरभूद्धरिः ।।

-भागवत, स्क. ४ अ. ७, श्लोक १६,१७,१८

अर्थ-इस भाँति दक्ष ने अपना अपराध क्षमा कराया और ब्रह्माजी से सम्मति लेकर उपाध्याय, ऋत्विज्, अग्नि सहित विस्तार किया । तीन कपाल का पुरोडाश, विष्णु के निमित्त, यज्ञ सम्पूर्ण करने के हेतुप्रथमादिक वीरों की शुद्धि के लिये श्रेष्ठ ब्राह्मणों को दिया । अध्वर्यु ने जब हवि हाथ में लेकर, यजमान सहित विशुद्ध बुद्धि पूर्वक हवन कर भगवान् वासुदेव का ध्यान किया-उसी समय भगवान् साक्षात् रूप में प्रगट हो गये ।

दक्षो गृहीतार्हणसादनोत्तमं यज्ञेश्वरं विश्वसृजां परं गुरुम् ।
सुनन्द नन्दाद्यनुगैर्वृतं मुदा गृणन प्रपेदे प्रयतःकृताञ्जलि ।। २५ ।।

-भागवत स्कन्ध ४/७/२५

अर्थ-यज्ञेश्वर विश्वसृष्टापरम गुरु भगवान् जो नन्दसुनन्दादिक पार्षदों सहित थे, उनके निकट जाकर, प्रजापति दक्ष ने उनकी पूजा की सामग्री अर्पण की, जिसे भगवान् ने अपने हाथों से ग्रहण किया । पुनःदक्ष ने करबद्ध हो भगवान् की प्रार्थना की । इसके उपरान्त अग्निदेव ने प्रत्यक्ष होकर भगवान् से कहा-

यत्तेजसाहं सुसमिद्धतेजा हव्यंवहे स्वध्वर आज्य सिक्तम् ।
यं यज्ञियं पचांविधं च पञ्चभिः स्विष्टं यजुर्भिः प्रणतोस्मि यज्ञम् ।।

-भाग. स्क./७/४१

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थ-आपके तेज से प्रकाश मुझ में है, इसी के द्वारा टपकते हुए घृत का हव्य धारण करता हूँ, और उसे सब देवताओं को पहुँचाता हूँ। जिनयज्ञ स्वरूप का पाँच प्रकार के यजुर्मन्त्र से यज्ञ किया जाता है, उन्हें मैं प्रणाम करता हूँ ।

राजा वेन ने अपने राज्य में यज्ञादि करने की मनाही कर दी । उनने कहा-राजा में सर्व देवों का निवास होता है, अतः केवल मेरा ही भजन और पूजन करो । इस पर ऋषिगण राजा वेन को विविध भांति से समझाते हैं-

तं सर्व लोकामयज्ञ संग्रह त्रयीमयं तपोमयम् ।
यज्ञैर्विचित्रैर्यजतो भवाय ते राजन स्वदेशाननुरोद्धु महास । २१ ।।
यज्ञेन युष्मद्विषयेजातिभिर्वताय मानेनसुरा कला हरेः ।
स्विष्टा सुतुष्ट प्रादेशांति वाञ्छित तद्धेहन नार्हसि वीर चेष्टितुम ।।

-भागवत, चौथा स्क., अ. १४

अर्थ-हे राजन ! सर्व लोक और देवता यज्ञ में निवास करते हैं । उन वेदत्रयीमय, द्रव्यमय, एवं तपोमय ईश्वर को, विप्रगण आपके कल्याण तथा प्रजा की समृद्धि के लिए नाना विधि-विधानों से, चित्र-विचित्र यज्ञों द्वारा, यजन करते हैं और आप तो ऐसे यज्ञों में सहायता देन योग्य हैं । वीर ! आपके राज्य में द्विज लोगों के यज्ञ करने से श्री नारायण के कला रूप सभी देवगण सन्तुष्ट होकर सभी को मनोवांछित फल देंगे। इसलिए आपको इन यज्ञों की अवहेलना नहीं करनी चाहिए ।

जब उसने बहुत समझाने पर भी नहीं माना और यज्ञ बन्द करने के दुराग्रह पर अड़ा रहा तो ऋषियों ने शाप देकर राजावेन को मार डाला । पुनः उनकी भुजाओं का मन्थन किया, जिससे राजा पृथु का जन्म हुआ और-

अतादीक्षत राजा तु हयमेध शतेन सः।
ब्रह्मावर्त्ते मनोः क्षेत्रे यत्रा प्राची सरस्वती ।१।

-भागवत, स्क. ४/१९/१

फिर पृथु ने एक सौ अश्वमेध यज्ञ करने का सङ्कल्प किया । जहाँ पश्चिमवाहिनी सरस्वती है-ब्रह्मा और मनु का ब्रह्मवर्त्त क्षेत्र है ।

यह यज्ञ बड़े ही विधि-विधान के साथ किया गया था, इससे वह अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हो रहा था । इस यज्ञ के महान प्रभाव की कल्पना करने से इन्द्र का मन विचलित हो गया । वह अपने इन्द्रपद के छिन जाने की आशंका करने लगा ।

तदभिप्रेत्य भगवान्कर्मातिसमात्मनः ।
शतक्रतुर्न ममृषे पृथोर्यज्ञमहोत्सवम् ।२।
यत्र यज्ञपतिः साक्षाद्भगवान् हरिरीश्वरः ।
अन्य भूयत सर्वात्मा सर्वलोक गुरुः प्रभु । ३ ।
अन्वितो ब्रह्मशर्वाभ्यां लोकः पालैः सहानुगैः ।।
उपगीयमानो गन्धर्वैमुनिश्चाप्सरो गणैः ।४।
सिद्धाविद्याधरा दैत्या दानवाः गुह्यकादयः ।
सुनन्द नंद प्रमुखा पार्षद प्रवरा हरेः ।५।
कपिलो नारदो दत्तो योगेशाःसनकादयः ।
तमन्वीयुर्भागवता ये च तत्सेवनोत्सुकाः ।६।

-भाग. ४/१९/२-६

अर्थ-ऐसी आशंका धारण कर ऐश्वर्यवान इन्द्र ने सोचा कि राजा पृथु का एक सौ यज्ञ पूरा हो जायगा तो मेरा देवराजत्व-स्वर्ग का राज्य छीन लेगा । यही सोचकर वह इस धर्म-महोत्सव को सहन नहीं कर सका । उस यज्ञ में साक्षात् यज्ञपति भगवान् विष्णु, जो सबके आत्मा और गुरु हैं, प्रकट हो गये थे, जिनके साथ ब्रह्मा, शिव, सर्वलोकपाल तथा उनके अनुचर भी थे । गन्धर्व, मुनि, अप्सरा, गण सब उनका यश गा रहे थे । सिद्ध विद्याधर, दैत्य, दानव, गुह्यक तथा विष्णु के पार्षद नन्द-सुनन्द, कपिलदेव, नारद, दत्तात्रेय, सनकादिक योगेश्वर और जिनका मन भागवत सेवन में उत्सुक था, वे सभी वहाँ आकर उपस्थित हो गये ।

यत्र धर्म दुघा भूमिः सर्वकादुघा सती ।
दोग्धि स्माभीप्सितानर्थान्यजमानस्य भारत ।७।
ऊहुःसर्व रसान्नद्यः क्षीर दध्यन्न गो रसान् ।
तरवो भूरि वर्ष्माणः प्रासूयन्त मधुच्युतः ।८।
सिन्धवो रत्ननिकराग्गिरयोऽन्नं चतुर्विधम् ।
उपायनमुपाजह्रुः सर्वेलोकाःसपालकाः ।९।
इतिचाथोक्षजेशस्य पृथोस्त परमोदयम् ।
असूयन्भगवानिन्द्रः प्रतीघातमचीकरत् ।१०।

-भाग. ४/१९/७-१०

अर्थ-हे भारत ! जहाँ सर्व मनोवाँञ्छित वस्तुओं को देने वाली पृथ्वी गो रूप धारण कर राजा पृथु यजमान को इच्छित अर्थों को देने के लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सदा तत्पर है, वहाँ अभाव ही क्या हो सकता है ? क्षीर, दधि, गोरस तथा अन्य रसों की उनके राज्य में सरितायें वह चलीं । विशालकाय तरुवरों में मधुस्राव असंख्य फल फले ही रहते । सिन्धुओं ने अपार रत्न राशि प्रदान की, पर्वतों ने चार प्रकार की भोजन सामग्रियाँ प्रदान कीं (भक्ष्य, भोज्य, चोष्य और लेह्य) । लोकपाल सहित सबों ने अपने-अपने सुन्दर प्रकार के उपहार दिये । भला स्वयं भगवान् ही जिनके रक्षक हों, उनके परम उदय-भाग्योत्कर्ष का वर्णन ही क्या हो सकता है ? पृथु के इस उत्कर्ष को देखकर ईर्ष्यालु इन्द्र जलने लगा, उनसे इनका उत्कर्ष सहन न हो सका, इस लिए इन्द्र ने बिना अपराध के ही उनके महायज्ञ में विघ्न करने का निश्चय करके प्रतिघात करना प्रारम्भ किया ।

राजा पृथु के सौंवे अश्वमेध यज्ञ में, इन्द्र ने वेष परिवर्तन करके माया के प्रपंच द्वारा घोड़े का अपहरण कर लिया, किन्तु पृथु के पुत्र ने बल पूर्वक घोड़ा छुड़ा लिया । माया और छल के द्वारा इन्द्र ने अपना प्राण बचाया । इस भाँति दो बार इन्द्र ने घोड़ा चुराया और पृथु के पुत्र ने उसे बलपूर्वक छुड़ा लिया । दूसरी बार इन्द्र की इस नीच वृत्ति से पृथु को बड़ा क्रोध हुआ, उसने धनुष पर भयङ्कर वाण चढ़ाकर इन्द्र का नाश कर देने की इच्छा की । इस पर ऋषियों ने राजा पृथु से कहा-

वयं मरुत्वन्तमिहार्थ नाशनं हयामहेत्वच्छ्रवसा हतत्विषम् ।
अयातयामोपहवैरनन्तर प्रसह्य राजन्जुहवाम ते ऽहितम् २८

-भागवत चौ. स्क., अ. १९

अर्थ-हे नृपेन्द्र ! यदि अपकी इच्छा इन्द्र को मारने की ही है तो हे राजन् ! अपके इस भयङ्कर बाण से तो इन्द्र सहित सारे देवलोक का ही नाश हो जायगा । अतः हम लोग उन अनर्थकारी, आपके यश-श्रवण से जलने वाले, आपके मंगल मनोरथ के नाश में लगे, अभिममानी इन्द्र को यज्ञ के सार पूर्ण मन्त्रों द्वारा आवाहन करके इसी यज्ञ-अग्नि में होम कर देंगे ।

वस्तुत:वेदमन्त्रों की यज्ञीय मन्त्रों को तथा यज्ञ की शक्ति ही ऐसी है कि जिसके द्वारा इन्द्र सरीखे शक्तिशाली , देवों के राजा को भी खींचकर बुला लेना-या उसे अपने सारे समाज सहित बुला लेना और यज्ञाग्नि में भस्म कर देना असम्भव नहीं है । पृथु के समक्ष उनके ऋत्विजों ने कोई शेखी नहीं मारी थी, वरन् एक ध्रुव सत्य का संकेत किया था ? वस्तुत: हुआ भी वैसा ही, इन्द्र को इस महाशक्ति के सामने झुकना ही नहीं पड़ा वरन् विवशता से सही रास्ते पर आना पड़ा ।

इत्यामन्य क्रतुपतिं विदुरार्त्विजो रुषा ।
स्त्रग्धस्तञ्जुह्वतोऽभ्येत्य स्वयंभू: प्रत्यषेधत । २९।

-भागवत, ४/ स्कन्ध/१९/२९

अर्थ-ऋषियों की वाणी सुनकर राजी पृथु ने कहा-जब तक आप लोगों के द्वारा यज्ञीय मन्त्रों से खिंचकर अधर्मी इन्द्र मेरे सामने अग्नि-कुण्ड में जल नहीं जाता, तब तक मैं हाथ से धनुष नहीं त्यागूँगा, क्योंकि इस दुष्ट ने अकारण ही मेरे यज्ञ में विघ्न डाला है ।

इसके उपरान्त पृथु की इच्छा पूर्ण करने के लिए ऋषि अपने-अपने हाथ में स्रुवा उठाकर इन्द्र का उद्देश्य कर यज्ञ-कुण्ड (अग्नि-कुण्ड) में आहुति देने लगे । जब यज्ञीय मन्त्रों से खिंचकर इन्द्र अग्नि- में गिरने ही वाले थे कि सहसा स्वयंम्भू ब्रह्माजी ने उपस्थित हो ऋषियों से निवेदन कर इन्द्र को जलाने से बचा लिया ।

यज्ञ पूर्ण हो जाने के पश्चात्-

अर्थ-राजा पृथु से पूजित हुए सर्व देवगण राजा को आशीष देते हुए-यज्ञ की उत्तमता की प्रशंसा करते हुए अपने-अपने स्थान को चले गये ।

भगवानपि वैकुण्ठ: साकम मघवता विभु: ।
यज्ञैर्यज्ञपतिस्तुष्टो यज्ञभुक्तमभाषत ।१।
एष तेऽकारिषीद्धंगं हयमेध शतस्य ह ।
क्षमापयतमात्मानममुष्य क्षन्तुमर्हसि ।।

-भागवत, च. स्क. अ./ २०/१-२

अर्थ-यज्ञ पति और यज्ञ-भोक्ता भगवान् विष्णु यज्ञों से प्रसन्न हो इन्द्र को साथ लिये आवे और कहने लगे-

भगवान् बोले इस इन्द्र ने आपका सौंवा अश्वममेध यज्ञ भंग करना चाहा था, सो अब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह आपकी शरण में आया इसे क्षमा कर दीजिये । भगवान् की बात सुनकर पृथु ने इन्द्र को क्षमा कर दिया ।

ऋषभदेव जी भगवान् के अवतार माने जाते हैं । उन्हीं के पुत्र भरत के नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष हुआ है । ऋषभदेव ने यज्ञों द्वारा ही इस देश को तपोभूमि बनाया था ।

द्रव्यदेशकालवयः श्रद्धत्विग्विधोद्देशोपचितैः सर्वैरपि क्रतुभिर्यथोपदेशं शतकृत्व इयाज ।। १७ ।।

भगवतर्षभेण परिरक्ष्यमाण एतिस्मिन् वर्षे न कश्चन पुरुषो वाञ्छत्यविद्यमानमिवात्मनोऽन्यस्मात्किञ्चन किमपिकर्हिचिदवेक्षते भर्तर्यनुसवनं विजृम्भित स्नेहातिशयमन्तरेण ।। १८ ।।

भाग. ५/४/१७-१८

अर्थ-ऋषभदेव ने सब भाँति पूर्ण विधि के साथ सौ-सौ बार अश्वमेध यज्ञ किये । उनके वे सब यज्ञ साधारण नहीं हुए । द्रव्य, देश काल, यौवन, श्रद्धा, ऋत्विक् अनेक देवताओं के अर्थ इत्यादिक द्वारा,अतिशय बढ़-चढ़ कर सम्पन्न हुए थे । उस समय किसी पुरुष की दूसरे पुरुष से अपने लिये आकाश पुष्पवत् कुछ भी प्रार्थना करने की इच्छा नहीं हुई और कोई दूसरे की वस्तु पर लोभ दृष्टि नहीं करता था । सबों में स्नेह और शील का उद्रेक रहता था ।

ऐसी स्थिति यज्ञों के द्वारा परिनिर्मित हुई थी ।

भरतस्तु महाभागवतो यदा भगवताऽवनितिल परिपालनाय सचिन्तितः तदनु शासन परः पंचजनीं विश्वरूप दुहितरमुपयेमे ।

-भाग. ५/७/१

अर्थ-महाभागवत ! भरत जी, अपने पिता के आदर्श को स्वीकार कर पृथ्वी की रक्षा और प्रजा के पालन में प्रवृत्त हुए और पिता के आदेशानुसार ही उन्होंने विश्व रूप की स्त्री पञ्चजनी का पाणिग्रहण किया ।

अजनाभं नामैतदवर्षं भारतमिति यतो आरभ्य व्यपदिशन्ति ।३।

-भाग., ५/७/३

अर्थ-हे राजन् ! इस खण्ड का नाम पहले अजनाभ-वर्ष था, परन्तु भरत के राजा होने के बाद ही इसका नाम भारतवर्ष हुआ ।

भरत ने यज्ञों द्वारा इस देश की भूमि को पवित्र कर इसे विश्व ब्रह्माण्ड का सर्वश्रेष्ठ भाग बना दिया ।

स वहुविन्महीपतिः पितृ पितामहवदुरुवत्सललया स्वे-स्वे कर्मणि वर्तमानाः प्रजाः स्वधर्ममनुवर्तमानः पर्यपालयत् ।।४।।

ईजे च भगवन्तं यज्ञक्रतुरूपं क्रतुभिरुच्चावचैः श्रद्धयाऽऽहृताग्निहोत्रदर्शपूर्णमास चातुर्मास्यपशुसोमानां प्रकृतिविकृतिभिरनुसवनं चातुर्होत्रविधिना ।। ५ ।।

-भा., ५/७/४-५

अर्थ-राजा भरत सर्वज्ञ थे । पृथ्वीपति होकर अभिमान रहित चित्त से अपने बाप-दादों की भाँति प्रजा के ऊपर वात्सल्य भाव का प्रकाश करते रहे । अपने-अपने कर्मों मे रत प्रजागणों का पालन करते हुए सदा श्रद्धा सहित अनेक छोटे तथा बड़े यज्ञ करके उनके द्वारा यज्ञमूर्ति और क्रतुस्वरूप विष्णु भगवान् की पूजा करते रहते थे । उनको जिस-जिस अग्निहोत्र, दर्श, चातुर्मास्य, पशुयाग और सोमयज्ञ आदि में रुचि थी, उन सबों के द्वारा उन्होंने यज्ञपुरुष का यजन किया । ऐसे किसी यज्ञ को उन्होंने नहीं छोड़ा ।

कभी सर्वाङ्गयुक्त, कभी विकलांग करके दोनों भाँति से भगवान् की पूजा करते थे । चतुर्होत्र विधि की उपासना करते थे । जिनकी अङ्ग क्रिया नित्य ही करने में आती है, ऐसे यज्ञों का सदा ही अनुष्ठान करते रहते थे और सभी यज्ञ कर्म को भगवान वासुदेव को समर्पित कर देते थे । यज्ञ में भाग लेने वाले सभी देवताओं को वे भगवान् का ही एक अङ्ग और विभूति मानकर सर्वभाव से यज्ञ फलादि को यज्ञ पुरुष भगवान् को समर्पण कर देते थे । फलस्वरूप वे शीघ्र ही रागद्वेषादिमलों से निवृत्त होकर परिशुद्ध बन गये ।

विश्वरूप को इन्द्रने ऋत्विजवरण किया था । किन्तु मातृकुल के कारण वे छिपकर असुरों को भी यज्ञ का कुछ भाग दे देते थे । यह जानने पर इन्द्रने उसका सिर काट लिया । इस पर विश्वरूप के पिता त्वष्टा अति क्रुद्ध हुए और-

हतपुत्रस्ततस्त्वष्टा जुहावेन्द्राय शत्रवे ।
इन्द्र शत्रो विवर्धस्व मा चिरं जहि विद्विषम् ।। ११ ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अथान्वाहार्य पचनादुत्थितो घोर दर्शनः ।
कृतान्त इव लोकानां युगान्त समये यथा ।। १२ ।।

-भाग. ६/९/११-१२

अर्थ-विश्वरूप के मारे जाने पर उनके पिता त्वष्टा क्रोध पूर्वक इन्द्र को मारने वाला पुत्र उत्पन्न करने की कामना से यज्ञ करने लगे । किन्तु आहुति देते समय जब उसने शब्दों का उच्चारण किया कि हे इन्द्र शत्रो ! तू वृद्धि को प्राप्त हो और शीघ्र शत्रु का विनाश कर । तब इन्द्र ने सौभाग्य से इसका आदि शब्द उदात्त स्वर में उच्चारण होने से इन्द्र का शत्रु, यह अर्थ न होकर उसका अर्थ हो गया-हे इन्द्र हे शत्रो थोड़ी-सी आहुति डालने पर यज्ञ की दक्षिणाग्नि से युगान्तर कालीन कृतान्त के समान एक भयंकर असुर उत्पन्न हुआ ।

उपरोक्त कथा से स्पष्ट है कि यज्ञ क्रिया अवश्य ही परिणाम उत्पन्न करती है, किन्तु मन्त्रों का शुद्ध अर्थ बोधक उच्चारण ही होना चाहिए । अशुद्ध उच्चारण होने से उसी अर्थ के अनुरूप ही यज्ञ का परिणाम उत्पन्न होता है ।

राजर्षि अम्बरीष की यज्ञाराधना-

ईजेऽश्वमेधैरधियज्ञमीश्वरम् महाविभूत्योपचितांग दक्षिणैः ।
ततैर्वसिष्ठासित गौतमादिभिर्धन्वन्यभिस्रोतमसौ सरस्वतीम् ।। २२ ।।
यस्य क्रतुषु गीर्वाणैः सदस्या ऋत्विजो जनाः ।
तुल्य रूपाश्चा निमिषा व्यदृश्यन्त सुवाससः । २३ ।।
स्वर्गो न प्रार्थितो यस्य मनुजैरमर प्रियः ।
श्रुण्वद्भिरुपगायद्भिरुत्तमश्लोकचेष्टितम् ।।२४ ।।

-भा., स्क. ९, /४/२२,२३,२४

अर्थ- राजर्षि और प्रसिद्ध भक्त अम्बरीष अनेक अश्वमेधादिक महायज्ञों द्वारा यज्ञपति भगवान् का आराधना किया करते थे । यज्ञ, एवं यज्ञ के अङ्ग और दक्षिणा आदि में पर्याप्त सम्पत्ति व्यय करते थे । इनके यज्ञ में प्रधान ऋत्विज्, वशिष्ठ, असित गौतम आदि महर्षिगण थे । धन्व देश, जहाँ सरस्वती की धारा बहती थी, उसी पुण्य क्षेत्र में अम्बरीष यज्ञ किया करते थे ।

उनके यज्ञ में ऋत्विज् और सदस्यों की कान्ति देवताओं के समान ही दिव्य होती थी । यज्ञाराधना में तल्लीन रहने के कारण उनके पलक भी नहीं गिरते थे ।

यज्ञद्वार उत्पादित पवित्रता के प्रवाह से अम्बरीष की प्रजा में भी स्वर्ग-सुख-भोग की वासना नहीं रह गई थी । सभी केवल निष्काम भाव से यज्ञ द्वारा यज्ञेश्वर भगवान् की अर्चना, पूजा, भक्ति , गान एवं ध्यान में प्रवृत्त रहते थे ।

श्री शुकदेव मुनि ने राजा परीक्षित से कहते हैं-

तं ब्राह्मणा भृगवः प्रीयमाणा
अयाजयन्विश्वजिता त्रिणाकम् ।
जिगीषमाणं विधिनाभिषिच्य,
महाभिषेकेण महानुभावाः ।। ४ ।।
ततो रथः काञ्चनपट्टनद्धो,
हयाश्च हर्यश्वतुरङ्ग वर्णाः ।
ध्वजश्च सिंहेन विराजमानो,
हुताशनादास हविर्भिरिष्टात् ।। ५ ।।

-भाग., क. ८/१५-४-५

अर्थ-राजा बलि की सेवा से शीघ्र ही भृगु वंशी ब्राह्मण (शुक्राचार्यादि) प्रसन्न हो गये । राजा बलि स्वर्ग जीतने की इच्छा करते हैं यह जानकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई । श्रेष्ठ ब्राह्मण गणों में सुप्रसिद्ध अभिषेक द्वारा राजा बलि का यथाविधि महाभिषेक कर उनसे विश्वजीत यज्ञ विधान कराने लगे । जब उस यज्ञ की अग्नि में उचित आहुति देदी गई, तब अति शीघ्र उस अग्नि में स्वर्ण के पट से बँधा हुआ एक रथ, इन्द्र के घोड़ों के समान हरित वर्ण के घोड़ों तथा सिंह मूर्ति अंकिता, एक ध्वजा की उत्पत्ति हुई ।

धनुश्च दिव्यं पुरटोपनद्धं तूणावरिक्तौ कवचं च दिव्यम् ।
पितामहस्तस्य ददौ च मालामम्लानापुष्पां जलजं च शुक्रः ।।६।।

-भाग. ८/१५/६

अर्थ-स्वर्ण के बन्दों से बँधा हुआ दिव्य धनुष, अक्षय बाणों से पूर्ण दो तूण और दिव्य कवच, ये वस्तुयें निकलीं । जब राजा बलि ने यज्ञ में इन सामग्रियों की प्राप्ति की तो उनके पितामह भक्त प्रह्लाद ने नहीं कुम्हलाने वाले पुष्पों की माला तथा शुक्राचार्य जी ने एक शंख दिया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ से बलान्वित हो, उस रथ पर बैठकर, दिव्य अस्त्र-शस्त्रादि एवं सैन्य लेकर राजा बलि ने इन्द्र लोक पर आक्रमण किया । देवगण इस साहस पूर्ण आक्रमण को अचानक उपस्थित पाकर घबड़ा उठे । सभी गुरु बृहस्पति के पास गये । बृहस्पति जी ने बताया कि अभी यज्ञ के कारण राजा बलि देवों से अधिक शक्तिशाली है, अतः बिना लड़ाई किये हट जाने में ही भलाई है । गुरुदेव के परामर्शानुकूल सभी देव, बिना युद्ध किये ही स्वर्ग छोड़कर अन्य आश्रम में चले गये ।

देवेष्वथ निलीनेषु बलिर्वैरोचनः पुरीम् ।
देवधानीमधिष्ठाय वशं निन्ये जगत्त्रयम् ।।
त विश्वजयिनं शिष्यं भृगवः शिष्य वत्सलाः ।
शतेनाह्यमेधानामनुव्रतमयाजयन् ।

-भा. स्क. ८, अ./१५, /श्लो. ३३, ३४

अर्थ-यज्ञोत्पन्न तेज से युक्त राजा बलि को देख जब सभी देव अन्तर्धान हो गये या पलायान कर गये । तब विरोचन पुत्र राजा बलि स्वर्ग के सिंहासन पर विराजमान हुए । तीनों लोक इनके अधीन हो गये । इसके उपरान्त शिष्यों पर अति स्नेह करने वाले भृगुवंशी ब्राह्मणों ने विश्वविजयी राजा बलि के इन्द्रत्व को चिरस्थायी बनाने के लिये उनसे एक सौ अश्वमेध कराये ।

गार्हस्थ्य धर्म में यज्ञ का कितना महत्वपूर्ण स्थान है वह निम्न प्रकरणों से जानने में आता है-

यज्ञों से जहाँ आत्म-कल्याण करने वाली महाशक्ति उत्पन्न होती है, वहाँ शत्रुओं को नष्ट करने वाली विकराल-प्रचण्ड शक्ति का भी अविर्भाव होता है ।

पौण्ड्रक जब भगवान् श्रीकृष्ण से लड़ रहा था तो काशी नरेश ने मित्रता के नाते उसे सहायता दी और वे भगवान् के हाथों मारे गये । पिता की मृत्यु से काशी नरेश के पुत्र सुदक्षिण को श्रीकृष्णचन्द्र जी पर बड़ा ही क्रोध हुआ। उसने पिता की हत्या का बदला लेने के विचार से तपस्या पूर्वक शिव की आराधना की । भोले बाबा ने साक्षत् दर्शन देकर उससे वरदान माँगने को कहा । उसने पितृ हत्यारे से बदला लेने का वरदान मांगा । शिवजी ने सारी विधियों सहित मारण यज्ञ विधि बताते हुए कहा-

दक्षिणाग्निं परिचर ब्राह्मणैः सतमृत्विजम् ।
अभिचार विधानेन सचाग्निः प्रमथैर्वृतः ।। ३०।।

-भाग. स्क. १०/६६/३०

अर्थ-तुम ब्राह्मणों के साथ आज्ञाकारी ऋत्विज् सदृश दक्षिणाग्नि का यज्ञ द्वारा यजन करो । वह अपने गणों के साथ तेरे मनोरथों को पूरा करने का पूरा प्रयत्न करेगा । वह अपने गणों के साथ तेरे मनोरथों को पूरा करने का पूरा प्रयत्न करेगा । पर इसका प्रयोग ब्रह्मज्ञानियों की सेवा-भक्ति करने वाले पर न करना ।

शिवजी की बताई विधि के अनुसार सुदक्षिण ने दक्षिणाग्नि का यजन कया । विधि पूर्वक उसमें आहुति डालीं-उपरान्त-

ततोऽग्निरुत्थितः कुंडान्मूर्त्तिमानति भीषणः ।
तप्त ताम्र शिखाश्मश्रु रङ्गारोद्गारिलोचनः ।।३२।।
दंष्ट्रोग्र भ्रकुटी दण्ड कठोरास्यः स्वजिह्वया ।
आलिंहन् सृक्किणी नग्नो विधुन्वं -स्त्रिशिखं ज्वलन् ।।३३।।
पद्भ्यां तालप्रमाणाभ्यं कम्पयन्नवनीतलम् ।
सोऽभ्यधावद् वृतो भूतैद्वरकां प्रदहन्दिशः ।।३४ ।।

-भाग. स्क. १०/६६/३२-३३-३४

अर्थ-आहुति डालते ही यज्ञाग्नि कुंड से अत्यन्त भयानक आकृति वाला अग्नि निकला, जिसकी जलते हुए ताम्बे के सदृश शिखा, दाढ़ी और मूछें थीं । मुख और आँखों से अँगारे निकल रहे थे । बड़े-बड़े नुकीले दाँतों वाला, लपलपाती जीभ एवं भयङ्कर भृकुटी सहित कठोर दण्डों के समान भयावना था ।

इस भाँति लपलपाती जीभ से अपने होठों को चाटता हुआ, जलते हुए त्रिशूल को घुमाता, नङ्ग-धड़ङ्ग, ताड़ से लम्बे पांवों द्वारा धरती को कँपाता दशों दिशाओं को जलाता हुआ, भयंकर भूत-प्रेत के संग द्वारका जा पहुँचा और उसे सभी ओर से जलाने लगा ।

नैमिषारण्य क्षेत्र, सृष्टि के आदि काल में स्वयं स्रष्टा के दीर्घकालीन यज्ञों द्वारा परम पावन हुआ था, उसके उपरान्त-

नैमिषंऽनिनिमक्षेत्रे ऋषयः शौनकादयः ।
सत्रं स्वर्गाय लोकाय सहस्त्र समसासत ।। ४४ ।।

-भाग., स्क. १/१/४

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थ-एक बार शौनक आदि ८८००० अठासी हजार ऋषियों ने स्वर्ग-प्राप्ति करने के हेतु से नैमिषारण्य के पवित्र क्षेत्र में दस हजार वर्ष तक लगातार दीर्घ महायज्ञ करने का सङ्कल्प किया ।

उन्हीं यज्ञादि के पवित्र प्रभावों से आज भी नैमिषारण्य पवित्र क्षेत्र बना हुआ है ।

गौ रूप धारिणी और वृषभ आकार धारण किये हुए धर्म को जिस समय कलियुग पार्थिव आकार ग्रहण कर उत्पीड़न दे रहा था, उसी समय राजा परीक्षित वहाँ पहुँच गये थे और उन्होंने इस सताने वाले दुष्ट का सिर तलवार से काट लेना चाहा । इस परिस्थिति को भाँप कर दुष्ट, पर परीक्षित के सामने कमजोर कलियुग उनके पांवों पर गिर पड़ा और प्राण भिक्षा माँगने लगा । इस पर राजा परीक्षित उससे कहते हैं-

न वर्तितव्यं तदधर्मबन्धो धर्मेण सत्येन च वर्तितव्ये ।
ब्रह्मावर्तं यत्र यजन्ति यज्ञैर्यज्ञेश्वरं यज्ञ वितान विज्ञाः ।।
यस्मिन्हरिर्भगवानिज्यमान इज्या मूर्तिर्यजतां शं तनोति ।
कामान्मोघानिस्थर जंगमानामन्तर्बहिर्वायुरिवैष आत्मा ।।

-भाग., स्क. १/१७/३३-३४

अर्थ- हे कलियुग ! तुम यहाँ मत रहो और सत्य, व्रत एवं धर्ममय आचरण करो तो रहो । यह ब्रह्मावर्त्त देश यज्ञ-भूमि है । यहाँ के ज्ञानी जन यज्ञ विस्तार के लिये प्रयत्न करते रहते हैं और सदैव एवं सर्वत्र यज्ञेश्वर भगवान् का यज्ञों द्वारा पूजन करते हैं । यज्ञ में सदैव भगवान् का ही पूजन होता है एवं यज्ञरूप भगवान् सदा ही यज्ञ-कर्त्ताओं के कल्याण का विधान करते रहते हैं और अश्वमेध रूपेण उनकी मनोकामना पूर्ण कर देते हैं । जिस भाँति यह वायु, सर्वव्यापी है, उसी भाँति यज्ञेश्वर भगवान् भी स्थावर-जङ्गम एवं सर्वत्र सब में ही निवास करते हैं ।

इस भाँति श्रीमद्भागवत में अनेकों स्थानों पर यज्ञों की चर्चा है और उनका महत्व पग-पग पर प्रतिपादित किया गया है ।

महाभारत में यज्ञ

यज्ञ करने से क्या लाभ है इस विषय को लेकर महाभारत के चतुर्दश पर्व आश्वमेधिक पर्व में बहुत से सुन्दर श्लोक उपलब्ध होते हैं । महाभारत के युद्ध की समाप्ति पर सन्त युधिष्ठिर को किस प्रकार मन शान्ति मिल सकती है इस प्रसंग में इनका वर्णन आया है । युधिष्ठर के मन में भयंकर अशान्ति है । कुछ वृद्ध भीष्म पितामह को एवं द्रोण आदि गुरुजनों को मार कर कैसे मेरा निस्तार हो सकता है यह चिन्ता उसे खाये डालती है । वह समझता है कि उसने भयंकर पाप किया है । उस पाप से छुटकारा उसे किस प्रकार मिले इसी उधेड़बुन में उसका मन लगा हुआ है । उसकी इस मानसिक अशान्ति को दूर करने के लिये महर्षि व्यास जी उसे एक मार्ग सुझाते हैं । वे कहते हैं कि युधिष्ठिर तुम यदि अपने को पापात्मा समझते हो तो उस पाप से छुटकारा पाने के उपाय हैं तपस्या, दान एवं यज्ञ जो व्यक्ति भयंकर से भयंकरतम पाप भी करता है उसे यज्ञ, दान एवं तपस्या से छुटकारा मिल जाता है । यह वह नौका है जिससे मनुष्य पाप की मंझधार में डूबने से बच जाता है और सकुशल समुद्र लाँघ जाता है । अर्थात् यदि वह दान कर दे एवं तपस्या भी न करे । तो भी मात्र यज्ञ से ही उसकी पाप शुद्धि हो जाती है । महर्षि व्यास कहते हैं-

असुराश्च सुरश्चैव पुण्य हेतोमवक्रियाम् ।
प्रयतन्ते महात्मान स्तस्मा द्यज्ञाः परायणम् ।।
यज्ञैरेव महात्मानो बभूवुरधिका सुराः ।
ततो देवाः क्रियान्वतो दानवानब्यघर्षयन् ।।

१४३६-७

पुण्य प्राप्त करने के लिये देवता और असुर दोनों ही महात्मा यज्ञ क्रिया की ओर प्रवृत्त होते हैं । इस लिये यज्ञ ही सर्वोत्कृष्ट सहारा होते हैं । यज्ञों से ही शक्तिशाली देवता बढ़ गये । उससे ही नित्य कर्मकाण्ड में तत्पर देवताओं ने असुरों को अभिभूत कर दिया ।

उपरिनिर्दिष्ट दोनों श्लोकों से स्पष्ट है कि महाभारत के समय में यज्ञ की महिमा अपूर्व थी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वैदिक परम्परा उस समय अक्षुण्ण थी । इसी बात का एक और प्रमाण मिलता है । द्रोण पर्व के ८२ वें अध्याय में युधिष्ठिर का जो वर्णन किया गया है उससे इसी बात की पुष्टि होती है । युद्ध भूमि में भी महाराज की और फिर यज्ञ शाला में जाकर अग्नि में समिधाएँ डाली और आज्याहुति के साथ वैदिक मन्त्र पढ़कर यज्ञ किया ।

समिद्धिश्च पवित्राभिरग्निमाहुतिभिस्तथा
मन्त्रपूताभिरर्चित्वा निश्चक्राम ततो गृहात् ।।

इस वर्णन से दीख पड़ता है कि स्वयं होम करने की आवश्यकता थी और यह होम सादी समिधा तथा आज्याहुति का होता था । इस काम में बहुत समय न लगता होगा । इसी तरह उद्योग पर्व के ८३ वें अध्याय में जब श्रीकृष्ण जी हस्तिनापुर को जाने के लिए चले तो वर्णन है-

कृत्वापौर्वाह्णिकं कृत्यं स्नातः शुचिरलङ्कृतः ।
उपतस्थे विवस्वन्तं पावकं च जनार्दनः ।।

अर्थात्-सूर्य और अग्नि की उपासना यानी उपस्थान एवं आहुति दोनों काम भारती युद्ध में प्रत्येक आर्य को करने पड़ते थे । सायंकाल में सूर्य के अस्त होते समय सन्ध्यावन्दन एवं होम करना पड़ता था । महर्षि बाल्मीकि ने भी रामायण में ऐसा ही वर्णन किया है । विश्वामित्र के साथ जाते हुए अथवा वनवास में जाने पर जहाँ-जहाँ प्रभात और सन्ध्या हुई वहाँ-वहाँ राम और लक्ष्मण के सन्ध्या का वर्णन आया है ।

महाभारत में जहाँ-जहाँ ब्राह्मण व क्षत्रिय के कर्मों का उल्लेख हुआ है वहाँ-वहाँ यज्ञ को प्रमुख स्थान दिया गया । ब्राह्मण के धर्म हैं तपस्या, यज्ञ, विद्या, इन्द्रियसंयम, ध्यान, ज्ञान आदि । एवं क्षत्रिय के धर्म हैं यज्ञ, विद्या, उद्यम, लक्ष्मी के प्रति असन्तोष, दण्ड धारणा आदि । ब्राह्मण एवं क्षत्रियों की भाँति महाभारत काल के वैश्य भी प्रातः और सायं होम किया करते थे । इस प्रकार यज्ञ या होम त्रिवर्ण के लिये अनिवार्य था । जब तक वे सन्यासाश्रम में प्रवेश न करें तब तक यज्ञ आदि से वे पृथक नहीं हो सकते थे । शान्ति पर्व में एक स्थान पर कहा है कि जो दैविक कृत्य करता है और जो विशाल पितृयज्ञ व भूतयज्ञ करता है वही सन्यासाश्रम में प्रवेश करता है । ब्राह्मणों के लिए स्थान-स्थान पर यज्ञ करने का विधान आया है । यही तो उनके जीवन का पाया है । उनके लिये कहा गया है कि उनका मुख्य कर्तव्य है, अध्यापन, अध्ययन, यज्ञ करना एवं यज्ञ कराना । ब्राह्मण चूँकि चारों वर्णों के पथ प्रदर्शक थे इसलिये उनके लिये यज्ञ निरत रहना अत्यावश्यक हो जाता है । यदि ब्राह्मण ही अपने कर्म से च्युत हो गये, तो शेष वर्णों का क्या होगा । वे तो ब्राह्मण मुखापेक्षी हैं । उन्हीं से तो उन्हें नेतृत्व मिलना है । जब ब्राह्मण अपने कर्म से विमुख हो जाता है तो समाज दूषित हो जाता है । महाभारत में एक स्थान पर बहुत ही भाव-पूर्ण वचन आये हैं । यह कहा है पतित एवं संस्कार च्युत ब्राह्मण ही शूद्र बन जाते हैं । इसलिए यज्ञ का उनके लिये आत्यन्तिक निषेध नहीं है ।

महाभारत में अनेकानेक स्थानों में यज्ञ की महिमा का वर्णन मिलता है । जाजलि और तुलाधार के संवाद में तुलाधार जाजलि से कहता है-हे महामुने जो बुद्धिमान् विप्र श्रेष्ठ सदा यज्ञ करते हैं, वे यज्ञ करने से ही देवलोक को प्राप्त होते हैं । १ अथ च आपद्धर्मपर्व के १५१ अध्याय के आठवें श्लेक में भीष्म पितामह यज्ञ को अवश्य कर्तव्य बतलाते हैं और चेतावनी देते हैं कि-**न ह्याज्ञा असुं लोकं प्राप्नुवन्ति कथञ्चन** जो यज्ञ नहीं करते थे वे उस लोक अर्थात् परलोक को नहीं प्राप्त करते । इसलिए मनुष्य को अपना परलोक सिद्ध करने के लिये यज्ञ करना ही चाहिये । इसी प्रकार के अनेकानेक श्लोक महाभारत में मिलते हैं । केवल इतना ही नहीं, कहीं-कहीं तो महाभारत के रचयिता यज्ञ की महिमा का गान करते समय आत्म विभोर हो उठते हैं और एक कविता सी फूट पड़ती है । कविता के प्रत्येक छन्द व प्रत्येक कड़ी में कवि के मुग्ध हृदय की झाँकी पाठक को या श्रोता को मिल जाती है और वह एक बार ही झूम उठता है यज्ञ की अपूर्व एवं दिव्य महिमा का वर्णन करते हुए कवि कहता है-

स्तेनो वा यदि वा पापी यदि वा पापकृत्तमः ।
यष्टुमिच्छति यज्ञं य साधुमेव वदन्तितम् ।।
सर्वथा सर्वदा वर्णैरष्टव्यामितिनिर्णयः ।
नहियज्ञस्म किञ्चित त्रिषुलोकेषुविद्यते ।।२ ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोई भी (व्यक्ति) चाहे वह चोर हो, पापी हो पाप करने वालों में भी सब से नीच हो यदि वह यज्ञ करना चाहता है तो वह सज्जन ही है । सभी वर्णों को सदा सर्वदा यज्ञ करना चाहिये यही निर्णय है । तीनों लोकों में यज्ञ के समान और कुछ नहीं है ।

यह यज्ञ की पूर्वोक्त महिमा के अनुरूप ही है कि यज्ञ को पाप शोधक माना जाता है । कितना ही बड़ा पाप क्यों न किया गया हो यदि यज्ञ कर लिया जायगा तो पाप का प्रायश्चित हो जायगा यह महाभारत का पूर्ण विश्वास है । हाँ, जितना बड़ा पाप होगा उतना ही बड़ा प्रायश्चित करना पड़ेगा । राजधर्मानुशासन पर्व के प्रारम्भ में जब युधिष्ठिर बन्धुवध के कारण दु:खी हो रहे थे और समझ रहे थे उन्होंने ऐसा कर बहुत बड़ा पाप पङ्क से निकलने का एक मार्ग सुझाते हैं । वे कहते हैं-**अश्वमेधोमहायज्ञः प्रायश्चित्तमुदाहृतम्** अर्थात् अश्वमेधनाम का महायज्ञ इस पाप का प्रायश्चित कहा गया है । हे महाराज! आप उसे कीजिये और ऐसा करने से आप पाप मुक्त हो जायेंगे । शान्तिपर्व के अध्याय १९१ में भारद्वाज भृगुसंवाद में भृगु ने भी यज्ञ को पाप को शान्ति करने वाला बताया है । वे कहते हैं-**हुतेन शाम्यतेपापम्** अर्थात् हवन यज्ञ करने से पाप शान्त हो जाता है । अथ च अश्वमेधकपर्व के अध्याय ३ में भगवान् वेद व्यास ने भी यज्ञ को पाप से उबारने वाला बताया है- उन्होंने कहा है-

तपोभिः क्रतुभिश्चैव दानेन च युधिष्ठिर ।
तरन्ति नित्यं पुरुषा येस्म पापानि कुर्वते ।।

हे युधिष्ठिर जो मनुष्य नित्य पाप करते हैं (वे भी) तप, यज्ञ एवं दान के कारण पाप से तर जाते हैं ।

श्रणु तत्र यथा पापमकृष्यते भारत ।
तपोभिः क्रतुभिश्चैव दानेन च युधिष्ठिर ।।
यज्ञेन तपसा चैव दानेन च नराधिप ।
पूयन्ते नर शार्दूल नरा दुष्कृत कारिणाः ।।
असुराश्च सुराश्चैवपुण्यहेतोर्मख क्रियाम् ।
प्रयतन्ते महात्मान स्तस्माद्यज्ञाः परायणम् ।।
यज्ञै रेव महात्मानो बभूवुरधिकाः सुराः ।

-महाभारत

हे युधिष्ठर ! तपों और यज्ञों से पाप क्षीण होता है, हे राजन् ! दुष्कर्म करने वाले नर भी यज्ञ, तप और दान करने से श्रेष्ठ पुरुष के समान पूजित होते हैं । असुर और सुर भी पुण्य के हेतु यज्ञ क्रिया का प्रयत्न करते हैं । इसलिए सत्पुरुषों को यज्ञ करना चाहिए । यज्ञों से ही बहुत से सत्पुरुष देवता बन जाते हैं ।

महाभारत में जिन यज्ञों का उल्लेख है उनके नाम ये हैं-अश्वमेध, राजसूय, पुण्डरीक, गवामयन, अतिरात्र, वाजपेय, अग्निजित् एवं बृहस्पति सब इन यज्ञों से अश्वमेध एवं राजसूय का ही किञ्चिद्विस्तृत वर्णन मिलता है शेष का केवल नाम भर ही आया है महाभारत के दो राजसूय प्रसिद्ध हैं । एक तो महाराज युधिष्ठिर ने किया और दूसरा श्रीकृष्ण ने अश्वमेध तो अनेक किये जिनका विस्तारपूर्वक उल्लेख महाभारत के पर्वों में बिखरा पड़ा है । अकेले शान्तिपर्व में ही कितने ही धर्मात्माराजाओं के अनेक अश्वमेध यज्ञों का उल्लेख है । दृष्टान्त के रूप में अविक्षित् के पुत्र का अश्वमेध, दुष्यन्त के पुत्र भरत के एक सहस्र अश्वमेध, दशरथत के पुत्र राम के दस अश्वमेध, भगीरथ के अनेक अश्वमेध, दिलीप के एक सौ अश्वमेध इत्यादि । इन राजाओं और इनके अश्वमेध यज्ञों की संख्या का उल्लेख तो प्रासंगिक रूप में मिलता है । जिस अश्वमेध यज्ञ का प्रमुख रूप से उल्लेख है वह है महाराज युधिष्ठिर का अश्वमेध यज्ञ । महाभारत युद्ध की समाप्ति पर दु:खित हुए युधिष्ठिर की मन:शान्ति के लिए पाप के प्रायश्चित के रूप में अश्वमेध यज्ञ करने का सुझाव महर्षि व्यास ने दिया था । यह सुझाव युधिष्ठिर को पसन्द आया । और उसने अश्वमेध यज्ञ करने का निश्चय कर लिया । इसी अश्वमेध यज्ञ का वर्णन हमें आश्वमेधिक पर्व में मिलता है । वहाँ कहा है कि अश्वमेध यज्ञ में वेद विद्या में पारंगत याजकों ने सब कुछ शास्त्रोक्त विधि के अनुसार किया । उन्होंने कहीं भी स्खलन नहीं किया, कुछ भी कर्म छोड़ा नहीं, कहीं भी क्रतधुत्युम नहीं किया और सभी कुछ ठीक प्रकार से ही किया ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि यज्ञ याग की महाभारत में महिमा गाई गई हैं । यज्ञ परम्परा इसमें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भगवती भागीरथी के अविच्छिन्न प्रवाह के सामने प्रवाहित होती हुई दीख पड़ती है । महाभारतकार ने तो यहाँ तक कह दिया है-

स्वाहा स्वधावषटकारायत्रसम्यगतुष्ठिताः ।
अजसु चैववर्तन्ते वसेत्तत्राविचारमन् ।।

-मोक्षधर्म पर्व, अध्याय २८७. श्लोक ५१

''जिस राष्ट्र में स्वाहा, स्वधा एवं वषट्कार का ठीक-ठाक तथा सदैव अनुष्ठान किया जाता हो वहाँ मनुष्य को रहना चाहिये । इसमें सोच-विचार करने की आवश्यकता ही नहीं ।

पुराणों में यज्ञ-माहात्म्य के कुछ प्रसंग

प्राचीन काल में भारत-भूमि में घर-घर यज्ञ होते थे । नित्य यज्ञ के अतिरिक्त कुछ उत्सव, पर्व, त्यौहार आदि विभिन्न अवसरों पर बड़े-बड़े यज्ञ होते थे । इसके अतिरिक्त किसी बड़ी सफलता के लिए भी अनेक विधि-विधानों से सुसम्बद्ध यज्ञ किये जाते थे । इस प्रकार के यज्ञों तथा उनके परिणामों से भारतीय इतिहास पुराणों का पन्ना-पन्ना भरा पड़ा है । उनमें से कुछ यहाँ लिखे जा रहे हैं ।

ततः कालेन बलिर्वैरोचनिः सर्वगम् ।
यज्ञर्यज्ञेश्वर विष्णुमर्च्चयामास सर्वगम् ।।४६।।
ब्राह्मणान् पूजसामास दत्त्वा बहुतरं धनम् ।
ब्रह्मर्षयः समाजग्मुर्यज्ञ वाहं महात्मनः ।।४७।।
विज्ञाय विष्णुभगवान् भरद्वाजप्रचोदितः ।
आस्थाय वामनं रूप यज्ञदेशमथागमत् ।।४८।।

-कूर्म पुराण पूर्वार्ध अ. १७

अर्थ-स्वयं दैत्यराज बलि ने यज्ञ से यज्ञरूप विष्णु की पूजा की । पुष्कल धनादि से ब्राह्मण पूजन किया व अनेक महर्षि महात्मादि यज्ञ में गये । स्वयं भगवान् विष्णु भरद्वाज के कहने से वामन रूप धारण कर यज्ञ देश में गये । इस प्रकार यज्ञ की महिमा अकथनीय है, जिसके कारण जगत्पिता विष्णु को भी अभ्यागत रूप में दैत्यराज बलि के द्वार पर जाना पड़ा ।

त्रिपुरासुर तथा उसकी सन्तान, शिवजी की अर्चना करके उनकी कृपा से, देवों के लिये अजेय हो गये । उन असुरों ने यज्ञ को हवि भी देवों से छीन भोग करना प्रारम्भ किया । दुःखी पराजित देवताओं ने शिवजी से कष्ट विनाश के लिए प्रार्थना की । शिव ने कहा कि त्रिपुरासुर की संतति तो मेरी भक्त है, मैं अपने भक्तजनों का विनाश कैसे कर सकता हूँ ? शिवजी ने देवगणों को विष्णु के पास भेज दिया । विष्णु भगवान ने देवताओं की आर्त्त विनय सुनकर कहा-

विष्णु उवाच-

अनेनैव समादेवा यजध्यं परमेश्वरम् ।
पुरत्रय विनाशाय जगत्त्रय विभूतये ।।१५।।

-शिव महापुराण द्वि. रुद्र संहिता, युद्ध खण्ड द्वि. अ.

अर्थ-विष्णु भगवान् ने कहा-ऐसे अवसर पर सदा ही देवों ने यज्ञ द्वारा परमेश्वर की आराधना की है, बिना यज्ञ किये त्रैलोक्य की विभूति स्वरूप त्रिपुरासुर के तीन पुत्रों का विनाश नहीं हो सकता ।

सनत्कुमार उवाच-

अच्युतस्य वच श्रुत्वा देव देवस्य धीमतः ।
प्रेम्णा ते प्रणतिं कृत्वा यज्ञेश तेऽस्तुवन्सुराः ।।२६।।
एवं स्तुत्वा ततो देवा अयजन्यज्ञपुरुषम् ।
यज्ञोक्तेन विधानेन सम्पूर्ण विधयो मुने ।।२६।।
ततस्तस्माद्यज्ञकुण्डात्समुत्पेतुस्सहस्त्रशः ।
भूतसंघा महाकायाः शूलशक्ति गदा युधा ।।२८।।
ददृशुस्ते सुरास्तान वैभूत सघान सहस्त्रशः ।
शूलशक्ति गदा हस्तादण्डचाप शिला युधान् ।।२९।।
नानाप्रहरणोपेतान् नाना वेष धरांस्तथा ।
कालाग्नि रुद्र सदृशान् कालसूर्योपमांस्तदा ।।३०।।
दृष्ट्वातानबरवद्विष्णुः प्रणिपत्य पुरः स्थितान् ।
भूतान्यज्ञपतिः श्रामात्रुदाक्षाप्रतिपालकः ।।३१।।

विष्णु उवाच-

भूता श्रृणुत मद्वाक्य देव कार्यार्थमुद्यता ।
गच्छन्तु त्रिपुरं सद्यस्वै हि बलवत्तराः ।।३२।।
गत्वा दग्ध्वा च भित्वा च भुक्त्वा दैत्यपुरत्रयम् ।
पुर्नयथा गता भूता गन्तुमर्हथ भूतये ।।३४।।

-शिव महापुराण द्वितीय रुद्र संहिता छठा खण्ड दू. अ.

अर्थ-यज्ञ पुरुष भगवान् विष्णु की बात सुनकर बुद्धिमान देव एवं देवेन्द्र ने उनको प्रणाम करके कहा कि हे यज्ञेश्वर ! हम ऐसा ही करेंगे । ऐसी स्तुति करके सभी देवों ने यज्ञ के द्वारा यज्ञपुरुष का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यजन किया । यज्ञ के जो-जो विधान हैं सभी को साङ्गोपाङ्ग सम्पन्न किया ।।२६-२७।।

इसके उपरान्त यज्ञ कुंड से बड़े भयङ्कर विशाल शरीर धारण किये हजारों भूतों के संघ उत्पन्न हो गये, जिनके हाथ युद्ध करने के लिये शूल, गदा आदि अस्त्र-शस्त्र धारण किये हुए थे ।।२८।।

देवताओं ने देखा कि यज्ञ कुंड में हजारों भूतों के समूह हाथ में शूल, शक्ति, गदा, चाप, शिला आदि प्रहार करने वाले विभिन्न अस्त्र धारण कर विभिन्न रंग, रूप, वेष धारण किये, कोई कालाग्नि रुद्र के समान, कोई सूर्य के समान यज्ञपति विष्णु भगवान् को प्रणिपात (नमस्कार) करते हुये खड़े हैं । उन्हें देखकर विष्णु भगवान् बोले-हे देव-कार्य करने के लिए उद्यत (तैयार) भूतगणो ! मेरी बातसुनो-तुम लोग शीघ्र ही त्रिपुर जाओ और वहाँ जाकर दैत्यों के तीनों पुरों को जलाकर, विध्वंस कर तोड़-फोड़कर, फिर तुम लोग जहाँ से आये थे, वहीं चले जाओ ।।२९-३१।।

वासुदेव स्वमात्मानमश्वमेधैरथायजत् ।
सर्वदानानिसददौ पालयामास स प्रजाः ।।
पुत्रवद्धर्म कामादीन्दुष्टम् निग्रहणे रतः ।
सर्वाधर्मपरोलोकः सर्वशस्योचमेदिनी ।।
नाकाल मरणाश्चसी द्रामे राज्ये प्रशासति ।।

-आग्नेय पु. अ. १० श्लोक ३३-३४

अर्थ-राज्याभिषेक होने के बाद भगवान् राजा रामचन्द्र जी ने अपने आत्मा स्वरूप वासुदेव भगवान् का अश्वमेध यज्ञों द्वारा यजन किया ।

रामचन्द्र जी ने सब प्रकार के दान दिये, प्रजा का पुत्र के समान पालन किया, दुष्टों का निग्रहण किया ।

इससे भगवान् राम के राज्य में सब लोग धर्म में तत्पर रहते थे ।

पृथ्वी सम्पूर्ण शस्यों में युक्त रहती थी । न किसी की अकाल मृत्यु होती थी ।

बलि ने संग्राम में इन्द्रादि देवताओं को जीत लिया । उसके उपरान्त-

बुभजेऽव्याहतैश्वर्य प्रवृद्ध श्रीर्महाबलः ।
इयाज चाश्वमेधैः स प्रीणन तत्परः ।।

-नारद पु. अ. १० श्लोक ३१

अर्थ-विश्वजित यज्ञ करके (इन्द्र के राज्य को जीतकर) बलि अव्याहत ऐश्वर्य बड़ी हुई लक्ष्मी और महान् बल से सम्पन्न हो त्रिभुवन का राज्य भोगने लगे । फिर उन्होंने भगवान् की प्रीति के लिये तत्पर होकर अनेक अश्वमेध-यज्ञ किये ।

महाराज बाहु ने सातों द्वीपों में सात अश्वमेध-यज्ञ किये । उन्होंने चोर-डाकुओं को यथेष्ट दण्ड शासन में रक्खा और दूसरों का सन्ताप दूर करके अपने को कृतार्थ माना । उनके राज्यकाल में यज्ञों की महिमा से पृथ्वी पर बिना जोते-बोये अन्न पैदा होता था और वह फल-फूलों से भरी रहती थी । देवराज इन्द्र उनके राज्य की भूमि पर समयानुसार वर्षा करते और पापाचारियों का अन्त हो जाने के कारण वहाँ की प्रजा धर्म से सुरक्षित रहती थी ।

च्यवन ऋषि ने अश्विनी कुमारों का यज्ञ किया, जिसके प्रभाव से उन्होंने देव-लोक में सुर दुर्लभ ऐश्वर्य प्राप्त किया, इसका वर्णन भविष्य पुराण में इस प्रकार मिलता है-

यज्ञभागे प्रवर्त्तेतु शास्त्रोक्ते तु विधानतः ।
आगतावश्विनौतत्र आहूतो च्यवनेनतु ।।

-भवि. पु. ब्रा. प. अ. १९ श्लोक ६६

अर्थ-शास्त्रोक्त विधि-विधान से यज्ञ में भाग देने पर, च्यवन ऋषि के द्वारा बुलाये गये अश्विनीकुमार अपना यज्ञ भाग लेने के लिए वहाँ यज्ञ स्थली में आये ।

जब च्यवन ऋषि का यज्ञ पूर्ण हो गया, देवता अपना-अपना भाग ग्रहण कर स्वर्ग में अनन्त सुख-साधन को प्राप्त हुए ।

अथपश्यद्विमानाभं भवनं देव निर्मितम् ।
शैय्यासनवरैर्जुष्टं सर्व काम समृद्धिमात ।।
उद्यानवापिभिर्जुष्टं देवेन्द्रेण समाहृतम् ।
गोखण्ड सान्निभैरजे गृह तद्भवि दुर्लभमे ।।
दृष्ट्वा तत्सर्वमखिलं सहपत्न्या महामुनिः ।
मुदंपरमिकालेभे इन्द्रञ्च प्रशंशह ।।

-भवि. पु. ब्रा. प. अ. १९ श्लोक ८०,८१,८३

अर्थ-''यज्ञ के पूर्ण होने पर'' च्यवन ऋषि ने शय्यासनों से युक्त सब समृद्धियों से विराजमान, देवताओं से निर्मित्त विमान के समान शोभा वाले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भवन को देखा । बाग वापी इत्यादि से युक्त, इन्द्र के द्वारा लाये गये गोखण्ड के समान आभा से रञ्जित भवन को देखा, जो पृथ्वी पर दुर्लभ है ।

पत्नी के सहित सब दृश्यों को देखकर मुनि च्यवन ने परम आनन्द पाया और इन्द्र की प्रशंसा की ।

शुक्राचार्य ने बलि से यज्ञ कराना आरम्भ किया । उस विश्वजित यज्ञ के सम्पूर्ण होने पर, सन्तुष्ट हुए अग्नि ने प्रगट हो कर, बलि को घोड़ों से जुता हुआ रथ, दिव्य धनुष, त्रोण एवं अभेध कवच प्रदान किये । आचार्य की आज्ञा से उनको प्रणाम करके बलि उस रथ पर सवार हुए और उन्होंने स्वर्ग पर चढ़ाई कर दी । इस बार उनका तेज असह्य था । देवगुरु बृहस्पति के आदेश से देवता बिना युद्ध किये ही स्वर्ग छोड़कर भाग गये ।

सूतजी बानर वंश का वर्णन करते हुए कहते हैं-

बाली यज्ञ सहस्त्राणां यज्वा परम दुर्जयः ।

-ब्र. पुराण उपा. पा. ३ अ. ७

अर्थ-बाली ने सहस्त्रों यज्ञों का यजन किया, इससे वह परम दुर्जय बन गया ।

सूतजी ऋषियों से कथा कहते जा रहे हैं-

नहुषस्य महात्मानः पितरं यं प्रचक्षते ।
स तेष्वबभूथेष्वेव धर्मशीलो महीपतिः ।।२४।।
आयुराधभवायागयस्मिन सत्रे नरोत्तमः ।
शान्तयित्वा तु राजानां तदा ब्रह्मविदस्तथा ।।२५।।
सत्रपारेधिरे कर्त्तुं पृथ्वीवत्सात्यमूर्त्तयाः ।
बभूव सत्रे तेषां तु ब्रह्मचर्य्यां महात्मनाम् ।।२६।।

-ब्रह्माण्ड पु. पू. भा. प्र. पा. १ अ. २

अर्थ-राजा नहुष ने अपने पूर्वजों का अनुसरण कर अनेकों यज्ञ करके अवभृथ (यज्ञान्त) स्नान किया । यज्ञ करने से राजाओं में श्रेष्ठ नहुष, शान्त और ब्रह्मविद् हो गया, उनकी आयु भी बढ़ गई । ब्रह्मचर्य पालन सहित किये हुए उनके यज्ञों से पृथ्वी वैसी ही वात्सल्यमयी बन गई जैसे बच्चों के लिये माता होती है ।

मार्कण्डेय पुराण में यज्ञों सम्बन्धी अनेक विवरण और वर्णन प्राप्त होते हैं । राजा इन्द्रद्युम्न के पास इन्द्रनीलमणि द्वारा निर्मित्त एक बड़ी ही मूल्यवान प्रतिमा थी । इसके खो जाने पर राजा को बड़ा दुःख हुआ । दुःखी होकर वह मृत्यु की गोद में जाने लगा तो विद्वानों ने इस दुःख से निवृत्ति पाने के लिये एक बड़ा यज्ञ करने की सलाह दी । यज्ञ के फलस्वरूप राजा को वह खोई हुई मणि अनायास ही प्राप्त हो गई ।

एक समय असुर प्रबल हो गये । पूर्ण विश्व को जीतकर स्वर्ग पर भी उन्होंने अपना अधिकार जमा लिया । दैत्यराज ने अपना राज्य स्थायी रखने की इच्छा की और इस हेतु वह इन्द्र के पास गया तथा पूछा-'हमारा राज्य स्थिर कैसे रहे ? इन्द्र ने सरल भाव से उन्हें यज्ञ करने का आदेश दिया । असुर यज्ञ परायण हो गये । वे यज्ञ करके शक्ति के अधिकारी बन बैठे और अजेय हो गये । विश्व में असुरों का ही राज्य दिखाई देने लगा । देवता लोग निर्बल पड़ गये । स्वर्ग का राज्य उनसे छीन लिया गया ।

देवों ने भगवान से प्रार्थना की । भगवान् ने असुरों के पास ऐसे-ऐसे दूत भेजे जो असुरों को यज्ञ न करने की सलाह दें । उन छद्म-दूतों ने बड़ा प्रभावशाली वेश बनाकर असुरों से कहा- हरे-हरे तुम यह पाप क्यों करते हो यज्ञ में हिंसा होती है । दैत्यों को यह मत उचित लगा और जीवन अयज्ञमय बना लिया, जिससे वे तेजहीन हो गये । देवों ने उन यज्ञहीन दैत्यों को पराजित करके स्वर्ग का राज्य वापिस ले लिया ।

स्वायम्भुव मन्वन्तर कल्प के प्रथम मन्वन्तर में देवता अनाहार से क्षीण हो रहे थे । देवों के दुर्बल होने से जगत् भी नष्ट होने लगा । तीन लोक, चौदह भुवन इस अवस्था में व्याकुलता को प्राप्त हो रहे थे ।

देवों ने कृपासिन्धु से पुकार की । भगवान् तो सदैव से दीनों की पुकार सुनने वाले हैं । वे महर्षि रुचि की पत्नी आकूति से प्रकट हुए । उन्होंने अग्निहोत्र की स्थापना की । उन्हीं के नाम से अग्निहोत्र यज्ञ कहा जाने लगा । यज्ञ से देवों को भोजन प्राप्त हुआ । उन्हें शक्ति प्राप्त हुई और वे विजय प्राप्त करके संसार का कल्याण करने में समर्थ हो गये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तृणावर्त्त राक्षस के निधन के उपरान्त उसके शरीर के सङ्ग श्रीकृष्ण भी मूर्छित पड़े थे । उसे लाकर नन्द-यशोदा शिशु के प्राण रक्षार्थ यज्ञ कराना आवश्यक मानकर यज्ञकर्त्ता को बुला लाते हैं वे आकर आश्वासन देते हैं-

माशोक कुरु हे नन्द हे यशोदे व्रजेश्वरी ।
करिष्यामि शिशो रक्षांचिरजीवी भवेदयम् ।।

-गर्ग संहिता गो. ख. १ अ. १४ श्लोक ५०

अर्थ-हे नन्दन ! व्रजेश्वरी यशोदे ! शोक मत करो, मैं शिशु की रक्षा (यज्ञ द्वारा) करूँगा, ये चिरंजीवी होगें ।

इत्यक्त्वाद्विजमुख्यास्ते कुशाग्रैनवपल्लवैः ।
पवित्रकलशैस्तोयैस्ऋग्यजुः सामजैः स्तवैः ।।५१।।
परेःस्वस्त्ययनैर्यज्ञं कारयित्व विधानतः ।
अग्निसंपूज्यविधिवद्रक्षां विदधिरेशिशोः ।।५२।।

-गर्ग संहिता गो. ख. १ अ. १४१ श्लोक ५१-५२

अर्थ-ऐसा कहकर द्विज श्रेष्ठ ने कुछ पल्लव, पवित्र जल सहित कलशादि यज्ञ पूजन सामग्री मँगाई और ऋक् यजुः एवं साम के मन्त्रों से हवन किया, स्वस्ति वाचन किया, इसके उपरान्त विधि पूर्वक यज्ञ कर्म सम्पन्न करके शिशु का प्राण-रक्षण किया ।

बहुलाश्व के पूछने पर नारद जी सूर्यवंश के परिविख्यात राजा मरुत के सुप्रसिद्ध यज्ञ का वर्णन करते हुए कहते हैं-

ब्रह्मारुद्रावयोभूवा सगणास्तत्रागता ।
ऋषयो मुनयः सर्वेतस्य यज्ञे समाययौ ।।

-गर्ग. सं. वि. अ. १

अर्थ-ब्रह्मा, रुद्रादि देवतागण समेत उस यज्ञ में पधारे थे, ऋषि-मुनि सभी उस यज्ञ में आये थे ।

केपिजीवास्त्रिलोक्यांत, न वभूवुबुभुक्षिताः ।
सर्वे देवास्तु सोमेनह्याजीर्णमुपागता ।।१८।।

अर्थ-मरुत के उस महायज्ञ में तीनों लोकों के कोई भी प्राणी भूखे नहीं रहे । देवगणों को तो सोमरस पीते-पीते अजीर्ण हो गया ।

उग्रसेन जी के पूछने पर व्यास मुनि बताते हैं कि किस कर्म के करने से क्या गति मिलती है ।

यज्ञकर्त्ता शक्रलोके वसते शाश्वतीः समाः ।
दानी चान्द्रमसं लोकं व्रती सौरंव्रजत्यलम ।।१०।।

-गर्ग संहिता वि.ख. ९ आ. १ श्लोक १०

अर्थ-यज्ञ करने वाला इन्द्रलोक में शाश्वत काल तक निवास करता हैं, दानी चन्द्रलोक और व्रती सूर्यलोक को जाता है ।

अश्वमेध यज्ञ की प्रशंसा सुनकर उग्रसेन जी श्रीकृष्ण भगवान् के निकट जाकर कहते हैं-

देवदेव जगन्नाथ जगदीश जगन्मय ।
वासुदेव त्रिलोकेश शृणुश्व वचनंमम् ।।२०।।
मत्पुत्रेणच कंसेनाबालकांश्च सहस्त्रशः ।
विनापराधेनहरेमारिताश्चमहासुरैः ।।२१।।
तस्यमुक्तिश्च गोविन्द कथं भवति पापिनः ।
कस्मिल्लोके गतः कंसो बालधाती वदस्वमाम् ।।२२।।
तस्यपापेनाहमपि भीतोऽस्मिजगदीश्वर ।
पुत्रस्य पापेनपिता नरके पतितं ध्रुवम् ।।२३।।
कथित नारदेनाद्यतच्छ्रु णुस्व जगत्पते ।
विग्रहाविश्वहागोघ्नो हयमेधेन शुध्यति ।।

-गर्ग संहिता अश्व. ख. १० अ. ७

अर्थ-उग्रसेन ने श्रीकृष्ण जी से कहा-हे देवों के देव! हे जगन्नाथ ! हे जगदीश ! हे जगन्मय ! हे त्रिलोकेश! हे वासुदेव ! मेरी बात सुनिये ।।२०।। मेरे पुत्र महासुर कंस ने हजारों बालकों की बिना अपराध के हत्या की है । हे गोविन्द ! उसकी मुक्ति कैसे होगी, यह मुझे कहिये और अभी बालघाती कंस मरकर किस लोक में गया है ।।२१-२२।। हे जगदीश्वर ! उसके किये पापों से मैं बड़ा भयभीत हूँ , क्योंकि पुत्र के पाप से पिता को अवश्य नरक की यातना भुगतनी पड़ती है ।।२३।। हे जगत्पते ! नारद ने मुझसे कहा है सो सुनिये-उन्होंने कहा है कि अश्वमेध यज्ञ करने से विप्र-हत्यारा, गौ-हत्यारा तथा विश्व का वध करने वाला भी शुद्ध हो जाता है ।

कृष्ण के आदेश से राजा उग्रसेन ने महायज्ञ किया ।

यदा राजति यज्ञेश्वा तता शून्या वसुन्धरा ।
सर्वा भवति राजानं तदा गच्छति वै जनः ।।
अश्व याति तन स्तस्य यज्ञे राज्ञो महात्मनः ।
किमिच्छकै स्तदा राज्ञा सर्वःसम्पूज्यते तदा ।।

-वि. ध. पु. अ. १३७ श्लोक १,२,३,४,१४,१५

अर्थ- जब गंधर्वों ने उपदेश दिया, तब राजा पुरूरवा, अपने नगर में जाकर, अग्नि उपासना में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तत्पर हुए । धर्म के द्वारा प्रजा का पालन करते हुए बहुत यज्ञों द्वारा यजन किया ।

सैकड़ों अश्वमेध, हजारों बाजपेय अतिरात्रि, द्वादशाह यज्ञों द्वारा बार-बार यजन करके, सप्तद्वीप समुद्रों वाली पृथ्वी का चक्रवर्ती राजा हुआ, आमानुसिक बल से उसने सम्पूर्ण महीतल को जीता

दुर्भिक्ष, अकाल मरण, व्याधि ये राजा पुरूरवा के राज्य में कहीं भी किसी को न हुआ, उनके राज्य में सभी अपने धर्म में तत्पर रहते थे सभी मनुष्य सुखी रहते थे ।

जब राजा पुरूरवा यज्ञ करते, तभी शून्य बसुन्धरा सब शस्यों से युक्त हो जाती थी । और जो मनुष्य राजा के पास यज्ञ में जाते थे उनकी इच्छा को पूछकर उसे पूर्ण किया जाता था ।

गङ्गाजी के जाह्नवी कहलाने की कथा बड़ी मनोरंजक है । पूर्व काल में कोशिनी के गर्भ में उत्पन्न सुहोत्र पुत्र 'जह्नु' ने सर्वमेध नामक महायज्ञ का आयोजन किया । अपना सर्वस्व उन्होंने यज्ञ में होम कर दिया । इस महायज्ञ के पुण्य प्रताप को देखकर सभी देवता बड़े प्रभावित हुए । गङ्गाजी तो उन्हें पति रूप में वरण करने के लिये अधीर हो गईं । 'जह्नु' ने गङ्गाजी का प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया । इस पर जह्नु और गङ्गाजी में मनोमलिन्य पैदा हो गया । देवताओं ने इस मनोमालिन्य को अशोभनीय समझकर दोनों में यह समझौता करा दिया कि गङ्गाजी जह्नु के घर में पुत्री के रूप में जन्म लें । ऐसा ही हुआ, तभी से जह्नु-पुत्री होने के कारण गङ्गाजी का नाम जाह्नवी पड़ा ।

जिस प्रकार सीताजी की प्राप्ति जनक द्वारा यज्ञ के लिये भूमि शोधन करते समय हुई थी, उसी प्रकार वृषभानु को भी राधिका पुत्री की प्राप्ति यज्ञ के लिए भूमि शोधन करते समय हुई । यह कथा पद्मपुराण में आती है ।

वृषभानोर्यज्ञभूमौजातासाराधिकादिवा ।
यज्ञार्थशोधितायांचदृष्टासादिव्यरूपिणि ।।

-पद्म पुराण चतुर्थ खण्ड ४१

यज्ञ के लिए शोधन की हुई भूमि से वृषभानु के राधिका की प्राप्ति हुई ।

बलि ने जब शुक्राचार्य जी से पूछा कि इन्द्र को किस प्रकार जीता जाय ।

तेनोक्तं बलये राजय स्यनन्दन लब्धये ।
महायज्ञं कुरुष्वाद्य तेन ते विजयो भवेत् ।।

-स्क. पु. महे. खं अ. १७ श्लोक २८०

अर्थ-तो शुक्राचार्य जी ने बलि से कहा-विजयी रथ की प्राप्ति के लिए आज महायज्ञ करो । उस महायज्ञ के करने से तुम्हारी विजय होगी ।

इन्द्रद्युम्न ने सहस्र यज्ञ किये और वह इन यज्ञों के साथ-साथ परम पुनीत दिव्यता को प्राप्त करता गया

ततः सहस्त्रके वाजिमेधे महीपतिः ।
दिने-दिने दिव्य गतिवभूव नृपतिस्तदा ।।

-स्क. पु. वै. खं. १ प्र. म. २ अ. १७ श्लोक १०१

अर्थ-जब राजा का अन्तिम सहस्त्रवाँ यज्ञ पूर्ण हुआ तो राजा इन्द्रद्युम्न दिन-दिन दिव्यावस्था को प्राप्त होने लगे ।

पराशर मुनि ध्रुव-भक्त की कथा कहते जा रहे हैं, उसी क्रम में पुलह मुनि ध्रुव को उपदेश करते हैं ।

यो यज्ञ पुरुषो यज्ञो योगेशः परमः पुमान् ।
तस्मिन्तुष्टे यदप्राप्य कि तदस्ति जनार्दने ।।४८।।

अर्थ-जो परमपुरुष यज्ञ और यज्ञेश्वर हैं उन जनार्दन के सन्तुष्ट होने पर ऐसी कौन सी वस्तु है, जो प्राप्त न हो सकती हो ।

ऋषिगण राजा वेणु को यज्ञ करने के लिए समझा रहे हैं । उसने अहङ्कारवश अपने को ही यज्ञ-पुरुष घोषित कर यज्ञादि कर्म बन्द करा दिया ।

दर्घ सत्रेण देवेश सर्वयज्ञेश्वर हरिम् ।
पूजयिष्यामभद्रन्ते तस्यांशस्ते भविष्यति ।।१७।।

-वि. पु. प्र. अंश. अध्याय १३

अर्थ-तुम्हारा कल्याण हो, देखो हम बड़े यज्ञों द्वारा जो सर्वयज्ञेश्वर देवाधिपति भगवान् हरि का पूजन करेंगे उसके फल में से तुमको भी (छठा) भाग मिलेगा ।

ऋषियों ने राजा वेन से कहा-

देह्यनुज्ञां महाराज माधर्मोयातु सङ्क्षयम् ।
हविषां परिणामोऽयंयदेतदखिलं जगत् ।।२५।।

-श्री वि. पु. प्र. अ. अ. १३

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हे महाराज ! आप ऐसी आज्ञा दीजिए, जिसमें धर्म का क्षय न हो । देखिये, यह सारा जगत् हवि (यज्ञों में हवन की हुई सामग्री) का ही परिणाम है ।

पराशर जी मैत्रैय से कथा कहते जा रहे हैं-

प्राचीनबर्हिर्भगवान्महानासीत्प्रजापतिः ।।३।।
हविधानाद्महाभाग येन संवर्धिताः प्रजाः ।।३।।

-श्री वि. पु. प्र. अंश. अ. १४

अर्थ-हे महाभाग ! हविर्धान से उत्पन्न हुए भगवान् प्राचीनवर्हि एक महान् प्रजापति थे, जिन्होंने यज्ञ के द्वारा अपनी प्रजा की बहुत वृद्धि की ।

राजा सगर ने और्व मुनि से विष्णु भगवान् की उपासना का उपाय और फल पूछा था, उत्तर में और्व मुनि कहते हैं ।

और्व उवाच-

यजन्यज्ञान्यजत्येनं जयत्येन जपन्नृप ।
विघ्नन्नन्यान्दिनस्त्येन सर्वभूतोयतोहरिः ।।१०।।

-श्री वि. पु. तृ. अं. अ. ८

अर्थ-हे नृप ! यज्ञों का यजन करने वाला पुरुष उन (विष्णु) ही का यजन करता है, जप करने वाला उन्हीं का जप करता है और दूसरों की हिंसा करने वाला उन्हीं की हिंसा करता है, क्योंकि भगवान् हरि सर्वभूतमय हैं ।

इन्द्र पूजा की तैयारी होते देख कृष्ण भगवान् अपने बड़े-बूढ़ों से पूछते हैं, उत्तर नें नन्दजी कहते हैं ।

भौममेतत्पयो दुग्ध गोभिः सूर्यस्य वारिदे ।
पर्जन्यस्सर्व लोकस्योद्भवाय भुवि वर्षति ।।२३।।
तस्मात्प्रवृद्ध च राजनस्सर्वे शक्रं मुदायुताः ।
मखैस्सुरेश मर्चन्ति वयमन्ये च मानवाः।।२४।।

-श्री वि. पु. पं. अं. अ. १०

अर्थ-यह पर्जन्यदेव (इन्द्र) पृथ्वी के जल को सूर्य किरणों द्वारा खींचकर सम्पूर्ण प्राणियों की वृद्धि के लिए उसे मेघों द्वारा पृथ्वी पर बरसाते हैं ।

इसलिए वर्षा ऋतु में समस्त राजा लोग, हम और अन्य मनुष्य गण देवराज इन्द्र की, यज्ञों द्वारा प्रसन्नतापूर्वक पूजा करते हैं ।

पराशर जी के शिध्वज और खण्डिक्य की कथा कहते जा रहे हैं, उसी क्रम में-

इयाजसोऽपि सुबहून्यज्ञान्ज्ञान व्यपाश्रयः ।
ब्रह्मविद्यामधिष्ठाय तर्तु मृत्युमविद्यया ।।१२।।

-श्री वि. पु. षष्ठ. ख. षष्ठ अ.

अर्थ-केशिध्वज ज्ञाननिष्ठ था, तो भी अविद्या (कर्म) द्वारा मृत्यु को पार करने के लिए ज्ञान-दृष्टि रखते हुए उसने अनेकों यज्ञों का अनुष्ठान किया ।

स्कन्द पुराण में यज्ञ भगवान् के अवतार का वर्णन है । जिस प्रकार भगवान ने राम, कृष्ण, नरसिंह, बाराह, कच्छ, मच्छ, आदि अवतार लिए हैं, उसी प्रकार एक अवतार 'यज्ञ पुरुष' का भी लिया है । स्वायम्भुव मन्वन्तर में जब देवताओं की शक्ति क्षीण हो गई और संसार में सर्वत्र घोर अव्यवस्था फैल गई उस अव्यवस्था के फलस्वरूप, सब लोग नाना प्रकार के कष्ट पाने लगे । इस विपन्नता को दूर करने के लिये भगवान् ने यज्ञ पुरुष के रूप में अवतार लेने का निश्चय किया,- क्योंकि देवताओं की शक्ति वृद्धि करने के लिये यज्ञ के अतिरिक्त और कोई उपाय या मार्ग नहीं है ।

महर्षि रुचि की पत्नी आकूति के गर्भ से भगवान् ने जन्म लिया और उन्होंने संसार भर में अग्निहोत्र की लुप्त प्राय: प्रथा को पुनर्जीवित किया । सर्वत्र यज्ञ होने लगे । फलस्वरूप देवताओं की शक्ति बढ़ी और संसार का समस्त संकट निवारण हो गया ।

आज भी ऐसे अवतार की आवश्यकता प्रतीत होती है, जिससे विश्व-आकाश पर छाई हुई घोर अशान्ति की अँधियारी को हटाकर पुनः धर्म-सूर्य का सुख-शान्तिदायक प्रकाश उत्पन्न हो सके आज फिर से अवश्यकता है-

ग्रामे ग्रामे स्थितो देवः देशे देशे स्थितो मखः ।
गेहे गेहे स्थितं द्रव्यम् धर्मश्चैव जने जने ।।

-भविष्य पुराण

अर्थात्-गाँव-गाँव में देवता स्थित हैं, देश-देश में, भारत के प्रत्येक प्रान्त में, यज्ञ होते हैं, घर-घर में द्रव्य मौजूद है, अर्थात् कोई दरिद्र नहीं है, और प्रत्येक मनुष्य में धर्म मौजूद है ।

इस प्रकार यज्ञ की प्रथा यदि फिर हमारे देश में चल जायगी, तो अतिवृष्टि, अनावृष्टि और बहुत से रोग-दोष दूर हो जायेंगे और उज्ज्वल भविष्य का सपना साकार हो उठेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सिख धर्म और यज्ञ-हवन

सिख धर्म में यज्ञ का वैसा ही महत्व स्वीकारा गया है जैसा कि हिन्दू धर्म के अन्य वर्ग सम्प्रदायों में गुरु वाणी में यज्ञ महिमा का उल्लेख अनेक स्थानों पर मिलता है । यथा-

तित धीए हेम जदा सद पूजा
पइयै कारण सो है ।।

-वार माफ म. १ गु. प्र. साहिब

अर्थात् इस घृत से हवन यज्ञ और पूजा का कार्य सुसम्पन्न होता है ।

होम जग उरब तप पूजा,
कोटि तीर्थ इसनान करीजा ।
चरण कमल निमला रिदै धारे,
गोविन्द जपत सभि कारज ।।

-प्रभाती म. ५ गु. प्र.

अर्थात्-पवित्र हवन, यज्ञ, तप, पूजा, तीर्थ स्नान आदि शुभ कर्म मनुष्यों को करने चाहिए ।

गुरुदास जो अपनी रचना 'इक्तालीसवीं वार'में गुरू गोविन्द सिंह से सम्बन्धित संस्मरण में लिखा है-

निज पते बुलाई सति गुरु, कीनी उज्यारा ।
झूठ-कपट सब छुप गये, सब सज वरतारा ।।
फिर जप होम ठहराये कर निज धर्म स्वारा ।
तुर्क दुन्द सभ उठ गयो, रक्यिो जैकारा ।।२८।।

अर्थात्-दसवें श्री गुरु गोविन्दसिंह जी ने अपनी विजय की घोषणा की । अन्धेर गर्दी समाप्त की, न्याय का प्रकाश और फैलाया और हवन यज्ञ का प्रचार किया ।

चीफ खालसा दीवान के उपदेशक श्री हरनाम सिंह ने अपनी पुस्तक 'सच्ची मुहब्बत' में लिखा है-

यज्ञ होम हीवना न हिन्द में भूल पाता,
फलते निशान नहीं आज हिन्दुस्तान के ।
कहत हरनाम सिंह ने इसमें झूठ जानो,
तीर जो न छूटते गोविन्द सिंह जबान के ।

अर्थात्- यदि योद्धा गुरु गोविन्द सिंह के तीर न छूटते तो यज्ञ होम और धर्म के फलने-फूलने का चिह्न दिखाई न पड़ता ।

नामधारी सिखों के 'नित्य नियम गुटके' में लिखा है-"साहिब गुरु गोविन्द सिंह की हवन यज्ञ के साथ ऐसी प्रीति थी कि आपने सवा लाख दमड़े की सामग्री एकत्र करके नैना देवी के मन्दिर में हवन किया था ।"

"पन्थ प्रकाश निवास, में भाई केशव दास जी ने गुरु गोविन्द सिंह का अभिमत व्यक्त करते हुए लिखा है-

जब हम हवन यज्ञ कर वै हैं,
खुश हो जल बहु बरसै हैं ।
दुर्भिक्ष नसै अन्न बहु थै है ।
सुकृत सब करदे लग जै है ।
नसै अविद्या विद्या अई है ।
शूर वीरता दृढ़ प्रगटई है ।
वर्ण आगामी जन है जेते ।
कायरत ा कर पर्ण तेते ।
उन्हें हवन की पवन लगे जब ।
शेर विघा डन से होइये सब ।
प्रभुतादेह आरोग्यक्रांति विजय ।
ज्ञान संतति सुखदाती गुण सब ।
बालक भगवान प्रकटै है ।
रोग शीतलता आदि नसै है ।
कामादि जो आसुरी सम्पत्ति ।
यज्ञ को लख कर कम्पत्ति ।
उत्तम गुण सत्यादिक जे है ।
बावन कह वेद ऋग् में है ।
सो अवश्य जग में प्रकटे हैं ।
होम यज्ञ विधिवत् जब ये हैं ।

उपरोक्त पद सरल है । उसका भावार्थ समझने पर पता चलता है कि सिख धर्म के गुरुओं को यज्ञ हवन में कितनी सघन आस्था थी ।

वेद में यज्ञों का वैज्ञानिक स्वरूप

विश्व की प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील है । वह कभी भी सदा के लिए एकरस या एकरूप नहीं रह सकती । अतः प्रकृति के सभी पदार्थ परस्पर के संसर्ग से जहाँ बनते रहते हैं, वहाँ वियोग से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बिगड़ते भी रहते हैं । मिट्टी के परमाणु जलादि का संसर्ग पाकर घट, मठ आदि रूपों में बन भी जाते हैं और वही मिट्टी के परमाणु अन्य किसी कारण से वियोग को प्राप्त कर घटादि के नाश का भी कारण बन जाते हैं । इसलिए संयोग अर्थात् पदार्थों का परस्पर सङ्गति करण ही संसार की स्थिति का कारण है । और वियोग विनाश का हेतु । यदि बीज और मिट्टी का संयोग न हो तो अंकुर पैदा नहीं हो सकता । रज और वीर्य के संयोग के बिना बालक का जन्म नहीं हो सकता । अग्नि और जल के संयोग के बिना नाना आविष्कारों की वाष्प का प्रार्दुभाव नहीं हो सकता । अतः मनुष्य का कर्त्तव्य है कि संसार की स्थिति को बनाये रखने के लिए पदार्थों के सङ्गतिकरण रूपी पुरुषार्थ में सदा प्रयत्नशील रहें और इस सङ्गतिकरण का नाम ही 'यज्ञ' है । इसीलिए यज्ञ शब्द जिस वस्तु से बना है । उसके जहाँ दो अर्थ हैं वहाँ 'सङ्गतिकरण' भी एक अर्थ है । अतः यज्ञ ही विश्व की स्थति का मुख्य कारण है । बिना यज्ञ के समष्टि जगत् (ब्रह्मांड) तथा व्यष्टि जगत् (शरीर) दोनों की स्थिरता कायम नहीं रह सकती । जैसे यदि मनुष्य उत्तम अन्न, दुग्ध, घृत, शाक, फलादि का मिश्रण अर्थात् सङ्गतिकरण करके यदि पक्वाशय रूपी हवन कुंड में प्रज्वलित वैश्वानर रूपी यज्ञाग्नि में आहुति प्रदान न करे, तो उस पक्वाशय से रस, रक्त, अस्थि, मज्जादि धातुओं की उत्पत्ति नहीं हो सकती । और इनके बिना शरीर रुपी व्यष्टि जगत् का पोषण भी भली प्रकार हो सकता है और इन रसादि धातुओं से हीन शरीर या तो बीमार रहेगा या कमजोर अतः मनुष्य का कर्तव्य है कि जहाँ वह व्यक्ति जगत् अर्थात् शरीर को कायम रखने के लिए घृत, दुग्ध, अन्न, ओषध पदार्थों का त्याग करता है, अर्थात् उन की आहुति जठारग्नि रूपी यज्ञाग्नि में प्रतिदिन करता है, वहाँ वह समष्टि जगत की स्थिति को सुचारु-रूप से बनाये रखने के लिए प्रतिदिन घृत, दुग्ध, ओषधि तथा अन्नादि का त्याग करे, अर्थात् प्रतिदिन उनकी आहुति यज्ञाग्नि में प्रदान करे । क्यों कि यज्ञ ही सारे विश्व का आधार है । इसलिए यज्ञवेद से जब एक जिज्ञासु ने प्रश्न किया था ।

पृच्छामि यत्र भुवनस्य नाभिः

अर्थात्-भगवान् ! मैं आपसे पूछता हूँ कि इस सारे भुवन की नाभिः अर्थात् आधार कहाँ है । तब वेद ने उत्तर दिया-

अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः

अर्थात्-यह यज्ञ ही सारे विश्व की नाभि है । अतः यदि हम इस समग्र विश्व से अपने जीवन के लिए लाभ लेकर उसे कायम रखने का यत्न नहीं करते तो हम पाप के भागी बनते हैं । और हम उन दैवी शक्तियों की चोरी करते हैं, जो कि सारे विश्व को चला रही है । इसीलिए भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है-

तै दर्त्तान प्रदायैभ्यो यो भुंक्तेस्तेन एव सः ।

अर्थात्-देवों के (विश्व की दिव्य-शक्तियों के दिए पदार्थों को बिना उनके अर्पण किए जो भोग करता है, वह चोर है । इसलिए वेद ने स्थान-स्थान पर यज्ञ करने का आदेश दिया है । ऋग्वेद में कहा है-

यज्ञेन वर्धत जातवेदसमाग्निम् ।
यज्ञग्वं हविषा तना गिरा ।

हे मनुष्यो ! यज्ञ द्वारा इस यज्ञाग्नि को खूब करो, और उत्तम हवियों द्वारा श्रद्धा, भक्ति उदार से इस यज्ञाग्नि का यजन करो । यह मन्त्र जहाँ हमें यज्ञ करने का आदेश देता है, वहाँ यह भी बताता है कि यज्ञ उत्तम हवियों तथा श्रद्धा और भक्ति से पूर्ण वाणी द्वारा होना चाहिए । सड़े-गले पदार्थों से श्रद्धाहीन शुष्क वाणी से किया हुआ यज्ञ, यश के वास्तविक उद्देश्य को पूर्ण नहीं कर सकता । जिस प्रकार हम यदि उत्तम पदार्थ न खाकर सड़े-गले पदार्थों का ही सेवन करें, तो जहाँ हमारा शरीर स्वस्थ, निरोग तथा बलवान् नहीं रह सकता, वहाँ हमारे शरीर में जिसे कि वेद ने देवानांपुरः कहा है । जो दैवी शक्तियों निहित हैं । उनका भी विकास नहीं हो सकता । उसी प्रकार यदि हम यज्ञ तो करते हैं । किन्तु उसमें सड़ी-गली सामग्री, बासा और वैजिटेविल घृत आदि पदार्थों की हवि देते हैं तो जहाँ ब्रह्मांड रूपी शरीर स्वस्थ, बलवान् तथा निरोग नहीं रहेगा, वहाँ उसमें जो महान् दैवी शक्तियां निहित हैं, उनका भी विकास नहीं हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकेगा । अतः प्रत्येक पुरुष, का यह परम कर्तव्य है कि वह अभीष्ट तथा व्यष्टि दोनों जगत् को कायम रखने के लिए, और उनमें निहित दैवी शक्तियों के विकास के लिए प्रतिदिन घृत, ओषध, मेवा आदि उत्तम पदार्थों से यज्ञ करें । इसीलिए वेद ने कहा-

समिद्ध अग्न आवह देवानख यतसुचे ।

२९/१/४२

हे यज्ञ द्वारा प्रदीप्त अग्नि ! तू आज स्रुवा ग्रहण कर यज्ञ करने वाले यजमान में दैवी शक्तियों का संचार कर । इसी विषय को अथर्ववेद और अधिक स्पष्ट कहता है-

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय ।
आयुः प्राणं प्रजां पशून् कीर्तिं यजमानं च वर्धय ।।

अ. १९/६३/१

हे ब्रह्मणस्पते ! चारों वेदों के विद्वान ! तू अब उठ खड़ा हो, आलस्य मत कर । उठ और यज्ञों द्वारा विश्व की दैवी शक्तियों को जागृत कर । और उन जागृत हुई दैवी शक्तियों के द्वारा जहाँ यजमान की सब प्रकार के सुखमय साधनों से बढ़ा, वहाँ प्राणिमात्र की आयु, जीवन शक्ति, उक्त प्रजा, अच्छे पशु और यश कीर्ति को भी बढ़ा दें ।

इस मन्त्र में जहाँ यज्ञ द्वारा दैवी शक्तियों को जागृत करने का स्पष्ट वर्णन है, वहाँ दैवी शक्तियों के जागृत हो जाने पर प्राणि जगत् का क्या लाभ होता है । उसका भी सुन्दर वर्णन किया गया है । सब से पहिला लाभ वेद ने यज्ञ द्वारा आयु की वृद्धि कहा है । आयु की वृद्धि अर्थात् दीर्घायु की प्राप्ति शरीर के स्वस्थ और रोग रहित होने पर ही निर्भर है । नाना आधि व्याधियों से जर्जरित शरीर कभी दीर्घायु नहीं हो सकता । और शरीर को स्वस्थ और निरोग बनाने के जहाँ अन्य उत्तम-आहार आदि साधन हैं, वहाँ यज्ञ भी एक मुख्य साधन है । यज्ञ द्वारा प्राप्त हुई रोग नाशक उत्तम ओषधियों की सुगन्ध शरीर के समस्त रोगों को नष्ट कर देती है । चाहे वे कितने भी असाध्य रोग क्यों न हों । तपेदिक (राजयक्ष्मा) का रोगी भी यदि वह यक्ष्मा नाशक ओषधियों मे प्रति दिन यज्ञ करे, तो ओषधि सेवन की अपेक्षा बहुत ठीक हो सकता है इसीलिए वेदों में कहा है-

मुत्वाामित्वाहविषा जीवनाय कमज्ञातयक्ष्माद्र राजयक्ष्मात् ।।

अ. १/७६/१/१

अर्थात्- हे मनुष्य मैं तेरे जीवन को स्वस्थ निरोग तथा सुखमय बनाने के लिए तेरे शरीर में जो गुप्त रूप से छिपे रोग हैं, उनसे और राजयक्ष्मा जैसे असाध्य रोग से भी (हविषा मुञ्चामि) यज्ञ की हवियों से छुड़ाता हूँ ।

यज्ञ से रोग निवृत्ति-

जब कोई साधारण रोग होता है, तो वैद्य या डाक्टर उसे खाने की ओषधि दे देता है । किन्तु जब रोग बढ़ जाता है, या कोई असाध्य रोग होता है, तो डाक्टर न केवल ओषधि देता है, प्रत्युत ओषध के साथ-साथ इन्जेक्शन भी लगाता है । परन्तु यह यज्ञ रूपी डाक्टर सभी प्रकार के रोगों की दोनों प्रकार से एक साथ चिकित्सा करता है । ओषधि सेवन द्वारा भी और इन्जेक्शन द्वारा भी । इसीलिए यज्ञ द्वारा सभी प्रकार के रोग जल्दी ठीक हो जाते हैं ।

तत्-तत् रोगों की ओषधियों द्वारा किया हुआ यज्ञ जहाँ वह उन ओषधियों की रोग नाशक सुगन्ध नासिका तथा रोमकूपों द्वारा सारे शरीर में पहुँचाकर इन्जेक्शन का काम करता है, वहाँ यही यज्ञ, यज्ञ के पश्चात् यज्ञशेष को प्रसादरूप में खिला कर ओषध सेवन का भी काम करता है । इससे रोग के कीटाणु बहुत जल्दी नष्ट हो जाते हैं । इसीलिए वेद में कहा है-

इदं हवि र्यातुधानान् नदीफेननिवाऽऽवहत ।।

-२९५/५/१

अर्थात्- हे मनुष्य! यह यज्ञ में प्रदान की हुई रोग नाशक हवि तेरे रोग रोगोत्पादक कीटाणुओं को जैसे नदी में फेनों को अपने वेग से बहाकर दूर ले जाती है, वैसे बहाकर दूर ले जाए, अर्थात् तेरे शरीर में से सदा के लिए बाहर निकाल दे । इससे पता लगा कि यज्ञ की रोगनाशक गन्ध शरीर में प्रविष्ट होकर रोग के कीटाणुओं के विरुद्ध अपना कार्य कर उन्हें नष्ट कर देती है । ऋग्वेद के एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्य मन्त्र में इस विषय को और अधिक स्पष्ट करके दर्शाया गया है ।

त्वामग्ने प्रदिवः आहुतं दहतैः सुम्नायवः सुषुमिधा समीधिरे । स वावृधानः ओषधिमिरुक्षितोऽभि प्रयांसि पार्थिवा वितिष्ठसे ।।

-५/८/७१

हे यज्ञाग्ने ! तुझे ज्ञानी जन सबके सुख की कामना करते हुए उत्तम समिधा और घृतादि पदार्थों से यज्ञ वेदी में प्रकाशित करते हैं । और तू यज्ञ में घृतादि ओषधियों द्वारा सींचा हुआ । पार्थिवा+प्रयांसि+अभि+वितिष्ठिसे पृथिवी के अयोग्य पदार्थों के सेवन से उत्पन्न हुए रोग के कीटाणुओं का चारों ओर से मुकाबला कर उन्हें नष्टकर देती है ।

यज्ञ से सूक्ष्म-शक्ति का प्रादुर्भाव-

वेद के इस वचन से स्पष्ट हो गया कि यज्ञ रोग के कीटाणुओं को अवश्य नष्टकर देता है । सम्भवतः पाठक पूछेंगे कि ऐसा क्यों ? इसका संक्षिप्त उत्तर यही है, कि संसार में किसी पदार्थ का सर्वथा नाश नहीं होता । प्रत्युत रूपान्तर में परिवर्तित हो जाता है । और पदार्थों का रूपान्तर में परिवर्तित होने या हमारी आँखों से ओझल हो जाने का नाम ही लोप या नाश है । जैसा कि पाणिनि महर्षि ने अपने प्रसिद्धि ग्रन्थ अष्टाध्यायी में कहा है ।

अदर्शनं लोपःअर्थात्-किसी पदार्थ के न दीखने का नाम ही लोप या नाश है । अतः इस सिद्धान्त के अनुसार यज्ञ में डाले हुए घृत, ओषधि आदि पौष्टिक तथा रोगनाशक पदार्थ भी नष्ट नहीं होते प्रत्युत अग्नि अपने भेदक गुणों के कारण उन्हें छिन्न-भिन्न कर अति सूक्ष्म बना देती है । वे सूक्ष्म पदार्थ वायु द्वारा आकाश मण्डल में व्याप्त होके उसमें रहने वाले सब प्राणियों के नासिका तथा रोमकूपों द्वारा पहुँचकर उनके रोगों तथा निर्बलताओं को नष्टकर उन्हें स्वस्थ बलवान् तथा निरोग बना देती है । इसका एक ही उदाहरण हम पाठकों के सम्मुख रखते हैं । मेरे पास सौ मनुष्य बैठे हैं । मैं चाहता हूँ कि वे सौ के सौ मेरे पास से उठ जाएँ, यदि मैं उन्हें उठाने के उद्देश्य से सब को एक-एक कड़वी मिर्च भी खाने को दे दूँ तो वे शायद मिर्च तो खा लेंगे किन्तु वहाँ से उठकर नहीं जायेंगे । किन्तु प्रत्येक को एक-एक मिर्च न देकर केवल एक ही कड़वी मिर्च बारीक करके अग्नि में डाल दूँ, तो उससे जो भड़ास उठकर नासिका तक पहुँचेगी, उससे वे सभी मनुष्य छूँ-छूँ करते हुए उठ कर भाग जायेंगे । पाठक देखें कि जितना सौ मिर्चों ने काम नहीं किया उतना अग्नि में डाली हुई एक मिर्च ने कर दिखाया । ऐसा क्यों ? इसका यहाँ उत्तर है कि अग्नि जहाँ भेदक गुणों से पदार्थों का भेदन कर उन्हें सूक्ष्म बना देती है, वहाँ उन की शक्ति को कई गुना अधिक बढ़ा देती है । अग्नि द्वारा वाष्प बना हुआ जल हजारों मनुष्यों से भरी गाड़ी को साठ- सत्तर मील प्रति घण्टे की तेज रफ्तार से खींच कर ले जाता है, किन्तु बिना वाष्प बना, उससे दस गुना जल भी गाड़ी को अपनी जगह से हिला तक नहीं सकता । एक तोला स्वर्ण में उतना बल और शक्ति देने की सामर्थ नहीं, जितनी अग्नि द्वारा भस्म बनी हुई उस एक रत्ती की मात्रा में है । इसीलिए अग्नि ने उस मिर्च को न केवल सूक्ष्म बना दिया, प्रत्युत उसमें सौ गुना अधिक शक्ति का संचार कर दिया । जब कि अग्नि में डाला हुआ छोटा-सा अहितकर पदार्थ सैकड़ों मनुष्यों को हानि पहुँचा सकता है, वहाँ यज्ञ में सेरों और मनों डाले हुए हितकर पौष्टिक तथा रोग नाशक पदार्थ कितने असंख्य प्राणियों का कल्याण करते होंगे । इसका अनुमान पाठक स्वयं लगा सकते हैं अग्नि किस प्रकार पदार्थों को सूक्ष्म तथा शक्तिशाली बना देती है, महर्षि दयानन्द ने यज्ञ की महत्ता का वर्णन करते हुए एक बहुत अच्छा उदाहरण दिया है। उन्होंने लिखा है-घर में सेर भर जीरा पड़ा हुआ है, किन्तु उसकी सुगन्ध किसी को भी नहीं आ रही । परन्तु घर की गृहणी उसमें से छः माशा जीरा लेकर अग्नि में खूब तपे थोड़े घृत में डाल कर जब दाल में बघार (छौंक) लगा देती है तो न केवल वही एक ही घर प्रत्युत आस-पास के सभी घर उस की सुगन्ध से सुगन्धिमय हो जाते हैं । जो लोग आज कल की पाश्चात्य शिक्षा में दीक्षित अपने को 'साईन्स वेत्ता' कहते हुए भी यह कहने लगते हैं कि क्यों अग्नि में घृतादि पदार्थों को डालकर नष्ट करते हो, वे भी उपर्युक्त पदार्थों के वैज्ञानिक तत्व पर अवश्य विचार करें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ से परिपूर्ण वर्षा

आयु वृद्धि का कारण जहाँ स्वस्थ तथा निरोग शरीर है, वहाँ शरीर का बलवान् तथा हृष्टपुष्ट होना भी कारण है । जहाँ निर्बल तथा कमजोर शरीर जल्दी मृत्यु का ग्रास बन गया है । वहाँ बलवान् पुरुष से मृत्यु भी डर कर दूर भागती है । शरीर का बलवान् होना शक्ति-प्रद पौष्टिक पदार्थों के अपने पाचनशक्ति के अनुसार यथेष्टमात्रा में सेवन पर निर्भर है और पौष्टिक पदार्थ की पर्याप्त मात्रा वृष्टि के ऊपर निर्भर है । जिस देश में न अति वृष्टि और न अल्प वृष्टि होगी वहाँ पुष्टिप्रद खाद्य पदार्थों की कमी कदापि न रहेगी । यज्ञ जहाँ अपनी नाशक शक्ति से प्राणिमात्र के रोगों को दूर करता है, वहाँ यज्ञ की हवियाँ सूक्ष्म बनकर आकाश मार्ग से ऊपर अन्तरिक्ष में जाकर वृष्टि को उत्पन्न करने का भी कारण बनती हैं । न केवल साधारण वृष्टि का, प्रत्युत्त पौष्टिक और रोग नाशक वृष्टि का भी इसीलिए सामवेद में कहा गया है-

घृत पवस्व दारया यज्ञेषु देववीतमः ।
अस्मभ्यंवृष्टिमापव ।।

-सामवेद-उत्तरा. अ. १३, ख. १ मं. ३

अर्थात्- हे विद्वान् ! तू यज्ञ में घृत की धाराओं को बहा । और उनके द्वारा यज्ञ को पवित्र कर दे । तथा उसके द्वारा हमारे लिये वृष्टि को उत्पन्न कर और उस वृष्टि को पवित्र अर्थात् रोग नाशक और बलप्रद बना दे । 'यहाँ घृत शब्द अन्य सब यज्ञीय पदार्थों का उपलक्षण है ।

यज्ञ से वृष्टि किस प्रकार होती है । इसका कुछ संक्षिप्त वैज्ञानिक विश्लेषण हम पाठकों के सम्मुख रखना चाहते हैं ।

आज कल के वैज्ञानिकों का मत है कि जल यह कोई स्वतन्त्र तत्व नहीं, प्रत्युत हाईड्रोजन और आक्सीजन नाम की दो प्रकार की प्राणवायु (गैसों) के मेल से जल तत्व की उत्पत्ति होती है । वेद भी वैज्ञानिकों के इस विचार का समर्थन करता है । वेद में जल तत्व को उत्पन्न करने वाली इन गैसों के 'मित्र' और 'वरुण' के नाम से कहा गया है । जैसा कि वेद में कहा है-

मित्र हुवे पूत दक्षं वरुणं च रिषादसम् ।
धियं घृताचीं साधन्ता ।।

-ऋ.१/२।७

(वेद के कोष निघण्टु में घृत भी जल का नाम ही घृत अर्थात जल का अञ्चन अर्थात् निर्माण करने वाली)

जल तत्व का निर्माण करने वाला वैज्ञनिक कहता है-मैं पदार्थों को पवित्र करने में दक्ष और सबसे हलकी होने से अन्य सूक्ष्म पदार्थों को मापने का साधन होने से मित्र अर्थात हाईड्रोजन वायु को और रोग के खा जाने वाली और स्वास्थ्य प्रद होने से सबके वरण योग्य 'वरुण' अर्थात् आक्सीजन वायु को अपने पास बुलाता हूँ, क्योंकि ये दोनों (घृताचीम्+धियम्) जल निर्माण करने की विद्या को (साधन्ता) सिद्द करने वाले हैं । वेद के इस वचन से स्पष्ट होता है कि 'मित्र' और 'वरुण' नाम की दो प्राणवायु ही जल को निर्माण करने वाली हैं । यही जलीय तत्व का उत्पन्न करने वाली हैं । यही जलीय तत्व को उत्पन्न करने वाले 'मित्र' और 'वरुण' अन्तरिक्ष में व्याप्त हो रहे हैं । इसीलिए अन्तरिक्ष को जल का स्थान माना गया है और वेद भी इसका समर्थन करता है-

''ततः समुद्रो अर्णवः''

अर्थात्-सृष्टि उत्पत्ति के समय भगवान् ने जल को पूर्ण आकाश को उत्पन्न किया । यहाँ जल से तात्पर्य कार्यरूप जल नहीं, प्रत्युत जल को उत्पन्न करने वाले मित्र और वरुण नामक सूक्ष्म प्राणवायु से है । इन दोनों प्राणवायुओं को मिलाने का कारण जहाँ सूर्य की किरणें आदि अन्य कारण भी हैं, वहाँ यज्ञ भी इन दोनों को मिला कर जल के निर्माण करने का मुख्य साधन है । अतः प्राचीन तत्ववेत्ता ऋषि जब देश में वृष्टि का अभाव देखते थे तब ऐसे तत्वों का सम्मिश्रण कर यज्ञ में डालते थे, जो सूक्ष्मरूप में शक्ति सम्पन्न होकर अन्तरिक्ष में जाकर इन दोनों गैसों को मिलाने का काम करते थे तथा इस सङ्गति करण के द्वारा जल को उत्पन्न कर पृथ्वी पर बरसा देते थे । और 'मानसून' के जल को भी कई गुना अधिक बढ़ा कर पर्याप्त वर्षा के बरसाने का कारण बनते थे । इसीलिए वेद में मित्र और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वरुण को वृष्टि का अधिपति कहा है । यथा-

मित्रावरुणौ वृष्ट्याधिपाती तो माऽवताम्

-।अ.५।।

अर्थात्-मित्र और वरुण वृष्टि के अधिपति हैं । अतः वे वृष्टि द्वारा मेरी रक्षा करें । सम्भवतः पाठक कहेंगे, उपर्युक्त यन्त्र में ''वृष्टि द्वारा'' मेरी रक्षा करें ऐसा कहा है केवल वे दोनों मेरी रक्षा करें । इतना ही कहा है । प्रथम तो मन्त्र में वृष्टि का विषय होने से और उन दोनों को वृष्टि का अधिपति कहने से प्रार्थी का अभिप्राय वृष्टि द्वारा ही रक्षा करने का है और वृष्टि द्वारा ये मित्र और वरुण रक्षा करें ऐसा स्पष्ट निर्देश भी यदि पाठक देखना चाहें तो यजुर्वेद के निम्न मन्त्र में स्पष्ट रुप से देख लें-

''मित्रावरुणौत्वा वृष्ट्याऽवताम्''

-यजु. २/७६

'मित्र' शब्द 'मा' धातु से बना है । जिसका अर्थ है मापना, इसलिए मित्र का अपभ्रंश 'मीटर' शब्द भी इसी अर्थ का वाचक है । जैसे-थर्मामीटर (धर्ममित्र) अर्थात् तापमापक यन्त्र वाटोमीटर (भारमित्र) भारमापक यन्त्र, ज्योमीटर (गोमित्र) अर्थात् भूमिति शास्त्र को जानने वाला, ज्योमिट्री गोमित्रीगवध इत्यादि ।

मित्र और वरुणवृष्टि तेरी रक्षा करें । यज्ञ में डाली गई, मित्र और वरुण का सङ्गतिकरण करने वाली आहुतियाँ जहाँ अन्तरिक्ष में व्याप्त होकर वर्षा के होने का कारण बनती थी, वहाँ वे आहुतियाँ सूर्य के द्युलोक में भी जाकर उन किरणों की उपर्युक्त दोनों प्रकार की गैसों को मिलाने की शक्ति को भी कई गुणा अधिक बढ़ा दिया करती थी । इसी लिए मनु ने कहा है-

अग्नौ प्रास्ताऽऽहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्टते ।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजा ।।

अर्थात्-भली प्रकार विचार पूर्वक अग्नि में डाली हुई आहुति आदित्यलोक अर्थात द्युलोक में पहुँचती है । और फिर द्युलोक वृष्टि-वृष्टि से अन्न तथा अन्न से प्रजाओं का पालन होता है ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि यज्ञ भी वृष्टि के उत्पन्न करने का एक मुख्य साधन है । आज अमरीका आदि देशों में कृत्रिम बादलों का निर्माण कर उन्हें पृथ्वी पर बरसाया जा रहा है । यह उपर्युक्त दोनों गैसों का विज्ञान मिश्रण करने का ही परिणाम है । हमारे प्रचीन ऋषि इसी सम्मिश्रण अर्थात् सङ्गतिकरण को यज्ञ द्वारा किया करते थे । यज्ञशालाएँ ही उनकी प्रयोगशालायें हुआ करती थीं । जिसमें वे नाना प्रकार के परीक्षण किया करते थे । वेद में यज्ञ द्वारा निर्माण का एक और स्पष्ट प्रमाण देखिये-

समानमेतदुदकमु च्चैत्यव चाहभिः ।
भूमिं पर्जन्या जिन्वन्ति दिवं जिन्वन्त्यग्नयः ।।

-ऋ १/१६४/५१

अर्थात्-जल में यह समान क्रिया है कि वह (अहोभिः+उत्+एति+अव+च) कालान्तर में कभी ऊपर चला जाता है और कभी नीचे आ जाता है । इसीलिए (अग्नयः+जिन्वन्ति) यज्ञ की अग्नियाँ ऊपर जाकर द्युलोक को जल से सींच देती हैं और (पर्जन्याः+भूमिम्+जिन्वन्ति) और वह जल बादल बनकर नीचे पृथ्वी को सींच देता है । महर्षि दयानन्द अपने ऋग्वेद भाष्य में लिखते हैं-

मनुष्यै यैन मेघेन सर्वस्य पालनं जायते

-ऋ. ८/१०२/१

वह वृष्टि तथा अपनी सुगंध आदि के द्वारा दीर्घायु प्रदान करने वाला है । इसमें कुछ भी सन्देह नहीं । इसीलिए वेद में कहा गया है-

त्वमग्ने वृहद् वयो दधासि देव दाशुषे ।

ऋ ८/१०२/१

तस्योन्नति वृष्टिप्रवापेन, वनरक्षणेन, होमेन च संसाधनीया । यतः सर्वस्य पालनं सुखेन जायते ।

-ऋग्वेद भाष्य ५/८३/४

अर्थात्-जिस मेघ के द्वारा सब का पालन होता है, उसकी उन्नति हरे वृक्षों के बोने से हरे-हरे वनों की रक्षा से, और प्रतिदिन यज्ञ करने से सब मनुष्यों को सिद्ध करनी चाहिए । अतः यज्ञ वृष्टि का एक मुख्य साधन हैं ।

प्राणशक्ति की अभिवृद्धि

वेद ने यज्ञ का दूसरा लाभ प्राणिमात्र में प्राणशक्ति अर्थात् जीवन शक्ति का संचार होना बताया है । अर्थात् यज्ञ द्वारा जहाँ शरीर स्वस्थ, बलवान् और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निरोगबनता है, वहाँ यज्ञ द्वारा ही उसमें जीवन शक्ति का भी विकास होता है । यह कैसे ? संम्भवत: पाठक पूछेंगे । इस सम्बन्ध में संक्षेप में इतना ही निवेदन है कि जितने भी अग्नितत्व-प्रधान पदार्थ हैं, या जहाँ भी अग्नि तत्व की प्रधानता है वहीं जीवनशक्ति का निवास है । प्रतिदिन यज्ञ करने से जहाँ शरीर में अग्नि तत्व का संचार होता है, वहाँ यज्ञीय वृष्टि से पुष्ट होकर अग्नितत्व-प्रधान बने पदार्थों का भी सेवन करने से शरीर में जीवनशक्ति अर्थात् विद्युत शक्ति का भी विकास होता है । इस प्रकार यज्ञकर्त्ता दिन प्रति-दिन शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक शक्तियों से पुष्ट होता जाता है । इसीलिए वेद में कहा है-

स घा यस्ते ददाशति समिधा जातवेदसे ।
सो अग्नेधत्ते सुवीर्यं स पुष्यति ।।

-ऋ ३/१/३

अर्थात्-हे यज्ञाग्ने ! जो तेरे लिए समिधाप्रदान करता है । वह निश्चय से ही उत्तम वीर्य को धारण करता है और सब प्रकार से पुष्ट होता है ।

वेद ने यज्ञ का तीसरा लाभ प्रजा की प्राप्ति बताया है । अर्थात् जो मनुष्य विधिपूर्वक पुत्रेष्टि आदि यज्ञ करता है, उसे अवश्य सन्तान की प्राप्ति होती है । सन्तान भी केवल साधारण सन्तान नहीं । प्रत्युत राम जैसी धर्मात्मा और वीर सन्तान जैसा कि वेद ने स्वयं कहा है-

अग्ने स्तुविश्रवस्तमं तुवि ब्रह्माणमुत्तमम् ।
अतूर्तं श्रावयत्पतिं पुत्रं ददासि दाशुषे ।।

-ऋ ५/२५/५

अर्थात्-यज्ञाग्नि अपने हवि देने वाले के लिए अत्यन्त यशस्वी, ज्ञानवान् , अहिंसति अर्थात् किसी से पराजित न होने वाले, वक्ताओं में श्रेष्ठ वक्ता ऐसा सर्वगुण सम्पन्न अर्थात् सर्वोत्तम पुत्र प्रदान करती है ।

उत्तम सन्तान की प्राप्ति

पाठक देखें ? वेद यज्ञ द्वारा कैसे पुत्र की प्राप्ति का निर्देश करता है । अब यज्ञ द्वारा उत्तम संतान की प्राप्ति कैसे होती है, हम थोड़ा विवेचन इस सम्बन्ध में पाठकों के सम्मुख रखना चाहते हैं । माता-पिता के रज, वीर्य के संयोग से ही बालक का जन्म होता है । किन्तु यदि माता पिता दोनों का रज, वीर्य संतान उत्पन्न करने योग्य नहीं अथवा केवल माता का रज केवल पिता का वीर्य संतान उत्पन्न करने के अयोग्य है, तो भी सन्तान उत्पन्न नहीं होती । तात्पर्य यह है कि पुरुष या स्त्री के अन्दर यदि संतान उत्पन्न करने की शक्ति विद्यमान नहीं, तो वे कदापि सन्तान उत्पन्न करने में समर्थ नहीं हो सकते । पुरुष अग्नि तत्व-प्रधान है, और स्त्री चन्द्र (सोम) तत्व प्रधान । और ये दोनों तत्व ही सन्तानोत्पत्ति के कारण हैं जब माता पिता के अन्दर यह दोनों तत्व अपनी उचित मात्रा में विद्यमान होते हैं तो अवश्य सन्तान उत्पन्न होती है । इसमें कुछ भी सन्देह नहीं । किन्तु यदि स्त्री पुरुष दोनों में उपर्युक्त दोनों तत्वों का अभाव होता है, या स्त्री के अन्दर सोम तत्व तो है किन्तु पुरुष के अन्दर अग्नि तत्व का अभाव है अथवा पुरुष के अन्दर अग्नि तत्व के होने पर भी स्त्री सोम अर्थात् चन्द्र तत्व से रहित है, तो भी सन्तान उत्पन्न नहीं होती । हमारे प्राचीन तत्ववेत्ता ऋषि इस रहस्य को भली प्रकार जानते थे और पुत्रेष्टि यज्ञ के द्वारा संतानहीन स्त्री पुरुष के अंदर इन दोनों तत्वों को स्थापित कर, उन्हें संतान उत्पन्न करने योग्य बना देते थे । जब वे देखते थे कि पुरुष के अंदर अग्नि तत्व की न्यूनता से अमुक दम्पती की संतान नहीं होती, तो वे अग्नितत्व-प्रधान ओषधियों से उस पुरुष से यज्ञ में आहुति दिलवाते थे और यदि स्त्री में संतान उत्पत्ति के कारण सोमतत्व की कमी को अनुभव करते थे, तो स्त्री से सोमतत्व प्रधान ओषधियों से युक्त हवियाँ यज्ञ में प्रदान करवाते थे या दोनों में दोनों तत्वों की कमी होने पर दोनों से उभय तत्व प्रधान ओषधि की हवि दिलवाते थे और यज्ञ के अन्त में उपर्युक्त ओषधियों के मिश्रण से ही स्थालीपाक अर्थात् खीर आदि बनवा कर, उनके हाथों से उसकी स्विष्टकृत आहुति दिलवाने के पश्चात् शेष बचे स्थालीपाक को यज्ञ के शेष के रूप में स्त्री पुरुष दोनों या दोनों में से एक को भक्षण करवाते थे । इससे जहाँ न ओषधियों की सुगन्ध नासिका तथा रोमकूपों द्वारा प्रविष्ट होकर उपर्युक्त तत्वों के बढ़ाने में सहायक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होती थी, वहाँ उन ओषधियों के मिश्रण से बने क्षीरादि यज्ञ शेष के खाने से पुरुष में अग्नि तत्व तथा स्त्री में सोमतत्व की कमी की पूर्ति हो जाती थी । वेद में इस प्रकार की पुत्रोत्पादक ओषधियों का कुछ निर्देश भी मिलता है जैसा कि अथर्ववेद में लिखा है-

शमीमश्वत्थ आरूढ़ स्तत्र पुंसवनं कृतम् ।
तद्वै पुत्रस्य वेदनं तत्स्त्रीष्वा भरामसि ।।

-ऋ ६/११/१

जहाँ पीपल के वृक्ष के शमीवृक्ष कोख के अन्दर से उग कर उसके ऊपर छा गया हो । वहाँ यदि पुंसवन किया जाय तो उस संस्कार के द्वारा अवश्य पुत्र प्राप्ति का लाभ होता है । सभी वृक्ष अग्नितत्व प्रधान तथा पीपल सोम तत्व प्रधान है । जो पीपल शमीवृक्ष की कोख से उत्पन्न होगा । उसमें दोनों तत्वों का समावेश हो जायेगा । अपना सोमतत्व भी और शमीवृक्ष को अग्नि तत्व भी । उस पीपल की कोपलों या बीजों द्वारा औषधि निर्माण कर उसे यज्ञ शेष में मिश्रण कर खिलाने, और उसी पीपल के बीजों की आहुति तथा उसकी समिधाओं द्वारा यज्ञ करने से पुत्र का जन्म होना सम्भव है । विज्ञ वैद्य-वर्ग इसका अधिक विचार करें, अग्नि और सोमतत्व की विद्यमानता से सन्तान की उत्पत्ति के रहस्य का वर्णन इन शब्दों में करता है । ऋग्वेद में लिखा है-

अग्निषोमा य आहुतिं यो वा दाशद्धविष्कृतिम् ।
स प्रजया सुवीर्यं विश्वाणर्युव्यश्नवत् ।।

अर्थात्-जो पुरुष या स्त्री अग्नि और सोम के लिए अर्थात् इन दोनों तत्वों की वृद्धि के लिए यज्ञाग्नि में घृतादि तथा उत्तम ओषधियों की हवि प्रदान करता है । वह उत्तम वीर्यवान् अर्थात् दोनों तत्व प्रधान बन कर उसके द्वारा उत्तम प्रजा से युक्त होकर सम्पूर्ण आयु का भोग करता है ।

इस मन्त्र से स्पष्ट है कि अग्नि और सोम तत्व की वृद्धि के लिए दी हुई आहुति अवश्य संतानोत्पत्ति का कारण बनती है । इसीलिए गर्भाधान संस्कार में जिन मन्त्रों द्वारा भात या खीर की आहुति दी जाती है । उनमें निम्न तीन मन्त्र भी हैं-

ॐ अग्नये पावकाय स्वाहा, ॐ अदित्यै स्वाहा, ॐ प्रजापतये स्वाहा ।

पुत्र प्राप्ति की कामना करता हुआ पुरुष अग्नि में आहुति प्रदान करता हुआ कहता है -मैं वीर्य को पवित्र कर, उसे संतानोत्पत्ति के योग्य बनाने वाले, गर्भ को खण्डित न करने वाले अर्थात् गर्भपात को रोकने वाली शक्ति से युक्ति और गर्भ में प्रजा अर्थात् संतान पालन और पोषण करने वाले अग्नि के लिए अर्थात् अग्नि तत्व की वृद्धि के लिए यह उत्तम ओषधियों द्वारा निर्मित भात या खीर की आहुति प्रदान कर रहा हूँ ।

दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ में शृंगी ऋषि ने कौशल्या आदि को साधारण चावलों की खीर नहीं प्रत्युत उपर्युक्त गुणों से युक्त ओषधियों द्वारा निर्मित खीर का ही आस्वादन कराया था । इसीलिए उन माताओं ने राम, लक्ष्मण जैसे धर्मात्मा वीर पराक्रमी पुत्रों को जन्म दिया था । अब पाठकों को भली प्रकार अवगत हो गया होगा कि पुत्रेष्टि यज्ञ द्वारा किस प्रकार उत्तम वीर, धर्मात्मा, पराक्रमी, संतान का जन्म होता है । इसी पुत्रेष्टि यज्ञ का वर्णन वेद में कैसे सुन्दर 'शब्दों ' में किया गया है । जैसा कि यजुर्वेद में कहा है-

सिनीवाल पृथुष्टुके या देवानामाज्ञिस्वसा ।
जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजा देवि दिदिडिढ़ नः ।।

-यजु. ३४/१०

हे सबको स्नेह बन्धन में बाँधने वाली, सुन्दर तथा सुडौल शरीर वाली स्त्री ! तू देवों की बहिन है, अर्थात् तू भी साक्षात् देवी है । इसलिए हे देवी ! इस पुत्रेष्टि यज्ञ में देवताओं के निमित्त आहुति रूप में दिए हुए स्थाली पाकादि उत्तम पदार्थों का तू भी सेवन कर और हमारे लिए उत्तम वीर प्रजा को उत्पन्न कर ।

यज्ञ द्वारा उपर्युक्त तत्वों की वृद्धि तो सन्तानोत्पत्ति का कारण बनती ही है किन्तु विद्वानों, देवताओं, ऋषि मुनियों का आशीर्वाद और यज्ञीय मन्त्रों द्वारा माता-पिता के अन्दर उत्पन्न हुई प्रबल भावना तथा पूर्ण विश्वास भी पुत्रोत्पत्ति में पूर्ण सहायक होते हैं । इसीलिए जिस शतपथ ब्राह्मण के मन्त्र द्वारा यजमान तथा यजमान पत्नी स्थाली पाक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की स्विष्टकृत आहुति देते हैं उसमें कहा गया है-यह यज्ञाग्नि मुझे इस सुहुत और स्विष्टकृत अर्थात् सब अभीष्ट पदार्थों को प्राप्त कराने वाला बना दे । हे सब कामनाओं को पूर्ण करने वाली स्विष्टकृत आहुति तू हमारी सब कामनाओं को पूर्ण कर दे ।

यज्ञ द्वारा यजमान की सब कामनाएँ पूर्ण होती हैं । इस पर भी यह मन्त्र उत्तम प्रकाश डालता है ।

पशुओं की परिपुष्टि

वेद ने यज्ञ का चौथा लाभ उत्तम पशुओं की प्राप्ति बताया है ऊपर बतलाया जा चुका है कि यज्ञ वर्षादि के द्वारा प्राणिमात्र का परम हितकारी है, उन्हें आरोग्य, बल और पुष्टि प्रदान करता है । अत: पशु भी इससे पुष्टि प्राप्त करेंगे इसमें कुछ भी संदेह नहीं । यज्ञ द्वारा की हुई वृष्टि से उत्पन्न हुए रोग नाशक, पुष्टिप्रद ग्रासों और अन्नों को खाकर गोएँ, भैंसे आदि पशु क्यों नहीं बलवान् और पुष्कल पुष्टिप्रद दूध आदि पदार्थों के देने वाले बनेंगे । इसीलिए आज जहाँ हमारे देश में दूध, दही. घृत आदि पुष्टिप्रद पदार्थों का अभाव हो रहा है । वहाँ प्राचीन वैदिक काल में दूध दही की नदियाँ बहती थीं । इसीलिए वेद में भगवान् यज्ञ कर्त्ता यजमानों को आशीर्वाद देते हैं-

अयं यज्ञो गातुवित्तमोवित् प्रजाविदुग्रः पशुविदे
वीरविद्वो अस्तु ।।

अ. ११/१/१५

हे यज्ञ कर्त्ता यजमानो ! यह उग्र+यज्ञ: प्रचण्ड अग्नि से देदीप्यमान यज्ञ तुम्हारे लिए सस्यशालिनी पृथ्वी, परम-ऐश्वर्य. उत्तम-प्रजा, बलवान् पशु और पराक्रमी सन्तान प्रदान करने वाला हो ।

अक्षय कीर्ति का विस्तार

वेद ने यज्ञ का पाँचवा लाभ यशस्वी और कीर्तिमान होना बताया है । इस में कुछ भी सन्देह नहीं कि यज्ञ द्वारा मनुष्य कीर्तिमान बनता है । उसकी कीर्ति रूपी सुरभि यज्ञ की सुगन्ध के समान चारों दिशाओं में फैल जाती है । इसीलिए वेद में प्रार्थना की गई है ।

जातवेदो यशो अस्मासु धेहि ।

हे यज्ञाग्ने ! तू हमारे अन्दर यश को धारण कर भला जो विश्व के कल्याण के लिए यज्ञों का अनुष्ठान करेगा अपने जीवन को भी यज्ञमय अर्थात् परोपकारमय बना देगा । उसकी कीर्ति चन्द्रिका क्यों नहीं विश्व में चमकेगी ।

दूसरा-संसार में वह यशस्वी और कीर्तिमान् होता है । जो वीर, पराक्रमी, और साहसी बन कर अपने पराक्रम द्वारा निर्बलों का रक्षा, और देश द्रोही दुष्टों दस्युओं और दानवों को दमन करने वाला होता है । राम, कृष्ण, भीम, अर्जुन आदि की धवल कीर्ति का यही एक मुख्य कारण है । जहाँ दस्युदमन के अन्य कारण हैं । वहाँ यज्ञ भी एक मुख्य कारण है । दस्यु दमन के दो मुख्य साधन हैं । प्रथम शरीर का ओजस्वी, तेजस्वी तथा पराक्रम पूर्ण होना, और दूसरा उत्तम शस्त्रास्त्रों का निर्माण । यज्ञ द्वारा शरीर कैसे तेजस्वी और बलवान् बनता है । इसका वर्णन हम पहिले कर आए हैं । प्राचीन तत्व-दर्शी विद्वान शास्त्रास्त्रों का निर्माण भी यज्ञ करते थे । जैसा कि हम पहिले लिख चुके हैं । यज्ञ ही उनकी नाना आविष्कारों की जननि 'प्रयोग शाला', 'रसायनशाला' होती थी । यज्ञ द्वारा ही सब प्रकार के पदार्थों का परीक्षण कर तथा उनके गुणों को जानकर उनसे अनेक प्रकार से शस्त्रास्त्रों का निर्माण किया करते थे । आग्नेयास्त्र, वारुणास्त्र, पाशुपतास्त्र आदि अस्त्र यज्ञों द्वारा ही आविष्कृत होते थे । इसीलिए जब किसी देश में दस्युओं और दानवों का उपद्रव बढ़ जाता था, या उस देश के ऊपर कोई बाहर का अत्याचारी राजा आक्रमण करना चाहता था, तो उस देश का राजा यज्ञों को कराता था । जिसमें जहाँ वह राष्ट्र को रोकने के वीर योद्धाओं, तथा विचारशील विद्वानों को बुलाकर शत्रु के आक्रमण तथा दस्युओं के दमन का उपाय सोचता था, वहाँ उन यज्ञों के द्वारा विज्ञान वेत्ता ऋषियों से नाना प्रकार के शस्त्रों का निर्माण भी कराता था । यज्ञ विद्या के पारंगत, तत्ववेत्ता महर्षि विश्वामित्र के पास नाना प्रकार के अद्‌भुत शस्त्रास्त्रों का होना, इसका प्रबल प्रमाण है । अत: यज्ञ से जहाँ अन्य अनेक प्रकार के लाभ होते हैं, वहाँ वह दुष्ट स्वभाव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दस्युओं और दानवों के दमन का भी कारण है । इसीलिए वेद में यज्ञ द्वारा प्रार्थना की गई है-

सुवीरं धनभामर जातवेदे विचर्षणे जहि रक्षांसि सुक्रतो ।।

-ऋ ६/१३/२९

हे हमारे यज्ञों का सुन्दर और सफल बनाने वाली यज्ञाग्नि ! तू धर्मात्मा यजमान के लिए उत्तम वीरों को जन्म देने वाला धन प्रदान कर और धर्मात्मा जनों को पीड़ा पहुँचाने वाले राक्षसों को मारडाल' अतः यज्ञ कीर्ति और यश प्राप्ति का भी परम साधन है, यह उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है । इसीलिए ऋग्वेद में कहा है-

यस्ते यज्ञेन समिधा य उक्थैरकेर्भिःसूनो सहसे ददाशत् । स मर्त्येष्यमृत प्रचेताराया द्युम्नेन श्रवसा विभूति ।।

-ऋ ६/५/५५

हे बल और पराक्रम के जन्मदाता प्रभो ! जो मनुष्य यज्ञ में उत्तम समिधा आदि सामग्री से और वेद की स्तुति परक ऋचाओं से तुझे अपने को अर्पण कर देता है । वह धनैश्वर्य से. तेज से तथा यश कीर्ति से मनुष्यों में चमकता है और अन्त में आत्मज्ञानी बनकर अमर हो जाता है ।

वेद उपर्युक्त लाभों के अतिरिक्त सब प्रकार के ऐश्वर्य की प्राप्ति. भी यज्ञ द्वारा होती है, इसका भी समर्थन करता है । वेद में लिखा है-

वयंते अग्ने उक्थै विधेम वयं हव्यैः पावक भदशोचे । अस्मै रयिं विश्ववारं समिन्वास्मे विश्वानि द्रविणानिधेहि ।।

-ऋ ५/४/७

''हे सब का कल्याण करने वाली यज्ञाग्नि ! हम उत्तम हव्य पदार्थों से और वेद के स्तुति समूहों से तेरा यजन करें । तू हमें विश्व का कल्याण करने ऐश्वर्य और सब प्रकार के. सुवर्ण आदि धनों को प्रदान करें ।''

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि विधि पूर्वक श्रद्धा, भक्ति और अटल विश्वास हुआ यज्ञ अवश्य सब प्रकार के ऐश्वर्य को प्रदान करता है । स्वस्थ और बलवान् शरीर, देश में धन धान्य की पूर्णता सब प्रकार की दैवी शक्तियों की अनुकूलता मानसिक प्रसन्नता आदि ऐश्वर्य प्राप्ति के मुख्य साधन हैं, और सब की प्राप्ति का यज्ञ ही मुख्य साधन है । जैसा कि हम पहिले दर्शा चुके हैं । फिर यज्ञ से ऐश्वर्य भी कैसा मिलता है । अपने तथा देश के लिए दुःखदायी नहीं, प्रत्युत वेद के कथनानुसार **विश्ववारम,** न केवल अपना प्रत्युत सारे विश्व का कल्याण करने वाला । यज्ञ द्वारा यजमान को कैसा धन मिलता है । वेद एक और मन्त्र द्वारा इसका बहुत सुंदर वर्णन करता है-

यस्मै त्वं सुकृते जातवेद उलोकमग्ने कृण्वः स्योनम् । अश्विनं स पुत्रिणं वीरवन्तं गोमन्तं रयिं नशते स्वास्ति ।।

-ऋ.५/४/११

हे यज्ञाग्ने ! जिस पुण्यात्मा यजमान के जीवन को सुखदायी बनाना चाहती है, या बना देती है । वह सदा चपल घोड़ों, धर्मात्मा तथा वीर पुत्रों तथा दुधारी गौवों को देने वाले ऐश्वर्य को ही प्राप्त होता है । जिस ऐश्वर्य को पाकर उस यजमान का सदा कल्याण ही होता है । अकल्याण कदापि नहीं ।

हमने अब तक इस लेख में यज्ञ के जितने भी लाभ दर्शाये हैं वे सब भौतिक लाभ कहे जा सकते हैं, किन्तु वेद यज्ञ को केवल भौतिक लाभों तक ही सीमित नहीं रखता, प्रत्युत इस यज्ञ को आध्यात्मिक लाभों का भी केन्द्र मानता है । यज्ञ द्वारा मन की पवित्रता, श्रद्धा और मेधावृद्धि की प्राप्ति, परमात्मा दर्शन, सुख और शांति की उपलब्धि, मोक्ष प्राप्ति आदि लाभों का भी वर्णन वेद में सुन्दर और स्पष्ट शब्दों में किया है ।

यज्ञ द्वारा मानसिक पवित्रता

यज्ञ ही मनुष्य के मन को शुद्ध, पवित्र और निर्मल बनाने का मुख्य साधन है, इस सम्बन्ध में वेद के कुछ वचन देखिये । ऋग्वेद में प्रभु से प्रार्थना करते हैं-

यजामहे सौमनसाय देवान् ।

-ऋ. १/१७३/२

हे प्रभो ! हम मन को सुमन अर्थात् पवित्र और सुन्दर बनाने के लिए प्रतिदिन देवों का यजन करने वाले हों ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अथर्ववेद में प्रातः और सायं यज्ञ करने का आदेश देते हुए, तथा उसकी महिमा का वर्णन करते हुए लिखा है-

सायं सायं गृहपतिर्नो अग्निः सायं सौमनस्य दाता ।

-अ. १९/५५/३

प्रातः प्रातः गृहपतिर्नो अग्निः सायं सायं सौमनस्य दाता ।

-अ. १९/५५/४

गार्हपत्य अग्नि से प्रतिदिन यज्ञ करने वाला एक आदर्श परिवार कहता है-

हे प्रभो ! प्रत्येक सायंकाल को इस गार्हपत्य अग्नि में किया हुआ यज्ञ प्रातःकाल तक हमारे मन को शुद्ध, पवित्र तथा प्रसन्न रखने वाला हो, और प्रत्येक प्रातः में किया हुआ यज्ञ सायंकाल तक हमारे मन को सुमन बनाने वाला हो ।

वेद में उपर्युक्त वचन स्पष्ट बता रहे हैं कि यज्ञ द्वारा मन भी पवित्र और निर्मल बन जाता है । अतः जो भी सज्जन नियम पूर्वक प्रति दिन यज्ञ का अनुष्ठान करेंगे । उनका मन अवश्य पवित्र और निर्मल बनेगा, और दिन प्रति मानसिक शक्तियों का विकास होता जायेगा । इसमें कुछ सन्देह नहीं ।

यज्ञ द्वारा श्रद्धा और मेधाबुद्धि की प्राप्ति

प्रतिदिन यज्ञ करने से यजमान के हृदयपटल पर श्रद्धा का भाव और अधिक बढ़ता जाता है । जब यजमान यज्ञ द्वारा शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक शान्ति का अनुभव करता है, तो हृदय में पञ्चमहायज्ञ आदि नित्यकर्मो के प्रति अधिक श्रद्धा, विश्वास तथा आस्था का अंकुर उदय होने लगता है और श्रद्धा के साथ उसकी बुद्धि का भी विकास होने लगता है और वह यजमान शुद्ध, पवित्र तथा कुशाग्र बुद्धि का स्वामी बन जाता है । इसीलिए वेद में एक यज्ञ प्रेमी कहता है-

अग्ने समिधमहार्षं बृहते जातवेदसे ।
स मे श्रद्धां मेधां च जातवेदः प्रयच्छतु ।।

-अ. १९/६४/१५

हे यज्ञाग्ने ! तू महान् और सब उत्तम पदार्थों को प्राप्त कराने वाला है । अतः मैं तेरे अन्दर श्रद्धापूर्वक समिधा प्रदान करता हूँ । तू कृपा कर मुझे श्रद्धा और मेधा बुद्धि प्रदान कर ।

यज्ञ द्वारा परमात्म दर्शन

वेद के कथानानुसार यज्ञ ही प्रभु प्राप्ति का परम साधन है । इसलिए वेद कहता है-

तमीलत प्रथमं यज्ञसाधम् ।

-ऋ. १/९६/३

हे भक्तजनो ! याद रखो, वह प्रभु 'यज्ञ साध' हैं । यज्ञ द्वारा सिद्ध होने वाले अर्थात् प्राप्त होने वाले हैं । अतः तुम यज्ञ द्वारा ही उस प्रभु की स्तुति प्रार्थना और उपासना करो ।

हविष्यन्तः सदामित्त्वा हवामहे ।

-ऋ. १/११४/८

हे प्रभो ! हम हविष्मान बनकर तुझे अपने हृदय मन्दिर में पुकारते हैं । वेद के कथानुसार जो अपने को हविष्मान बना लेता है, यज्ञ का अधिकारी बना लेता है, वही प्रभु को अपने हृदय मन्दिर में आह्वान कर सकता है और भगवान् भी उसी को अपने दिव्य दर्शनों से निहालकर देते हैं । इसीलिए वेद में कहा है-

बद्वामिन्द्र त्वायवो हविष्मन्तो जरामहे ।
उत त्वमस्मद्भवे ।।

-ऋ ३/४१/७

हे प्रभो ! हम तेरे भक्त हविष्यमान बन कर तेरी भक्ति करते हैं जिससे कि तू हमारा और हम तेरे बन जाएँ ।

प्रभु भक्ति ही प्रभु प्राप्ति का परम साधन है । वेद का आदेश है कि मनुष्यो ! प्रभु भक्ति को भी तुम प्रतिदिन यज्ञ द्वारा ही किया करो । जैसे कि वेद में कहा है-

एवा पित्रे विश्वदेवाय वृष्णे यज्ञैर्विधेम नमसा हविर्भिः ।

-ऋ. १/१६१/१

हे प्रभो ! तुम सुखों की वर्षा करने वाले, सबके असाध्य देव पिता के दर्शनों के लिए हम यज्ञ में उत्तम हवियों द्वारा तेरी भक्ति करें ।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः ।

-यजु. ३१/१६

'ज्ञानीजन यज्ञ द्वारा ही उस यज्ञमय प्रभु का यजन करते हैं ।'' वेद तो यहां तक कहता है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस यज्ञाग्नि में रम कर इस अग्नि को भी प्रकाश देने वाला जो चेतन अग्नि है । उसकी ही तुम यज्ञ द्वारा पूजा करो । जैसा कि यजुर्वेद में कहा है-

अग्नावाग्नश्चरति प्रविष्ट ऋषीणां पुत्री अधिराज एषः ।
तस्मै विधेम हविषा घृतेन मा देवानां यूयवाम भागधेयम् ।

-यजु. ५/४

ऋषियों के हृदय को पवित्र करने वाला, सब का स्वामी, प्रकाश स्वरूप, प्रभु इस यज्ञाग्नि में प्रविष्ट होकर व्यापक हो रहा है । हम उस प्रभु की उत्तम हवि और घृत के द्वारा भक्ति करें और देवताओं के भाग से हम कभी पृथक् न हों । अर्थात् प्रतिदिन हवियों द्वारा उन्हें अपना भाग प्रदान करते रहेंउपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि प्रभु प्राप्ति का सर्व श्रेष्ठ उपाय भी एक मात्र यज्ञ ही है । वास्तव में जो यज्ञ द्वारा अपने जीवन को यज्ञमय बना लेगा । उसे अवश्य प्रभु के पावन दर्शन होगें, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं ।

पाठक देखें, वेद ने कैसे सुन्दर शब्दों में यज्ञ द्वारा प्रभु प्राप्ति का वर्णन किया है ।

यज्ञ द्वारा मोक्ष प्राप्ति

यज्ञ ही मोक्ष प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन है । जो मनुष्य यज्ञ के द्वारा अपने अन्तः करण को निर्मल, बना लेता है, जिसने यज्ञ के द्वारा अपनी बुद्धि को निर्मल, पवित्र और सूक्ष्म बना लिया है, जो प्रतिदिन आत्म चिन्तन और प्रभु, भक्ति के प्रेम-प्रवाह में लीन रहता है । दूसरे शब्दों में जो अपने जीवन को ही प्रभु के अर्पण कर यज्ञ मय बना चुका है । वह जन्ममरण के बन्धन से छूट कर अवश्य अमरपन अर्थात् मोक्ष पद प्राप्त करेगा, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं । उपर्युक्त मोक्ष प्राप्ति के साधन यज्ञ द्वारा ही प्राप्त होते हैं, यह पहिले दर्शाया जा चुका है । यज्ञ मोक्ष प्राप्ति का साधन है । इसका वेद स्वयं बड़े सुन्दर शब्दों में वर्णन करता है-

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धानान् मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।।

-ऋ ७/५९/१२

अमर पद प्राप्ति के अभिलाषी मुमुक्ष जन प्रार्थना करते हैं-प्रभो ! हम तीन नेत्रों वाले अर्थात् आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक ज्ञान को प्राप्त कराने वाले, पृथिवीलोक, अन्तरिक्षलोक और द्युलोक में अपनी सुगन्धि का प्रकाश भर उन्हें स्वस्थ, बलवान् और पुष्ट बनाने वाले, शरीर, मन आत्मा में हम, उन्हें बलवान् निरोग और पवित्र बनाकर उनकी दैवी शक्तियों का विकाश करने वाले अम्बक रूपी यज्ञदेव का यजन करते हैं । वह हमें बेल से पके खरबूजे के समान जन्म मरण रूपी बन्धनों से मुक्त कर दे । किन्तु (मा अमृतात्) अमरपन से कभी न छुड़ाए । अर्थात् यह यज्ञ हमें जन्म मरण रूपी बन्धन से छुड़ा कर अमरपद प्राप्ति अर्थात् मोक्ष को प्राप्त कराने वाला हो ।

यज्ञ न केवल भौतिकी उन्नति प्रत्युत आत्मिक उन्नति का भी परम साधन है और मनुष्य के इहलोक और परलोक दोनों को सुखतया शान्तिमय बनाने वाला है । यज्ञ का नियमपूर्वक अनुष्ठान करने वाला जहाँ इस लोक में उत्तम सन्तान, कल्याणप्रद ऐश्वर्य, दीर्घायु बल, और पराक्रम आदि उत्तम पदार्थों को प्राप्तकर सुख और शान्ति का अनुभव करता है, वहाँ अपनी मानसिक तथा आत्मिक पवित्रता तथा उन्नति द्वारा मृत्यु के बन्धन को तोड़कर निर्वाण पद को भी प्राप्त कर लेता है । इसीलिए वेद में कहा है-

मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राधीय आयुः प्रतरं दधानाः ।
आप्यमाना प्रजया धनेन शुद्धापूता भवत यज्ञियासः ।।

-ऋ १०/१८/२

हे मनुष्यो ! तुम यज्ञ द्वारा अपने जीवन को यज्ञ मय बनाकर, इस संसार में वीरप्रजा, सुखदायी धन, आदि से खूब बढ़ते हुए, और अपनी आयु को दीर्घ बनाते हुए, अपने शरीर, मन, आत्मा का शुद्ध, पवित्र बनाकर इस मृत्यु के बन्धन को परे फैंक मुक्त हो जाओ ।

पाठक देखें, वेद ने यज्ञ की महिमा का कितना सर्वाङ्गपूर्ण वर्णन किया है और यज्ञ द्वारा होने वाले लाभों का वर्णन किया है और यज्ञ द्वारा होने वाले लाभों को वैज्ञानिक ढङ्ग से समझाया गया है । वेद के कथनानुसार यह यज्ञ समिष्ट तथा व्यष्टि संसार के सब दुःखों और संतापों को दूर करने वाला, और उसे सुखमय बनाने वाला है । इसीलिए आर्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दयानन्द ने वेद भाष्य में लिखा है-

विद्वद्भिरेतत-संसार-सुखाय यज्ञेन शोधितेन जलेन वन रक्षणेन च परितापो निवारणीयः संस्कृतान्नेन बलं प्रजननीयम् । यज्ञानुष्ठानेन च त्रिविध दुःखं निवार्य सुखमुन्नेयम् ।।

-वेदभाष्य

अर्थात्-विद्वानों को इस संसार की सुखवृद्धि के लिए यज्ञ द्वारा शुद्ध हुए जलवायु से, हरे-भरे वनों की रक्षा से इस संसार का परिताप दूर करना चाहिये और यज्ञ द्वारा संस्कृतान्न से शारीरिक बल को बढ़ाना चाहिये तथा प्रातिदिन यज्ञ के अनुष्ठान से आध्यात्मिक, आधिभौतिक तथा आधिदैविक इन तीन प्रकार के दुःखों को दूर कर सर्वत्र सुख की वृद्धि करनी चाहिये ।

यज्ञ की इस महत्ता के कारण ही वेद हमें प्रति-दिन यज्ञ करने का आदेश देता है ।

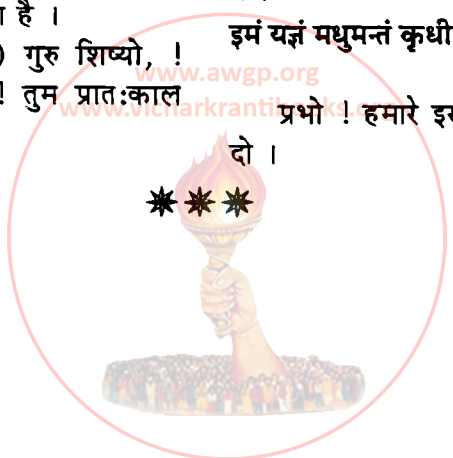
प्रातर्यजध्वमश्विना हे (अश्विना) गुरु शिष्यो, ! पति-पत्नियो ! वैध उपदेशको ! तुम प्रातःकाल उठकर अवश्य यज्ञ किया करो ।

अतः हमारा परम कर्त्तव्य है कि यदि हम अपने जीवन को सुख और शान्तिमय बनाना चाहते हैं और अपना तथा विश्व का कल्याण करना चाहते हैं तो जिस यज्ञ की गौरव-गरिमा का वेद ने मुक्त कण्ठ से गान किया है, जिसकी महिमा का वर्णन प्राचीन तथा अर्वाचीन ऋषि, मुनि, विद्वान् कहते नहीं थकते, उस यज्ञ को हम भी वेद के आदेशानुसार प्रति दिन नियम पूर्वक करने का प्रयत्न करें और पूर्ण श्रद्धा, भक्ति तथा अटल विश्वास से करें । जिससे कि हमारे यज्ञ में उत्पन्न हुआ श्रद्धामय मधुर रस न केवल हमें ही सुख और शान्ति प्रदान करे प्रत्युत सारे विश्व को अपने माधुर्य से तृप्त कर दे । आओ ! वेद के शब्दों में हम प्रभु से यह विनय करें-

इमं यज्ञं मधुमन्तं कृधीः ।

-ऋ. ३/४/२

प्रभो ! हमारे इस यज्ञ को अत्यन्त मधुर बना दो ।



www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ के विविध लाभ

यज्ञ में वेद-मंत्रों का उच्चारण, विशेष प्रकार की समिधाएँ, विशिष्ट हवि शाकल्य, चरु, पुरोडाश, भावनाओं का प्रवाह आदि अनेकों सूक्ष्म-प्रक्रियाओं से एक प्रचण्ड अदृष्ट-अदृश्य वातावरण बनता है । उसकी शक्ति से यज्ञ-कर्त्ताओं को ही नहीं समस्त संसार को अनेक प्रकार के भौतिक और आध्यात्मिक लाभ होते हैं । अन्त:करण की पवित्रता, मल-विक्षेप और कुसंस्कारों का निवारण होने से आत्म-बल की वृद्धि होती है और आत्मा का साक्षात्कार होकर स्वर्ग, मुक्ति, ब्रह्म, निर्वाण एवं परम पद की प्राप्ति होती है । साथ ही भौतिक भावना एवं त्रास भी-कष्ट भी दूर होते हैं । सच्चा याज्ञिक जीवनोपयोगी आवश्यकताओं से वंचित नहीं रहता । अग्नि की उपासना करने वाले दीन-दु:खी नहीं रहते, इसके अनेक प्रमाण, शास्त्रों में उपलब्ध हैं ।

यज्ञ करने से मन, वाणी, एवं बुद्धि की उन्नति होती है, इसका प्रतिपादन यज्ञ भगवान् स्वयं करते हैं-

देव सविता प्रसुव यज्ञं प्रसुवयज्ञपतिं भगाय ।
दिव्योगन्धर्व: केतपू: केतन: पुनातु वाचस्पतिर्वाच न स्वदतु ।।

-यजु० ३०।१

अर्थ-मन, वाणी, बुद्धि की उन्नति तब होगी जब यज्ञ एवं यज्ञपति की उपासना की जाय ।

ऋषयो मुनयश्चैव ब्राह्मण: क्षत्रियादय: ।
स्वाहं मन्त्रमुच्चार्य हविर्ददति नित्यश: ।।
स्वाहायुक्तं च मन्त्रं चयो गृहणातिप्रशस्तकम् ।
सर्वसिद्धिर्भवेत्तस्य ब्रह्मग्रहणमात्रत: ।।

-ब्रह्म वैवर्त पुराण, ब्रह्म खण्ड

अर्थ-श्री कृष्ण कहते हैं कि ऋषि, मुनि, ब्राह्मण, क्षत्री आदि मंत्र के अन्त में 'स्वाहा' शब्द बोल कर नित्य हविष्य देते हैं । जो स्वाहायुक्त मन्त्र को ग्रहण करता है, अर्थात् हवन करता है, उस ब्राह्मण को सब सिद्धियाँ मिलती हैं ।

अग्निहोत्रात्परंनान्यत्पवित्रमिहिपठ्यते ।
सुकृतेनाग्निहोत्रेण प्रशुद्धयंतिभुवि द्विजा ।।८३।।
पथानोदेवलोकस्यब्राह्मणैदैर्शितास्त्वमी ।
एकोऽग्नि: सर्वदाधार्योगृहस्थेन द्विजन्मना ।।८४।।

-पद्म पुराण

अग्निहोत्र से बढ़कर कोई पवित्र कर्म नहीं है । अच्छी प्रकार से किये गये अग्निहोत्रों के द्वारा द्विजों का अन्त:करण पवित्र हो जाता है ।

ब्राह्मणों ने विश्व को यज्ञ करने की प्रक्रिया बताकर सबों के लिए स्वर्ग पाने का निश्चित पथ बता दिया है । अत: हे गृहस्थो ! यज्ञ को प्रतिदिन करते रहना ही गृहस्थ का धर्म है । बिना हवन किये गृहस्थ-धर्म की प्राप्ति नहीं होती ।

अहन्यहन्यनुष्ठानंयज्ञानां पार्थिवोत्तम ।
उपकारकरपुं सांक्रियमाणं फलार्थिनाम् ।।१५२।।

-पद्म पुराण, भूमिखण्ड

अर्थ-हे राजन ! सुख पाने की इच्छा रखने वाले मनुष्यों को प्रति दिन अवश्य ही होम करना चाहिए, इससे होम-कर्त्ता का निश्चित रूप से कल्याण होता है ।

'पंक्तिदूषक:' का पौराणिक अर्थ दृष्टव्य है ।

महायज्ञविहीनश्च ब्राह्मण: पंक्तिदूषक: ।।४५।।

-कूर्म पुराण उत्तरार्ध अ० २१ श्लोक २४

अर्थ-महायज्ञ नहीं करने से ब्राह्मणों की पंक्ति में स्थान पाने योग्य नहीं होता ।

नास्तिक्यादथवालस्याद्योऽग्निन्नाधातुमिच्छति ।
यजेत वान यज्ञेन स याति नरकान बहून ।।७।।

-कूर्म पुराण उत्तरार्ध अ० २४ श्लोक ७

अर्थ-नास्तिकता से अथवा आलस्य से जो अग्नि को धारण नहीं करना चाहता अथवा यज्ञ से जो परमात्मा का यजन नहीं करता, वह अनेक नरकों को प्राप्त करता है ।

अग्निहोत्रात् परो धर्मो द्विजानां नेह विद्यते ।
तस्मादाराधयेन्नित्यमग्निहोत्रेण शाश्वतम् ।।

-कूर्म पुराण उत्तरार्ध अ० २४ श्लोक ८

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थ- इस लोक में द्विजों के लिए अग्निहोत्र से महान् कोई धर्म नहीं है, इसलिए सनातन परमात्मा की नित्य ही अग्निहोत्र से आराधना करनी चाहिए ।

व्यास उवाच-

माता पित्रोर्हिते युक्तो गो ब्राह्मण हिते रतः ।
दान्तो यज्वा देवभक्तो ब्रह्मलोके महीयते ।।

-कूर्म पुराण उत्तरार्ध अ० १५ श्लोक २४

अर्थ-माता-पिता के हित में 'रत' गो ब्राह्मणों का हित करता हुआ देव-भक्त और दाता, ये सभी यज्ञ करने से ब्रह्मलोक में प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं ।

सायं सायं गृहपतिर्नो अग्निः प्रातः प्रातःसौमनस्य दाता ।१।
प्रातः प्रातगृहपतिर्नो अग्निःसायं सायं सौमनसस्य दाता ।२।

-अ० काँ० १९ अनु, -७ म० ३।४

अर्थ-जो गृहपति सन्ध्याकाल में हवन करता है, उसे वह यज्ञाग्नि देव-रूप से प्रातःकाल तक सौमनस्य देने वाला होता है, अर्थात् उस गृहपति के मन, बुद्धि, शरीर एवं प्राण को शुद्ध करता रहता है, इसी भाँति प्रातःकालीन आहुति, उस दिन भर तक, उस गृहपति के सर्वाङ्गीण और सुख-वृद्धि में सहायक होता है, सौमनस्य का देने वाला होता है ।

दिवि विष्णु व्यक्तिस्त जागनेत छंदसा ।
ततो निर्भयोक्ता योऽस्मान द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ।
अन्तरिक्षे विष्णुव्यक्रंस्त त्रैष्टुते छंदसा ।
सतो निर्भक्तो० ।
पृथिव्यां विष्णुर्व्यक्रस्त गायत्रेण छंदसा ।
सतो निर्भक्तो० ।
अस्यादन्नात् । अस्ये प्रतिष्ठान्ये । अगन्य स्वः संज्योतिषाभूम ।

-यजु० २।५

अर्थ- अर्थात् अग्नि में प्रक्षिप्त जो रोगनाशक, पुष्टि प्रदायक और जलादिसंशोधक हवन सामग्री है, वह भस्म होकर वायु द्वारा बहुत दूर तक पहुँचती है और वहाँ पहुँचकर रोगादिजनक वस्तु को नष्ट कर देती है । इस हेतु वेद में कहा जाता है, जो वस्तु हम लोगों से द्वेष करती है एवं जिससे हम लोग द्वेष करते हैं, वह वस्तु यज्ञ के द्वारा नष्ट हो जाती है । आगे भी यह भाव समझना चाहिए । अर्थात् यज्ञ से इहलौकिक और पारलौकिक दोनों कार्य सम्पन्न होते हैं ।

अग्नि पूजा परानित्यं गुरुपूजा रतास्तथा ।
ब्राह्मणां तृप्तिकरोः सर्वेस्वर्गस्य भागिनः ।।

-शिवपुराण वि० सं० १ । अध्याय १४।१ श्लोक १३

अर्थ-जो प्रतिदिन यज्ञ करते, गुरुपूजा एवं ब्रह्मभोज करते हैं, वे सभी स्वर्ग प्राप्त करने योग्य हैं ।

मनुश्चसगरोराजामरुत्तोनहुषात्मजः ।
एतेतेपूर्वजाः सर्वेलक्षं कृत्वापदगताः ।।

-पद्म पुराण पाताल खण्ड अ० श्लोक ३५

अर्थ-शेषजी कहते हैं-हे राम ! राजा मनु, सगर, नहुष के आत्मज मरुत, ये सब आपके पूर्वज, यज्ञ करने से ही परमपद को प्राप्त हुए हैं ।

शतक्रतुः शतंकृत्वाक्रतूतां पुरुषर्षभः ।
पदमापानरक्त्यां देवदैत्य सुसेवितम् ।।

-पद्म महापुराण पाताल खण्ड अ० ८ श्लोक ३४

अर्थ-इन्द्र ने एक सौ महायज्ञ करके ही, उसी के फलस्वरूप, देव-दैत्य जिसका सेवन करते और करना चाहते हैं, उस सुख-सौन्दर्यमय स्वर्ग की प्राप्ति की ।

सपृतन्तुर्महीभत्तांत्वया साध्योमनीषिणा ।
महासमृद्धियुक्तेन महाबल सुसालिना ।।

-पद्म महापुराण पाताल खण्ड अ० ८ श्लोक ३२

अर्थ-शेष भगवान् श्री रामचन्द्रजी से कहते है, कि अश्वमेध करने से आप सप्त लोक का शासन करेंगे तथा महासमृद्धि युक्त होकर महाबली तथा पवित्र आचरण करने वाले होंगे ।।२२।।

युधिष्ठिर ने शान्ति-पुष्टि को बढ़ाने वाले तथा सब कामों को सिद्ध करने वाले कृत्य को श्रीकृष्ण भगवान् से पूछा तो श्रीकृष्ण जी बोले-

श्रीकामःशान्ति कामावाँग्रह यज्ञं समारभेत् ।
दृष्टायायु पुष्टि कामो वा तथैवाभिचरन्पुनः ।
ग्रहयज्ञस्त्रिधाप्रोक्तः पुराण श्रुतिकोविदैः ।
प्रथमोऽयुत होमः स्याल्लक्षहोमस्ततः परम् ।।
तृतीय कोटिहोमस्तु सर्वकामफलप्रदः ।
अयुतेनाहुतीनाँ च नवग्रह मख स्मृतः ।।
होम समारभेत्सर्पि यव व्रीहितिलादिना ।
अर्कःपलाश खदिरौह्यपामार्गोऽव पिप्पलः ।।
उदुम्बर शमीदूर्वा कुशाश्च समिधः क्रमात् ।
एकैकस्य चाष्टशतमष्टाविंशांते 'वा पुनः ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दक्षिणाभिः प्रयत्ने बहून्वा बहु वित्तवान् ।
लक्षहोमस्तु कर्त्तव्यो यदिवित्तं गृहे-गृहे ।।
यतः सर्वानवाप्नोति कुर्यन्कामा विन्वधानतः ।
पूज्यतेशि लोके च वास्वादित्यमरुदगणैः ।।
यावत्कल्प शतान्यष्टावथ मोक्षमवाप्नुयात् ।
सकामोयस्त्विमं कुर्यांल्लक्ष होम यथाविधिः ।।
सतकाममवाप्नोति पद चानन्त्यमश्नुते ।
पुत्रार्थीलभते पुत्रं धनार्थी लभतेधनम् ।।
भार्यार्थी शोभनाँभार्यां कुमारी च शुभपतिम् ।
भ्रष्टाराज्यस्तथाराज्यं श्रीकामश्रियमाप्नुयात् ।।
यं यं कामयेतकामं तं तं प्राप्नोति पुष्कलम् ।
निष्कामः कुरुतेयस्तु पर ब्रह्म सगच्छति ।।

-अग्नि पुराण अ० १४१ उ० प० ४ श्लोक २, ५, ६, ३० ३१, ३२, ११६,से १२१ तक

अर्थ-लक्ष्मी की इच्छा करने वाला अथवा शान्ति चाहने वाला नवग्रह-यज्ञ करे । उसी प्रकार वृष्टि, आयु की पुष्टि चाहने वाले को भी ग्रह-यज्ञ करना चाहिए । ग्रह-यज्ञ तीन प्रकार का कहा गया है, पुराण-वेत्ता, श्रुतिवेत्ताओं के द्वारा ।

पहला अयुतहोम, दूसरा लक्षहोम, तीसरा कोटिहोम, ये सम्पूर्ण कामनाओं के फल को देने वाले हैं । अयुत (दस हजार) आहुतियों के देने से वह नवग्रह-यज्ञ कहा गया है ।

अर्क, पलाश, खदिर अपामार्ग, पिप्पल, उदुम्बर शमी (छोंकर) दूब और कुशा इन समिधाओं के क्रम से घी, जौ, ब्रीहितिलादि से एक-एक ग्रह का एक सौ आठ अथवा अट्ठाईस आहुतियों से हवन करे ।

बहुत धन वालों को प्रयत्नपूर्वक बहुत से लक्ष होम करना चाहिए । यदि घर में धन हो तो विधि-विधान से लक्ष होम को करने से सम्पूर्ण कामनाओं की पूर्ति होती है और आठ सौ कल्प तक वसु आदित्य, मरुद्गणों आदि के द्वारा शिवलोक में पूजित होता है, इसके बाद मोक्ष पद को प्राप्त करता है ।

जो मनुष्य सकाम भावना से इस लक्ष होम को विधि-विधान से करता है, उसको इच्छित काम की प्राप्ति होती है और अन्त समय परम पद को प्राप्त करता है ।

पुत्रार्थी पुत्र को प्राप्त करते हैं, धनार्थी धन को प्राप्त करते हैं, भार्यार्थी सुन्दर स्त्री को प्राप्त करते हैं और कन्या शुभ पति को प्राप्त करती है । राज्य से च्युत राजा राज्य को प्राप्त करता है, लक्ष्मी की कामना वाला लक्ष्मी को प्राप्त करता है ।

जो पुरुष जिस-जिस कामना की इच्छा करता है, उसी-उसी कामना को अधिक मात्रा में प्राप्त करता है । जो निष्काम भाव से लक्ष हवन करता है, वह परब्रह्म को प्राप्त करता है ।

ऋषि-गणों ने सूतजी से संसार के बाधाओं से छूटने का उपाय पूछा । उत्तर में श्री सूतजी कहते हैं-

सर्वबाधा निवृत्यर्थं सर्वान् देवान् यजेत् बुधः ।
ज्वरादि ग्रन्थि रोगांश्च बाधाह्यात्मिकी मता ।।१००।।
पिशाच जम्बुकादीनां बाल्मीकाद्युद्भवे तथा ।
अकस्मादेव गोधादि जन्तूनां पतनेऽपिच ।।१०१।।
गृहे कच्छप सर्प स्त्री दुर्जना दर्शनेऽपिच ।
वृक्ष नारी गवादीनां प्रसूति विषयेऽपिच ।।१०२।।
भावि दुःख समायाति तस्मत्ते भौतिकाः मताः ।
अमेध्या शनि पातश्च महाकारी तथैव च ।।१०३।।
ज्वरमारो विषूचिश्च गोमारी च मसूरिका ।
जन्मर्क्ष ग्रह संक्राति ग्रहयोगाः स्वराशि के ।।१०४।।
दुःस्वप्न दर्शनाद्यश्च माता व ह्याधिदैविका ।
शव चाण्डाल पतित स्पर्शादंतगृहे गते ।।१०५।।
एतादृशे समुत्पन्ने भाविदुःखस्य सूचके ।
शान्ति यज्ञ तु मतिमान्कुर्यात्तद्दोष शान्तये ।।१०६।

-शिव महापुराण, अ०१८

अर्थ-सभी बाधाओं की निवृत्ति के लिए, बुद्धिमान पुरुषों को सभी देवताओं की यज्ञ-हवन के द्वारा पूजा करनी चाहिए । ज्वर आदि ग्रन्थि रोग, आध्यात्मिक बाधा, पिशाच एवं शृगालों के उपद्रव, दीमक की उत्पत्ति, अकस्मात् यदि गोधा (गोह) का पतन हो जाय, घर में कच्छप, साँप का निवास होने से, दुराचारी स्त्री-पुरुष के दर्शन से, वृक्ष के फैलने तथा गौ तथा नारी के प्रसव काल में कोई संकट उपस्थित होने से, भावी भौतिक दुःखों का विनाश करने के लिए, अपवित्र वस्तु का स्पर्श होने पर, शनि आदि ग्रहों के प्रकोप होने पर, महामारी, विषूचिका, गौमारी आदि आधिदैविक संकट, जन्म,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नक्षत्र, ग्रह, संक्रान्ति, चाण्डाल एवं पतितों के स्पर्श से यदि अन्त:पुर का भवन अशुद्ध हो जाय, किन्हीं भावी संकटों की सम्भावना हो, तो शान्ति-यज्ञ करके बुद्धिमान पुरुष, उन दोषों को शान्त कर देते हैं ।

अग्नि-यज्ञ, देव-यज्ञ आदि के सम्बन्ध में जिज्ञासा करने पर सूतजी कहते हैं-

सम्पतकारी तथा ज्ञेया सायमग्न्याहुति द्विजा: ।
आयुष्यकरोति विज्ञेया प्राय: सूर्याहुतिस्तथा ।।

-शिव पुराण

अर्थ-सन्ध्या काल में अग्नि में आहुति देने से वह सम्पत्ति देने वाली है और सूर्योदय के समय आहुति आयु को बढ़ाने वाली होती है । हवन-यज्ञ करने वाले मनुष्य को माया नहीं सता पाती । वह माया के कुचक्र में नहीं बँधता और बन्धन-मुक्त होकर, परम शान्ति को प्राप्त करता है । ब्रह्माजी ने महामाया को आदेश दिया है कि वह अपना कुचक्र, यज्ञ करने वाले पर न चलावे ।

महायज्ञ परान्विप्रान्दूरत: परिवर्जय ।
ये यजन्ति जपैर्होमैदेवं महेश्वरम् ।।

-कूर्म पुराण ।१६

अर्थ-श्री ब्रह्माजी महामाया से कहते हैं कि हे देवि ! जो कोई यज्ञ के द्वारा महेश्वर की अर्चना करते हैं, उन्हें तुम दूर से ही त्याग दो । ऐसे व्यक्ति पर तुम अपना प्रभाव मत डालो ।

आयुष्यञ्चापि भक्तानां त्रयाणां विधिपूर्वकम् ।
यजेत जहुयाग्नौ जपेद्यद्याजितेन्द्रिय ।।१००।।

-कूर्म पुराण, अध्याय ३ .

अर्थ-जो भक्त जितेन्द्रिय रह कर जप और यज्ञ करते हैं, उनकी आयु बढ़ती है ।

विष्णो: कर्मोऽसि सपलता गायत्रं छंद आरोह पृथिर्वामतु विक्रमस्य । विष्णो: क्रमोऽस्य भिमातिव्यं त्रैष्टुभं छंद अरोहान्तरिक्षयनु विक्रमस्व । विष्णो: क्रमीऽस्मरातयितो हन्ता जागते छंद आरोह दिवमनु विक्रमस्व । विष्णो: क्रमोऽसि शत्रूयतो हन्तानुष्टुभं छंद आरोह दिशोऽनु विक्रमस्व ।

-यजु० १२।५

अर्थ-यहाँ यज्ञ के फैलने का वर्णन है । यज्ञ का जो क्रम अर्थात् यज्ञ की सामग्री का जो चारों तरफ गमन है उसको संबोधन करके कहते हैं । आप यज्ञ के क्रम हैं, इसी हेतु सफल अर्थात् जीव के आरोग्य के नाश करने वाले जो शत्रु हैं, उनको भी आप नष्ट करने वाले हैं । हे यज्ञ क्रम ! प्रथम आप गायत्री छन्द को प्राप्त करें । तत्पश्चात् पृथ्वी पर फैलें । आप घातक पाप को नष्ट करने वाले हैं । त्रिष्टुभ छन्द को प्राप्त करें । पश्चात् अन्तरिक्ष लोक में व्याप्त होवें । पुन: आप शत्रु के हननकर्ता हैं । जगती छन्द को व्याप्त करें । पश्चात् द्युलोक तक फैल जायँ । इसी प्रकार अनुष्टुभ छन्द को प्राप्त कर सब दिशाओं में फैल जायँ ।

नायं लोको ऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्य: कुरुसत्तम ।।

-गी० ४।

यज्ञ रहित पुरुष के लिए यह लोक भी सुखदायी नहीं, फिर परलोक कैसे सुखदायी हो सकता है ।

इन सब प्रमाणों से सिद्ध होता है कि यज्ञ ही मनुष्य का मुख्य कर्तव्य है और यज्ञ से ही विश्व-कल्याण हो सकता है ।

यज्ञ-हवन से सुखों को खरीदते हैं

पूर्णा दर्वि परायज्ञ सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहाऽइषमूर्जं शतक्रतो ।

-यजु० ३।४९

भावार्थ जब मनुष्य लोग सुगन्ध्यादि पदार्थ अग्नि में हवन करते हैं, तब वह ऊपर जाकर वायु-वृष्टि जल को शुद्ध करते हुए पृथ्वी को आते हैं, जिससे यव आदि ओषधि शुद्ध होकर सुख और पराक्रम के देने वाली होती है । जैसे वैश्य लोग रुपया आदि दे-लेकर अनेक प्रकार अन्न आदि पदार्थों को खरीदते व बेचते हैं, वैसे हम सब लोग भी अग्नि में शुद्ध द्रव्यों को छोड़ वर्षा व अनेक सुखों को खरीदते हैं । खरीद करे फिर वृष्टि और सुखों के लिए अग्नि में हवन करते हैं ।

जैसे मैं यज्ञपति को दुख से पार करता हूँ, वैसे तू भी (स्वाहा) अच्छे प्रकार हवन आदि कर्मों को सेवन करके, दु:खों से अच्छे प्रकार पार हो ।

स यज्ञेन वनबद्देव मर्त्तान् ।।

-ऋ० ५।३५

वह परमात्म यज्ञ के द्वारा मनुष्यों को निरन्तर भक्ति युक्त कर देता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देवोभ्यो हि प्रथमं यज्ञियेभ्योऽमृत्वं सुवसि भागमुत्तमम् ।।

-ऋ० ४।५४।२

(यज्ञिय) देवों के लिए सबसे पहला और उत्तम मोक्ष रूप भाग देता है । मुक्ति के अधिकारी यज्ञिय देव हैं । सचमुच यज्ञ के बिना मुक्ति नहीं मिल सकती ।

अयं यज्ञो देवया, अयं मियेध्यइमा ब्रह्माण्यमिन्द्रं सोम:।

-ऋ० १।५७।४

यह यज्ञ-देव परमात्मा तक ले जाने वाला है, यह पवित्र है और पवित्र करने वाला है ।

यज्ञदेव प्राप्ति का साधन है । यज्ञ के अनुष्ठान से अतुल धन-धान्य प्राप्त होता है ।

नौर्ह वा एषा स्वर्ग्या । यदग्निहोत्रम् ।।

-शतपथ ब्रा० २।३।३।१५

यह जो अग्निहोत्र है निश्चय करके स्वर्ग सुख को प्राप्त करने वाली नौका है ।

यज्ञ से सुसन्तति की प्राप्ति

यज्ञों का आश्चर्यजनक प्रभाव, जहाँ मनुष्य की आत्मा-बुद्धि एवं नीरोगिता पर पड़ता है, वहाँ प्रजनन प्रणाली की शुद्धि होती है । याज्ञिकों को सुसन्तति प्राप्त होती है । रज-वीर्य में जो दोष होते है, उनका निवारण होता है । साधारण ओषधियों का सेवन केवल शरीर के ऊपरी भागों तक ही प्रभाव दिखाता है, पर यज्ञ द्वारा सूक्ष्म की हुई ओषधियाँ स्त्री-पुरुष के श्वाँस तथा रोम कूपों द्वारा शरीर के सूक्ष्म भागों तक पहुँच जाती हैं और उन्हें शुद्ध करती हैं । गर्भाशय एवं वीर्य-कोशों की शुद्धि में यज्ञ विशेष रूप से सहायक होता है ।

जिन्हें सन्तति नहीं होती, गर्भपात हो जाते हैं, कन्या ही होती है, बालक अल्पजीवी होकर मर जाते हैं, वे यज्ञ-भगवान की उपासना करें तो उन्हें अभीष्ट सन्तान सुख मिल सकता है । कई बार कठोर प्रारब्ध सन्तान न होने का प्रधान कारण होता है, वैसी दशा में भी यज्ञ द्वारा उन पूर्व संचित प्रारब्धों का शमन हो सकता है ।

गर्भवती स्त्रियों को पेट में बच्चा आने से लेकर जन्म होने तक चार बार यज्ञ संस्कारित करने का विधान है, ताकि उदरस्थ बालक के गुण, कर्म, स्वभाव, स्वास्थ्य, रंग-रूप आदि उत्तम हों । गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्त, जातक यह चार संस्कार यज्ञ द्वारा होते हैं, जिनके कारण बालक पर उतनी छाप पहुँचती है, जितनी जीवन भर की शिक्षा-दीक्षा में नहीं पड़ती । ऋषियों ने षोडश संस्कार-पद्धति का आविष्कार इसी दृष्टि से किया था । उस प्रणाली को जब इस देश में अपनाया जाता था, तब घर-घर सुसंस्कृत बालक पैदा होते थे । आज उस प्रणाली का परित्याग करने का परिणाम है कि सर्वत्र अवज्ञाकारी कुसंस्कारी सन्तान उत्पन्न होकर माता-पिता तथा परिवार के सब लोगों को दु:ख देती है ।

सन्तानोत्पादन के कार्य में यज्ञ का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान है । जिनके सन्तान होती है, वे अपने भावी बालकों को यज्ञ-भगवान के अनुग्रह से सुसंस्कारी, स्वस्थ, बुद्धिमान, सुन्दर और कुल की कीर्ति बढ़ाने वाले बना सकते हैं । जिन्हें सन्तान नहीं होती हैं, वे उन बाधाओं को हटा सकते हैं जिनके कारण वे सन्तान सुख से वञ्चित हैं । प्राचीन काल में अनेक सन्तानहीनों को सन्तान प्राप्त होने के उदाहरण उपलब्ध होते हैं, जिनमें से कुछ नीचे दिये जाते हैं ।

अयोध्या-नरेश श्री दशरथ जी ने अपने यज्ञ करने वाले ब्राह्मणों से जो कुछ कहा, उनमें से कुछ श्लोक नीचे दिये जाते हैं-

धर्मार्थ सहित युक्त श्लक्ष्ण वचनमब्रवीत ।
ममता तप्यमानस्य पुत्रार्थ नास्ति वैसुखम् ।।८।।

-बाल्मीकि रामायण, आ० ख० द्वादश सर्ग

अर्थ-हे विप्रगणो ! मैं पुत्र प्राप्ति की कामना से बहुत ही सन्तप्त और व्याकुल हूँ । मुझे कहीं जरा भी सुख नहीं मिल रहा है । मैंने पुत्र की प्राप्ति के लिए यज्ञ करने का विचार किया है ।

ऋषिपुत्र प्रभावेण कामान्प्राप्स्यामि चाप्यहम् ।।१०।।
तद्यथा विधिपूर्वकं मे क्रतुरेवं समाप्यते ।
तथा विधान क्रियतां समर्था: करणेष्विह ।।११।।

अर्थ-ऋषिपुत्र शृंगी ऋषि के यज्ञ-क्रिया की निपुणता के प्रभाव से अवश्य ही हमारी पुत्र-कामना पूरी होगी । अत: आप विधिपूर्वक यज्ञ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करने-कराने में समर्थ द्विजगण सावधान होकर यज्ञ करावें, जिससे यह साङ्गो-पाङ्ग पूर्ण हो जाय ।

विधिपूर्वक पुत्रेष्टि यज्ञ समाप्त हो जाने पर श्री विष्णु भगवान् सभी देवताओं सहित यज्ञ स्थल में पधारे । वहाँ सभी देवों ने विष्णु भगवान् से प्रार्थना की-

विष्णोपुत्रत्वमागच्छ कृत्वात्मामानं चतुर्विधम् ।
तत्र त्वं मानुषो भूत्वा प्रवृद्धम् लोककण्टकम् ।।

-वा० रा० १५ वाँ सर्ग १ श्लोक २१

अर्थ-हे भगवान् ! आप पुत्र भाव को प्राप्त होइये । आप अंश सहित चारों भागों में विभक्त होकर उनका (दशरथ जी का) पुत्र होना स्वीकार कीजिए और मनुष्य शरीर धारण कर बढ़े हुए लोक-कण्टक (रावण) का नाश कीजिये ।

भगवान् ने देवों की प्रार्थना स्वीकार की और-

पितरं रोचयामास तदा दशरथं नृप ।।८।।

-वा० रा०, १६ सर्ग

अर्थ-राजा दशरथ को पिता भाव में स्वीकार कर, इसे देवों को बता दिया ।

सचाप्यपुत्रो नृपतिस्तस्मिन्काले महाद्युतिः ।
अजयत्पुत्रियामिष्टि पुत्रेप्सुररिसूदनः ।।९।।
सकृत्वा निश्चयंविष्णुरामन्त्रय च पितामहम् ।।१०।।

-वा० रा०, १६ वाँ सर्ग

अर्थ-जिस समय महाकान्ति वाले राजा दशरथ जी पुत्रेष्टि यज्ञ करने लगे, उस समय विष्णु भगवान् ने पुत्र बनकर उनके यहाँ अवतार लेने का सुस्थिर निश्चय किया ।

कुलस्य वर्धनं तत्तुमर्हसि सुव्रत ।
नयेतिचसराजान मुवाच द्विजसत्तम ।।५९।।

-वा० रा० आदि काण्ड १४ सर्ग

अर्थ-हे सुव्रत ! जिससे मेरे वंश की रक्षा हो, आप उसका ही अनुष्ठान कीजिये । ऋष्य-शृंङ्ग ने तथास्तु कहकर कहा-

भविष्यन्ति सुताः राजश्चत्वारस्ते कुलोद्वाहाः ।

अर्थ-हे राजन् ! तुम्हारे चार पुत्र वंश बढ़ाने वाले होंगे ।

मेधावीतुततोध्यात्वा स किंचिदिदमुत्तरम् ।
लब्ध संज्ञास्ततस्तं तु वेदज्ञो नृपमऽब्रवीत् ।।१।।
इष्टि तेऽहं करिष्यामि पुत्रीयां पुत्र कारणात् ।
अथर्व शिरसि प्रौक्तैर्मन्त्रै सिद्धां विधानतः ।।२।।

-वा० रामायण ६५ सर्ग

अर्थ-तदन्तर मेधावी-वेदज्ञ महर्षि कुछ देर तक चिन्तन करके बोले ।।१।। हे राजन् ! मैं आपके पुत्र उत्पन्न होने के लिए अथर्वण में कहे हुए मन्त्रों से सिद्धि देने वाला पुत्रेष्टि यज्ञ कराऊँगा ।।२।।

राजा अङ्ग के पुत्र नहीं था । उपाय पूछने पर राजा से सभासद कहते हैं।

नरदेवेह भवतो नाघ तानूनमनाक्स्थितम् ।
अस्त्येकं प्रोक्तमनघ यदि हे दुक्त्वम प्रजेः ।।३१।।
तथासाधय भ्रद्रं ते आत्मान सुप्रज नृप ।
इष्टस्ते पुत्रकामस्य पुत्र दास्यति यज्ञभुक् ।।३२।।

अर्थ-सभासदों ने कहा-हे नरोत्तम ! इस जन्म में तो आपने कोई पाप नहीं किया है, परन्तु अवश्य ही कोई पूर्व जन्म का पाप है, जिससे आप पुत्रहीन हैं । इसलिए आप पुत्र पाने की साधना करें । आप यही कामना लेकर यज्ञ-भोक्ता भगवान् का यज्ञ द्वारा यजन करें, जिससे वे आपको पुत्र प्रदान करेंगे ।

पुत्रकामी राजा अङ्ग को ऋषिगण कह रहे हैं-

तथा स्व भागधेयानि ग्रहीष्यन्ति दिवौकसः ।
तथाप्यभागधेयानि जहीष्यन्ति दिवौकसः ।।
यद्यज्ञ पुरुषः साक्षादपत्याय हरिवृतिः ।।३६।।
तांस्तान्कामान्हरिर्दद्यान्कामयते जनः ।
आराधितो यथैवैषां तथा पुंसां फलोदयः ।।३४।।
इति व्यवसिता विप्रास्तस्य राज्ञः प्रजातये ।
पुरोडाशं निरवपच्छति विष्टाय विष्णवे ।।३५।।
तस्मात् पुरुष उतस्थौ हेममाल्यामलांबरः ।
हिरण्यमयेन पात्रेण सिद्धमादाय पायसम् ।।३६।।

-भागवत, च० स्क० १३ अ०

अर्थ-तदुपरान्त देवता भी अपना भाग ग्रहण करेंगे, क्योंकि पुत्र-प्राप्ति की कामना से जब आप यज्ञ-पुरुष का यजन करेंगे, तो उस यज्ञ में, यज्ञ पुरुष के साथ देवगण भी स्वतः ही आयेंगे ।

पुरुष, जिस मनोरथ के लिए यज्ञ द्वारा भगवान यज्ञ पुरुष का सृजन करते हैं, भगवान उनकी वही आशा पूरी करते हैं, क्योंकि भगवान भावना के अनुसार ही फल प्रदान करते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विप्रों के द्वारा ऐसा सुनिश्चित विचार प्राप्त कर राजा ने यज्ञ भगवान के प्रसन्नार्थ पुरोडाश का हवन किया ।

जब पुरोडाश का हवन विष्णु भगवान को मिला, तो उसी कुण्ड से, स्वर्ण-हार पहने हुए तथा श्वेत वस्त्र धारण किये, हाथ में स्वर्ण थाल में खीर लिये एक दिव्य पुरुष प्रकट हुआ, जिसका सबों ने दर्शन किया ।

स विप्रानुमतो राजा गृहीत्वाञ्जलिनौदनम् ।
अवघ्राय मुदायुक्तं प्रदात्पत्नया उदारधीः ।।३७।।
सा यत्पुंसवनं राज्ञी प्राश्यतौ पत्युराधते ।
गर्भकालं उपावृते कुमारं सुषुवेऽप्रवेजा ।।३८।।

-भागवत

अर्थ-विप्रों की अनुमति से राजा ने उस पुरुष के हाथ से खीर लेकर प्रसन्नता से उसे सूँघा और अपनी पत्नी को खाने के लिये दे दी ।

रानी ने खीर खाकर पति के गर्भ को धारण किया और समय पूरा होने पर पुत्र उत्पन्न किया ।

श्री शुकदेव जी कहते हैं-

इत्यर्थितं ते भगवान् कृपालु ब्राह्मणः सुताः ।
श्रपयित्वा चरुं त्वाष्ट्रं त्वष्टारम यज्ञद्विजम् ।।२७।।
ज्येष्ठा च या राज्ञी महिषीणां च भारत ।
नाम्ना कृतद्युतिस्तस्यै यज्ञोच्छिष्टमदाद्विज ।।२८।।

-भागवत पुराण, छ० स्क० १४ अध्याय

अर्थ-जब राजा चित्रकेतु ने अङ्गिरा ऋषि की प्रार्थना की, तो ब्रह्मा के पुत्र परम दयालु अङ्गिरा ऋषि ने उसी समय त्वाष्ट्र चरु लेकर उसे सिद्ध कर त्वष्टा की पूजा करवाई और यज्ञ किया ।।२७।।

हे भारत (परीक्षित) ! यज्ञ समाप्त होने पर, राजा की अनेक रानियों में जो सबसे श्रेष्ठ और बड़ी कृतद्युति थी, ब्रह्मर्षि अङ्गिरा ने उसे यज्ञ का शेष अन्न (यज्ञोच्छिष्ट) दिया ।

सापि तत्प्रशनादेदर्घित्रके तोरधारयत् ।
गर्भं कृतद्युतिर्देवी कृतिकाऽग्नेरिवात्मज ।।३०।।
अथकाल उपावृते कुमारः समजायत ।
जनयञ्छूर सेनानां शृण्वतां परमामुदम् ।।३२।।
दृष्टो राजा कुमारस्य स्नातः शुचिरलंकृतः ।
वाचयित्वाऽऽशिषो विप्रैः कारयामासजातकम् ।।३३।।

अर्थ-यज्ञ शेष (चरु) भोजन करके चित्रकेतु की रानी कृतद्युति ने जिस भाँति कृतिका ने अग्नि की आत्मा को धारण किया था, उसी भाँति धारण किया ।

इसके पीछे जब गर्भ मास पूर्ण हो गये, तब राजकुमार उत्पन्न हुआ । पुत्र का जन्म सुनकर शूरसेन देश के निवासियों को अपार आनन्द प्राप्त हुआ ।

राजा चित्रकेतु पुत्र का जन्म श्रवण कर, आनन्द-सागर में निमग्न हो गया । शांत चित्त से स्नान कर, पवित्र हो, स्वच्छ वस्त्र धारण किया और विधिपूर्वक ब्राह्मणों से आशीर्वाद प्राप्त कर अपने पुत्र का जातकर्म संस्कार सविधि सम्पन्न किया ।।३३।।

श्री शुकदेवजी मुनि, मनु की वंश परम्परा वर्णन करते हुए कहते हैं-

तस्याविक्षित यस्य मरुतश्चक्रवर्त्य भूत ।
सम्वर्तो ययाजद्यज्ञंवै महायोग्यं गिरिस्सुतः ।।२६।।
मरुतस्य यथायज्ञोन तथा अन्यश्च कश्चन ।
सर्व हिरण्यं त्वासीद्यत्किञ्चिद्यास्य शोभनम् ।।२७।।
अमाद्यादिन्दुः सोमेन दक्षिणाभि द्विजातयः ।
मरुतः परिवेष्टारो विश्वेदेवाः सभासदा ।।२८।।

-भागवत, नवाँ स्क०, द्व० अ०

अर्थ-करन्धम के पुत्र अवीक्षित, अवीक्षित के मरुत, जो चक्रवर्ती राजा हुए, जिनको अङ्गिरा के पुत्र सहयोगी सम्वर्त्त ने यज्ञ कराया था ।।२६।।

इस मरुत के यज्ञ के समान किसी का यज्ञ प्रसिद्ध नहीं है । उनके यज्ञ में सभी पात्र स्वर्ण के थे । इनके यज्ञ में सोमपान करके सुरेन्द्र बहुत प्रसन्न हुए । अधिकतम दक्षिणा पाकर ब्राह्मण हर्षित हो रहे थे । इस महायज्ञ में मरुद्गण परोसने वाले और विश्वेदेवगण सभासद हुए ।।२७-२८।।

कृश्वाश्वात् सोमदत्तोऽभूद्योऽश्वमेधैरिऽडस्पतिम् ।
इष्ट्वा पुरुष उपाबूयातमुपाबूयागतिं योगेश्वराश्रित ।३५।

-भागवत, नवम स्कन्ध, दूसरा अध्याय

अर्थ-उनमें (मनुवंश में) कृशाश्व का पुत्र सोमदत्त हुआ, जिसने अनेक अश्वमेध यज्ञ करके यज्ञपति भगवान् की पूजा की और फलस्वरूप उन्होंने योगीश्वरों को प्राप्त होने वाली उत्तम गति को प्राप्त किया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

श्री शुकदेवजी मनुवंश परम्परा का वर्णन करते हैं -

अग्रजस्य मनो पूर्व वशिष्ठो भगवान्किल ।
मित्रावरुणस्यारिष्ट प्रजार्थमकरोत्प्रभु ।।१३।।
तत्र श्रद्धा मनोः पत्नीं होतारं समयाचत ।
दुहितर्थमुपागम्य प्राणिपत्य पयोव्रता ।।१४।।

-भा०, न० स्क०-प्र० अ०

अर्थ- इक्ष्वाकु आदि पुत्रों के पहिले मनुजी निःसन्तान थे, इसलिये महर्षि वशिष्ठ जी ने मित्रावरुण का यज्ञ कराया ।।१३।।

मनु की भार्या श्रद्धा ने, जो उस यज्ञ में पयोव्रत धारण किये हुई थी, जो विधिपूर्वक केवल दूध पीकर ही यज्ञ में संलग्न थीं, वह होताओं के निकट गई और उन्हें प्रणाम करके प्रार्थना की कि आप ऐसा होम करें, जिससे मुझे कन्या उत्पन्न हो ।।१४।।

प्रेषिणो अध्वर्युणा होता यत्तया सुसमाहित ।
हविषि व्यचरेत् तेन बष्टकारं गृणाद्विजः ।।१५।।
होतुस्यद्व्याभिचारेण कन्येलानाम ससाऽभवत् ।
तां विलोक्य मनुः प्राह नाति हृष्टमना गुरुम् ।।१६।।
भगवन् किमिदं जातं कर्म वो ब्रह्मवादिनाम् ।
विपर्य्ययमहो कष्टं मैवं स्याद् ब्रह्मविक्रिया ।।१७।।

-भागवत, नं०.स्क०, प्र० अ०

अर्थ-श्रद्धा की प्रार्थना से "आप यज्ञ करें" इस प्रकार अध्वर्यु ने गृरित हो, हवि के ग्रहण हो जाने पर, मन में इस प्रकार का ध्यान और मुख से 'वष्ट' शब्द उच्चारण करके मनु की पत्नी की प्रार्थना को पूर्ण किया ।।१५।।

होता के ऐसा आचरण करने के कारण मनु को 'इला' नामिका कन्या की प्राप्ति हुई । पुत्र प्राप्त की चाहना पूरी नहीं होने के कारण मनु ने असन्तुष्ट भाव से महर्षि वशिष्ठ से कहा-हे भगवन् ! आप ब्रह्मवादी हैं, आप लोगों द्वारा किये यज्ञ का फल विपरीत कैसे हो गया ? इस भाँति मन्त्र और यज्ञ के उल्टे परिणाम होने से ओह ! मुझे कितना कष्ट है ? ऐसा तो नहीं होना चाहिए ।।१७।।

यूयं मन्त्रविदो युक्तास्तपसा दग्ध किल्विषा ।
कुतः संकल्प वैषम्यमनृतं विबुधेष्विव ।।१८।।
तन्निशम्य वचस्तस्य भगवान् प्रपितामह ।
होतुव्यतिक्रम ज्ञात्वा वभाषे रविनन्दनम् ।।१९।।

-भागवत नं० स्क० प्र० अ०

अर्थ-आप मन्त्र-ज्ञाता हैं । तप से आपके सभी पाप नष्ट हो गये हैं, देव लोगों के बीच अमृत के समान जो संकल्प है, उसकी सब लोगों के बीच यह विषमता कैसे हुई ? मनु की बात सुनकर महर्षि वशिष्ठ जी ने होता के व्यभिचार को जान लिया और मनु से बोले-।।१८-१९।।

एतत् संकल्प वैषम्य होतुस्ते व्यभिचारतः ।
तथाऽपि साधयिष्येते सुप्रजस्त्वं स्वतेजसा ।।२०।।

-भागवत, नवम् स्कन्ध प्र० अ०

अर्थ-हे वत्स ! यह संकल्प का वैषम्य तुम्हारे होताओं के व्यभिचार के कारण हुआ है, किन्तु (यज्ञफल की अव्यर्थता के लिये) फिर भी मैं तुम्हें पुत्र ही दूँगा ।

युवनाश्व के पुत्र नहीं था-

भार्या शतेन निर्विण्ण ऋषयोऽस्य कृपालवः ।
इष्टिसमवर्तयांचकुरैन्द्री ते सुसमाहित : ।।२६।।
राजा तदज्ञ सदनं प्रविष्टो निशि तर्षितः ।
दृष्ट्वा शयानन् विप्रास्तान् पपौ मन्त्र जलं स्वयम् ।।२७।।
उत्थितास्ते निशम्याथ व्युदकं कलश प्रभो ।
पप्रच्छु कस्य कर्मेय पीतं पुंसवनं जलम् ।।२८।।
राज्ञा पीतं विदित्वाथ ईश्वर प्रहितेन ते ।
ईश्वराय नमस्चक्रु रहो दैव बलं बल ।।२९।।

-भाग० न० स्क० प्र० अ०

अर्थ-युवनाश्व के सौ पत्नियाँ थीं, किन्तु सन्तान के अभाव से वे शोकाकुल ही रहते थे । वनवासी ऋषियों को राजा पर दया आ गयी । वे सावधानी पूर्वक राजा से 'इन्द्रदैत्व' यज्ञ कराने लगे । हे राजन् ! अब आश्चर्य की बात सुनो । जब यज्ञ हो रहा था, तभी एक रात में राजा युवनाश्व प्यास से व्याकुल हो, यज्ञशाला में गया । उस समय यज्ञ कराने वाले सभी सो रहे थे । प्यास की तीव्रता में राजा ने उठाकर वह जल पी लिया जो जल, राजा की पत्नी के पीने के लिये रखा गया था । जब ऋषि गण जागे तो देखा कि कलश में जल नहीं है । विस्मित हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूछा-यह कर्म किसका है ? किसने पुत्र उत्पन्न करने वाला जल पी लिया ? जब ज्ञात हुआ कि ईश्वर प्रेरित हो राजा ने ही पी लिया है, तब सभी भगवान् को प्रणाम करते हुए कहने लगे कि-

भाग्य बड़ा बली है, पुरुष का बल उसके सामने तुच्छ है-

जजान ततःकाल उपावृते कुक्षिं निर्भिद्य दक्षिणम् ।
युवनाश्वस्य तनयश्चक्रवर्तीजनान ह ।।३०।।

-भा०, न० स्क०, प्र० अ०

अर्थ-समय पूरा होने पर युवनाश्व की दक्षिण कुक्षि फाड़कर चक्रवर्ती के लक्षणों से युक्त पुत्र (मान्धाता) उत्पन्न हुआ ।

कौशल देश के देवदत्त नामक ब्राह्मण ने तमसा नदी के किनारे बड़े-बड़े ऋषियों को एकत्रित कर पुत्रेष्टि यज्ञ को विधि-पूर्वक सम्पन्न किया । यज्ञ पूर्ण होने पर उसे पुत्र की प्राप्ति हुई ।

पराशर मुनि कहते हैं -

ततोऽस्य वितथे पुत्र जन्मनि पुत्रार्थिनी मरुत्सोम याजिनो दीर्घ तपसः पाष्यष्यं पास्तदा बृहस्पति वीर्यादुतथ्य पत्न्या ममतायां समुत्पन्नो भरद्वाजख्यः मरुद्भिर्दत्तः ।।१६।।

-विष्णु पुराण, च० अं० अ० १९

अर्थ-पुत्र जन्म के विफल हो जाने से भरत ने पुत्र की कामना से मरुत्सोम नामक यज्ञ किया । उस यज्ञ के अन्त में मरुद्गण ने उन्हें भरद्वाज नामक पुत्र दिया, जिसकी उत्पत्ति बृहस्पति के वीर्य और ममता के गर्भ से हुई थी ।

सर्व समर्थ भगवान भी ऐसा कराके यज्ञ की निश्चित महत्ता का संस्थापन ही करते हैं ।

मनु पुत्र सुद्युम्न, शिव-बिहार वन में आने के कारण, एक महीना पुरुष तथा एक महीना नारी बनकर रहने लगे । अतः वैवस्वत मनु ने पुनः अन्य पुत्र की कामना की और-

ततोय जन्मनुदेवामय मार्ग हरि प्रभुम् ।
इक्ष्वाकु पूर्वान देवान् मेभे स्वसामान् ।।२।।

-भागवत, नवम् स्क०, द्व० अ०

अर्थ-मनु ने भगवान वासुदेव का यज्ञ, सन्तान की कामना से किया । इस यज्ञ को करने से उन्हें दश पुत्रों की प्राप्ति हुई, जिसमें इक्ष्वाकु सबसे बड़े थे ।

राजा दिलीप के सन्तान नहीं होती थी । सन्तान के हेतु वे पत्नी सहित (महर्षि) वशिष्ठ गुरु के आश्रम में रहे । वहाँ वे गुरु की गायें चराते थे और आश्रम के यज्ञीय वातावरण में रहकर निरन्तर ओषधि सेवन करते रहते वैसा यज्ञ-धूम शरीर में प्रवेश करने के स्वर्णिम अवसर प्राप्त करते थे । इस साधना से दिलीप को बड़ा ही प्रतापी पुत्र प्राप्त हुआ ।

जिनकी सन्तान स्वर्गवासी हो चुकी है, पर जिन्हें अपने स्वर्गीय बालकों से अधिक मोह है, वे यज्ञ के प्रभाव से अपनी सन्तान का स्वप्न आदि में दर्शन और सम्भाषण का अवसर प्राप्त कर सकते हैं तथा अपनी या परिवार की किसी अन्य स्त्री की कुक्षि से उस बालक की आत्मा को पुनः अवतरित कर सकते हैं ।

राजा उग्रसेन तथा उसकी पत्नी ने अपने मरे हुए पुत्र-प्राप्ति की इच्छा की, यह सुनकर श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा-

अश्वमेधं क्रतुवरं कुरु धैर्य्येण भूपते ।
दर्शयिष्याम्यहं सर्वान्यज्ञास्यां ते च सुतान् ।।३६।।

-गर्ग संहिता, अ० ख०, अ० १३

अर्थ-हे भूपते ! आप यज्ञश्रेष्ठ अश्वमेध का अनुष्ठान कीजिये । इस यज्ञ के प्रभाव से मैं तुम्हारे सभी मरे हुए पुत्रों को पुनः तुम्हारे घर जन्म करा दूँगा ।

उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि यज्ञ द्वारा सुसन्तति की प्राप्ति हो सकती है । विधिवत् किया गया यजन उस युग में भी पूर्वकाल की ही भाँति स्वस्थ, सुन्दर, प्रतिभावान् एवं सद्गुणी सन्तान उपलब्ध करा सकने में समर्थ हो सकता है ।

शत्रु-संहार में यज्ञ का उपयोग

यज्ञों द्वारा सदा सात्विक शक्ति तो उत्पन्न होती ही है, मनुष्य का कल्याण और उत्कर्ष करने वाला सतोगुणी वातावरण तो बनता ही है, साथ ही ऐसे तत्व भी यज्ञ द्वारा उत्पन्न होते हैं, जो शत्रुता, संकट और विरोध का सामना करने में पर्याप्त रूप से समर्थ होते हैं । विपत्ति में पड़ा हुआ मनुष्य, विपत्ति-

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निवारण के लिए उग्र प्रचण्ड एवं महा घोर शक्ति को भी उत्पन्न कर सकता है । इसके कुछ उदाहरण नीचे देखिए ।

परीक्षित को जब तक्षक नाग ने डँस (दंशन) कर स्वर्गवासी बना दिया तो उसके पुत्र जन्मेजय ने सर्प (नाग) यज्ञ करके समस्त सर्पों को नष्ट कराने, प्रतिशोध लेने की ठानी । यज्ञीय मन्त्रों में वह शक्ति है, जो किसी बलवान् से बलवान् को भी खींच ला सकती है । सर्प-यज्ञ का उद्देश्य यही था कि मन्त्रों द्वारा खींच-खींचकर सर्पों को यज्ञ-कुण्ड की अग्नि में भस्म कर दिया जाय ।

इस यज्ञ का वर्णन महाभारत आदि पर्व में इस प्रकार आता है -

प्रावृत्य कृष्ण वासांसि धूम्र संरक्त लोचनाः ।
जुहुवुमन्त्रवच्चैव समिद्धिं जातवेदसम् ।।२।।
कम्पयन्तश्च सर्वेषामुरगाणाम् मनांसि च ।
सर्वानां जुहुवुस्तत्रसर्वानग्नि मुखैस्तदा ।।३।।

-महाभारत, आ० प०, ५२ वाँ अ०

अर्थ-वे ऋत्विक् काले वस्त्र पहनकर और धूम्र से लाल-लाल आँखें वाले होकर, प्रज्ज्वलित अग्नि में मन्त्रों के साथ हवन करने लगे । इस घोर यज्ञ क्रिया से सब सर्पों के मनों को कम्पायमान करते हुए ऋत्विक् गण, उनका अग्नि में आवाहन करने लगे ।

क्रोश योजन मात्राहि गोकर्णस्य प्रमाणतः ।
पतन्त्यजस्रं वेगेन वह्वाग्निमताँवर ।।७।।
एवं शत सहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च ।
अवशानि विनिष्टानि पन्नांगानां तु तत्र वै ।।८।।

अर्थ-कोई कोस भर के कोई चार कोस के तथा कोई गोकर्ण के सदृश आकार वाले सर्प आ-आकर, लगातार उस अग्नि में वेग से गिरने लगे । इस भाँति शत, सहस्र, दस सहस्र, लाख, अरब संख्या में सर्पगण अवश होकर उस प्रचण्ड यज्ञाग्नि में नष्ट हो गये ।

तक्षकस्तु स नागेन्द्रः पुरन्दर निवेशनम् ।
गतः श्रुत्वैव राजानं दीक्षित जन्मेजयम् ।।१४।।

-महा० भा० आदि० पर्व, ५३ वाँ अ०

अर्थ-तक्षक ने ज्यों ही सुना कि राजा जन्मेजय सर्प-यज्ञ में दीक्षित हुए हैं, त्यों ही वह शीघ्रता पूर्व भागकर इन्द्र के लोक में चला गया ।

इन्द्र ने उसे अपनी शरण में रख लिया ।

जन्मेजय उवाच-

यथा चेदं कर्म समाप्यते मे यथा च व तक्षक एत्य शीघ्रम् ।
तथा भवन्तुः प्रियतन्तु सर्वेपरं शक्त्या स हि देविद्विषाणः ।।४।।

ऋत्विज उवाच-

यथा शास्त्राणि नः प्राहुर्यथा शसति पावकः ।
इन्द्रस्य भवने राजंस्तक्षको भय पीडितः ।।५।।
पुराणआगम्य तो ब्रवीम्यहं दत्तं तस्मै वरमिन्द्रेण राजन ।
वसेहंत्वं मत्सकाशे सुगुप्तो न पावकस्त्वां प्रदहिष्यतीति ।७।

अर्थ-जन्मेजय ऋत्विजों से कहने लगे-जिस प्रकार मेरा यज्ञ सिद्ध के साथ समाप्त हो और तक्षक आकर शीघ्र भस्म हो जाय, आप लोग सभी यही धनीभूत प्रयत्न करें, क्योंकि मेरा परम शक्तिशाली शत्रु तो तक्षक ही है ।

ऋत्विजों ने उत्तर दिया-

हे राजन् ! जो यह अग्नि सूचित कर रहे हैं, वही हमारे शास्त्र भी कह रहे हैं, कि भयभीत तक्षक इन्द्र के भवन में जाकर छिप गया है ।

हे राजन् ! मैं पुराण का गम्भीरता से मनन कर, आपसे कहता हूँ कि इन्द्र ने उसे यह वरदान भी दे दिया है कि तू मेरे पास में निवास कर, अग्नि तुझे जला न सकेगी ।

एतच्छ्रुत्वा दीक्षितस्यतप्यमान
आस्ते होतार चोदयत्कर्म काले ।
होता च यत्तो स्याऽऽजुहावाऽथ
मन्त्रै रथो महेन्द्रः स्वयमाजगाम ।।८।।
विमानमारुह्यं महानुभावः
सर्वैर्देवैः परिसंस्तूयमानः ।
वलाहकैश्चाप्यनुगम्यमानो
विद्याधरैरपसरसाँ गणैश्च ।।९।।

-महाभारत आदि पर्व, ५६ वाँ अध्याय

अर्थ-यह सुनकर यज्ञ-दीक्षा में स्थित राजा तापित होकर होताओं को तक्षक के आवाहन के लिए प्रेरणा करने लगे । होतागण भी बड़ी सावधानी और प्रयत्न के साथ मन्त्रों से हवन करने लगे, जिससे मेघ, विद्याधर और अप्सराओं से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुगम्यमान स्वयं इन्द्र विमान पर बैठकर यज्ञ कुण्ड में गिरने के लिए आकाश में आ खड़ा हुआ ।

जन्मेजय उवाच -

इन्द्रस्य भवने विप्रा यदि नागः स तक्षकः ।
तमिन्द्रेणैव सहितं पातयध्वं विभावसो ।।११।।
हूयमाने तथा चैव तक्षकः सपुरन्दरः ।
आकाशे ददृशे चैव क्षणेन व्यवस्थितस्तदा ।।१३।।

-महाभारत, आ० प०, अ० ५६

अर्थ-जन्मेजय बोला कि हे ब्राह्मणों ! यदि इन्द्र की शरण में भी तक्षक पहुँच गया है, तो इन्द्र के साथ-साथ इस यज्ञ की अग्नि में उसकी आहुति दे डालो ।।११।।

जिस क्षण इन्द्र सहित तक्षक के नाम मन्त्र पढ़कर अग्नि में आहुति दी गई, उसी क्षण इन्द्र सहित तक्षक व्याकुल हुआ आकाश में दिखाई देने लगा ।।१३।।

इस विपन्न-अवस्था के बीच ऋषिकुमार आस्तीक ने बहुत ही महत्वपूर्ण काम किया । उसने जन्मेजय को प्रसन्न कर सर्प-यज्ञ बन्द करने का वरदान लिया । इससे यज्ञ और यज्ञीय मन्त्रों की शक्ति की प्रत्यक्ष बलवत्ता दर्शन के संग इन्द्र तथा अवशिष्ट सर्पों सहित तक्षक के प्राणों की भी रक्षा हो गई ।

'लोह' नामक राक्षस का विनाश भगवान् विष्णु ने किस प्रकार किया । इस सम्बन्ध में कहा गया है -

पुरा सुमेरु शिखरे काञ्चन रत्न पर्वते ।
स्वर्गगायास्तटे ब्रह्मा यज्ञं यजात भाव ।।
तस्मिन्यज्ञे स ददृशे विघ्न खे लोहं दानवम् ।
विघ्नस्य शशम तस्य चिन्तयामास तत्ववित् ।।
तदा चिन्तयततस्य पुरुषः पावका द्वभौ ।
नीलोत्पल दल श्यामः स्वरुचा वञ्चितेक्षणः ।।
अभ्यनन्दन्त जातेन येन देवास्समासवाः ।
तस्मात्स नन्दको नामः खडगरत्नम् भूत्तदा ।।
तदृष्टवा भगवान् ब्रह्मा केशवम् वाक्यमब्रवीत् ।
खड्ग गृह्णीष्व गोप्तारं धर्मस्यजगतां पते ।।
यज्ञ विघ्नकरं हत्वा खड्गेनानेन केशव ।
निपातय महाबाहो वलिनं लोह दानवम् ।।
खड्गेन तस्य गात्राणि विच्छेद मधुहारणे ।
खड्गच्छिन्नानि गात्राणि नाना देशेषु भूतले ।।
निपेतुस्तस्य धर्मज्ञ शतशोऽथ सहस्त्रः ।
नन्दकस्य तु संस्पर्शाता न गात्राणि भार्गव ।।

-विष्णु धर्मोत्तर पुराण अ० १७
श्लोक १, २, ३, ४, ५, ६, ७, १४, १५

अर्थ-प्रथम कञ्चन सुमेरु पर्वत के शिखर पर, स्वर्ग गंगा के किनारे ब्रह्माजी ने यज्ञ किया। उस यज्ञ में ब्रह्माजी ने विघ्न करने वाले लोह नामक राक्षस को आकाश में देखा । तब ब्रह्माजी विघ्न शान्त करने का उपाय सोचने लगे । ब्रह्माजी के चिन्ता करते ही उस यज्ञाग्नि से नील कमल के सदृश श्याम शरीर वाला एक पुरुष उत्पन्न हुआ । प्रकट होने वाले पुरुष ने देवताओं सहित ब्रह्माजी की वन्दना की । तब नन्दन नामक खड्ग प्रकट हुआ । खड्ग को देखकर ब्रह्माजी ने केशव भगवान् से कहा- हे जगत्पते ! आप धर्म की रक्षा करने वाले खड्ग को ग्रहण कीजिये, हे केशव! इस खड्ग से यज्ञ के विघ्न करने वाले बलवान् लोह दानव को मार गिराओ । इतना कहने पर भगवान् मधुसूदन ने युद्ध में खड्ग से उस लोह दानव के अङ्गों को काट डाला । खड्ग से कटे लोह दानव के अङ्ग सैकड़ों, हजारों टुकड़े होकर विभिन्न देशों में गिरे ।

असुरों से परास्त होने पर देवताओं की आत्मरक्षा करने के जब-जब प्रसंग आये हैं, तब-तब यज्ञरूपी ब्रह्मास्त्र का ही सहारा लेना पड़ा है । देवताओं की विपत्ति-निवारण करने में सदा यज्ञ ही सहायक हुआ है ।

मैत्रेय जी के जिज्ञासा करने पर श्री पाराशर मुनि कहते हैं-

विश्वामित्र प्रयुक्तेन रक्षसा भक्षितः पुरा ।
श्रुतस्तातस्ततः क्रोधो मैत्रेया भन्ममातुल ।।१०।।
ततोऽहं रक्षसा सत्रं विनाश य समारभम् ।
भस्मी भूताञ्च शतशस्तास्मिन्सत्रे निशाचराः ।।१४।।

अर्थ-हे मैत्रेय ! जब मैने सुना कि विश्वामित्र की प्रेरणा से मेरे पिता को राक्षसों ने खा लिया है, तो मुझे असीम क्रोध हुआ और तब राक्षसों को ध्वंस करने के लिये मैंने सत्र (यज्ञ) आरम्भ किया । उस उग्र यज्ञ में अनगिनत राक्षस जलकर भस्म हो गये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विष्णु धर्मात्मा पुराण में वृत्तासुर का जन्म यज्ञ से उत्पन्न होने की कथा इस प्रकार आती है, कि इन्द्र ने सन्देह करके त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप को मार डाला । इसके बाद पुत्र की मृत्यु से दुःखी त्वष्टा ने इन्द्र से बदला लेने के लिये ''उसका ऐसा शत्रु उत्पन्न हो'' संकल्प करके अभिचार-यज्ञ किया । उस यज्ञ से अत्यन्त भयंकर वृत्रासुर का जन्म हुआ ।

आसुरी आक्रमणों और संकटों को निरस्त-परास्त करने के लिये यज्ञानुष्ठानों का भारी महत्व माहात्म्य है । विपत्ति-निवारण में यज्ञ का ब्रह्मास्त्र जितना सहायक हो सकता है, उतना कोई और नहीं ।

इस तरह यज्ञों से जहाँ आत्म कल्याण करने वाली महाशक्ति उत्पन्न होती है, वहाँ शत्रुओं को नष्ट करने वाली विकराल-प्रचण्ड शक्ति का भी आविर्भाव होता है ।

पौन्ड्रक जब भगवान श्रीकृष्ण से लड़ रहा था, तो काशी नरेश ने मित्रता के नाते उसे सहायता दी थी और वे भगवान के हाथों मारे गये । पिता की मृत्यु से काशी-नरेश के पुत्र सुदक्षिण को श्रीकृष्ण चन्द्र जी पर बड़ा ही क्रोध हुआ । उसने पिता की हत्या का बदला लेने के विचार से तपस्या पूर्वक शिव की आराधना की । भोले बाबा ने साक्षात् दर्शन देकर उससे वरदान माँगने को कहा, उसने पितृ-हत्यारे से बदला लेने का वरदान माँगा । शिवजी ने सारी विधियों सहित मारण-यज्ञ-वधि बताते हुए कहा:-

दक्षिणाग्नि परिचर ब्राह्मणैः समृत्यिजम् ।
अभिचार विधानेन सचाग्नि प्रथमैर्वृतः ।।३३।।

-भागवत, दशम स्कन्ध, अध्याय ६६

अर्थ- तुम ब्राह्मणों के साथ आज्ञाकारी ऋत्विज् सदृश दक्षिणाग्नि का यज्ञ द्वारा यजन करो । वह अग्नि अपने गणों के साथ तेरे मनोरथों को पूरा करने का पूरा प्रयत्न करेगा । पर इसका प्रयोग ब्रह्मज्ञानियों की सेवा भक्ति करने वाले पर न करना ।

शिवजी की बताई विधि के अनुसार सुदक्षिण ने दक्षिणाग्नि का यजन किया । विधि पूर्वक उसमें आहुति डालीं उपरान्तः-

ततोऽग्नि उत्थितः कुण्डान्मूर्तिमानति भीषणः ।
तप्त ताम्र शिखा-श्मश्रुरंगारोद्गारि लोचनः ।।३२।।
दंष्ट्रोग्र भ्रकुटि दंड कठोरास्यः स्वजिह्वया ।
आलिहन सृक्किणी नग्नो विधुन्वं स्त्रिशिखं ज्वलत्।।३३।
पदभ्यां तात प्रमाणाभ्यां कम्पयन्नवनीतलम् ।
सोम्यधावद् वृतो भूतैदरिकां प्रदहन्दिशः ।।३४।।

अर्थ-आहुति डालते ही यज्ञाग्नि कुण्ड से अत्यन्त भयानक आकृति वाला अग्नि निकला, जिसकी जलते हुए ताम्बे के सदृश शिखा, दाढ़ी और मूँछें थीं, मुख और आँखों से अंगारे निकल रहा था । बड़े-बड़े नुकीले दाँतों वाला, लपलपाती जीभ एवं भयंकर भ्रकुटी सहित कठोर दंडों के समान भयावना था ।

इस भाँति लपलपाती जीभ से अपने होठों को चाटता हुआ, जलते हुए त्रिशूल को घुमाता, नंगधड़ंग ताड़ से लम्बे पावों द्वारा धरती को कँपाता, दशों दिशाओं को जलाता हुआ, भयंकर भूत-प्रेत के संग द्वारका जा पहुँचा और उसे सभी ओर से जलाने लगा ।

यज्ञ द्वारा पापों का प्रायश्चित्त

मनुष्य बहुधा अनेक भूल और त्रुटियाँ जान एवं अनजान में करता ही रहता है । अनेक बार उससे भयंकर पाप भी बन पड़ते हैं । पापों के फलस्वरूप निश्चित रूप से मनुष्य को नाना प्रकार की नारकीय पीड़ाएँ चिरकाल तक सहनी पड़ती हैं । पातकी मनुष्य की भूलों का सुधार और प्रायश्चित्त भी उसी प्रकार सम्भव है, जिस प्रकार स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों को तोड़ने पर रोग हो जाता है और उससे दुःख होता है, तो ओषधि चिकित्सा आदि से उस रोग का निवारण भी किया जा सकता है । पाप का प्रायश्चित्त करने पर उसके दुष्परिणामों के भार में कमी हो जाती है और कई बार तो पूर्णतः निवृत्ति भी हो जाती है । पाप के प्रायश्चित्तों में यज्ञ को सर्वोत्तम प्रायश्चित्त शास्त्रकारों ने कहा है-

गार्भैर्होमैर्जातकर्म चौड़ मौञ्जी निबन्धनैः ।
वैजिकं गार्भिकं चनो द्विजानामपमृज्यते ।।२७।।

-मनुस्मृति, दूसरा अध्याय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थ-गर्भाधान, जातकर्म, चूड़ाकर्म और मौञ्जी-बन्धन संस्कार करने के समय हवन करने से वीर्य और गर्भ की त्रुटियों और दोषों की परिशुद्धि हो जाती है ।

महायज्ञैश्च ब्राह्मीय क्रियते तनुः ।।२८।।

-मनुस्मृति, दूसरा अध्याय

अर्थ-महायज्ञ और यज्ञ करने से ही यह शरीर ब्राह्मी या ब्राह्मण बनता है ।

शेष जी, भगवान् रामचन्द्रजी से कहते हैं-

सर्व समापातरतियोऽश्वमेधंयजेतवै ।
तस्मात्वं यजविश्वात्मन्वाजिमेधेन शोभिना ।।

-पद्म महा पु०, पा० ख० ८ श्लोक ३१

अर्थ-शेष भगवान् श्री रामचन्द्र जी से कहते हैं कि सब पापों में रत व्यक्ति भी यज्ञ करने से पाप मुक्त हो जाता है । अतः हे राम ! आप भी सुन्दर मेध (यज्ञ) करें ।

सवाजिमेधो विप्राणाँ हत्यायाः पापनोदनः ।
कृतवान्य महाराजो दिलीपस्तव पूर्वजाः ।।

-पा०, महा पु० पा खं० ८ श्लोक ३३

अर्थ-शेष जी कहते हैं कि हे राम ! ब्रह्म-हत्या जैसे पापों को नष्ट करने वाला महायज्ञ कीजिये, जिसे आपके पूर्वज महाराज दिलीप कर चुके हैं ।

हयमेधं चरित्वा स लोकान्वैपावयिष्यति ।
यन्नामब्रह्महत्यायाः प्रायश्चित प्रदिश्यते ।।

-पद्म० महा पु०, पा० ख०, अ०, २३, श्लोक ५८

अर्थ-सुमति कहती है, कि महायज्ञ करने से लोक पवित्र हो जाते हैं, यह ब्रह्म-हत्या का प्रायश्चित्त है । इससे ब्रह्म-हत्या का पाप भी नष्ट हो जाता है ।

ब्रह्महत्या सहस्त्राणि भ्रूणहत्या अर्बुदानि च ।
कोटि होमेन नश्यन्ति यथावच्छिव भाषितम् ।।

-मत्स्य पु०, अ० ९३ श्लोक १३९

अर्थ-शिवजी का वचन है, कि सहस्त्रों ब्रह्महत्याएँ, अरबों भ्रूण हत्यादि पाप, कोटि आहुतियों का हवन करने से नष्ट हो सकते हैं ।

कलि भागवत साज्ञार्थं कृतमनसै

-आदि पुराण २।२२

अर्थ-कलि के दुर्गुणों से बचने के लिए यज्ञ की अभिलाषा की गई ।

जब महाभारत समाप्त हो गया, तो पाण्डवों को व्यास जी ने यज्ञ करके अपने पापों का प्रायश्चित्त करने के लिए प्रेरणा दी-

ततोऽभिः क्रतुश्चैव दानेन युधिष्ठिर ।
तरन्ति नित्यं पुरुषाये स्म पापानि कुर्वते ।।
यज्ञेन तपसा चैव दानेन च नराधिपः ।
पूयन्ते नरशार्दूल नरादुष्कृति कारिणा ।।
असुराश्च सुराश्चैव पुण्यहेतोर्मखक्रियाम् ।
प्रयतन्ते महात्मानास्माद्यज्ञाः परायणम् ।।
यज्ञैरेव महात्मानो वभूवु रथिकाः सुराः ।
ततो देवाः क्रियावन्तो दानवानभ्यधर्षयन् ।।
राजसूयाश्चमेधौ च सर्व मेधं च भारत ।
नरमेधं च नृपते त्वमाहर युधिष्ठिर ।।

-महा० अ० ३

अर्थ-हे युधिष्ठिर ! मनुष्य गण सदैव बहुत से पाप कर्म कर यज्ञ, तप, दान आदि के द्वारा उन पापों से छूट जाया करते हैं ।

हे महाराज ! पापियों की शुद्धि, यज्ञादि से हो जाती है ।

यज्ञ के द्वारा ही देवता, असुरों से अधिक प्रभावशाली बने । क्या देवता, क्या असुर सभी अपने-अपने पुण्य-प्राप्ति और पाप-निवृत्ति के लिए यज्ञ करते हैं ।

अतः उपरोक्त कारणों से हे कौन्तेय ! तुम भी दशरथ-नन्दन भगवान् श्री रामचन्द्र जी के समान राजसूय, अश्वमेधादि यज्ञ करो ।

यज्ञ द्वारा तीर्थों की स्थापना

यज्ञ का महत्व सृष्टि के आरम्भ काल में ही स्रष्टा ने सहस्र वर्ष का यज्ञ किया था ।

सिसृक्षमाणो विश्वंहि यजते विस्त्रजतपुरा ।
सत्रं हि ते अतिपुण्यं च सहस्त्रं परिवत्सरान् ।।६।।
तपो गृहपतेयत्रं ब्रह्मा चैवाभवत्स्वयम् ।
इडाया यत्र पत्नीत्व शामित्रं यत्र बुद्धिमान् ।।७।।

-ब्र० पु० पूर्व भाग प्रक्रिया पद अ० १ श्लोक ५।६।७

अर्थ-कल्प के आरम्भ काल में जिस समय सृष्टि की रचना की जा रही थी, उस समय अति पुण्यमय महायज्ञ का अनुष्ठान सहस्र संवत्सर के लिए हुआ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

था । इस महायज्ञ के अनुष्ठाता स्वयं ब्रह्मा जी थे और उनकी पत्नी इडा वहाँ उपस्थित थी और बुद्धिमान शामित्र भी उपस्थित था ।

यज्ञ से सृष्टि की रचना का ब्रह्म पुराण में इस प्रकार वर्णन है-

विष्णु की नाभि से निकले हुए कमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई । पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश, ये पाँच तत्व पहले ही उत्पन्न हो चुके थे । उस समय अन्य कोई भी वस्तु प्रकट नहीं हुई थी, ब्रह्मा मौन बैठे हुए थे । वह किंकर्तव्यविमूढ़ की अवस्था में थे । कारण, उनको कुछ भी नहीं सूझ पड़ रहा था, आकाशवाणी हुई, जगत की सृष्टि करो । यह सुनकर ब्रह्मा ने कहा-मैं कैसे, कहाँ और किस साधन से सृष्टि की रचना करूँ ? उत्तर मिला-यज्ञ करो, इससे तुम्हें शक्ति प्राप्त होगी । यज्ञ ही विष्णु है, यज्ञ सनातन सत्य है । ऐसा सोचकर यज्ञ करो । इसके करने से कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं है । ब्रह्माजी ने पुनः प्रश्न किया-कहाँ और किस वस्तु का यज्ञ करूँ ? आकाशवाणी ने ब्रह्मा को रहस्य समझाया ।

ब्रह्माजी ने रहस्य को समझा और उनके आदेशानुसार यज्ञ का संकल्प किया । यज्ञ का संकल्प करते ही इतिहास, पुराण आदि सब शास्त्रों का उन्हें ज्ञान हो गया । तत्काल ही सम्पूर्ण वेद उन्हें ज्ञात हो गये, सब आवश्यक सामग्रियाँ स्वयं ही उपस्थित हो गईं । इस प्रकार भगवान ब्रह्मा ने यज्ञ प्रारम्भ किया । इस पुरुष से अनेक वस्तुएँ प्रकट हुईं । मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, मुख से इन्द्र और अग्नि, जाँघों से वैश्य, पद से शूद्र, प्राण से वायु, कान से दिशाएँ, मस्तक से सम्पूर्ण स्वर्गलोक, मन से चन्द्र, नेत्र से सूर्य, नाभि से अन्तरिक्ष तथा पृथ्वी की उत्पत्ति, रोमकूपों से ऋषि, केशों से ओषधियाँ, नखों से पशु (जंगली) आदि प्रकट हुए । इन सब के अतिरिक्त सब कुछ स्थावर, जङ्गम तथा दृश्य-अदृश्य जगत् उस ब्रह्मा से उत्पन्न हुआ । इतना होने पर पुनः पुनीत वाणी सुनाई दी, ब्रह्मन् ! सब पूर्ण हो गया । अब सब पात्रों की अग्नि में आहुति कर दो, यूप प्रणीता, कुश ऋत्विज्, यज्ञ, स्रुवा पुरुषों को और पाश सबका विसर्जन कर दो । इस प्रकार भगवान् के आदेशानुसार ब्रह्मा ने यज्ञ से समस्त सृष्टि की रचना की ।

ब्रह्माजी के प्रणीता का जो जल था, वह प्रणीता नदी के रूप में परिवर्तित हो गया । फिर प्रणीता का कुशों से मार्जन करके विसर्जन किया । मार्जन के समय प्रणीता के जल की बूँदें इधर-उधर अनेक स्थानों पर गिरीं जहाँ-जहाँ इस जल की बूँदें पड़ीं, वहीं उत्तम गुण वाले तीर्थों की उत्पत्ति हो गई । उन तीर्थों की यात्रा, ध्यान, स्नान आदि यज्ञ-फल देने वाले हैं । भगवान् विष्णु का जिसमें सदैव निवास है, वह सर्वगुण सम्पन्न गोमती-प्रणीता स्वर्ग को देने वाली है । सम्मार्जन करने के बाद जिस स्थान पर कुश गिरे थे, वह स्थान कुश-तर्पण-तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हो गया । यज्ञ करते समय, विन्ध्य पर्वत के उत्तर में, जहाँ यूप खड़ा किया, वह स्थान भगवान् विष्णु का प्यारा क्षेत्र बन गया । वह स्थान जहाँ पर यज्ञ किया गया था, वहाँ तीन कुण्ड हैं, जो यज्ञेश्वर स्वरूप हैं । वह स्थान देव-यजन के नाम से लोकों में प्रसिद्ध हो गया । दण्डकारण्य ब्रह्मा के यज्ञ का प्रमुख स्थान है ! इसी प्रकार उस महायज्ञ द्वारा अनेक तीर्थों की उत्पत्ति हुई ।

मार्कण्डेय पुराण में गोवर्धन पर्वत का माहात्म्य कहते हुए बताया गया है, कि उस स्थान पर नान्दी जी के आदेशानुसार एक बड़ा यज्ञ हुआ । इस यज्ञ के फलस्वरूप गोवर्धन पर्वत प्रमुख तीर्थ बन गया और भगवान् ने उसे अंगुली पर उठाकर बहुत बड़ा श्रेय प्रदान किया ।

ब्रह्म पुराण, अध्याय १८, श्लोक २१, २२, २३ में यज्ञों द्वारा जम्बूद्वीप की महानता होने का प्रतिपादन है-

तपस्तप्यन्ति यतयो जुह्वते चात्र याज्विन ।
दानाभि चात्र दीयन्ते परलोकार्थ मादरात् ।।२१।।
पुरुषैयज्ञ पुरुषो जम्बूद्वीपे सदेज्यते ।
यज्ञोर्यज्ञमयोविष्णु रम्य द्वीपेसु चान्यथा ।।२२।।
अत्रापि भारतश्रेष्ठ जम्बूद्वीपे महामुने ।
यतो कर्म भूरेषा यथोऽन्या भोग भूमयः ।।२३।।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थ-भारत भूमि में यति लोग तपश्चर्या करते हैं, यज्ञ करने वाले हवन करते हैं तथा परलोक के लिए आदरपूर्वक दान भी देते हैं । जम्बूद्वीप में सत्पुरुषों के द्वारा यज्ञ भगवान् का यजन हुआ करता है । यज्ञों के कारण यज्ञ पुरुष भगवान् जम्बूद्वीप में ही निवास करते हैं । इस जम्बूद्वीप में भारतवर्ष श्रेष्ठ है । यज्ञों की प्रधानता के कारण इसे (भारत को) कर्मभूमि तथा और अन्य द्वीपों को भोग-भूमि कहते हैं ।

तीर्थों की स्थापना वहाँ-वहाँ ही हुई, जहाँ-जहाँ बड़े यज्ञ हुए । 'प्रयाग' शब्द में से उपसर्ग को हटा देने पर 'याग' शब्द रह जाता है । याग-यज्ञ की प्रचुरता रहने के कारण ही वह स्थान तीर्थराज प्रयाग बना । काशी-वाराणसी के दशाश्वमेध घाट इस बात के साक्षी हैं, कि इन स्थानों पर दश बड़े-बड़े यज्ञ हुए हैं और उन्हीं के प्रभाव से इन स्थानों को इतना प्रमुख स्थान मिला । कुरुक्षेत्र, नैमिषारण्य आदि सभी क्षेत्रों में तीर्थों का उद्भव यज्ञों से हुआ है । जिस स्थान पर यज्ञ होते हैं, वह स्थान तीर्थ बन जाता है । इसके कुछ विवरण देखिए-

असीम कृष्णे विक्रान्ते राजन्येऽनुपमत्विषी ।
प्रशासतीमा धर्मेण भूमि भुमिपसत्तमे ।।१२।।
ऋषयः संशितात्मानः सत्यव्रत परायणः ।
ऋजवो नष्ट रजसः शान्ताः दान्ताः जितेन्द्रियाः ।।१३।।
धर्मक्षेत्रे दीर्घ सत्रं तु ईजिरे ।
तद्यास्तीरि दृषद्वत्याः पुण्याद्याः शुचि रोधसः ।।१४।।

-वायु पु० प्रक्रिया पाद० प्रथम अ०

अर्थ-जिस समय अनुपम कान्तिवान्, विक्रमशाली नरपति श्रेष्ठ राजा असीम कृष्ण, धर्म पूर्वक इस पृथ्वी पर शासन करते थे, उस समय पवित्र पुलिना दृषद्वती नदी के तीर पर धर्मक्षेत्र, कुरुक्षेत्र में सरल, शान्त, दान्त, जितेन्द्रिय, रजोगुण विहीन, सत्यपरायण, ऋषियों ने दीर्घसत्र (बहुत दिनों तक निरन्तर होते रहने वाला महायज्ञ)किया था ।

ऋषियों ने सूतजी से प्रारम्भिक महायज्ञ के स्थान, समय, प्रकार आदि के सम्बन्ध में प्रश्न किया । उसके उत्तर में सूत जी कहते हैं-

सिसृक्षमाणा विश्वंहि यत्र विश्वसृजः पुरा ।
सत्रं हि ईजिरे पुण्य सहस्त्रं परिवत्सरान् ।।५।।
तपोगृहपतिर्यत्र ब्रह्माऽभवत् ध्रुवम् ।
इलाया यत्र पत्नीत्वं शामित्रं यत्र बुद्धिमान् ।।६।।
मृत्युश्चके महातेजास्तस्मिन्सत्रे महात्मानाम् ।
विविधा ईजिरेतव सहस्त्रं प्रतिवत्सरान् ।।७।।
भूमतो धर्मचक्रस्य यत्र नेमिर्शीर्यत् ।
कर्मणातेन विख्यात नैमिषं मुनि पूजितम् ।।९।।

-वायु पुराण प्र० पा०, द्वि० अ०

अर्थ-जहाँ विश्व की सृष्टि की इच्छा से सृष्टि के आदिकाल में (ब्रह्मा) सृष्टा ने हजारों वर्ष पर्यन्त पवित्र यज्ञ किया था, जिस यज्ञ में स्वयं तप ही यजमान और स्वयं ब्रह्मा ही ब्रह्मा बने थे, जहाँ इडा ने पत्नीत्व तथा शामित्र का काम स्वयं बुद्धिमान्, तेजस्वी मृत्युदेव ने किया था । महान् आत्माओं के इस दीर्घ एवं विशाल यज्ञ में धर्म की नेमि घूमते-घूमते विशीर्ण हो गई थी-(यानी धर्म की अति अधिकता से सब कुछ धर्माप्लुत हो गया था) इसलिये ऋषि-मुनि पूजित उस प्रदेश का नाम नैमिषारण्य पड़ गया ।

स्कन्द पुराण माहेश्वर खण्ड में उल्लेख है कि वृत्रासुर ने इन्द्र को ऐरावत हाथी समेत निगल लिया । इससे देवताओं में हाहाकार मच गया । तब आकाशवाणी हुई ।

आकाशवाणी के अनुसार देवताओं ने आशुतोष शंकर का मन्त्र जपा तथा उसका दशांश हवन किया । इस यज्ञ के प्रभाव से इन्द्र वृत्रासुर का पेट फाड़कर निकल आये ।

उदार बुद्धि वाले विरोचन पुत्र बलि ने शुक्राचार्य से पूछा-

भगवन् इन्द्र किस प्रकार हमारे अधीन हो सकते हैं ? शुक्राचार्य ने उत्तर दिया-

हे दैत्यराज ! तुम विश्वजित नामक यज्ञ करो । यज्ञ बिना यह कार्य सिद्ध नहीं हो सकेगा ।

शुक्राचार्य ने बलि से यज्ञ आरम्भ कराया । विधिपूर्वक जब यज्ञ में आहुति दी जा रही थी, उसी समय अग्नि से एक बड़ा ही अद्भुत रथ उत्पन्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हुआ । वह कांति रथ भाँति-भाँति के शस्त्रों से संयुक्त एवं अस्त्रों से सुसज्जित था । यज्ञ पूर्ण करने के उपरान्त राजा बलि, उसी रथ पर सवार होकर सेना सहित स्वर्ग पहुँच गये । देवगण इन्द्रपुरी को राक्षसों से घिरा देख गुरु बृहस्पति के पास गये और बोले इस समय हम क्या करें ।

बृहस्पति ने देवताओं से कहा-ये दैत्य लोग अभी यज्ञ समाप्त करके आए हैं । इस यज्ञ के बल से वे अजेय हैं । गुरु की बात सुन सभी देव व्याकुल होकर बिना लड़ाई किये ही, स्वर्ग छोड़ कश्यप जी के पवित्र आश्रम पर चले गये ।

नारदजी के पूछने पर ब्रह्माजी कहते हैं-

वेदों के आधार ब्राह्मण हैं तथा ब्राह्मण के देवता अग्नि हैं । अग्नि में आहुति डालने वाला ब्राह्मण, यज्ञ में भगवान् का भजन करता हुआ सम्पूर्ण जगत को धारण करता है ।

स्कन्द पुराण में वर्णन है, कि धर्मात्मा राजा दिवोदास का वचन सुनकर ब्रह्माजी बड़े सन्तुष्ट हुए, उन्होंने यज्ञ-सामग्रियों का संग्रह किया और राजर्षि दिवोदास की सहायता पाकर काशी में दश-अश्वमेध नामक महायज्ञ द्वारा भगवान् का यजन किया । तभी से वहाँ वाराणसी पुरी में मङ्गलदायक दशाश्वमेध नामक तीर्थ प्रगट हुआ । पहले उसका नाम रुद्र-सरोवर था ।

इसी प्रकार अयोध्या के सम्बन्ध में उल्लेख है कि अयोध्यापुरी में सूर्यवंशी राजा वैवस्वत मनु, चक्रवर्ती नरेश के पद पर प्रतिष्ठित थे । वे सदा यज्ञ और दान में लगे रहते थे । इससे उनके शासन काल में अयोध्यापुरी के भीतर मृत्यु, रोग और वृद्धावस्था का कष्ट किसी को भी नहीं होता था ।

सूर्यवंश में ही राजर्षि सकिलायन हुए, जिसके राज्य काल में समूची पृथ्वी शस्य श्यामला एवं धन धान्य से सम्पन्न थी । गायें स्वयं ही इच्छानुसार दूध देती थीं ।

एक समय अयोध्या राज्य में बारह वर्ष तक वर्षा नहीं हुई । वशिष्ठ मुनि के निर्देश से वे मारकण्डेय मुनि के पास गये । मारकण्डेय मुनि ने इस संकट से पार पाने के लिए सकिलायन से कहा कि आप नर्मदा नदी के पुनीत तट पर रुद्र-यज्ञ का अनुष्ठान करो । इससे वर्तमान उपद्रव की शान्ति होगी और बादल भी इच्छानुसार जल देने लगेंगे । राजा ने आदेशानुसार विधि-पूर्वक यज्ञ पूर्ण किया और पुनः सभी जीव सुखी और सम्पन्न हो गये ।

सूर्यवंश में चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त प्रसिद्ध हैं । उन्होंने नर्मदा और वागु के संगम में एक श्रेष्ठ यज्ञ किया था, जिसमें ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, गणेश तथा महादेव जी ने प्रत्यक्ष होकर अपना भाग ग्रहण किया । ब्रह्मदत्त के यज्ञों से प्रेतों को भी बड़ी तृप्ति हुई, ब्रह्मदत्त के उस यज्ञ में आकर वे सभी पाप मुक्त हो गये और ब्रह्माजी के लोक को गये । यज्ञ के प्रभाव से वह नर्मदा वागु संगम भी एक पवित्र तीर्थ बन गया ।

जब रामचन्द्रजी धर्मारण्य गये और वहाँ इस स्थान की प्रतिष्ठा बढ़ाने का उपाय वशिष्ठजी से पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया-

यज्ञं कुरु महाभाग धर्माण्ये त्वमुत्तमम् ।
दिने-दिने कोटि गुणं या वद्वर्ष शतं भवेत् ।।

-स्क० पु०, ब्र० ख०, ३ ध० अ० ३५, श्लोक १४

अर्थ-हे महाभाग रामचन्द्रजी ! आप इस धर्मारण्य में उत्तम यज्ञानुष्ठान कीजिए । इस यज्ञ के प्रभाव से इस स्थल की पवित्रता की शक्ति एक सौ वर्ष तक बढ़ती चली जायेगी, जो (पवित्र-तीर्थ रूपता) मनुष्यों में कोटि-कोटि सत्गुणों का विकास और वृद्धि करती रहेगी ।

काशीराज दिवादास ने ब्रह्माजी के कथनानुसार यज्ञ-सामग्री एकत्रित की । उसके द्वारा ब्रह्माजी ने दश अश्वमेध नामक यज्ञों से महायज्ञेश्वर भगवान् का यजन किया और-

तीर्थं दशाश्वमेधाख्यं प्रथित जगतीतले ।
तदा प्रभृति तन्नासीद्वाराणस्यां शुभप्रदम् ।।६८।।
पुरा रुद्रसरो नाम तीर्थ कैलाशोद्भव ।
दशाश्वमेधकं पश्चाजातं विधि परिग्रहात् ।।६९।।

-स्क० पु०, ख० ४, उ० सं० अ० ५२,

अर्थ-उस दिन से दशाश्वमेध नाम से वह तीर्थ प्रख्यात हुआ । पहले उसका नाम रुद्र-सरोवर था । दश अश्वमेध यज्ञ करने से ही उसका नाम दशाश्वमेध तीर्थ हुआ ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नैमिषारण्य क्षेत्र सृष्टि के आदि काल में स्वयं सृष्टा के दीर्घ कालीन यज्ञों द्वारा परम पावन हुआ था, उसके उपरान्त-

नैमिषेऽनिमियक्षेत्रं ऋषयः शौनकादयः ।
सत्रं स्वर्गाय लोकाय सहस्त्र सममासत् ।।४।।

-भाग०, प्रथम स्कन्ध, प्रथम अध्याय

अर्थ-एक बार शौनक आदि (८८०००) अठासी हजार ऋषियों ने स्वर्ग प्राप्ति करने के हेतु से नैमिषारण्य के पवित्र क्षेत्र में दस हजार वर्ष तक लगातार एक दीर्घ महायज्ञ करने का संकल्प किया । उन्हीं यज्ञादि के पवित्र प्रभावों से आज भी नैमिषारण्य पवित्र तीर्थ बना हुआ है ।

यज्ञ से आत्म-शान्ति

महाभारत की लड़ाई के उपरान्त युधिष्ठिर शोकाकुल थे । धृतराष्ट्र के समझाने के उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् उनसे कहते हैं-

एवमुक्तस्तु राजा धृतराष्ट्रेण धीमता ।
तूष्णीं वभूव मेधावी तमुवाचाथ केशव ।।१।।
अतीव मनसा शोकः क्रियमाणो जनाधिप ।
सन्तापयति चैतस्य पूर्व प्रेतान्विता महान् ।।२।।
यजस्व विविधैर्यज्ञैः बहुभिः स्वाप्तदक्षिणैः ।
देवांस्तर्पय सोमेन स्वधया च पितरानपि ।।३।।

-महाभारत, अश्वमेधिक पर्व, दूसरा अध्याय

अर्थ-धृतराष्ट्र के समझाने पर जब मेधावी युधिष्ठिर चुप हो गये, तो भगवान् कृष्ण ने कहा-मन ही मन दुःख करने से मृत पूर्वजों को अनुताप होता है, अतः शोक का परित्याग कर आप पूरी दक्षिणा वाले विविध महायज्ञों को करके सोमपान द्वारा देवों को एवं स्वधा द्वारा पितरों को तृप्त कीजिए ।

यह कहने के उपरान्त युधिष्ठिर जी पूछते हैं-

मैं पितामह, कर्ण आदि को मारकर अशान्त हूँ अतः-

कर्मणा तद्विधत्स्वेह येन शुध्यति मे मनः ।
तमेवंवादिनं पार्थ व्यासः प्रोवाच धर्मवित् ।।

-महाभारत, अश्वमे० दूसरा अ०

अर्थ-हे भगवन् ! जिन कर्मों के द्वारा मैं इन सब पापों से छूट जाऊँ, मेरा मन पवित्र हो जाय, वह विधान बतलाइये । यह प्रश्न सुनकर श्री व्यास भगवान् उनसे श्रेष्ठ वचन कहने लगे-

आत्मानं मन्यसे चाथ पाप कर्माणमन्ततः ।
श्रणु तत्र यथा पापमयकृष्येत भारत ।।३।।
तपोभिः क्रतुभिश्चैव दानेन च युधिष्ठिर ।
तरन्ति नित्यं पुरुषाः ये स्मपापानि कुर्वते ।।४।।
यज्ञेन तपसा चैव दानेन च नराधिपः ।
पूयन्ते नरशार्दूल नराः दुष्कृत कारिणः ।।५।।

-महाभारत, आश्व० तीसरा अ०

अर्थ-हे भारत ! यदि तुम अपने को निश्चित रूप से पापी मानते हो, तो जिस प्रकार पाप से छूट सकते हो, उसका समाधान सुनो ।।३।।

हे युधिष्ठिर ! तप, यज्ञ और दान के द्वारा सदा ही मनुष्यगण पापों से छूट जाया करते हैं ।।४।।

हे नराधिप ! यज्ञ, दान, और तप से दुष्कर्म करने वाले व्यक्तियों की (पाप से) शुद्धि होती है ।।५।।

व्यास जी युधिष्ठिर को पाप से मुक्त होने के साधन के तौर पर यज्ञादि का निर्देश कर रहे हैं ।

असुराश्च सुराश्चैव पुण्यहेतोर्मखे क्रियाम् ।
प्रयतन्ते महात्मानस्तस्माद्यज्ञाः परायणम् ।।६।।
यज्ञैरेव महात्मानो वभूवुरधिकाः सुराः ।
ततो देवाः क्रियावन्तो दानवानभ्यधर्षयन् ।।७।।
राजसूयाश्वमेधौ च सर्वमेधं च भारत ।
नरमेधं च नृपते त्वामाहर युधिष्ठिरः ।।८।।

-महाभारत, आश्व० तीसरा अ०

अर्थ-असुर और देवता, दोनों ही पापों के विनाश एवं पुण्यों के सञ्चय के लिए समधिक यज्ञानुष्ठान ही करते हैं, इसी से यज्ञ श्रेष्ठ माना गया है । देवता लोग यज्ञों के द्वारा ही असुरों से अधिक प्रभावशाली बने । यज्ञानुष्ठान में अधिक क्रियावान् होने से ही देवों ने असुरों को पराजित किया । अतः हे युधिष्ठिर ! तुम भी राजसूय, अश्वमेध, सर्वमेध, नरमेध आदि यज्ञों का अनुष्ठान करो ।

राजा जन्मेजय वैशम्पायन जी से कह रहे हैं-

जन्मेजय उवाच-

यज्ञे सक्तानृपतयस्तपः सक्ता महर्षयः ।
शान्तिव्यवस्थिताः विप्राः शमे दमे इति प्रभो ।।१।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तस्मात् यज्ञफलस्तुल्यं न किञ्चिदिह दृश्यते ।
इति मे वर्तते बुद्धिस्तदा चैतद संशयम् ।।२।।
यज्ञैरिष्ट्वा तु बहवो राजानो द्विजसत्तमाः ।
इह कीर्तिं परां प्राप्य स्वर्गमवाप्नुयुः ।।३।।
देवराजः सहस्त्राक्षः ऋतुभिर्भूरि दक्षिणैः ।
देवराज्यं महातेजाः प्राप्तवानखिलं विभु ।।४।।

-महाभारत, अश्वमेधिक पर्व १९ वाँ अ०

अर्थ-राजा जन्मेजय ने कहा-हे ब्रह्मन ! जब राजा लोग यज्ञ, महर्षिगण तप और विप्रगण शम, दम एवं शान्ति करने के समर्थ हैं, तब मेरी बुद्धि में ऐसा निश्चय होता है, कि इस विश्व में यज्ञ-फल से श्रेष्ठ और कुछ भी नहीं है ।।१-२।।

हे द्विजसत्तम ! अनेक राजाओं ने यज्ञ के द्वारा ही इस लोक में परम यश एवं मरणोपरान्त स्वर्ग की प्राप्ति की है ।।३।।

महातेजस्वी देवराज इन्द्र ने भी दक्षिणायुत अनेक यज्ञ करके ही सम्पूर्ण देव लोक के राज्य की प्राप्ति की है ।

स्वर्गापवर्गौ मानुष्याः प्राप्नुवन्ति नरामुने ।
यच्चाभिसन्चितमभीप्सित स्थानं यद्यान्ति
मनुजाद्विजः ।।९।।

-श्री वि० पु० प्र० अंश अध्याय ६

अर्थ-यज्ञ के द्वारा मनुष्य इस शरीर से ही स्वर्ग और अपवर्ग प्राप्त कर सकते हैं तथा और भी जिस स्थान की उन्हें इच्छा हो, उसको जा सकते हैं ।

अहन्यहन्यनुष्ठान यज्ञानां मुनिसत्तम् ।
उपकारकरं पुंसा क्रियमाणाथ शान्तिदम् ।।२८।।

-श्री वि० पु० अंश अध्याय ६

अर्थ-नित्य-प्रति किये जाने वाला यज्ञानुष्ठान मनुष्यों का परम उपकारक और उनके किये हुए पापों को शान्त करने वाला है ।

तामिस्त्रमन्ध तामिस्त्रं महारौरवौ ।
असिपत्रवनं घोर कालसूत्रमवीचिकम् ।।४१।।
विनिन्दकानां वेदस्य यज्ञध्याघातकारिणाम् ।
स्थानमेतत्समाख्यातं स्वधर्मत्यागिनश्च ये ।।४२।।

-श्री वि० पु० प्र० अंश अ० ६

अर्थ-तामिस्त्र, अन्धतामिस्त्र, महारौरव, रौरव, असिपत्रवन, घोर कालसूत्र और भवीचिक आदि जो नरक हैं, वे वेदों की निन्दा और यज्ञों का उच्छेद करने वाले तथा स्वधर्म विमुख पुरुषों के स्थान कहे गये हैं ।

वेद यज्ञमंत्रं रूपमाश्रित्यजगतः स्थितौ ।

-पद्म पुराण १-३०

जगत की संरक्षा के लिए वेद भगवान् को यज्ञरूप धारण करना पड़ा और वेद भगवान् यज्ञमय हुए ।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण की कथा है कि इन्द्र वृत्रासुर के मारने से लगी हुई ब्रह्म-हत्या के भय से भयभीत हुआ जब विषतन्तु में छिप गया तो इन्द्रलोक में अराजकता से दुःखी देवताओं ने प्रभु त्रैलोकनाथ की प्रार्थना की, तब भगवान् ने कहा-

यजतां सोऽश्वमेधेन मामेवसुरसत्तमाः ।
अहमेव कारिष्यामि विपाप्मान विडौजसम् ।।
तत्कृता ब्रह्महत्यां तु चतुर्वा स करिष्यति ।
अहमंशेन याष्यामि भूतलं सुरकारणम् ।।
नष्टे च भूतले धर्मं स्थापयिष्याम्यहं पुनः ।
एद्वत्सर्वं यथोदिष्टं देव देवेन शार्ङ्गिणा ।
चक्रुः सुरगणाः सर्वे राज्यं चावाप वृत्रहा ।।

-वि० धर्मोत्तर पु० अ० २४ श्लोक २५, २६, २९, ३०

अर्थ-हे सुरश्रेष्ठ देवताओ ! वह इन्द्र मुझको ही यज्ञ द्वारा यजन करे, मैं ही इन्द्र को ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त करूँगा । उस अश्वमेध यज्ञ करने से इन्द्र ब्रह्महत्या को चार जगह बाँट देगा ।

मैं अंशों सहित देवताओं के कारण पृथ्वी पर जाऊँगा, और धर्म के नष्ट हो जाने पर मैं फिर धर्म की स्थापना करूँगा ।

देवाधिदेव शार्ङ्गपाणि भगवान ने ये सब वृतान्त जैसा कहा, वैसा देवताओं ने किया और इन्द्र ने ब्रह्महत्या के पाप से छुटकारा प्राप्त किया ।

श्री नारदजी उग्रसेन से यज्ञ का महत्व कह रहे हैं-

द्विजहा विश्वहागोघ्नो वाजिमेधेन शुध्यति ।
तस्मादूरुञ्च यज्ञानां हयमेधं वदन्ति हि ।। १६।।
निष्कारणं नृपश्रेष्ठ वाजिमेधं करोति यः ।
व्रजेत्सुपर्णकेतोः स सदनं सिद्ध दुर्लभम् ।।१७।।

-गर्ग० सं० अ० ख० १० अ० ७

अर्थ-द्विज हत्यारा, विश्व-वधकर्ता, एवं गौओं को मारने वाला भी अश्वमेध यज्ञ करने से परिशुद्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो जाता है । हे नृपश्रेष्ठ ! वह यज्ञ निष्कामभाव से जो करते हैं, वे गरुड़ध्वज विष्णु भगवान का लोक प्राप्त करते हैं, जो सिद्धों के लिए भी दुर्लभ है ।

तस्मा आप्यनुभावेन स्वेनैवावाप्राधसे ।
धर्म एव मतिं दत्त्वाभिवशास्ते दिवं ययु ।।५७।।

-भागवत चौथा स्कन्ध अष्टम अध्याय

अर्थ-दक्ष को निज यज्ञादि कर्मों के प्रभाव से स्वतः सब सिद्धियाँ प्राप्त हो गयी थीं, फिर भी भगवान का यज्ञ समाप्त होने पर "धर्म में तुम्हारी बुद्धि लगी रहे" यह वरदान देकर पुनः अपने लोक को चले गये ।

जब परशुराम जी ने भूमि को क्षत्रिय, विहीन कर दिया, तो पाप से मुक्ति के लिए यज्ञ सम्पादित किया गया-

अश्वमेध महायज्ञ-चकार विधिवद्द्विजः ।
प्रददौ विप्रमुख्येभ्यः सप्तद्वीपवती महीम् ।।

-पा० पु० उ० ख० स० अ० २४२।७८

अर्थ-ब्राह्मण ने महायज्ञ अश्वमेध किया और मुख्य विप्रों के लिए सप्तद्वीप वाली पृथ्वी का दान किया ।

यज्ञ से स्वर्ग की प्राप्ति

"स्वर्गकामो यजेत्" ।
दर्शपूर्णमासाभ्यां स्वर्ग कामो यजेत् ।
मीमांसा-ज्योतिष्टोमेन स्वर्गकामो यजेत् ।

शाबर भाष्यस्वर्ग की कामना इच्छा वाला पुरुष दर्शपूर्णमास यज्ञ करे ।

स्वर्गकाम पुरुष ज्योतिष्टोम यज्ञ करे । यह वाक्य श्री शाबर स्वामी ने मीमांसा का भाष्य करते हुए-

द्रव्याणां कर्मसंयोगे गुणत्वेनाभिसम्बन्धः ।

-मीमा० अ० ६ पा० १ सू० १

स्वर्गकामो यजेत् । इत्यादि वाक्य लिखा है- शाबर भाष्य में यह वाक्य शबर स्वामी ने कहाँ से प्राप्त किया, यह प्रश्न है, इसका उत्तर है, वेद से प्राप्त किया है, **यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वेसाध्याः सन्ति देवाः ।**

-यजु० अ० ३१ मन्त्र १६

अर्थात्-उस पूजनीय परमात्मा को ज्ञान रूप यज्ञ से विद्वान् पूजन करते हैं और पूजा रूप धर्म को धारण करते हैं, तो दुःख से सर्वथा छूट जाते हैं और स्वर्ग को प्राप्त होते हैं, जिस स्वर्ग को साधन सम्पन्न पुरुष पूर्व सृष्टियों में प्राप्त हुए हैं ।

सूर्याचन्द्रमसौधातायथा पूर्वमकल्पयत् ।

-ऋ० मं० १० सू० १९० मं० ३

जैसी सृष्टि पूर्व कल्प में रची, वैसी ही इस कल्प में अर्थात् सृष्टि-प्रवाह से अनादि-अनन्त है । अतः वेद में कहा कि साधन सम्पन्न पुरुष यज्ञ से स्वर्ग को अर्थात् सुख विशिष्ट प्राप्त करते रहे ।

न कर्मकर्तृसाधन वैगुण्याः ।

-न्याय अ० २ सू० ५८

अर्थात्-कर्म-कर्ता और साधन यह तीनों ठीक हों तो यज्ञ से स्वर्ग प्राप्त हो जायेगा ।

स्वर्ग का अर्थ चाहे इस लोक की सुख-सुविधाओं का सन्तोष किया जाय अथवा मरणोपरान्त परलोक में देवताओं की सी स्थिति प्राप्त होना किया जाय, मनुष्य के लिए ये दोनों ही शुभ हैं । यज्ञ से मनुष्य निश्चित रूप से शान्तिदायक शुभ सद्गति को प्राप्त होता है -

त्रविद्या मां सोमयाः पूतपापा
यज्ञैरिष्टा स्वर्गति प्रार्थयन्ते ।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्र लोके
मश्नंति दिव्यान् दिविदेव भोगान् ।।

-गीता ९।२०

अर्थ-वेद विधान के अनुसार यज्ञों द्वारा मुझे भगवान को पूजकर निष्पाप मनुष्य स्वर्ग चाहते हैं, वे अपने पुण्य के फलरूप देवलोक को-स्वर्गीय सुख को प्राप्त करते हैं ।

त्रिशंकु की स्वर्ग यात्रा

यज्ञ की शक्ति अनन्त है । उसके द्वारा कठिन और असम्भव कार्य भी सम्भव हो सकते हैं । राजा त्रिशंकु का वृतान्त ऐसा ही है, उसने शरीर समेत स्वर्ग जाने की इच्छा की और यज्ञ शक्ति के प्रभाव से वह कार्य सफल भी हुआ । किन्तु केवल यज्ञ-हवन ही पर्याप्त नहीं है, उसके लिए गुरुजनों का सद्भाव और आशीर्वाद भी आवश्यक है । त्रिशंकु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ने वशिष्ठ और उनके पुत्र को रुष्ट करके यही भूल की थी, फलस्वरूप वह अभीष्ट प्रयोजन के पुण्य फल को खो दिया ।

महाभारत में त्रिशंकु का वृतान्त इस प्रकार है-

जब त्रिशंकु ने वशिष्ठ जी से कहा कि हम कोई ऐसा यज्ञ करना चाहते हैं, जिससे शरीर सहित देवताओं के रहने योग्य स्वर्ग को चले जायें । इस प्रश्न को सुनकर वशिष्ठ जी बोले ।

अशक्यमितिचाप्युक्तो वशिष्ठेन महात्मना ।
प्रत्याख्यातो वशिष्ठेन स ययौ दक्षिण दिशम् ।।

अर्थ-ऐसा नहीं हो सकता । वशिष्ठ जी से ऐसा उत्तर पाकर त्रिशंकु दक्षिण दिशा को चले गये । वहाँ वशिष्ठ जी के पुत्र दीर्घतपा तप कर रहे थे । उनसे जाकर त्रिशंकु ने कहा कि मैंने यज्ञ की कामना से गुरुदेव वशिष्ठ जी को व्रती करने को कहा था सो उन महात्मा ने जवाब दे दिया, अतएव अब आप अनुग्रह करके यज्ञ कराइये । आप लोग कृपा करके मेरे यज्ञ को सिद्ध कर दीजिए, जिससे मैं शरीर सहित स्वर्ग को चला जाऊँ, आपको ऐसा करना चाहिए ।

इस प्रकार की बात सुनकर वशिष्ठ जी के पुत्र त्रिशंकु से बोले कि हे राजन् ! तुम निर्बोध हो, तुम अपनी पुरी को चले जाओ । हे राजन् ! यह जान लो कि, हमारे पिता ही तीनों लोकों में यज्ञ कराने में समर्थ हैं । हम पुत्र होकर किस प्रकार पिता का अनादर करें ? उनके इस प्रकार के वाक्य सुनकर त्रिशंकु ने कहा, कि आपके पिता जी ने भी हमें जवाब दे दिया और आपने भी, अब मैं और किसी के पास जाकर उनसे यज्ञ कराऊँगा । जब ऋषियों ने ऐसे कठोर वाक्य सुने और-

शेपुःयाम संक्रुद्धाश्चांडालत्वं गमिष्यसि ।
इत्युक्त्वा ते महात्मानोविवुशुः स्वं स्वमाश्रमम् ।।

अर्थ-महा क्रोधित हो शाप दिया कि, तू चाण्डाल अवस्था को प्राप्त हो जा । यह शाप देकर वे महात्मा अपने-अपने आश्रम में प्रवेश कर गये ।

चाण्डाल हो जाने के बाद वे विश्वामित्र मुनि से मिले और कहा आप मेरे अभीष्ट यज्ञ को पूरा कीजिये । इस प्रकार के वाक्यों को सुनकर विश्वामित्र जी ने त्रिशंकु से यज्ञ करवाया और कहा ।

पश्य में तपसो वीर्यं स्वार्जितस्य नरेश्वरः ।
एषः त्वां स्वशरीरेण नयामि स्वर्ग भोजसा ।।

अर्थ-मेरा तप-बल देखो, जो मैंने तपस्या से प्राप्त किया है । मैं अपने तप के प्रभाव से तुम्हें शरीर सहित स्वर्ग को पहुँचाऊँगा ।

हे राजन् ! यद्यपि शरीर सहित स्वर्ग में जाना सहज नहीं है, किन्तु मेरी तपस्या के संचितफल के प्रभाव से तुम स्वर्ग को जा सकोगे । जो कुछ मेरी तपस्या का फल है, उसके प्रभाव से तुम स्वर्ग को जाओ ।

विश्वामित्र जी के ऐसे कहते ही ऋषियों के देखते-देखते त्रिशंकु शरीर सहित स्वर्ग को चले गये । स्वर्ग जाने पर सुरराज ने कहा- हे राजन् ! तुमको वशिष्ठ गुरुदेव ने शाप दिया है, इसलिये तुम नीचे को मुँह करके गिरो । तब गिरते हुए त्रिशंकु ने विश्वामित्र जी को लक्ष कर 'त्राहि-त्राहि' शब्द कहा । और विश्वामित्र जी ऐसे आर्तस्वर को सुनकर-

रोषमाहरयत्तीव्रं तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत् ।
ऋषि मध्ये स तेजस्वी प्रजापतिरिवापरः ।।

अर्थ-ऋषियों के बीच में वह तेजस्वी दूत प्रजापति की तरह महा क्रोधकर "वहीं रहो-वहीं रहो" यह वचन बोले और अपने तपोबल से त्रिशंकु को वहीं रोक दिया । तदनन्तर यज्ञ समाप्त होने पर ऋषिगण अपने-अपने स्थानों को चले गये ।

वशिष्ठ के शाप ने यद्यपि त्रिशंकु को स्वर्ग प्राप्त नहीं होने दिया, फिर भी महा याज्ञिक विश्वामित्र का तप इतना प्रचण्ड था कि उसने त्रिशंकु को अधि-पतित होने से रोक लिया ।

यज्ञ कर्ता-ऋणी नहीं रहता

वेद भगवान् की प्रतिज्ञा है कि जो यज्ञ करेगा-उसे ऋणी नहीं रहने दूँगा ।

"सुन्वताम् ऋणं न"

इस प्रतिज्ञा के होते हुए भी देखा जाता है कि कई यज्ञ करने वाले भी ऋणी बने रहते हैं । इसका कारण भी आगे चलकर वेद भगवान् ने स्पष्ट कर दिया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

''न नूनं ब्रह्मणामृणं प्रोशूनामस्ति सुन्वताम् न सोमोअप्रतापये ।''

अर्थात्-निश्चय ही यज्ञकर्ता ब्रह्म परायण मनुष्य कभी ऋणी नहीं हो सकते । किन्तु इन्द्र जिनको लाँघ कर चला जाता है, वह दरिद्र रह जाते हैं ।

इन्द्र भगवान् समस्त ऐश्वर्य के देव तो हैं, वे सब को सुखी बनाना चाहते हैं, पर वे कंजूस और नीच स्वभाव वालों से खिन्न होकर उनके समीप नहीं रुकते और उन्हें बिना कुछ दिये ही लाँघ कर चले जाते हैं । यह बात निम्न मन्त्र में स्पष्ट कर दी गई है ।

अतीहि मन्युषविणं सुषुवां समुपारणे ।
इतं रातं सुतं दिन ।।

-ऋ ८।३२।२१

क्रोध से यज्ञ करने वाले को अन्धा समझ कर इन्द्र भी उसे नहीं देखता । ईर्ष्या से प्रेरित होकर जो यज्ञ करता है, उसे बहरा समझकर इन्द्र भी उसकी पुकार नहीं सुनते । जो यश के लिए यज्ञ करता है उसे धूर्त समझ कर इन्द्र भी उससे धूर्तता करते हैं । जिनके आचरण निकृष्ट हैं, उनके साथ इन्द्र भी स्वार्थी बन जाते हैं, कटुभाषियों को इन्द्र भी शाप देते हैं । दूसरों का अधिकार मारने वालों की पूजा को इन्द्र हजम कर जाते हैं ।

इससे प्रकट है कि जो सच्चे यज्ञकर्ता हैं, उन्हीं के ऊपर इन्द्र भगवान् सब प्रकार की भौतिक और आध्यात्मिक सुख सम्पदाएँ बरसाते हैं । भगवान् भावना के वश में हैं । जिनकी श्रद्धा सच्ची है, जिनका अन्तःकरण पवित्र है, जिनका चरित्र शुद्ध है, जो परमार्थ की दृष्टि से हवन करते हैं, उनका थोड़ा सा सामान भी इन्द्र देवता सुदामा के तन्दुलों की भाँति प्रेम-पूर्वक ग्रहण करते हैं और उसके बदले में इतना देते हैं, जिससे अग्निहोत्री को किसी प्रकार की कमी नहीं रहती, वह किसी का ऋणी नहीं रहता ।

रुपये पैसे का ऋण न रहे, सो बात ही नहीं । देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण आदि सामाजिक और आध्यात्मिक ऋणों से छुट्टी पाकर वह बन्धन-मुक्त होकर मुक्ति-पद का सच्चा अधिकारी बनता है ।

यज्ञ से तृप्त हुए इन्द्र की प्रसन्नता तीन प्रकार से उपलब्ध होती है-(१) कर्मकाण्ड द्वारा आधिभौतिक रूप से भौतिक ऐश्वर्य का धन, वैभव देता है । (२) साधना द्वारा पुरुषार्थियों को आधिदैविक रूप से राज्य, नेतृत्व-शक्ति और कीर्ति प्रदान करता है । (३) योगाभ्यासी, आध्यात्म-हवन करने वाले को इन्द्रिय-निग्रह मन का निरोध का ब्रह्म का साक्षात्कार मिलता है ।

यज्ञ से सब कुछ मिलता है । ऋण से छुटकारा भी मिलता है, पर याजक होना चाहिये सच्चा ! क्योंकि सच्चाई और उदारता में ही इन्द्र भगवान् प्रसन्न होकर कुछ देने को तैयार होते हैं ।

यज्ञ द्वारा तीन ऋणों से मुक्ति

स्थूल यज्ञ में देव-पूजा इसलिए भी की जाती है कि देव तत्वों, देव आदर्शों, देव गुणों एवं देव कर्मों की ओर अभिरुचि एवं प्रवृत्ति बढ़े । पूजा के पीछे कोई भावना न हो, कोई उद्देश्य एवं आदर्श न हो, तब तो वह देव-पूजा एक अन्धपरम्परा मात्र रह जायेगी । ऐसी पूजा से कोई विशेष लाभ नहीं मिलता ।

कोई व्यक्ति किसी सत्पुरुष के दर्शन को तो दौड़ा जाय पर उसकी शिक्षाओं पर ध्यान न दें तो उस दर्शन-मात्र से उसे क्या लाभ होगा ? जिस महापुरुष के प्रति उसे श्रद्धा है, उसकी शिक्षाओं का तथा विशेषताओं का अनुकरण किया जाय, तो बिना दर्शन के भी लाभ प्राप्त किया जा सकता है । अनेकों रूढ़िवादी-अन्धविश्वासी केवल देव-पूजा का कर्म काण्ड करके अपना कर्तव्य पूरा मान लेते हैं । देवत्व को अपने में धारण करना देव-पूजन का प्रधान उद्देश्य है । यदि हमारे विचार और कार्य असुरता से भरे हुए हैं, तो देव-पूजन करने की चिह्न पूजा से क्या लाभ ? अध्यात्म-यज्ञ में अपनी अन्तरात्मा में देवतत्वों का आवाहन किया जाता है और दैवी सम्पदाओं से अपने को परिपूर्ण बनाया जाता है । गीता के १६ वें अध्याय में सद्भावनाओं, सद्गुणों और सत्व कार्यों के २६ लक्षणों को दैवी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्पदा में बताया गया है । जिनमें इन तत्वों की अधिकता होने लगे, समझना चाहिए कि वह देव उपासक है । इसके विपरीत लक्षणों वाला व्यक्ति चाहे वह कितने ही विधि-विधान सहित देव-पूजा करता हो-देव-पूजक होते हुए भी असुर रहने वाले रावण की तरह निन्दनीय ठहराया जायगा । अध्यात्म यज्ञ की देव-पूजा का वास्तविक तात्पर्य अपने में देवत्व की अभिवृद्धि करना ही है ।

अग्नि-पूजा का आध्यात्मिक मर्म कर्तव्य निष्ठा है । अपने धर्म-मार्ग को न छोड़ना, कर्तव्य-धर्म रूपी हवन में अपना सब कुछ झोंक देना, होम देना ही सच्चा अग्नि-पूजन है । अपने आवश्यक कर्तव्यों को पूरा करने में मनुष्य को सदैव जागरूक रहना चाहिये । अपने प्रति, अपने परिवार के प्रति, समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति, विश्व के प्रति, समस्त प्राण धारियों के प्रति जो कर्तव्य हैं, उन्हें पूरा करने में दत्त चित्त रहना, यज्ञ भावना का ही प्रतीक है ।

यजुर्वेद २ । १३१ में पितृ-यज्ञ का वर्णन है । इसका तात्पर्य है, पितृजनों के प्रति अपने कर्तव्यों को पूरा करना । पिता को गार्हपत्याग्नि, माता को दक्षिणाग्नि-आचार्य को आह्वनीय अग्नि कहा गया है । इन तीन अग्नियों में पितृ-यज्ञ किया जाता है । इसका तात्पर्य है, इन तीनों का आदर करना, इनकी सामर्थ्यों को बढ़ाने के लिए सहयोग देना, तथा इनका आज्ञानुवर्ती होना । यही सच्चा पितृ-यज्ञ है । इसी प्रकार मनुष्य जाति के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन नरमेध, राष्ट्र के प्रति अपना कर्तव्य पालन करना अश्वमेध, अपनी इन्द्रियों को कुमार्ग-गमन से बचाकर सन्मार्ग में लगा देना गो मेध, अपनी आत्मा के कल्याण के लिए अपनी शारीरिक, मानसिक तथा सांसारिक समस्त सम्पदाओं को लगा देना सर्वमेध है । इन्हीं महान यज्ञों तक यजमान को पहुँचाना अग्निहोत्र का प्रधान लक्ष्य है ।

यज्ञ में भावना ही प्रधान है । जैसी उच्च या निकृष्ट भावना से कोई कर्म किया जाता है, उसके अनुकूल ही उसका परिणाम मिलता है । कोई कार्य बाह्य दृष्टि से कितना ही उत्तम क्यों न दीखता हो, पर यदि उसके पीछे नीच उद्देश्य छिपा हुआ है, तो उसका कोई अच्छा परिणाम न होगा । भावना की निकृष्टता के कारण विष मिले हुए दूध के समान वह गन्दा हो जायगा । इसके विपरीत यदि उच्च भावना से प्रेरित होकर कोई ऐसा कार्य भी करना पड़े, जो देखने में निन्दनीय प्रतीत होता हो, तो भावना की उत्कृष्टता के कारण वह भी शुभ फलदायक होता है । डाक्टर का फोड़ा चीरना-एक निष्ठुर कार्य प्रतीत होता है, पर उसके मन में रोगी का दुःख दूर करने की भावना है । इसलिए वह चीर-फाड़ की निष्ठुरता भी दया ही है । इसी प्रकार बहेलिये का चिड़ियों को दाना फेंकना चाहे , बाहरी आँखों से दान या दया का कृत्य भले ही दीखे, पर उसका वास्तविक उद्देश्य चिड़ियों को पकड़ना है, इसलिए वह दाना-फेंकना भी उसकी अधोगति का ही कारण बनता है । गीता में भावना की प्रधानता को ध्यान में रखकर अन्य कर्मों की भाँति यज्ञ को भी सात्विक, राजस, तामस अर्थात् उत्तम, मध्यम, निकृष्ट विभागों में बाँटा है-

अफलाकांक्षिभिर्यज्ञो विधि दृष्टो य इज्यते ।
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्विकः ।।

-गीता १७ । ११

जो यज्ञ, शास्त्र विधि से नियत किया हुआ है तथा उसे करना कर्तव्य ही है, ऐसा मानकर, फल को न चाहने वाले पुरुषों द्वारा किया जाता है, वह यज्ञ सात्विक है ।

अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत् ।
इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् ।।

-गीता १७ । १२

जो यज्ञ केवल प्रदर्शन के लिए, अथवा फल को भी लक्ष रख कर किया जाता है, उसे हे अर्जुन ! तू राजस जान ।

विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम् ।
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ।।

-गीता १७ । १३

शास्त्र-विधि से हीन, अन्न-दान से रहित एवं बिना मन्त्रों के, बिना दक्षिणा के और बिना श्रद्धा के किये हुए यज्ञ को तामस यज्ञ कहते हैं ।

इन यज्ञों का फल उनके बाह्य रूप के अनुसार नहीं, वरन् कर्त्ता की भावना के अनुसार होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः ।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ।।

-गीता १४ ।१८

सतगुण में स्थित हुए मनुष्य ऊपर उठते हैं, उच्च गति को प्राप्त करते हैं, रजोगुण में स्थित बीच में ही लटकते रहते हैं, तथा निकृष्ट मार्ग पर चलने वाले तामस मनुष्य अधोगामी होते हैं ।

क्रिया-यज्ञ में विधि-विधान के शास्त्रोक्त होने का ध्यान रखा जाता है और भाव-यज्ञ में आन्तरिक भावना की पवित्रता, सात्विकता, सच्चाई एवं सदुद्देश्य को महत्व दिया जाता है । उच्च भावना रखकर किये जाने वाले साधारण कार्य भी यज्ञ-रूप हो जाते हैं ।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है । वह स्वयं ही अपनी सब जरूरतें पूरी नहीं कर लेता, वरन् अनेक व्यक्तियों, पशुओं, वृक्षों, वनस्पतियों तथा ईश्वरीय शक्तियों की सहायता से उसका जीवन-क्रम चलना सम्भव होता है । यदि दूसरों का सहयोग उसे न मिले, तो उसका काम एक क्षण के लिए भी न चले । यहाँ तक कि जीवन-धारण करना भी दुर्लभ हो जाय । अन्न, वस्त्र, ओषधि, घर, जूते, पुस्तक आदि वस्तुएँ प्राप्त करने के लिए सहस्रों दूसरों का सहयोग नित्य अपेक्षित होता है । जो ज्ञान, विद्या, शिक्षा, स्वभाव, पद, कीर्ति आदि हमें उपलब्ध हैं वह भी दूसरों के सहयोग से ही हैं । गर्भ में आने के समय से लेकर चिता में जलने तक हर घड़ी मनुष्य दूसरों के सहयोग, कृपा-भाव, दान, अनुग्रह प्राप्त करता रहता है । इसलिए उसे उचित है , कि इन ऋणों से अपने को उऋण करने के लिये कृतज्ञता-पूर्वक संसार की सेवा करे । अपने ऊपर लदे हुए दूसरों से असंख्य उपकारों का ऋण चुका कर उऋण होने का प्रयत्न करे । शास्त्र का भी ऐसा ही आदेश है:-

जायमानो वै ब्राह्मणास्त्रिभिर्ऋणैर्ऋणवान् जायते ।
ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन देवेभ्यः प्रजयापितृभ्यः ।।

-तैत्तिरीत संहिता ३ ।१०।५

द्विज, जन्मते ही ऋषि-ऋण, देवऋण, और पितृऋण इन तीन प्रकार के ऋणों से ऋणी बन जाता है । ब्रह्मचर्य के द्वारा ऋषिऋण से, यज्ञ द्वारा देवऋण से और सन्तति को सुयोग्य बनाने से पितृऋण से छुटकारा मिलता है ।

ऋषि, देव, पितृ हमारे ऊपर अनन्त कृपा-पूर्वक हमें बहुत कुछ देते हैं । सद्ज्ञान ऋषियों का दिया हुआ है । अनेक साधन सामिग्री तथा सुखोपभोग की सामिग्री देवों द्वारा दी हुई है । असमर्थ अवस्था में सामर्थ्य प्रदान करने वाले वे उपकार पित्रों के हैं, जिनके द्वारा सब प्रकार से दीन-हीन नवजात शिशु पाला-पोसा जाता है और अन्त में सब प्रकार की सामर्थ्यों से परिपूर्ण मनुष्य बन जाता है । इन दोनों के उपकार प्राप्त न हों, तो मनुष्य की कैसी दुर्गति हो इसकी कल्पना करना भी कठिन है ।

इन ऋणों से उऋण हुए बिना कोई व्यक्ति छुटकारा नहीं पा सकता । जो लोग दूसरों का कर्ज मारने की चेष्टा करते हुए 'विरक्त' बनने का ढोंग रचते हैं, वे वस्तुतः कृतघ्न हैं । उन्हें मुक्ति तो क्या मिलेगी, उल्टे हजारों गुने जटिल बन्धन पाश में बंधना पड़ेगा । साधु या सन्यासी तो ईश्वर उपासना करते हुए अधिकाधिक लोक-सेवा करने के लिए अपने व्यक्तिगत स्वार्थों को छोड़ते हैं । स्वार्थपरता को न छोड़कर कर्तव्य-पालन एवं लोक-सेवा द्वारा उऋण होने की कठिनाई या मेहनत से जी चुराकर जो आलस्य और हराम-खोरी पर उतर आते हैं और कहते हैं संसार तो माया है, दूसरों के लिए हम कोई प्रयत्न क्यों करें, ऐसे लोगों को साधु महात्मा या त्यागी बैरागी कहना भी इन पवित्र शब्दों को कलंकित करना है । साधु वह है- जो अपना ऋण दूसरों पर छोड़ें, जो स्वयं सबका कर्जदार बैठा है और बदला चुकाने के समय कतराता है, वह तो पक्का चोर है । उसे न तो साधु कह सकते हैं और न साधु । प्रत्येक व्यक्ति को उपरोक्त तीन ऋणों से उऋण होने का प्रयत्न करना चाहिए । इस उऋणता के उपाय तैत्तिरीय संहिता के उपरोक्त वाक्य में बता दिये गये हैं ।

(१) ब्रह्मचर्य द्वारा ऋषि-ऋण से छुटकारा मिलता है । ब्रह्मचर्य का अर्थ केवल स्त्री-सम्भोग न करना ही नहीं है, वरन् उसका वास्तविक तात्पर्य सभी इन्द्रियों का संयम करना और ब्रह्म में चरण रखना अर्थात् आस्तिकता को अपनाना है । इन्द्रियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

के संयम से, शारीरिक और मानसिक शक्तियों की रक्षा होती है और असंयमी आचरण के कारण जो समय, धन, स्वास्थ्य एवं आत्मबल नष्ट होता है, वह बच जाता है । इस असंयम से बचे हुए और संयम द्वारा बढ़े हुए बल को जब मनुष्य आस्तिकता में धर्म-मार्ग में लगाता है, तो वह व्यक्ति सब दृष्टि में महान् बन जाता है, उसकी सर्वाङ्गीण उन्नति होती है । ऋषि स्वयं महान होते हैं, हमें भी ऋषि-ऋण से मुक्त होने के लिए अपने को ज्ञान, धर्म, संगठन आदि सभी दृष्टियों से बलवान बनाना चाहिये । ऋषि , पक्ष की परम्पराओं को आगे बढ़ाने के लिये अपने को आदर्श एवं उदाहरण के रूप में उपस्थित कर सकें ।

(२) देव-ऋण से छुटकारा यज्ञ द्वारा होता है । यज्ञ देव-शक्तियाँ परिपुष्ट कैसे होती हैं, उसका विज्ञान पीछे बताया जा चुका है । अध्यात्म क्षेत्र में यज्ञ का अर्थ है त्याग । अपने निवारण के लिए अपनी सामर्थ्य का न्यूनतम भाग उपभोग करना और अधिकतम भाग लोकहित के लिए लगा देना यही यज्ञ भावना है । देव हमें नाना प्रकार के सुख-साधन देते हैं । हमें किसी का कुछ नहीं लेना चाहिए ? अवश्य ही देना हमारा कर्तव्य होना चाहिए 'देव' वे कहलाते हैं कि जो देते हैं । देने वालों की श्रेणी में अपने को रखने से भी हम देव बन सकते हैं । धन-देना ही दान नहीं है । ज्ञान, समय, श्रम, सलाह, सद्भाव, शिक्षा, सहयोग आदि देकर हम अपनी स्थिति के अनुसार दूसरों को बहुत कुछ देते रह सकते हैं । देने की भावना हो, तो प्रतिक्षण वैसे अवसर उपलब्ध हो सकते हैं । ऋषि-मुनि तो पूर्णतया निर्धन होते थे, पर वे इतना देते थे कि उनके दान की तुलना धन कुबेर भी नहीं कर सकते । देने की किन्तु विवेक पूर्वक देने की भावना से हम देव ऋण से मुक्त होते हैं किन्तु साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि कार्य एवं पात्र-कुपात्र का विचार न किया जाय, तो वह दान हत्या के समान भयंकर दुःखदायी भी होता है । इसलिए देव श्रद्धा से छुटकारा पाने के लिए विवेक पूर्ण त्याग करते रहने का हमें निरन्तर प्रयत्न करना चाहिए ।

(३) तीसरा ऋण है-पितृ-ऋण । पितर हमें सुयोग बनाते हैं । हम भी भावी सन्तान को सुयोग बनावें । आज के युग में अधिक बच्चे पैदा करना एक राष्ट्रीय पाप है । क्योंकि जब जनसंख्या की अधिकता से अन्न का पूरा न पड़ता हो, अन्न के अभाव से अनेक लोग भूखों मरते हों, तब उनके ग्रास छीनने के लिए और नये हिस्सेदार बढ़ाना कोई बुद्धिमानी नहीं है । बच्चों की संख्या बढ़ाने के लिए नहीं, वरन् उनकी योग्यता बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिये । भावी पीढ़ी के उचित निर्माण के लिए ध्यान न दिया जायगा, तो भविष्य अन्धकारमय बनेगा । आज कुसंस्कारों की बढ़ोत्तरी से नई पीढ़ियाँ, उद्दण्डता, उच्छृंखलता, अवज्ञा, आलस, विलासिता आदि बुराइयों की ओर बढ़ रही हैं । इस बाढ़ को न रोका गया तो भविष्य का ईश्वर ही मालिक है । इसलिए बच्चों को भविष्य के सुयोग्य नागरिक एवं महान सत्पुरुष बनाने के लिए प्रयत्न करते हुए पितृ-ऋण से उऋण होना चाहिए । अपने या पराये, जिन बच्चों की ऐसी सेवा की जाय, वह पितृ-ऋण की उऋणता ही है ।

पितर का अर्थ गुरु भी है । जिस प्रकार सत्पुरुषों ने हमें सद्ज्ञान दिया और अच्छे मार्ग पर चलाने के लिए अनेक प्रकार प्रयत्न किये, वैसे ही हमारे लिए उचित है, कि दूसरों को सद्ज्ञान देने और सत् मार्ग पर लगाने के लिए प्रयत्न करें । यह पितृ-परम्परा जारी रखने की भावना सब की हो, तो दूसरों को ऊँचा उठाने का प्रयत्न करते हुए सम्पूर्ण विश्व को सुयोग बनाया जा सकता है ।

तीनों ऋणों से उऋण होने के लिये हममें से प्रत्येक को ध्यान रखना चाहिए । ऋषि, देव और पितृ भी इस यज्ञ-भावना से प्रेरित होकर कार्य करते हैं । उनका यज्ञ यह यज्ञ-भावना ही है । इसी को यज्ञ से यज्ञ करना कहते हैं । देवों की महानता इस यज्ञों के यज्ञ-आध्यात्मिक यज्ञ पर निर्भर थी । इसी से वे इतने उच्च अधिकारी बने ।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।

-यजुर्वेद

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देवताओं ने यज्ञ से यज्ञ किया, जो प्रथम धर्म था । इसी से वे उस महान् स्वर्ग को गये, जहाँ पूर्व काल में ऋषि गये हैं ।

देवों ने हमें मार्ग दिखाया । हमारा कर्तव्य है कि इस यज्ञ मार्ग पर चलते हुए उस महान परम्परा को कायम रखें और उऋणता का आत्म-सन्तोष प्राप्त करते हुए जीवन के महान लक्ष्य को उपलब्ध करें ।

यज्ञ-अनुष्ठान से विभिन्न प्रयोजनों की पूर्ति

विभिन्न प्रकार के हवि पदार्थों के विभिन्न विधानों और विभिन्न प्रक्रियाओं के साथ हवन करने से उनके परिणाम अलग-अलग प्रकार के होते हैं । जिस प्रकार विभिन्न रोगों की अलग-अलग ओषधियाँ, परिचर्या एवं उपचार-विधियाँ अलग-अलग होती हैं, उसी प्रकार अनेक प्रयोजनों के लिये यज्ञों के विनियोग भी भिन्न-भिन्न हैं । प्राचीन काल में याज्ञिक लोग उन सब विधानों की विस्तृत प्रक्रियाओं को भली प्रकार जानते थे और उनसे समुचित लाभ प्राप्त करते थे । खेद है, कि आज वह वैदिक और तान्त्रिक यज्ञ-विद्या लुप्तप्राय हो रही है । यज्ञों के रहस्यमय विधानों के ज्ञाता अब दिखाई नहीं पड़ते । केवल उन विधानों के संकेत मात्र ही यत्र-तत्र उपलब्ध होते हैं, जिनका निर्देश नीचे किया जा रहा है । भारतीय प्राचीन विज्ञान में रुचि रखने वालों का कर्तव्य है, कि इन रहस्यमय विधानों के शोध के लिए शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक राति से अनुसंधान करें और पूर्वजों के उस रत्न-भण्डार को जन-समाज के कल्याणार्थ सांगोपांग विधि-व्यवस्था के साथ उपस्थित करें । काम्य यज्ञों के सम्बन्ध में नीचे कुछ विधियों के अस्त-व्यस्त संकेत उपस्थित कर रहे हैं ।

श्रीकृष्ण जी ने युधिष्ठिर से अनिष्ट ग्रहों की शांति के लिए हवन का वर्णन किया है ।

होमं तिलघृतैः कुर्यात्अहं नाम्ना तु मन्त्रवित् ।
अर्कः पलाश खदिरौह्यपामार्गोथ पिप्पलः ।।
उदुम्बर शमी दूर्वा कुशाश्च समिधः क्रमात् ।
एकैकस्यात्वष्ट शतमष्टाविंशतिरेव धा ।।
होतव्या मधु सर्पिभ्यां दध्ना वा पायसेन वा ।
सप्तमे त्वम संप्राप्ते नक्तं सूर्य सुतस्यतु ।।
यज्ञेन कृत मात्रेण सर्वे शाव्यत्युपद्रवाः ।

-भवि० पु० अ० प्र० ४ अ० ११४ श्लोक३२, ३३, ३४, ४०

अर्थ-अर्क, पलाश, खदिर, अपामार्ग पीपल, उदुम्बर, शमी (छोंकर), दूव, कुशा इन कुशाओं को क्रम से, मन्त्र को जानने वाला, तिल, घी के द्वारा ग्रहों के नाम से हवन करें । एक-एक ग्रह को एक सौ आठ बार अथवा अट्ठाईस बार शहद, घी, दही अथवा खीर से हवन करे । इस प्रकार सातवें दिन रात्रि को सूर्य-पुत्र शनिश्चर का हवन करे । इस प्रकार करने मात्र से सब उपद्रव शान्त हो जाते हैं ।

जब ऋषियों ने सूतजी से पूछा, कि हमें अघोर रूप शिवजी की पूजा, प्रतिष्ठा बताइये, तब सूत जी बोले, कि अघोर रूप शिव की पूजा, विधि-विधान से करनी चाहिये, बिना विधि विधान के नहीं ।

तथाग्नि पूजां वै कुर्याद्यथा पूजा तथैव च ।
सहस्त्रं वा तदर्थं वा शतमष्टोत्तरं तु वा ।।
तिलैर्होमः प्रकर्त्तव्यो दधिमध्वाज्य संयुतेः ।
घृतसक्तुमधूनां च सर्व दुःख प्रमार्जनम् ।।
व्याधीनां नाशनं चैव तिल होमस्तु मूतिदः ।
सहस्त्रण महा भूतिः शतेन व्याधि नाशनम् ।।

-लिंग पु० अ० ४९ श्लोक ३, ४, ५

अर्थ-जिस प्रकार अघोर रूप शिवजी की पूजा कही है, उसी प्रकार अग्नि की पूजा करनी चाहिए । जैसी पूजा होगी, वैसा ही फल होगा । एक हजार अथवा उससे आधा पाँच सौ अथवा एक सौ आठ बार घी, शहद, दही से मिश्रित तिलों का हवन करना चाहिये ।

घृतसक्तुमधु से किया हुआ हवन सब दुःखों को दूर करता है और व्याधियों का नाश करता है । तिलों का हवन वैभव को देता है । एक हजार आहुति देने से अत्यन्त धन-वैभव बढ़ता है । सौ आहुतियों से व्याधि का नाश होता है ।

सहस्त्रेण ज्वरो याति क्षीरेण जुहोतियम् ।
त्रिकालं मासमेकं तु सहस्त्रं जुहुयात्पयः ।।
मासेन सिद्धयते तस्य महा सौभाग्यमुत्तमम् ।
सिद्धते चाब्द होमेन क्षौद्राज्यदधि संयुतम् ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यवक्षीराज्य होमेन जाति तण्डुलकेन वा ।
प्रीयते भगवानीशो ह्यघोरः परमेश्वर : ।।
दाघ्ना प्रष्टिर्नृपाणां च क्षीर होमेन शान्तिकम् ।
षण्मासन्तु घृतं हुत्वा सर्व व्याधि विनाशनम् ।।
राजयक्ष्मा तिलैर्होमान्नश्यते वत्सरेण तु ।
यव होमेन चायुष्य घृतेन च जयस्तदा ।।
सर्व कुष्ठ क्षयार्थं च मधुनाक्तैश्च तण्डुलैः ।
जुहुयादयुतं नित्यं षण्मासान्नियतः सदा ।।

-लिंग पु० अ० ४९ श्लोक ८-१३

अर्थ-एक हजार खीर की आहुतियों से ज्वर नष्ट हो जाता है । एक महीने तक तीनों कालों में खीर की सहस्र आहुतियों से हवन करना चाहिए । एक महीने में सिद्धि हो जाती है और उत्तम सौभाग्य की वृद्धि होती है ।

क्षौद्र, घी, दही का हवन एक वर्ष करने से सिद्धि प्राप्त होती है ।

यव, खीर, घी अथवा चावलों के हवन से भगवान् शंकर प्रसन्न होते हैं ।

दही का हवन करने से राजाओं की पुष्टि होती है ।

खीर का हवन शान्ति का देने वाला होता है । छः महीने तक घी का हवन करने से सब प्रकार की व्याधियों का नाश हो जाता है ।

तिलों का एक वर्ष हवन करने से राजयक्ष्मा का नाश हो जाता है । जौ के हवन से आयु की वृद्धि होती है और घी के हवन करने से जय की प्राप्ति होती है ।

सब प्रकार के कुष्ठों को दूर करने के लिए शहद से मिश्रित चावलों का हवन करना चाहिए । नियमपूर्वक छः महीने तक हजार नित्यप्रति हवन करें ।

ऋषिगणों के ब्रह्म, दैव एवं अग्निहोत्र के सम्बन्ध में पूछने पर सूतजी कहते हैं-

सोमवारे च लक्ष्म्यादीन्सम्पदथ यजेद्बुधः ।
आज्यान्नेन तथा विप्रां सपत्नी कांश्च भोजयेत् ।।२९।।
काल्यादीन्भौमवारेतु यजेत् रोग प्रशान्तये ।
माष मुद्गाढ़कान्नेन ब्राह्मणांश्चैव भोजयेत् ।।३०।।
सौम्यवारे तथा विष्णुं दध्यन्नेन यजेद्बुधः ।
पुत्र मित्र कलत्रादि पुष्टिर्भवति सर्वदा ।।३१।।
आयुष्यकामो गुरुवारो देवानां पुष्टिसिद्धये ।
उपवीतेन वस्त्रेण क्षीराज्येन यजेद् बुधः ।।३२।।
भोगार्थं भृगुवारेतु यजेद्देवान्समाहितः ।
षड्रसोपेतमन्नं च दद्यात् ब्राह्मण तृप्तये ।।३३।।
स्त्रीणां च तृप्तये तद्वद्देयं वस्त्रादिकं शुभम् ।
अपमृत्यु हरे मन्दे रुद्रादीश्च यजेद् बुधः ।।३४।।
तिल होमेनदानेन तिलान्नेन च भोजयेत् ।
इत्थंयजच्च विबुधानारोग्यादि फलं लभेत् ।।३५।।

अर्थ-जो लक्ष्मी और सम्पत्ति की कामना करते हैं, उन्हें सोमवार के दिन घृतान्न का हवन करके विप्र-पत्नी को खिलाना चाहिए ।।२९।। रोग की शान्ति के लिए तथा कालादि दोष निग्रह के लिए चार सेर माष (उड़द) एवं मूँग से हवन करना चाहिए तथा ब्राह्मण को खिलाना चाहिए ।।३०।। सोम, बुध, गुरु एवं शुक्र को दधि अन्न से विष्णु भगवान् को आहुति देने से पुत्र, मित्र, स्त्री आदि की परिपुष्टि होती है ।।३१।। आयुवृद्धि की कामना वाले इसकी पुष्टि और सिद्धि के लिए गुरुवार को उपवीत, वस्त्र एवं दूध तथा घृत द्वारा देवों को आहुति प्रदान करते हैं ।।३२।। भोग की प्रवृद्धि के लिए शुक्रवार को शान्त चित्त से देवों के लिए आहुति देनी चाहिए तथा ब्राह्मणों को षट्रस पूरित भोजन कराके तृप्त करना चाहिए ।।३३।। अपमृत्यु से बचने के लिए स्त्रियों को वस्त्रादि से प्रसन्न करके रुद्रयज्ञ का अनुष्ठान करना चाहिए ।।३४।। तिल का हवन और तिल का दान करने तथा तिल का ही भोजन करने से आरोग्य सहित कई प्रकार के लाभ प्राप्त होते हैं ।।३५।।

होमात्तिलघृताद्यैश्च धर्म कामार्थ मोक्षदः ।
पूजामन्त्रान्पठेद्यस्तु मुक्त भोगोदिवं व्रजेत ।।

-आग्ने. पु. अ. २१ श्लो. २७

अर्थ-तिल घृतादि का हवन, धर्म, काम, अर्थ और मोक्ष देने वाला है । अपनी पूजा के मन्त्रों का पठन यानि कि जप करने वाले इस विश्व के भोग पदार्थों का उपभोग कर दिव्य लोकों को जाते हैं ।

कदम्ब कलिका होमाद्यक्षिणी सिध्यति ध्रुवम् ।
बन्धूक किंशुकादीनि वश्याकर्षाय होमयेत् ।।
विल्वं राज्याय लक्ष्म्यर्थं पाटलाञ्चम्पकानपि ।
पद्मानि चक्रवर्तित्वे भक्ष्य भोज्यानि सम्पदे ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूर्वा व्याधिविनाशाय सर्वसत्व वशी कृतेः ।
प्रियंगु पाटली पुष्पं चूतपत्रं ज्वरान्तकम् ।।
मृत्युञ्जयो मृत्यु जितस्याद् वृद्धि स्यात्तिलहो पतः ।
रुद्रशान्तिः सर्वशान्त्या अथ प्रस्तुत मुच्यते ।।

–आग्ने० पु० अ० ८१ श्लोक ४९-५२

अर्थ-कदम्ब की कलियों के हवन करने से निश्चय पूर्वक यक्षिणी सिद्ध होती है । किसी को वश में करने के लिये बन्धूक किंशुकादि का हवन करना चाहिए । राज्य-प्राप्ति के लिए विल्व-फलों का हवन करना चाहिए । लक्ष्मी-प्राप्ति के लिये पाटल और चम्पक का हवन करना चाहिए । भक्ष्यभोज्य, सम्पत्ति, और चक्रवर्ती राज्य के लिए कमलों का हवन करना चाहिए । व्याधि नाश के लिये दूब का, सब जीवों को वश में करने के लिये पाटल पुष्पों का, ज्वर दूर करने के लिए आम के पत्तों का, अकाल मृत्यु से बचने के लिए मृत्युञ्जय मन्त्र से हवन, वृद्धि के लिए तिलों का हवन करना चाहिए । रुद्र की शान्ति करने से सबकी शान्ति हो जाती है ।

सर्वदाहोम जप्याद्यैः पाठाद्यैश्च रणेजयः ।
अष्टा विंशभुजाध्येया असिखेटकवत्करौ ।।

–आग्ने० पु० अध्याय १३४

अर्थ-हमेशा हवन, जप और पाठ आदि से युद्ध में जय होती है । यज्ञ करते समय, हाथों में खंग और खेटक धारण किये अट्ठाईस भुजाओं वाली दुर्गा देवी का ध्यान करना चाहिए ।

श्रीगेहे विष्णु गेहे वा श्रियं पूज्यं धनं लभेत् ।
आज्याक्तै स्तण्डुलै लक्षि जुहुयात्खदिरानले ।।
राजावश्यो भवेद्वृ द्धिः श्रीञ्चस्यादुतरोत्तरम् ।
सर्षपाभ्योऽभिषेकेण नश्यते सकला ग्रहाः ।।

–आ० पु० अ० ३०७ श्लोक ३, ४

अर्थ-लक्ष्मी के मन्दिर में अथवा विष्णु के मन्दिर में लक्ष्मीजी की यज्ञ से पूजा करके धन को प्राप्त करे । घी से मिले हुए चावलों से खैर की अग्नि में एक लाख हवन करने से राजा वश में होता है और उत्तरोत्तर लक्ष्मी की वृद्धि होती है ।

सरसों और पानी के अभिषेक करने से सब ग्रह नष्ट हो जाते हैं ।

श्रीकामः शान्तिकामो वा ग्रह यज्ञं समारभेत् ।
वृष्टयायुः पुष्टिकामो वा तथैवाभिचरन्युनः ।।

–आ० पु० अ० १६४ श्लो० १

अर्थ-लक्ष्मी की कामना करने वाला अथवा शान्ति की कामना करने वाला, ग्रहों का हवन करे । वृष्टि, आयु अथवा वृष्टि की कामना करने वाला उसी प्रकार नवग्रहों का हवन करे ।

संसाध्येशानमन्त्रेण तिलहोमो वशीकरः ।
जय पद्मैस्तु दूर्वाभिः शान्तिकामः पलाशजैः ।।
पुष्टिःस्यात्काक पक्षेण मृतिर्द्वेषादिकं भवेत् ।
ग्रहक्षुद्रभयापत्तिं जवमेव मनुर्भवेत् ।।

–आग्ने० पु० अ० ३०७ श्लोक २०, २१

अर्थ-सिद्ध किये हुए ईशान मन्त्र से तिलों का हवन करने से सब वश में होते हैं । कमलों के हवन से जय की प्राप्ति होती है । शान्ति की कामना करने वाले दूब का हवन करें । पलाश के फूलों का हवन करने से पुष्टि होती हैं । काक पक्ष से सब दोषादिकों का अन्त होता है । क्षुद्रग्रह, भय, आपत्ति मानों सब नष्ट हो जाती हैं ।

पुष्पं क्षिपाययेच्छिश्य मानयेदग्नि कुण्डकम् ।
यवैर्द्धान्यस्तिलैः राज्यो मूलविद्या शतं हुनेत् ।।
स्थावरत्वं पुरा होमं सरीसृपमतः परम ।
पक्षिमृग पशुत्वं च मानुषं ब्राह्ममेव च ।।
विष्णुत्वञ्चेव रुद्रत्वमन्ते पुर्णाहुतिर्भवेत् ।
एकयाचैवद्याहुत्या शिष्यस्याद्दीक्षितो भवेत् ।।
मोक्षं यतिपरं स्थानं यद्गत्वा न निवर्त्तते ।
यथा जले जलं क्षिप्तं जलंदेही शिवस्तथा ।।

अर्थ-पुष्पों को क्षेपण करावे, शिष्य से अग्नि मँगावे, यव, धान्य, तिल, घी इत्यादि के द्वारा मूल मन्त्र से सौ आहुति दे ।

पहिले स्थावरों के लिए हवन करे, सरीसृपों के लिए, फिर पक्षी, मृग, पशुओं के लिए, मनुष्यों के लिये और ब्रह्म के लिए हवन करे, विष्णु के लिए, रुद्र के लिए हवन करे अन्त में पूर्णाहुति दे ।

एक ही आहुति से शिष्य दीक्षित हो जाता है । इस प्रकार वह स्थान जो मोक्ष है, उसको प्राप्त होता है, जहाँ जाकर प्राणी लौटता नहीं । जिस प्रकार जल में जल को डालने से अलग नहीं होता, उसी प्रकार यह देही जल है और शिव भी जल रूप हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

देही रूप जल शिव रूपी जल में मिलकर पुनः नहीं लौटता ।

चरुणास घृतेनैव केवलं पयसापिवा ।
जुहुयात् कालमृत्योर्वा प्रतीकारः प्रकीर्त्तितः ।।

-लिं० पु० अ० ५३ श्लो० ४

अर्थ-घी से युक्त चरु से अथवा केवल दूध से मृत्युञ्जय मन्त्र द्वारा हवन करने से काल तथा मृत्यु का प्रतिकार हो जाता है ।

ताबद्धोमं तिलैः कुर्यादच्युतार्च्चनपूर्वकम् ।
दीनानाथ जनेभ्यस्तु यजमानः प्रयत्नतः ।।२०।।
तावच्च भोजनं दद्याद्यावद्धोमं समाचरेत् ।
समाप्ते दक्षिणां दद्यात् ऋत्विभ्याश्रर्द्धयान्वितः ।।२१।।
यथा ता न लाभेन ततःशान्युदकेन च ।
प्रोक्षयेत्माममध्ये तु व्याधितांन्तुविशेषतः ।।२२।।
एवं कृते तु होमस्य पुरस्य नगरस्य च ।
राष्ट्रस्य च महाभाग राजो जनपदस्य च ।।२३।।
सर्वयाषा प्रशमनी शान्तिभवति सर्वदा ।
मार्कण्डेय उवाच-
इत्येतच्छौनक प्रोक्तं कथितं नृपनन्दन ।
लक्षहोमादिकविधिं राष्ट्रे कार्यं सुशान्तिदम् ।।२४।।
ग्रामे गृहे व पुरबाह्यदेशे द्विजैरये यत्नकृतः पुरोविधिः ।
तत्रापि शान्तिभविता नराणां गवां च भृत्यैः सह भूपतेश्च ।।२५।।

-नृसिंह पुराण अ० २५

अर्थ-जब तक लक्ष संख्यात्मक या कोटि संख्यात्मक हवन न हो, उस काल तक भगवान का पूजन करके तिल के द्वारा हवन करना चाहिए । यजमान दीन तथा अनाथ मनुष्यों को भोजन करावे तथा यज्ञान्त में ऋत्विजों को पुष्कल दक्षिणा देवे और कलशोदक से शान्तिमन्त्रों का पाठ करते हुए ग्राम के मध्य में प्रोक्षण करना चाहिए तथा व्याधियुक्त व दुखी मनुष्यों को विशेष प्रोक्षित करे । इस प्रकार होम करने पर पुर का, नगर का तथा राष्ट्र, राज्य और उस देश का कल्याण होता है एवं सर्वबाधा को शान्त करने वाली शाश्वत शान्ति प्राप्त होती है ।

विधिपूर्वक स्थापित हुई अग्नि में, तीन बार मधु से भिगोये हुए हविष्य, द्राक्षा, केला, मातुलिंग, ईख, नारियल, तिल, जातिफल, आग तथा अन्य मधुर द्रव्यों से दस आवृत्ति सप्तशती के प्रत्येक मन्त्र से हवन करे और एक सहस्र नवार्ण मन्त्र से भी हवन करे । फिर आवरण देवताओं के लिये, उनके नाम मन्त्रों द्वारा हवन करके यथोचित रूप से पूर्णाहुति दे । तत्पश्चात् ब्राह्मणवृन्द देवताओं सहित अग्नि का विसर्जन करे । यजमान को कलश के जल से अभिषिक्त करे । इस प्रकार करने पर जगत् अपने वश में होता है और सभी उपद्रव नष्ट हो जाते हैं ।

सकाम यज्ञों का रहस्यमय विज्ञान

प्राचीन काल में यज्ञ एक महत्वपूर्ण विज्ञान के रूप में प्रचलित था, जो आज हमें प्राप्त नहीं है । राजा नहुष यज्ञों द्वारा ही इन्द्रासन का अधिकारी बना था । शृंङ्गी ऋषि ने राजा दशरथ का पुत्रेष्टि यज्ञ कराया था और उसी के प्रभाव से राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, उत्पन्न हुए थे । राक्षसों के उत्पातों से दुखी होकर उन्हें समूल नष्ट करने के लिए विश्वामित्र ऋषि ने एक विशाल यज्ञ-आयोजन किया था । राक्षस लोग अपनी प्राण-रक्षार्थ उस यज्ञ को नष्ट करने के लिए जी-जान से प्रयत्न कर रहे थे । इसी यज्ञ की रक्षा के लिए विश्वामित्र जी राम और लक्ष्मण को ले गये थे । जब लंका पर राम ने चढ़ाई की और राक्षसों को यह लगा कि हमारी पराजय होने जा रही है, तो उन्होंने भी एक प्रचण्ड तान्त्रिक यज्ञ रचा था, यदि वह सफल हो जाता तो रावण आदि का उस लड़ाई में पराजित होना सम्भव न होता । बानरों ने उस मख को जान हथेली पर रखकर विध्वंस किया था । राजा बलि ने इतने यज्ञ किये थे कि वह अपने समय का सर्वोपरि शक्तिवान व्यक्ति बन गया था । यदि उसके एक-दो यज्ञ और हो जाते तो फिर राक्षस-वर्ग की प्रभुता संसार पर अनिश्चित काल के लिए स्थिर हो जाती और विश्व में हाहाकार मच जाता । इस संकट से रक्षा करने के लिए भगवान् को छल तक का आश्रय लेना पड़ा । वामन-रूप बनकर उन्होंने बलि को छला और उसको असफल बनाकर असुरों का प्रभुत्व स्थापित होने से बचाया । राजा जन्मेजय ने

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने पिता परीक्षित का बदला नागों से चुकाने के लिए नाग यज्ञ किया था । इसमें मन्त्रों की आकर्षण शक्ति से असंख्यों नाग आकाश मार्ग से खिंचे चले आये थे और यज्ञकुण्ड में अपने-आप आहुति रूप में गिरते थे । इस यज्ञ से अपनी प्राण रक्षा के लिए वासुकी इन्द्रासन से जा लिपटा था, जब इन्द्र भी वासुकी के साथ-साथ कुण्ड में गिरने के लिए मन्त्र बल से खिंचने लगा, तब कहीं वह नागयज्ञ समाप्त कराया गया ।

राजा द्रुपद ने द्रोणाचार्य को मारने के लिए एक ऐसे बलिष्ठ पुत्र की कामना की थी, जो उनसे अधिक बलवान तथा शस्त्र विद्या का ज्ञाता हो । ऐसा पुत्र प्राप्त करने के लिए उन्होंने यज्ञ कराया । यज्ञ के अन्त में जब पुत्रोत्पादक पुरोडाश (खीर) बन कर तैयार हुई और जो अत्यन्त स्वल्प काल उसे खाने के लिए नियत था, उस समय दुर्भाग्य वश रानी झूठे मुँह थी । मुहूर्त व्यतीत होता देख यज्ञ-कर्त्ता ने उस खीर को यज्ञकुण्ड में ही पटक दिया । उसी समय धृष्टद्युम्न और द्रौपदी यज्ञकुण्ड में से निकले और अन्त में उन्हीं से द्रोणाचार्य की मृत्यु हुई ।

इस प्रकार की असंख्यों घटनाएँ प्रत्येक इतिहास - पुराण में भरी पड़ी हैं । स्वयं भगवान ने अपने चौबीस अवतारों में एक अवतार ''यज्ञ-पुरुष'' का धारण किया है । यज्ञों की महिमा का कोई अन्त नहीं । इस युग में जिस प्रकार विभिन्न प्रकार की शक्तियाँ भाप, कोयला, अग्नि, पेट्रोल, बिजली, जल, पवन, एटम आदि के द्वारा उत्पन्न की जाती हैं, उसी प्रकार प्राचीन काल में यज्ञकुण्डों और वेदियों में अनेकों रहस्यमय मन्त्रों एवं विधानों द्वारा उत्पन्न की जाती थीं । इस समय अनेक प्रकार की मशीनें अनेक कार्य करती हैं, उस समय मन्त्रों और यज्ञों के संयोग से ऐसी शक्तियों का आविर्भाव होता था, जिनमें बिना किसी मशीन के मनुष्य सब कुछ कर सकता था, इसको ऋद्धि-सिद्धियाँ कहते थे । देवता और असुर दोनों ही दल इन शक्तियों को अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते थे ।

इस प्रकार के सकाम यज्ञों के अगणित प्रयोग शास्त्रों में भरे पड़े हैं, जिनका विस्तृत विधान एवं रहस्यमय विज्ञान हैं, जिनकी पूरी जानकारी उपलब्ध नहीं है । जिस प्रकार प्राचीन काल में विशाल भवनों के खण्डहर अब भी जहाँ-तहाँ मिलते हैं और उसी से उस भूतकाल की महत्ता का अनुमान लगता है, उसी प्रकार यज्ञ-विद्या की अस्त - व्यस्त जानकारियाँ जहाँ-तहाँ क्षत-विक्षत रूप में प्राप्त होती हैं । अनेक प्रकार के अलग-अलग विधान मिलकर एक स्थान में एकत्रित हो गये हैं और गाय-घोड़े के अङ्गों की तरह एक विलक्षण स्थिति में खड़े हुए हैं । आज ऐसी ही अस्त-व्यस्त यज्ञ-पद्धतियाँ दृष्टिगोचर होती हैं । इनका संशोधन करना, और यथावत् उन विशिष्ट पद्धतियों को अलग-अलग करके उसकी सर्वाङ्गपूर्ण स्थापना भूतकाल की भाँति करना एक ऐसा कार्य है, जो प्राचीन भारतीय विद्याओं की गुप्त शक्तियों के अन्वेषण में रुचि रखने वाले व्यक्तियों को पूरी तत्परता के साथ करना है । इस शोध की जिम्मेदारी ऐसी है, जिसे पूरा करके ही हम ऋषि-ऋण से उऋण हो सकते हैं ।

जिस प्रकार गायत्री-विद्या की सर्वाङ्ग पूर्ण शोध के लिए वर्षों से निरन्तर कार्य किया गया है, उसी प्रकार अब यज्ञ विद्या की शोध एवं सुव्यवस्था का कार्य हाथ में लिया गया है । इस विद्या की समुचित खोज होने पर भारतीय सूक्ष्म चैतन्य विज्ञान, पाश्चात्य स्थूल जड़-विज्ञान की तुलना में अपना महान गौरव पुनः प्रतिष्ठापित कर सकता है । यज्ञ विद्या की सहायता से मानव-जीवन के अनेकों कष्ट एवं अभाव दूर हो सकते हैं ।

वेद मन्त्रों में तीन रहस्य है (१) उनकी भाषा का शिक्षात्मक स्थूल अर्थ (२) उनके उच्चारण से उत्पन्न होने वाली शब्द-शक्ति का सूक्ष्म प्रभाव (३) उनमें सन्निहित शक्ति का यज्ञ आदि विशेष विधि - विधानों के साथ उपयोग होने से उत्पन्न होने वाली प्रचण्ड शक्ति । आजकल लोग केवल मन्त्रों की शब्दावली का शिक्षात्मक अर्थ ही समझते हैं, किन्तु वस्तुतः प्रत्येक वेद-मन्त्र अपने गर्भ में महान विज्ञानमयी प्रचण्ड शक्तियों का भण्डार छिपाये बैठा है । जो तत्वदर्शी ऋषि इन मन्त्रों की शक्ति से परिचित हैं, वे आगम और निगम सबके पारदर्शी हो जाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विविध प्रकार के यज्ञ विभिन्न वेद-मन्त्रों से होते हैं । उनका विधान ब्राह्मण-ग्रन्थों तथा सूत्र ग्रन्थों में दिया हुआ है । अनुभवी याज्ञिक लोग परम्परागत ज्ञान के आधार पर भी उन विधानों को जानते हैं । ऐसे विधानों का वर्णन इन पंक्तियों में नहीं हो रहा है । उनकी पद्धतियाँ एवं जानकारियाँ तो धीरे-धीरे उपस्थित की जातीं रहेंगी । इस समय तो गायत्री महामन्त्र तथा उससे सम्बन्धित देव-गायत्रियों के द्वारा होने वाले कुछ हवनों का उल्लेख किया जा रहा है । गायत्री महामन्त्र के अन्तर्गत २४ देव - शक्तियों की अन्तः गायत्री हैं । इन अन्तः गायत्रियों का भी उपयोग होता हैं ।

देव-गायत्रियों द्वारा सकाम यज्ञों का सर्वाङ्गपूर्ण सुनिश्चित विधान, जब तक उपलब्ध न हो, तब तक अपूर्ण प्रयोगों से भी बहुत हद तक लाभ उठाया जा सकता है । नीचे कुछ ऐसे ही प्रयोग दिये जा रहे हैं , जो यद्यपि अपूर्ण हैं, फिर भी इनके द्वारा अनेक बार आशाजनक परिणाम उपस्थित होते देखे गये हैं ।

देव-गायत्रियों को स्वाहाकार के साथ कुछ विशेष प्रयोजनों में अमुक हवन सामिग्रियों तथा अमुक समिधाओं का वर्णन है । यह प्रयोग बहुत सरल दीखते हैं, पर वस्तुतः यह उतने सरल नहीं हैं । किस व्यक्ति को, किस प्रयोजन के लिये, किस स्थिति में, होम करना है, उसे उसी के अनुसार अमुक मुहूर्त में, अमुक नियम पालन करते हुए, अमुक मन्त्रों द्वारा, अमुक वृक्ष के अमुक भाग की, अमुक प्रकार की समिधाएँ लानी होती हैं और उनको विशेष मार्जनों, सिंचनों, अभिषेकों के साथ परिशोधन, शक्ति-वर्धन, प्रमाणीकरण किया जाता है । तब वे समिधाएँ अपना प्रयोजन भली प्रकार पूर्ण करती हैं । इसी प्रकार जो हवन-सामग्री इसमें लिखी हुई हैं, वे देखने में बहुत सुलभ हैं, पर उनके पौधों को बोने, सींचने, तोड़ने, परिमार्जित करने, सुखाने आदि के विशेष विधान हैं । दूध, दही, घृत आदि का जहाँ वर्णन है, वहाँ गौ, भैंस, बकरी आदि अमुक जाति के पशु को अमुक प्रकार का ही आहार कराना, अमुक स्थानों का जल पिलाना, अमुक मन्त्रों से दूध दुहना, उसे अमुक प्रकार की अग्नि से गर्म करना, अमुक वस्तु के बने हुए पात्र में दही जमाना, अमुक काष्ठ की रई से अमुक मन्त्र बोलते हुए दधि-मंथन करके घी निकालना आदि का विस्तृत विधान छिपा हुआ है । हवन करने के दिनों में जो तपश्चर्याएँ करनी पड़ती हैं, उनके नियम भी अलग-अलग हैं । इन सब विधानों के द्वारा ये साधारण समिधाएँ हवन सामिग्रियाँ एवं विधियाँ भी विशिष्ट महत्वपूर्ण बन जाती हैं । उन विधियों एवं नियमों में देश, काल, पात्र के अनुसार कुछ हेर-फेर भी करने पड़ते हैं । इस प्रकार की जानकारियाँ धीरे-धीरे संग्रह हो रही हैं और समयानुसार उनको छापा भी जायेगा ।

जब तक वैसी सर्वाङ्गपूर्ण जानकारी उपलब्ध न हो, तब तक साधारण रीति से भी नीचे लिखी हुई वस्तुएँ निर्धारित देवगायत्रियों के साथ हवन किये जायँ, तो भी उसका परिणाम निश्चित रूप से अच्छा ही होगा । हानि की तो इसमें कोई सम्भावना है ही नहीं ।

आत्म बल बढ़ाने के लिए

ब्रह्मतेज, आत्मबल, प्रतिभा, प्रभाव, शालीनता आदि की अभिवृद्धि एवं पाप वृत्तियों को नष्ट करने के लिए 'अग्नि-गायत्री' का प्रयोग किया जाता है । वेदमाता गायत्री की भाँति ही विभिन्न देवताओं की २४ गायत्री और भी हैं । इनके गुण और प्रभाव अलग-अलग हैं । अग्नि में पड़कर जैसे साधारण वस्तुएँ भी अग्नि-रूप हो जाती हैं, उसी प्रकार अग्नि-गायत्री का प्रयोग करने से मनुष्य की अन्तः भूमिका अग्नि-वर्ण हो जाती है, उसमें ब्रह्मतेज भर जाता है । इस अग्नि में भीतर के अनेक दुरित तथा पूर्व संचित अनेक कुसंस्कार भी जलकर नष्ट हो जाते हैं । अग्नि गायत्री का मन्त्र यह है-

ॐ भूर्भुवः स्वः महज्वालाय विद्महे । अग्नि देवाय धीमहि । तन्नः अग्नि प्रचोदयात् ।

शतचण्डी विधि से इस अग्नि-गायत्री के साथ विभिन्न हव्य पदार्थों के साथ होम करने से उनके जो परिणाम होते हैं, उनका विवरण यह है:-

पलाशीभिरवाप्नोति समिद्भिर्ब्रह्म वर्चसम् ।
पलाश कुसुमैर्हुत्वा सर्वमिष्टमनाप्नुयात् ।।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पलाश की समिधाओं से हवन करने पर ब्रह्मतेज की अभिवृद्धि होती है और पलाश के कुसुमों से हवन करने पर सभी इष्टों की सिद्धि होती है ।

यवानां लक्ष होमेन घृताक्तानां हुताशने ।
सर्वकाम समृद्धात्मा परां सिद्धिमवाप्नुयात् ।।

यवों में घी मिलाकर एक लाख बार अग्नि में आहुति देने से सब कर्मों की सिद्धि होती है तथा परा सिद्धि प्राप्त होती है ।

ब्रह्मवर्चस कामास्तु पयसा जुहुयात्तथा ।
घृत प्लुतैस्तिलैर्वह्निं जुहुयात्सु समाहितः ।।

ब्रह्म तेज की कामना करने वाला व्यक्ति सावधानी के साथ घृत-युक्त तिलों से और घी से हवन करे ।

गायत्र्ययुत होमाञ्च सर्व पापैः प्रमुच्यते ।
पापात्मा लक्ष होमेन पातकेभ्यः प्रमुच्यते ।।

एक लाख आहुतियों से गायत्री द्वारा हवन करने से पापी मनुष्य भी बड़े पापों से छूट जाता है ।

चन्दन द्वय संयुक्तं कर्पूरं तण्डुलं यवम् ।
लवंग सुफलं चाज्यं सिता चाम्रस्य दारुकैः ।
अयंन्यून विधिः प्रोक्तो गायत्र्याः प्रीतिकारकः ।

दोनों चन्दन, कपूर, तण्डुल, यव, लवंग, नारिकेल, आज्य, मिश्री, आम की लकड़ी यह वस्तुएँ गायत्री से प्रीति बढ़ाने वाली हैं ।

क्षीरोदन तिलान्दूर्वा क्षीरद्रुम समिद्वरान् ।
प्रथक सहस्त्र त्रितयं जुहुयान्मन्त्र सिद्धये ।।

प्रणव युक्त २४ लाख गायत्री जप करके जप सिद्धि के लिए दूध, भात, तिल, दूर्वा तथा बरगद, गूलर, पीपल आदि दूध वाले वृक्षों की समिधाओं से तीन हजार हवन करे ।

तत्व संख्या सहस्त्राणि मन्त्र विज्जुत्यात्तिलैः ।
सर्व पापं विनिर्मुक्तो दीर्घमायुः स विन्दति ।।

तिलों से २४ हजार आहुति देने से होता समस्त पापों से छूट जाता है और दीर्घ जीवन पाता है ।

उपरोक्त हव्य सामिग्रियों तथा समिधाओं में अग्नि-तत्व विशेष हैं । इनकी आहुतियाँ छोड़ने से निकटवर्ती वातावरण में तेज, उत्साह, स्फूर्ति एवं प्रेरणा का संचार होता है । आत्मिक तत्व, गुण एवं बल जागृत होकर हवन करने वाले में ब्रह्मतेज बढ़ाते हैं ।

आत्मा और शरीर में ऊष्मा अग्नि-तत्व बढ़ाने के लिये अग्नि गायत्री की उपासना उन विधि-विधानों के साथ की जाती है, जो अग्निमय वातावरण उत्पन्न करते हैं । इसके द्वारा भीतर और बाहर प्रत्यक्ष प्रकाशवान तेज झलकने लगता है ।

निरोगता, बलिष्ठता और दीर्घायु के लिए

स्वास्थ्य का केन्द्र सूर्य है । सूर्य में रोग निवारणी प्रचण्ड शक्ति मौजूद है । इसका प्रयोग करने से नाना प्रकार के कष्ट-साध्य रोग दूर हो सकते हैं और शारीरिक कष्टों से छुटकारा पाकर मनुष्य निरोगता पूर्वक दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकता है । ऐसे प्रयोजनों में सूर्य-गायत्री का उपयोग करना ठीक है ।

सन्तान उत्पादक तत्व-सूर्य से आते हैं । कुन्ती ने कुमारी अवस्था में सूर्य का आवाहन करके कर्ण को जन्म दिया था । सन्तान रहित, मृतवत्सा, गर्भपात होते रहने वाली, प्रसव में अत्यन्त कष्ट सहने वाली तथा जननेन्द्रिय सम्बन्धी अवस्था वाली महिलाओं के लिए सूर्य-गायत्री का उपयोग विशेष फलप्रद होता है ।

जो वनस्पति-ओषधियाँ जिस रोग के लिए आयुर्वेद ग्रंथों में गुण-कारक मानी गई है, उन्हें घृत एवं शर्करा में मिलाकर सूर्य-गायत्री के साथ रोगी के निकट हवन करे, तो साधारण ओषधि चिकित्सा की अपेक्षा उसका परिणाम अधिक उत्तम होता है । ओषधि-सेवन के साथ-साथ उन्हीं वनस्पति ओषधियों का हवन भी होता रहे, तो दूना लाभ होता है ।

सूर्य-गायत्री का मन्त्र यह है:-

ॐ भूर्भुवः स्वः भास्कराय विद्महे, दिवाकराय धीमहि, तन्नः सूर्यो प्रचोदयात् ।

सूर्य गायत्री के साथ जिन वस्तुओं के हवन से जो लाभ होता है, उसका वर्णन इस प्रकार मिलता है:-

स प्ररोहाभिराज्याभिर्हुत्वा आयु समाप्नुयात् ।
समिद्भिः क्षीर वृक्षस्यर्हुत्वायुषमवाप्नुयात् ।।

पलाश की समिधाओं से होम करने पर आयु की वृद्धि होती है । क्षीर-वृक्षों की समिधा से हवन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करने से भी आयु बढ़ती है ।

सुरभीणि सुपुष्टेश्च कारकाणि सितादिकम् ।
द्रव्यारामादाय जुहुयाच्चतुर्थं रोगनाशकम् ।।

अर्थ-सुगन्धित, पुष्टिकारक, मधुर एवं रोगनाशक, चार प्रकार द्रव्यों का हवन करने से नाना प्रकार के रोगों का निवारण होता है ।

ब्रीहीणां च शतंहुत्वा दीर्घमायुरवाप्नुयात् ।

अर्थ-यवों की सौ आहुतियाँ प्रतिदिन देने से दीर्घ जीवन मिलता है ।

सुवर्ण कमलं हुत्वा शतमायुरवाप्नुयात् ।
इर्वाभिपयस्य वापि मधुना सर्पिषापिवा ।।
शतं शतं समाहमपमृत्यु व्यपोहति ।
शमी सपिद्भिरन्तेन पयसा वा च सर्पिषा ।।

अर्थ-स्वर्णिम कमल-पुष्पों से हवन करने पर मनुष्य शतजीवी होता है । इर्वा, दूध, मधु की सौ आहुतियाँ देते रहने से अकाल मृत्यु का भय नहीं रहता । शमी की समिधाओं से तथा दूध और घृत से हवन करने पर भी अपमृत्यु का भय जाता रहता है ।

आयुषे साज्य हविषा केवले नाथ सर्पिषा ।
इर्वात्रिकैस्तिलंमन्त्री जुहुयात् सहस्नकम् ।।

अर्थ-दीर्घ जीवन की इच्छा करने वाला मनुष्य घृत अथवा घी युक्त खीर, इर्वा एवं तिलों से तीन हजार आहुतियाँ दे ।

शतशतं च समाह्यपमृत्युं व्यपोहति ।
प्रग्गोध समिधो हुत्वा पायसं होमयेत्ततः ।।

अर्थ-वट-वृक्ष की समिधाओं से प्रतिदिन सौ आहुतियाँ देने से मृत्यु का भय टल जाता है ।

रक्तानां तण्डुलानां च घृताक्तानां हुताशने ।
हुत्वा बलमवाप्नोति शत्रुभिर्नासि जीयते ।।

अर्थ-लाल चावलों को घी में मिलाकर अग्नि में हवन करने से बल की प्राप्ति होती है और शत्रुओं का क्षय होता है ।

हुत्वा करवीराणि रक्तानि ज्वाला मे ज्वरम् ।।

अर्थ-लाल कनेर के फूलों से हवन करने पर ज्वर चला जाता है ।

आमुस्य जुहुयात्पत्रैः पयोक्तैः ज्वर शान्तये ।।

अर्थ-ज्वर को शान्त करने के लिए दूध में भिगोकर आम के पत्तों का हवन करे ।

वचभिः पयसिक्ताभिः क्षयं हुत्वा विनाशयेत् ।
मधु त्रितय होमेन राज यक्ष्मा विनश्यति ।।

दूध में बच को अभिषिक्त करके हवन करने से क्षय रोग दूर होता है । दूध, दही, घी इन तीनों को होमने से भी राजयक्ष्मा नष्ट हो जाती है ।

लताः वर्वसु विच्छिद्य सोमस्य जुहुयात् द्विजः ।
सोमे सूर्यण संयुक्ते प्रयोक्ताः क्षय शान्तये ।।

अमावस्या के दिन सोमलता की डाली से होम करने पर क्षय दूर होता है ।

कुसुमैः शंख वृक्षस्य हुत्वा कुष्ठं विनाशयेत् ।
अपस्मार विनाशस्तादपामार्गस्य तण्डुलैः ।।

शंख-वृक्ष के पुष्पों से यदि होम किया जाय, तो कुष्ठ रोग अच्छा होता है । अपमार्ग के बीजों से हवन करने पर अपस्मार (मृगी) रोग अच्छा होता है ।

प्रियंगु पायसाज्यैश्च भवेद्धोमादिभिः प्रजा ।

प्रियंगु दूध और घी से होम करने पर सुसंतति प्राप्त होती है ।

निवेद्य भास्करायान्नं पायसं होम पूर्वकम् ।
भोजयेत्त दृतुस्नातां पुत्रं परमवाप्नुयात् ।।

सूर्य नारायण को होम पूर्वक खीर अर्पण करके ऋतु स्नान की हुई स्त्री को उसका शेषांश खिलाने से पुत्र की प्राप्ति होती है ।

गर्भपातादि प्रदराश्चान्ये स्त्रीणां महारुजः ।
नाशमेष्यन्तिते सर्वे मृतवत्सादि दुःखदाः ।।

गर्भपात प्रदर, मृत सन्तन्ति की उत्पत्ति आदि सर्व रोग नष्ट होते हैं ।

क्षीर वृक्ष समिद्धोमादुन्मादोऽपिविनश्यति ।
औदुम्बर समिद्धोमादति मेहः क्षयं व्रजेत् ।।

क्षीर वृक्ष की समिधाओं से हवन करने पर उन्माद रोग नहीं रहता । औदुम्बर की समिधाओं से हवन किया जाय, तो प्रमेह नष्ट होता है ।

प्रमेहं शमयेद्धुत्वा मधुनेक्षुर सेनवा ।
मधुत्रितय होमेन नयेच्छान्तिं मसूरिकाम् ।।

प्रमेह की शान्ति के लिए मधु अथवा ईख के रस से हवन करना चाहिए । मसूरिका (चेचक) का निवारण करने के लिए मधु त्रितय (दूध, दही, घी) होमना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कपिला सविषा हुत्वा नयेच्छान्ति मसूरिकां ।

गौ के घी से हवन करने पर चेचक दूर होती है ।

उदुम्बर वटाश्वत्थैर्गोगजाश्वामयं हरेत् ।

गाय के सभी रोगों की शान्ति के लिए गूलर, हाथी के रोगों के निवारण के लिए वट और घोड़े के रोग दूर करने के लिए पीपल की समिधाओं से हवन करना चाहिए ।

उद्वेग शान्ति के लिए

चन्द्रमा को 'रसाधिप' कहा गया है । उससे पृथ्वी पर रस और वनस्पतियों की उत्पत्ति होती है । वर्षा के लिए वरुण और पर्जन्य को प्रेरित करना भी चन्द्रमा का काम है । सन्तान की उत्पत्ति, उसकी शोभा और कुरूपता का भी चन्द्र-शक्ति से सम्बन्ध है । जिस बालक को जितना चन्द्रतत्व प्राप्त हो जाता है, वह उतना ही सुन्दर, सौम्य, तथा शान्त प्रकृति का होता है । अन्न, पशु, प्रजा, सन्तान, वनस्पति, वृक्ष, वर्षा आदि के लिए चन्द्रमा की आराधना फलवती है ।

मानसिक उत्तेजना, क्रोध, अन्तर्दाह, शरीर और मन में विषों का संचय आदि उष्णताओं का चन्द्र गायत्री से समाधान होता है । अन्तरात्मा की शान्ति, चित्त की एकाग्रता के लिए भी उसका विशेष प्रभाव होता है । चन्द्र-गायत्री यह है:-

ॐ भूर्भुवः स्वः क्षीर पुत्राय विद्महे, अमृत तत्वाय धीमहि, तन्नः चन्द्रः प्रचोदयात् ।

इस मन्त्र द्वारा हवन करने से क्या परिणाम होते हैं इसका विवरण इस प्रकार है-

शान्ति कामस्तु जुहुयात् सावित्री मक्षतैः शुचिः ।

शान्ति की कामना करने वाले को अक्षतों के साथ गायत्री से हवन करना चाहिए ।

गवां क्षीरं प्रदीतेऽग्नौ जुह्वतस्तत्प्रशाम्यति ।

गाय के दूध का अग्नि में हवन करने से शान्ति प्राप्त होती है ।

कोटि होमं तु यो राजा कारयेद्विधि पूर्वकम् ।
न तस्य मानसो दाह इह लोके परत्र च ।।

जो राजा एक करोड़ आहुतियों से विधि पूर्वक हवन करता है, उसका चित्त स्थिर और शान्त रहता है । उसे मानसिक दाह इस लोक और परलोक में दुख नहीं देते ।

संयुक्तैः पयसा पयैः पुष्पैर्वा वेत्सस्य च ।
पावसेन शतं हुत्वा सप्ताहं वृष्टि माप्नुयात् ।।

वेत के वृक्ष के फूल अथवा पत्तों में मिलाकर खीर से हवन करने पर वर्षा होती है ।

नाभि दघ्ने जले जप्त्वा सप्ताहं वृष्टि माप्नुयात् ।
जले भस्म शतं हुत्वा महावृष्टि निवारयेत् ।।

नाभि-पर्यन्त जल में खड़े होकर एक सप्ताह तक गायत्री जपने से वर्षा होती है और जल में सौ बार हवन करने से अतिवृष्टि हो रही हो, तो उसका निवारण होता है ।

करीष चूर्णैर्वत्सस्य हुत्वा पशुमन्नाप्नुयात् ।

बछड़े के गोबर का होम करने में पशुओं की तथा अन्नों की प्राप्ति होती है ।

अन्नं हुत्वाप्नु यादन्नं व्रीहीन्व्रीहिपतिभवेत् ।

अन्न को हवन करने से अन्न प्रचुर मात्रा में उपजता है । यवों का होम करने से यव खूब उत्पन्न होते हैं ।

तदेवह्यनले हुत्वा प्राप्नोति बहु साधनम् ।
अन्नादि हवनान्नित्य मन्नाद्यं च भवेत्सदा ।।

अन्नों का नित्य हवन करने से पृथ्वी पर पर्याप्त मात्रा में अन्न पैदा होता है ।

रक्त चन्दन मिश्रं तु सघृतं हव्य वाहने ।
हुत्वा गोमयमाप्नोति सहस्त्रं गोमयं द्विजः ।।

रक्त चन्दन को घी में मिलाकर अग्नि में हजार बार आहुति देने से पशुओं से घी, दूध और गोबर भली प्रकार प्राप्त होता है ।

पारिवारिक क्लेश, द्वेष, वैमनस्य आदि को शान्त करके शीतल मधुर सम्बन्ध उत्पन्न करने के लिए भी चन्द्र-गायत्री विशेष फलप्रद होती है ।

सम्पत्ति और समृद्धि के लिए

सांसारिक वस्तुओं के अभाव को मिटाने और जीवनोपयोगी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए लक्ष्मी-गायत्री का प्रयोग होता है । महा गायत्री की सतोगुणी शक्ति को सरस्वती, रजोगुणी शक्ति को लक्ष्मी और तमोगुणी शक्ति को दुर्गा कहते हैं । लक्ष्मी-गायत्री का उपयोग अभाव, दारिद्र आदि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असुविधाजनक परिस्थितियों को दूर करने के लिए किया जाता है । लक्ष्मी गायत्री का मन्त्र यह है:-

ॐ महालक्ष्म्यै विद्महे, विष्णु प्रियायै धीमहि । तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात् ।

इस मन्त्र का हवन किस वस्तुओं से करने पर क्या परिणाम होता है, इसका विवरण इस प्रकार है-

अथ पुष्टिं श्रियं लक्ष्मी पुष्पैर्हुत्वाप्नुयात् द्विजः ।
श्रीं कामो जुहुयात्पद्मैः रक्तैः श्रियमवाप्नुयात् ।।

लक्ष्मी की आकांक्षा वाले मनुष्य को गायत्री के साथ रक्त कमल के पुष्पों से हवन करना चाहिए । इससे शोभा, पुष्टि और कीर्ति भी मिलती है ।

हुत्वा श्रियमवाप्नोति जाती पुष्पैर्नवैः शुभः ।
शालि तंडुल होमेन श्रियमाप्नोति पुष्पकलाम् ।।

जाती के नवीन पुष्पों के हवन से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है । शालि चावलों का हवन भी लक्ष्मी प्राप्त कराने वाला है ।

श्रियमाप्नोति परमां मूलस्य सकलेरपि ।
समिद्भिः विल्व वृक्षस्य पायसेन च सर्पिषा ।।

विल्व-वृक्ष की जड़ की समिधाओं को खीर तथा घी के साथ हवन करने से लक्ष्मी प्राप्त होती है ।

हुत्वा वेतस पत्राणि घृताक्तानि हुताशने ।
लक्षाधिपस्य पदवीं सार्वभौमं न संशयः ।।

वेत-पत्रों को घी में मिलाकर हवन करने से लक्ष्मी-पति की पदवी मिलती है ।

त्रिरात्रि पोषितः सम्यग् घृतं हुत्वा सहस्त्रशः ।
सहस्त्रं लाभमाप्नोति हुत्वाग्नौ खदिरै धनम् ।।

तीन रात उपवास करके अच्छी प्रकार से एक हजार घी की आहुति खदिर की समिधाओं से देने पर धन प्राप्त होता है ।

पलाशैः समिधैश्चैव घृताक्तानां हुताशने ।
सहस्त्र लाभमाप्नोति राहु सूर्य समागमे ।।

सूर्य-ग्रहण के अवसर पर पलाश की समिधाएँ घृत के साथ हवन करने से धन-लाभ होता है ।

हुत्वातु खदिरं वन्हौ घृताक्तं रक्त चन्दनम् ।
सहस्त्रं हेममाप्नोति राहुचन्द्र समागमे ।।

चन्द्रग्रहण के अवसर पर खदिर तथा रक्त चन्दन को घृत समेत हवन करने से धन प्राप्त होता है ।

श्री कामस्तु तथापद्मै विल्वैः काञ्चन कामुकः ।

काञ्चन और कामिनी की इच्छा करने वाला कमल-पुष्प या बेल पत्रों के द्वारा हवन करे ।

रक्तोत्पलं शतं हुत्वा सप्ताहं हेम प्राप्नुयात् ।

लाल कमल के पुष्पों के हवन से धन प्राप्त होता है ।

शमी विल्व प्रलाशानामर्कस्य तु विशेषतः ।
पुष्पाणं समिधश्चैव हुत्वा हेममवाप्नुयात् ।।

शमी, विल्व, पलाश की समिधाएँ विशेषतः आक के पुष्प ही का हवन करने से धन -लाभ होता है ।

अरुणाब्जैस्त्रिमध्वक्तै जुहुयादयुतं ततः ।
महालक्ष्मीर्भवेत्तस्य षटमासान्न संशय ।।

लाल कमल और शहद की दस हजार आहुति देने से महीने में धन-लाभ होता है ।

अनिष्ट- निवारण के लिए

नाना प्रकार के संकट मनुष्य-जीवन में आते रहते हैं । शत्रुओं का आक्रमण, षडयन्त्र, द्वेष, मुकदमा, सर्प आदि का भय, चोर, डाकू-गुण्डों का आतंक, युद्ध, दैवी-प्रकोप, उपद्रव, गृह-कलह, विद्रोह आदि की घटनाएँ मन में विक्षोभ उत्पन्न करती हैं । इन विपरीत परिस्थितियों को समाप्त करने के लिए गायत्री-महामन्त्र की तमोगुणी शक्ति दुर्गा का प्रयोग किया जाता है । यह शक्ति मनुष्य का आत्मिक विकास तो नहीं करती पर असुविधाओं का निवारण करने में सहायक अवश्य होती है । कई साधक-तांत्रिक वाममार्गी उपचारों से इसी दुर्गा-शक्ति द्वारा दूसरों का अनिष्ट भी करते हैं , पर यह उचित नहीं । अपनी धर्मयुक्त रक्षा के लिए दुर्गा-शक्ति का सामयिक उपचार करना उचित है ।

दुर्गा गायत्री का मन्त्र यह है-

ॐ गिरजायै विद्महे, शिवप्रियायै धीमहि । तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ।

इस मन्त्र का उपचार प्रयोग इस प्रकार होते हैं ।

गायत्री चिन्तयेत्तत्र दीप्तानल समप्रभाम् ।
घातयन्ती त्रिशूलेन केशेष्वाक्षिप्य वैरिणम् ।।
एवं विधा च गायत्री जप्तव्या राज सत्तम ।
होतव्या च यथा शक्त्या सर्व काम समृद्धिदा ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रज्वलित अग्नि के समान आभा वाली गायत्री का चिन्तन करता हुआ ऐसा ध्यान करे कि शत्रु के केशों को पकड़ कर अपने त्रिशूल से उनका नाश कर रही है । इसी ध्यान में जप और हवन करने से शत्रुओं से रक्षा होती है ।

गो घृतेन सहस्त्रेण लोध्रेण जुहुयाद्यदि ।
चारागि मारुतोत्थानि भयानि न भवन्ति वै ।।

लोध को गौ घृत के साथ एक हजार आहुति देने से चोर, अग्नि, वायु आदि के उपद्रवों का भय दूर होता है ।

अश्वत्थ समिधो हुत्वा युद्धादौ जयमाप्नुयात् ।
अर्कम्य समिधो हुत्वा सर्वत्र विजयी भवेत् ।।

पीपल की समिधाओं के हवन से युद्ध में विजय प्राप्त होती है । आक की समिधाओं से हवन करने से सर्वत्र ही विजय होती है ।

सौवर्णे राजते वापि पात्र ताम्रमयेऽपिवा ।
क्षीर वृक्ष मयं वापि निवृणे मृन्मयेऽपिवि ।
सहस्त्रं पञ्च गव्येन हुत्वा सुज्वलितेऽनिले ।
क्षीर वृक्ष मयैः काष्ठैः शेषं सम्पादयेद्दनैः ।
अभिचार समुत्पन्ना कृत्या पापं च नश्यति ।।

सुवर्ण चाँदी, ताँबा के बने अथवा दूध वाले वृक्षों की लकड़ी से बने पात्र में पंचगव्य रखकर दुग्ध वाले वृक्षों की लकड़ियों से हवन करे । इस प्रकार अभिचार द्वारा उत्पन्न कृत्या (मारण प्रयोग की घात) शान्त होती है ।

एवं यः कुरुते राजा लक्ष मोहं यत व्रतः ।
न तस्य शत्रवः संख्ये अग्ने तिष्ठन्ति कर्हिचित् ।।

जो व्रत-पूर्वक गायत्री के एक लक्ष होम करता है उसके शत्रु, युद्ध-भूमि में उसके आगे कदापि नहीं ठहरते ।

धतूर विष वृक्षाक्ष भूरुहोत्थान्समिद्वरान ।
राजो तैलेन संलिप्तान् प्रथक्सप्त सहस्त्रकम् ।
जुहुयात् संयतो मन्त्री रिपूर्यमपुरं व्रजेत् ।

धतूरा, कुचिला तथा सरसों के तेल से युक्त समिधाओं से प्रथम सात हजार आहुति जितेन्द्रिय होकर दे, तो शत्रु यमपुर को पहुँच जाता है ।

सप्तरात्रं प्रजुहुयात् सिद्धार्थ स्नेह लौलितैः ।
आर्द्रवस्त्रो विष्टि काले मरीचैर्ममुमामना ।
निगृह्यते ज्वरेणरि प्रलयाग्नि समेन सः ।

सात रात तक सरसों के तेल से युक्त मिरचों द्वारा हवन करे । गीला वस्त्र धारण करके वर्षा काल में यह प्रयोग करे, ऐसा करने से शत्रु को प्रलयाग्नि सदृश्य ज्वर हो जाता है ।

अर्ध रात्रिपु बलिं चरुणा सर्व सिद्धिदा ।
कृत्या रोग भय द्रोह भूतादिन्नात्र संशयः ।।

आधी रात्रि में चरु बनाकर सिद्ध दायक बलि प्रदान करे, ऐसा करने से रोग, भय, द्रोह तथा भूत आदि का भय नहीं रहता ।

दुर्गा का आधार लेकर ही दूसरों को हानि पहुँचाने वाले तांत्रिक-हवन किये जाते हैं । ऐसे प्रयोगों से कर्ता का भी कालान्तर में अनिष्ट ही होता है । इसलिए ऐसे प्रयोगों के सम्बन्ध में उपेक्षा करना ही उचित है ।

शमी समिद्धः शाम्यति भूत रोग ग्रहादयः ।

शमी की समिधाओं से हवन करने पर भूत रोग एवं ग्रहादि की शान्ति होती है ।

आर्द्राभिः क्षीर वृक्षस्य समिद्भिः जुहुयात् द्विजः ।
जुहुयाच्छकलैर्वापि भूत रोगादि शान्तये ।

दूध वाले वृक्षों की गीली समिधाओं से हवन करने पर बुरी ग्रह दशा की शान्ति होती है । भूत रोग आदि की शान्ति के लिए सम्पूर्ण प्रकार की समिधाओं से हवन करना चाहिए ।

अभिमन्त्र्य शतं भरमन्मसद् भूतादि शान्तये ।
शिरसा धारयेद् भस्म मंत्रयित्वा तदित्यृचा ।।

हवन की भस्म को गायत्री मन्त्र से अभिमन्त्रित करके लगाने से भूत-प्रेत की शान्ति होती है ।

भूत-प्रेत-पिशाच, ब्रह्मराक्षस आदि के उपद्रवों से ग्रस्त रोगियों के लिए दुर्गा-गायत्री का प्रयोग करने से रोगी का उन दुष्टों से सरलता पूर्वक पीछा छूट जाता है ।

इन पंक्तियों में कुछ थोड़े से ही प्रयोग वर्णित हैं । इनके अतिरिक्त गायत्री महामंत्र एवं उसके अन्तर्गत २४ गायत्रियों के प्रयोग द्वारा अनेकों प्रकार के हवन होते हैं । वेद-मन्त्रों एवं तांत्रिक कौल मन्त्रों के द्वारा विस्तृत विधान वाले स्वतन्त्र यज्ञ इनसे प्रथक हैं । इन उपरोक्त प्रयोगों में दूध वाले वृक्षों की समिधाओं का मधुत्रय (दूध, दही, घृत) की आहुतियों का प्रयोग प्रायः सभी प्रयोजनों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बार-बार आया है । इससे कुछ भ्रम में पड़ने की आवश्यकता नहीं है । इनमें उन वस्तुओं को लाने, परिमार्जित करने, प्राणवान बनाने की विधियाँ पृथक हैं, जिस विधि से इन वस्तुओं को प्रयुक्त किया जाता है वह वैसे ही गुण वाली बन जाती हैं । पानी में जैसा रंग डाला जाय, वह उसी रंग का हो जाता है । उसी प्रकार यह वस्तुएँ यद्यपि साधारण हैं और विविध प्रयोगों में आती हैं, इनको जिस विधि से प्रयुक्त किया जाता है, तदनुसार ही उनकी शक्ति और सामर्थ्य बनती एवं बढ़ती-घटती है ।

सिद्धि और सफलता के लिए

जैसे एक ही व्यक्ति पहलवान, चिकित्सक, व्यापारी, सांसद आदि हो सकता है, उसी प्रकार एक ही भगवान अनेक देवताओं के रूप में प्रतिपादित किया जा सकता है । जिस प्रकार विष्णु सहस्र नाम में एक ही भगवान् के हजार नाम बताये गये हैं । वही बात देवताओं के सम्बन्ध में भी समझी जानी चाहिए । विष्णु हजार नहीं हो सकते , उनके नाम ही हजार हैं । उसी प्रकार परम सत्ता एक ही है । विभिन्न प्रयोजनों के लिए उनके अनेक नाम रखे जा सकते हैं । देव शक्ति के अनुकूलन में एक ही सबसे बड़ा तथ्य है कि वह पात्रता चाहता है । पात्रता के बिना मात्र मनुहार या उपहार के सहारे उसे कोई अपना वशवर्ती नहीं बना सकता । यज्ञ इसी प्रक्रिया का नाम है । जिसके माध्यम से शिक्षा और प्रेरणा ग्रहण करके मनुष्य सत्पात्र बनता है । जिस प्रकार गहरे गड्ढे में वर्षा का जल उसी मात्रा में भर जाता है, उसी प्रकार मनुष्य के भीतर सत्प्रवृत्तियाँ गहराई से भरने पर दैवी अनुग्रह अपने आप बरसने लगता है । वृक्षों की आकर्षण-शक्ति से बादल अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में बरसने लगते हैं । उसी प्रकार भगवान् से अनुकम्पा माँगनी नहीं पड़ती । माता-पिता से छोटा बालक अपनी आवश्यकता या फरियाद कहाँ व्यक्त करता है । उसी प्रकार भक्त भी भगवान् से अपनी भौतिक या आत्मिक आवश्यकताएँ न तो समझ पाया है और न कह पाता है । कहना भी चाहे तो उसकी सुनवाई नहीं होती । क्योंकि जब तक जो व्यक्ति जिस अनुदान का सदुपयोग न कर पाये, तब तक उस पर उन वैभवों को लाद देने से मनुष्य का अहंकार और अनाचार बढ़ता है । इसलिए भगवान के दरबार में किसी को कोई महत्वपूर्ण वस्तु देने की एक ही शर्त है, कि वह उसका सदुपयोग कर पायेगा या नहीं । दुरुपयोग में तो उलटी विपत्ति ही बढ़ती है । सदुपयोग करने न करने के सम्बन्ध में किसी व्यक्ति के भावी आश्वासनों पर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता । विवाह के समय पर वर-वधू आपस में प्रतिज्ञाएँ करते हैं, पर दिन बीतने नहीं पाते कि उन्हें भुला देते हैं और अपनी पुरानी आदतों के अनुरूप उद्धत आचरण करने लगते हैं । ईश्वर को विश्वास दिलाने के लिए अपने क्रिया-कलाप एवं वर्तमान रीति-नीति ही सन्तोष दे सकती है ।

यज्ञ एक कृत्य भी है और एक दर्शन भी । दृश्य के माध्यम से भावनाएँ उभारने की परम्परा पुरानी है । चित्रों और प्रतिमाओं का निर्माण इसी निमित्त हुआ है । यज्ञ-प्रक्रिया भी एक कृत्य है, जिसका तत्वज्ञान हृदयंगम करने पर मनुष्य को पवित्र, प्रखर और परमार्थ परायण बनना पड़ता है । इस दिशा में जितनी प्रगति होती जाती है, उसी अनुपात से भगवान् की अनुकम्पा मनुष्य पर बरसने लगती है ।

गीताकार ने कहा है, कि तुम देवताओं की भावना करो । देवता तुम्हारी भावना पूरी करेंगे । यहाँ भावना में अर्थ आवश्यकता नहीं है । देव तत्वों को किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं । भगवान् के पास क्या नहीं है ? उसे किससे क्या चाहिए यहाँ अभिप्राय: हवन-शाकल्य-घृत आदि देने में नहीं, वरन् यह है कि वे किससे क्या चाहते हैं और मिल जाने पर वे किस प्रकार बलिष्ठ बनते और सहयोग प्रदान करते हैं । आग की आवश्यकता ईंधन की है, जहाँ ईंधन मिला नहीं कि अग्नि प्रज्ज्वलित हुई नहीं । उसी प्रकार मनुष्य पवित्र और प्रखर बना नहीं कि उस पर दैव अनुकम्पा अनायास ही बरसी नहीं । संसार भर के महापुरुष इसी एक तथ्य के उदाहरण हैं । उन्होंने सर्वप्रथम अपने चिन्तन, चरित्र और व्यवहार को उच्चस्तरीय बनाया । यह प्रथम सोपान पूरा होते ही प्रामाणिकता सिद्ध होती है । लोक-श्रद्धा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उमड़ती है । सब ओर से सहयोग का माहौल बनता है और उस आधार पर अप्रत्याशित दैवी सहायता भी मिलने लगती है । इस तथ्य की साक्षी में हम किसी भी महापुरुष का जीवन क्रम उलट-पुलट कर देखते हैं । मात्र याचना में किसे क्या मिलता है । भिखारी को सम्पन्न लोग भी पाई-पैसा ही देते हैं, उनके नाम अपनी जमीन-जायदाद थोड़े ही कर देते हैं । सिद्धियाँ भगवान की बेटियाँ हैं, उन्हें वे उसी के हाथों सौंपते हैं, जिनसे सदुपयोग की, परमार्थ प्रयोजनों में लगाये जाने का विश्वास हो । हेय और हीन व्यक्ति को अपनी सुयोग्य कन्या कोई नहीं सौंपता । देवता भी यही करते हैं, वे हर किसी की मनोकामना पूरी नहीं करते । यज्ञीय जीवन जीने वाले, जीवन में यज्ञ परम्पराओं का समावेश करने वाले ही सिद्धि-चमत्कारों का अनुदान प्राप्त करने के अधिकारी माने जाते हैं और उन्हें ही वे मिलती भी हैं ।

यज्ञ द्वारा देव-शक्तियों का आह्वान, अनुमोदन एवं बदले में उनके अनुग्रह की प्राप्ति का शास्त्रकारों ने पूरा जोर देते हुए प्रतिपादन किया है । यहाँ देवताओं से आशय ईश्वर की दिव्य शक्तियों से है । ईश्वर एक है, उसको जिस सामर्थ्य के साथ सम्बन्ध बनाना होता है, तब उसे उसी रूप में ध्यान-धारणा क्षेत्र में उतारते हैं । श्रद्धा-विश्वास के अनुरूप वे प्रतिफल भी देती हैं ।

असफलता, निराशा, चिन्ता, और खिन्नता उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करके सफलता का आशाजनक वातावरण उत्पन्न करने की स्थिति उत्पन्न करने में सरस्वती शक्ति का विशेष महत्व है । बुद्धि-वृद्धि, अभीष्ट वस्तुओं की प्राप्ति, सुख-शान्ति, परीक्षा में उत्तीर्णता आदि के लिए सरस्वती गायत्री का प्रयोग किया जाता है । मन्त्र यह है:-

ॐ सरस्वत्यै विद्महे, ब्रह्म पुत्र्यै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

इस मन्त्र के साथ किस वस्तुओं के हवन का क्या परिणाम होता है,इसका विवरण इस प्रकार है ।

पयोहुत्वाप्नु यान्मेधामाज्यं बुद्धिमवाप्नुयात् ।
अभिमंत्रयपि वेद् ब्राह्मं रसं मेधामवाप्नुयात् ।।

दूध का हवन करने से तथा घृत की आहुतियाँ देने से बुद्धि-वृद्धि होती है । मन्त्रोच्चारण करते हुए ब्राह्मी के रस का पान करने से चिर ग्राहिणी बुद्धि होती है ।

घृतस्याहुति लक्षेण सर्वान्कामानवाप्नुयात् ।
पञ्च गव्याशनो लक्षं जपेज्जाति स्मृतिर्भवेत् ।।

एक लाख घी की आहुति देने से सब कामों की सिद्धि होती है । पञ्चगव्य पीकर एक लाख जप करने से स्मरण-शक्ति की वृद्धि होती है ।

अश्वत्थ समिधो हुत्वा युद्धादौ जयमाप्नुयात् ।
अर्कस्य समिधो हुत्वा सर्वत्र विजयी भवेत् ।।

पीपल की समिधाओं से हवन करने पर युद्ध में विजय प्राप्त होती है । आक की समिधाओं से हवन करने पर सर्वत्र ही विजय होती है ।

तिलानां लक्ष होमेन घृताक्तानां हुताशने ।
सर्वकाम समृद्धात्मा परां सिद्धिमवाप्नुयात् ।।

घी मिलाकर तिलों से एक लाख आहुतियों का हवन करने से सब कामों की सफलता होती है तथा परम सिद्धि प्राप्त होती है ।

गुड्च्याः पर्व विच्छिन्नः पयोक्ताजुहुयात् द्विजः ।
एवं मृत्युञ्जयो होमः सर्व व्याधि विनाशनः ।।

जो द्विज गिलोय की समिधाओं को दूध में डुबोकर हवन करता है, वह सम्पूर्ण बाधाओं से विनिर्मुक्त होता है ।

शतं शतं च समाहं हुत्वाश्रियमवाप्नुयात् ।
लाजैस्तु मधुरोपेतैर्होमे कन्यामवाप्नुयात् ।
अनेन विधिना कन्या वरमाप्नोति वाञ्छितम् ।

मधुत्रय (दूध, दही, घी) मिलाकर लाजा (खील) से सात दिन तक हवन करने से वर को सुन्दर कन्या प्राप्त होती है और इसी विधि से करने पर कन्या को वर प्राप्त होता है ।

हुतादेवी विशेषेण सर्व काम प्रदायिनी ।

गायत्री की सरस्वती शक्ति हवन करने से सर्व कामनाएँ पूर्ण करती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ द्वारा विश्व-शान्ति की संभावना

मनुज देह से अशुद्ध वायु, पसीना, मल-मूत्र आदि निकलते रहने के कारण वायु-मण्डल दूषित होता रहता है, इसके अतिरिक्त मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये नाना प्रकार के पदार्थों तथा धूम्र व भाप आदि के यन्त्रों से वायु जल में विकृति उत्पन्न करता रहता है, जिससे अनेक रोगों की वृद्धि होती है, वहीं दूषित जल सूर्य के द्वारा आहरण होकर फिर वर्षा रूप में हमें प्राप्त होता है । यज्ञ करने से वायु हल्की होकर ऊपर उठती है, वायु की गति में तीव्रता आ जाती है, इस कारण पहली अशुद्ध वायु बाहर निकल जाती है और उसके स्थान पर बाहर की शुद्ध वायु प्रवेश करती है । अग्नि में भेदक शक्ति होने के कारण इसमें डाला हुआ घृत तथा अनेक प्रकार की ओषध मिष्ट पदार्थ छिन्न-भिन्न होकर सूक्ष्म रूप में वायु के साथ दूर-दूर पहुँच जाते हैं । हमारी नासिका के द्वारा यह विज्ञान सदैव प्रत्यक्ष होता रहता है ।

महर्षि यास्क ने वेदार्थ प्रक्रिया के अनुपम ग्रन्थ निरुक्त में वेदार्थ की महत्ता सिद्ध करते हुए **"अर्थं वाचः पुष्पफलमाहु-र्याज्ञदैवतेपुष्पफले दैवताध्यात्मे वा"** *-अ० १ खण्ड २०* । कहकर यज्ञ-ज्ञान को वेद का पुष्प प्रतिपादित किया है और निरुक्त में वेद का अर्थ करते हुए यज्ञ की हवि व सोम से इन्द्र को तृप्त करते हुए वर्षा की याचना की है । शतपथ ब्राह्मण में **"अग्नेर्वै धूमो जायते धूमादभ्रमभ्राद्वृष्टिरेताजायको तस्मादाह तपोजाः"** ५-३-यज्ञाग्नि से जो धुआँ उत्पन्न होता है, वह वनस्पतियों के रस में मिश्रित होकर उनका शोषण करता हुआ ऊपर जाता है और सूर्य के द्वारा आकर्षित जल में मिलकर ऋतु के अनुकूल वृष्टि होने में निमित्त बनता है । भगवान् कृष्ण ने गीता में भी कहा है **"यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्भवः"** अर्थात् यज्ञ से मेघ बनते हैं और यज्ञ कर्म से प्रादुर्भूत होता है ।

अग्नि से प्राणिमात्र का जो उपकार होता है , उसका प्रतिफल प्राप्त करने की आकांक्षा याजक को अन्य प्राणियों से नहीं होती है । यह एक ऐसा पक्षपातरहित शत्रु, मित्र के लिये किया जाने वाला दान है, जिसका कि समान रूप में विभाग होता है याजक यह किसी को भी उपालम्भ नहीं दे सकता कि मैंने तुम्हारे साथ यह उपकार किया है, इसका यह प्रत्युपकार तुम्हें मेरे साथ करना चाहिए- इत्यादि । श्रौत सूत्र मीमांसा-ब्राह्मणादि ग्रन्थों में अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त जो यागों का विस्तृत रूपेण निरूपण अनेक क्रियाकलापों के साथ किया गया है, उनमें भी **'स्वर्गकामो यजेते'** इत्यादि वचन तथा अदृष्ट फल के वर्णन में मूलभूत यही सिद्धान्त है, कि यज्ञ करने से अपने कर्तव्य का पालन करते हुए प्राणिमात्र का जो अप्रत्याशित उपकार होता है, उससे स्वर्ग (सुख विशेष) जिसे मीमांसा के भाष्यकार शबर स्वामी ने विस्तृत शास्त्रार्थ लिखते हुए प्रतिपादित किया है **'तस्मात्प्रीतिसाधने स्वर्ग शब्दः'** *-अ० ६ । १* । की प्राप्ति होती है । मनुष्य ने अपने शरीर तथा अन्यान्य प्रयोगों से जलवायु को दूषित किया, अतः उस पाप का प्रायश्चित्त भी तो करना आवश्यक है । इसके अतिरिक्त प्रभु ने मानव के लिये इस महती सृष्टि की रचना करके मनुष्य को दूसरों के प्रति उपकार करने का आदेश दिया है, जिसके लिए यज्ञ सबसे बड़ा और सरलतम साधन है । योगिराज कृष्ण ने यज्ञ का महत्व दर्शाते हुए उपदेश दिया **'यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैःभुञ्जनो तेत्वधं पापाये पचन्त्यात्मकारणात्'** *गीता अ० ३ । १३* । यज्ञ करने के उपरान्त अवशिष्ट पदार्थों का उपयोग करने वाला सब पापों से छूट जाता है । वे लोग पाप खाते हैं, जो केवल अपना ही पेट भरते हैं ।

मानव का मन अतीव चंचल है । अतः प्रभु का चिन्तन करते हुए भी इधर-उधर दौड़ने का प्रयत्न करता है, ऐसे अस्थिर मन को अनेक क्रियाकलापों से युक्त यज्ञकर्म में जो कि अध्यात्मरूपी फल का देने वाला पुष्प है, फँसा दिया जाता है, मन्त्रोच्चारण से, तदर्थ भावना से व अग्नि की प्रदीप्त ज्वाला से कुछ सोचने-विचारने की प्रेरणा मिलती है । यज्ञमय प्रभु की सृष्टि को देखकर कुछ परोपकार करने की सुध आती है, मन को शान्ति मिलती है, हृदय में आनन्द का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संचार होता है, स्वार्थ-भावना मिटकर परमार्थ में दीन-दुखियों-अनाथों के त्राण में कल्याण प्रतीत होता है । आरोग्य-सुख-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है । अथर्ववेद में एक मन्त्र आता है ।

''ओ३म् प्रातःप्रातगृहंपतिर्नोऽग्निः सायं सायं सौमन सस्य दाता वसोर्वसोर्वसुदान एधीकन्धानास्वा ।''

ऋ० शतहमाधेमकाण्ड १९

अर्थात् प्रातः सायं अग्नि को प्रज्वलित करके यज्ञ करते हुए हम १०० वर्ष तक धनादि पदार्थों को प्राप्त करके पुष्टि शरीर वाले बने रहें ।

एक समय था जब भारत के सम्राट घोषणा किया करते थे ।

न मे स्तेनोजनपद न कदर्यो न मद्यपः ।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वेरी स्वैरिणी कुतः ।।

छान्दोग्य प्र० अनु० ५ खं० ११ प्रवा० ५ ।

कैकय पुत्र महाराज अश्वपति ने ऋषियों को सम्बोधित करते हुए कहा, हे महा श्रोत्रियो ! मेरे राज्य में कोई चोर-कृपण-शराबी विद्यमान नहीं है, ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं, जो प्रतिदिन यज्ञ न करता हो, मेरे राष्ट्र में कोई भी व्यक्ति व्यभिचारी नहीं है । अहो ! वह कैसा स्वर्णमय युग रहा होगा , जब कि घर-घर प्रातःकाल ही मन्त्रोच्चारण की ध्वनि से आकाश गुंजायमान हो जाता होगा । यज्ञ की सुगन्धि से वायुमण्डल सुवासित होकर प्राणिमात्र को आह्लादित करता होगा, फिर भला चोरी-जारी आधि-व्याधियाँ वहाँ कैसे ठहर सकती होंगी । आज मानव प्रायिक रूपेण चिन्ता चिताग्रस्त नाना रोग पीड़ित पके आम जैसा पीतवर्ण स्वार्थ भावना परिपूर्ण छल-कपट ईर्ष्या-द्वेष से दूषित, घोर अशान्ति के वातावरण से आवृत न जाने किधर दौड़ा चला जा रहा है । ग्राम-नगर, हाट-बाट में बालक, जवान, बूढ़े शिक्षित-अशिक्षित सब हुक्का, बीड़ी, सिगरेट के धुएँ से प्रातः सायं ही नहीं, उठते, बैठते, जागते, सोते भी अपने आप व अन्य जनों को भी तृप्त करने में सुख मान रहे हैं, इस धूम्रपान में करोड़ों रुपये का व्यय हो रहा है । हारमोनियम बजाकर नाच-गाकर बीड़ी का प्रचार किया जा रहा है, मानों आज का यही धर्म, प्रचार है । दूध का स्थान चाय ने ले लिया, घी से अधिक डालडा में शक्ति मानी जाने लगी, सोमरस का आनन्द शराब में आने लगा । ऐसा मालूम पड़ता है कि मानों कलियुग में यही हवन आवश्यक हो । जहाँ देखो वैद्यराजों- डाक्टर साहिबों की दुकानों पर हाथों में शीशी थामे प्रातःकाल ही धरना दिये अधिक संख्या में व्यक्ति विराजमान दीखेंगे । आज के युग में जिससे पूछो, उसे कोई न कोई रोग अवश्य होगा । तपैदिक जैसे संक्रामक रोग से आक्रान्त रोगियों की संख्या बढ़ती चली जा रही है । नये-नये इंजैक्शनों का आविष्कार हो रहा है, किन्तु मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की, वाली उक्ति चरितार्थ हो रही है । वायुशुद्धि की ओर किसी का ध्यान नहीं जा रहा है । नये-नये आविष्कारों इंजैक्शनों के स्थान पर यदि आविष्कारों के आविष्कार विज्ञान-पूर्ण यज्ञ का प्रचार किया जाये, स्वास्थ्य विभाग-नगरपालिकाएँ आदि संस्थायें इस कार्य में रुचि दिखलाएँ तो जनता जनार्दन का कल्याण हो जाये । वेद-शास्त्रों को मानने वाले व्यक्ति यज्ञ-हवन को मानते ही हैं मुसलमान भी लोबान जलाते हैं, पारसी अग्निहोत्र में अत्यन्त श्रद्धा रखते हैं, बौद्ध-ईसाई आदि भी धूप जलाने में बुरा नहीं मानते । आवश्यकता इसके प्रचार की है, इसमें देशकाल , जाति-पाँति का भेद नहीं । जो भी प्राणी श्वास लेता है उसे वायु की प्रतिक्षण अपेक्षा है, मानव मात्र को शुद्ध वायु चाहिए । रोगी कोई बनना नहीं चाहता । अतः यदि रोगों से निवृत्त होकर शरीर को पुष्ट बनाना है, ठीक समय पर वृष्टि के द्वारा उदर-पूर्ति के लिये शुद्ध अन्नादि पदार्थ प्राप्त करने की अभिलाषा है, स्वार्थ-भाव-छल-कपट, ईर्ष्या-द्वेष, घूंस-खोरी, चोर-बाजारी दूर कर परोपकार करके मानवता का प्रसार करने की उत्कंठा है, आत्मिक शान्ति प्राप्त कर दुःख-दारिद्रय से रहित होकर शाश्वत सुख पाने की आवश्यकता है, तो-

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
कामये दुःखतप्तानाम् प्राणिनामार्त्तनाशनम् ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का पाठ करते हुए दुखियों का दुःख दूर करने के लिए इस भौतिकाग्नि में यज्ञ करते हुए अपने जीवन को यज्ञमय बनाना होगा, तब "**अयन्तइध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्ववर्धस्व चेद्धवर्धय**" यह आत्मा उस परमपिता परमात्मा की प्रदीप्ति से तेजोमय होकर संसार का कल्याण करने में रत हो जायगी । परमार्थ ही स्वार्थ बन जायगा, इस प्रकार जब मानवमात्र तेजोमय हो जायगा, यज्ञमय भगवान् का आशीर्वाद प्राप्त होगा, लोक का कल्याण हो जायेगा और सब एक स्वर से कह उठेंगे '**यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्मः ।**'

अभी जो मनुष्य-जाति नाना प्रकार के अभावों कष्टों, चिन्ताओं, पीड़ाओं, भयों, उलझनों एवं आवेशों से ग्रसित हो रही है । व्यक्तिगत रूप से तथा सामूहिक जीवन में सभी कोई परेशान है । घर-घर में नरक विद्यमान है । समाज का संगठन-अनैतिक तत्वों की भरमार से छिन्न-भिन्न हो रहा है । राजनैतिक क्षेत्र ऐसा विषैला हो रहा है, अणु बमों से कभी भी प्रलय उपस्थित करके चिरसंचित मानव सभ्यता भस्म हो सकती है । इस प्रकार की विपन्न स्थिति को दूर करने के लिए अनेक प्रकार के प्रत्यक्ष प्रयत्न करने पड़ेंगे, साथ ही आध्यात्मिक उपचारों की भी उपेक्षा न की जा सकेगी । हमें यह भली प्रकार समझ लेना चाहिए, कि केवल बाह्य प्रयत्नों से ही सब कुछ नहीं हो जाता, वातावरण बदलने और युग पलटने के लिए कुछ महत्वपूर्ण सूक्ष्म प्रक्रियाओं की भी आवश्यकता होती है । इसके बिना सारी भाग-दौड़ अधूरी एवं असफल ही रहती है । परिस्थितियों का निर्माण करने वाली अनेक सूक्ष्म प्रक्रियाएँ हैं, उनमें यज्ञ का महत्व सर्वोपरि है ।

प्राचीनकाल में भारत के भौतिक, आध्यात्मिक विज्ञान का मध्य बिन्दु, यज्ञ रहा ही है । यज्ञ द्वारा मानसिक और आध्यात्मिक त्रुटियों का निवारण, अनन्त ऋद्धि सिद्धियाँ तथा जीवन मुक्ति सरीखी पूर्णतायें जैसे लाभ ही प्राप्त होते हैं । साथ ही अगणित भौतिक प्रयोजनों की पूर्ति उससे होती है । मनुष्य के स्वभावों और चरित्रों का निर्माण, शरीरों को रोग मुक्त और पुष्ट करने की प्रक्रिया, अनेक अभावों की पूर्ति, वातावरण में सद्भावना के तत्वों के वृद्धि, वृक्ष-वनस्पति, पशु, अन्न आदि में प्राण-तत्व की अधिकता, अमृतमयी वर्षा आदि यज्ञ के अगणित लाभ सर्व विदित हैं । इसके अतिरिक्त प्राचीन काल में यज्ञ द्वारा युद्ध में काम देने वाले दिव्य अस्त्र, अनुकूलता को बढ़ाने वाले और प्रतिकूलता को घटाने वाले तत्व-यज्ञ की अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं आध्यात्म विज्ञान की प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न किये जाते थे । खेद है, कि आज वह जीवन-संचारणी यज्ञ-विद्या लुप्त प्राय हो गई और हम उन अनन्त शक्ति स्रोतों का लाभ उठाने से वंचित हो गये ।

यज्ञ-विद्या की सर्वाङ्गपूर्ण खोज करने के लिए अभी बहुत कष्ट साध्य श्रम करने की आवश्यकता होगी । फिर भी जो कुछ उपलब्ध है, उसका ठीक प्रकार उपयोग किया जा सके तो वह भी इतना महान है कि उससे जनकल्याण एवं विश्वशांति जैसे सुखद सत्परिणाम उपलब्ध हो सकते हैं । उज्ज्वल भविष्य का स्वप्न साकार हो सकता है ।

***

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विश्व-कल्पतरु यज्ञ

शास्त्रों के परिशीलन से यह विदित होता है कि सृष्टि के प्रारम्भ में सर्वव्यापक, सर्वाधार, सर्वज्ञ, विराट् पुरुषसंज्ञक परमात्मतत्त्व से आज्य, समित्, इध्म, हवि, ग्राम्य-आरण्य पशु, अश्व, गौ, अजादि समस्त यज्ञ-साधक सामग्री, यज्ञविधि बोधक ऋगादि वेद तथा यज्ञ सम्पादक ब्राह्मणादि वर्णों का प्रादुर्भाव हुआ और देवगण, साध्यगण, ऋषिगण आदि ने इनकी सहायता से यज्ञ पुरुष भगवान् का यजन किया । यही सर्वप्रथम धर्म हुआ और इसी का अवलम्बन करके उन्होंने अपने अभीष्ट स्वर्गादि की प्राप्ति की -

''यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । तेहनाकं महिमानःसचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः'' ।।

-पुरुष सूक्त

भारतीय प्राचीन समस्त साहित्य एक स्वर से यज्ञ के महत्त्व की, उपादेयता की, अनिवार्यता की साक्षी दे रहा है । प्रधानतया मनुष्य की दो ही अभिलाषाएँ होती हैं- एक इष्ट-प्राप्ति और दूसरी अनिष्ट निवृत्ति । इन्हीं दो में समस्त अभ्युदय एवं निः श्रेयस का समावेश हो जाता है । अभ्युदय लौकिक और पारलौकिक भेद से दो प्रकार का है । स्त्री-पुत्र, धन-धान्य, ऐश्वर्य, राज्य, साम्राज्यादि की प्राप्ति लौकिक अभ्युदय और स्वर्गसुख, ऐन्द्र, ब्राह्मपद आदि का सम्पादन पारलौकिक अभ्युदय है । इन दोनों अभ्युदयों तथा अनन्त अखंड आनन्दस्वरूप निःश्रेयस की उपलब्धि का अव्यर्थ एवं एकमात्र कारण यज्ञ ही बतलाया गया है ।

प्रत्यक्षानुमान मूलक लौकिक प्रयत्नों से भी जिन अभिलषित वस्तुओं की प्राप्ति नहीं हो सकती, उनकी प्राप्ति तथा वैसे ही प्रयत्नों से जिन अनिष्टों की निवृत्ति कथमपि प्राणी नहीं कर सकता, वैसे अनिष्टों के परिहार का मार्ग वेद बतलाते हैं । प्रत्यक्ष तथा अनुमान द्वारा जिन वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता, ऐसे तत्त्वों का ही ज्ञान वेदों से होता है । यही वेदों का महत्त्व एवं उपयोगिता है ।

मन्त्र- ब्राह्मणात्मक अखिल वेदराशि प्रायः विविध यज्ञों का ही निरूपण करती है । वेदों के उपबृंहक समस्त श्रौत-स्मार्त-धर्मसूत्र, स्मृतियाँ, इतिहास, पुराण, तन्त्र एवं आगम ग्रन्थ भी विविध यज्ञों का ही प्रकाशन कर रहे हैं । शास्त्रों के इन प्रयत्नों से यही अवगत हो रहा है कि प्राणियों के सकल कल्याण के एकमात्र साधन यज्ञ ही हैं । यज्ञों के अवलम्बन से समस्त सुख शान्ति, ऐश्वर्य की प्राप्ति एवं दुःख, अशान्ति, दारिद्र्य आदि का निवारण होता है और यज्ञों की उपेक्षा से ही प्राणी अपने अभीष्ट सुखादि से वञ्चित होकर अनन्त दुःखों का भाजन बनता है ।

पारलौकिक अभ्युदय की चर्चा घड़ी भर के लिए छोड़ भी दें तो भी लौकिक अभ्युदय के लिए भी बिना यज्ञ की सहायता के काम नहीं चल सकता । कई बार मनुष्य के सामने ऐसी परिस्थितियाँ उपस्थित हो जाती हैं, कि लाख लौकिक प्रयत्न करने पर भी वह अपना अभीष्ट नहीं पाता अथवा अथक लौकिक उपायों के अवलम्बन करने पर भी कष्ट से उसका पिण्ड नहीं छूटता । ऐसी परिस्थिति में शास्त्रों से उसे आश्वासन मिलता है कि आओ, अब हमारे बतलाये मार्ग का आश्रय करो, उससे तुम्हारा अभीष्ट अवश्य सिद्ध होगा । यह असंख्य प्राणियों ने भी अनन्त बार अनुभव किया है कि वेद शास्त्रोक्त कर्मरूप यज्ञों का सहारा लेने से मनुष्य कष्ट से मुक्त होकर सुख-शान्ति का भागी बना है ।

मनुष्य यदि स्व-स्व वर्णानुसार स्वाधिकारानुरूप अपने लिए विहित कर्मरूप यज्ञों के अनुष्ठान में आरूढ़ रहे, तो सहसा उसे दुःख दारिद्र्यादि के सङ्कट में पड़ना ही न पड़े । यज्ञों की उपेक्षा के ही परिणाम स्वरूप विभिन्न विपत्तियों का प्राणी को सामना करना पड़ता है । रामराज्य में, धर्मराज्य में जब कि **नानाहिताग्निर्नायज्वा** के अनुसार कोई द्विजाति यज्ञयागादि स्वकर्म-धर्म के आचरण से विमुख नहीं थी, तब **'दैहिक दैविक भौतिक तापा, रामराज्य काहूँ नहिं व्यापा'** के अनुसार सभी लोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विविध तापों से रहित एवं सर्व प्रकार से सुखी एवं शान्त थे । समय- समय पर आवश्यकतानुसार मेघ वृष्टि करते थे, विपुल मात्रा में अन्न फल-फूलादि उत्पन्न होते थे, प्राणिमात्र सन्तुष्ट एवं प्रसन्न थे । यह तो मानना ही पड़ेगा कि कभी- कभी जब लोग चाहते हैं, कि वृष्टि हो परन्तु नहीं होती, कभी न चाहने पर भी होती है । कभी जितनी चाहता है, उतनी नहीं होती, कभी आवश्यकता से अधिक होती है । फलतः चाहने पर भी मनचाही फसल नहीं पैदा होती । कभी अवर्षण से, कभी अकालवर्षण से, कभी खण्ड वृष्टि से, कभी अतिवृष्टि से फसल विनष्ट हो जाती है । पैदा हुई भी, तो कभी ओले गिरने से, कभी पाले से, कभी चूहे, खरगोश, तोते, बन्जर, टिड्डी आदि के भयानक आक्रमणों से तैयार फसल भी देखते - देखते साफ हो जाती है । कभी खत्तियों से भरा हुआ अन्न तथा तृण का संचय भी बाढ़, अग्निकांड या कीड़े-मकोड़ों के उत्पात से चौपट हो जाता है । मनुष्य इन सब उपद्रवों का आगमन हृदय से न चाहता हुआ भी उनका किंचित्मात्र भी प्रतिकार नहीं कर पाता, वह हाथ पर हाथ धरे बैठा हुआ टुकुर - टुकुर ताकता रहता है और कोई प्रबल शक्ति उसकी इच्छा, उसकी आशा के विरुद्ध उसकी सब सम्पत्ति को विनष्ट कर डालती है, संसार में हाहाकार मच जाता है, दुर्भिक्ष के बादल मँडराते हुए विश्व में विभीषिका उत्पन्न करते हैं । मनुष्य के सब प्रयत्न, सब बुद्धिमानी, सब हेकड़ी निरर्थक हो जाती है ।

ऐसा क्यों होता है ? कौन करता है ? इसका उत्तर आधुनिक विज्ञान के पास भी नहीं है । प्रकृतिकोप के आगे आज के विज्ञान के सभी आविष्कार निष्फल से रह जाते हैं, जिन पर कि आज के युग के मानव को बड़ा गर्व है , किन्तु वह गर्व किसी अनन्त शक्ति सम्पन्न की एक सहज लीला के आगे चकनाचूर हो जाता है । आज यह सब दृश्य जगत् में आँखे खोलकर देखने वालों को अनुभूत हो रहा है । शास्त्र इस विषय में बतलाते हैं कि 'भाई! सृष्टिकर्ता प्रभु ने जब सृष्टि-रचना की थी, उसी समय तुम्हें उत्पन्न करके यह बतला दिया गया था कि समस्त विश्व की व्यवस्था ठीक तरह से चलाने, उसे कायम रखने एवं नियन्त्रित करने के लिए अदृश्य देवशक्ति का निर्माण किया गया है और उसे प्रसन्न कर अपना अभीष्ट सिद्ध करने के लिए उपाय-रूप में वेदशास्त्र द्वारा यज्ञों का प्राकट्य किया जा रहा है । यज्ञों द्वारा उन विविध शक्ति सम्पन्न देवों की सम्भावना करते रहने से, उन देवों की प्रसन्नता सम्पादित होगी और फलस्वरूप वे तुम्हें इष्ट भोग प्रदान करेंगे । इस तरह परस्पर आदान-प्रदान द्वारा उपकार करते हुए परम श्रेय को प्राप्त होंगे । देवों को यज्ञों द्वारा सन्तुष्ट किये बिना वस्तुओं का उपभोग करोगे, तो यह चोरी समझी जायगी और इसका दण्ड भोगना पड़ेगा-

सह यज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ।।
देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ।।
इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।
तैर्दत्तान प्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः ।।
यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्व किल्बिषैः ।
मुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ।।

- भगवद्गीता ३ / १० से १३

विश्व के प्राणियों को जीवनधारण करने के लिए उनके योग्य खाद्य पदार्थ तथा जल की अपेक्षा निर्विवाद है । खाद्य वस्तु का उत्पादन यथा समय उचित वर्षा पर निर्भर है । वर्षा भगवान् आदित्य की कृपा के अधीन है और आदित्य की अनुकूलता उक्त वचनों के अनुसार यज्ञ पर निर्भर है । अतः विश्व की स्थिति का एकमात्र कारण यज्ञ ही है । इसी को महर्षि मनु ने-

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्य मुपतिष्ठते ।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ।।

- गीता ३/७६

इन शब्दों में और भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में- **यज्ञाद्भवति पर्जन्यः** - ३/१४ इन शब्दों में कहा है । इससे सिद्ध है कि विश्वरक्षा के लिए यज्ञसंस्था का चालू रखना नितान्त आवश्यक एवं अनिवार्य है ।

केवल यही नही, जन्म से ही द्विजों पर देवऋण का भार रहता है, जिससे वह यज्ञों द्वारा ही मुक्त होते हैं । बिना यज्ञ द्वारा देवऋण का अपाकरण किये, प्राणी की न तो सद्गति हो सकती है, न वह मोक्ष का अधिकारी ही बन सकता है-

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऋणैस्त्रिभिर्द्विजो जातो देवर्षिपितृणां प्रभो ।
यज्ञाध्ययनपुत्रैस्तान्यनिस्तीर्य त्यजन् पतेत् ''

- भागवत १०/८४/३९

ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य मनो मोक्षे निवेशयेत् ।
अनपाकृत्य मोक्षंतु सेवमानोव प्रजत्यधः ।।

..... इष्टवा च शक्तितो यज्ञैर्मनो मोक्षे निवेशयेत् ।
..... अनिष्टवा चैव यज्ञैश्च मोक्षमिच्छन् व्रजत्यधः ।।

- मनु० ६ / ३५-३७

इस तरह लौकिक-पारलौकिक अभ्युदय एवं निःश्रेयस की सिद्धि में यज्ञों का बड़ा हाथ है । इतना ही नहीं, संसार में आज साम्यवाद, समाजवाद, अधिनायकवाद आदि विभिन्न मतवादों के कारण मनुष्यों में जो भयावह संघर्ष छिड़ा हुआ है, उसका भी समाधान अपने यहाँ के यज्ञवाद द्वारा ही हो सकता है । यह स्पष्ट है कि उक्त सभी वाद आर्थिक विषम समस्या के कारण उत्पन्न हुए हैं और विभिन्न गुट की स्थापना करके वादों की ओट में अधिकाधिक अर्थ सम्पादन के लिए छीना-झपटी चल रही है । इसी प्रवृत्ति को अपने यहाँ 'वित्तैषणा' कहा गया है । यही लोभ है, जिसे गीता में नरक के द्वारों में एक द्वार कहा गया है। यह वित्तैषणा व्यष्टि-समष्टि, सुख-शान्ति में विकट बाधक है । इसी के कारण निकट सम्बन्धियों तक में भीषण द्रोह होता देखा गया है । हमारे दूरदर्शी महर्षियों ने इस महा दोष की निवृत्ति के लिए यज्ञ-दान की योजना रखी है । यज्ञों में सर्व प्रथम भूमि को सम एवं उपयुक्त बनाने के लिए निम्नवर्ग के श्रमिक मजदूरों की, फिर यज्ञमण्डप निर्माण के लिए ईंट बनाने वालों, उसे ढोने वालों, मिट्टी खोदने वालों वेदी, कुण्ड आदि के निर्माण में मिस्त्रियों, लकड़ी के स्तम्भ, यूप आदि तथा यज्ञपात्रों के निर्माण में बढ़ई, लोहार आदि की, मण्डप को चटाई से आच्छादित करने के लिए चटाई बुनने वालों की, यज्ञ-सामग्री-निर्माणार्थ जुलाहे, कसेरे, सोनार, दर्जी, बनिये आदि की, यज्ञ में आने वाले अतिथि-अभ्यागतों की व्यवस्था के लिए विभिन्न कर्मचारियों-हज्जाम, पनभरों, रसोइयों परोसने वालों, सफाई करने वालों, पहरा देने वालों आदि की अपेक्षा स्पष्ट है । फिर यज्ञ-सम्पादनार्थ विद्वान् ऋत्विजों की आवश्यकता होती है। इस तरह यज्ञ में पारिश्रमिक, क्रय, दान, उपहार आदि रूपों से सञ्चित द्रव्य का जनता के सब वर्गों में विभाजन हो जाता है । यहाँ यज्ञकर्ता स्वयं अपनी इच्छा से प्रसन्नतापूर्वक द्रव्य का वितरण करता है, जिससे देने-पाने वाले दोनों को सन्तोष होता है । आधुनिक साम्यवाद-सिद्धान्त की तरह, वहाँ द्रव्य का, उसके स्वामी से, उसकी इच्छा के विरुद्ध, बलात अपहरण करने की योजना नहीं बनानी पड़ती । दुर्दैव से आज यज्ञों का अनुष्ठान अवरुद्ध होने से ही आर्थिक विषमता फैली है, उसको मिटाने का सौम्य उपाय एकमात्र यज्ञ ही है ।

पहले बड़े-बड़े राजा, सम्राट दिग्विजय द्वारा सम्पत्ति का अर्जन करके, यज्ञ द्वारा उसका पुनः निःशेष वितरण कर दिया करते थे । महाराज रघु ने दिग्विजय के उपरान्त विश्वजित् नामक यज्ञ में समस्त खजाना खाली कर दिया था । उनके पास धातु का एक पात्र तक नहीं बचा था । वरतन्तु शिष्य कौत्स के आने पर राजा ने उनका मिट्टी के अर्घ्यपात्र से सत्कार किया था । मर्यादापुरुषोत्तम भगवान रामचन्द्र के यज्ञों में इतना दान दिया गया कि माता सीता देवी के कण्ठ में सौभाग्यचिह्न मङ्गलसूत्र मात्र बच रहा था । कई उदारचेत्ता यजमान यज्ञ में ऋत्विजों को अपनी समस्त अधिकृत भूमि प्रदान कर देते थे । यज्ञ की सांगता के लिए वे निःस्पृह ऋत्विक् दान ले तो लेते थे, किन्तु बाद में उस सम्पत्ति को फिर वापस लौटा दिया करते थे । राजा भी निक्षेप समझ कर निरपेक्ष वृत्ति से उस लौटायी हुई भूमि की व्यवस्था करते थे । ऋत्विजों द्वारा त्यक्त सुवर्ण, रत्न आदि चल सम्पत्ति वहाँ ही पड़ी रहती थी, कोई भी परस्वापहरण के पाप का भय होने से उसको हाथ भी नहीं लगता था । महाराज मरुत के विश्वविख्यात यज्ञ में ऋत्विजों द्वारा इसी प्रकार छोड़ी हुई अपार सम्पत्ति का धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में महर्षियों की अनुमति से उपयोग किया गया था ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुण्यकार्य में यथाकिञ्चित् सहयोग करना भी पुण्य होता है, अतः यज्ञों में अधिकतर लोग बिना अर्थलिप्सा के ही सहायक बनकर यज्ञ कार्य के सम्पादन में भाग लेते थे । बड़े-बड़े शूर-वीर सम्मान्य विद्वान एवं मूर्धन्य लोग भी निरभिमान निर्दम्भ होकर यज्ञ सम्बन्धी साधारण से भी साधारण कार्य के सम्पादन का भार सहर्ष वहन किया करते थे । महाराज मरुत के यज्ञ में साक्षात् देव मरुद्गणों ने परोसने का कार्य किया था । महर्षि वेदव्यास ने मरुत यज्ञ के लिए जो प्रशंसा-पत्र प्रदान किया है, वह 'श्रीमद्भागवत' से उद्धत किया जा रहा है -

मरुत्तस्य यथा यज्ञो न तथान्यस्य कश्चन ।
सर्वहिरण्मयंत्वासीन् यत् किञ्चिच्चास्य शोभनम् ।।२७ ।।
अमाद्यदिन्द्रः सोमेन दक्षिणाभिद्विजातयः ।
मरुतः परिवेष्टारो विश्वेदेवाः सभासदः २८-९/२

धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में रसोई घर की व्यवस्था भीमसेन ने, खजाञ्ची का काम दुर्योधन ने, पूजा-सत्कार सहदेव ने, सामग्री जुटाने का कार्य नकुल ने, बड़ों की सेवा अर्जुन ने, पादप्रक्षालन करने का सत्कार्य श्रीकृष्ण ने, परोसने का भार महाभागा द्रौपदी ने, दानाध्यक्षता महामना कर्ण ने तथा युयुधान, विकर्ण, विदुर आदि ने महायज्ञ में विविध कर्मों का भार संभाला था, वह कैसा सुवर्ण समय होगा, जिसकी कल्पना में आज चित्त आनन्द विभोर हो जाता है ।

मगधेश्वर जरासन्ध के यहाँ कैदखाने में पड़े हुए २० हजार ८ सौ राजाओं को छुड़ा कर भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें यही उपदेश दिया था कि देखिये धन तथा ऐश्वर्य का मद मनुष्य को कैसा उन्मादी बना देता है ? देव, दैत्य तथा मानवों के अधिपति भी कार्तवीर्य, नहुष, वेन, रावण, नरकासुर आदि श्रीमद के परिणाम स्वरूप अपने पद से गिरा दिये गये । यह जान कर और देहादि को उत्पत्ति- विनाशशाली समझ कर उसका गर्व न करते हुए सावधानी से यज्ञों द्वारा धर्मपूर्वक प्रजा का रक्षण करें

दिष्ट्या व्यवसितं भूपा भवन्त ऋतभाषिणः ।
श्रियैश्वर्य मदोन्नाहं पश्य उन्मादकं नृणाम् ।।
हैहयो नहुषो वेनो रावणो नरकोऽपरे ।
श्रीमदाद् भ्रंशिताःस्थानादेवदैत्यनरेश्वराः ।।
भवन्त एतद्विज्ञाय देहाद्युत्पाद्यमन्तवत् ।
मां यजन्तोऽध्वरैर्युक्ताः प्रजा धर्मेण रक्षथ ।।

- भागवत १० / ७३ - १९ से २१

यज्ञ करना, उसके लिए अन्यों को प्रोत्साहित करना, बन पड़े तो होते हुए यज्ञ में किसी प्रकार सहायक होना अपने ही कल्याण का हेतु है । यज्ञ का विरोध अपने ही विनाश का मूल बनता है । **ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्** इत्यादि श्रुतिवचनों से यह चराचर विश्व, भगवान का ही विराट् स्वरूप है । जीव उस भगवान् का अंश या प्रतिबिम्ब ही है । प्रतिबिम्ब को अलंकृत करने का जैसे एकमात्र उपाय बिम्ब को अलकृत करना ही है । बिम्ब को अलंकृत करने पर प्रतिबिम्ब स्वयं अलंकृत हो जाया करता है, बिना बिम्ब को अलंकृत किये अन्य सहस्त्रों उपायों से भी प्रतिबिम्ब को अलंकृत कर सकना असम्भव है, वैसे ही प्रतिबिम्ब-भूत जीव को सुखी, समृद्ध एवं अलंकृत करने का एकमात्र उपाय स्वकर्मों से बिम्बभूत का परमात्मा का अर्चन करना ही है । जीव यदि अपने यज्ञादि कर्मों द्वारा भगवान का समर्चन नहीं करता, तो उसका अभ्युदय किस प्रकार हो सकता है ? परमेश्वर स्वरूपभूत आनन्द से सदा परिपूर्ण है, वह लोगों द्वारा समर्पित अर्चना स्वीकार क्यों करे ? यह तो उसकी महती कृपा है कि वह सामान्यजनों द्वारा अर्पित मान को स्वीकार करता है-

नैवात्मनः प्रभुरयं निजलाभपूर्णो मानं,
जनादविदुषः करुणो वृणीते ।
यद्यजनो भगवते विदधीत मानं,
तच्चात्मने प्रतिमुखस्य यथा मुखश्रीः ।।

- भाग० ७ / ९ / ११

कंस की अध्यक्षता में उसके मन्त्रिमण्डल की एक आवश्यक बैठक में यह निर्णय किया गया था कि धर्म के निवासभूत विष्णु, देवताओं के मूल हैं और विष्णु का मूल अर्थात् धर्म का आधार वेद, गौ, ब्राह्मण, तप तथा दक्षिणायुक्त यज्ञ हैं । अतः देवों का विनाश करने के लिए उनके मूल ब्रह्मवादी, तपस्वी, यज्ञ करने वाले ब्राह्मण तथा हवि का दोहन जिनसे होता है, ऐसी गौओं का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विनाश करना चाहिए । ब्राह्मण, गौ, वेद, तप. सत्य, दम, शम, श्रद्धा, दया, तितिक्षा और यज्ञ यही भगवान का शरीर है और ऐसे भगवान विष्णु ही देवताओं के आधार हैं, अतः देवों के नाशार्थ विष्णु का नाश अपेक्षित है । किन्तु वह तो डरपोक है, गुहा (प्राणियों की बुद्धि) में छिपा रहता है, अतः उसके वध का उपाय यही है कि उसके मूल ऋषियों की हिंसा की जाय-

मूलं हि विष्णुर्देवानां यत्र धर्मः सनातनः ।
तस्य च ब्रह्म गोविप्रास्तपोयज्ञाः सदक्षिणाः ।।
तस्मात् सर्वात्मना राजन् ब्राह्मणान् ब्रह्मवादिनः ।
तपस्विनो यज्ञशीलान् गाश्च हन्तो हविर्दुघाः ।।
विप्रा गावश्च वेदाश्च तपः सत्यं दमः शमः ।
श्रद्धा, दया, तितिक्षा च क्रतवश्च हरेस्तनूः ।
स हि सर्वसुराध्यक्षो ह्यसरद्विड गुहाशयः ।
तन्मूला देवताः सर्वाः सेश्वराः सचतुर्मुखाः ।
अयं वै तद्वधोपायो यदृषीणां विहिंसनम् ।।

- भाग० १० / ४ - ३९ से ४२

राजा वेन ने भी अपने राज्य में यह ढिंढोरा पिटवा दिया था कि मेरे राज्य में कहीं कोई यज्ञ न करे, दान न करे और होम न करे-

न यष्टव्यं न दातव्यं न होतव्यं द्विजाः क्वचित् ।
इति न्यवारयद्धर्मं भेरीघोषेण सर्वशः ।।

- भाग० ४/१३/६

मुनियों ने उसके पास जाकर बहुत रीति से समझाया कि राजन्! राजा का कर्त्तव्य प्रजा की दुर्जन राजकर्मचारियों तथा चोर आदि से रक्षा करना है, किसी के धर्म में हस्तक्षेप करना नहीं । महाभाग! जिस राजा के राष्ट्र, पुर में वर्णाश्रमस्थित जनता अपने - अपने धर्म कर्म से भगवान् यज्ञपुरुष का यजन करती है, उसे अपनी आज्ञा में स्थित समझकर भूतभावन, विश्वात्मा भगवान् उस पर प्रसन्न होते हैं । जगदीश्वरेश्वर भगवान के सन्तुष्ट होने पर भला फिर क्या अप्राप्य है? समस्त लोकपाल आदरपूर्वक उस राजा को उपहार अर्पित करते हैं । राजन्! अपने कल्याणार्थ आप अपने देशवासी जनों को यज्ञों द्वारा यज्ञपुरुष भगवान् को यजन करने की अनुमति प्रदान कर दें । आपके राज्य में जो यज्ञ होंगे, उनसे भगवान और उनके अंशभूत देवता प्रसन्न होंगे और आपके सब मनोरथ पूर्ण करेंगे । इसलिए आप इस प्रार्थना की अवेहलना न करें-

राजन्नसाध्वमात्येभ्यश्चोरादिभ्यः प्रजा नृपः ।
रक्षन् यथा बलिं गृण्हन् इह प्रेत्य च मोदते ।।
यस्य राष्ट्रे पुरे चैव भगवान् यज्ञपुरुषः ।
इज्यते स्वेन धर्मेण जनैर्वर्णा श्रमान्वितैः ।।
तस्य राज्ञो महाभाग भगवान् भूतभावनः ।
परितुष्यति विश्वात्मा तिष्ठतो निजशासने ।।
तस्मिन्तुष्टे किमप्राप्यं जगतामीश्वरेश्वरे ।
लोकाः सपाला ह्येतस्मै हरन्ति बलिमादृताः ।।
तं सर्वलोकामरयज्ञसंग्रहं त्रयीमयं द्रव्यमयं तपोमयम्।
यज्ञैर्विचित्रैर्यजतो भवाय ते राजन्
स्वदेशाननुरोद्धुमर्हसि ।।
यज्ञेन युष्मद्विषये द्विजातिभिर्वितायमानेन सुराः कला हरेः ।

स्विष्टाः सुतुष्टाः प्रदिशन्ति वाञ्छितं तद्धेलनं नार्हसि वीर चेष्टितुम ।।

- भाग० ४ / १४ - १७ से २२

परन्तु वेन ने महर्षियों के अनुरोध को ठुकरा दिया । फलतः वेन तथा कंस आदि यज्ञविरोधियों की क्या स्थिति हुई, वह इतिहास के पृष्ठों पर अंकित है ।

सारांश *'नारायणोपनिषद्'* के शब्दों में यह है कि-

यज्ञेन हि देवा दिवंगता, यज्ञेनासुरानपानुदन्त, यज्ञेन द्विषन्तो मित्रा भवन्ति, यज्ञेन सर्वं प्रतिष्ठितं, तस्माद्याज्ञं परमं वदन्ति ।

- नारायणोपनिषद् ७९

खेद है कि आज ऐसी लोकोपकारिणी यज्ञ-योजना की प्रायः उपेक्षा हो रही है । कोई आस्तिक श्रद्धावान् कुछ करना भी चाहता है, तो उसके मार्ग में अनेकों प्रकार से बाधाऐं उपस्थित की जाती हैं ।

पुराणों में एक कथा आती है, जिसका सारांश यह है कि सृष्ट्यारम्भ में ब्रह्माजी ने पृथ्वी का निर्माण किया । उस पर अन्यान्य वस्तुओं की रचना का क्रम चल ही रहा था कि जल की उत्ताल तरङ्गों से प्लावित होकर पृथ्वी सागर तल में विलीन हो गयी । अपने प्राथमिक महाप्रयास पर पानी फिरते देखकर ब्रह्मदेव बड़े दुःखी हुए और सोच में पड़ गये कि अब पृथ्वी को किस तरह महासागर से निकाला जाय । कुछ उपाय न देख कर उन्होंने भगवान का स्मरण किया । इतने ही में ब्रह्मदेव के नासिका-छिद्र से एक छोटा सा बाराह सहसा प्रादुर्भूत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हुआ । देखते ही देखते उस बाराह ने विशाल शरीर धारण कर लिया । मरीचि आदि महर्षि, सनत्कुमार तथा मनु सहित ब्रह्मदेव उस विचित्र वराह को देखकर विस्मित हो गये और सोचने लगे कि यह कौन है ? इतने ही में वाराहरूपधारी भगवान् यज्ञपुरुष ने गम्भीर गर्जना की और उस महार्णव में पृथ्वी का उद्धार करने के लिए गोता लगाया । भगवान अपनी दंष्ट्रा से पृथ्वी को उठाकर ज्यों ही जल से बाहर निकलने लगे, त्योंही हिरण्याक्ष नामक एक महादैत्य ने उन्हें आ घेरा । दोनों में भीषण युद्ध हुआ । हिरण्याक्ष ने बड़ी भयानक माया फैलायी । भगवान् ने सुदर्शनास्त्र से सब माया का विनाश कर दिया । अन्त में एक मुष्टिप्रहार से हिरण्याक्ष दैत्य का संहार किया । इस कथा द्वारा जो तथ्य व्यक्त किया गया है, वह बड़ा हृदयग्राही है । पहली बात तो यह बतलायी गयी है कि यज्ञ के बिना पृथ्वी का आधार न होने से वह रसातल में चली गयी और उसके निर्माता ब्रह्मदेव भी अन्य महर्षियों के साथ उसका उद्धार न कर सके और किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये । भगवान् का स्मरण किये जाने पर वे श्वास - प्रश्वास की तरह बिना किसी प्रयास के ब्रह्मदेव की नासिका से यज्ञरूप में प्रादुर्भुत हुए । जब यज्ञ भगवान पृथ्वी का उद्धार करने का उपक्रम करते हैं, तब हिरण्याक्ष (हिरण्याक्ष - सुवर्ण-द्रव्य तथा सुवर्णवत् प्रिय लगने वाला काम ही है इन्द्रियों का विषय - अक्ष जिसके अर्थात् अर्थ - काम परायण) दैत्य (दो अवखण्ड ने - सबका खंडन-विनाश करने की भावना ही दिति है, उससे उत्पन्न - सबका अहितकर - शत्रु) उस यज्ञपुरुष का विरोध करने अग्रसर होता है । ऐसा ही सृष्ट्यारम्भ में हुआ था, अन्ययुगों में वेन, रावण, कंस आदि द्वारा भी यही हुआ और आज भी हो रहा है । यज्ञभगवान् का नाश करने के लिए हिरण्याक्ष दैत्य द्वारा अनेक मायाओं का प्रयोग किया जाता है । परन्तु दैत्य के सभी प्रयास विफल होते हैं और यज्ञपुरुष द्वारा एक ही कराघात से दैत्य का संहार हो जाता है । इस तरह अन्त में यज्ञपुरुष द्वारा पृथ्वी का उद्धार होकर ही रहता है । इस आख्यायिका से आस्तिक पुरुषों को आश्वासन दिया गया है, कि अर्थ-काम परायण आसुरी वृत्ति वाले, वेद, शास्त्र, धर्मादि सबका खण्डन करने वाले चाहे कितना ही माया जाल क्यों न फैलायें, विवेकशील आस्तिकों को इससे उद्विग्न एवं निराश नहीं हो जाना चाहिए । धैर्यपूर्वक उन्हीं यज्ञपुरुष भगवान् का यथा संभव, यथा शक्ति अवलम्बन किये रहना चाहिए । एक दिन शीघ्र ही ऐसा अवश्य आयेगा, जबकि हिरण्याक्ष की सारी मायाएँ विलीन हो जायँगी और अन्त में दैत्य का भी ठिकाना लग जायगा और फिर यज्ञभगवान् की ही कृपा से पृथ्वी का उद्धार होकर उस पर सुख शान्ति-समृद्धि का साम्राज्य पुनः फैल जायगा ।

'यज्ञ'- ज्ञान और विज्ञान का भाण्डागार

सामूहिक समस्याओं के लिए जन सहयोग में सम्पन्न होने वाले यज्ञों की आवश्यकता एवं उपयोगिता तो असंदिग्ध है ही, इसके अतिरिक्त व्यक्तिगत प्रयोजनों के लिए व्यक्तिगत यज्ञ सम्पन्न किये जाने के भी उदारहण इतिहास, पुराणों में अनेकानेक मिलते हैं ।

दशरथ को तीन विवाह कर लेने पर भी संतति प्राप्त नहीं हुई । उन्होंने शृंगी ऋषि की अध्यक्षता में पुत्रेष्टि यज्ञ कराया और एक से एक बढ़कर सुयोग्य चार सन्तानों का लाभ उठाया ।

राजा द्रुपद की कन्या द्रौपदी का जन्म भी इसी प्रकार यज्ञ-प्रसाद के रूप में हुआ था ।

स्वायम्भुव मनु और शतरूपा रानी ने भगवान को अपनी गोदी में खिलाने की कामना की । इसकी पूर्ति के लिए उन्होंने यज्ञ किया, जिसका पौरोहित्य मनुपुत्री इला ने किया था ।

सृष्टि निर्माण का कार्य ब्रह्माजी को सौंपा गया । इसके लिए क्षमता और सामग्री की आवश्यकता हुई । इसके लिए उन्होंने यज्ञ किया और गायत्री, सावित्री दो पत्नियों को साथ लिया । गायत्री के प्रताप से क्षमता और सावित्री के अनुग्रह से आवश्यक सामग्री उन्हें प्राप्त हुई ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

च्यवन ऋषि की वृद्धावस्था और अन्धता का निवारण करने के लिए एक महायज्ञ हुआ था । उसका प्रसाद एक अवलेह के रूप में प्राप्त हुआ और वे फिर से नव यौवन प्राप्त करने में समर्थ हुए ।

चरक संहिता में ओषधि धूम से अनेक रोगों के उपचार का विवरण है । गायत्री तंत्र के एक अध्याय में विभिन्न प्रकार की कामनाओं को पूर्ण करने के लिए विभिन्न ओषधियों द्वारा यजन करने का उल्लेख है ।

गणेश, कार्तिकेय का पालन जिन छह कृतिकाओं ने मिलकर किया था वे छः स्तर की यज्ञाग्नियाँ ही थीं । कार्तिकेय उन असुरों को पराजित करने में सफल हुए जिन्हें समस्त देवता मिलकर भी हरा न सके ।

रावण को जब प्रतीत हुआ कि राम को परास्त करना सरल नहीं है, तब उसने अन्तिम अस्त्र के रूप में एक तान्त्रिक मख करना आरम्भ किया था । यदि वह सफल हो जाता तो राम उसे हरा न पाते । ऐसी दशा में हनुमान ने रीछ, बानरों की सेना लेकर उस मख का विध्वंस किया था ।

जन्मेजय ने अपने पिता परीक्षित के तक्षक सर्प द्वारा काटे जाने पर एक सर्प-यज्ञ किया था । मन्त्र बल से सर्प खिंचकर आने और कुण्ड में गिरने लगे थे । तक्षक ने इन्द्रासन के साथ लपेटा लगा लिया । सिंहासन समेत इन्द्र भी जब अग्नि कुण्ड में गिरने के लिए खिंचने लगे, तब उन्होंने जन्मेजय को जाकर समझाया और उस आयोजन को जाकर बीच में ही समाप्त कराया । तक्षक तभी बच सका ।

याज्ञवल्क्य ऋषि, यज्ञ विद्या में निष्णात थे, उनने इस विज्ञान की आजीवन शोध की और छिपे रहस्यों को खोज निकाला ।

राजा दक्ष भी इस विज्ञान में प्रवीण थे । वे प्रकृति के रहस्यों का उद्घाटन करने के लिए एक महायज्ञ कर रहे थे । उसमें शिवजी को आमन्त्रित नहीं किया गया । इस पर उनकी पुत्री सती ने उस यज्ञ-कुण्ड में ही अपने शरीर को समाप्त कर दिया था ।

सौ यज्ञ पूरे कर लेने पर कोई भी कर्त्ता स्वर्ग सशरीर जा सकता है । नहुष इसी प्रकार पहुँचे थे । राजा बलि ने भी सौ यज्ञ किये थे । स्वर्ग पहुँचे तो उन्होंने उस उपहार के बदले यह चाहा कि भगवान मेरे दरवाजे पर भिक्षुक बन कर आयें । वरदान मिला और वामन भगवान बौने ब्राह्मण के रूप में उनके द्वारे पर थोड़ी सी जमीन की याचना करने पहुँचे ।

चक्रवर्ती भरत और राजा पृथु के अश्वमेध यज्ञ इतिहास-प्रसिद्ध हैं । वाजिस्रवा ने अपने सर्वमेध यज्ञ में अपने पुत्र नचिकेता तक को दान कर दिया था ।

शुक्राचार्य असुरों के गुरु थे । वे अपने यजमानों को शक्तिशाली सिद्धियाँ प्राप्त कराने के लिए अनेक तान्त्रिक यज्ञ कराया करते थे ।

बालि को अजेयता यज्ञ के बल पर ही प्राप्त हुई थी । भगवान राम भी उसके सामने जाकर युद्ध जीत नहीं सकते थे । इसीलिए उन्होंने ताड़ वृक्ष की ओट में छिपकर पीछे से बाण चलाया ।

ऐसे-ऐसे अनेक प्रसंग अठारहों पुराणों में सहस्रों की संख्या में लिखे हुए हैं । उन सबका संकलन इन पंक्तियों में कर सकना कठिन है । पूरा अथर्ववेद इन्हीं प्रयोजनों के सूत्र संकेतों से भरा पड़ा है । आयुर्वेद उसी से निकला जिसमें शारीरिक, मानसिक, आत्मिक, आधिव्याधियों के निराकरण का विधि-विधान है । यजुर्वेद में कहा गया है, कि देवताओं ने देवत्व यज्ञ का यजन करके ही प्राप्त किया ।

यज्ञ ज्ञान का भण्डार है और विज्ञान का उद्गम । आत्मिक सूक्ष्म शक्तियाँ अतीन्द्रिय क्षमताओं को उसके आधार पर जगाया जा सकता है । व्यक्तित्व का परिष्कार और परिमार्जन उसके द्वारा सम्भव है । वह स्वर्ग और मुक्ति का द्वार माना गया है ।

जिस दिन से ऋग्वेद की प्रथम ऋचा की कृपा से मनुष्य ने अग्नि प्रज्वलित करना सीख लिया, उसी दिन से यह संसार का सबसे प्रभावशाली सत्य बन गया । उसी दिन से बड़े से बड़े हिंसक जीव भी इससे भयभीत होने लगे । जिसके हाथ में प्रकाश और ताप का नियन्त्रण आ गया, उसकी शक्ति का सामना अन्य प्राणी भी कैसे कर सकते थे ? संगतिकरण से उत्पन्न हुए अग्नि को संगतिकरण में ही लगा दिया, तब - तब उससे सहस्र गुणित समृद्धि प्राप्त होने लगी । जिसे हम संगतिकरण कह रहे हैं, इसी का वैदिक नाम 'यज्ञ' है । अतः यज्ञ से उत्पन्न हुआ अग्नि, यज्ञ के ही कार्यों में नियोजित किया गया । यज्ञाग्नि ने थोड़े ही समय में प्रवृत्ति की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मुख्य शक्तियों को जिनकी वैदिक भाषा में हम देवता कहते हैं, अपने वश में करके यजमान को सौंप दिया । यजमान अग्नि के माध्यम से समस्त देवताओं की पूजा करके उनको वश में कर सकने में समर्थ हो गया । अग्नि की कृपा से भौतिक विज्ञान का मार्ग खुल गया है, इससे कोई आधुनिक विज्ञानवेत्ता भी इन्कार नहीं कर सकता है ।

इस प्रभावशाली अग्नि को प्रारम्भ में कृत्रिम रूप से ऋग्वेद की प्रथम ऋचा की प्रेरणा से ही उत्पन्न किया गया था । उसे उत्पन्न करने में जो प्रयत्न किया गया था, उसी का नाम यज्ञ है । ऋग्वेद की ऋचा में अग्नि की स्तुति में पाँच विशेषण दिये हैं, वे पाँच यज्ञ के ही विभिन्न व्यक्तियों से सम्बन्धित हैं । आप उनकी संज्ञा मात्र से ही उनको पहचान सकते हैं । वे इस प्रकार हैं-१-पुरोहित, २-यज्ञ,३-ऋत्विज्, ४-होता, ५-रत्न-घातम, इन पाँचो विशेषणों से पता चलता है कि अग्नि के प्रथम उत्पादकों के सामने अग्नि उत्पन्न करने का लक्ष्य यज्ञ करना ही था और यज्ञ के द्वारा सम्पूर्ण संवृद्धियों को पाना था । हमारे आदि पूर्वजों ने यज्ञ के द्वारा ही अनेक विज्ञापनों का आविष्कार किया और उससे मानव समाज तथा सभ्यता का विकास हुआ । सामूहिक रूप से विश्वात्मा की तृप्ति के लिए प्रयत्न करना अर्थात् विश्व-कल्याण के स्तर पर संवृद्धि के लिए प्रयत्न करने का ही नाम है यज्ञ और अग्नि ही ऐसे यज्ञ-देव हैं ।

नवीन विधान में भी पृथ्वियों, लोक-लोकान्तरों, ग्रह-नक्षत्रों आदि की उत्पत्ति तेजोमय वाष्पपुञ्जों रूपी नीहारिकाओं से मानी गई है । द्रव्यों के तीन रूप वाष्प, द्रव तथा ठोस होते हैं । आदिम काल में सभी ठोस तथा द्रव वाष्प रूप में थे । सेर भर तोल का लौहपिण्ड यदि विद्युत की भट्टी में डालकर गलाया जाय तो पहिले पानी जैसा पतला होकर फिर वाष्प बनकर उड़ जाता है तथा पुनः प्रक्रिया द्वारा ठोस लौह-पिण्ड में परिवर्तित किया जा सकता है । पाश्चात्य जगत् पृथ्वी की उत्पत्ति ऐसे ही मानता है, कि पूर्व में सूर्य से टूटकर अलग हुए तथा दहकते हुए द्रव का एक गोला था जो क्रमशः ठण्डा होकर ठोस हो गया । फिर इस पर धीरे-धीरे वनस्पति तथा जीव-जन्तुओं का आविर्भाव हुआ । इस प्रकार पाश्चात्य दृष्टिकोण से भी सृष्टि-क्रम सूक्ष्म से स्थूल की ओर ही है ।

यज्ञ ही सृष्टि की वृद्धि का सूक्ष्म कारण था, जो वायु-मण्डल में अनेक प्रकार की सिद्धि, समृद्धि सुख, सम्पत्ति, ज्ञान, जिज्ञासा, संयम, सदाचार आदि के प्राण रूप में विद्यमान था । यही यज्ञ रूपी सूक्ष्म प्राण, अग्नि में होकर जल व पृथ्वी तत्त्व का रूप धारण करके अभीष्ट फलों में बदल जाता है इसी प्रकार वह शुद्ध तथा उचित स्थूल द्रव्य जिनमें जल व पृथ्वी के अंश अधिक हैं, उनको अग्नि में पुनः डालकर वायु, वाष्प या धुँए के रूप में परिवर्तित व विशद करके वायु-मंडल में सुख-समृद्धि तथा नाना प्रकार के अभीष्टों के प्राण पुनः बनाये जा सकते हैं ।

सृष्टि के आदि में सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्राणियों की सृष्टि हुई, जो जन्मना प्रत्येक सिद्धियों से सम्पन्न थे, प्रकट व लोप हो सकते थे, आकाशचारी थे तथा सङ्कल्प मात्र से लोक-लोकान्तरों में जा सकते थे । यह ऋषिगण थे, इनको श्रुति सिद्धि थी, इनको ब्रह्म-शब्दों द्वारा अनेक प्रकार यज्ञ की विधियाँ ज्ञात थीं । ऋषिसर्ग के पश्चात् देवसर्ग, पितृसर्ग, मनुष्यसर्ग तथा अनेक अन्य सर्ग हुए जो ऋषियों के प्रति ब्रह्म द्वारा कथित यज्ञों का पालन करके अपना तथा लोक का कल्याण करते चले आये ।

सृष्टि के आरम्भ में ऋषिसर्ग व देवसर्ग के प्राणी सिद्धि सम्पन्न होने के कारण केवल सङ्कल्प मात्र से अभीष्ट फलों की प्राप्ति कर लेते थे, अर्थात् सूक्ष्म सृष्टि होने के कारण यज्ञों की स्थूल प्रक्रिया न होकर केवल कल्प व सङ्कल्पों द्वारा ही बरता जाता था, अर्थात् उनको अग्नि में हवन द्वारा स्थूल द्रव्यों को वाष्प, वायु अथवा धुँए में परिवर्तित करके वायु मण्डल में अभीष्ट फलों के प्राण, कारण व बीज बनाने की आवश्यकता न थी । परन्तु सतयुग के अन्तिम तथा त्रेता के प्रारम्भ में जबकि मनुष्यादि सर्गों का आविर्भाव तथा वृद्धि हो चुकी थी तथा साथ ही साथ मनुष्यों में इच्छा, आवश्यकता तथा रजोगुण की उत्तरोत्तर वृद्धि हो चली थी, तो विविध सङ्कल्पों के साथ उचित तथा शुद्ध व अभीष्ट फल सिद्धिकारक स्थूल द्रव्यों को अग्नि में हवन कर धुँए के रूप में विशद बनाकर, वायु मण्डल में अभीष्ट फलों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कारण रूप-प्राण बनाकर प्राप्ति व वृद्धि करने लगे ।

त्रेता के विद्वान् व वैज्ञानिक ऋषियों ने इस दिशा में बड़ी उन्नति की । व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र की कोई भी आवश्यकता हो उसके लिए तत्काल ही एक यज्ञ की व्यवस्था कर देते थे । सङ्कल्पों के साथ उचित द्रव्यों को अग्नि में हवन करके अभीष्ट फल की प्राप्ति करने लगे । यहाँ तक उन्नति हुई कि इन्हीं यज्ञों द्वारा विशिष्ट शक्ति सम्पन्न देवता, असुर, गन्धर्व, राक्षस आदि प्राणियों को प्रकट करना, रथ, विमान, खीर, अनेक प्रकार की ओषधियाँ, राजमहल, घोड़ा, वृक्ष, गौ, नदी आदि मनचाही वस्तुओं को सद्यः प्राप्त करने के अनेक उदाहरण हैं, जो पुराणों और उपनिषदों में वर्णित हैं । ऋषियों ने उन भिन्न-भिन्न द्रव्यों का पता लगाया, जिनको संकल्प के साथ अग्नि में हवन करने से भिन्न-भिन्न अभीष्टों की सिद्धि होती है । उन्होंने गोघृत को यज्ञ के लिए सर्वथा उपयुक्त पाया ।

जितने भी हवनीय द्रव्य हैं उनमें गोघृत के हवन द्वारा बने हुए सुगन्धित वायु-मण्डल का आयतन सबसे अधिक है, यह प्रत्यक्ष देखा गया है । गोघृत के पश्चात् सुगन्धित आयतन बनाने का नम्बर शक्कर का है । कपूर, गुग्गुलु, राल, देवदारू, चन्दन, अगरू, खस, नागरमोथा, पान सुपारी, नारियल, खजूर, जटामासी, केशर, कस्तूरी, सुगन्ध वाला लौंग, इलायची, तेजवल, कपूरकचरी, , मखाना, छुआरा, किशमिश, अंगूर सेवादि फल, जौ, तिल, धान्य आदिकों में भी हवन द्वारा वायु-मण्डल में अधिकाधिक सुगन्धित आयतन बनाने का गुण है, परन्तु गोघृत इन सबसे मुख्य है । गोघृत के योगवाही तथा विशद होने के कारण अन्य द्रव्य भी इसके संयोग से हवन द्वारा प्राण रूप होकर वायु मण्डल विशद या बृहद् आयतन धारण कर लेते हैं । इस विषय का एक क्रमबद्ध शास्त्र था कि गोघृत के साथ किन - किन द्रव्यों को कितनी मात्रा में किन-किन संकल्पों द्वारा हवन करने से किन - किन अभीष्ट फलों के वायु मण्डल में कारण व बीजरूप प्राण बन जाते हैं, जो समय के फेर से व्यवहार भ्रष्ट हो जाने के कारण अधिकांश नष्ट हो गया है ।

यज्ञ एक महत्त्वपूर्ण विज्ञान है । जिन वृक्षों की समिधायें काम में ली जाती हैं, उनमें विशेष प्रकार के गुण होते हैं । किस प्रयोग के लिए किस प्रकार की हव्य वस्तुएँ होमी जाती हैं , इनका भी विज्ञान है । उन वस्तुओं के आपस में मिलने से एक विशेष गुण संयुक्त सम्मिश्रण तैयार होता है, जो जलने पर वायुमण्डल में एक विशिष्ट प्रभाव पैदा करता है । वेद-मन्त्रों के उच्चारण की शक्ति से उस प्रभाव में और भी अधिक वृद्धि होती है । फलस्वरूप जो व्यक्ति सम्मिलित होते हैं, उन पर तथा निकटवर्ती वायु-मण्डल पर उसका बड़ा प्रभाव पड़ता है । सूक्ष्म प्रकृति के अन्तराल में जो नाना प्रकार की दिव्य शक्तियाँ काम करती हैं, उन्हें देवता कहते हैं । इन देवताओं को अनुकूल बनाना, उनको उपयोगी दिशा में प्रयुक्त करना, उनसे सम्बन्ध स्थापित करना, यही देवताओं को प्रसन्न करना है । यह प्रयोजन यज्ञ द्वारा आसानी से पूरा हो जाता है ।

संसार में कभी किसी वस्तु का नाश नहीं होता, केवल रूपान्तर होता रहता है । जो वस्तु हवन में होमी जाती है, वे तथा वेद मन्त्रों की शक्ति के साथ जो सद्भावनाएँ यज्ञ द्वारा उत्पन्न की जाती हैं, वे दोनों मिलकर आकाश में छा जाती हैं । उनका परिणाम समस्त संसार के ही लिए अनेक प्रकार से कल्याणकारक परिणाम उत्पन्न करने वाला होता है । इस प्रकार यज्ञ, इस संसार की सेवा का, विश्व में सुख - शान्ति उत्पन्न करने का, उत्तम माध्यम एवं पुण्य परमार्थ है । यज्ञ से याज्ञिक की आत्मा शुद्ध होती है, उसके पाप-ताप नष्ट होते हैं तथा शान्ति एवं सद्गति उपलब्ध होती है । सच्चे हृदय से यज्ञ करने वाले मनुष्यों का लोक और परलोक सुधरता है, यदि उनका पुण्य पर्याप्त हुआ, तब तो उन्हें स्वर्ग या मुक्ति की भी प्राप्ति होती है । अन्यथा यदि दूसरा जन्म भी लेना पड़ा तो सुखी, श्रीमान् साधन - सम्पन्न उच्च परिवार में जन्म होता है, ताकि आगे के लिए वह सुविधा के साथ सत्कर्म करता हुआ लक्ष्य को सफलता पूर्वक प्राप्त कर सके ।

यज्ञ का अर्थ दान, एकता उपासना है । यज्ञ का वेदोक्त आयोजन, शक्तिशाली मन्त्रों का विधिवत्

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उच्चारण, विधिपूर्वक बनाये हुए कुण्ड, शास्त्रोक्त समिधाएँ तथा सामग्रियाँ जब ठीक विधानपूर्वक हवन की जाती हैं, उनका दिव्य प्रभाव विस्तृत आकाश-मण्डल में फैल जाता है । उसके प्रभाव के फलस्वरूप प्रजा के अन्तःकरण में प्रेम, एकता, सहयोग, सद्भाव, उदारता, ईमानदारी, संयम, सदाचार, आस्तिकता आदि सद्भावों एवं सद्विचारों का स्वयमेव आविर्भाव होने लगता है । पत्तों से आच्छादित दिव्य आध्यात्मिक वातावरण के स्थान में सन्तान पैदा होती है, वह स्वस्थ, सद्गुणी एवं उच्च विचारधाराओं के परिपूर्ण होती है । पूर्वकाल में पुत्र-प्राप्ति के लिए ही पुत्रेष्टि यज्ञ कराते हों सो बात नहीं । जिनके बराबर सन्तान होती थी, वे भी सतोगुणी एवं प्रतिभावान् सन्तान प्राप्त करने के लिए पुत्रेष्टि यज्ञ करते थे । गर्भाधान, सीमन्त, पुन्सवन, जातकर्म, नामकरण आदि संस्कार बालक के जन्म लेते - लेते अबोध अवस्था में ही हो जाते थे । इनमें से प्रत्येक में हवन होता था, ताकि बालक के मन पर दिव्य प्रभाव पड़ें और वह बड़ा होने पर पुरुष - सिंह एवम् महापुरुष बने । प्राचीन काल का इतिहास साक्षी है, कि जिन दिनों इस देश में यज्ञ प्रतिष्ठा थी, उन दिनों महापुरुषों की कमी नहीं थी । आज यज्ञ का तिरस्कार करके अनेक दुर्गुणों, रोगों, कुसंस्कारों और बुरी आदतों से ग्रसित बालकों से ही हमारे घर भरे हुए हैं ।

यज्ञ से अदृश्य आकाश में जो आध्यात्मिक विद्युत तंरगें फैलती हैं, वे लोगों के मनों में द्वेष, पाप, अनीति, वासना, स्वार्थपरता, कुटिलता आदि बुराइयों को हटाती हैं । फलस्वरूप, उनसे अनेक समस्याएँ हल होती हैं । अनेक उलझनें, गुत्थियाँ, पेचीदगियाँ, चिन्तायें, भय, आशङ्कायें तथा बुरी सम्भावनायें समूल नष्ट हो जाती हैं । राजा, धनी, सम्पन्न लोग, ऋषि-मुनि, बड़े-बड़े यज्ञ कराते थे, जिससे दूर-दूर का वातावरण निर्मल होता था और देश-व्यापी, विश्व-व्यापी बुराइयाँ तथा उलझनें सुलझती थीं ।

बड़े रूप में यज्ञ करने की जिनकी सामर्थ्य है , उन्हें वैसे आयोजन करने चाहिए । अग्नि का मुख ईश्वर का मुख है, उसमें जो कुछ खिलाया जाता है, वह सच्चे अर्थों में ब्रह्मभोज है । ब्रह्म अर्थात् परमात्मा, भोज अर्थात् भोजन, परमात्मा को भोजन कराना यज्ञ के मुख में आहुति छोड़ना है । भगवान हम सबको खिलाता है, हमारा भी कर्त्तव्य है कि अपने उपकारी के प्रति पूजा करने में कंजूसी न करें । जिनकी आर्थिक स्थिति वैसी नहीं है, वे कई व्यक्ति थोड़ा-थोड़ा सहयोग करके सामूहिक यज्ञ की व्यवस्था कर सकते हैं । जहाँ ऐसा सुयोग न हो, वहाँ यदा-कदा छोटे-छोटे हवन किये जा सकते हैं, अथवा जहाँ नियमित यज्ञ होते हैं, वहाँ अपनी ओर से कुछ आहुतियों का हवन कराया जा सकता है । कई अन्य व्यक्ति यज्ञ कर रहे हों तो उसमें समय, सहयोग एवम् सहायता देकर उसे सफल बनाने का प्रयत्न करना भी यज्ञ में भागीदार होना ही है ।

हमें यह निश्चय रूप से समझ लेना चाहिये कि यज्ञ में जो कुछ भी धन सामग्री, श्रम लगाया जाता है वह कभी निरर्थक नहीं जाता । एक प्रकार से वह देवताओं के बैंक में जमा हो जाता है और उचित अवसर पर सन्तोषजनक ब्याज समेत वापिस मिल जाता है । विधि पूर्वक शास्त्रीय पद्धति और विशिष्ट उपचारों तथा विधानों के साथ किये गये हवन तो और भी महत्त्वपूर्ण होते हैं । वे एक प्रकार के दिव्य अस्त्र बन जाते हैं । पूर्वकाल में मनोवांछित वर्षा होती थी, योद्धा लोग युद्ध में विजय श्री प्राप्त करते थे और योगी आत्म साक्षात्कार करते थे । यज्ञ को वेदों में कामधुक् कहा है, जिसका आशय यही है कि वह मनुष्यों के समस्त अभावों को दूर करने वाला और बाधाओं को दूर करने वाला है ।

नित्य का अग्निहोत्र बहुत सरल है । उसमें कुछ इतना भारी खर्च नहीं होता कि मध्यम वर्ग का मनुष्य उस भार को उठा न सके । जो लोग नित्य हवन नहीं कर सकते, वे सप्ताह में एक बार रविवार को अथवा अमावस्या, पूर्णमासी को अथवा महीने में एक बार पूर्णमासी को थोड़ा या बहुत हवन करने का प्रयत्न करें । विधि - विधान भी इन साधारण हवनों का कोई कठिन नहीं है । यज्ञ-विधान प्रकरण में उसकी सरल विधियाँ बताई गयी हैं । उनके आधार पर बिना पण्डित पुरोहित की सहायता से कोई द्विज आसानी से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह करा सकता है । जहाँ भी विधान न मालूम हो, वहाँ केवल शुद्ध घृत की आहुतियाँ गायत्री मन्त्र के अन्त में 'स्वाहा' शब्द लगाते हुए दी जा सकती हैं । किसी न किसी रूप में यज्ञ परम्परा को जारी रखा जाय, तो वह भारतीय संस्कृति की बड़ी भारी सेवा है ।

साधारण होम भी बहुत उपयोगी होता है, उससे घर की वायु-शुद्धि, रोग - निवृत्ति, अनिष्टों से आत्म - रक्षा होती है । फिर विशेष आयोजन के साथ विधि-विधान पूर्वक किये गये यज्ञ तो असाधारण फल उत्पन्न करते हैं । यज्ञ एक विद्या है । पाँचों तत्त्वों के होम में एक वैज्ञानिक सम्मिश्रण होता है, जिससे एक प्रचण्ड संघर्ष-शक्ति का आविर्भाव होता है । यज्ञ की इस प्रचण्ड शक्ति को द्वि मूर्धा, द्वि नासिका, सप्तहस्त, द्वि मुख, सप्त जिह्वा, उत्तर मुख कोटि, द्वादश मूर्ध्या, द्वि पंच शत्कला युतम्, आदि विशेषण-युक्त कहा गया है । इस रहस्यपूर्ण संकेत में यह बताया गया है कि यज्ञाग्नि की मूर्धा भौतिक और आध्यात्मिक दोनों है । यह क्षेत्र सफल बनाये जा सकते हैं । स्थूल और सूक्ष्म प्रकृति यज्ञ की नासिका है, उन पर अधिकार प्राप्त किया जा सकता है । सातों प्रकार की सम्पदायें यज्ञाग्नि के हाथ हैं । वाममार्ग और दक्षिणमार्ग, ये दो मुख हैं । सातों लोक जिह्वाऐं हैं । इन सब लोकों में जो कुछ भी विशेषताएँ हैं वे यज्ञाग्नि के मुख में मौजूद हैं । उत्तर ध्रुव का चुम्बकत्त्व केन्द्र अग्निमुख है । ५२ कलायें यज्ञ की ऐसी हैं, जिनमें से कुछ को प्राप्त करके ही रावण इतना शक्तिशाली हो गया था । यदि वह सभी कलाएँ उपलब्ध हो जायँ तो मनुष्य साक्षात् अग्नि रूप हो सकता है और विश्व के सभी पदार्थ उसके करतलगत हो सकते हैं । यज्ञ की महिमा अनन्त है और उसका आयोजन भी फलदायक होता है । हम श्रीमद्भागवत पुराण में नगर वर्णन में द्वारिका, मथुरा, अयोध्या, काशी आदि नगरों के विषय में ऐसा पढ़ते हैं कि इन नगरों पर सदा यज्ञ का धुँआ मँडराया करता था । गलियाँ अगर, कस्तूरी, चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्यों की सुगन्ध से सुवासित रहती थीं । शुद्ध, सुगन्धमय, प्रसन्नता व प्रीतिदायक वातावरण बना रहता था जो समाधिवर्धक, मन को एकाग्र व भावमय बनाने में सहायक होता था । जन समुदाय की बुद्धि, स्मृति, बल, प्रसन्नता आदि का कारण होता था । उसी से दैहिक, दैविक तथा भौतिक परमाणुओं का शमन होता था ।

प्राचीन काल से भारत के वेदज्ञान, अध्यात्म धर्म, संस्कृति का यज्ञ ही प्रधान कारण रहा है । इसी भारतीय प्राचीन संस्कृति ने अनेक अवतारों, संत, महात्माओं, विद्वानों, वैज्ञानिकों, ऋषि, मुनियों तथा धार्मिक राजाओं को जन्म दिया जो इतिहास प्रसिद्ध हैं तथा इस समय भी संसार में मान्य हैं ।

इसलिए ऋषि भारत देश का यज्ञ द्वारा उद्धार करने के लिए प्रार्थना करते हैं -

यस्यां सदो हविर्धाने यूपो यस्यां निपीयते ।
ब्राह्मणो यस्यामर्चन यृग्भिः सग्ग्रा यजुर्वेदाः युज्यन्ते यस्यामृत्विजःसोममिन्द्राय पातवे ।। ३८ ।। यस्यां पूर्वे भूतकृत ऋषयो गा उदानृचुः । सप्त सत्त्रेण वेधसो यज्ञेनतपसा सह।। ३९।।

- अथर्व १२/१/३८/३९

हे यज्ञभूमि! क्या अब फिर तेरा उद्धार होगा ? यह यज्ञभूमि-भारतभूमि, जिस भूमि पर सभास्थान और हविस्थान होते थे, जहाँ यज्ञ स्तम्भ गाढ़ा जाता था, जहाँ ब्रह्मा और अध्वर्यु आदि ऋचाओं और सामों से अर्चन करते थे, जहाँ इन्द्र को सोमरस पिलाने के लिए नित्य यज्ञशील लोग संगठित होते थे, जहाँ भूत को बनाने वाले पूर्व महर्षिगण विशालतर यज्ञों द्वारा दिव्य लोकों की पूजा करते थे तथा ब्रह्मा, तपस्या के द्वारा यज्ञ (संगठन) करते थे -क्या वह भारत-भूमि अब फिर यज्ञभूमि बनेगी ?

यज्ञ का महान तत्त्वज्ञान

वैदिक साहित्य में यज्ञ की बड़ी महिमा है । बहुत से लोग 'वेद में केवल यज्ञ-विषय की ही चर्चा है, ऐसा मानते हैं । साधारण याज्ञिक लोग जिसे यज्ञ कहते हैं, उसकी अपेक्षा यज्ञ कहीं विशाल और व्यापक है । स्वयं वेद भी यज्ञ से ही उत्पन्न हुआ है।

तस्माँद् यज्ञात्सर्वहुतः ऋचः सामानिजज्ञिरे ।
छन्दांसिजज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्यादजायत ।।

अर्थ- उस सर्वहुत यज्ञ से ऋक्, यजु, साम और अथर्व, चारों वेद उत्पन्न हुए । ब्राह्मण, उपनिषद्,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गीता-महाभारत आदि छंदों (शास्त्रों) में हुआ यज्ञ व्याख्यान बतलाता है कि वैदिक धर्म में यज्ञ की महिमा को समझाते हुए, हम जानें कि यज्ञ क्या है ?

ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में प्रश्न पूछा है कि, ''मैं तुमसे पूछता हूँ कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों को बाँधने वाली वस्तु कौन है ? इसका उत्तर दिया है कि यह यज्ञ ही इस विश्व -ब्रह्माण्ड को बाँधने वाला है ।

तो फिर हमें यह जानना चाहिए कि यज्ञ क्या है ? जिससे सब संसार बंधा हुआ है ।

यहाँ पर यज्ञ का असली अर्थ समझना आवश्यक है । साधारण शब्दों में कहा जाय तो -मेल, मिलना, जुड़ना, सम्बन्ध रखना, ठीक तरह से जुड़ना, ठीक तरह से सम्बन्ध स्थापित रखना, इन सारे शब्दों का प्रयोग यज्ञ के लिये किया जा सकता है । इन सारे शब्दों का केन्द्रीय अभिप्राय है- सुसंगतिकरण ।

प्राचीन साहित्य में यज्ञ के अर्थों के सम्बन्ध में एक सूत्र है, जिसमें उक्त शब्दों के द्वारा यज्ञ के अर्थों का स्पष्टीकरण किया गया है । पाँच प्रकार के यज्ञवाच्य अर्थों में यह सूत्र गया हुआ है । वे अर्थ इस प्रकार हैं -

१- परमात्मा यज्ञ है ।

२- यह संसार यज्ञ है ।

३- सुसंगठित मानव समुदाय यज्ञ है ।

४- मानव-जीवन, यज्ञ है ।

५- मनुष्य का प्रत्येक कल्याणकारी-कर्त्तव्य-कर्म, यज्ञ है ।

इन पाँचों का स्पष्टीकरण:-

१- यज्ञो यत्र पराक्रान्तः । यज्ञ की उच्चतम पराकाष्ठा परमात्मा में होती है । अतः परमात्मा को भी पुरुष सूक्त में 'यज्ञ' कह कर पुकारा गया है ।

२- यह संसार यज्ञ है । इस यज्ञ का कर्त्ता परमात्मा है । यह संसार, खूब अच्छी तरह से ठीक-ठीक जुड़ा हुआ है । इसमें सब कार्य ठीक-ठीक अटल नियमों द्वारा, ठीक स्थान, ठीक समय और ठीक-ठीक सम्बंध में विद्यमान रहते हैं । यह संसार इतनी अच्छी तरह बंधा हुआ-सुसम्बद्ध है कि यह सब मिलकर 'पूर्ण' है । कहा है:-

पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।

३- मानव समुदाय का सुसंगठित स्वरूप ही मनुष्य यज्ञ है । यही हमें-मनुष्य मात्र को विशेष रूप से करना है । सब संगठन, सम्बन्ध, संस्था इस यज्ञ में समाविष्ट हैं । कर्म काण्ड के सुप्रसिद्ध, बड़े - बड़े यज्ञ (राजसूय, विश्वजित् आदि) इसी के अन्तर्गत हैं ।

४- मनुष्य का सुव्यवस्थित - जीवन ही चौथा यज्ञ है । परमात्मा के विशाल विश्व यज्ञ की ही सीमित प्रतिभा मानव-जीवन यज्ञ है । मनुष्य को इसे ठीक रूप से व्यवस्थित और चालू रखना चाहिये ।

५-मनुष्य का प्रत्येक कल्याणकारी-श्रेष्ठ कर्त्तव्य भी यज्ञ है । विश्व-विधान और प्राकृतिक नियम के अनुसार जीवन को चलाने से संसार के साथ उसकी सुसङ्गति रहती है । उसके प्रतिकूल चलने से संसार बिगड़ता है, ये बुरे कर्म हैं, ये संसार को भी दुःखी बनाते हैं तथा करने वाले को भी क्लेश पहुँचाते हैं । यह अयज्ञ है ।

मनुष्य-यज्ञ के अनेक रूप होते हैं । समाज की भलाई के लिए चातुर्वर्ण्य एवं आश्रम-व्यवस्था का सङ्गठन एक महायज्ञ है । राष्ट्र यज्ञ है, स्वराज्य-संगठन यज्ञ है, बुराइयों के विनाश के लिए किया जाने वाला संग्राम भी यज्ञ है, सबों के लाभ का ध्यान रखते हुए किया जाने वाला व्यापार, संगठन-यज्ञ है । प्राचीन भारत के समान व्यवसाय वालों के संगठन यज्ञ हैं । प्राचीन भारतीय-गृहस्थ परिवार का व्यवस्थित गार्हस्थ्यधर्म, संपादन यज्ञ है, इस भाँति छोटे बड़े सभी संगठन, जो कल्याण के लिए होते हैं, यज्ञ हैं ।

अशुभ के लिए किया गया सङ्गठन-यज्ञ नहीं होता । दूसरों को-गरीब और निर्बलों को सताने के लिये, अशक्तों और बुद्धिहीनों का खून चूसने के लिए बड़े-बड़े संगठन किये जा सकते हैं, पर ये पापों को करने वाले कर्म, यज्ञ नहीं होते । दुर्लक्ष्य सामने आते ही संगठन में से यज्ञ के देवता निकल जाते हैं, उस पर असुरों का अधिकार होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ एक दिव्य महाशक्ति तथा उसका उत्पादन केन्द्र है । इसे आसुरी शक्तियाँ सदा नष्ट कर देने के प्रयत्न में लगी रहती हैं, अतः इसकी रक्षा आवश्यक है । शक्ति प्राप्त होने पर उसे सदुपयोग करने की अपेक्षा दुरुपयोग करने का प्रलोभन ही अधिक खींचता है । यही सबसे बड़ा खतरा है, जिससे यज्ञ को प्रतिक्षण बचाना होता है । ऋषिगण यज्ञों की रक्षा करने के लिये सदैव तत्पर रहते थे, उसका यही तात्पर्य था । आज भारतवासियों को उसी प्राचीन यज्ञ (सुसंगठन) कला को पुनर्जीवित करने की सबसे अधिक आवश्यकता है ।

अब प्रश्न यह है कि राष्ट्र में- विश्व में देवताओं का राज्य स्थिर करने का उपाय क्या है ? सब यज्ञ भूमि बना देना, सर्वत्र सोमरस (प्रेम) का सागर लहरा देना, जिसका क्रियात्मक रूप है, आत्मबलिदान, आत्मोत्सर्ग या स्वार्थ-परित्याग । यही यज्ञ का प्रगट या क्रियाशील प्राण है । इसके बिना यज्ञ कदापि जीवन-धारण नहीं कर सकता । यह सभी देवों का देव महादेव है । इसके उत्क्रांत होने से श्रद्धा-सेवा आदि सारे देव उत्क्रांत हो जाते हैं और इसकी स्थापना होने से सभी स्थापित हो जाते हैं । इसके बिना यज्ञ मृतवत् है, इसी से कई विद्वान्, यज्ञ का अर्थ बलिदान (अपने सारे स्वार्थों का बलिदान) करते हैं । यह बलिदान की अग्नि-मानव जीवन में सदा जलती रहे, इसीलिए बाहर के अग्निहोत्र में सदा स्वाहा, स्वाहा ध्वनियों के साथ ही हवि या बलि दी जाती है । यह 'स्वाहा' ही यज्ञ की जान है । यज्ञ के उत्तमांग में श्रद्धा और अनुशासन, मध्यमांग में 'सुसङ्गतिकरण' तथा आधार अंग में वात्सल्य, करुणा और दान, इसी बलिदान की बदौलत ही स्थिर और प्रतिष्ठित होता है । ऐसा न होने से उत्तमांग में, अश्रद्धा, अविश्वास, संदेह, शंका, अनुशासनहीनता, स्वेच्छाचारिता रूपी आसुरी शक्तियाँ प्रवेश कर उस अंग को क्षत-विक्षत्, क्षीण और रोगी बना देते हैं ।

इसी भाँति मध्यमांग में उत्सर्ग या बलिदान की भावना का अभाव होने से उसका सुसंगतिकरण बिखर जाता है और ईर्ष्या, द्वेष और क्रोध असुर प्रवेश कर व्यष्टि के लाभ के लिए समष्टि के कल्याण को ठुकराते रहता है और इसी तरह यज्ञ के तीसरे अंग 'दान' जो स्वभावतः ही बलिदान रूप है । इसमें छोटों की सहायता के लिए - उनकी कमी पूर्ति करने के लिए जो कुछ हमारे पास है, यह सब कुछ देना होता है । प्रेम ही बलिदान की प्रेरक-शक्ति है, अतः बिना प्रेम के बलिदान जीवित नहीं रह सकता । जहाँ प्रेम से बलिदान होता है, वहाँ बलिदान से प्रेम भी बढ़ता है, जैसे रस से प्राण पुष्ट होता है और प्राण पुष्ट होने से रस भी अधिक बनता है । यहाँ भी अहङ्कार और स्वार्थ-असुर प्रवेश कर इस अंग को नाश करने का प्रयत्न करने लगता है ।

मनुष्य, इस पूरे संसार का एक छोटा सा नमूना है । जैसे मनुष्य में सब देवता निवास करते हैं, उसी प्रकार उसमें पशु भी रहते हैं । स्वार्थ भाव पशु है- 'कामः पशु'। क्रोध, लोभ, द्वेषादि इसी के भेद हैं । इन पशु भावों को एक-एक पशुओं का प्रतीक कहा गया है । जैसे-बाज, घमण्ड का प्रतीक है, गिद्ध लोभ का, कुत्ता चापलूसी का, उल्लू अज्ञान का, गधा मूर्खता का, ऐसे ही अनेकों पशु भावों को प्रतीक रूप में पशु के नामों से ही वर्णन किया गया है । यज्ञ में इन पशुओं का बलिदान करने से (पशु भावापन्न) पशु-मनुष्य, मनुष्य बनता है, और मानव भावों का भी उत्सर्ग कर देने से वह दिव्य भावपक्ष-देव बन जाता है । यही यज्ञ में पशुओं के बलिदान का रहस्य है । अज्ञानी-असुर लोग प्रतीक नामधारी पशुओं की ही यज्ञ में बलि देते हैं, जो यज्ञ नहीं अयज्ञ और यज्ञ का विरोधी है ।

यज्ञ का घातक शत्रु स्वार्थ - खुदगर्जी है । स्वार्थ, प्रेम रूपी इन्द्र का शत्रु वृत्र (वृत्रासुर) है । यह प्रेम सूर्य को सदा ही ढकने की चेष्टा किया करता है । बलिदान दिन तो स्वार्थ, रात्रि । जिस भाँति बलिदान, यज्ञ-देवों में महादेव है, उसी तरह इसके विरोधी असुर दलों में सर्व प्रधान स्वार्थ है । अहंकार, मोह, अपनापन ये सब इसी के भिन्न-भिन्न रूप हैं । यज्ञ में जिन-जिन वस्तुओं को छोड़ना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़ता है, बलिदान करना पड़ता है, उसका एक ही नाम स्वार्थ है । प्राणाग्निहोत्र उपनिषद् में शरीरस्थ यज्ञ का चित्र खींचते हुए लिखा है- "**कामः पशुः** । काम अर्थात् पहले अपनी इच्छा, यही यज्ञ (संगठन) में बलिदान करने योग्य पशु है । स्वार्थ के लिए 'काम' शब्द का प्रयोग हुआ है । यज्ञ में अपनी अलग इच्छा (स्वार्थ) रखना, उसे भ्रष्ट कर देना है ।

सभी यज्ञ में देने - लेने की प्रक्रिया होती रहती है । हम अग्निहोत्र में घृत, ओषधि, बलवर्द्धक पवित्र अन्नों की आहुति देते हैं, उसे ही यज्ञ के देव गण ग्रहण कर सन्तुष्ट होते हैं और उसे ही सूक्ष्म-सूक्ष्मातिसूक्ष्म बना कर सारे विश्व-ब्रह्माण्डों में फैला देते हैं, जिससे पाँचो तत्त्व या अन्य सारे तत्त्व ही परिशुद्ध, निर्मल, आरोग्यमय एवं पुष्ट बन जाते हैं । फिर उन तत्त्वों को वृष्टि, विद्युत, वायु आकाश आदि के द्वारा हम पुनः प्राप्त कर अधिक पुष्ट, आरोग्य और निर्मल बनते हैं । शास्त्रों में 'पर्जन्य' इस शब्द के माध्यम द्वारा हमें उसकी पुनः प्राप्ति, वर्णित है, पर यह वृष्टि केवल जलों की ही वृष्टि नहीं है-यह 'पर्जन्य' सारे कल्याणकारी तत्त्वों की वृष्टि का एक प्रतीक है ।

यज्ञ में जिन वस्तुओं को बलिदान-उत्सर्ग किया जाता है, उसे हवि कहते हैं । यह हवि अनेकों प्रकार की होती है और भाँति-भाँति के यज्ञों में इसकी बलि दी जाती है । गुरुदेव रूपी यज्ञाग्नि में शिल्प श्रद्धा, भक्ति और सेवा की समिधा लेकर हवन करते हैं और उसे अनन्त ज्ञान की प्राप्ति होती है । व्यक्ति अपना स्वार्थ छोड़कर अपनी सारी उत्पादन और उपार्जन-शक्ति समाज-यज्ञ में हवन करता है, फलतः वह समाज द्वारा निर्मित अनेकों वस्तुओं, रसों और सुखों का उपभोग करता है, जिसे वह केवल वैयक्तिक श्रम से कभी पा ही नहीं सकता था । इसी भाँति समाज, जाति, वर्ग, सम्प्रदाय, प्रांत आदि जब राष्ट्र के लिये अपना सब कुछ स्वाहा कर देता है, तो इस राष्ट्र-यज्ञ से उन्हें व्यापक विशालता में सुख, सुविधा, ऐश्वर्य, संस्कृति और ज्ञान के साधनादि प्राप्त होते हैं । यज्ञ के इन्हीं मूल रूपों से भारत के पूज्य ऋषिगणों ने पञ्च महायज्ञ निरूपित कर सबों को यज्ञशिष्ट भोग कर निष्पाप और भगवद् प्राप्ति के योग्य बनने का निर्देश दिया था वे ये हैं : -

१- ब्रह्म यज्ञ
२- देव यज्ञ
३- पितृ यज्ञ
४- नृ यज्ञ
५- भूत बलि (वैश्वदेव यज्ञ)

ब्रह्म-यज्ञः- ऋषियों की भाँति अपना सब कुछ धन-सम्पत्ति, ऐश्वर्य, शरीर-प्राण, मन-बुद्धि, हृदय आदि सभी परमात्मा को अर्पित कर दें और फिर उनके आदेश के अनुसार ही अपने जीवन में इन सबों का उपयोग करें । (सब कुछ वस्तुतः परमात्मा को सौंपते ही उनका निर्देश अन्तर में क्रमशः स्पष्ट होकर प्राप्त होने लगता है ।) यह ब्रह्म यज्ञ है ।

देव-यज्ञः- विश्व के कल्याण के लिए प्रत्यक्ष अग्नि में ऐसे आरोग्यमय, पुष्ट और मङ्गल द्रव्यों की श्रद्धा और भक्ति से आहुति दें, जिसे विश्व में फैले अनन्त देव ग्रहण कर सबों के कल्याण और शुभ के लिए पर्जन्य रूप में विविध वृष्टि कर पुनः विस्तृत रूप में हमें प्रदान करते हैं ।

पितृ-यज्ञः- जीवन में पोषण, रक्षण एवं विविध कल्याणों की अभिवृद्धि करने-कराने वाले गुरु-पितृ-बड़ों की भक्ति और सेवा ही पितृ-यज्ञ है । शरीर छोड़ने के उपरान्त भी उनकी आज्ञा मान कर चलना तथा उनके आत्म-कल्याण के लिए सत्कर्मों का अनुष्ठान करना भी पितृ यज्ञ ही है ।

नृ-यज्ञः- अपने स्वार्थ की संकीर्णता को विशाल परार्थता में परिणत करने के लिए अपरिचित अयाचित अभ्यागतों की, देव और ईश्वर मान कर सेवा-अर्चन-भोजन-शयन-आदर और स्वागत वाणी से सत्कार करना ही नृ-यज्ञ है ।

भूत-बलि या वैश्वदेव-यज्ञः- स्थूल, सूक्ष्म, दिव्य जितने भी प्राणी या देव हैं, सबों को तृप्त करने की भावना से भोज्य सामग्री की हवि प्रदान करना ही भूत या वैश्वदेव यज्ञ है । इससे व्यक्ति का हृदय और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मा विशाल होकर अखिल विश्व के प्राणियों के साथ एकता सम्मिलन का अनुभव करने में होता है ।

यज्ञ-कर्त्ता को क्या खाना चाहिये ?- इसका भी एक आवश्यक नियम और व्रत है । उसे 'यज्ञावशिष्ट' ही ग्रहण करके-भोग करने का विधान है । तो यह 'यज्ञावशिष्ट' क्या है, जिसे खाने - उपभोग करने वाले 'सनातन ब्रह्म' यानी परमात्मा को प्राप्त कर लेते हैं और सर्व किल्विषों से मुक्त हो जाते हैं ।

यज्ञ शिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।।
यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः ।।

- गीता

ये भोगे जाने वाले पदार्थ उपभोक्ता को जहाँ और जिससे प्राप्त होते हैं, उसे (उस वस्तु को) उनको बिना अर्पित किये ही जो उसे अपने उपभोग में लाना चाहता, या लाता है, वह चोर है ।

तैर्दत्तान प्रदायैभ्यो यो भुक्तेस्तेन एव सः ।।

-गीता ३/१२

साधारण तौर से व्यक्ति को समाज से, समाज को राष्ट्र से, राष्ट्र को विश्व से और विश्व को यज्ञ पुरुष-परमात्मा से ही उपभोग-सामग्रियों की प्राप्ति होती है, अतः इसे भोगने का विधान है- **तेनत्यक्तेन भुञ्जीथा** *-ईशो०* त्याग कर, उत्सर्ग कर भोग करो ।

व्यक्ति अपने प्राप्त सारे उपभोग वस्तुओं को समाज के लिए उत्सर्ग कर दे, समाज राष्ट्र के लिए, राष्ट्र विश्व के लिए और विश्व यज्ञ पुरुष के लिए, इसी भाँति हवि प्रदान करे । यह यज्ञ करने के उपरान्त उनके हिस्से में यज्ञ देवों द्वारा जो कुछ दिया जाय, वही 'यज्ञावशिष्ट' है । इसे ही उपभोग करने वाले निष्पाप - निर्मल होकर (यज्ञपुरुष- विष्णु) विश्व व्यापकता को प्राप्त कर लेते हैं । यही शुद्ध और आध्यात्मिक समाजवाद है, जिसे इन यज्ञ -प्रक्रियाओं के द्वारा ही स्थापित किया जा सकता है ।

इन पञ्च महायज्ञों में ब्रह्मयज्ञ (संध्या और स्वाध्याय द्वारा आत्म निरीक्षण तथा आत्म सुधार करना)। देवयज्ञ (अग्निहोत्र द्वारा पञ्चभूतों के विकारों की निवृत्ति) । पितृयज्ञ (अपने को जीवन और शिक्षा देने वाले माता पिता और गुरुजनों का सेवा सत्कार)। ऋषियज्ञ (वेदादि सत् शास्त्रों के स्वाध्याय और उनके उपदेशों के प्रचार में यथाशक्ति क्षेम देना) और वलिवैश्वदेव यज्ञ (गाय, बैल, अश्व, श्वानादि पशुओं से सेवा लेने के फलस्वरूप जो हमने उन्हें कष्ट पहुँचाया है, उसका प्रत्युपकार करने के लिए उनको प्रथम खिलाना) सम्मिलित है । इन पञ्च महायज्ञों में देवयज्ञ का सम्बन्ध हवन यज्ञ से है, और हवन यज्ञ का सम्बन्ध हमारे व्यक्तिगत भौतिक जीवन से विशेष है । यद्यपि हवन का प्रत्यक्ष प्रभाव हमारे शारीरिक स्वास्थ्य पर विशेष पड़ता है, परन्तु परोक्ष रूप से यह हमारे सारे जीवन को प्रभावित करता है । हमारे शारीरिक स्वास्थ्य के इस व्यापक प्रभाव को ध्यान में रखते हुए ही कहा गया है कि **शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्** अर्थात् शरीर ही सब प्रकार के धर्मों की सिद्धि का साधन है और शरीर को स्वस्थ रखने का साधन हवन है । इस प्रकार हमारे समग्र जीवन की सफलता का मूल साधन परोक्ष रूप से हवन यज्ञ सिद्ध होता है ।

शरीर विज्ञान विदों के मतानुसार हमारा शरीर अंतःवाह्य इन्द्रियों के अतिरिक्त सहस्रों मन्त्रों का समुदाय है और शारीरिक स्वास्थ्य इन अङ्गों के ठीक - ठीक व्यापार पर निर्भर है । इस शरीर के इन अनेक अंगों द्वारा हम इस विश्व के अनेक पदार्थों का भोग करते हुए उन्हें अनेक प्रकार से विकृत और दूषित करते हैं । हम सुन्दर और सुस्वादु भोजन करके दुर्गन्ध मल-मूत्र निकाल कर प्रकृति के पदार्थों को दूषित करते हैं । यद्यपि हमारे मल - मूत्र को पौधे खाकर हमारे लिए फिर से भोज्य पदार्थ बना देते हैं, परन्तु हमारे मलमूत्र का बहुत कुछ सूक्ष्म अंश वायु, जल और पृथ्वी में शेष रह जाता और हमारे स्वास्थ्य पर दूषित प्रभाव करता है । इस दूषित अंश की निवृत्ति के लिए ही हवन यज्ञ की व्यवस्था आर्य जीवन में की गई है ।

वेद में बहुत जगह 'यज्ञम् विततम्', 'यज्ञम् वर्धयानः', 'यज्ञं वर्धन्' - इस प्रकार के वाक्य या शब्द आते हैं, जिनमें यज्ञ के विस्तार करने -

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बढ़ाने का वर्णन होता है । यह यज्ञ का विस्तार क्या है ? एक दूसरे से मिलने की प्रकृति ही सभी से अन्तर में स्थित यज्ञ-बीज है । यह बीज ही क्रमशः बढ़ता हुआ सारे विश्व में फैल जाता है, तभी मनुष्य को सर्व व्यापक यज्ञ पुरुष परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है । यही यज्ञ विस्तार का तात्पर्य है । मनुष्य सर्व प्रथम अपनी अयज्ञता को छोड़कर कुटुम्ब (गार्हपत्य) यज्ञ में संगठित होता है । इससे आगे बढ़ कर वह ग्राम पंचायत (आह्वनीय) बनाता है । ग्राम पंचायत क्रमशः विकसित होकर, जनपद, प्रांत और राष्ट्र के रूप में संगठित होता है । (दक्षिणाग्नि) और अन्त में सब राष्ट्रों की अंतर्राष्ट्रीय सार्वभौम महासभा में मनुष्य संगठन का यज्ञ परिपूर्ण होता है, परन्तु मनुष्य हृदयस्थ यज्ञ तब पूरा होता है, जब वह ईश्वरीय महा संगठन अपने को संगठित अनुभव करता है । तब वह सर्वमेध यज्ञ को पूरा करता है । यज्ञ विस्तार की यही अवधि या सीमा है ।

जब तक भारतवर्ष के जीवन में यज्ञ के द्वारा यज्ञ का यजन नहीं होगा, अर्पण या बलिदान की वृत्ति नहीं जगेगी, तब तक यहाँ की उन्नति का इन आसुरी अयज्ञों द्वारा सदा व्याघात और बाध ही रहेगा, और हमारी व्यापक तथा सर्वांगीण-उन्नति की कोई सम्भावना नहीं है ।

यज्ञों का विस्तृत क्षेत्र

यज्ञों के प्रकार

भारतीय परम्परा के अनुसार प्राणियों के ज्ञान, शक्ति, विद्या, बुद्धि, बल आदि की न्यूनाधिकता के कारण अधिकारानुरूप प्राणि-कल्याण के अनेक साधन बताये गये हैं । उनमें यज्ञ भी एक प्राणि- कल्याण का उत्कृष्ट साधन है । गीता-३/९ में भगवान् ने सभी कार्यों को बन्धन स्वरूप बतलाया है परन्तु यज्ञ को-

यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः ।।

- गीता ३ / ९

कहकर बन्धन कारक नहीं बताया है । अतएव इसे बुद्धिमानों को भी पवित्र करने वाले **पावनानि मनीषिणाम्** कार्यों में परिगणित किया है । वेदभाष्यकार आचार्य महीधर ने कार्यों के प्रशस्त, अप्रशस्त, श्रेष्ठ, श्रेष्ठतम ये चार भेद किये हैं । इनमें यज्ञ को श्रेष्ठतम कर्म बताया है । और इस अर्थ को श्रुति का समर्थन भी प्राप्त है ।

इस महत्त्वपूर्ण यज्ञ कार्य के भेद - उपभेदों की गणना करना साधारण कार्य नहीं है । गीता के चतुर्थाध्याय के यज्ञनिरूपण-प्रकरण में यज्ञ के १५ मुख्य भेद बतलाए गये हैं । यदि इनकी विभिन्न शाखाओं की गणना की जाय, तो यज्ञक्षेत्र को 'अनन्त' कह कर ही विश्राम करना पड़ेगा । अतएव हम इन भेदों की ओर न जाकर यज्ञकर्म के मुख्य शास्त्र 'कल्प' और उसके विद्वानों की परम्परा की ओर ही ध्यान देकर कुछ उपयोगी विचार उपस्थित करते हैं ।

महर्षि वेदव्यास की उत्कृष्ट रचना श्रीमद्भागवत भगवान् के श्रीमुख का यह वचन है-

वैदिकस्तान्त्रिको मिश्र इति मे त्रिविधोमखः।।

- ११/२७/७

इसके अनुसार सामान्यतः वैदिक, तान्त्रिक और मिश्र ये तीन यज्ञानुष्ठान की शैलियाँ ज्ञात होती हैं । यहाँ तान्त्रिक और मिश्र शब्द की व्याख्या में विचारकों के विभिन्न मत दीख पड़ते हैं । कुछ लोग तान्त्रिक शब्द से तन्त्र दर्शन प्रतिपादित योगादिक्रियाओं का, तथा कई विचारक दक्षिण और वाममार्ग नाम से प्रसिद्ध तन्त्रपद्धति के कार्यों का निर्देश बताते हैं । परन्तु यांत्रिक विचारकों के अनुसार- **'कर्मणां युगपद्भावस्तन्त्रम्'** - १/७/१ इस कात्यायन महर्षि की परिभाषानुसार एक कार्य में ही विभिन्न शाखाओं में प्रतिपादित अनेकताओं का अविरोधी संकलन करना 'तन्त्र' शब्द का अर्थ है । ऐसे ही कार्यों को 'तान्त्रिक' शब्द से निर्दिष्ट किया गया है । इस अर्थ के मान लेने पर इस प्रकरण में ही आगे कहे गये भगवदर्चा सम्बन्धी सभी विधान सुसंगत हो जाते हैं और ऐसे ही तान्त्रिक कार्यों के लिए आजकल स्मार्त शब्द का व्यवहार प्रचलित है । शास्त्रकारों ने स्मार्त शब्द की जो व्याख्या की है, उससे भी अनेक शाखाओं तथा अनेक वेदों के कार्यों का एक जगह सम्मिश्रण माना गया है ।

'मिश्र' शब्द साधारण मिलाव का अर्थ रखता है । मिश्र शब्द से ऐसे कार्यों का संकेत है जिसमें वेद और तन्त्र का सम्मिश्रण हो । याज्ञिक परम्परा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

के विचार से यहाँ मिश्र शब्द से पौराणिक कार्यों का संकेत है । उनकी दृष्टि में वेद और तन्त्र का सम्मिश्रण ही पौराणिक विधान है ।

उक्त याज्ञिक विचार से मख अर्थात् यज्ञ की श्रौत (वैदिक) स्मार्त (तान्त्रिक) और पौराणिक (मिश्र) ये तीन मुख्य शैलियाँ हैं ।

श्रौतयज्ञ

श्रुति अर्थात् वेद के मन्त्र और ब्राह्मण नाम के दो अंश हैं । इन दोनों में या दोनों में से किसी एक में सांगोपांग रीति से वर्णित यज्ञों को 'श्रौतयज्ञ' कहते हैं । श्रौत कल्प में 'यज्ञ' और 'होम' दो शब्द हैं । जिसमें खड़े होकर 'वषट्' शब्द के द्वारा आहुति दी जाती है और याज्या पुरोनुवाक्या नाम के मन्त्र पढ़े जाते हैं, वह कार्य 'यज्ञ' माना जाता है । जिसमें बैठकर 'स्वाहा' शब्द के द्वारा आहुति दी जाती है यह होम कहा जाता है । श्रौतयज्ञ-इष्टियाग, पशुयाग और सोमयाग इन नामों से मुख्यतया तीन भागों में विभक्त है । श्रौतयज्ञों के विधान की एक स्वतन्त्र परम्परा है, उस प्रयोग परम्परा का जिस कार्य में पूर्णतया उल्लेख हो उसे 'प्रकृतियाग' कहते हैं और जिस कार्य में विशेष बातों का उल्लेख और शेष बातें प्रकृतियाग से जानी जाँय उसे 'विकृतियाग' कहते हैं । अतएव श्रौतयज्ञों के तीन मुख्य भेदों में क्रमशः दर्शपूर्णमासेष्टि, अग्नीपोमीय पशुयाग, और ज्योतिष्टोम सोमयाग ये प्रकृतियाग हैं । अर्थात् इन कर्मों में किसी दूसरे कर्म से विधि का ग्रहण नहीं होता । इन प्रकृतियागों के जो धर्म ग्राही विकृतियाग हैं वे अनेक हैं । उनकी इयत्ता का संकलन भिन्न-भिन्न शाखाओं के श्रौतसूत्रों में किया गया है । यहाँ उनका बिना परिचय के नाम गिनाना अनुपयुक्त और अरोचक होगा । अतः श्रौत यज्ञ का सर्व सामान्य परिचय इस प्रकार समझना चाहिए-

श्रौतयज्ञ-आह्वनीय, गार्ह्यपत्य, दक्षिणाग्नि इन तीन अग्नियों में होते हैं इसलिए इन्हें 'त्रेताग्नियज्ञ' भी कहते हैं । प्रायः सभी श्रौत यज्ञों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष ढंग से, कम या अधिक रूप से तीनों ही वेदों के मन्त्रों का उच्चारण होता है, अतः श्रौतयज्ञ 'त्रयी' साध्य हैं । इनमें यजमान स्वय शरीर क्रिया में उतना व्यस्त नहीं रहता जितने अन्य ब्राह्मण जिन्हें 'ऋत्विज्' कहते हैं वे कार्य संलग्न रहते हैं । श्रौतयज्ञ का इष्टियाग प्रायः ४ वैदिक विधान कुशल ब्राह्मण विद्वानों के सहयोग से हो सकता है । पशुयाग में ६ ऋत्विज् होना आवश्यक होता है । सोमयाग में १६ ऋत्विज् होते हैं । इष्टियाग में अन्नमय प्रधान रूप से हवि अर्थात् देवताओं के लिए देय द्रव्य है । पशुयाग में प्रधान रूप से 'पशु' हवि है । सोमयाग में प्रधान हवि सोम होती है । सोमयाग के महान् यज्ञ सत्र और अहीन नाम से कहलाते हैं । सत्रयाग में ब्राह्मण जाति के १७ से २४ तक आहिताग्नि वैदिक विद्वान् ही रहते हैं । ये सभी यजमान होते हैं, और इन्हीं में से १६ व्यक्तियों को 'ऋत्विज्' का कार्य करना पड़ता है, इसमें दक्षिणा नहीं दी जाती है और यज्ञ का फल सब यजमानों को बराबर पूरा मिलता है । अहीनयाग में एक या अनेक अग्निहोत्री यजमान हो सकते हैं । परन्तु इसमें 'ऋत्विज्' अलग होते हैं, जिन्हें दक्षिणा दी जाती है। इस अहीनयाग का फल केवल यजमानों को ही मिलता है ।

इन श्रौतयज्ञों का प्रचार आजकल भारतवर्ष में नहीं के बराबर है, क्योंकि आजकल का मानव बहुमुखी और बहुधन्धी है । उसे कोई शास्त्रीय बन्धन पसन्द नहीं है । श्रौतयाग करने का वही अधिकारी है, जिसने विधिपूर्वक श्रौत अग्नियों का आधान लिया है और प्रतिदिन सांय प्रातः अग्निहोत्र में श्रद्धापूर्वक विधानुकूल समय लगाता है । श्रौताग्निहोत्री को अग्नि की निरन्तर रक्षा करनी पड़ती है । अग्नियों के रखने के लिये एक सुन्दर अग्निहोत्रशाला चाहिए । कुछ यज्ञों में दूध दही चाहिए वह बाजारू नहीं होना चाहिये । अग्निहोत्री स्वयं गौ रखकर आवश्यकता होने पर मन्त्रों द्वारा दूध दुहता है और मन्त्रों से ही दही जमाता है । अतएव गो रक्षा करना भी आवश्यक है । प्रत्येक पन्द्रहवें दिन 'प्रतिपद्' तिथि को इष्टियाग करना आवश्यक है जिसमें हवनीय द्रव्य तथा ऋत्विजों की दक्षिणा आदि भी आवश्यक है । इन सब साधनों को कथंचित् सुलभ कर लेने पर भी सबसे मुख्य बात जो परम आवश्यक है और जिसका अत्यन्त अभाव है, वह है वेद की याज्ञिक परम्परा का

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रायोगिक पूर्णज्ञान । आज इसका लोप होता जा रहा है । जिस प्रकार आज हम वेद के उन अर्थों के सम्बन्ध में अनभिज्ञ हैं, जिनसे जल-स्थल-नभ सम्बन्धी चमत्कारी वैज्ञानिक मन्त्र क्रियाओं का ज्ञान हो सकता था, वैसे ही वर्तमान परिस्थिति, शिक्षा समाज एवं सरकार की उपेक्षा वृत्ति से १०-१५ वर्ष के भीतर याज्ञिक प्रयोगपद्धति से भी सर्वथा अनभिज्ञ हो जायेंगे ऐसा प्रतीत होता है ।

स्मार्त यज्ञ

इनका श्रौत सूत्र कारों ने पाक यज्ञ तथा एकाग्नि शब्द से व्यवहार किया है । इनके मुख्यतया-हुत, अहुत, प्रहुत और प्राशित ये चार भेद हैं । जिन कार्यों में अग्नि में किसी विहित द्रव्य का हवन होता हो, वह हुत यज्ञ हैं । जिससे हवन न होता हो केवल किसी क्रिया का करना मात्र हो वह अहुत यज्ञ है । जिसमें हवन और देवताओं के उद्देश्य से द्रव्य का 'बलि' संज्ञा से त्याग हो, वह प्रहुत यज्ञ है । और जिसमें भोजन मात्र ही हो वह प्राशित यज्ञ है ।

-पा० गृ० १ ।४ ।१

स्मार्त यज्ञ का आधार भूत अग्नि शास्त्रीय और लौकिक दोनों प्रकार का होता है । शास्त्रीय अर्थात् आधान विधि के द्वारा स्वीकृत अग्नि औपासन, आवसथ्य, गृह्य, स्मार्त आदि शब्दों से कहा जाता है । इस अग्नि में जिसने उसको स्वीकार किया है, उसके सम्बन्ध का ही हवन हो सकता है । साधारण अग्नि लौकिक अग्नि है । इसे संस्कारों द्वारा परिशोधित भूमि में स्थापित करके भी स्मार्त यज्ञ होते हैं । स्मार्त यज्ञों की संख्या श्रौत यज्ञों की भाँति अत्यधिक नहीं है । इन यज्ञों की विधि और इयत्ता बताने वाले ग्रन्थ को 'गृह्यसूत्र' या 'स्मार्त सूत्र' कहते हैं । पंचमहायज्ञ, षोडशसंस्कार और और्ध्वदैहिक (प्रचलित मृत्यु के बाद की क्रिया) प्रधानतया स्मार्त हैं । स्मृति ग्रन्थों में उपदिष्ट कार्य जिनका (विनायक शान्ति आदि का) पूर्ण विधान उपलब्ध गृह्यसूत्रों में नहीं मिलता है, वे भी याज्ञिकों की परम्परा में स्मार्त ही कहलाते हैं । स्मार्त यज्ञ में प्रायः अकेला भी व्यक्ति कार्य कर सकता है । हवन वाले कार्यों में एक ब्रह्मा की तथा भोजनादि में अनेक व्यक्तियों की आवश्यकता होती है । गृह्यसंग्रहकार ने स्मार्त यज्ञों में यजमान ब्रह्मा और आचार्य (नामभेद) इन तीन की आवश्यकता बताई है ।

इस समय शास्त्रीय अग्नि वाले कार्य प्रायः लुप्त से हो गये हैं, क्योंकि इनमें भी अग्निरक्षा आदि का कार्य आजकल की प्रवृत्ति के अनुकूल नहीं बैठ पाता । जिनमें लौकिक अग्नि का ग्रहण है वे संस्कार, उपाकर्म, अन्त्येष्टि, आदि प्रचलित हैं । पर वे भी इनी-गिनी संख्या में हैं । स्मार्त यज्ञों में मानव के नैतिक गुणों के विकास का फल अधिक है । आज इनका प्रचार-प्रसार कम हो गया है । संभवतः आज की बढ़ती हुई अनैतिकता में हमारे लिए यह भी एक कारण हो ।

पौराणिक यज्ञ

श्रुति स्मृति कथित कार्यों के अधिकारी अनाधिकारी सभी व्यक्तियों के लिए पौराणिक कार्य उपयोगी हैं । आज कल इन्हीं का प्रचार और प्रसार है । पौराणिक कार्यों में यज्ञ शब्द का प्रयोग कल्प सूत्रकारों की याज्ञिक दृष्टि से उपयुक्त नहीं है । परन्तु गीता के व्यापक क्षेत्र से इनके लिए भी 'यज्ञ' शब्द का व्यवहार होता है । अतएव पौराणिक यज्ञों को हवन, दान, पुरश्चरण, शान्तिकर्म, पौष्टिक, इष्ट, पूर्त्त व्रत, सेवा, आदि रूप से अनेक श्रेणियों में विभक्त किया गया है । जिन जातियों को वेद के अध्ययन का अधिकार है, वे पौराणिक यज्ञों को वेदमन्त्रों सहित करते हैं और जिन्हें वेद का अधिकार नहीं है, उनको पौराणिक मन्त्रों से ही करते हैं । हमने भी सभी वर्गों की उपयोगिता की दृष्टि से इनका यह निर्देश किया है ।

पौराणिक यज्ञों का विस्तार अधिक है, अतएव यहाँ इनका पृथक्-पृथक् विवेचन करना संभव नहीं हो सकता । साधारणतया पौराणिक यज्ञों में गणपति पूजन, पुण्याहवाचन, षोडशमातृका पूजन, वसोर्धारा पूजन, नान्दी श्राद्ध, इन पाँच स्मार्त अंगों के साथ ग्रहयाग प्रधानपूजन आदि विशेष रूप से होता है । इन यज्ञों में लौकिक अग्नि का विशेष ग्रहण है । इनमें एक से लेकर हजारों तक कार्यक्षम व्यक्ति कार्य के अनुसार 'ऋत्विज्' बनाए जा सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पौराणिक यज्ञों के विस्तार में न जाकर यहाँ संक्षेप में श्रुति प्रतिपादित यज्ञों का परिचय दिया जा रहा है । यों तो यज्ञ के असंख्य भेद अर्थात् प्रकार शास्त्रों में वर्णित हैं । उन सबका केवल नामोल्लेख भी इस छोटे से लेख में नहीं किया जा सकता, तब उनके स्वरूप का वर्णन, उसके अनुष्ठान के प्रकार एवं अवान्तर अंग उपांग आदि का संक्षेपतः भी वर्णन यहाँ किस तरह किया जा सकता है । कई यज्ञ तो ऐसे हैं, जिनके अनुष्ठान का न तो आज तक कोई योग्य अधिकारी ही है न अनेक कारणों से उसका अनुष्ठान किया ही जा सकता है । जैसे भगवान् अनन्त, अपार हैं, वैसे ही उनके स्वरूप भूत वेद तथा तत्प्रतिपाद्य यज्ञ की महिमा भी अनन्त अपार है ।

यज्ञों के विविध प्रकार

श्रुति में वैदिक कर्मों के पाँच विभाग बतलाये गये हैं- १ अग्निहोत्र, २ दर्श-पूर्णमास, ३ चातुर्मास, ४ पशु और ५ सोम । स्मृति में यज्ञों का विभाग निम्न प्रकार से किया गया है- १ पाकयज्ञ संस्था, २ हविर्यज्ञ संस्था, ३ सोम संस्था । पाकयज्ञ संस्था में १ औपासन होम, २ वैश्वदेव, ३ पार्वण, ४ अष्टका, ५ मासिश्राद्ध, ६ श्रावणा ७ शूलगव, ये ७ कर्म आते हैं । हविर्यज्ञ संस्था में १ अग्निहोत्र, २ दर्श पूर्णमास, ३ आग्रयण, ४ चातुर्मास, ५ निरूढ़ पशु बन्ध, ६ सौत्रायणि और ७ पिण्डपितृयज्ञ हैं । सोम संस्था में १ अग्निष्टोम, २ अत्यग्निष्टोम, ३ उक्थ्य, ४ षोडशी, ५ वाजपेय, ६ अतिरात्र और ७ अप्तोर्याम का समावेश होता है । इस तरह 'गौतम धर्मसूत्र' में श्रौतस्मार्त कर्मों की संख्या मिलाकर २१ यज्ञ बतलाये हैं । इनमें पाकयज्ञ संख्याओं का निरूपण गृह्यसूत्रों एवं स्मृतियों में किया गया है और बाकी दोनों संस्थाओं हविर्यज्ञ संस्था तथा सोमयज्ञ संस्था का विवरण श्रौतसूत्रों एवं ब्राह्मणात्मक देवभाग में किया गया है ।

शाखाभेद से उक्त संस्थाओं में कहीं - कहीं कुछ अन्तर है । पहली दो संस्थाओं में से पहली एक वेद से और दूसरी दो वेदों-ऋक् तथा यजुर्वेद से सम्पन्न होती है । तीसरी संस्था में ऋक्, यजुः तथा साम तीनों वेदों के ऋत्विक् अपेक्षित होते हैं । सोमयज्ञ संस्था के अवान्तर अनेक भेद हैं, जिनमें से कुछ का उल्लेख इस प्रकार है- सत्र तथा अहीनसंज्ञक द्वादशाह यज्ञ, गवामयनसत्र, राजसूय, चयन, अश्वमेध, पुरुषमेध, सर्वमेध, पितृमेध, एकाह आदि । इनके भी व्यूढ़ द्वादशाह, ज्योति, गो, आयु, अभिजित्, विश्वजित्, सर्वजित्, सर्वज्योति, विश्वज्योति, साद्यस्क्र, अनुक्री, विश्वजिच्छित्न, श्येन, एकत्रिक, ब्रास्त, अग्निष्टुत्, त्रिवृत्स्तोम, बृहस्पतिसव, ईषु, सर्वस्वार, द्विदिव, त्रिरात्र, उपहव्य, ऋतपेय, वैश्यस्तोम, तीव्रसुत्, पवित्र, अभिषेचनीय, दशपेय, केशवपनीय, व्युष्टिद्विरात्र, राट् विराट् औपशद, पुनः स्तोम, चतुष्टोम, उद्भित्, बलभिद्, अपचिति, पक्षी, ऋषभ, गोसव, मरुस्तोम, कुलाय, इन्द्रस्तोम, इन्द्राग्निस्तोम, बिघन, सर्वस्तोम, नवसप्तदश, विषुवदतिरात्र, गोष्टोट, आयुष्टोम, अभिजिदतिरात्र, विश्वजिदतिरात्र, त्रिवृदतिरात्र, चैत्ररथ, कापिवन, गर्गत्रिरात्र, वैद, छन्दोमपवमान, अन्तर्वसु, पराक, चतुर्वीर, जामदग्न्य, वाशिष्ठ, विश्वामित्रसंजय, अभ्यासंग्य, पंचशारदीय, अन्तर्महाव्रत, त्रिकद्रुक, जनकसप्तरात्र, त्रिककुप्, कौसुरुविन्द, देवपुर, पौण्डरीक, दार्षद्धत, तुरायण, सर्पसत्र, प्रजापतिसहस्रसंवत्सर, विश्वसृजामयन आदि अनेक भेद हैं । इनमें एक दिन से लेकर सहस्रसंवत्सर पर्यन्त चलने वाले यज्ञ आते हैं । ये सभी यज्ञ श्रौताग्निसाध्य होने के कारण इनमें आहिताग्नि पुरुष का ही अधिकार है । इनमें कतिपय में ब्राह्मणादि तीनों वर्ण वालों का कई में केवल एक ही वर्ण वाले का अधिकार है । विभिन्न फल कामना वाले के लिए इनका विधान किया गया है । इन यज्ञों के अलावा श्रौतग्रन्थों में विभिन्न फल-प्राप्ति के उद्देश्य से अनेक इष्टियों का विधान किया गया है, उदाहरणार्थ- मृगारेष्टि, पथिकृत, व्रातपति, व्रतभृत, तन्तुमती, विवेची, संवर्ग, शुचेष्टि, सुमतीष्टि, रौद्रेष्टि, पवित्रेष्टि, नक्षत्रेष्टि, कारीरि आदि । अग्निहोत्री के मृत्युकाल में अन्त्येष्टि का विधान किया गया है ।

इस तरह श्रौत-स्मार्त यज्ञों में से कुछ का नाम निर्देशमात्र ऊपर किया गया है । इसका संक्षिप्त विवरण लिखने में एक बृहत् ग्रन्थ लिखना पड़ जायगा । इन यज्ञों के अतिरिक्त बहुत से पौराणिक, तांन्त्रिक एवं आगमोक्त यज्ञ हैं, जैसे कि विष्णुयाग, रुद्रयाग, महारुद्र, अतिरुद्र, गणेशयाग, चण्डीयाग,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गायत्री-याग, सूर्ययाग, विनायकशान्ति, ग्रहशान्ति, अद्भुतशान्ति, महाशान्ति, ऐन्द्रीशान्ति, लक्षहोम, कोटिहोम, वैष्णवेष्टि, वैभवीष्टि, पाद्मी इष्टि, नारायणी, वारुदेवी, गारुड़ी, वैवूही, पावमानी, आनन्ती, वैष्वक्सेनी, सौदर्शनी, पवित्रेष्टि आदि अनेक यज्ञों का विधान पाया जाता है ।

विभिन्न कामनाओं की पूर्ति के लिए विभिन्न देवताओं के यजन की भी विधि पायी जाती है । ब्रह्मवर्च्चस् की कामना वाला ब्रह्मणस्पति का, इन्द्रियपुष्टिकाम इन्द्र का, सन्ततिकाम प्रजापति का, श्रीकाम देवी माया का, तेजस्काम सूर्य का, पराक्रमसकाम रुद्रों का, अन्नादिकाम अदिति का, स्वर्गकाम आदित्यों का, राज्यकाम विश्वदेवों का, प्रजाकाम साध्यगणों का, आयुष्काम अश्विनीकुमारों का, पुष्टिकाम पृथ्वी का, प्रतिष्ठाकाम द्यावापृथिवी का, रूपकाम गन्धर्वों का, स्त्रीकाम उर्वशी का, सब पर आधिपत्य की कामना वाला परमेष्ठी (ब्रह्मदेव) का, यशस्काम यज्ञ पुरुष का, कोशकाम वरुण का, विद्या काम शंकर का, दाम्पत्यसुख की कामना वाला सती, उमा (पार्वती) का, धर्मकाम विष्णु का, अविच्छिन्न सन्ततिकाम पितरों का, रक्षाकाम पुण्यजनों का, ओजस्काम मरुद्गणों का, शत्रुनाश की इच्छा वाला निऋति का और विषयकाम चन्द्रमा का यजन करे । जिसे सब वस्तु की कामना हो या जो निष्काम हो अथवा जिसे मुक्ति की अभिलाषा हो, उसे तीव्र भक्तियोग से परमपुरुष भगवान का यजन करना चाहिए -

अकाम:सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम् ।।

- भाग० २ । ३ । १०

यदि कोई मनोरथ लेकर भक्तिपूर्वक भगवान् का यजन करता है, तो उसे उस अभिलाषित पदार्थ की प्राप्ति होती है । यदि निष्काम होकर भगवान् की आज्ञा पालन करने के लिए उनका यज्ञों द्वारा यजन किया जाय, तो अन्त:करण शुद्ध होकर वह मनुष्य मोक्षमार्ग का अधिकारी बन जाता है । यदि भगच्चरणपंकजसमर्पण-बुद्धि से स्ववर्णाश्रमानुसार धर्म कर्म रूप यज्ञ का अनुष्ठान श्रद्धा-भक्ति से किया जाता है, तो इससे भगवान् की प्रसनन्ता प्राप्त होती है, जिससे फिर कुछ भी असाध्य नहीं रह जाता ।

इनके अतिरिक्त जिज्ञासु एवं ज्ञानी साधकों के लिए शास्त्रों में ब्रह्मयज्ञ, संयमयज्ञ, इन्द्रिययज्ञ, ज्ञानयज्ञ, तपोयज्ञ, योगयज्ञ, प्राणयज्ञ, जपयज्ञ आदि अनेक भावयज्ञों का विधान किया गया है । इन सब बड़े-बड़े कठिन यज्ञों की तो आज केवल चर्चा मात्र रह गयी है, प्रत्येक गृहस्थ के लिए परमावश्यक नित्य कर्त्तव्य उन पाँच महायज्ञों में से भी एक का आज विरल आचरण देखने में आता है, जिनके न करने में दोष बतलाया गया है । ये पाँच महायज्ञ हैं- ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और मनुष्य यज्ञ इन्हीं के अहुत, हुत, प्रहुत, ब्राह्महुत्त और प्राशित नाम बतलाये गये हैं । नित्य वेदों का अध्ययन-अध्यापन ब्रह्मयज्ञ कहा गया है । तर्पण पितृयज्ञ शब्द से विहित है । वैश्वदेव होम का नाम देवयज्ञ है । विहित रीति से भूत बलि कर्म ही भूतयज्ञ कहा गया है । अतिथि-सत्कार ही मनुष्य यज्ञ है । इन महायज्ञों का बड़ा महत्त्व है, गृहस्थ को प्रतिदिन संध्यावन्दन, गायत्री आदि मन्त्र के जप, देवपूजन के साथ इन पाँचों महायज्ञों का अनुष्ठान प्रतिदिन आग्रह तथा आदर के साथ अवश्यमेव करना परमावश्यक है । 'शाट्यायनीयोपनिषद्' में बतलाया गया है कि सायं-प्रातः मध्याह्न तीनों समय यथाशक्ति स्नान, तर्पण, मार्जन, उपस्थान, पंचयज्ञ और तीनों काल में गायत्री का जप, यह नित्यकर्म मरणपर्यन्त करते रहना चाहिए -

त्रिसंध्यं शक्तितः स्नानं तर्पणं मार्जनंतथा ।
उपस्थान पञ्चयज्ञान् कुर्यादामरणान्तिकम् ।। १२ ।।
दशभिः प्रणवैः सप्तव्याहृतिभिश्चतुष्पदा ।
गायत्रीजपयज्ञश्च त्रिसन्ध्यं शिरसासह ।। १३ ।।

जो व्यक्ति इन नित्य कर्मों का अनुष्ठान नहीं करता, उसे अन्य किसी कर्म का अधिकार प्राप्त नहीं होता और उसका पतन हो जाता है । अतः इनका अनुष्ठान प्रतिदिन करना चाहिए । आगे चलकर इन्हीं नित्य यज्ञों में विहित भावना करने पर बड़े-बड़े श्रौतयज्ञों के फल सहज में प्राप्त हो जाते हैं ।

उदाहरणार्थ यहाँ कुछ भावनाओं का उल्लेख करना अप्रासंगिक नहीं होगा । ज्योतिष्टोमादि श्रौतयज्ञों में प्रातः, माध्यन्दिन और तृतीय, इस तरह तीन सवन हुआ करते हैं । इनमें प्रातः सवन का

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्बन्ध २४ अक्षर वाले गायत्री छन्द तथा वसु नामक देवताओं से है । माध्यन्दिन सवन का सम्बन्ध ४४ अक्षर के त्रिष्टुप छन्द तथा रुद्रों से और तृतीय सवन का सम्बन्ध ४८ अक्षर वाले जगतीछन्द तथा आदित्यों से है । इसलिए पुरुष यदि अपने जीवन के प्रारम्भिक २४ वर्षों में प्रातः सवन की, उसके बाद वाले ४४ वर्षों में माध्यन्दिन सवन की और अन्तिम ४८ वर्षों में तृतीय सवन की भावना करता हुआ विहित विधि से जीवन यापन करता है तो वह ११६ वर्ष पर्यन्त नीरोग बना रह कर स्वस्थ आयु का उपभोग करता है, बीच में उसकी मृत्यु नहीं हो पाती । इस तरह पुरुष का जीवन ही एक यज्ञमय बन जाता है ।

– छान्दोग्योपनिषद् ३।१६-१७

भोजन तो हम लोग सभी प्रतिदिन करते हैं । यदि उसी समय प्रारम्भिक पाँच ग्रासों को विहित भावना के साथ भक्षण करें, तो यही एक अग्निहोत्र यज्ञ बन जाय और फलस्वरूप सन्तति, पशु, अन्न, तेज, ब्रह्मवर्च्चस् आदि की प्राप्ति तथा समस्त पातकों का विनाश हो जाता है ।

– छान्दोग्य० ५।२४

द्युलोक, पर्जन्य, पृथ्वी, पुरुष तथा पत्नी में विशिष्ट प्रकार से यज्ञ की भावना बतलायी गयी है । उसका अनुसन्धान करने वाले साधक को ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है, जहाँ वह अनन्त, अखंड आनन्द का अनुभव करता है, उसे पुनः इस जनम, मरणशील, जरा-व्याधि आदि तापों से समन्वित लोक में नहीं आना पड़ता ।

– ६।२।९-१५ बृहदारण्यक

इसी तरह **'नारायणोपनिषद्'** में पुरुष के समस्त जीवनक्षेत्र को यज्ञमय भावना से ओतप्रोत करने की विधि बतलायी गयी है । वहाँ कहा गया है कि ऐसी विशिष्ट भावना करने वाला विद्वान स्वयं यज्ञ-स्वरूप बन जाता है । इस यज्ञ का यजमान वह स्वयं, पत्नी, श्रद्धा, उसका शरीर इध्मा, वक्षःस्थल वेदि, रोएं वर्हि, शिखा वेद (एक विशिष्ट प्रकार की कुशाओं की ग्रन्थि), हृदय यूप, काम ही आज्य, क्रोध ही पशु, तप ही अग्नि, दम ही पशु का शमयिता, वाणी दक्षिणा, प्राण उद्गाता, नेत्र अध्वर्यु, मन ब्रह्मा, कान आग्नीध्र, जीवनकाल दीक्षा, खाना हवि, पीना सोमपान, रमण करना उपसद, चलना, उठना, बैठना प्रवर्ग्य, मुख आह्वनीय अग्नि, बोलना आहुति, ज्ञान होम, सायं-प्रातः भोजन ही समिध्दोम, सायं-प्रातर्मध्यान्ह तीन काल ही तीनों सवन, दिन-रात दर्शपूर्ण मास, शुक्ल-कृष्ण पक्ष तथा मास ही चातुर्मास्य, छहों ऋतुऐं पशुबन्धयज्ञ, संवत्सर-परिवत्सर अहर्गण हैं । इसे सर्ववेदस् सत्र कहा गया है । मृत्यु ही इस यज्ञ का अवभृथस्नान है । इस तरह इससे जन्म से मरण पर्यन्त के समूचे जीवन को एक यज्ञरूप में भावना द्वारा सुस्थिर करने वाले व्यक्ति की मृत्यु यदि उत्तरायण में होती है, तो देवता बनकर वह आदित्य के सायुज्य हो जाता है, यदि दक्षिणायन में मृत्यु होती है तो पितर बनकर चन्द्रमा से सायुज्य की प्राप्ति होती है । इस तरह सूर्य, चन्द्र से सायुज्य प्राप्त कर वहाँ से ब्रह्म स्वरूप होकर मुक्त हो जाता है । श्रौत यज्ञों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है-

१- स्मार्त्ताग्नि-

विवाहोपरान्त विधिपूर्वक अग्नि का स्थापन करके सायं-प्रातः नित्य हवनादि कृत्य किये जाते हैं, उसे स्मार्त्ताग्नि (आवश्थ्याग्नि, ओपासस्थ्याग्नि) कहते हैं । इस अग्नि में किये जाने वाले कर्मों को स्मार्त कर्म कहते हैं । स्मार्त्ताग्नि में सिद्ध किये भोजन ही ग्रहण करने योग्य हैं ।

२- श्रौताधान-

गार्हपत्य, आह्वनीय और दक्षिणाग्नि के विधि पूर्वक स्थापना को 'श्रौताधान' कहते हैं । इन अग्नियों में किये जाने वाले यज्ञों का नाम 'श्रौतकर्म' है । (गार्हपत्य में हवि आदि का संस्कार, आह्वनीय में हवन और दक्षिणाग्नि में पितृ सम्बन्धी कार्य होते हैं)

३- दर्शपूर्णमास याग-

अमावस्या और पूर्णिमा को होने वाले यज्ञ को क्रमशः दर्श और पौर्णमास कहते हैं ।

४- चातुर्मास्य यज्ञ-

चार-चार महीने पर होने वाले इस यज्ञ को चातुर्मास्य यज्ञ कहते हैं । इस याग के चार पर्व होते हैं । प्रथम-फाल्गुणी-पूर्णिमा में वैश्वदेव पर्व, द्वितीय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आषाढ़ी पूर्णिमा का वरुणप्रधास पर्व, तृतीय कार्तिकी पूर्णिमा को साकमेध पर्व और चतुर्थ-फाल्गुण शुक्ल प्रतिपदा को शुनासीरीय पर्व होते हैं ।

(क) जिस पर्व के विश्वैदेवा देवता हों, उसे वैश्वदेव पर्व कहते हैं ।

(ख) जिस पर्व में वरुण के लिए प्रधास अर्थात् हवि दी जाती है, उसे 'वरुणप्रधास पर्व' कहते हैं ।

(ग) जिस पर्व में हवि प्राप्त कर, देवगण समान भाव से वृद्धि को प्राप्त होते हैं, उसे 'साकमेध पर्व' कहते हैं ।

(घ) जिस पर्व के देवता, आदित्य और वायु हों, उसे 'शुनासीरीय पर्व' कहते हैं ।

५- निरूढ़ पशु-

प्रतिवर्ष, वर्षाऋतु में अथवा उत्तरायण और दक्षिणायण में संक्रान्ति के दिन एकबार जो यज्ञ किया जाता है, उसे 'निरूढ़-पशु' कहते हैं ।

६- आग्रयण यज्ञ-

प्रति वर्ष बसन्त और शरद ऋतु में, नवीन यव और चावल से जो यज्ञ किया जाता है, उसे 'आग्रयण' या नवान्न यज्ञ' कहते हैं । यह यज्ञ करने के बाद ही नवीन अन्न खाना हितकारी है ।

७-सौत्रामणि यज्ञ-

इन्द्र के निमित्त जो यज्ञ किया जाता है, उसे 'सौत्रामणि यज्ञ' कहते हैं । यह दो प्रकार का होता है,- प्रथम स्वतन्त्र और द्वितीय अंगभूत । स्वतन्त्र भूत केवल ब्राह्मणों के विधेय हैं और अंगभूत, क्षत्रिय और वैश्य के लिए ।

८- सोमयाग-

सोमलता द्वारा जो यज्ञ किया जाता है, उसे 'सोमयाग' कहते हैं । इसके सोलह ऋत्विक् होते हैं । (दक्षिणा लेकर यज्ञ करने वाले ऋत्विक् कहलाते हैं)

सोमयाग के सात भेद होते हैं-

(१) अग्निष्टोम:-अग्निष्टोम साम में जिस यज्ञ की समाप्ति हो, और उसके बाद अन्य साम न पड़ा जाय, उसे अग्निष्टोम कहते हैं ।

इसी प्रकार २ उक्थ्य साम, ३ षोडसी साम, ४ वाजपेय साम, ५ अतिरात्र साम और ६ अप्तोर्याम नामक साम पढ़कर जिन यज्ञों की समाप्ति होती है, वे यज्ञ क्रम से उक्थ्य आदि नामों से पुकारे जाते हैं ।

अग्निष्टोम साम के अनन्तर षोड़शी साम जिस यज्ञ में पढ़ा जाता है, वह 'अत्यग्निष्टोम' कहा जाता है ।

(९) द्वादशाह यज्ञ-

यह सच और अहीन भेद से दो प्रकार का होता है, जिनमें सोलहों ऋत्विक्, आहिताग्नि, ब्राह्मण और बिना दक्षिणा वाले हों, ऐसे सोमयाग को 'सत्र' कहते हैं । 'सत्र' में १२ से लेकर १००० तक सुत्या होती हैं । सोमलता के रस को विधि पूर्वक निकाल कर प्रात: काल, मध्याह्न काल और सायं काल, इन तीनों समय में हवन करने को एक 'सुत्या' कहते हैं ।

दो सुत्या लेकर ग्यारह सुत्या, जिस यज्ञ में हों, और आदि-अन्त में जिसके 'अतिरात्र' नामक यज्ञ हों तथा अनेक यजमान, कर्त्ता हों, ऐसे सोमयाग को 'अहीन' कहते हैं ।

१०- गवानयन सत्र-

यह सत्र ३८५ दिनों में होता है । इसमें १२ दीक्षा, १२ उपसद तथा ३६१ सुत्या होती है ।

११- वाजपेय यज्ञ-

इस यज्ञ के आदि और अन्त में बृहस्पति सब नामक सोमयाग या अग्निष्टोम यज्ञ होता है, अथवा यज्ञ के प्रथम और पश्चात्, बारह-बारह शुक्ल पक्षों में बारह-बारह अग्निष्टोमादि यज्ञ होते हैं । इसमें सत्रह-सत्रह हाथ के सत्रह यूप होते हैं, यह चालीस दिन में सम्पन्न होता है ।

१२- राजसूय यज्ञ-

इसमें अनुमति आदि बहुत सी इष्टि और पवित्र आदि बहुत से यज्ञ होते हैं । यह यज्ञ ३३ महीने में पूरा होता है । इस यज्ञ का अधिकार केवल अभिषिक्त क्षत्रिय राजा को है ।

१३- चयन याग (अग्नि-चयन)-

जिस यज्ञ में ईंटों के द्वारा वेदी का निर्माण हो इसे चयन या अग्नि चयन यज्ञ कहते हैं । वह वेदी १० हाथ लम्बी और चौड़ी होती है, जिसको आत्मा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहते हैं । इसके दक्षिण और उत्तर की ओर छः- छः हाथ का चबूतरा बनता है, जिसको दक्षिण पथ और उत्तर पथ कहते हैं । पश्चिम की ओर साढ़े पाँच हाथ का चबूतरा बनता है, जिसको पुच्छ कहते हैं । इसकी ऊँचाई पाँच हाथ की होती है, अतः इसको पञ्च चितिक स्थण्डिल । इसे बनाने में चौदह तरह की ईंटें लगती हैं, जिसकी लम्बाई, चौड़ाई तथा मोटाई भिन्न-भिन्न मापों की होती है ।

चयन याग के चबूतरे में समस्त इष्टिकायें १११७० होती हैं ।

१४- अश्वमेध यज्ञ

इस यज्ञ को करने का अधिकार सार्वभौम, चक्रवर्ती राजा को ही है । इस यज्ञ में दिग्विजय के लिए घोड़ा छोड़ा जाता है । इसका आरम्भ फाल्गुण शुक्ल अष्टमी नवमी या ग्रीष्म ऋतु में होता है । इसमें २१ हाथ के यूप होते हैं । यह दो वर्ष से ऊपर समाप्त होता है ।

१५- पुरुषमेध यज्ञ

इस यज्ञ में पुरुष आदि यूप में बाँधकर छोड़ दिये जाते हैं । इसमें ११ यूप होते हैं और ४० दिन में समाप्त होता है । यह यज्ञ करने के बाद वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण किया जाता है ।

१६- सर्वमेध यज्ञ

इस यज्ञ में सभी प्रकार के वनस्पतियों और अन्नों का हवन होता है । यह यज्ञ ३४ दिन में समाप्त होता है ।

१७- पितृमेध यज्ञ

इस यज्ञ में मृत्पित्रादि का अस्थिदाह होता है । इसमें ऋत्विक् केवल अध्वर्यु होता है । द्विजमात्र को इसे करने का अधिकार प्राप्त है ।

१८- एकाह यज्ञ

एक दिन साध्य यज्ञ को एकाह यज्ञ कहते हैं । जिन यज्ञों में एक सुत्या होती है, ऐसे सोमयाग विश्वजित्, सर्वजित् भूष्टोम आदि शताधिक यज्ञ तत्तत्सूत्रों में विहित है । इस यज्ञ में एक यजमान और १६ ऋत्विक् होते हैं ।

१९- अहीन यज्ञ

दो सुत्या से लेकर ग्यारह सुत्या तक को अहीन यज्ञ कहते हैं । ये भी विभिन्न नामों में शताधिक तत्सूत्रों में विहित है ।

बारह से लेकर सोलह तक, अठ्ठारह से लेकर तेतीस, पैंतीस से लेकर चालीस, उन्चास, एकशत तीन सौ साठ, और (१०००) एक हजार सुत्या वाले जो अनेकों सोमयाग हैं, उन्हें 'सत्र' कहते हैं ।

वेदों में यज्ञ का बीज रूप से वर्णन है । यज्ञों की विधि ब्राह्मण ग्रन्थों में है । यज्ञों के नाम भी 'ब्राह्मण' शतपथ में हैं । उसके अनुसार प्रधान यज्ञ तीन ही हैं । दर्शपूर्ण १ ज्योतिष्टोम २ और अश्वमेध ३ । यह तीनों प्रकृतियाग कहलाते हैं । दर्शपूर्णमास । घृत-दधि-पय-ओर अन्नसाध्य यज्ञ हैं । यह यज्ञ दर्श अमावस्या और पूर्णमास चन्द्रमा के पूर्ण होने वाले पर्व में किया जाता है, इसी लिये इसका नाम दर्शपूर्णमास है । और (२) ज्योतिष्टोम यज्ञ- सोमरस ओषधियों से साध्य है इसमें ज्योतिः- स्वतः प्रकाश परमात्मा की स्तुति की जाती है इस यज्ञ की सात ७ संस्थाएँ हैं १ अग्निष्टोम, २ षोड़शी, ३ अतिरात्र, ४ अत्यग्निष्टोम, ५ आप्तोर्यामः, ६ उक्थ्य, ७ वाजपेय अर्थात् ज्योतिष्टोम यज्ञ ७ संस्था- नाम स्तोत्र की समाप्ति का है, अर्थात् जिन मन्त्रों से परमात्मा की स्तुति की जाती है, उसका नाम स्तोत्र है । याजक इनको संस्था कहते चले आये हैं । ३ तृतीय अश्वमेध यज्ञ में देने योग्य पशुओं का दान किया जाता है । अश्वमेध यज्ञ ही विचारणीय है,

प्रथम वेद ऋग्वेद है, द्वितीय यजुर्वेद- तृतीय सामवेद- चौथः अथर्ववेद है । वेदत्रयी ज्ञान- कर्म- उपासना- तीन ही काण्ड वेद में हैं । चौथा विज्ञान काण्ड है, ज्ञान अर्थात् गुण गुणी का ज्ञान ऋग्वेद में कर्म का यजुर्वेद में, उपासना का सामवेद में वर्णन है, विज्ञान का अथर्ववेद में है किन्तु तीनों वेदों में प्रथम 'यज्ञ' शब्द का प्रयोग है । **अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजं होतारम्** । ऋग्वेद के पहिले मन्त्र में यज्ञ शब्द सबसे पूर्व है **यज्ञस्य अग्निम्ईले** । शेष सब अग्नि के विशेषण हैं । अतः यज्ञ शब्द पूर्व यज्ञ नाम परमेश्वर का है । **तस्माद् यज्ञात् सर्वहुतः** । इत्यादि यजुर्वेद-के मन्त्र में यज्ञ रूप प्रभु से ४ वेद

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्राप्त हुए **यज्ञो वै विष्णु**-शत पथ में भी यज्ञ का नाम परमात्मा का है दूसरे वेद में इसे **त्वोर्जे त्वावाचवस्थ देवोबः- सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमायकर्मण** इत्यादि यजुर्वेद के प्रथम मन्त्र में श्रेष्ठतम शब्द पहिले आया है, **यज्ञोवै श्रेष्ठतम् कर्मः** अतः यज्ञ का अर्थ यजुर्वेद में सर्वोत्तम कर्म कर दिया **श्रेष्ठतमाय कर्मण आध्यायध्वम् । कस्मै प्रयोजनाय** इसे अन्न और विज्ञान की रक्षार्थ यज्ञ कर्म को प्राप्त कराइये । **अग्र आ याहि वीतये गृणानो हव्य दातये । निहोतासत्सि वर्हिर्षि ।** साम वेद का प्रथम मन्त्र है, इसमें भी वर्हिर्षि (यज्ञे) यज्ञ में देवताओं के लिये हवि अर्थात् उत्तम अन्न जो यज्ञ से उत्पन्न किया हैं, वह हव्यान्न 'भोतिकाग्नि' यज्ञ में आहुति देते हैं । अर्थात् तीनों वेदों में यज्ञ शब्द पूर्व आता है ।

'रशून पाहि' अर्थात् गो-महिषी-बकरी आदि की यज्ञार्थ रक्षा करो, यथा मनु ने लिखा है **यज्ञार्थ पशवः सृष्टाः**, यज्ञ के लिए पशु भगवान ने बनाये हैं गो आदि के बैलों से खेती) कृषि का काम और दुग्ध घृत से यज्ञ करो । यज्ञों में हिंसा का नाम नहीं। कल्पना करो, अतिथि यज्ञ है, क्या उसमें अतिथि की हिंसा की जाती है, नहीं, अतिथि की पूजा दूध दही आदि से सत्कार किया जाता है ।

राजसूयं वाजपेयमग्निष्टोमस्तदध्वरः ।
अर्काश्वमेधावुच्छिष्टे जीव वर्हिर्मदिन्तम ।।

- अथर्ववेद ११।९-७

राजसूय १। वाजपेय २। अग्निष्टोम ३। अध्वरः ४ अर्क ५ अश्वमेध ६ जीवबर्हि ७ मन्दितम ८ इत्यादि ईश्वर से ही सम्बन्ध रखने वाले यज्ञ हैं । इसमें पशु बलि का नाम नहीं, अश्वमेध का अर्थ घोड़ा को छोड़ना सबको विजय करना घोड़े को मार कर हवन करना यह अर्थ अश्वमेध शब्द का अनर्थ है ।

अतः हम सब मिल कर द्रव्य याग से संसार रोग रहित बनाने का उद्योग करें । द्रव्य यज्ञ ही सब यज्ञों का जनक है ज्ञान यज्ञ, जप यज्ञादि बिना इसके नहीं हो सकते । जब द्रव्य यज्ञ करेगा तो उत्तमान्न होगा । उत्तमान्न से उत्तम मन (बुद्धि) बनेगा तो ज्ञान (वेद को) पढ़ेगा, पुनः उत्तम मन्त्र का जप करेगा तो पुनः आध्यात्मिक तत्त्व सर्वव्यापक प्रभु को प्राप्त करेगा तो प्रभु का आनन्द प्राप्त करेगा, यही मोक्ष में प्राप्त कर **'आनन्दं लब्ध्वा आनन्दी भवति'**- द्रव्य यज्ञ इसी प्रकार अभ्युदय और निश्रेयस का साधन है (स्वर्गकामो यजेत्) सुख की इच्छा हो तो यज्ञ करो देवपूजा अर्थात् चेतन देवता विद्वान् और महादेव प्रभु की पूजा तथा भूमि जलवायु अग्नि आदि ३३ देवताओं को पवित्र बनाओं यही इनकी पूजा है । संगतिकरण, सब मिल कर रहो, प्रेम से रहो । दान, देश-काल पात्र को देख कर करो । जो भाई चार प्रकार के द्रव्यों से यज्ञ करते हैं, कस्तूरी केसर-अगर-तगर,चन्दन, इलायची, जावित्री, जायफल, इत्यादि सुगन्धित हैं । १ घृत, दूध, फल, यव, चावल इत्यादि पुष्टिकारक हैं २ शक्कर, गिरी, छुआरे, किसमिस, मेवादि, इत्यादि मिष्ट ३ रोगनाशकर गिलोय, सोमलतादि, इन ४ प्रकार के दृव्यों से यज्ञ करते हैं उनको यही उत्तम पदार्थ मिलेंगे । यज्ञ से सब प्रकार के सुखों की प्राप्ति होती है । इन सुखों में स्वर्ग सुख भी सम्मिलित है ।

विशिष्ट प्रयोजनों के लिए विशेष यज्ञ

विशिष्ट प्रयोजनों के लिए विशिष्ट अवसरों पर विशिष्ट उद्देश्यों के लिए कुछ अतिरिक्त यज्ञ किए जाते हैं । जिनमें भैषज्य यज्ञ, राजसूय, वाजपेय, अग्निष्टोम, सत्रमेध, सोमयाग, पुरश्चरण की प्रमुखता है । इनके संक्षिप्त परिचय इस प्रकार हैं-

अग्निष्टोम- *ताण्ड्य ब्राह्मण ६।३।८* और *शतपथ ब्राह्मण १०।१।२।९* में अग्निष्टोम का विवरण है ।

एष वै ज्येष्ठो यज्ञानां यदग्निष्टोम ।
तस्मात् उ ह वसन्ते वसने ।

अर्थात् यह अग्निष्टोम यज्ञों में ज्येष्ठ एवं श्रेष्ठ है । वह हर वसन्त में किया जाता है ।

प्रचलित होलिका उत्सव का अस्त-व्यस्त एवं विकृत स्वरूप इसी पुण्य प्रकिया का ध्वंसावशेष है ।

बदलते हुए ऋतु प्रभाव का दबाव लोक स्वास्थ्य पर बुरा न पड़े, इसकी रोकथाम के लिए अग्निष्टोम किए जाते थे । नयी फसल के नये अन्न में से भगवान का, समाज का अंश सर्वप्रथम निकालने की बात को ध्यान में रखते हुए यह विशिष्ट यज्ञ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्पन्न किए जाते थे । नये उपार्जन का व्यक्तिगत तथा सामूहिक प्रयोजन के लिए किस प्रकार उपयोग हो इसका निर्धारण भी इसी अवसर पर सामयिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए किया जाता था ।

सोमयाग-सोमयाग व्रत-उपवास प्रधान होते हैं । उनमें आहार तप का यजमान को विशेष अनुशासन पालना पड़ता है । आहार का नियमन तपश्चर्या में गिना जाता है । आहुति का विधान अलग है, पर इसमें साधक की आहार शुद्धि को प्रमुखता दी जाती है ।

सोमयाग प्रायश्चित्त परक होते हैं । जानबूझ कर किए गए पाप, अपराधों, अज्ञान में हुई भूलों, आवेशों में बन पड़े दुष्कृत्यों के शमन-समाधान का एकमात्र उपाय प्रायश्चित्त ही है । विस्मृत हो गये अथवा पूर्वजन्मों के कर्मों का भी दण्डफल तो भोगना ही पड़ता है । उस दण्ड के लिए शासन, समाज या ईश्वरीय विधान की प्रतीक्षा न करके स्वयं ही स्वेच्छापूर्वक उस दण्ड को सहन करने का साहस उभरे तो उसे प्रायश्चित्त कहा जायगा ।

ब्रह्मवैवर्त पुराण श्रीकृष्ण जन्म खण्ड में अनेक पाप प्रायश्चित्तों के लिए चान्द्रायण, कृच्छ चान्द्रायण आदि व्रत उपवास करने के साथ-साथ सोमपान पर निर्वाह करने और यजन करने का निर्देश है । सोमपान देवलोक के किसी उल्लासपूर्वक भाव सम्वेदन को कहा गया है । ऋषियों के लिए सोमवल्ली के रसपान के रूप में उसी का उल्लेख है । सामान्य मनुष्यों के लिए हविष्यान्न एवं यज्ञावशिष्ट चरु पुरोडाश का नाम ही सोमपान है । पुरोडाश चावल का, चरु जौ का बनता है । इसे दलिया या भात की तरह यज्ञ सान्निध्य में विनिर्मित किया जाता है ।

विभिन्न पापों के लिए विभिन्न प्रकार के प्रायश्चित्त विधानों का उल्लेख विभिन्न धर्मग्रन्थों में हुआ है । इस सन्दर्भ में जहाँ शारीरिक-मानसिक तितीक्षा परक कष्ट सहने, व्यक्ति या समाज को पहुँचाई गई हानि की क्षतिपूर्ति करने, तीर्थयात्रा आदि पुण्य-परमार्थ करने का विधान है, वहाँ कषाय-कल्मषों को धोने में सोमयाग जैसे यज्ञकृत्य करने का भी निर्देश है । इस सन्दर्भ में *तैत्तिरीयारण्यक २/७-८, वाज० सं २०।४।१६, तै० आ० २।३।१, बोधायन धर्मसूत्र ३।७।१, याज्ञ० ३।३०९, मनु० ११।३४, वाशिष्ठ० २६।१६, शतपथ २।५।२।२०* देखने योग्य हैं ।

किसी महिला से व्यभिचारजन्य पाप बन पड़े तो उसके लिए वाज० सं० १।८।३ के अनुसार यज्ञ कृत्य करने तथा भविष्य में वैसा न करने की प्रतिज्ञा करने पर प्रायश्चित्त हो जाता है और उस बन पड़े पाप की समाप्ति हुई समझ ली जाती है । इसके लिए एक विशेष मन्त्र से आहुति देनी पड़ती है । वह मन्त्र इस प्रकार है-

"यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रियः ।
यदेनश्चक्रमा वयमिदं तदव यजामहे स्वाहा ।"

अर्थात्- जो पाप ग्राम में, वन में, समाज में, इन्द्रियों से तथा दूसरे प्रकार से बन पड़े हैं, उन्हें इन आहुतियों के साथ नष्ट करते हैं ।

इस सन्दर्भ में ऐसे ही प्रायश्चित्त का संकेत *मनुस्मृति ८।१०५ और याज्ञ० २।८३* में भी किया गया है ।

सत्र- ज्ञानयज्ञों को सत्र कहते हैं । उनमें स्वाध्याय, सत्संग, मनन, चिन्तन एवं विचार विमर्श ही यजन माना जाता है । दिनचर्या उसी आधार पर बनती है । यह सामूहिक होते हैं और अधिक समय तक चलते हैं ।

भागवत-सप्ताह, रामायण-कथा, पुराणवाचन, उपनिषद् चर्चा अथवा किसी प्रयोजन विशेष का लगातार प्रशिक्षण-अभ्यास कराने की व्यवस्था को सत्र कहा जायगा । नैमिषारण्य में सूत द्वारा शौनकादिक अनेक ऋषियों को लम्बे समय तक कथा सुनाने का वर्णन मिलता है । इस प्रकार के आयोजन को सत्र संज्ञा दी जाती है ।

प्राचीन यज्ञ

(१) **राजसूय यज्ञ**- जिस सम्मेलन में सुसंगठित होकर राजा का चुनाव किया जाता है, ऐसे संगठन को राजसूय यज्ञ कहते हैं । इसका वर्णन *अथर्ववेद* के ४।८ सूक्त में देखा जा सकता है । इस सम्बन्ध में *शतपथ ब्राह्मण १३।२।२।१* में उल्लेख है-

राज्ञः एवं सूयं कर्मः । राजा वै राजसूयेन दृष्ट्वा भवति ।

अर्थात्- शासन व्यवस्था को राजसूय कहते हैं । राजा इस आयोजन के उपरान्त ही शासन की बागडोर सम्भालता है । आज की स्थिति में संसद

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विचार मन्थन एवं चुनाव आयोजनों को राजसूय कह सकते हैं । प्रज्ञा की सहमति से प्रजापति को प्रमुखता देते हुए की जाने वाली शासन व्यवस्था राजसूय है ।

इस प्रयोजन के लिए समय-समय पर जनसाधारण को भी एकत्रित करके सभा-सम्मेलनों के रूप में उसका मत जाना जाता था और लोक मानस के सामयिक मार्ग-दर्शन का प्रबन्ध किया जाता था, इस उद्देश्य के लिए होने वाले सभा-सम्मेलनों, वार्षिक आयोजनों को भी यही नाम दिया जा सकता है । विभिन्न संस्थाएँ, शासकीय सुव्यवस्था बनाने के लिए प्रस्तुत गतिविधियों की समीक्षा उपयुक्त प्रवृत्तियों में सहयोग करने तथा आवश्यक सुधार के लिए परामर्श देने जैसे प्रयोजनों को लेकर जन सम्मेलन होते रहते हैं, वह भी इसी श्रेणी में आते हैं ।

विशेष परिस्थितियों में विशेष परिस्थितियों के अनुरूप सामयिक निर्णय करने एवं योजना बनाने की किसी बड़ी बात को लेकर विशालकाय राजसूय यज्ञ होते हैं । महाभारत के बाद भगवान कृष्ण ने और लंका विजय के उपरान्त राम ने भावी निर्धारणों के लिए जनता का परामर्श सहयोग प्राप्त करने के लिए विशालकाय राजसूय यज्ञ किए थे । ऐसे ही विशाल आयोजन समय-समय पर अन्यत्र भी होते हैं ।

(२) **वाजपेय यज्ञ**- वाजपेय यज्ञों में भी राजसूय यज्ञों की तरह ही धर्मक्षेत्र में सन्तुलन बनाये रहने के लिए लोकसेवी विद्वान परिव्राजक एकत्र होकर सामयिक परिस्थितियों पर विचार करते थे । जो आवश्यक होता था, उसका निर्धारण करके अपने-अपने कार्य-क्षेत्रों में लौटते थे । वाजपेय सम्मेलनों में निर्धारित की गई नीति एवं योजना को कार्यान्वित करने के लिए विज्ञजनों को तत्पर किया जाता था । तद्नुरूप वातावरण बनाने, साधन जुटाने की सार्वदेशिक योजना चल पड़ती थी । साधारणतया वे 'कुम्भ' जैसे पर्वों के निर्धारित समय पर होते थे और विशेष आवश्यकता पड़ने पर विशेष रूप से किन्हीं स्थानों पर वाजपेय यज्ञों के आयोजन होते थे ।

(३) **विश्वजित् यज्ञ**- इस यज्ञ द्वारा एक राष्ट्र या मानव समुदाय अपनी विशाल हृदयता, प्रेम और शक्ति के प्रभाव से सारे विश्व पर अपना आधिपत्य कायम कर सकता है ।

(४) **अश्वमेध यज्ञ**- शतपथ के **राष्ट्रं वा अश्वमेधः वीर्यं वा अश्वः** वचनानुसार राष्ट्र और उसकी शक्तियों का भली भाँति संगठन करना ही अश्वमेध यज्ञ है ।

(५) **पुरुषमेध**- अपने-अपने वैयक्तिक स्वार्थों को छोड़कर राष्ट्र के ही उत्थान के लिए अपना जीवन अर्पित कर देना पुरुषमेध यज्ञ है । ऐसे लोगों को कभी-कभी संग्राम और दुष्टों के दमन करने में प्रत्यक्ष ही जीवन या प्राण का बलिदान कर देना पड़ता है । इसका वर्णन बौद्ध ग्रन्थों में मिलता है ।

(६) **गो मेध**- गौ जाति के उपयोग से भूमि को जोतकर तथा खाद्य से उर्वरा बनाकर भूमि को अधिकतम भोज्यसामिग्री उत्पन्न करने योग्य बनाना ही गो मेध है ।

(७) **सर्व मेध**- किसी उच्च यज्ञ के लिए जब निचला यज्ञ (संगठन) सब कुछ बलिदान कर देता है, तो उसे 'सर्वमेध' कहा जाता है ।

विशिष्ट प्रयोजनों के लिए कई बार व्यक्ति विशेष द्वारा उक्त यज्ञों में से जिसका निश्चय किया हो उसकी सार्वजनिक घोषणा के लिए एक विशाल आयोजन सम्पन्न किया जाता था, तो कई बार मूर्धन्य पुरोहितों द्वारा परिव्राजकों की, वानप्रस्थ सन्यासियों की दीक्षा के सार्वजनिक समारोह बुलाये जाते थे और उनमें सामूहिक संस्कार होते थे ।

अश्वमेध की एक विशेष प्रक्रिया राजसूय स्तर की भी सम्पन्न होती रही है । सामन्तवादी उच्छृंखलता के कारण शासकों के अनाचार प्रजापीड़क न बनने पाएँ, इसलिए उन्हें सर्वतन्त्र स्वतन्त्र नहीं रहने दिया जाता था । उन्हें किसी केन्द्रीय नियन्त्रण के अन्तर्गत रखने के लिए समय-समय पर ऐसे आयोजन होते रहते थे, जो स्वेच्छाचारिता का आग्रह करते थे, उन्हें बलपूर्वक वैसा करने से रोका जाता था । इसी प्रकार वाजपेय यज्ञों के अन्तर्गत भी 'दिग्विजय' अभियान चलते थे, विचारों, सम्प्रदायों को स्वेच्छाचारिता की आदर्शवादी दिशाधारा के अन्तर्गत रखने के लिए समर्थ आत्मवेत्ता 'दिग्विजय' के लिए निकलते थे । शास्त्रार्थ जैसे विचार-युद्ध ऐसे ही प्रयोजनों के लिए होते थे । जो हारता था उसे पृथकतावादी आग्रह छोड़कर संयुक्त प्रवाह में बहने के केन्द्रीय अनुशासन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में रहने के लिए विवश किया जाता था । आद्य शंकराचार्य जैसे अनेकों राष्ट्र संत समय-समय पर ऐसे ही दिग्विजय अभियानों के लिए निकले हैं । ऐसे सार्वजनिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किये गये धर्म-सम्मेलन अश्वमेधों की गणना में गिने जाते रहे हैं । आत्मशोधन एवं परमार्थ समर्पण की प्रक्रिया नरमेध, सर्वमेधों के रूप में जानी जाती रही है ।

नरमेध सम्बन्धी स्पष्टीकरण

छुटपुट कार्य-छुटपुट प्रयत्न से पूरे हो जाते हैं पर महान् कार्यों को पूरा करने के लिए प्रयत्न भी महान ही करने पड़ते हैं । छोटे प्रयत्नों से महान् कार्य नहीं हो सकते । अमरता, जीवन मुक्ति अथवा देवत्त्व का अधिकार प्राप्त करने के लिए सामान्य प्रयत्न से काम नहीं चलता , उसके लिए असामान्य कार्य करना पड़ता है । अपना उद्धार करना हो या दूसरों का कल्याण करना हो तो दोनों कार्य अपना समुचित मूल्य माँगते हैं ।

संसार में अनेक महान् पुरुष हुए हैं ।उन्होंने अपनी कीर्ति अमर की है, अपनी आत्मा का कल्याण किया है, साथ ही संसार की अनेक आत्माओं को प्रकाश देकर परम शान्तिदायक स्थिति तक पहुँचाया है, पर यह सब उनसे हो तभी सका है जब उन्होंने त्याग किया है । अपनी भावनाओं, इच्छाओं, क्रियाओं, सामर्थ्यों को निरन्तर सात्त्विक दिशा में अग्रसर करके ही कोई महान् बन सकता है ।

किसी भी राष्ट्र की सच्ची सम्पत्ति उस देश के महान् पुरुष ही होते हैं । धन, दौलत या विद्या बुद्धि से कोई देश महान् नहीं बनता, इन वस्तुओं के आधार पर प्राप्त की हुई चमक कुछ ही दिनों में फीकी पड़ जाती है और उसे नष्ट होने में देर नहीं लगती । पर महान् व्यक्ति युग-युगान्तरों तक जनता को प्रकाश, साहस, प्रेरणा एवं पथ-प्रदर्शन प्रदान करते रहते हैं । संसार में असंख्यों धनी मानी, राजा, रईस होते और मरते रहते हैं । उन्हें कोई जानता तक नहीं, पर हरिश्चन्द्र, शिवि, दधीच, मोरध्वज, हकीकतराय, वन्दा वैरागी, शिवाजी, प्रताप, बुद्ध, महावीर, गाँधी, मीरा, सूरदास आदि महानुभावों का यश अमर है । उनका मूल्य पृथ्वी के समस्त धनाध्यक्षों की अपेक्षा अधिक है । ऐसे ही नर रत्नों के कारण निर्धन होते हुए भी हम अपना मस्तक गर्व से ऊँचा रखते हैं ।

किसी समय हमारी परम्परा यही थी कि जनता जनार्दन की सेवा द्वारा आत्म कल्याण प्राप्त करने के लिए लोग अपना उत्सर्ग करते थे । जीवन का सबसे बड़ा लाभ यही समझा जाता था । लोग इस मंजिल पर एक दूसरे से आगे बढ़ने के लिए इस मार्ग पर बाजी लगाकर कदम उठाते थे । जब लोगों की ऐसी मनोवृत्ति थी, तो अनेकों महापुरुष यहाँ उत्पन्न होते रहते थे और उन्हीं के बलबूते पर यह देश विश्व का मुकुट मणि होने का दावा करता था । भारत की सबसे बड़ी विशेषता आत्मत्यागी, लोक सेवी, उच्च चरित्र के व्यक्ति पैदा करना रही है । यही हमारी महानता का एकमात्र कारण रहा है ।

आज लोगों की मनोवृत्तियाँ पूर्व काल की अपेक्षा उलटी हो गई हैं । हमारी निर्धनता एवं दुर्दशा का एक कारण यही है । हर आदमी चमड़ी और दमड़ी का मजा उठाने के लिए आतुर हो रहा है । प्राप्त तो जो होता है, सो ही होता है पर तृष्णा पर्वत से बढ़ कर रहती है । नीति-अनीति, पाप-पुण्य, उचित-अनुचित का विचार छोड़ कर भी लोग भौतिक वस्तुओं के संग्रह और वासनाओं एवं तृष्णाओं की पूर्ति के साधन जुटाने में लगे रहते हैं । त्याग की बात मूर्खता समझी जाती है । जो लोग कुछ राई-रत्ती त्याग भी करते हैं, उनका उद्देश्य यश, प्रतिष्ठा, मान, बढ़ाई होता है । तोले भर लगा करके मन भर बढ़ाई की घात लोग लगाया करते हैं । सार्वजनिक संस्थाओं में पद पाने के लिए जो जूते चलते हैं, उनसे स्पष्ट हो जाता है कि यह लोक सेवक बनने वालों का ढोंग करने वालों का वास्तविक उद्देश्य क्या है? इसी प्रकार त्यागी का वेश बना कर लाखों साधु वैरागी मुफ्त माल चरते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हुए निरुद्देश्य तो घूमते हैं, पर जो परमार्थ साधना में श्रम, संयम, त्याग एवं सेवा-साधना करना आवश्यक माना गया है, उससे दूर भागते हैं, तो प्रकट होता है कि इन लोगों की मनोभूमि भी क्या है ? राजनैतिक शासक, सामाजिक नेता, धार्मिक सन्त-महन्त आदि जो लोग त्याग एवं परमार्थ को अपना लक्ष्य घोषित करते हैं उनकी भी जब यह स्थिति है, तो सामान्य लोग भौतिक प्रयोजनों पर ही जीवन भर जान देते रहें, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है ।

जनता का दृष्टिकोण धन प्रधान होता जाता है । जिसके पास जितना अधिक भौतिक पदार्थ, सत्ता, शक्ति, संगठन है, वह उतना ही बड़ा माना जाता है । इस दृष्टिकोण का ही फल है कि प्राचीनकाल की भाँति अब सच्चे आत्म त्यागी महापुरुष बनने की आकांक्षा किसी बिरले को ही होती है । जिनकी होती है वे आवश्यक परिश्रम, त्याग एवं असफलता के लिए अभीष्ट धैर्य के अभाव में अधिक आगे नहीं बढ़ पाते । कुछ ही दिनों में हिम्मत हार कर पीछे लौट पढ़ते हैं । यह कठिनाई ही वह कारण है कि भारतवर्ष ऊँचा नहीं उठ रहा है । जब तक सच्चे आत्म त्यागी आगे न आयेंगे तब तक नैतिक, बौद्धिक, आत्मिक, चारित्रिक उन्नति नहीं हो सकती और इस उन्नति के बिना कोई पंच वर्षीय तथा दस वर्षीय योजना लोगों के अगणित कष्टों को दूर नहीं कर सकती । रोटी का प्रश्न महत्वपूर्ण तो है, आर्थिक उन्नति से मनुष्य की सुविधाएँ तो बढ़ती हैं पर वस्तुतः जनसाधारण को जिन असंख्यों उलझनों का सामना करना पड़ता है, उनका कारण मानसिक और नैतिक है, हमारी आंतरिक स्थिति जब तक ऊँची नहीं होती तब तक भौतिक साधनों का प्रचुर परिणाम भी अपने लिए तथा दूसरों के लिए सुख शान्तिदायक नहीं हो सकता । अमेरिका अत्यधिक धनी है पर उसकी स्वार्थपरता समस्त विश्व के लिए और खुद उसके लिए भी सर्वनाश का कारण बनती चली जा रही है ।

संसार में शिक्षा बढ़ती जाती है पर वस्तुतः आत्मिक दृष्टि से वह घोर अज्ञान एवं अविद्या में फँसता जा रहा है । कारण कि नैतिक दृष्टि से संसार का प्रभाव पूर्ण पथ प्रदर्शन कर सकने वाले महान् पुरुष अब दीख नहीं पड़ते । बिना प्रकाश के अंधकार कैसे दूर हो ? यह प्रकाश तेलबत्ती से नहीं अपने आपको जलाने से उत्पन्न होता है । प्राचीन काल के महापुरुषों ने अपने आपको जला कर ही संसार को प्रकाश दिया था । आज भी उस सत्य एवं तथ्य की आवश्यकता एवं उपयोगिता ज्यों की त्यों बनी हुई है । अपने व्यक्तिगत साधन-सुविधाओं को ही नहीं व्यक्तिगत इच्छा-आकांक्षाओं को भी परमार्थ के लिए त्याग करने वाले व्यक्तियों की आत्मा में ही वह अग्नि पैदा होती है, जिससे अपना तथा अनेकों का सच्चा कल्याण हो सके ।

प्राचीन काल में जब कभी जनता का नैतिक स्तर अधिक नीचा गिर जाता था तो उसे उठाने के लिए 'नरमेध यज्ञ' किये जाते थे । वेद ध्वनि के साथ अग्नि भगवान की वेदी पर कुछ व्यक्तियों को सर्वस्व होमा जाता था । ऐसा यज्ञ देख कर जनता की अन्तरात्मा को एक चोट लगती थी; एक रोशनी मिलती थी और वह सम्मुख एक महान आदर्श उपस्थित देखकर अपनी स्वार्थपरता पर लज्जा अनुभव करके मानवोचित आदर्शों की ओर मुड़ती थी । नरमेध का वास्तविक तात्पर्य है किन्हीं व्यक्तियों का आध्यात्मिक आदर्शों के लिए सांसारिक और मानसिक दृष्टि से अपने आपको पूर्ण रूपेण समर्पित कर देना । और जब तक वह जिये केवल निर्धारित आदर्श के लिए ही सोचना और काम करना । मनुष्य को मारकाट कर होम करने की बात मूर्खतां पूर्ण है । ऐसा शास्त्रों का आदर्श नहीं है । शास्त्र तो नरमेध का यज्ञ-पशु उसी को मानते हैं जो अपनी समस्त इच्छाओं और वस्तुओं का लाभ किसी निर्धारित लक्ष्य के लिए कर देता है ।

यहाँ यह समझ लेना चाहिए कि यज्ञ में किसी प्रकार की जीवहिंसा नहीं होती । यज्ञ को 'अध्वर' कहा गया है । अध्वर का अर्थ है वह कार्य जिसमें हिंसा न होती हो । यज्ञ के विशाल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आयोजन में आलस्य, प्रमाद, भूल आदि के कारण कहीं कोई जीवहिंसा का अवसर आ जाय, उसे देखने एवं रोकने के लिए एक विशेष अधिकारी नियुक्त किया जाता है, जिसका नाम 'अध्वर्यु' होता है । प्राचीन काल में गोमेध, अश्वमेध, नरमेध आदि जो यज्ञ होते थे उनमें भी हिंसा कदापि न होती थी, कोई जीव मारा या होमा नहीं जाता था । ऐसी कुप्रथा तो कुछ काल तक घोर अन्धकार युग में चली थी और वह भगवान बुद्ध के अवतार के साथ ही समाप्त भी हो गई । अब तो वैसा कोई प्रसंग या अवसर सैकड़ों वर्षों से नहीं आया जिसमें कोई जीव हवन किया गया हो । फिर मनुष्य को मार कर होमने की तो कल्पना भी मूर्खता पूर्ण है । यह सब बातें उपरोक्त पंक्तियों में बहुत स्पष्ट हैं ।

नरमेध का अर्थ है, मनुष्य द्वारा किसी विशेष उद्देश्य के लिए आत्म त्याग करना । अपने व्यक्तिगत स्वार्थों, इच्छाओं, महत्त्वाकांक्षाओं, सुविधाओं को तिलाञ्जलि देकर एक विशेष लक्ष्य में तन्मय हो जाना । यह लक्ष्य, यह उद्देश्य परमार्थमय-यज्ञमय होना चाहिए तभी उसे मेध कहा जायगा । यों अनेक व्यक्ति अनेक प्रकार के परमार्थिक कार्यों में लगे हुए दीखते हैं । बहुत लोग अपने प्रिय परमार्थिक कार्यों के लिए बहुत कुछ समय तथा धन भी देते हैं । पर उनमें से अधिकांश को यज्ञ की लोकैषणा की कामना रहती है । संस्थाओं को चलाने में अनेक व्यक्ति बहुत कार्य करते हैं पर वे ही लोग पद न मिलने पर, मन्त्री प्रधान आदि न बनाये जाने पर, नाम आदि न छपने पर उन कार्यों से विरत हो जाते हैं और अपने प्रतिद्वन्द्वी से बहुत ही निम्नस्तर पर लड़ते-झगड़ते हैं, यहाँ तक कि उस पूर्व निमित्त कार्य तक को नष्ट करने में नहीं शरमाते । कांग्रेस, आर्य समाज आदि अनेकों संस्थाएँ इसी लोकैषणा की अग्नि में अपनी लोकप्रियता तथा सेवा-शक्ति को नष्ट किये दे रही हैं । भाषावाद, शान्तवाद, जातिवाद, संस्थावाद आदि के नाम पर जो घोर संघर्ष 'लोक सेवक' कहलाने वालों में हो रहा है वह किसी से छिपा नहीं है । लोकैषणा की यश पद और प्रतिष्ठा प्राप्त करने की डायन ही उन लोक सेवकों को जो अपना बहुत समय, धन, सहयोग आदि उत्तम कार्यों में देते रहे हैं, इतना क्षुद्र और घृणित बना देती है कि उनके द्वारा कोई वास्तविक कार्य नहीं हो सकता ।

नरमेध का अर्थ अपनी भौतिक सुख सुविधाओं को, साधना-सामिग्रियों को ही परमार्थ के निमित्त परित्याग करना मात्र ही नहीं है, वरन् आगे बढ़ कर लोकैषणा, कीर्ति, प्रतिष्ठा, प्रशंसा आदि की मानसिक कमजोरियों को छोड़ना भी है । शारीरिक भोग, ऐश्वर्य और आराम की परवाह न करते हुए निर्धारित लक्ष्य में वाचा कर्मणा से तन्मय हो जाना ही सच्चा आत्म त्याग है । इसी को नरमेध कहा गया है ।

अब नरमेधों की प्रथा बन्द हो गई है । उसे पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है । ताकि हमारे देश की हीनता का वास्तविक कारण, महापुरुषों का अभाव दूर हो सके । कुछ ऐसी आदर्शवादी, आत्मत्यागी आत्माओं को आगे आने पर ही जनता का नैतिक स्तर ऊँचा हो सकता है । नई इमारतें बनाने पर उसकी नींव में प्राचीन काल में बलि प्रदान की जाती थी । आत्मिक वातावरण तैयार करने के लिए संसार को सुख-शान्ति का प्रकाश देने के लिए जिसे युग निर्माण की आवश्यकता है, उसके लिए आज भी ऐसी ही नर-बलियों की आवश्यकता है । पीड़ित मानवता के पुनरुद्धार के लिए आज प्राचीन काल जैसे नरमेध रचाने की भारी आवश्यकता अनुभव हो रही है ।

गायत्री महामन्त्र के अक्षरों में सन्निहित ज्ञान विज्ञान के द्वारा, शिक्षा-उपासना द्वारा, आज का दुखदायी युग बदल सकना सम्भव है । आज इस महाशक्ति की शक्तियाँ प्रसुप्त अवस्था में पड़ी हुई हैं, उन्हें जाग्रत किया जा सके, तो संसार के अगणित प्राणियों की समुद्र जैसी अथाह पीड़ा का निवारण हो सकता है । पर ऐसे 'शक्ति जागरण' के लिए नरमेध की आवश्यकता पड़ेगी । आत्मदानी आत्माएँ अपने आपे को बलि चढ़ा कर ही उस शक्ति को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रस्फुटित कर सकती हैं, जो संसार को वर्तमान त्रासदायक वातावरण को बदल सकें । आज सर्वत्र अणु-युद्ध के बादल गरज रहे हैं, पृथ्वी प्रलय की गोद में जाने के भय से काँप रही है, आज मानवता को दानवता ने ग्रस लिया है, वह अपने परित्राण के लिए जुहार मना रही है । इस संकट को उबारने के लिए कुछ दधीचि चाहिएँ जो नरमेध के लिए अपनी बलि देने को प्रस्तुत हों ।

जिनके ऊपर पारिवारिक जिम्मेदारियाँ न हों, जो व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं और सांसारिक सुविधाओं को लात मारने को तैयार हों, ऐसी निर्मल आत्मा वाले नर-नारियों की नरमेध के लिए आवश्यकता है । उन्हें कत्ल करके अग्नि में जलाया तो नहीं जायगा पर शेष जीवन को प्रायः ऐसी ही कष्ट साध्य कसौटी पर कसा जायगा । ऐसे यज्ञ-पशु को कुछ समय तक खूब चराकर मोटा करते हैं, वैसे ही जो नरमेध के बलि पशु होंगे उन्हें समुचित समय तक शिक्षा एवं साधना द्वारा आत्मिक रूप से परिपुष्ट किया जायगा । ऐसी बलिष्ठ आत्माओं की बलि ही अभीष्ट परिणाम उपस्थित करेगी ।

अश्वमेध महायज्ञों की तरह ही अब नरमेध यज्ञों के आयोजन की आवश्यकता है । गायत्री माता के पुरश्चरण यज्ञ हो चुके, अब बलि देना शेष है । उसके लिए हमें कुछ प्रकाश पूर्ण आत्माओं की आवश्यकता है । उन्हें ढूँढने के लिए हमारी आँखें चारों ओर घूम रही हैं, हमारा अंचल चारों दिशाओं में पसारा हुआ है । आशा और निराशा के झूले में अन्तरात्मा झूल रही है । निराशा इसलिए कि चमड़ी और दमड़ी का गुलाम मनुष्य आज की इस दुनिया में कोई ऐसे कष्ट साध्य हेतु के लिए अपने को देने का साहस क्यों करेगा ? आशा इसलिए कि सर्वस्य त्यागी ऋषियों का रक्त अभी किन्हीं की नाड़ियों में अवश्य होगा । उनके कानों में जब यह याचना भरी युग-पुकार पड़ेगी तो निश्चय ही वे चुप बैठे न रह सकेंगे ।

आध्यात्मिक यज्ञ

अथर्व वेद ७।१०३।१ में कहा गया है :-

को यज्ञ कामः ? क उ पूर्ति कामः ?

अर्थात्- यज्ञ की चिन्ता रखने वाला कौन है ? उस यज्ञ को पूरा करने की फिकर किसे है ?

वेद भगवान की यह चिन्ता स्वाभाविक है । मनुष्यों से वेद पूछता है-मनुष्यो ! क्या तुममें कोई ऐसा है, जो यज्ञ की कामना करे ? यज्ञ की फिकर रखे ? यह चिन्ता अकारण नहीं है । कहीं कोई बिरले ही मनुष्य ऐसे होते हैं, जो सच्चे यज्ञ की चिन्ता करते हैं ।

साधारण अग्निहोत्र तो प्रायः होते ही रहते हैं, बड़े यज्ञों का भी लोप नहीं हुआ है, वे भी यदा - कदा कराये ही जाते हैं । फिर यह पूछना कि-'हे मनुष्यो! क्या तुममें कोई ऐसा है, जो यज्ञ की चिन्ता करता हो ? उसे पूरा करने की चिन्ता करता हो ?' अवश्य ही रहस्यमय होना चाहिए ? यहाँ साधारण अग्निहोत्र से वेद भगवान का अभिप्राय नहीं है । वे उस वास्तविक यज्ञ की ओर संकेत करते हैं जिसका यह अग्निहोत्र स्थूल रूप है ।

हवन में विश्व-कल्याण के लिए, देवों को प्रसन्न करने के लिए बहुमूल्य सामिग्री होमी जाती है और कहा जाता है 'इदन्नमम' यह मेरा नहीं है । अपनी उत्तम से उत्तम वस्तुओं को, शक्तियों को, सामर्थ्यों को, विश्व-कल्याण के लिए लोक-सेवा में लगा देना, भगवान की दी हुई वस्तुओं को विराट् पुरुष, विश्व -मानव के चरणों में अर्पित कर देना, भी नहीं है, जो कुछ है सब प्रभु का है । फिर प्रभु की वस्तु प्रभु के चरणों में अर्पण करते हुए लोभ एवं संकोच करने की भी क्या जरूरत ? अभिमान और अहसान भी किस बात का ? प्रभु ने जो शक्तियाँ हमें दी है, वे इन्द्रिय भोगों के लिए नहीं हैं, उनके द्वारा जो कमाई होती हैं उसे अपने लिए ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जोड़-जोड़ कर जमा करना, यह तो अमानत में खयानत है । परमात्मा ने बिना मूल्य बिना कोई बदला लिए हमें अनेक वस्तुएँ, सुविधाएँ और साधन सामिग्रियाँ इसलिए दी हैं कि हम भी उनका उपयोग उसके लिए उसी प्रकार करें । परमात्मा हमें देता है और हम परमात्मा को उसके विराट् रूप विश्व मानव को, समाज को सोंप दें । यह आदान-प्रदान, परस्पर विनियम आनन्दप्रद एवं सद्भावों की वृद्धि करने वाला है । इसी प्रक्रिया के नाम यज्ञ हैं । यदि प्रभु की दी हुई वस्तुओं को अपनी संकुचित स्वार्थ पूर्ति के लिए ही सीमित रखें तो यह ईश्वर की इच्छा और व्यवस्था के प्रतिकूल आचरण है । परमात्मा चाहता है कि ऐसा न हो । मैं प्रजा के लिए त्याग करता हूँ, प्रजा मेरे लिए त्याग करे । जिस प्रकार निस्वार्थ दान का आचरण मैं निरन्तर करता हूँ, वैसा ही आचरण लोग भी करें और मेरे सच्चे अनुयायी बने । शतपथ ब्राह्मण में यज्ञ के इस मूलभूत उद्देश्य को स्पष्ट कर दिया गया है ।

प्रजापतिर्वाऽएत दगो कर्मा करोत्तत्ततो देवा अकुर्वन् ।

- शत० ६।२।३। ११

अर्थात्- प्रजापति परमात्मा ने आरम्भ में जिस प्रकार महान यज्ञ किया, उसी प्रकार का यज्ञ हम भी करते हैं ।

सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा ने अनेकों प्रकार की वस्तुएँ रचीं । वह उसने अपने लाभ के लिए नहीं वरन् प्रजा की सुख-सुविधा के लिए बनाईं । उसका निर्माण-कार्य केवल परमार्थमय था । मनुष्य के जीवन आरम्भ को भी सृष्टि माना जाय तो भी परमात्मा गर्भस्थ बालक के लिए, नवजात शिशु के लिए जो-जो सुविधाएँ तथा सुख-सामिग्रियाँ बनाकर तैयार कर देता है, उसे देखकर उसकी परमार्थ प्रियता का, यज्ञ भगवान का सहज ही पता चल जाता है । इसी का अनुकरण हमें करना है, अपनी सांसारिक और आन्तरिक सामर्थ्यों को परमात्मा के निमित्त ही अर्पित करना है । हमारी भावना यही होनी चाहिए :-

मेरा मुझमें कछ नहीं, जो कुछ है सो तोर ।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागत है मोर ।।

इस यज्ञ-भावना का संसार में लोप सा होता देखकर वेद भगवान को चिन्ता हुई । परमात्मा ने यज्ञ किया- मनुष्य को सब कुछ दिया, उसकी इच्छा थी कि यह लोग भी इस यज्ञ-प्रक्रिया को जारी रखें । यह मुझें दें-मैं फिर इन्हें दूँ । इस प्रकार दान का अलौकिक सुख इन जीवों को मिलता रहे ।

देहि मे ददातिमे - यजु० ३-५०

तुम मुझे दो-मैं तुम्हें दूँगा ।।

आज सर्वत्र यह क्रम टूटता दिखाई पड़ता है । लोग परमात्मा की दी हुई वस्तुओं को ले तो खुशी से लेते हैं, जो प्राप्त नहीं है, उसके लिए झगड़ते हैं, प्रार्थना करते हैं और यदि उनकी मनोवांछित अभिलाषा से कम मिलता है तो परमात्मा पर क्रोध भी करते हैं और उसे गालियाँ देने में भी नहीं चूकते । अपने स्वार्थ की तो उन्हें खूब फिकर रहती है, पर इस बात की चिन्ता नहीं रहती कि परमात्मा ने जो कुछ हमें दिया था, यज्ञ भावना से, त्याग और परमार्थ की भावना से दिया था और इसलिए दिया कि इन वस्तुओं एवं शक्तियों का उपयोग हम भी वैसा ही करें और आरम्भ किये हुए यज्ञ को जारी रखें । इसके विपरीत सब लोग अपनी अपनी ही आपापूती में लगे हैं । परमात्मा भी हमें खूब दे, संसार के अन्य समस्त जीव भी हमें सब कुछ दें, पर हम किसी को कुछ न दें । सब के दिये हुए को अपने पास समेट कर रखें, खुद ही उसका उपभोग करें । यह व्यापक रूप से छाई हुई स्वार्थ परता- परमात्मा के यज्ञ उद्देश्य के प्रतिकूल है । हवन आदि भी लोग करते हैं, पर उसमें भी स्वार्थ ही प्रधान होता है । अपने जीवन को, अपनी विचार धारा को, अपने लक्ष एवं कार्यक्रम को यज्ञमय बना लेने की सच्ची इच्छा आज किस में है ? इसी अभाव से दुखी होकर वेद भगवान् ने पूछा है :- **को यज्ञ कामः ? क उ पूर्ति कामः ?** यज्ञ की चिन्ता रखने वाला कौन है ? उसे पूरा करने की फिकर रखने वाला कौन है ? परमात्मा से जो अनन्त ऋण प्राप्त हो रहा है, उसका प्रत्युपकार करने, या उस भावना का प्रवाह संसार में जारी रखने वाली कार्य प्रणाली अपनाने की इच्छा की कमी देखकर ही परमात्मा पूछता है कि- कृतघ्नियो! मेरी सृष्टि रचना के महान् उद्देश्य को नष्ट क्यों कर रहे हो ? स्वार्थ परता से ऊँचे उठकर परमार्थ मयी यज्ञ भावना को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

क्यों नहीं अपनाते ? विश्व हित लोक सेवा और प्रभु पूजा की चिन्ता क्यों नहीं करते ?

अग्निहोत्र के स्थूल लाभ पिछले पृष्ठों पर बताये जा चुके हैं, पर उसका वास्तविक स्वरूप है-स्वार्थ परता का त्याग और त्याग, संयम, सेवा, सदाचार, परोपकार, उदारता, सहृदयता, आत्म निर्माण आदि सद्भावनाओं को चरित्रार्थ करना । इसी वास्तविक यज्ञ का बाह्य प्रदर्शन एवं स्थूल रूप हवन है । हवन को आध्यात्मिक यज्ञ का नाटक भी कह सकते हैं । जैसे नाटक देखकर उस नाटक में दिखाई हुई भावना जाग्रत होती है, उसी प्रकार अग्निहोत्र को देख कर हम आत्माहुति देने का, आत्म त्याग एवं अपनेपन-स्वार्थपरता को छोड़ना सीखते हैं । हवन से यही प्रवृत्ति सर्वत्र नाचती दीखती है ।

हवन कराने वाले पंडितों और विद्वानों की कमी नहीं । दक्षिणा हो, तो वे आसानी से कहीं भी उपलब्ध हो सकते हैं । पर ऐसे आचार्यों की भी आज भारी कमी है, जो स्वयं मन से अपने आचरण से ऐसा यज्ञ करें और यजमान को भी ऐसा ही आत्म त्याग का हवन करना सिखाएँ । यह भी इस संसार में एक बड़ा भारी अभाव है । इस अभाव को पूरा करने के लिए प्रार्थना की गई है:-

य इ मं यज्ञं मनसा चिकेत प्रणोवोच स्तमि-हेहे ब्रवः ।

- अथर्व

हे प्रभो, ऐसा गुरु भेजो, जो हमें मन से यज्ञ करना सिखावे ।

जब तक मन से यज्ञ करना न आये तब तक हवन मात्र से यज्ञ का वास्तविक उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता । यज्ञ का वास्तविक उद्देश्य अपने आपको परमात्मा के चरणों में सोंप देना है । मन बुद्धि चित्त अहंकार का अन्तःकरण चतुष्टय, दसों इन्द्रियाँ, दसों प्राण आदि आन्तरिक सम्पदाओं को भी जब जीव परमात्मा को सोंपता है । इनका आहुति, भगवान में लगा देने का होम करता है, तभी सच्चा यज्ञोद्देश्य प्राप्त होता है । इस यज्ञ की चर्चा उपनिषदों में इस प्रकार है:-

''तस्यैवं विदुषो यज्ञस्यात्मा यजमानः श्रद्धा पत्नीः उरो वेदी वेद शिखा वागहोता, प्राण उद्गाता, चक्षुरध्वर्यु मन्नो ब्रह्मा, श्रोतमाग्नीध्र यन्यु रवं तथा ह्वनीयः उद्गाता ।''

इस आध्यात्मिक यज्ञ में आत्मा यजमान, श्रद्धा यजमान की पत्नी, हृदय वेदी, वेद शिखा, वाणी होता, प्राण उद्गाता, चक्षु अध्वर्यु, मन ब्रह्मा, कान आग्नीध्र, मुख आहवनीय अग्नि है ।

इसी प्रकार का वर्णन और भी है:-

वाग्वै यज्ञस्य होत्रा ।
चक्षुर्वै यज्ञस्याध्वर्युः ।
प्राणोवै यज्ञस्योद्गाता ।
मनो वै यज्ञस्य ब्रह्मा ।

- बृहदारण्यक ३।१।३-६

वाणी यज्ञ का होता, चक्षु यज्ञ का अध्वर्यु, प्राण यज्ञ का उद्गाता और मन यज्ञ का ब्रह्मा है ।

यज्ञ पुरुष परमात्मा ही है । उसके चरणों में अपने को समिधा की भाँति समर्पित कर देने से अपना स्वरूप भी वैसे ही यज्ञमय हो जाता है, जैसे हवन की अग्नि में पड़ी हुई समिधा तथा सामिग्री अग्नि रूप हो जाती है । परमात्मा की आज्ञाएँ, प्रेरणाएँ, तथा सतोगुणी प्रवृत्तियाँ अपने अन्तःकरण में धारण करना, अभ्यास, वैराग्य, स्वाध्याय, भक्ति आदि साधनों से ईश्वरीय प्रकाश को अपनी अन्तःभूमिका में अधिकाधिक धारण करना भी यज्ञ है । सर्वव्यापक परमात्मा को सब में समाया हुआ देखकर गुप्त से गुप्त दुष्कर्मों से बचना चाहिये । कोतवाल को सामने खड़ा देखकर चोर जिस प्रकार ठीक उसके सामने ही चोरी करने का साहस नहीं करता, उसी प्रकार परमात्मा को सर्वव्यापक समझने वाला व्यक्ति भी कोई कुविचार एवं कुकर्म नहीं कर सकता क्योंकि जब उसे अपने अन्तःकरण में परमात्मा बैठा दिखाई पड़ता है तब उसके सामने कुविचार कैसे करे ? इसी प्रकार विश्व के कण-कण में जब प्रभु दिखाई पड़ता है तो कौन सा गुप्त स्थान ऐसा हो सकता है, जहाँ वह अपनी चोरी को छिपा ले ? इसी प्रकार जो सर्वत्र प्रभु की विद्यमानता अनुभव करेगा वह सभी जड़ चेतनों के साथ सद्व्यवहार के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकता । इसलिए यज्ञ पुरुष भगवान को सर्वव्यापी मानकर उसे अपनी अन्तरात्मा में धारण करना भी आध्यात्मिक यज्ञ है । इस यज्ञ निष्ठा को सर्वत्र यज्ञ पुरुष का ही रूप देखने की ब्रह्म दृष्टि को योगी जन सदैव अपनाते रहते हैं । शास्त्रों में भी इसका समर्थन है:-

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ।

- गीता ३।१५

सर्व व्यापक ब्रह्म, सदैव यज्ञ में रहता है ।

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्म कर्म समाधिना ।।

- गीता ४।२४

अर्पण (हवन क्रिया) ब्रह्म है, हवि ब्रह्म है, ब्रह्म रूप अग्नि में हवन किया जाता है और ब्रह्म ही हवन कर्ता है । इस प्रकार जिसकी बुद्धि में सभी कर्म ब्रह्म रूप हो जाते हैं वह ब्रह्म को ही प्राप्त होता है ।

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम् ।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् ।।

- गीता ९।१६

मैं क्रतु हूँ, मैं यज्ञ हूँ, मैं स्वधा हूँ, मैं औषधि हूँ, और मैं ही मन्त्र, घृत, अग्नि और हवन हूँ ।

गीता ने आध्यात्मिक यज्ञ को भली प्रकार समझाने के लिए उसके छोटे विभाग भी किये हैं । दैव यज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, आत्मयज्ञ, तप यज्ञ, योग यज्ञ, स्वाध्याय यज्ञ, ज्ञान यज्ञ, प्राण यज्ञ, संयम यज्ञ, आदि की चर्चा करते हुए यह बताया है कि आत्म कल्याण के, प्रभु प्राप्ति के मार्ग पर चलते हुए जो भी सत्साधन कार्य में लाये जाते हैं वे सब यज्ञ रूप ही हैं:-

दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते ।
ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति ।।
श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति ।
शब्दादीन्विषयानन्य इन्द्रियाग्निषु जुह्वति ।।
सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे ।
आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते ।।
द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे ।
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः ।।
अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे ।
प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः ।।
अपरे नियताहाराः प्राणान्प्राणेषु जुह्वति ।
सर्वेऽप्येते यज्ञविदोयज्ञक्षपितकल्मषाः ।।

- गीता ४।२५-३० ।

उपरोक्त श्लोकों में जिन यज्ञों की चर्चा है उनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है ।

(१) योगियों का देवयज्ञ- सूर्य अग्नि आदि देवताओं से अपनी इन्द्रियों का सम्बन्ध अनुभव करते हुए, उस सम्बन्ध की शक्ति को बढ़ाना ।

(२) ब्रह्मयज्ञ- ज्ञान रूपी ब्रह्म अग्नि में अपने कर्म बन्धनों को होमना ।

(३) संयमयज्ञ- संयम के तप रूपी अग्नि में इन्द्रियों की वासना को जलाना ।

(४) इन्द्रिययज्ञ- इन्द्रिय शक्ति का मर्यादित सीमा में प्रयुक्त करके उनकी शक्ति का सदुपयोग करना ।

(५) आत्मयज्ञ- आत्मा रूपी अग्नि में प्राणों की गतिविधि का उत्सर्ग करना ।

(६) द्रव्ययज्ञ- अपनी भौतिक सम्पदा को सत्कर्मों में लगाना ।

(७) तपयज्ञ- शारीरिक कष्ट सहिष्णुता तितिक्षा एवं द्वन्द्वों को सहन करने की शक्ति का उपार्जन ।

(८) योगयज्ञ- योगाभ्यास द्वारा आत्मविकास ।

(९) स्वाध्याय यज्ञ- सद्ग्रन्थों द्वारा, सत्संग द्वारा एवं चिन्तन - मनन द्वारा आत्म ज्ञान का सम्पादन ।

(१०) ज्ञानयोग- सद्ज्ञान की अभिवृद्धि ।

(११) प्राणयज्ञ- अपान में प्राण का लय, प्राण में अपान का समर्पण, इनकी गतिविधियों का सन्तुलन करने के लिए कुम्भक का अभ्यास ।

(१२) आहारयज्ञ- भोजन की पवित्रता एवं उत्कृष्टता का साधन ।

इन सब साधनों से मनुष्यों के सब पाप नष्ट हो जाते हैं और ब्रह्म की प्राप्ति की दिशा में उसके कदम तेजी से बढ़ते जाते हैं ।

यह आध्यात्मिक यज्ञ अन्तिम लक्ष्य है, स्थूल यज्ञ इसकी प्रथम सीढ़ी है । जैसे साकार मूर्ति पूजा के अभ्यास बढ़ाकर निराकार ब्रह्म की उपासना की जाती है, वैसे ही अग्निहोत्र द्वारा यज्ञ भावनाओं का विकास कर अपने आपको ब्रह्मार्पण करते हुए स्वयं यज्ञ रूप बनना होता है । यही यज्ञ का परम रहस्य है । यह परमार्थ प्रियता, परस्पर सहयोग, सद्भावना की वृत्ति, संयम, त्याग, उदारता, धर्म प्रियता, आस्तिकता एवं ईश्वर उपासना की भावना ही यज्ञ का वास्तविक रहस्य है ।

एक बार ब्रह्म ज्ञानी राजा जनक ने सब ऋषियों से यज्ञ का वास्तविक रहस्य पूछा था और कहा था

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जो कोई उस रहस्य को बतायेगा उसे सौ गौऐं दान दी जायेंगी । अन्य ऋषियों ने स्थूल यज्ञों का वर्णन तो बहुत किया पर उसका अन्तिम लक्ष्या, प्रधान उद्देश्य कोई न बता सका । तब महर्षि याज्ञवल्क्य ने यज्ञ का मर्म बताते हुए आत्म संयम और प्रभु परायणता का प्रतिपादन किया । इससे संतुष्ट होकर जनक ने याज्ञवल्क्य को निर्धारित दान देते हुए कहा:-

वेत्याग्निहोत्रं याज्ञवल्क्य धेनु शतं ददामीति ।

हे याज्ञवल्क्य! आप अग्निहोत्र के रहस्य को जानते हैं, इसलिए आपको सौ गौऐं भेंट करता हूँ ।

गीता ने इस तथ्य का भली प्रकार स्पष्टीकरण किया है:-

श्रेयान्द्रव्य मयाद्यज्ञाज्ज्ञान यज्ञः परंतपः ।

- गीता ४।३३

हे अर्जुन! द्रव्यमय-वस्तुओं से होने वाले यज्ञ की अपेक्षा ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ है ।

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः ।

- गीता ३।९

यज्ञ के निमित्त किये कर्मों के अतिरिक्त और सब कर्म बन्धन रूप हैं ।

यहाँ यज्ञ का अर्थ परमार्थ पूर्ण एवं अनासक्त भावना से किये हुए सत्कर्म ही से है । हवन तो मनुष्य हर घड़ी कर नहीं सकता, हवन के अतिरिक्त भी उसे बहुत से काम करने पड़ते हैं । यहाँ तो परमार्थ की कर्त्तव्यमयी स्वार्थ भावना द्वारा जीवन का प्रत्येक कार्य करने का आदेश है । जो कर्म इस भावना से नहीं किये जाते अर्थात् स्वार्थ की संकुचित बुद्धि से किये जाते हैं, वे जीवन को जन्म - मरण की फाँसी में बाँधने वाले सिद्ध होते हैं ।

इस यज्ञ-भावना से रहित व्यक्ति को उसकी स्वार्थ परता के कारण सर्वत्र निन्दा, घृणा, दण्ड, द्वेष एवं दुर्भावना का शिकार बनना पड़ता है । सच्चे मन से उसे कोई नहीं चाहता, उसका कोई सच्चा मित्र भी नहीं होता, फल-स्वरूप सांसारिक दृष्टि से भी वह उन्नति नहीं कर पाता और न सच्चे सहयोग से मिलने वाला सुख ही उसे प्राप्त होता है । ऐसा स्वार्थी मनुष्य चाहे कितना ही धनी हो जाय, लोक निन्दा, सन्मित्रों के अभाव एवं अपनी दूषित मनोवृत्ति के कारण उत्पन्न होते रहने वाली नाना प्रकार की कठिनाईयों से सदा चिन्तित, भयभीत एवं दुखी रहता है । कहा भी है:-

नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम् ।

- गीता ४।३१

हे अर्जुन! यज्ञ (भावना) रहित मनुष्य को इस लोक में भी सुख नहीं, फिर परलोक का सुख तो होगा ही कैसे ?

इसलिए भगवान ने वही कहा है, कि परमार्थ को प्रधान और स्वार्थ को गौण रखो । कर्त्तव्य कर्म करते हुए जितना कुछ मिल सके, उसी से सन्तुष्ट रहो । अनीति की मिठाई से नीति की सूखी रोटी का अधिक मान करो । क्योंकि ईमानदार और कर्त्तव्य परायण व्यक्ति को भले ही स्वल्प साधन एवं थोड़ी वस्तुएँ प्राप्त हों, पर वह उस थोड़े से ही पूर्ण स्वास्थ्य, सद्भाव पूर्ण परिवार, एवं आनन्दमय जीवन का अधिकारी बन सकता है, जब कि अनीतिवान् व्यक्ति प्रचुर साधन-सामग्री के स्वामी होते हुए भी बीमारी, गृह-कलह, राज-दण्ड, शत्रुता, वासना आदि के उपद्रवों से घिरे हुए नाना प्रकार के दुःख पाते रहते हैं और अपना धन इन्हीं नालियों में होकर बहाते रहते हैं ।

धर्म-कर्त्तव्य को यज्ञ मानना और उसी के प्रसाद स्वरूप जो यज्ञावशिष्ट (पुरोडाश) प्राप्त हो, उससे संतुष्ट रहना जीवन निर्वाह का एक परम पुनीत मार्ग है । गीता में इस जीवन नीति की बड़ी प्रशंसा की है:-

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।

- गीता ४।३१

यज्ञ से बचे हुए अमृत को खाने वाले व्यक्ति सनातन ब्रह्म को प्राप्त करते हैं ।

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ।

- गीता ३।१३

यज्ञ से बचा हुआ अवशिष्ट खाने वाला सर्व पापों से छूट जाता है । जो केवल अपने लिए ही बचाता है वह पाप खाता है ।

यह यज्ञ-भावना ही संसार के पारस्परिक सहयोग को कायम रखे हुए हैं । इसे त्याग कर तो मनुष्य असुर हो जाता है और हिंसक पशुओं की तरह एक दूसरे को लूट खाने में जुट पड़ता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसी अवस्था में तो मनुष्य जाति का तथा संसार का नाश ही हो सकता है ।

इस संसार का ही नहीं समस्त लोकों, नक्षत्रों और मण्डलों, ब्रह्माण्डों और अणु -परमाणुओं का कार्यक्रम भी पारस्परिक सहयोग, त्याग एवं आदान-प्रदान से ही चल रहा है । यही भावना सब को परस्पर जोड़े हुए है । वेद भी इस तथ्य का प्रतिपादन करते हैं :-

अयं यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः ।

- ऋ० १।१६४।३६

यह यज्ञ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की नाभि है- बांधने वाला है ।

यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः ।

- अथर्व ९।१०।१४

यज्ञ ही समस्त विश्व ब्रह्माण्ड का केन्द्र-मूल है । इस यज्ञ-भावना की रक्षा करना और बढ़ाना हम सब का परम पावन आध्यात्मिक कर्त्तव्य है । इसी कर्त्तव्य की ओर ध्यान दिलाने के लिए वेद भगवान हम सबसे पूछते हैं:-

को यज्ञ कामः ? क उ पूर्त्ति कामः ?

यज्ञ की चिन्ता कौन रखेगा ? उसकी पूर्ति कौन करेगा ? इसका उत्तर हमें अपने को इसके लिये उपस्थित करके देना चाहिये ।

***

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गायत्री यज्ञ विधान

यज्ञाग्नि की शिक्षा तथा प्रेरणा

अग्नि भगवान् के स्थूल रूप का पूजन करने के लिये सुन्दर हवन-सामग्रियों के कुंड रूपी मुख में आहुतियाँ दी जाती हैं । सूक्ष्म पूजन करने के लिए अग्नि रूपी तेजस्वी भगवान् को अपने अन्त:करण में धारण करना होता है और उनके गुणों को अपनाकर स्वयं अग्नि रूप बनना होता है । अग्नि भगवान् से ऐसी ही प्रार्थना यजमान करता है कि-

ॐ अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेन इध्मस्वचवर्धस्व इद्धय वर्धय ।

-आश्वलायन गृह्यसूत्र १ ।१० ।१७

अर्थात्-हे अग्निदेव, आप प्रदीप्त होओ और हमें भी प्रदीप्त करो । जो गुण आप में हैं, उन्हें ही हम धारण करें, ऐसी प्रार्थना इस मन्त्र में की गई है । अग्नि-यज्ञ का सच्चा उपासक वही कहा जायेगा, जो अपने इष्टदेव में तन्मय होकर उसके समान गुणों वाला बनने का स्वयं भी प्रयत्न करे ।

स्थूल अग्नि की स्थापना और पूजन का स्थान हवन-कुंड है, यज्ञ की सूक्ष्म महत्ता को स्थापित करने का वास्तविक स्थान हृदय अन्त:करण है । उस अग्नि के स्वत्व गुण को धारण करके अपने को अग्नि रूप, अग्नि गुण-सम्पन्न बनाने का प्रयत्न ज्ञानी लोग अपनी ज्ञान-बुद्धि द्वारा करते हैं, तभी उनका जीवन अग्नि रूप यज्ञमय बनता है ।

अविदन्ते अतिहितं यदासीत यज्ञस्यधाम परमं गुहायत्

-ऋग्. १ ।८११

"यज्ञ का वास्तविक निवास स्थान है हृदय रूपी गुफा में । वह अत्यन्त गुप्त है । परन्तु ज्ञानी सत्पुरुष उसे प्राप्त कर लेते हैं ।"

यज्ञ को अग्निहोत्र कहते हैं । अग्नि ही यज्ञ का प्रधान देवता है । हवन-सामग्री को अग्नि के मुख में ही डालते हैं । अग्नि को ईश्वर-रूप मानकर उसकी पूजा करना ही अग्निहोत्र है । अग्नि रूपी परमात्मा की निकटता का अनुभव करने से उसके गुणों को भी अपने में धारण करना चाहिए एवं उसकी विशेषताओं को स्मरण करते हुए अपने आपको अग्निवत् होने की दिशा में अग्रसर बनाना चाहिए । नीचे अग्नि देव से प्राप्त होने वाली शिक्षा तथा प्रेरणा का कुछ दिग्दर्शन कर रहे हैं-

(१) अग्नि का स्वभाव उष्णता है । हमारे विचारों और कार्यों में भी तेजस्विता होनी चाहिए । आलस्य, शिथिलता, मलीनता, निराशा, अवसाद यह अन्ध-तामसिकता के गुण हैं, अग्नि के गुणों से यह पूर्ण विपरीत हैं । जिस प्रकार अग्नि सदा गरम रहती है, कभी भी ठण्डी नहीं पड़ती, उसी प्रकार हमारी नसों में भी उष्ण रक्त बहना चाहिए, हमारी भुजाएँ काम करने के लिए फड़कती रहें, हमारा मस्तिष्क प्रगतिशील, बुराई के विरुद्ध एवं अच्छाई के पक्ष में उत्साहपूर्ण कार्य करता रहे ।

(२) अग्नि में जो भी वस्तु पड़ती है, उसे वह अपने समान बना लेती है । निकटवर्ती लोगों को अपना गुण, ज्ञान एवं सहयोग देकर हम भी उन्हें वैसा ही बनाने का प्रयत्न करें । अग्नि के निकट पहुँचकर लकड़ी, कोयला आदि साधारण वस्तुएँ भी अग्नि बन जाती हैं, हम अपनी विशेषताओं से निकटवर्ती लोगों को भी वैसा ही सद्गुणी बनाने का प्रयत्न करें ।

(३) अग्नि जब तक जलती है, तब तक उष्णता को नष्ट नहीं होने देती । हम भी अपने आत्मबल से ब्रह्म तेज को मृत्यु काल तक बुझने न दें ।

(४) हमारी देह, "भस्मान्तं शरीरम्" है । वह अग्नि का भोजन है । न मालूम किस दिन यह देह अग्नि की भेट हो जाय, इसलिए जीवन की नश्वरता को समझते हुए सत्कर्म के लिये शीघ्रता करें और क्षणिक जीवन के क्षणिक सुखों के निमित्त दुष्कर्म की मूर्खता से बचें । जीवन की गति-विधि ऐसी रहे कि किसी समय मृत्यु सामने आ खड़ी हो, देह अग्नि को भेंट करनी पड़े, तो किसी प्रकार का पछतावा न हो । अग्नि रूपी यमराज का हम नित्य दर्शन एवं पूजन करते हुए उसके साथ आत्मसात् होने की तैयारी करते रहें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(५) अग्नि पहले अपने में ज्वलन शक्ति धारण करती है, तब किसी दूसरी वस्तु को जलाने में समर्थ होती है । हम पहले स्वयं उन गुणों को धारण करें जिन्हें दूसरों में देखना चाहते हैं । उपदेश देकर नहीं, वरन् अपना उदाहरण उपस्थित करके ही हम दूसरों को कोई शिक्षा दे सकते हैं । जो गुण हम में होंगे, वैसे ही गुण वाले दूसरे लोग भी हमारे समीप आवेंगे और वैसा ही हमारा परिवार बनेगा । इसलिये जैसा वातावरण हम अपने चारों ओर देखना चाहते हों, पहले स्वयं वैसा बनने का प्रयत्न करें ।

(६) अग्नि, जैसे मलिन वस्तुओं का स्पर्श करके स्वयं मलिन नहीं बनती, वरन् दूषित वस्तुओं को भी अपने समान पवित्र बनाती है, वैसे ही दूसरों की बुराइयों से हम प्रभावित न हों । स्वयं बुरे न बनने लगें, वरन् अपनी अच्छाइयों से उन्हें प्रभावित करके पवित्र बनावें ।

(७) अग्नि जहाँ रहती है वहीं प्रकाश फैलता है । हम भी ब्रह्म-अग्नि के उपासक बनकर ज्ञान का प्रकाश चारों ओर फैलावें, अज्ञान के अन्धकार को दूर करें । **''तमसो मा ज्योतिर्गमय''** हमारा प्रत्येक कदम अन्धकार से निकल कर प्रकाश की ओर चलने के लिये बढ़े ।

(८) अग्नि की ज्वाला सदा ऊपर को उठती रहती है । मोमबत्ती की लौ को नीचे की तरफ उलटें तो भी वह ऊपर की ओर ही उठेगी । उसी प्रकार हमारा लक्ष्य, उद्देश्य एवं कार्य सदा ऊपर की ओर हो, अधोगामी न बने ।

(९) अग्नि में जो भी वस्तु डाली जाती है, उसे वह अपने पास नहीं रखती, वरन् उसे सूक्ष्म बनाकर वायु को, देवताओं को, बाँट देती है । हमें जो वस्तुएँ ईश्वर की ओर से, संसार की ओर से मिलती हैं, उन्हें केवल उतनी ही मात्रा में ग्रहण करें, जितने से जीवन रूपी अग्नि को ईंधन प्राप्त होता रहे । शेष का परिग्रह, संचय या स्वामित्व का लोभ न करके उसे लोक-हित के लिए ही अर्पित करते रहें । अग्नि में चाहे करोड़ों रुपयों की सामग्री होमी जाय वह अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए कुछ नहीं चुराती और न पीछे के लिए संग्रह करती है, वरन् तत्क्षण उस सामग्री को सूक्ष्म बनाकर वायु द्वारा लोक-हित के लिए बाँट देती है । वैसे ही हमें जो ज्ञान, बल, बुद्धि, विद्या आदि उपलब्ध हैं, उनका उपयोग स्वार्थ के लिये नहीं, परमार्थ के लिये ही करें ।

(१०) जैसी अग्नि हवन कुंड में जलती है, वैसी ही ज्ञानाग्नि अन्तःकरण में, तप-अग्नि इन्द्रियों में, कर्म अग्नि देह में, प्रज्ज्वलित रहनी चाहिए । यही यज्ञ का आध्यात्मिक स्वरूप है ।

यज्ञ और पशुबलि

यज्ञों की अनेक कोटियों में एक कोटि 'पशु यज्ञ' की भी आती है । एक ही शब्द के कई अर्थ होते हैं । पशु शब्द के भी अनेक अर्थ हैं, पर कुछ संकुचित विचार के व्यक्ति वेद और यज्ञ की मूल भूत भावना के विपरीत उसका अर्थ पशु हिंसा करने लगे । अर्थ का अनर्थ हुआ । मध्य कालीन युग में लोगों ने सचमुच ही पशु-यज्ञ का वास्तविक रूप न समझ कर पशु-हत्या आरम्भ करदी और घोड़े, गाय, बकरे, सर्प एवं मनुष्य तक मार-मार कर होमने शुरू कर दिये ।

यह हत्या काण्ड जब फैला तो उसके विरुद्ध जनता में घोर घृणा उत्पन्न हुई । यज्ञों की निन्दा हुई । लोग यज्ञों का विरोध करने लगे । बौद्ध धर्म और जैन धर्म ने इस प्रकार की हिंसा का डटकर विरोध किया और धीरे-धीरे वह अनर्थ बन्द होता गया । अब जीवों को मार कर हवन तो नहीं होता पर 'दुर्गा' आदि पर भैंसे-बकरे काटने की प्रथा अब भी विद्यमान है । इन अज्ञान मूलक बातों का जितना विरोध हो, उतना ही उत्तम है और हमारे पवित्र धर्म को कलङ्कित करने वाली यह घृणित प्रथाएँ जितनी जल्दी बन्द हो जायँ, उतना ही उत्तम है ।

वैदिक पशु याग का वास्तविक तात्पर्य क्या है, नीचे की पंक्तियों में इस पर कुछ प्रकाश डाला जाता है ।

उपनिषद् का वचन है-

''काम क्रोध लोभादयः पशवः''

अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मोह, ये पशु हैं । इन्हीं को मार कर यज्ञ में हवन करना चाहिए । आलङ्कारिक रूप से यह आत्म शुद्धि की,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुविचारों, पाप-तापों, कषाय-कल्मषों से बचने की शिक्षा है ।

यज्ञ को ''अध्वर'' भी कहते हैं । अध्वर का अर्थ है-वह कार्य जिसमें हिंसा न होती हो । यज्ञ के ऋत्वजों में एक सदस्य तो विशेष रूप से नियुक्त होता है, कि कहीं कोई हिंसा तो इस पुण्य कार्य में नहीं हो रही है । इस निरीक्षक को 'अध्वर्यु' कहते हैं । विचार करने की बात है कि जिस यज्ञ में हिंसा न होने का इतना ध्यान रखा गया है ''पाँच भू संस्कार'' की क्रिया में छोटे-छोटे जीव-जन्तुओं की प्राण रक्षा के लिए पहले से ही पूरी सावधानी बरतने की व्यवस्था है । उस कार्य में पशु सरीखे बड़े-बड़े जीवों की निर्दय हत्या करने का विधान कैसे हो सकता है ।

जिन ब्राह्मण ग्रन्थों में पशु-यज्ञ का वर्णन है वह केवल अलङ्कार रूप है । उसमें एक कथानक बनाकर किसी सूक्ष्म विज्ञान पर प्रकाश डाला गया है । लोग उस आर्य शैली के वास्तविक तात्पर्य को भूलकर अर्थ का अनर्थ करने लगे । शतपथ ब्राह्मण में पशु-यज्ञ का वर्णन इस प्रकार मिलता है:-

पुरुषं हवै देवा अग्रे पशुमालेभिरे ।
तस्यालब्धस्य मेधोऽपचक्राम ।
सोऽश्वं प्राविवेश । तेऽश्वमालभन्त ।
तस्यालब्धस्य मेधोपचक्राम ।
स गां प्राविवेश । ते गामालभन्त ।
तस्या लब्धाया मेधोपचक्राम ।
सोऽविं प्राविवेश । तेऽविमालभन्त ।
तस्यालब्धस्य मेधोऽपचक्राम ।
सोऽजं प्राविवेश । तेऽजमालभन्त ।
तस्यालब्धस्य मेधोऽपचक्राम ।
स इमां पृथिवीं प्राविवेश । तंखनन्त ।
इवान्वीषुः । तं अन्वविंदन् ।
तौ इमौ व्रीहियवा । स यावद्वीर्यबद्ध
ह वा अस्य एते सर्वे पशवः आलब्धाः स्युः
तावद्वीर्यवद्धास्य हविरेव भवति । य एवमेतद्वेद ।
अन्ना सा संपद्यदाहुः पांक्त पशुरिति ।

-शतपथ ब्रा. १ । २ । ३ । ६-९

अर्थात्-आरम्भ में देवों ने पुरुष का बलिदान किया । उसी समय उससे पवित्र भाग चला गया और वह घोड़े में प्रविष्ट हुआ । उन्होंने घोड़े को मारा । मारते ही उससे पवित्र भाग चला गया और वह गौ में प्रविष्ट हुआ । उन्होंने गौ की बलि की, उसी समय उसमें से भी वह पवित्र भाग चला गया और वह मेंढे में चला गया । उन्होंने मेंढे की बलि की, उसी समय उससे पवित्र भाग चला गया और बकरे में प्रविष्ट हुआ । उन्होंने बकरे को मारा उसी समय उससे पवित्र भाग चला गया और वह इस पृथ्वी में प्रविष्ट हुआ । तब देव उस पृथ्वी को खोदने लगे । भूमि खोदने से उनको चावल और जौ प्राप्त हुए । इन चावल और जौ से जो हवि किया जाता है, उसका वीर्य और बल उतना ही होता है जितना कि वीर्य पूर्वोक्त हवियों का होता है ।

उपरोक्त कथानक का तात्पर्य यह है कि पुरुष, घोड़ा, गौ, मेंढ़ा, बकरा आदि से तो देव काल में ही पवित्र भाग तिरोहित हो चुका है । इनकी पवित्रता पहले ही समाप्त हो गई है, इसलिये वेदों के आरम्भ काल में ही ब्राह्मण ग्रन्थों ने यह घोषित कर दिया था कि अब केवल जौ, चावल आदि पृथ्वी से उत्पन्न होने वाले पदार्थों में ही हवि के योग्य पवित्र तत्व हैं । पशुओं में वह पवित्र तत्व नहीं है कि वे हवि के काम आ सकें । इस कथानक में पशु बध का समर्थन नहीं, वरन् आलंकारिक रूप से निषेध किया गया है । इसमें तो अन्नादि पृथ्वी के गर्भ से उत्पन्न वनस्पतियों को ही पवित्र हवि माना है । ऐसी ही मान्यता ऐतरेय ब्राह्मण में भी प्रकट की गई है ।

पशुभ्यो वै मेध उदक्रामंस्तौ व्रीहिश्चैव यवश्च भूतावर्जयाताम् ।

-एतरेय २ । २ । २१

पशुओं में से हवनीय तत्व पृथ्वी में चला गया जो चावल और जौ के रूप में ऊपर आया है ।

मेध शब्द, मेधा और मेधावी के अर्थ में है । मेधा को अँग्रेजी में 'कलचर' कहते हैं । किसी वस्तु को सुव्यवस्थित ढङ्ग से बनाना, सुधारना या उन्नति करना, मेध शब्द का वास्तविक अर्थ है । गोमेध, अश्वमेध, नरमेध आदि शब्दों का अर्थ गाय-घोड़े या मनुष्य मारकर हवन करना नहीं वरन् , गो पृथ्वी, मेध उन्नत करना है । भूमि को कृषि के लिए भली प्रकार तैयार करना ही गो मेध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । राष्ट्र की उन्नति,समृद्धि एवं सुरक्षा के प्रयत्न करना एवं एक विश्व राष्ट्र (लीग आफ नेशन्स) की स्थापना ही अश्व मेध है । इसी प्रकार मनुष्य को सुसंस्कृत बनाना, दोष दुर्गुणों से मुक्त करना नर मेध है ।

मनुस्मृति में नर यज्ञ शब्द अतिथि पूजन के लिए आया है । "**नृ यज्ञो अतिथि पूजनम्**"

यदि कोई व्यक्ति अतिथि पूजन न करके मनुष्यों को मारना आरम्भ करदे, तो इसे मनु का दोष नहीं, वरन् उसकी बुद्धि का ही दोष कहा जायगा ।

चरक संहिता में 'अज' ओषधि का वर्णन है:-

अजानामौषधि रज शृङ्गीति विज्ञायते ।

-चरक. चिकित्सा प्र. १

क्या उपरोक्त वाक्य में वर्णित अजा बूटी के स्थान पर बकरी की ओषधि बनावेगा ?

महाभारत में भी अज का अर्थ ओषधि और बीज ही किया गया है-

बीजैर्यज्ञेषु यष्टव्यमिति वा वैदिकी श्रुतिः ।
अज संज्ञानि बीजानि, छागं नो हन्तुमर्हथ ।।
नैष धर्मः सतां देवा यत्र वध्येत वै पशुः ।

-महाभारत शान्ति ३३७

अर्थात् बीजों का यज्ञ में हवन करना चाहिए , ऐसी ही वेद की श्रुति है । 'अज' संज्ञक बीज होते हैं, इसलिए बकरे का हनन करना उचित नहीं । जिस कर्म में पशु की हत्या होती है, वह सज्जनों का धर्म नहीं ।

एतरेय ब्राह्मण १ । २ । १० में "**पशवो वा इला**" इस पृथ्वी को ही पशु कहा गया है । अन्य स्थानों पर जीवात्मा को भी पशु कहा गया है । क्या इन सबको काट-काट कर होमा जायगा ?

अन्न से बनी हुई वस्तु तथा (रोटी, पूरी आदि) खाद्य पदार्थों को भी पशु माना गया है और उसके विभिन्न भागों की पशु अङ्गों से तुलना की गई है । देखिए-

यदा पिष्टान्यथलोमानि भवन्ति ।
यदाप आनयति अथ त्वग्भवति ।
यदासंयोत्थय मांसं भवति । संतत इव हि तर्हि भवति संततमिव हि मांसं यदाश्रृतोऽथास्ति भवति ।
दारुण इव हि तर्हि भवति । दारुणमित्यास्थि ।
अथ यदुद्वासयन्नभिधारयति तं मज्जानं ददाति ऐषो सा सम्पद्यदाहुः पांक्तः पशुरिति ।

-शतपथ १ । २ । ३ । ९

अर्थात्-अन्न का पिसा हुआ आटा ही रोम (बाल) है । जब उस पिसे हुए आटे में जल मिलाते हैं तो वह चमड़ा हो जाता है (क्योंकि चमड़े के समान कोमल होता है । जब वह आटा गूँधा जाता है, तो मांस कहलाता है (क्योंकि तब वह माँस के समान चिकना होता है) । जब वह सेका जाता है, तब अस्थि कहलाता है । (क्योंकि अस्थि कड़ी होती है) । जब उसमें घी डाला जाता है, तो उसका नाम मज्जा होता है ।

प्राचीन आर्य ग्रन्थों में पशुओं को मार कर हवन करने का कोई विधान नहीं है । पशुओं के नाम से मिलते-जुलते शब्दों का अर्थ ठीक प्रकार न समझ कर अन्धकार युग में अज्ञानी लोगों ने हवन में पशुवध करने का अनर्थ भी किया है । इस अनर्थ मूलक प्रथा को प्रचलित कराने में ब्राह्मणों की स्वार्थपरता भी कारण रही हो, तो कोई आश्चर्य नहीं । भगवान् बुद्ध ने पशु बलि प्रारम्भ होने के इतिहास पर कुछ प्रकाश डाला है । पाली के प्रसिद्ध ग्रन्थ "सुत्त निपात" के "ब्राह्मण धार्मिक सुत्त" भाग से कुछ उदाहरण नीचे उपस्थित करते हैं ।

"भगवान बुद्ध जब श्रीवस्ती नगरी के जेतवन विहार में थे, तब एक कौशल देशीय वृद्ध ब्राह्मण उनके पास आये और भगवान से पूछा, क्या इस काल में प्राचीन ब्राह्मणों का धर्म पालन करने वाला कोई ब्राह्मण है ? बुद्ध ने उत्तर दिया-इस काल में ऐसा कोई ब्राह्मण नहीं दीखता, क्योंकि ब्राह्मणों के जो धर्म एवं गुण हैं, वे उनमें दिखाई नहीं पड़ते । उन्होंने ब्राह्मणत्व के इस पतन का दुख पूर्ण इतिहास बताते हुए कहा-

सुखुमाला महाकाया वण्णवन्तो यसस्सिनो ।
ब्राह्मणा सेहिधम्मेहि किच्चाकिच्चेसु उस्सुका ।।
यावलोके अवत्तिंसु सुखमेधित्थ यम्पजा ।।१ ५ ।।

जब तक ब्राह्मण कोमल भावनाओं वाले, स्वस्थ, सुकर्मी, यशस्वी, सत्कर्मों में उत्साही रहे, तब तक संसार में प्रजा के सुख की वृद्धि होती रही ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तेसं आसीविपल्लासो दिस्वानअणुतो अणुं ।
राजिनो च वियाकारं नारियो समलङ्कृता ।।१६।।
रथेचाजञ्ज संयुत्ते सुकतेचित्त सिव्वने ।
निवेसने निवेसेच विभत्ते भाग सोभिते ।। १७ ।।
गोमण्डलपख्यिूल्हं नारीवरगणंयुतं ।
उलारं मानुसं भोगं अभिज्झायिंसु ब्राह्मणा ।। १८ ।।

उन ब्राह्मणों की गतिविधि उलटी हो गई । धीरे धीरे तप छोड़कर राजकीय ठाट-बाटों, सुन्दर स्त्रियों, बढ़िया घोड़ों वाले रथों, चित्र-विचित्र परिधानों, अनेक कमरों वाले महलों, गौओं, तथा रमणियों के भोग-विलास में ललचा कर वे ब्राह्मण लोग फँस गये ।

ते तत्थ मन्ते गन्थेत्वा ओक्काकं तदुपागमुं ।
प्रभूत धनसिधञ्ञो यजस्सु वहु ते धनं ।। १९ ।।

तब वे मन्त्रों के संग्रह से एक यज्ञ पद्धति बनाकर राजा इक्ष्वाकु के पास गये और कहा तेरे पास बड़ा धन धान्य है, तू यज्ञ कर ।

ततो च राजा सञ्ञत्तौ ब्राह्मणेहि रथेसभो ।
अस्समेधं पुरिसमेधं सम्मापासं वाजपेय्यं निरग्गलं ।।
एते यागे यजित्वान ब्राह्माणनं अदाधनम् ।। २०।।

तब ब्राह्मणों की आज्ञानुसार राजा ने अश्वमेध, पुरुषमेध, शम्याप्रास (सत्रयाग) वाजपेय, निरर्गल (सर्वमेध) यागों को करके ब्राह्माणों को धन दिया ।

गावो सयनञ्च वत्थञ्च नारियो समलंकता ।
रथे चाजञ्ञसंयुत्ते सुकते चित्त सिव्वने ।। २१ ।।
निवेसनानि रम्मनि सुविभत्तानि भागसो ।
नानाधञ्ञस्स पूरेत्वा ब्राह्मणानं अदाधनं ।। २२ ।।

गायें, गलीचे, कीमती पोशाकें, रूपवती स्त्रियाँ, बढ़िया रथ, रङ्गीन चित्र, विशाल भवन तथा नाना प्रकार के धान्यों से पूरित धन ब्राह्मणों को दिया ।

ते च तत्थ धनं लद्धा सन्निधिंसमरोचयुं ।
तेसं इच्छावतिण्णानं भीय्योतण्हा पवड्ढथ ।
ते तत्थ मन्ते गन्थेत्वा ओक्काकं पुनुवागमुं ।।२३ ।।

उन ब्राह्मणों ने राजा से धन प्राप्त करके अमीर होना चाहा । उनकी तृष्णा और अधिक बढ़ी । तब वे उस समय के मन्त्रों का संग्रह करके पुनः इक्ष्वाकु राजा के पास गये और बोले-

यथा आपाच पठवी हिरञ्ञं धन धानियं ।
एवं गावो मनुस्सानं परिक्खारो सोहि पाणिने ।
यजस्सु वहु ते वित्तं यजस्सु वहु ते धनं ।। २४ ।।

जैसे जल, पृथ्वी, स्वर्ण और धन धान्य हैं, वैसे ही गाय भी आवश्यक वस्तु है । तू इन का यज्ञ करे । तेरे पास बहुत धन है तू यज्ञ करे ।

ततो च राजा सञ्ञत्तो ब्राह्मणेहि रथे सभो ।
नेकसत सहस्सियो गावो अञ्ञे अघातयि ।। २५ ।।

तब ब्राह्मणों से प्रेरणा पाकर राजा ने सैकड़ों हजारों गौओं का यज्ञ में वध किया ।

न पादा न विसाणेन नारसुहिंसन्ति केनचि ।
गावो एलक समाना सोरता कुम्भ दूहना ।।
ता विसाणे गहत्वान राजा सत्थेम घातयि ।। २६ ।।

भेड़ के समान दीन गौयें जो न पैर, न सींग, से न, किसी अन्य अङ्ग से, किसी को दुख देती हैं, वरन् घड़े भर-भर कर दूध देती हैं, उनके सींगों को पकड़ कर राजा ने वध किया ।

ततो च देवता पितरो इन्दो असुर रक्खसा ।
अधम्मो इति पक्कन्दुं यं सत्थं निपती गवे ।। २७ ।

तब देवता, पितर, इन्द्र, असुर और राक्षस सब एक स्वर से चिल्लाए कि यह गौ पर शस्त्र चलाना घोर अधर्म है ।

तयो रोगा पुरे आसु इच्छा अनसनं जरा ।
पसूनञ्च समारम्भा अट्ठान वुतिमागमुं ।। २८ ।।

प्राचीन काल में केवल तीन रोग थे-तृष्णा, भूख और बुढ़ापा । पर यज्ञों में पशुवध करने में ९८ प्रकार के रोग फैल गए ।

एसो अधम्मो ओक्कन्तो पुराणो अहु ।
अदूसिकायो इञ्ञन्ति धम्मा धंसेन्ति याजका ।। २९ ।।

इस प्रकार यह पापकर्म (पशु यज्ञ) आरम्भ हुआ । और इस अधर्म से यज्ञ कराने वाले ब्राह्मण धर्म से पतित हो गये ।

एवं धम्मे वियापन्ने विभिन्ना सुद्दवेस्सिका ।
पथु विन्ना खत्तिया पतिं भरिया अवमञ्ञथ ।। ३० ।।

ब्राह्मणों के पतित होने पर क्षत्रिय भी धर्मच्युत हुए, वैश्य और शूद्र भी अपनी मर्यादा छोड़ कर छिन्न-भिन्न हो गये । स्त्रियाँ पतियों का अपमान करने लगीं ।

उपरोक्त उद्धरण में पशु-बलि का प्रचलन ब्राह्मणों की स्वार्थपरता से हुआ मालूम होता है । शास्त्र का मर्म ठीक प्रकार से न समझना और एक

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शब्द के जो कई अर्थ होते हैं, उनको ठीक प्रकार न समझ कर अर्थ को अनर्थ कर बैठने का अज्ञान भी इसका कारण हो सकता है । जो भी हो, पशु-वध को यज्ञ जैसे पवित्र कार्य में सम्बद्ध करना कभी भी उचित नहीं ठहराया जा सकता ।

विचार करने की बात है कि नित्य प्रति की अनिवार्य हिंसा के दु:ख से दु:खित होकर उसका प्रायश्चित्त करने के निमित्त जिस संस्कृति में नित्य पाँच यज्ञ करने का विधान है, उसमें जानबूझ कर बड़े-बड़े पशु मार कर होमने की बात भी हो सकती है, ऐसी कल्पना करना भी कठिन है, देखिए-

पंचसूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करः ।
कण्डिनी चोदकुम्भश्च बध्यते यास्तु वाहयन्
तासांक्रमेण सर्वासां निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः ।
पञ्च क्लृप्ता महायज्ञा प्रत्यहं गृहमेधिनाम् ।

-मनु. ३ । ६८, ६९

प्रत्येक गृहस्थ के यहाँ चूल्हा, चक्की, झाड़ू, ओखली, और जल-पात्र, ये पाँच हिंसा के स्थान हैं । इनको काम में लाने से ग्रहस्थ पाप में बँधता है । इनसे छूटने के लिए पञ्च महायज्ञ ऋषियों ने कहे हैं ।

इतिहास में ऐसे अश्वमेधों का वर्णन उपलब्ध है, जिसमें घोड़ा तो क्या चींटी तक की भी हत्या नहीं की गई । देखिये-

तस्य यज्ञो महानासीदश्वमेधो महात्मनः
वृहस्पतिरुपाध्यायास्तत्र होता वभूवह ।।
प्रजापति सुताश्चात्र सदस्याश्चा भवंस्त्रयः ।
ऋषिर्मेधातिथिश्चैव ताण्ड्यश्चैव महानृषिः
ऋषिः शान्तिर्महाभागस्तथां वेदशिराश्चयः
ऋषि श्रेष्ठश्च कपिलः शालिहोत्र पितास्मृताः
आद्यः कठस्तैत्तिरिश्च एते षोडस ऋत्विजः
संभूताः सर्व सम्भारास्तास्मिन् राजन्महाक्रतौ ।
न तत्र पशुघातोऽभूत सराजै-रास्थितोऽभवत् ।

-महा० शान्ति ३३-३८

उस राजा का बहुत विशाल अश्वमेध हुआ । उसमें वृहस्पति उपाध्याय थे । प्रजापति के पुत्र सदस्य बने । मेधा तिथि, ताण्ड्य, शान्ति, वेदशिरा:, कपिल, कठ, तैत्तिरि और बड़े-बड़े ऋषि उस यज्ञ में ऋत्विज् थे । उस यज्ञ में सामग्री तो विपुल थी, पर एक भी पशु का वध न हुआ ।

कोई निर्दोष जीव चाहे यज्ञ में मारकर देवी के ऊपर चढ़ाया जाय, चाहे वह कसाई-खाने में काटा जाय, हर हालत में हत्या ही है । उसका परिणाम वही प्राप्त होता है, जो हत्यारों का होना चाहिये । भागवत् में ऐसे ही हत्यारे एक राजा के सम्बन्ध में वर्णन आया है -

भो भोः प्रजापते राजन्यशून्यश्य त्वयाध्वरे ।
संज्ञापितान् जीव संघान्निर्घृणेन सहस्त्रशः ।
एते ता सम्प्रतीक्षन्ते स्मरन्तो वैशमं तव ।
सम्परेतमयः कुटैश्छिन्दन्त्युत्थितमन्यवः ।

-भागवत ४ । २५ ।७-८

हे राजन-तेरे यज्ञ में सहस्त्रों पशु निर्दयता पूर्वक मारे गये । वे तेरी क्रूरता को याद करते हुए क्रोध में भरे हुए तीक्ष्ण हथियारों से तुझे काटने को बैठे हैं ।

यज्ञ में मारा हुआ पशु स्वर्ग जाता है, इस मन गढंत बात की मसखरी उड़ाते हुए, एक तार्किक ने बहुत अच्छा प्रश्न उपस्थित किया है-

पशुश्चेन्निहतः स्वर्ग ज्योतिष्टोमे गमिष्यति ।
स्वपिता यजमानेन तत्र कस्मान्न हिंस्यते ।

यदि ज्योतिष्टोम में मारा हुआ पशु स्वर्ग चला जाता है, तो यजमान अपने बाप को यज्ञ में क्यों नहीं हवन कर देता, ताकि वह स्वर्ग को चला जाय ।

यज्ञों के सम्बन्ध में यह कलङ्क लगाना किसी भी प्रकार उचित नहीं, कि उनमें हिंसा का विधान है । मध्यकाल में कुछ लोगों ने ऐसे कुत्सित कर्म करके यज्ञ को बदनाम अवश्य किया है, पर उनके कृत्यों से यज्ञ की शाश्वत मूल भावना में वस्तुत: कोई परिवर्तन नहीं होता । यज्ञ का उद्देश्य महान् है । वह सम्पूर्ण संसार को प्राणदान करने वाला है । गङ्गा में कोई व्यक्ति गन्दगी फेंक दे, तो उससे गङ्गा कलङ्कित नहीं होती । इसी प्रकार पशु-हिंसा का अनर्थ, उनके नाम पर किसी समय किया भी गया हो, तो भी यज्ञ भगवान् का विशुद्ध रूप सदा पवित्र ही रहेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यज्ञों पर असुरता के आक्रमण

समुद्र के गर्भ में छिपे हुए रत्नों को निकालने के लिए जब उसका मंथन किया गया तो सबसे पहले हलाहल विष निकला । वह विष इस बात की परीक्षा लेने बाहर निकला था कि मंथन करने वाले लोग समुद्र में छिपे हुए महत्वपूर्ण रत्नों को प्राप्त करने के अधिकारी हैं या नहीं ? यदि ये लोग अधीर, अविवेकी, अस्थिर और कायर हैं तो विष की भयंकरता देखकर डर जायँगे और प्रयत्न छोड़कर उन लाभों से वंचित हो जायँगे जो सत्पात्रों को ही उपलब्ध होते हैं । विष निकला, सब को बड़ी परेशानी हुई । पर वे विचलित न हुए । रास्ता खोजा गया । खोजने वाले को मार्ग मिल जाता है, जो निष्ठावान् है, उसकी सहायता के लिये सहायक भी आ जाते हैं । हलाहल विष की तीव्रता से घबराए हुए और भंयकरता से डरे हुए मंथन-कर्ताओं ने जब अपना मार्ग न बदलने का निश्चय किया और जो भी हो, सब कुछ सहने का फैसला किया तो भगवान प्रसन्न हो गये । शंकर जी आये । हलाहल को कंठ में धारण कर लिया । समुद्र मथने वालों का मार्ग प्रशस्त हो गया और उन्होंने वे १४ अमूल्य रत्न प्राप्त किये, जिनकी महत्ता साधारण नहीं, असाधारण ही कही जा सकती है ।

अधिकारी-अनधिकारी की परीक्षा आपत्तियों और कठिनाइयों से ही होती है । हीरा असली है या नकली, इसकी परीक्षा करने के लिए लोहे के भारी हथौड़े की चोट उस पर लगाई जाती है । यदि चोट से फूट गया तो उसे कच्चा, नकली कह कर कूड़े में फेंक दिया जाता है । हर अच्छे काम में विरोध की, बाधाओं की कठिनाइयों की स्थिति आती हैं, यदि इस शुभ संकल्प का संयोजक उनका सामना न कर सका, डर गया, अधीर हो गया, छोड़ बैठा, तो अपनी अपात्रता के कारण उसे उन महत्वों से वंचित होना पड़ता है, जो महत्वपूर्ण कार्यों में सदा से आते रहे हैं ।

यज्ञानुष्ठान संसार का सबसे बड़ा पुण्य कार्य है , उसका महत्व एवं लाभ भी इतना बड़ा है जितना और किसी मार्ग से प्राप्त होना संभव नहीं । विश्वामित्र ऋषि, राजा बलि आदि ने जब यज्ञानुष्ठानों में प्रगति की तो उनसे देवता तक ईर्ष्या करने लगे । बड़े आदमियों का यह सदा से स्वभाव रहा है कि जब उनसे छोटे व्यक्ति उनकी बराबरी में आते हैं-आगे बढ़ना चाहते हैं तो उनका चित्त ईर्ष्या की अग्नि से जलने लगता है । उसे गिराने, नीचा दिखाने, असफल बनाने से ही उनकी ईर्ष्याग्नि शान्त होती है । इसलिए उनसे जो कुछ बन पड़ता है, इसे गिराने के लिए करते हैं, इस जमाने में भी इन घटनाओं की पुनरावृत्ति होती रहती है । यज्ञ संयोजकों के अनेकों विरोधी अकारण ही उठ खड़े होते हैं ।

असुरता को नष्ट करने के लिए यज्ञों से बढ़ कर और कोई रामबाण अस्त्र नहीं है । प्राचीन काल में ऋषि-मुनि, राजा तथा धर्म-प्रेमी लोग समय-समय पर बड़े-बड़े यज्ञों का आयोजन करते रहते थे, ताकि असुरता की शक्ति नष्ट होती रहे । असुरता भी अपनी आत्म रक्षा के लिए हर संभव उपाय को काम में लाती थी, आत्मरक्षा के लिए वह अपनी जान की बाजी भी लगा देती थी । एक समय विश्वामित्र जी ने उस युग का अत्यन्त विशाल यज्ञ किया था, उसकी सफलता से असुर-कुल का नाश होकर धर्म-संस्थापना की पूरी संभावना थी । इससे बचने के लिए असुरों ने विश्वामित्र ऋषि का यज्ञ विध्वंस करने का पूरा-पूरा प्रयत्न किया । ताड़का, मारीच और सुबाहु ने इतने उपद्रव किये कि ऋषि को दशरथ राज़ा के द्वार पर रक्षा की पुकार करनी पड़ी और राम-लक्ष्मण को यज्ञ-रक्षा के लिए लाना पड़ा ।

यों विश्वामित्र जी भी अपने ब्रह्मतेज से उन असुरों को परास्त कर सकते थे, पर चूँकि तपस्या के समय क्रोध करने या बदला लेने से अपना तप क्षीण होता है, इसलिए विश्वामित्र जी स्वयं उन आक्रमणों का प्रतिकार नहीं कर रहे थे । असुरों के लिए यह अलभ्य अवसर था कि वे आक्रमण करें तो उन्हें रोकने वाला कोई न हो, इसी सुविधा का लाभ उठा कर असुरों ने अनेक बार अनेक तपस्वियों की हत्याऐं कीं । भगवान राम जब वन में

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गये तो उन्होंने असुरों द्वारा मारे हुए ऋषियों की हड्डियों का पहाड़ देखा और 'निशिचर हीन मही' करने की भुजा उठा कर प्रतिज्ञा की थी । वे तपस्वी ऋषि जिनकी अस्थियों का ढेर रामचन्द्रजी ने देखा था, यदि वे चाहते तो अपने तप बल से उन असुरों को नष्ट कर सकते थे, पर उससे उनका तप क्षीण होता, इसलिए तपोबल और शरीर, इनमें से किसे खोया जाय, यह समस्या उपस्थित होने पर उन्होंने शरीर नष्ट होने की हानि को ही कम महत्वपूर्ण समझा ।

उन्हीं सब तथ्यों की पुनरावृत्ति आज ब्रह्मास्त्र अनुष्ठान जैसे अभूतपूर्व धर्म आयोजन के समय हो रही है, तो इसमें कुछ भी आश्चर्य की बात नहीं है । चिन्ता की बात केवल इतनी ही है, कि प्राचीन काल के ऋषि, याज्ञिक और उनके शुभ चिन्तक इन आसुरी आक्रमणों से परिचित थे और उनकी रोक थाम के लिए पहले से ही सोचते थे तथा समय आने पर प्रतिरोध की व्यवस्था कर लेते थे, पर हम लोग सर्वथा बेखबर हैं । सुरक्षा और संरक्षण की ओर ध्यान नहीं देते । इतना ही नहीं, भूल यहाँ तक करते हैं कि आसुरी आक्रमणों को पहचान तक नहीं पाते और उनके द्वारा उपस्थित संकट का वास्तविक कारण समझने की अपेक्षा आपस में ही एक दूसरे को दोष देने लगते हैं । असली कारण पर दृष्टि न डालकर अपने में से ही किसी का दोष ढूँढ़ने लगते हैं । इस भूल और बेखबरी से ही हमें सावधान होने की जरूरत है ।

समयानुसार हथियारों में भी हेर-फेर होता रहता है । प्राचीन काल में तीर-तलवार की लड़ाई थी, पीछे बन्दूकों ने उनका स्थान ले लिया । इसके बाद टेंक और जहाजों की प्रधानता रही । अब वे भी निरर्थक हो गये और हाइड्रोजन बम, परमाणु बमों का बोलबाला है । आगे इससे भी भिन्न प्रकार के कोई अस्त्र निकल सकते है । असुरों के अस्त्र समयानुसार बदलते हैं । प्राचीन काल में वे तीर तलवार या अन्य प्रकार की आसुरी माया के द्वारा याज्ञिकों के प्रयत्न असफल बनाते थे, इस युग में वह हथियार पुराने पड़ गये । अब इनकी नीति यह है कि अपने को प्रत्यक्ष में प्रकट न किया जाय, वरन् भूतप्रेत जिस प्रकार किसी के शरीर में प्रवेश करके उससे अपनी आवश्यकता पूरी करते हैं, उसी प्रकार जिस किसी के मन में थोड़ी अनुकूलता मिले उसी मन में प्रवेश करके उसके द्वारा वह कार्य कराये जायँ जिससे इस महान धर्मानुष्ठान की सफलता में भारी विघ्न उपस्थित हो जाय । राम-वनवास के समय बेचारी कैकेयी की बुद्धि पर कुछ अदृश्य शक्तियों ने ऐसे ही कब्जा कर लिया था और उस सीधी-साधी रानी की मति फेर कर वह करवा लिया, जिस से उनका मनोरथ पूरा हो गया । बेचारी कैकेयी किन्हीं के द्वारा हथियार मात्र की तरह प्रयोग की गई, वह निर्दोष थी, पर कलंक का ठीकरा उसी के सिर फूटा । वह जीवन भर पश्चात्ताप की अग्नि में जलती रही और इतिहास में एक बुरा उदाहरण छोड़ने के कारण निन्दा के पात्रों में गिनी गई ।

उस जमाने में कमजोर प्रकृति की एक कैकेयी ही मुश्किल से मिली थी, पर आज मानसिक दुर्बलता के युग में ऐसे ढेरों शिकार ढूँढ़ लेना असुरों के लिए तनिक भी कठिन नहीं है । जो शिकार उनके हाथ लग जाता है, उसके मस्तिष्क में वे चुपके प्रवेश कर जाते हैं और उसकी मानसिक मशीनरी में ईर्ष्या, पाखण्ड, दम्भ, द्वेष, भ्रम तथा न जाने क्या-क्या पैदा करके इसके लिए तैयार करते हैं कि यज्ञ का विरोध कर, और उसे असफल बनाने के लिए जो भी बन पड़े, उसे प्रकट या गुप्त रूप से उत्साह पूर्वक करें ।

यों यज्ञ सर्वमान्य तथा सर्वश्रेष्ठ शुभ कार्य है, उसकी महत्ता से कोई इनकार नहीं कर सकता । इसलिए प्रत्यक्ष रूप से खुला विरोध करना तो कठिन है, पर दूसरे रास्ते से वे वह कार्य करते हैं जिससे यज्ञीय कार्यक्रम नष्ट हो जाय । इसके लिए दो हथियार काम में लाये जाते हैं, एक भ्रम फैलाना दूसरा उदासीनता उत्पन्न करना । यह दोनों ही हथियार ऐसे हैं, जो तीर तलवार की तरह दीखते तो नहीं पर काम उनसे भी बढ़ कर करते हैं ।

इस युग में धर्म कार्यों के लिए लोगों में स्वाभाविक रूप से अनास्था है, धर्म कार्यों की ओर किसी का उत्साह ही नहीं जगता । पूर्व जन्मों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

संस्कार बीज विद्यमान हों तथा इस जन्म में विशेष रगड़ लगे, तब थोड़ी धर्म प्रवृत्ति पैदा होती है । यह भी बड़े संकोच और झिझक के साथ आगे बढ़ती है । कारण यह कि इस मार्ग के साथी कम और मखौल करने वाले बहुत मिलते हैं । बेचारा साधक उनसे सहम जाता है और अपना मार्ग छोड़ बैठता है । दूसरे इस जमाने में धर्म आयोजन करने वाले, अधिकांश लोग स्वार्थी या धूर्त होते हैं, जो भोली जनता को अपना उल्लू सीधा करने का जरिया बनाते हैं । इनके कुकर्मों की कलई रोज ही खुलती रहती है । उन घटनाओं का स्मरण करके सच्चे लोगों पर भी श्रद्धा मुश्किल से ही जमती है । इन कठिनाइयों के बीच यदि कोई भ्रम फैलाने वाला विरोधी खड़ा हो जाय, तो उस दुर्बल श्रद्धा पर आसानी से तुषारापात कर सकता है ।

वस्तुतः युग निर्माण योजना द्वारा आयोजित यज्ञ आन्दोलन पूर्ण शुद्ध, सात्विक एवं धर्म अनुमोदित है । पर उसमें भी मीन-मेख निकालना, इसमें भाग लेने वाले लोगों को डराना, बे सिर-पैर के बुरे मन गढ़ंत लांछन रचना जैसे कार्य कुछ लोगों द्वारा किये जाते हैं । इस भ्रम फैलाने की प्रक्रिया का परिणाम यह होता है कि अनेक धर्म प्रेमियों की उठती हुई धर्म-भावना तथा खिलती हुई श्रद्धा की कली मुरझा जाती है । वे डर जाते हैं और उस लाभ से वंचित हो जाते हैं, जो इसमें सम्मिलित होने से उन्हें प्राप्त होता । दूसरी ओर कई सहयोग के इच्छुक व्यक्ति जब असहयोग करने लगते हैं, तो आयोजन की सफलता में भी बाधा पड़ती ही है । असुरता मन ही मन खूब प्रसन्न होती है कि लोग वास्तविकता को समझ भी न पाये, हमारी चाल पूरी हो गई । बिना तीर-तलवार चलाये, यज्ञों को असफल बनाने के लिए असुरों के पास यह भ्रम फैलाने का बड़ा ही उत्तम हथियार है । किसी दुर्बल मनोवृत्ति के व्यक्ति को असुरता अपना वाहन बनाकर उससे यह कुकृत्य आसानी से करा लेती है ।

दूसरा हथियार असुरता का यह हैं कि जिन लोगों में धर्म-भावना मौजूद है, जो इन कार्यों में आगे बढ़कर भाग लेना चाहते हैं, उनमें आलस्य, अनुत्साह, उदासीनता, लापरवाही, अवसाद, उपेक्षा ढील-ढाल जैसी प्रवृत्तियाँ पैदा कर देती हैं, जिससे वे जो कुछ आसानी से कर सकते थे, वह भी नहीं करते । कोई छोटी-छोटी शारीरिक या पारिवारिक अड़चन ऐसी आ जाती है, जो छोटी होते हुए भी उन्हें बहुत बड़ी लगती है और उसी के सहारे फुरसत न मिलने आदि का बहाना बनाकर वे उत्साहपूर्वक सहयोग करने से पीछे हट जाते हैं । विरोधी बढ़ें और सहयोगी पीछे हटें तो पराजय एवम् असफलता ही हाथ लग सकती है । असुरता का उद्देश्य इस प्रकार भी सहज ही पूरा हो जाता है ।

धर्म बुद्धि के आयोजनों से असुरता नष्ट होती है । नष्ट होने वाला अपनी आत्मरक्षा के लिए आक्रमण करे तो इसमें कुछ आश्चर्य की बात नहीं है । आश्चर्य तो इस बात का है कि इस बात को जानते हुए भी हम बेखबर रहें । देव-संस्कृति दिग्विजय अनुष्ठान में भाग लेने वाले और अपने यहाँ गायत्री यज्ञों का आयोजन करने वाले, प्रत्येक व्यक्ति को इस ओर से सजग रहना चाहिए । जो लोग इन कार्यक्रमों में भाग लें, उन्हें यह भली प्रकार जान लेना चाहिए कि किसी न किसी उपद्रवी के शिर पर चढ़कर असुरता, भ्रम फैलाने वाली, अश्रद्धा उत्पन्न करने वाली बातें जरूर कहेगी । उनका प्रतिरोध करने के लिए पहले से ही सजग रहा जाय, आक्रमण होने से पूर्व ही उसकी सम्भावना के लिए तैयार रहा जाय तो आक्रमणकारी असुरता की दाल नहीं गलने पायेगी ।

यज्ञ-आयोजनों को असफल बनाने वाले असुरता के इन दो आक्रमणों से हमें सावधान रहना चाहिए । निन्दक, फूट फैलाने वाले, मन गढ़ंत झूठी बातें करके अश्रद्धा फैलाने वाले लोगों के मस्तिष्क पर किन शक्तियों ने कब्जा कर रखा है, यह समझते हुए उनसे सतर्क रहना ही उचित है । जो लोग झूठ, चोरी, बेईमानी, व्यभिचार, जुआ, शराब आदि किसी भी बुराई के खिलाफ कभी जबान नहीं खोलते, उन्हें यज्ञों में ही अधार्मिकता सूझ पड़े तो इसे उनकी बुद्धि की विकृति ही समझना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गायत्री-परिवार की शाखाऐं या कोई उत्साही गायत्री उपासक जब कभी सामूहिक यज्ञ या गायत्री प्रचार का कोई छोटा-मोटा आयोजन करते हैं तो भी उनके अनेकों विरोधी, अनेकों उँगली उठाने वाले, अनेकों रोड़ा अटकाने वाले पैदा हो जाते हैं । इसका अनुभव प्रायः प्रत्येक गायत्री उपासक को होगा । असुरता उनके छोटे प्रयत्नों को भी सफल नहीं होने देना चाहती, फिर यह इतना बड़ा इस युग का महानतम यज्ञ बिना किसी विरोध, बिना किसी उपद्रव, बिना किसी आसुरी आक्रमण के सम्पन्न हो जाय यह कभी सम्भव नहीं । यदि कोई विरोध आक्रमण या उपद्रव न हो तो समझना चाहिए कि यह आयोजन उतना शक्तिशाली नहीं था, जिससे डरने या असफल बनाने की आवश्यकता असुरों को पड़ती ।

असुरता इन दिनों अपने चरम उत्कर्ष पर है । दीपक की लौ जब बुझने को होती है, तो अधिक तीव्र प्रकाश फेंकती और बुझ जाती है । असुरता भी जब मिटने को होती है, तो जाते-जाते कुछ न कुछ करके जाने की ठान लेती है । इन दिनों हो भी यही रहा है । असुरता अपने नये तेवर और नये हथियार के साथ आक्रमण करने पर उतारू है । यह भ्रम, अश्रद्धा, लांछन, लोकोपवाद फैलाने तथा कोई आक्रमण करने, दुर्घटना उत्पन्न करने जैसे किसी भी रूप में हो सकता है । असुरता इस प्रकार के अपने षडयन्त्रों को सफल बनाने में पूरी तत्परता के साथ लगी हुई है । उसका पूतना और ताड़का जैसा विकराल रूप देखने के लिए हम में से हर एक को तैयार रहना चाहिए ।

समुद्र मंथन के समय सबसे पहले विष निकला था, बांद में वारुणी, से फिर धीरे-धीरे क्रमशः उसमें रत्न निकलते गये । अमृत सबसे पीछे निकला था । गायत्री महायज्ञ के धर्मानुष्ठान में भी पहले विष ही निकल रहा है । ईर्ष्यालु लोग विरोध और विलगता करते हैं, आगे और भी अधिक करेंगे । यह इस बात की परीक्षा के लिए है कि आयोजन के कार्यकर्त्ताओं में किस की निष्ठा सच्ची, किस की झूठी है । जो दृढ़ निश्चयी हैं, वे ही अन्त तक ठहरें तो उन्हें लाभ मिलेगा । उथले स्वभाव के, बाल-बुद्धि वाले सहयोगी यदि हट जावें, तो कुछ हर्ज भी नहीं है । इस छाँट का काम निन्दकों द्वारा बड़ी सरलता से पूरा हो जाता है । दुर्बल मनोभूमि वाले लोग तनिक सी सन्देहास्पद बात सुनकर भाग खड़े होते हैं । भीड़ को हटाने की दृष्टि से यह पलायन उचित भी है । एक बार गौतम ऋषि के अनुष्ठान में बहुत शिष्य बढ़ गये । वे पात्र-कुपात्र की छाँट करके भीड़ को घटाना चाहते थे । उनने कोढ़ी का रूप बना लिया । दुर्बल श्रद्धा वाले शिष्य कोढ़ को देखते ही घृणा करने लगे और एक-एक करके आश्रम छोड़ने लगे । जो दृढ़ श्रद्धा के शिष्य थे, रह गये । कोढ़ के होते हुए भी गौतम जी से घृणा न करके उनकी अधिक सेवा-भावना से परिचर्या करने लगे । ऐसे गिने-चुने ही शिष्य अन्त में बचे, उनकी पात्रता से प्रसन्न होकर गौतम ऋषि ने उन्हें अपनी गुप्त से गुप्त विद्याएँ पढ़ा दीं । गायत्री-आन्दोलन के प्रभाव से अब साधकों की भीड़ भी बहुत बड़ी हो गई है । इनमें उच्च श्रेणी के सच्चे साधकों की परीक्षा के लिये यह उचित भी है कि झूठे सच्चे लोकापवाद फैलें । विवेकवान् लोग इन निन्दाओं का वास्तविक कारण ढूँढेंगे, तो सचाई मालूम पड़ जायगी और उनकी श्रद्धा पहले से भी दूनी-चौगुनी बढ़ जायगी, पर जो लोग दुर्बल आत्मा के हैं वे तलाश करने के झगड़े में न पड़कर सुनने मात्र से ही भाग खड़े होंगे । इस प्रकार दुर्बल आत्माओं की भीड़ सहज ही छँट जायगी । असुरता के आक्रमणों से जहाँ यज्ञों में बड़ी अड़चन पड़ती है वहाँ (१) संयोजकों में दृढ़ता, पुरुषार्थ तथा मुकाबला करने की शक्ति की अभिवृद्धि (२) सच्चे धर्मप्रेमियों की सचाई जान लेने पर श्रद्धा का और अधिक विकास (३) दुर्बल आत्माओं की अनावश्यक भीड़ की छँटनी, ये तीन लाभ भी हैं ।

जो हो, यज्ञीय आयोजनों की सुरक्षा के लिए हमें ध्यान रखना है । हमारी बेखबरी से लाभ उठा कर असुरता कोई ऐसा आघात न पहुँचा दे जिससे पीछे पश्चात्ताप करना पड़े, इससे सावधान रहना है । असुरता के छद्मवेशी इन आक्रमणों के प्रति हम सब को सजग रहने की बड़ी आवेश्यकता है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असुरत्त्व से यज्ञ की रक्षा

ब्राह्मण को भूसुर भी कहते हैं । भूसुर का अर्थ है, पृथ्वी का देवता । अन्य मनुष्य तो मानवता के साधारण नियमों का पालन करते हुए अपने कर्त्तव्य धर्म की रक्षा ही कर पाते हैं, पर ब्राह्मण इससे बहुत आगे बढ़ा होता है, वह अपने ऊपर संयम, त्याग, तपस्या के कठोर नियमों का पालन करके अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताऐं न्यूनतम बना लेता है यहाँ तक कि भोजन-वस्त्र में भी इतनी कमी करता है कि उसका जीवन-निर्वाह अत्यन्त ही सरल हो जाय । कारण यह है कि ब्राह्मण को अपनी शक्तियों का अधिकतम भाग परमार्थ में, लोक-सेवा में, भगवत् आराधना में लगाना होता है,यदि वह अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं और आवश्यकताओं को बढ़ा ले तो फिर वह अपने अभीष्ट उद्देश्यों को पूरा नहीं कर सकता । ब्राह्मण सदा से इस तथ्य को भली प्रकार समझते रहे हैं और सांसारिक प्रलोभनों से बचते रहे हैं । उनकी इस त्याग वृत्ति ने ही उन्हें भू सुर बनाया । समस्त समाज में वे श्रेष्ठ गिने गये । संसार ने उनके त्याग का प्रत्युपकार अपने अन्त:करण की सच्ची श्रद्धा उनके चरणों पर उँडेल कर, चुकाया ।

इस गये गुजरे जमाने में भी उन सच्चे ब्राह्मणों के वंशजों का मान इसलिए होता है कि इनके पूर्वज किसी समय में भूसुर थे । आज ये अपने पूर्वजों जैसे श्रेष्ठ नहीं रहे तो भी उन भूसुरों की महानता का एक कण भी इनमें शेष होगा तो भी ये प्रणाम करने योग्य हैं । आज भी ब्राह्मण को अपने पूर्वजों की विशेषताओं के कारण मान प्राप्त होता है और उन्हें सब लोग झुककर प्रणाम करते हैं ।

ब्राह्मणत्व की माता गायत्री और पिता यज्ञ है । भगवान मनु ने कहा है कि कोई व्यक्ति जन्म से ही ब्राह्मण नहीं होता, वरन् स्वाध्याय, व्रत, होम, वेदज्ञान, तप, यज्ञ आदि द्वारा उसे ब्राह्मण बनाया जाता है । यथा:-

स्वाध्यायेन व्रतैहोमैस्त्रै विद्येनज्ययासुतैः
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मी य क्रियते तुनः ।

स्वाध्याय, व्रत, होम, त्रयी विद्या के ज्ञान, धार्मिक सन्तानोत्पादन, यज्ञ तथा महायज्ञों से यह शरीर ब्राह्मण किया जाता है ।

वेद-जननी गायत्री की उपासना से स्वाध्याय, व्रत, वेदज्ञान आदि का आरम्भ होता है और यज्ञ का तपश्चर्या से सम्बन्ध है । इस प्रकार गायत्री माता और यज्ञ पिता से ही ब्राह्मणत्व का जन्म होता है । माता-पिता की महिमा बढ़ाना, उनके महत्व को उज्ज्वल एवं प्रकाशवान् करना सत्पुत्र का कर्तव्य है । पूर्वकाल में ब्राह्मण लोग बड़े प्रयत्न, उत्साह, लगन एवं श्रम से स्वयं गायत्री उपासना करते थे और सभी द्विजों को इस कल्याण कारक मार्ग पर प्रवृत्त करके उन्हें सुख-शान्ति के परमलक्ष्य तक पहुँचाने का पुण्य लाभ करते थे । इसी प्रकार वे स्वयं यज्ञ करते थे और अन्य अधिकारियों को प्रेरणा पूर्वक यज्ञ कराके विश्व कल्याण के एक महान् परमार्थ का आयोजन करते थे । उन्हें यज्ञादिक में कोई दान-दक्षिणा मिलती थी, तो उसके एक कण का उपयोग भी व्यक्तिगत भोग-ऐश्वर्य में नहीं करते थे, वरन् इस हाथ लेकर उसे यज्ञ, गुरुकुल, ग्रन्थ निर्माण, सत्सङ्ग आयोजन, चिकित्सा, आदि कार्यों में लगा देते थे । ब्राह्मण का कर्त्तव्य ही यह था-(१) विद्या पढ़ना-विद्या पढ़ाना (२) दान-लेना, दान देना (३) यज्ञ करना, यज्ञ कराना । स्पष्ट है कि ब्राह्मण-जीवन की गति विधि परमार्थमय ही होती थीं । वह वेद विद्या (गायत्री) यज्ञ और परमार्थ (दान) में निरन्तर संलग्न रहता था ।

समय के कुचक्र ने ब्राह्मण का भी पतन कर दिया । वह अपने कर्त्तव्य धर्म को भुलाकर लोभ में फँसने लगा । कष्ट साध्य तपश्चर्याओं और लोक सेवा की प्रवृत्तियों से आँख चुरा कर, पैर पुजाने और दक्षिणा बटोरने की लालच में फिसलने लगा । धीरे-धीरे जब यह प्रवृत्ति अधिक बढ़ी तो उसने दक्षिणा बटोरना ही अपना लक्ष्य बना लिया । जिस कार्य में उन्हें अधिक दक्षिणा मिले, उसे ही करना उनने लक्ष्य बनाया । लोगों से कहने लगे स्वाध्याय, उपासना, तप, यज्ञ आदि से समय और धन खर्च करने की अपेक्षा भरपूर दक्षिणा हमें दो और स्वर्ग के अधिकारी बन जाओ । ऐसे अनेक श्लोक उनने पुस्तकों में सम्मिलित कर लिये और ''दक्षिणावाद'' का झण्डा गाड़ दिया । सारे धर्म-कर्म की धुरी दक्षिणा बन गई ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्राह्मण को उसकी शारीरिक आवश्यकता की वस्तुऐं अन्न, वस्त्र, दूध (गौ) यज्ञ में दी जाती थीं ऐसा प्राचीन ग्रन्थों में उल्लेख है:-

गां दद्यात् यज्ञवानन्ते ब्रह्मणे वाससी तथा ।

-कात्यायन

यज्ञ के अन्त में ब्राह्मण को गौ और वस्त्र देना चाहिए । गौ, अन्न, वस्त्र, जैसी सस्ती और अधिक संख्या में जमा करने में असुविधा-जनक वस्तुओं को लेने के स्थान पर उनने सोना चाँदी आदि कीमती और अधिक मात्रा में आसानी से संग्रह हो सकने वाली वस्तुओं के विधान बनाये । यथा-

सुवर्ण परमं दानं सुवर्ण दक्षिणा परा ।
सर्वेषामेव दानानां सुवर्ण दक्षिणेष्यते ।।

सोने का दान ही परम दान है । सोने की दक्षिणा ही विशेष दक्षिणा है । सब दानों में स्वर्ण का दान ही प्रशंसनीय है ।

एकादश स्वर्ण निष्काः प्रदातव्या सदक्षिणाः ।
पलान्येकादश तथा दद्याद्वित्तानुसारतः ।
अन्येभ्योऽपि यथाशक्ति द्विजेभ्यो दक्षिणां दिशेत् ।

यज्ञ कराने वाले को ११ अशर्फी देनी चाहिए । अपनी सामर्थ्य यदि ठीक हो तो ४४ तोले सोना देना चाहिए । अन्य ब्राह्मणों को भी शक्ति भर दक्षिणा देनी चाहिए ।

दक्षिणा च फलप्रदा ।

दक्षिणा ही फल देने वाली है ।

सर्वेषां कर्मणां देवि सारभूता च दक्षिणा ।

सब कर्मों में दक्षिणा ही सार है ।

दक्षिणा दक्षतेः समर्धयात् कर्मणः व्यृद्धं समर्धयतीति ।

यदि यज्ञ कर्म में कुछ न्यूनता रह जाती है तो दक्षिणा बढ़ा देने से उसकी पूर्ति हो जाती है ।

माषाणां षोडशादर्ध्वं कुर्याद्धेम पवित्रकम् ।
तेभ्यः स्वल्पतरं न्यूनं न कुर्वीत् कदाचन् ।

सोलह मासे में अधिक भारी सोने की पवित्री बनावे । उससे जरा भी कम वजन न हो ।

वस्त्र युग्मं महावस्त्रं केयूरं कर्णभूषणम् ।
अङ्ग लिभूषणश्चैव मणि मन्थस्य भूषणम् ।।
काण्ठाभरण युक्तानि प्रारम्भे धर्म कर्मणः ।
पुरोहिताय दत्त्वाऽथ ऋत्विग्भ्यश्चापि दापयेत् ।

-लिङ्ग पुराण

धोती, दुपट्टा, दुशाला, कानों के आभूषण, कर्ण फूल, अँगूठी, कंकण, गले का हार यह वस्तुऐं धर्म कर्म आरम्भ करते ही पुरोहित और ऋत्वजों को दान करें ।

दक्षिणात्युत्तमा मध्याचाधमेति त्रिधामता ।
तत्र सौवर्ण निष्काणि दस साहस्त्रिकोत्तमा ।
तदर्ध मध्यमा प्रोक्ता तृतीया त्रिसहस्त्रिका ।

-महार्णवे

दक्षिणा तीन प्रकार की कही गई हैं । उत्तम १० हजार निष्क (३६२५० रुपया), मध्यमा ५ हजार निष्क (१८१२५ रुपया), अधम दक्षिणा तीन हजार निष्क (१०८७५ रुपया) होती है ।

कभी-कभी ऐसा भी होता था कि मन चाही दक्षिणा न दे सकने पर यजमान लोग दक्षिणा उधार कर देते थे । उधार पटाने की जब उनमें सामर्थ्य न होती थी, ब्राह्मण तकाजा करते थे, फिर भी वह वसूल न हो पाता था, ऐसी दशा में यजमान को नरक जाने का भय दिखाया गया । देखिए-

कर्ताकर्मणि पूर्णोऽपि तत्क्षणात् यदि दक्षिणाम्
न दद्यात् ब्राह्मणेभ्यश्च दैवेनाज्ञानतोऽयवा ।
मुहूर्ते समतीते च द्विगुणा सा भवेद् ध्रुवम् ।
एकरात्रे व्यतीते तु भवेद्दस गुणा च सा ।
त्रिरात्रेवै दशगुणं सप्ताहे द्विगुणा ततः ।
मासे लक्षगुणा प्रोक्ता ब्राह्मणानां च वर्द्धते ।
सम्वत्सरे व्यतीते तु सा त्रिकोटि गुणा भवेत् ।
कर्म तद् यजमानानां सर्व वै निष्फलं भवेत् ।
स च ब्रह्मस्वापहारी न कर्माहोऽशुचिर्नरः ।
दरिद्री व्याधि युक्तश्च तेन पापेन पातकी ।
तद्गृहाघाति लक्ष्मी च शापं दत्त्वा सुदारुणम् ।
पितरो नैव गृह्णन्ति तद्दत्तं श्राद्ध तर्पणम् ।
एवं सुराश्च तत्पूजां तद्दत्तं पावका हुतम् ।

-ब्रह्म वैवर्त

यज्ञ आदि कार्य पूरे हो जाने पर भी जो दैवयोग से अज्ञान द्वारा दक्षिणा नहीं देता, तो प्रति क्षण वह दक्षिणा दूनी होती जाती है । एक रात बीत जाने पर छै गुनी, तीन रात बीत जाने पर दस गुनी, सात दिन बीतने पर बीस गुनी, एक महीना बीत जाने पर लाख गुनी, एक वर्ष बीत जाने पर करोड़ गुनी हो जाती है और यजमान का वह सब कर्म निष्फल ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जाता है । वह यजमान ब्रह्मधन का चोर, सत्कर्मों से हीन और अपवित्र हो जाता है तथा इस भयङ्कर पाप के कारण दरिद्री एवं व्याधि ग्रस्त होता है । लक्ष्मी उसके घर से कठिन शाप देकर अन्यत्र चली जाती है । पितृगण उसके हाथ का श्राद्ध-तर्पण ग्रहण नहीं करते । देवता उसकी आहुति-पूजा को स्वीकार नहीं करते ।

नार्पयेद् यजमानश्चेद् याचितारं च दक्षिणाम् ।
भवेद् ब्रह्म स्वापहारी कुम्भी पाकं व्रजेद् ध्रुवम्
वर्षलक्षं वसेत्तत्र यमदूतेन ताडितः ।
ततो भवेत् स चाण्डालो व्याधि युक्तो दरिद्रकः ।
पातयेत् पुरुषान् सप्त पूर्वकान् वै पूर्व जन्मनः ।

उधार की हुई दक्षिणा का तकाजा करने पर भी यदि यजमान दक्षिणा नहीं देता तो वह ब्रह्म धन हारी निश्चय ही कुम्भीपाक नरक में पड़ता है, वहाँ एक लक्ष वर्ष रहता है और यम दूतों द्वारा कुटता पिटता है । इसके बाद वह चाण्डाल, व्याधि ग्रस्त, दरिद्री बनता है । उसकी सात पीढ़ी के पूर्वज नरक में चले जाते हैं ।

यत्कर्म दक्षिणाहीनं कुरुते मूढ़धीशठः
सपापी पुण्य हीनश्च ।

जो दक्षिणा रहित कर्म करता है, वह मूढ़ - बुद्धि, शठ, पापी, पुण्य हीन है ।

लोभ अकेला नहीं बढ़ा । धन जमा करने के साथ-साथ निमन्त्रण में बढ़िया-बढ़िया स्वादिष्ट भोजनों, पकवानों, और मिष्ठानों का स्वाद किससे छोड़ा जाता है । निमन्त्रणों के स्वादिष्ट भोजनों के लिए झुण्ड के झुण्ड ब्राह्मण लालायित रहते । स्वल्प शक्ति वाले यजमान उतने लोगों को भोजन न करा पाते तो उनसे कहा जाता कि अमुक कार्य में इतने से कम ब्राह्मणों को भोजन कराये बिना काम नहीं चल सकता । क्योंकि यह शास्त्र की आज्ञा है ।

गर्भाधानादि संस्कारे ब्राह्मणान् भोजयेद्दश
शतं विवाह संस्कारे पञ्चाशन्मेखलाविधौ ।
आवसथ्ये त्रियस्त्रिंशच्छ्रौताऽऽधानेशतात्परम् ।
अष्टकं भोजयेद् भक्त्या तत्तत्संस्कारसिद्धये ।
सहस्रं भोजयेत् सोमे ब्राह्मणानां शतं पशौ ।
चातुर्मास्येषु चत्वारि शतं पञ्च सुराग्रहे ।
अयुतं वाजपेये च ह्यश्वमेधे चतुर्गुणम् ।।

-यज्ञपार्श्व

गर्भाधान संस्कार में कम से कम १०, विवाह में १००, यज्ञोपवीत संस्कार में ५०, आवसथ्य में ३३, श्रौताधान में १०० से भी अधिक और प्रत्येक संस्कारों की निर्विघ्न पूर्त्ति के लिए आठ ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए ।

सोम याग में एक हजार, पशु याग में सौ, चातुर्मास्य याग में चार सौ, देवाराधनादि कर्मों में पाँच सौ, वाजपेय में दस हजार और अश्वमेध यज्ञ में चालीस हजार ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए ।

दक्षिणा के लिए आपस में संघर्ष होने लगे । सब को समान मिले या न्यूनाधिक, इस प्रश्न को लेकर आपस में झगड़े होने लगे और उसके लिए तरह-तरह के विधान बनने लगे । यज्ञ में आचार्य बनने वालों ने अपना पक्ष मजबूत रखा:-

"आचार्ये द्विगुणं दद्यात्"

आचार्य को दूनी दक्षिणा दे ।

"सर्वत्र द्विगुणं दद्यादाचार्याय तु दक्षिणाम् ।

अन्य ऋत्वजों से आचार्य को दूनी दक्षिणा दे ।

आचार्यो यदि तुष्टः स्यात् शान्तिर्भविष्यति
आचार्य दक्षिणान् तस्याद्दीयतां प्रतिवासरम्
ऋत्विजभ्यो दक्षिणां दद्यात् यथाशक्ति ततः परम् ।

यदि आचार्य संतुष्ट है, तो सब प्रकार शान्ति होगी । इसलिए आचार्य को नित्य दक्षिणा दे । "इसके बाद" ऋत्वजों को भी यथा शक्ति दक्षिणा दे ।

यज्ञ कराने की विधि अनेक ब्राह्मण जानते थे, पर सभी को यजमान न मिलते थे । कराने वाले अधिक और करने वाले कम हो गये तो पुरोहितों में फूट पड़ी । एक प्रदेश के निवासी दूसरे प्रदेश वासी को बुरा कहने लगे । अपने को अधिकारी और दूसरों को अनधिकारी ठहराने लगे । किसी के सौन्दर्य में कोई कमी होती तो उसे भी यज्ञ कराने के अयोग्य ठहरा दिया जाता । इस प्रकार दूसरों को अयोग्य ठहरा कर अपनी योग्यता सिद्ध करने के लिए प्रयत्न होने लगे । अनेक प्रमाण भी बन गये यथा:-

मागधो वामनः कृष्णो द्विजो वर्ज्यो जपादिषु

मगध देश का निवासी, कद का ठिगना और काले वर्ण का ब्राह्मण जप आदि में वर्जित है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

द्विर्नग्न शुक्ल. . . . कुनखि वर्जम् ।

खुरदरे चमड़े का, गोरे वर्ण का,. . . .भद्दे नाखूनों वाला ब्राह्मण वर्जित है ।

ज्योतिर्विदो ह्यथर्वाणः कीराः पौराण पाठकाः
श्राद्धे यज्ञे महादाने वरणीयाः कदाचन ।

ज्योतिषी, अथर्ववेदी, काश्मीर देश निवासी, पुराणों का पाठ करने वाले ब्राह्मणों को श्राद्ध यज्ञ और बड़े दान में कदापि वरण न करना चाहिए ।

आब्राह्मणस्तु षट् प्रोक्त इति शातातपोऽब्रवीत् ।
आद्यस्तु राजभृत्यः स्याद् द्वितीयः क्रयविक्रयी
तृतीयो बहुयाज्ञाख्यश्चतुर्थोऽश्रौत याजकः ।
पञ्चमो ग्रामयाजी च षष्ठेऽसन्ध्योद्विजोमतः ।

यह छः प्रकार के ब्राह्मण अब्राह्मण (ब्राह्मणत्व से रहित) कहे गये हैं । (१) राज कर्मचारी (२) व्यवसायी (३) बहुत यज्ञ करने वाले (४) यज्ञ रहित (५) गाँवों में हवन कराने वाले (६) सन्ध्या न करने वाले ।

मागधो माथुरश्चैव कापटः कीकटानजौ ।
पञ्च विप्रा न पूज्यन्ते बृहस्पति समा यदि ।

मागध ब्राह्मण, माथुर ब्राह्मण, कापट ब्राह्मण, कीकट ब्राह्मण और आन देश के निवासी यह पाँच प्रकार के ब्राह्मणों से भी यज्ञ पूजा नहीं करनी चाहिये चाहे वे बृहस्पति के समान ही विद्वान क्यों न हों ?

कई ब्राह्मण कम दक्षिणा पर भी यज्ञ कराने को तैयार हो जाते, तो उनकी भर्त्सना की जाती और भय बताया जाता कि कम दक्षिणा का यज्ञ कराओगे तो सब कुछ नष्ट हो जायगा । इसीलिए केवल उसी का यज्ञ कराओ जो भरपूर-मुँहमाँगी दक्षिणा दे ।

पुण्यान्यन्यानि कुर्वीत श्रद्धधानो जितेन्द्रियः ।
न त्वल्प दक्षिणैर्यज्ञैजन्ते ह कथञ्चन ।
इन्द्रियाणि यज्ञः स्वर्गमायुः कीर्ति प्रजापशून् ।
हन्त्यल्प दक्षिणो यज्ञस्तस्यान्नाल्पधनोयजेत् ।

ब्राह्मण चाहे यज्ञ के अतिरिक्त और कुछ शुभ कार्य भले ही करें पर न्यून दक्षिणा के यज्ञ कभी न करें । जिसमें थोड़ी दक्षिणा मिले उस यज्ञ से स्वास्थ्य, यश, स्वर्ग, आयु, कीर्ति, प्रजा पशु नष्ट होते हैं, इसलिये कम दक्षिणा वाला यज्ञ न करें ।

उपरोक्त श्लोक मानवीय ग्रन्थों में सम्मिलित कर दिये गये, जिससे धर्म भीरु यजमान उन्हें प्रामाणिक मानें और तदनुसारकार्य करने को विवश हों । यों यज्ञ कराने वाले ब्राह्मणों को दक्षिणा देना उचित और आवश्यक है, शास्त्रों में इसका उल्लेख भी है । साधारण विवेक-बुद्धि से सभी यज्ञ वाले यथा शक्ति देते भी हैं पर ''दक्षिणा वाद'' को ऐसे निकृष्ट रूप में उपस्थित करने से यज्ञ कराने वालों का मान बढ़ा नहीं, वरन् घटा ही । दक्षिणा और ब्रह्म भोज का बहुत बोझ होने पर यजमान लोगों के लिए यज्ञादि करना कठिन हो गया । उनकी उपेक्षा होने लगी और धीरे-धीरे उनकी प्रथा ही घट गई । उसकी हानि सभी को हुई, ब्राह्मणों को सोने का अण्डा देने वाली मुर्गी का पेट चीरने की कोशिश में केवल पछताना हाथ लगा । यजमान यज्ञ से प्राप्त होने वाले लाभों से वञ्चित हो गये । संसार में अवांछनीय वातावरण बढ़ा और उसकी शुद्धि न होने से जनता दैवी कृपाओं से वञ्चित होकर सुख शान्ति से वंचित हो गई । इस प्रकार 'दक्षिणा वाद' किसी के पक्ष में भी हितकर सिद्ध न हुआ, वरन् सभी की हानि हुई । यज्ञ रहित ब्राह्मण अपने ब्राह्मणत्व से च्युत हुए और उनने अपनी वेदमाता तथा यज्ञपिता को उपेक्षित लाञ्छित एवं अस्त-व्यस्त दशा में डाल दिया ।

यज्ञ में असुर अनेक प्रकार से विघ्न फैलाते हैं । ग्रन्थों में ऐसे अनेक वर्णन हैं । रामायण में उल्लेख है -

जहँ जप यज्ञ जोग मुनि करहीं ।
अति मारीच सुबाहु हि डरहीं ।।
देखत जज्ञ निशाचर धावहिं ।
करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं ।।

ताड़का राक्षसी द्वारा बार-बार यज्ञ में विघ्न फैलाये जाने पर उसके रोकने के लिए विश्वामित्र जी ने राम को बुलाया था । यज्ञादि सत्कर्मों में असुर लोग इसलिए विघ्न फैलाते हैं कि सत् भावनाओं की वृद्धि से उनका विरोधी वातावरण पैदा होता है और अन्ततः उन्हें अपनी गतिविधि चलाना, यहाँ तक कि जीवन धारण करना भी कठिन हो जाता है । असुरता तभी तक फलती फूलती है, जब तक कि सतोगुणी देव शक्तियाँ सुप्त अवस्था में पड़ी रहती हैं । यज्ञ द्वारा उनका जागरण होने पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

असुरता का निर्वाह कठिन हो जाता है । इसलिए असुर अपनी प्राण-रक्षा के भय से यज्ञादि शुभ कर्मों में विघ्न फैलाते हैं ।

''असुरता'' एक भावना है, जो अनेक मनुष्यों में पाई जाती है । ''दक्षिणावाद'' भी एक असुरता है । स्वार्थ और लोभ को इतनी प्रधानता देना कि उससे एक शुभ कर्म की प्रगति में बाधा उपस्थित हो जाय, सर्वथा निंदनीय है । विद्वानों का कर्त्तव्य है कि भूत काल की भूलों का प्रायश्चित्त करने के लिए दूने उत्साह से यज्ञ पिता और गायत्री माता का गौरव बढ़ाने में उनका पुनरुत्थान करने में जुट जावें । स्वार्थ, अहंकार, ईर्ष्या, द्वेष आदि तो असुर हैं, इन्हें किसी को भी, विशेषतया ब्राह्मणों को तो अपने में स्थान देना ही नहीं चाहिए ।

जब ऐसा देखा जाता है कि विवाहादि संस्कारों को उचित रीति से कराने में परस्पर सद्भाव पूर्वक सहयोग देने की अपेक्षा दोनों पक्षों के पण्डित मुर्गों की तरह आपस में इसलिए लड़ते हैं कि उनकी विद्वत्ता की छाप उपस्थित लोगों पर बैठ जाय और दूसरे पण्डित को लोग मूर्ख समझें । इसी मनोवृत्ति से प्रेरित होकर कई बार वे लोग शुभ कर्म कर्त्ता के मन में ऐसा सन्देह पैदा कर देते हैं कि यह कार्य उस प्रकार करोगे तो उसका परिणाम बुरा होगा । बेचारा श्रद्धालु धर्म-प्रिय व्यक्ति संशय और भ्रम में पड़ जाता है और उस विचार को ही छोड़ बैठता है । पण्डित जी ने भ्रम इसलिए उत्पन्न किया था कि-''यह यजमान मुझे भारी विद्वान् माने, दूसरे लोग भी मेरी योग्यता को सबसे ऊपर मानकर मेरे ही यजमान बन जायँ, मेरा सिक्का सब पर जम जाय ।'' पर उनकी यह इच्छा प्रायः पूरी नहीं होती । उन्हें यश और धन तो अपनी योग्यता और प्रारब्ध के अनुसार ही मिलता है, पर एक अच्छे उत्साह में विघ्न अवश्य पड़ जाता है । ''अपना यजमान किसी दूसरे की सलाह क्यों ले रहा है ? उनके अतिरिक्त और किसी पर श्रद्धा क्यों कर रहा है ? उन्हीं के एकछत्र नेतृत्व में क्यों नहीं चलता ? उनकी दक्षिणा के मार्ग में कोई अड़चन क्यों पैदा होती है ?'' इस प्रकार की ईर्ष्या, द्वेष की भावनाओं से प्रेरित होकर अनेक पण्डित ''बिल्ली खायेगी नहीं, तो लुढ़का तो देगी ही ।'' वाली उक्ति चरितार्थ करते हैं । अपने को कुछ लाभ भले ही न हो पर अपनी नाक कटाकर भी दूसरे का शकुन बिगाड़ देने की नीति तो चरितार्थ हो ही जाती है ।

यह भी 'असुर भावना' है । अनेक प्रकार के असुरत्वों में यह असुरत्व अधिक चिन्ता जनक है, क्योंकि यह ब्राह्मणों, पण्डितों के मन में छिपकर बैठता है और वहाँ वह अपनी रक्षा के लिए 'पाण्डित्य' की मजबूत आड़ में छिप बैठता है । एक यवन आक्रमणकारी ने गायों का झुण्ड आगे करके पृथ्वीराज की सेना पर हमला-किया था, ताकि हिन्दू सेना गौ पर शस्त्र न उठाये और उनका आक्रमण सफल हो जाय । इसी प्रकार यज्ञ में विघ्न उत्पन्न करने वाले असुर तत्व जहाँ अनेक प्रकार की अन्य अड़चनें उत्पन्न करते हैं, वहाँ भोले-भाले ब्राह्मणों को अपनी आड़ बनाकर भी भले कार्यों में विघ्न उत्पन्न करते रहते हैं । दक्षिणा आवश्यक है । वह सत्पात्रों को यज्ञ की पूर्णता के लिये अवश्य दी जानी चाहिए, पर 'दक्षिणा वाद' के असुर को इतना प्रबल न होने देना चाहिए कि उससे मूल उद्देश्यों पर ही आघात पहुँचे ।

इस दिशा में हम सब को सावधान रहना चाहिये । जहाँ कहीं ऐसा असुरत्त्व छिपा हो, वहाँ से उसे हटाने का या असफल बनाने का प्रयत्न करना चाहिये, क्योंकि यह अन्य असुरों की अपेक्षा अधिक भयानक है ।

जो भोले व्यक्ति कोई शुभ आयोजन करने या कराने के लिए कुछ भी प्रयत्न नहीं कर पाते, वे इस असुरत्त्व की प्रेरणा से विघ्न उत्पन्न करने में बड़े उत्साही और क्रियाशील बन जाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ महाअभियान की सम्भावित कठिनाइयाँ

श्रद्धा, धैर्य साहस, विवेक और विश्वास से ही इन पर विजय हो सकेगी ।

संसार में जिन अनेक प्रकार के दु:खों से प्राणी दु:ख पाते हैं, उन सब का मूल कारण कुबुद्धि दुर्भावना और दुष्कृति है । मन: क्षेत्र में कुविचार और क्रिया क्षेत्र में कुकर्म कराने वाले इस दु:ख दायी, अधर्म मूलक तत्त्व को असुरता कहते हैं । सुख-शान्तिदायी दैवी तत्व और दुख दारिद्र्य उत्पादक आसुरी तत्त्व दोनों ही सृष्टि में अनादि काल से मौजूद हैं । जब दैवी तत्व प्रकृति के अन्तराल में बढ़े हुए होते हैं, तब समस्त मनुष्य जाति, सम्पूर्ण सृष्टि, सुख-शान्ति उन्नति और आनन्द का आस्वादन करती है और जब असुरता बढ़ जाती है तो आज की भाँति सब कोई दैहिक, दैविक, भौतिक त्रासों के कारण भारी परेशानी पीड़ा और कष्ट भोगते हैं ।

असुरता को नष्ट करने वाली दिव्य प्रक्रियाओं का नाम यज्ञ है । यों सभी लोकहितकर, धर्म पूर्ण कार्य यज्ञ हैं पर उन सबमें अग्निहोत्र -हवन का स्थान सर्वोपरि है । अपना नष्ट होना कोई भी पसन्द नहीं करता, असुरता को भी पसन्द नहीं । वह अपने प्रतिरोधी आयोजनों को असफल बनाने का प्रयत्न करतीं हैं । विश्वामित्र ऋषि के यज्ञों में ताड़का, मारीच, सुबाहु आदि असुर ऐसे ही विघ्न उत्पन्न करते थे, जिनसे दुखी होकर उन्हें राजा दशरथ के पास उनके पुत्र माँगने जाना पड़ा था ।

असुरों का मायावी होना प्रसिद्ध है । माया, छल प्रपञ्च, चालाकी, कूटनीति, भ्रान्ति षडयंत्र रचना की उनकी नीति प्रमुख है । उसी के आधार पर वे अपने से असंख्य गुने बलवान देवताओं को परास्त कर देते हैं । देवता सीधे, भोले, सरल, सत्यवादी, सौम्य, मर्यादा के अन्दर रहने वाले अहिंसक और क्षमा शील होते हैं । असुर इन विशेषताओं से अनुचित लाभ उठा कर अपनी रक्षा सहज ही कर लेते हैं और देवताओं के विरुद्ध कोई ऐसा छल, प्रपञ्च, जालसाजी और धूर्तता भरा षड़यन्त्र करते हैं, जिससे बेखबर होने के कारण देवता बेचारे फँस जाते हैं और उनके प्रपंच-पाश में बँधकर त्रास सहते हैं । यों अन्त में विजयी सदा देवता ही होते हैं, क्योंकि उनका आधार सत्य है । असुर हारते हैं, क्योंकि उनकी शक्ति केवल मात्र असत्य, छल, प्रपंच अनीति और माया पर अवलम्बित है । पर पहली बाजी में तत्काल लाभ असुरों को ही मिलता है । माया भरे प्रपंच पहली बाजी में बहुधा जीतते हैं । यही कठिनाई ऋषियों और देवताओं की पराजय का कारण बनती रही है । इन परिस्थितियों से पार पाने में जब सौम्यता असफल रही है, तब बहुधा अवतारों के रूप में कोई योद्धा अवतरित होकर काँटे से काँटा निकालने की नीति लेकर असुरता पर विजय प्राप्त करने आगे आया है । राम, कृष्ण, दुर्गा, परशुराम, नृसिंह, कच्छ, मच्छ, वाराह आदि के अवतार इन्हीं प्रयोजनों के लिए हुए हैं ।

ताण्डय ब्राह्मण की कथा है कि एक बार असुर चुपचाप अन्न में घुस गये, ताकि उन्हें देवता खा लें और वे उनके शरीर और मन में प्रवेश करके अपना आधिपत्य जमा लें । इन्द्र ने इस चाल को पकड़ा और असुरों को अन्त में मार भगाया । राजा परीक्षित के मुकुट में चढ़कर उससे मौनव्रती ऋषि के गले में साँप डलवाना, कैकई और मन्थरा की जिह्वा पर बैठ कर उससे कुछ का कुछ कहलवाना, इन्ही अदृश्य शक्तियों का कार्य था ।

गायत्री परिवार का यज्ञ-आन्दोलन परम पवित्र सतोगुणी, विश्व कल्याणकारी, शास्त्रोक्त एवं इस युग की अत्यन्त उच्चकोटि की आध्यात्मिक शक्तियों की प्रेरणा द्वारा संचालित होने तथा व्यवहारत: किसी व्यक्ति या वर्ग के लिए किसी प्रकार की स्वार्थपरता की गुंजायश न रहने के कारण इस स्थिति में है कि उस पर उँगली उठाने का दुस्साहस कर सकना कठिन है । इस महा अभियान का सूत्र संचालन करते हुए ऐसे प्रत्येक पहलू को भली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रकार शुद्ध रखने का प्रबन्ध कर लिया गया है, जिन पर उङ्गली उठा करती हैं । किसी व्यक्ति का व्यक्तिगत स्वार्थ, आर्थिक गड़बड़ी, शास्त्रीय मर्यादाओं का उल्लंघन कोई राजनैतिक या दलगत स्वार्थ जैसी सम्भावनाओं से इस कार्यक्रम को कोसों दूर रखा गया है, ताकि इस महान् प्रक्रिया की नींव मजबूत रहे और ठोस आधार पर कुछ गम्भीर कार्य किया जा सके ।

फिर भी असुरता के सब द्वार बन्द हो जायँ और उसे कोई मार्ग न मिले ऐसी बात नहीं है । यज्ञों द्वारा अपने अस्तित्व को खतरे में देख कर क्रुद्ध असुरता कोई हथियार न उठाये ऐसा नहीं हो सकता । ऐसा कभी हुआ भी नहीं है । अब भी नहीं हो रहा है, आगे भी ऐसा न हुआ, न होगा । यज्ञ आन्दोलन की युग परिवर्तनकारी इस महान् योजना को चुपचाप चलने दिया जाय, सफल होने दिया जाय और आसुरी शक्तियाँ उसमें कोई विघ्न, प्रतिरोध, अड़चन पैदा न करें, यह किसी भी प्रकार सम्भव नहीं है । यदि विघ्न न आवें, प्रतिरोध न हो तो समझना चाहिए कि अपना कार्यक्रम निकम्मा है, उससे कोई ऐसी शक्ति उत्पन्न नहीं हो रही है जिसकी असुरता को चिन्ता हो । प्रतिरोध की उत्कटता अपने कार्य की वास्तविकता की एक जीती जागती कसौटी है ।

पिछले दिनों भारतवर्ष में विस्तृत विशाल यज्ञों एवं अश्वमेध यज्ञों का जो संकल्प पूर्ण हुआ है, उसके जो समाचार यहाँ आये, उनमें जनता की धार्मिक गहरी आस्था और धर्म प्रेमी व्यक्तियों के प्रचण्ड उत्साह का परिचय पाकर सभी धर्म प्रेमियों का हृदय आनन्द से उल्लसित हुए बिना न रहेगा । पर साथ ही विरोध, अड़चन, विघ्न, आदि के समाचार भी कम नहीं आये हैं, जो बताते हैं कि असुरता किन-किन छद्म वेशों में अपना मोर्चा बना रही है । जिनके मन में कुछ स्थिति पाई उनके मनों में असुरता ने ईर्ष्या, जलन, अहंकार, स्वार्थपरता, जैसी वृत्तियों को उभार कर उन्हें खुला तो नहीं, पर अत्प्रयक्ष विरोधी, अड़चन पैदा करने वाला कानाफूसी करने वाला, असहयोगी बना दिया । उनने लोगों के मनों में उत्साह-सहयोग उत्पन्न करने के स्थान पर असहयोग, अश्रद्धा, अनुत्साह, विरोध, भय, भ्रान्ति आदि की स्थिति पैदा करने में कोई कसर न छोड़ी । इस कार्य में वे पण्डित, जिन्हें प्रचुर दक्षिणा में, अपनी प्रभु सत्ता में कोई कमी पड़ती दीखी वे सबसे आगे रहे । ईर्ष्यालु, अहंकारी, विघ्न, संतोषी, निन्दक, छिद्रान्वेषी उन खलों की, जिनकी गोस्वामी तुलसी दास ने रामायण के प्रारम्भ में ही भूरि-भूरि वन्दना की है, कहीं कमी नहीं । ऐसे अपने मन की दुर्गन्ध को किसी पवित्र से पवित्र वस्तु पर भी उडेल सकते हैं ।

यों अभी कोई महत्वपूर्ण विरोधात्मक घटना नहीं घटी, पर उनकी संभावना अवश्य है । जैसे-जैसे देवताओं की यज्ञ-शक्ति बढ़ेगी, वैसे-वैसे असुरता भी सक्रिय होगी । बढ़ती हुई विरोधी भीड़ को जब पुलिस हटाना चाहती है, तो पहले अश्रुगैस छोड़कर डराती है, फिर भी स्थिति काबू में न आवे तो लाठी चार्ज करके घायल करती है और अन्त में कोई उपाय शेष नहीं रहता तो गोली चलाती है । यज्ञ अभियान के क्रमिक विकास में भी यह स्थिति सामने आनी है । प्रारम्भिक स्थिति में यज्ञ को खाद्य पदार्थ जलाने की बेवकूफी बताने, आयोजन कर्ताओं का कोई स्वार्थ ढूँढ़ने, उन पर झूठे मनगढ़न्त अभियोग, लाञ्छन लगाकर अविश्वास, असन्तोष, अनुत्साह, अश्रद्धा, असहयोग पैदा करने, शास्त्र के अनजानों द्वारा शास्त्रीय विरोध की मीन-मेख निकालना जैसी बातें सामने आवेंगी, यह अश्रुगैस का प्रयोग है । आन्दोलन की दूसरी विकसित स्थिति में अनेक सम्प्रदाय हमें अपना प्रभाव क्षीण करने वाला शत्रु मानेंगे, नास्तिक आस्तिकता का पुनः बोलबाला होने का खतरा समझेंगे । समाज द्रोही, कुकर्मी लोग अपने विरुद्ध एक भारी सङ्कट अनुभव करेंगे । इस प्रकार चारों ओर से अधिक कटु-कठोर चोट पहुँचाने वाले आक्रमण संगठित हो सकते हैं । गाली-गलौज, हाथापाई तिरस्कार, नोटिसबाजी, चोरी आगजनी,

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मारपीट, बदनामी करने वाले मनगढन्त आरोप, आदि अनेक प्रकार के षडयन्त्र हो सकते हैं । यह एक प्रकार का लाठीचार्ज है । अन्तिम स्थिति में इस महान अभियान के संयोजकों के सामने वैसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है, जैसे राक्षसी से डर कर विश्वामित्र भाग खड़े हुए थे और ईसामसीह, सुकरात, दयानन्द, शंकराचार्य, चैतन्य, मीरा, विक्रमादित्य, पाण्डव, हरिश्चन्द्र, प्रह्लाद आदि को बहुत कुछ सहन करना पड़ा था ।

इन प्रतिरोधों की संभावना से क्या हम डर जायँ ? क्या इस आज की स्थिति में संसार की सुख शान्ति को बचा सकने वाले एक महान कर्तव्य को छोड़ बैठें ? नहीं ऐसा करना, तो एक निकृष्ट कोटि की कायरता होगी । जङ्गल में अकेली घिरी हुई गाय के ऊपर जब भेड़ियों का झुण्ड आक्रमण कर रहा हो, वीर पुरुष दया द्रवित होकर अपने शौर्य की जागृति करते हैं और गाय को बचाने में सम्भावित खतरे का मुकाबिला करते हैं । इसी प्रकार की सार्वभौम स्थिति आज है । असुरता ने मानवता को डस लिया है । ईर्ष्या, द्वेष, छल, कपट, अनीति, कृतघ्नता, आलस्य, प्रमाद, असत्य, हिंसा, मलिनता, अनैतिकता, उच्छृंखलता, नास्तिकता आदि दुर्वृत्तियों ने मानवता को सब प्रकार पददलित करके मनुष्य जाति को दुःख, दारिद्रय, क्लेश, चिन्ता, भय, शोक आदि से संत्रस्त कर रखा है । इस स्थिति से उद्धार पाने के लिए जिन शुभ कर्मों का, दिव्य आयोजनों का करना आज आवश्यक है, उनमें यज्ञ-अभियान की उपयोगिता सर्वोपरि है । केवल इस कारण कि कुछ विरोध, नुकसान, अपमान, लांछन या आक्रमण सहना पड़ेगा, चुप हो बैठना किसी भी प्रकार धर्म प्रिय जाग्रत आत्माओं के लिए उचित न होगा । हमें किसी भी दबाव से अनुचित को सहन करने के लिए तैयार नहीं होना चाहिए ।

आज की प्रचण्ड असुरता का समाधान करने के लिए सद्बुद्धि रूपिणी गायत्री माता और त्यागमय प्रेम के प्रतीक यज्ञ पिता का दशों दिशाओं में तुमुल घोष करना आवश्यक, अनिवार्य और अवश्यंभावी है । यह हो रहा है, होने वाला है और होगा, गायत्री परिवार के ऊपर यह श्रेय भार अनायास ही अप्रत्याशित रूप से आ पड़ा है । जो महाकाल प्रेरणा दे, उसे रोका भी कैसे जाय, रुके भी कैसे ? हम लोग यह सब कर रहे हैं, करेंगे, और करना पड़ेगा । जब यह सब होना ही है, तो इसकी गति विधि को जन्म ही लेना चाहिये । हमें पूर्ण दृढ़ता और श्रद्धा से आत्म निर्माण, चरित्र-गठन, नैतिकता, सद्बुद्धि, त्याग मय प्रेम, आस्तिकता-मानवता कर्तव्य पालन, विश्व बन्धुत्व, सत्य, न्याय, प्रेम से परिपूर्ण इस महान सांस्कृतिक पुनरुत्थान के कार्यक्रम को आगे बढ़ाना, साथ ही किन-किन कठिनाइयों और प्रतिरोध पूर्ण परिस्थितियों में होकर गुजरना पड़ेगा यह जान लेना आवश्यक है । इससे डरने और विचलित होने की किसी को भी आवश्यकता नहीं है । सांस्कृतिक पुनरुत्थान योजना के अन्तर्गत यज्ञ-आयोजनों में अनेक प्रकार के लांछनों , उपहासों, विरोधों एवं कठिनाइयों के लिए हर कार्यकर्त्ता को पहले से ही तैयार रहना चाहिए और अवसर आने पर उनका हँसते हुए स्वागत करना चाहिये ।

हमारी मंजिल बहुत बड़ी है, रास्ता कठिन है । उत्तरदायित्व महान है । इस बोझ को हम संगठित होकर मानसिक संतुलन कायम रखकर धैर्य, साहस, विवेक को मजबूती से पकड़े रह कर ही पूरा कर सकते हैं । गायत्री परिवार के सभी सदस्य इन संभावनाओं को भली प्रकार समझ लेने और पूर्ण आस्था तथा विश्वास के साथ लोक-सेवा एवं आत्मकल्याण के इस अलौकिक मार्ग पर अग्रसर होने के लिए सादर आमन्त्रित करते हैं ।

यज्ञ में सहयोग करना कर्त्तव्य है

यज्ञ की उपेक्षा करना, निन्दा करना, असहयोग करना या उसमें विघ्न उत्पन्न करना बहुत ही निन्दनीय बात है । शास्त्रकारों ने ऐसे लोगों की निन्दा की है और उन्हें अधोगामी बताया है । ऐसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुराई से बचने का सभी को प्रयत्न करना चाहिए । यथासम्भव स्वयं यज्ञ करना उचित है, कम से कम दूसरों के प्रयत्न में उत्साह जनक सहयोग तो अवश्य ही करना चाहिए ।

तामिस्रमन्धतामिस्रं महा रौरव रौरवौ ।
असिपत्र वनं घोरं कालसूत्रमवीचिकम् ।
विनिन्दकानां वेदस्य यज्ञ व्याघात कारिणाम् ।
स्थान मेतत् समाख्यातं स्वधर्म त्यागिनश्चये ।

-विष्णु पुराण ६ । १ । ४१-४२

वेद की निन्दा करने वाले तथा यज्ञ में विघ्न पहुँचाने वाले धर्म-घाती के लिए तामिस्र, अन्धतामिस्र, रौरव, महा रौरव, असिपत्र तथा कालसूत्र नामक नरक बने हुए हैं, जहाँ वह चिरकाल तक घोर कष्ट पाता है ।

देवान् ह वै यज्ञेन यजमानास्तानसुररक्षसानिररक्षुर्न यक्ष्यध्वमिति । तद्यदरक्षं तस्माद्रक्षांसि ।

-शतपथ

एक समय देवगण यज्ञ कर रहे थे । राक्षसों ने उनके यज्ञ में अनेक प्रकार के विघ्न किये और कहा 'यज्ञ न करो ।' इसी कारण उनकी 'राक्षस' संज्ञा हुई ।

राजा वेन ने घोषणा की थी-

न यष्टव्यं न दातव्यं न होतव्यं द्विजाः क्वचित् ।

-भागवत् ४ । १४ । ६

अर्थात् उनके राज्य में यज्ञ और दान न हों, उनकी यह नीति ही उसे दुर्गति को ले गई ।

गीता में भगवान् ने यज्ञ रहित मनुष्य की भर्त्सना करते हुए कहा है कि ऐसे मनुष्यों के लोक और परलोक दोनों बिगड़ते हैं ।

नायं लोकोऽस्त्य यज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ।

-गीता

हे अर्जुन ! यज्ञ न करने वाले को इस लोक का भी सुख नहीं मिलता, फिर परलोक के सुख की तो बात ही क्या है ।

नास्त्य यज्ञस्य लोको वै नायज्ञो विन्दते शुभम् ।
अयज्ञो न च पूतात्मा नश्यतिच्छिन्न पर्णवत्

शंख

यज्ञ न करने वाला मनुष्य लौकिक और पारलौकिक सुखों से वञ्चित हो जाता है । यज्ञ न करने वाले की आत्मा पवित्र नहीं होती और वह पेड़ से टूटे पत्ते की तरह नष्ट हो जाता है ।

या वै प्रजायज्ञे अंनन्वाभर्त्तनः पराभूता वै ताः ।
एवमेवैतद्या इमाःअपराभूतास्तायज्ञमुख आभजति ।

-कृष्ण यजु० ३ । १ । २०

जो लोग यज्ञ में सहयोग नहीं करते, वे निन्दनीय हैं । यज्ञ में सहयोग करने वाले लोग ही प्रशंसा के पात्र हैं ।

अयज्ञियो हतवर्चा भवति ।

-अथर्व १२ । २ । ३७

यज्ञ रहित मनुष्य का तेज नष्ट हो जाता है ।

इसलिए यज्ञ की न तो उपेक्षा करनी चाहिये और न उसका कभी असहयोग करना चाहिए । वरन् जहाँ सुन पाये कि अमुक जगह यज्ञ हो रहा है, वहाँ बिना बुलाये जा पहुँचे और श्रद्धा पूर्वक परमार्थ बुद्धि से उसमें सहयोग करे । कहा भी है-

अनाहूतोऽध्वरं व्रजेत् ।

अर्थात्-बिना बुलाये भी यज्ञ में सम्मिलित हो ।

जो लोग सार्वजनिक यज्ञों की व्यवस्था करते हैं, उन्हें एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि यज्ञ के निमित्त संग्रह हुए या दान में आये हुए धन में से एक पाई भी स्वार्थ में न लगावें । यज्ञ के धन में से चुराया हुआ पैसा मनुष्य की घोर दुर्गति का कारण होता है । यथा:-

यज्ञार्थमर्थभिक्षित्वा यो न सर्वं प्रयच्छति ।
स याति भासतां विप्रः काकतां वा शतं समाः ।

-मनु

यज्ञ के निमित्त इकट्ठे किये समस्त धन को जो यज्ञ में ही नहीं लगाता, वह सौ वर्ष तक मुर्गे या कौए की योनि में दुख भोगता है ।

यज्ञार्थं लब्धमद्दद् मासः को कोऽपिवा भवेत् ।

-आचाराध्याय १२७

जो व्यक्ति यज्ञ के लिए एकत्रित धन को पूर्णतया यज्ञ में ही नहीं लगा देता, वह कौए या मुर्गे की योनि में जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ में रही हुई त्रुटियाँ

यज्ञ में जिन वस्तुओं की आवश्यकता है, कई बार वे सब उपलब्ध नहीं होती, कई बार यज्ञ आदि सत्कर्म करने की इच्छा रखने वाले की परिस्थिति वैसी नहीं होती कि उन सब वस्तुओं को जुटा सके । धनाभाव, समयाभाव अथवा जानकारी की कमी से वे सब वस्तुएँ प्राप्त नहीं हो सकतीं, जिनका उस कर्म में विधान है । ऐसी दशा में कितने ही व्यक्ति निराश हो जाते हैं और उस शुभ कर्म को करने का विचार ही छोड़ देते हैं । कारण यह है कि कई अविवेकी मनुष्य, इस प्रकार का भय लगा देते हैं कि पूर्ण विधान की सम्पूर्ण वस्तुएँ पूरी-पूरी मात्रा में न होंगी तो यज्ञ निष्फल जायगा उसका विपरीत परिणाम होगा या कोई हानि होगी ।

यह विचार धारा गलत है । संपूर्ण सामग्री के एकत्र न होने पर यथाशक्ति, सामर्थ्यानुसार या जितना भी बन पड़े, उतना भी शुभ है । जो अशर्फी दान नहीं कर सकता, वह पैसा भी दान न करे यह कोई दलील नहीं है । जो अशर्फी या रुपया दान नहीं कर सकता, वह पाई पैसा जो कुछ भी सत्कर्म में लगा दे उतना भी उत्तम ही है । अन्य शुभ कर्मों की भाँति यह बात यज्ञ पर भी लागू होती है । ऋषियों ने इस सम्बन्ध में भली प्रकार स्पष्टीकरण किया है और बताया है कि लिखी हुई वस्तुएँ उपलब्ध न होने पर उनके स्थान पर अन्य वस्तुएँ लेकर भी काम चलाया जा सकता है या कम वस्तुएँ भी ली जा सकती हैं । देखिये -

घृतार्थे गोघृतं ग्राह्यं तदभावे तु माहिषम् ।
आजं वा तदभावे तु साक्षात्तैलमयीप्यते ।।
तैलाभावे ग्रहीतव्यं तैलं जर्तिल सम्भवम् ।
तद्भावेऽतसीस्नेहः कौसुम्भः सर्षयोद्भवः ।
वृक्षास्नेहोऽथवा ग्राह्यः पूर्णलाभे परः परः ।
तदभावे यव व्रीहि श्यामाकान्यतमोद्भवः ।

-मण्डन ।

यज्ञ में गाय का घी सर्वोत्तम है । वह न मिले तो भैंस का घी लें, उसके अभाव में बकरी का, वह भी न हो तो शुद्ध तेल-जर्तिल, तीसी, कसूम या सरसों का लें । वह भी प्राप्त न हो तो गोंद या जौ, चावल, साँवा आदि की चिकनाई से काम चलावें ।

ऐसा ही मत बोधायन का भी है ।

यद्योक्तवस्त्व संपत्तौ ग्राह्यं तदनुकारियेत् ।
यवानामिव गोधूमा व्रीहीणामिव शालयः ।
आज्यंद्रव्य मनादेशे जुहोतिषु विधीयते ।
दध्यलाभेययः कार्यं मध्व-लाभे तथा गुडः ।
घृत प्रतिनिधिं कुर्यान्पयोवादधिवा बुधः ।
आज्यहोमेषु सर्वेषु गव्य मेव घृतं भवेत् ।
तदभावेमहिष्यास्तु आजमाविकमेववा ।
तदभावे तु तैलं स्यात्तदभावेतुजार्तिलम् ।
तदभावेतु कौसुम्भं तदभावे तु सार्पषम् ।

होमादि कर्म में विहित वस्तु प्राप्त न होने पर उसी के तुल्य अन्य पदार्थ से काम चलावे । जैसे जौ के न मिलने पर गैहूँ, व्रीहि (बढ़िया चावल) न मिलने पर शालि के चावल, कुशों के अभाव में काँस या दूर्वा, दही के अभाव में दूध, मधु के अभाव में गुड़, घी के स्थान पर दूध या दही लेवे । घी से मतलब गौ घृत का है, पर वह न मिले तो भैंस, बकरी या भेड़ का ले लें, वह भी न मिले तो तिल के, कसूम के, सरसों आदि के तेल से होम करे ।

शतपथ ब्राह्मण ११ । २ । ४ । ४ में याज्ञवल्क्य जी आपात्कालीन हवन के सम्बन्ध में इस प्रकार अपना अभिमत प्रकट करते हैं-

'यत्पयोनस्यात् केनं जुहुयात् ।'

प्रश्न-यदि दूध 'घी' न हो तो किससे हवन करे ?

'व्रीहियवाभ्यामिति'

उत्तर-धान या जौ से करे ।

'व्रीहि यवौ न स्यातां केन जुहुयात् ?'

प्रश्न-यदि धान और जौ न हों, तो किससे हवन करे ?

''या अन्या ओषधय इति''

उत्तर-जो और औषधियाँ हों उनसे करे ।

यदन्या ओषधयो न स्युः केन जुहुया इति ?

प्रश्न-यदि अन्य 'ओषधि' भी न हों तो किससे होम करे ?

'या आरण्या ओषधय इति'

उत्तर-जङ्गली अनाज से करें ।

'यदि आरण्या ओषधयो न स्युः केन जुहुयांत् इति ?

प्रश्न-यदि जङ्गली अनाज भी न हो तो क्या करे ?

'वानस्पत्येनेति'

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उत्तर-वनस्पतियों से हवन करे ।

यदि वानस्पत्यं न स्यात् केन् जुहुयात् ?

प्रश्न-यदि वनस्पतियाँ भी न हों तो क्या करे ?

'अद्भिरिति'

उत्तर-जल से करे ।

यदापोनस्युः केन जुहुया इति ?

प्रश्न-यदि जल भी न हो तो क्या करें ?

नवाऽइह तर्हि किंच ना सीदथैतद हुतैव सत्यं श्रद्धायामिति ।

यदि कुछ न हो तो बिना आहुति दिये ही श्रद्धा रूपी अग्नि में सत्य रूपी हविष्य की आहुति दे ।

कुछ भी हव्यवस्तु न मिलने पर केवल समिधाओं से भी हवन करने का वेदों में उल्लेख आता है । देखिए-

यदग्ने कानि कानि चिदाते दारूणि दध्मसि ।
ताजुषस्वय विष्ठय ।
नहि मे अस्त्यध्यना न स्वधितिर्वनन्वति ।
अथैता दृग् भरामिते ।

-ऋग्वेद ८ । १०२ । १९, २०

अर्थात्-हे अग्नि देव, मैं केवल छोटी-छोटी समिधाएँ लाया हूँ । इन्हें ही स्वीकार करो । मेरे पास न तो घी उत्पन्न करने वाली गौ है और न पेड़ काटकर बड़ी समिधाएँ ला सकने लायक कुल्हाड़ी है । इसलिए जो कुछ लाया हूँ, उसे ही स्वीकार करो ।

गीता में भगवान ने स्पष्ट किया है कि शुभ कर्मों का कभी अशुभ परिणाम नहीं होता **"प्रत्यवायो न विद्यते"** का आशय यही है कि सत्कर्म का अच्छा ही फल होता है बुरा नहीं । बुरा परिणाम तो कुविचारों या दुष्कर्मों से ही होना सम्भव है । सत्कर्मों में कोई त्रुटि रह भी जाय तो भगवान से सच्चे हृदय से क्षमा प्रार्थना कर लेने पर उसका दोष दूर होता है । यज्ञ के अन्त में ऐसी ही क्षमा प्रार्थना की भी जाती है, जिससे उसमें रही हुई त्रुटियों का सहज ही परिमार्जन हो जाता है । कहा गया है कि-

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषुयत् ।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्ण स्यादिदिश्रुतिः ।

प्रमाद आदि कारणों से यदि कोई गलती यज्ञ कर्म में रह जाती है, तो भगवान के स्मरण मात्र से ही उस यज्ञ की पूर्णता हो जाती है ।

ऐसे ही अभावों की पूर्ति के लिए क्षमा-याचना स्वरूप यज्ञ के अन्त में भगवान से प्रार्थना की जाती है-

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपो यज्ञक्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्योवन्दे तमच्युतम् ।

जिनके स्मरण एवं नामोच्चारण से तप यज्ञ आदि की न्यूनता तुरन्त पूर्ण हो जाती है, उन भगवान् को मैं भक्ति पूर्वक प्रणाम करता हूँ ।

यज्ञ में पालन करने योग्य नियम

(१) विशेष यज्ञ के लिये यजमान तथा आचार्य ब्रह्मा आदि को एक सप्ताह पूर्व से ही ब्रह्मचर्य से रहना आरम्भ कर देना चाहिए ।

(२) यज्ञ के दिनों उपवास पूर्वक फल, दूध, अथवा हविष्यान्नलेकर रहें ।

(३) यज्ञ के दिनों अपना अधिकांश समय साधना, उपासना, स्वाध्याय, भगवत् भजन में ही लगाया जाय । सांसारिक विचार एवं कार्य यथा संभव कम ही किये जावें ।

(४) यज्ञ करने के लिए स्नान करके धुले हुए वस्त्र पहन कर ही बैठना चाहिए । पाजामा अथवा मोजे पहन कर यज्ञ में बैठना निषिद्ध है ।

(५) सम्भव हो तो हवन करने वाले सब लोग कंधे पर पीले दुपट्टे धारण करके बैठें ।

(६) बड़े यज्ञ में सबको नये यज्ञोपवीत धारण करके बैठना चाहिए ।

(७) सब लोग शान्त चित्त से एकाग्रता पूर्वक यज्ञ भगवान का ध्यान करते हुए हवन करें । इधर-उधर सिर मोड़-मोड़कर देखना, आँखें नचाना, बीच-बीच में बातें करते जाना, हँसना आदि निषिद्ध हैं । पैरों को ऊपर-नीचे करके आसन तो बदल सकते हैं, पर बैठना पालती मार कर ही चाहिए । घुटने मोड़कर, उकड़ू, एक ऊपर एक नीचे अथवा अन्य बेढंगे प्रकारों से बैठना वर्जित है ।

(८) हवन पर बैठने के समय हाथ-पाँव मुँह धोकर बैठें । शरीर पर या जेब में चमड़े का बना बटुआ आदि कोई वस्तु अथवा तम्बाकू, सिगरेट, पान आदि कोई नशीली चीज नहीं रखनी चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो सके तो हवन के दिनों चमड़े के जूते भी न पहनें क्योंकि आज कल ९९ प्रतिशत चमड़ा हत्या किए हुए पशुओं का ही आता है ।

(९) यज्ञ में भाग लेने वाली महिलाऐं भी भारतीय वेष-भूषा में रहें, सादा लिवास पहनें, व सिर को ढका रखें । रजोदर्शन के दिनों में अथवा जिनका बालक ४० दिन से छोटा हो, उन्हें हवन में भाग नहीं लेना चाहिए ।

(१०) यज्ञ की वस्तुओं को यज्ञ के अतिरिक्त अन्य किसी काम में नहीं लाना चाहिए । हवन की अग्नि, दीपक, जल, पान आदि को सांसारिक कार्यों में लेना उचित नहीं ।

(११) सब लोग एक स्वर से, एक गति से मंत्र बोलें । किसी का कंठ नीचा, किसी का ऊँचा कोई जल्दी, कोई तेजी से बोले, यह ठीक नहीं ।

(१२) सामग्री को कुण्ड में झोंकना नहीं चाहिए और न कुण्ड से बाहर ही बखेरना चाहिए । ऐसी सावधानी तथा श्रद्धा पूर्वक थोड़ा आगे झुक कर आहुति छोड़नी चाहिए । अग्नि को देव मानकर उनके आदर का ध्यान करते हुए जैसे भोजन परोसते हैं, वैसे हाथ को ऊपर मुख रख कर आहुति देनी चाहिए ।

(१३) सामग्री पाँचों उँगलियों से नहीं होमी जाती । अँगूठा और तर्जनी को छोड़कर मध्यमा अनामिका, अथवा तीसरी कनिष्ठका को भी मिला कर इन पर सामग्री लेनी चाहिए और अँगूठे का सहारा देकर धीरे से अग्नि में छोड़ना चाहिए ।

(१४) जिस समय मन्त्र के अन्त में स्वाहा उच्चारण हो, उसी समय सबको आहुति छोड़नी चाहिए, पहले पीछे नहीं ।

(१५) घी हवन वाले स्रुवा की पीठ को, घृत पात्र के किनारे से पहले से पोंछ लिया करें, ताकि मेखलाओं पर घी टपकता न जाया करे ।

(१६) घृत की आहुति देने के बाद स्रुवा को लौटाते हुए एक बूँद घी प्रणीता पात्र में टपकाना चाहिए और साथ-साथ **'इदम् गायत्र्यै इदं न मम्'** बोलना चाहिए ।

ब्रह्मदेव कृत सामूहिक यज्ञ

आज किसी ग्राम, नगर या जनपद विशेष में ही नहीं, किन्तु अखिल भारतीय स्तर पर ग्राम-ग्राम तथा नगर-नगर में लोक-कल्याणार्थ सामूहिक गायत्री यज्ञों में प्रसूत, सुगन्धित धूम्र वायु-मण्डल में व्याप्त होकर, सूक्ष्माकाश को स्वच्छ करता हुआ संसार को मंत्रपूत शुभ संदेश दे रहा है । दुर्भाग्य से इस प्रकार के शुभ कर्मों की पवित्र परम्परा एक लम्बी अवधि तक अवरुद्ध हो गई थी, क्योंकि विगत सहस्त्रों वर्षों से वैदिक धर्म पर घातक आक्रमण होते आये हैं । उसी का परिणाम है कि जगद्गुरु भारत की सम्मुन्नत सभ्यता, सर्वमान्य संस्कृति और श्लाघनीय धर्म का रूप इतना अधिक विकृत हो गया कि स्वयं भारतवासी ही उसको सन्देह की दृष्टि से देखने लगे । चिरकाल पर्यन्त रहने के कारण हमारे विचार शनैः-शनैः इतने संकुचित हो गये कि हम भगवती श्रुति के अध्ययन और यज्ञ के करने-कराने पर भी एक जाति या सम्प्रदाय विशेष पर ही आधिपत्य मानने लग गये । इसी कारण आज धर्म के ठेकेदार बनने वाले कुछ महानुभावों से सुना जाता है कि सामूहिक यज्ञ, द्विजेतर जातियों की उपस्थिति में वैदिक मन्त्रों का उच्चारण, श्रमदान आदि के सहयोग से यज्ञ करना एवं स्त्रियों को यज्ञ में सम्मिलित करना ठीक नहीं । पौराणिक वाङ्मय में विभिन्न स्थलों पर इसके स्पष्ट प्रमाण समुपलब्ध होते हैं कि भारत में विश्व कल्याणार्थ सामूहिक यज्ञों की परम्परा सनातन है । विधर्मियों के शासनकाल से धीरे-धीरे इस परमपुनीत-परम्परा का लोप होता गया है, तत्फल स्वरूप एक समय ऐसा आ गया कि विश्व कल्याणार्थ सामूहिक यज्ञों की परम्परा पर भी कुछ व्यक्तियों ने आश्चर्य करना प्रारम्भ कर दिया । पद्म पुराण से उद्धत एक सामूहिक यज्ञ का वर्णन प्रस्तुत करते है । इसके अध्ययन से प्रमाणित होता है कि यह सामूहिक यज्ञ परम्परा नई नहीं है ।

स्थान-स्थान पर आज जिन सामूहिक यज्ञ आयोजनों से हम लाभान्वित हो रहे हैं, उन्हीं यज्ञों के प्रेरणा-स्रोतों में से एक का वर्णन पढ़ा करते हैं । प्रसंगवश चर्चा होने पर भीष्मजी ने यज्ञ के विषय में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महर्षि पुलस्त्य से पूछा-ब्रह्मन्

कथं यज्ञो हि देवेन विभुना तत्र कारितः ।
के सदस्या ऋत्विजश्च ब्राह्मणाः के समागताः ।।
के भागास्तस्य यज्ञस्य किं द्रव्यं का च दक्षिणा का
वेदी किं प्रमाणं च कृतं तत्र विरंचिना ।।

ब्रह्माजी ने यज्ञ कैसे किया ? ऋत्विज् और ब्राह्मण कौन-कौन थे ? उस यज्ञ के विभाग क्या-क्या थे ? द्रव्य और दक्षिणा क्या थी ? वेदी कितने प्रमाण की थी ? तथा-

कंच काममृ भिध्या यन्वेधा यज्ञं चकार हे ।

हे महर्षि ! ब्रह्माजी ने किस कामना के उद्देश्य से यज्ञ किया ?

भीष्मजी द्वारा पूछे गए महान प्रश्नों के उत्तर में महर्षि पुलस्त्य उस कारण को बताते हैं, जिस कामना से यज्ञ किया गया था । महर्षि कहते हैं-

हितार्थं सुर मर्त्यानां लोकानां प्रभवाय च ।

देवताओं और मनुष्यों के हित के लिए तथा लोक-कल्याण के लिए यह यज्ञ ब्रह्माजी ने किया था । वही लोक कल्याण की उदात्त भावना आज भी भारतीयों के हृदयों में व्याप्त है, क्योंकि आदि काल से ही भारतवर्ष में लोक कल्याणार्थ कार्य के पाठ पढ़ाये जाते रहे हैं । सामूहिक यज्ञों द्वारा लोक कल्याण की जो पुनीत परम्परा हमारे पूर्वजों ने स्थापित की थी, उसी का फल है कि इस कलि काल में भी हमने सहस्र कुण्डी जैसे विशाल यज्ञ दर्शन किए जिस प्रकार विश्व कल्याणार्थ हुए सहस्र कुण्डी यज्ञ में दूर-दूर से अनेक विद्वान् विचारक और संत महात्मा एकत्रित हुए थे और ऋषियों के नाम पर बनाये हुए नगरों में ठहरे थे, इसी प्रकार ब्रह्मदेव द्वारा आयोजित उस यज्ञ में लोक-कल्याण की भावना से अनेक ऋषि मुनि आदि एकत्रित हुए थे ।

ब्रह्माथ कपिलश्चैव परमेष्ठी तथैव च ।
देवाः सप्तर्षयश्चैव त्र्यम्बकश्च महायशाः ।।
सनत्कुमारश्च महानुभावा ,
मनुर्महात्मा भगवान्प्रजा पतिः ।
पुराण देवोऽथ तथा प्रचक्रे ,
प्रदीप्त वैश्वानर तुल्य तेजाः ।।

कपिलजी, अत्रि, वसिष्ठ, कश्यप, गौतम, भरद्वाज विश्वामित्र और जमदग्नि आदि सप्तऋषि, त्र्यम्बक, सनत्कुमार आदि महानुभाव महात्मा मनु प्रजापति तथा प्रतीप्त वैश्वानर तुल्य तेज युक्त पुराण पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु आदि भी उस यज्ञ में पधारे थे ।

शुभ कार्यों में आसुरी शक्तियों के प्रकोप की अत्यधिक सम्भावना रहती है, परन्तु भगवान भक्तों की श्रद्धा की परीक्षा करने के उपरान्त उसकी रक्षा का भार अपने जिम्मे ले लेते हैं ।

ब्रह्मदेव कृत यज्ञ के प्रतिरक्षणार्थ ब्रह्माजी ने भगवान विष्णु से अत्यन्त विनम्र शब्दों में प्रणाम पूर्वक निवेदन किया -

उत्फुल्लामल पद्माक्ष शत्रु क्षयावह ।
यथा यज्ञेय मेध्वंसो दानवैश्च विधीयते ।।
तथा त्वया विधातव्यं प्रणतस्य नमोऽस्तुते ।।

हे पद्माक्ष ! शत्रु पक्ष क्षयावह ! कृपया आप ऐसा कोई प्रबंध कीजिए, जिससे यज्ञ की दानवों से रक्षा हो सके । इतना सुनते ही भगवान विष्णु ने ब्रह्माजी को आश्वासन देते हुए कहा-

भयं त्यजस्व देवेश क्षयं नेष्यामि दानवान् ।
ये चान्ये विघ्न कर्तारो यातुधानास्तथा सुराः ।।
घातयिष्याम्यहं सर्वान्स्वस्ति तेस्तुपितामह ।।

देवेश ! आप निर्भय रहें । मैं दानवों को नष्ट कर दूँगा । पितामह ! यातुधानादि अन्य असुर जो विघ्न कर्ता हैं, उनको भी समाप्त कर दूँगा, आप निश्चिन्त रहें । इस प्रकार आसुरी शक्तियों के आक्रमण की प्रति रक्षा का भार स्वयं भगवान ने ले लिया और सहायतार्थ वही स्थित हो गये । मथुरा महायज्ञ में भी असुरों ने कम उपद्रव नहीं किये थे, पर भगवान ने उन सब का संरक्षण किया ।

जिस प्रकार विभिन्न समाजों और संप्रदायों के लाखों व्यक्ति, इस युग के अपूर्व सहस्र कुण्डी यज्ञ के दर्शनों के लिए, तथा १०८ कुण्डी व अश्वमेध यज्ञों में एकत्र होते रहे हैं, उसी प्रकार देव, दानव, गन्धर्व आदि अनेक जातियों के दर्शनार्थी, ब्रह्मदेव कृत उस यज्ञ के दर्शनार्थ वहाँ एकत्रित हुए थे -

ततो देवाः समायाता दानवा राक्षसैस्सह ।
भूत प्रेत पिशाचाश्च सर्वेतत्रागताः क्रमात् ।।
गन्धर्वा प्सरश्चैव मुनयो वेद पारगः ।
ऋषयो ब्रह्मर्ष यश्चैव द्विजा देवर्षयस्तथा ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देव, दानव, राक्षस, भूत, प्रेत, पिशाच, अप्सरा गण, नाग, विद्याधरगण, वनस्पति, ओषधि, यज्ञ पर्वत आदि सभी उस यज्ञ में एकत्रित हुए थे ।

वह महायज्ञ किसी व्यक्ति या समाज विशेष के लिए न होकर, सकल, चराचर के कल्याण के लिए था । इसीलिए सभी ने उसमें स्वेच्छया अपना-अपना यथोचित सहयोग प्रदान किया था । मथुरा यज्ञ भी सभी के सहयोग से सम्पन्न हुआ ।

स्वयं च वरुणो रत्नं दक्षश्चान्नं स्वयं ददौ ।

उस यज्ञ में स्वयं वरुण ने रत्न दिये तथा दक्ष ने अन्न, दिया ।

अन्न पाचन कृत्सोमोमतिदाता बृहस्पतिः ।

अन्न पाचन का कार्य चन्द्रमा ने एवं सलाहकार का कार्य देव गुरु वृहस्पति ने किया ।

धन दानं धनाध्यक्षो वस्त्राणि विविधानि च ।

विविध प्रकार के वस्त्रों और धन का दान धनाध्यक्ष कुबेर ने किया ।

विश्व कर्माणमाहूय ब्रह्मणः शीर्ष मुण्डम् ।

विश्व कर्मा को बुलाकर क्षौर कर्म कराया गया । विभिन्न विभागों के अध्यक्षों की नियुक्तियाँ इस प्रकार की गईं ।

द्वाराध्यक्षं तथा शक्रं वरुणं रसदायकं ।
वित्त प्रदं वैश्रवणं पवनं गंध दायिनम् ।।
उद्योत कारिणं सूर्यं प्रभुत्वे माधवः स्थितः ।।

द्वाराध्यक्ष-इन्द्र, रसाध्यक्ष-कुबेर, सुगन्ध आदि स्वच्छि करण वस्तुओं के अध्यक्ष-वायु, प्रकाशाध्यक्ष सूर्य तथा सर्वाधिकारी पद पर भगवान विष्णु को नियुक्त किया गया ।

विभागाध्यक्षों की नियुक्तियों के पश्चात् सभी ने अपने-अपने आसन ग्रहण कर लिए । यथा देवताओं के समीप ही ऋषियों के आसन थे । ब्रह्माजी के दक्षिण पार्श्व में सनातन विष्णु का स्थान था तथा ब्रह्माजी के वाम पार्श्व में पिनाकी भगवान शंकर विराजमान थे । जब सबने अपने-अपने आसन ग्रहण कर लिए, तब ऋत्विजों का वरण किया गया ।

ब्रह्मणा पूजिताः सर्वे प्रणिपात पुरः सरम् ।
अनुगृह्यो भवद्भिस्तु सर्वेरस्मिन क्रताविह ।।

ब्रह्माजी ने सबको प्रणाम कर उनकी पूजा की और कहा कि आप लोगों ने इस यज्ञ में पधारने की कृपा की है, इसके लिए मैं आपका अनुगृहीत हूँ ।

देवताओं की तरह चारों वर्णों ने भी निज-निज योग्यतानुसार, विश्व कल्याण के लिए आयोजित उस सामूहिक महायज्ञ में सहयोग दिया । ब्राह्मणों ने वेदध्वनि की । क्षत्रियों ने सायुध स्थित होकर प्रतिरक्षा के उत्तरदायित्व में सहयोग दिया । वैश्यों ने विविध प्रकार के सरस व्यंजन आदि के माध्यम से अपना सहयोग दिया । वैश्यों द्वारा कृत कार्य तो इतना अपूर्व और प्रागदृष्ट था कि सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी ने प्रसन्न होकर उनका नामकरण ही प्राग्वाट कर दिया -

जश्रुतं प्रागदृष्टं च दृष्टवा तुष्टः प्रजापतिः
प्राग्वाटेति ददौ नाम वैश्यानां सृष्टि कृद्विभुः ।।

शूद्रवर्ण ने भी आवश्यक सहयोग देकर अन्य वर्णों के समान पुण्य फल प्राप्त किया था ।

उपर्युक्त उद्धरण से यह सिद्ध होता है कि यहाँ शूद्र भी उपस्थित थे और उन्हीं की उपस्थिति में -

महर्षयो वीत शोका वेदानुच्चै वाचयन् ।

वीत शोक महर्षियों ने वेदों को उच्च स्वर से पढ़ा और वह उच्च स्वर भी इतना अधिक शक्ति सम्पन्न था कि उसका प्रसारण तीनों लोकों में हो गया, तीनों लोकों में स्वर का प्रसारणआलंकारिक हो सकता है, किन्तु इसमें कोई आलंकारिकता दृष्टिगोचर नहीं होती है कि वेद मन्त्रों का उच्चारण उच्च स्वर से किया गया ।

ब्रह्मघोषेणते विप्रा नादयन्तस्त्रि विष्टपम् ।

जब वह वेद ध्वनि तीनों लोकों में ही व्याप्त हो गई तो इसमें कोई सन्देह नहीं है कि वहाँ पर स्थित शूद्रों ने उसे न सुना हो । अर्थात् शूद्रों ने भी वह वेद ध्वनि अवश्य सुनी । इससे सिद्ध होता है कि उच्च स्वर से वेद मन्त्रों का उच्चारण करना, वह भी शूद्रों की उपस्थिति में, यदि शास्त्र विरुद्ध होता तो ब्रह्मदेव द्वारा कृत उस यज्ञ में धर्म शास्त्रों के रचयिता यह कार्य शूद्रों की उपस्थित में उच्च स्वर से मन्त्रोच्चारण कदापि न करते । वहाँ सप्तर्षि आदि सभी ऋषि महर्षि उपस्थित थे, यदि किसी के भी मत में उक्त कार्य अनुचित होता तो उसके विरोध का विवरण भी इस यज्ञ-वर्णन में मिलता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विश्व-कल्याण की भावना से अभिप्रेरित होकर अन्य वर्णों की तरह ही द्विजेतर जातियों ने भी अपना-अपना सहयोग ही दिया था । यज्ञ-प्रबन्धकों ने भी उनका सहयोग आवश्यकतानुसार सहर्ष अङ्गीकार किया था । तथा उनकी उपस्थिति में ही उच्च स्वर से वेदोच्चारण किया था । द्विजेतर जातियों की उपस्थिति में मन्त्रोच्चारण की परम्परा प्रातः स्मरणीय ऋषि-महर्षियों द्वारा ही स्थापित की हुई है । यह गायत्री परिवार का कोई अभिनव प्रयोग नहीं है । यह परम्परा ऋषि-मुनियों द्वारा स्थापित होने के कारण शास्त्रीय है और शास्त्रीय होने के कारण ग्राह्य है ।

ब्रह्माजी द्वारा कृत उस महायज्ञ का कार्य प्रारम्भ होने की बेला सन्निकट आ गई, किन्तु तब तक जब ब्रह्माजी की पत्नी सावित्री यज्ञ-मण्डप में नहीं पहुँची तो-

सुसत्कृता च पत्नी सा सावित्री च वरांगना ।
अध्वर्युणा समाहूता एहि देवि त्वरान्विता ।।

सम्यक् प्रकार से राजी हुई सावित्री को अध्वर्यु पुलस्त्य ने बुलाया, देवि ! यहाँ शीघ्र आओ । किन्तु

व्यग्रा सा कार्य करणे स्त्री स्वभावेन नागता ।

स्त्री स्वभाव से गृह कार्य में व्यस्त वह सावित्री नहीं आई । गृह कार्यों में व्यस्त रहने के कारण सावित्री न आ सकी, यह मुख्य कारण नहीं था । उसके न आने का मुख्य कारण था, अपनी सहेलियों की प्रतीक्षा करना । सावित्री को प्रतीक्षाकाल में भी निश्चेष्ट रहना अनुचित प्रतीत हुआ अतः उसने गृह कार्य करना भी प्रारम्भ कर दिया, और पुलस्त्यजी के बुलाने पर उसने कहा-

लक्ष्मीरद्यापिना याता पत्नी नारायणस्य या ।
अग्नेः पत्नी तथा स्वाहा धूम्रोर्णातु यमस्यतु ।।
वारुणी वै तथा गौरी वायोर्वै सुप्रभातथा ।
ऋद्धिर्वै श्रवणी भार्या शम्भो गौरी जगत्प्रिया ।।
मेधा श्रद्धा विभूतिश्च अनसूया धृतिः क्षमा ।
गंगा सरस्वती चैव नद्या याताश्च कन्यका ।।
इन्द्राणी चन्द्र पत्नीतु रोहिणी शशिनः प्रिया ।
अरुन्धती बसिष्ठस्य सप्तर्षीणां च याः स्त्रियः ।।
अनसूया त्रिपत्नी च तथान्या प्रमदा इह ।
वध्वो दुहितरश्चैव सख्यो भगिनि कास्तथा ।।
नाहमेकाकिनी यास्ये यावयां तिताः स्त्रियः ।
बूहि गत्वा विरचिंतु तिष्ठता वन्मुहूर्तकम् ।।

नारायण की पत्नी लक्ष्मी, अग्नि की पत्नी स्वाहा, यम की पत्नी धूम्रोर्णा अभी तक नहीं आई हैं । वारुणी, गौरी, सुप्रभा, ऋद्धि, वैश्रवणी, मेधा, श्रद्धा विभूति, अनसूया, धृति, क्षमा, गंगा, सरस्वती, भी अभी तक नहीं आईं । मैं अकेली नहीं आऊँगी, अतः आप जाकर ब्रह्माजी से कह दें कि कुछ देर ठहरें ।

ऐसा सुनकर पुलस्त्य जी ने ब्रह्माजी से कहा-

सावित्री व्याकुला देव प्रसक्ता गृह कर्मणि ।
सख्योनाभ्यागता यावत्तावन्नागमनं मम ।।

देव ! सावित्री की सखियाँ भी अभी तक नहीं आई हैं । अतः उसने कहा है कि जब तक सखियाँ नहीं आती हैं, तब तक मेरा आगमन भी नहीं हो सकता ।

केवल यजमान की स्त्री ही यज्ञ में सम्मिलित हो सकती है, यदि ऐसा नियम होता तो सावित्री अपनी सखियाँ, अनसूयादि की प्रतीक्षा नहीं करतीं और हवन कार्य में सम्मिलित हो जातीं ।

अनसूया, अरुन्धति आदि सप्तर्षियों की स्त्रियाँ, वारुणी, गौरी प्रभृति महिलाएँ जब सतयुग में ही यज्ञ में सम्मिलित हो सकती थीं, तो फिर इस युग में स्त्रियों का यज्ञ में सम्मिलित होना धर्म-शास्त्रों की मर्यादा के प्रतिकूल कैसे हो सकता है ? स्त्रियों को वेदाधिकार से वञ्चित रखना-वेद विरुद्ध है, ऋषि मुनियों द्वारा स्थापित परम्परा के विरुद्ध है । स्त्रियों का यज्ञ में बैठना, वैदिक मन्त्रों का शूद्रों की उपस्थिति में उच्चारण करना, सामूहिक यज्ञ करना आदि-आदि प्रवृत्तियाँ सदा से ही चलती आ रही हैं । उपर्युक्त कतिपय उद्धरणों से स्पष्ट विदित होता है, कि पुरुषों के समान स्त्रियों को भी वेदाध्ययन और यज्ञ करने का अधिकार है । प्रत्युत देवता आदर्श ऋषि मुनियों द्वारा प्रमाणित है ।

हमारा पवित्र कर्तव्य हो जाता है कि हम भी स्त्रियों को विश्व-कल्याण और आत्म-कल्याण के लिए वेद विहित कर्मों को पालन करने के लिए अधिक से अधिक प्रोत्साहित करें । ऐसा करने से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वेद-शास्त्र की मर्यादाओं का पालन होगा । देश और समाज के उन्नयन में हम सहयोग देकर अभ्युदय और नि:श्रेयश की प्राप्त करेंगे ।

भ्रान्तियों का निराकरण

अज्ञानान्धकार के मध्यकालीन तान्त्रिक-युग में यज्ञों का वाममार्गी स्वरूप बहुत ही गर्हित हो गया था । भगवान बुद्ध को उन्हीं का विरोध करने के लिए अनीश्वरवादी तक बनना पड़ा था । उस काल की कुछ अवैदिक प्रथायें अभी तक चली आ रहीं थीं । प्राचीन व्यवस्थाओं को ध्यान में रखते हुए अब उन मध्यकालीन विकृतियों को हटा देना ही उचित है । उनमें से कुछ यह हैं-

(१) यज्ञ-कुण्डों में मेखलाओं के ऊपर 'योनि' नामक एक भाग बनाना । इसका नाम आकार और उद्देश्य इतना अश्लील है कि यज्ञ जैसे शुभ कार्य में इस घृणित प्रदर्शन के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए ।

(२) पशु-बलि की प्रथा का चिह्न अभी भी दही, सिन्दूर, उड़द (माष) आदि रखकर तथा कूष्माण्ड को चाकू से काटकर रक्तमांस जैसा प्रदर्शन अभी भी होता है, यह सर्वथा अवैदिक है ।

(३) क्षेत्रपाल, योगिनी का नाम देकर भूत, चुड़ैल, जिन्न, मसान, प्रेत-पिशाचों की पूजा करना उनकी स्थापना करना, उनके नाम पर तेल का दीपक रखकर चुप-चुपाते हुये पत्तल ले जाना हास्यास्पद है । देवताओं के रहते भूत-चुड़ैलों की पूजा-मान्यता का क्या उद्देश्य है ?

(४) शारीरिक-मानसिक, सामाजिक बुराइयों को छोड़ना ही बलिदान का उद्देश्य है । उसके स्थान पर और बलिदान के नाम से अन्ट-सन्ट बातें चल पड़ी हैं, उन्हें हटाना और उसके स्थान पर मूल तथ्य को पुन: प्रचलित करना ।

(५) यज्ञ केवल ब्राह्मणों के लिये ही सीमित रहना अनुचित है । ऐसे पुण्य कार्य में भाग लेने का सभी को अधिकार होना चाहिए । यज्ञ में स्त्रियों को भाग न लेने-देने का प्रतिबन्ध पुरुषों के अहंकार और नारी के तिरस्कार का एक निकृष्ट स्वरूप है । इस मध्यकालीन प्रतिबन्धों की आज न कोई उपयोगिता है न आवश्यकता ।

(६) वेद-मन्त्रों का उच्चारण ध्वनिपूर्वक किये जाने पर ही उसका लाभ मिल सकता है । चुपचाप बिना बोले गायत्री या कोई अन्य मन्त्र आहुतियों के लिए प्रयुक्त नहीं हो सकता । उच्चारणपूर्वक ही गायत्री मन्त्र की आहुतियाँ दी जानी चाहिए ।

विरोध की उपेक्षा की जाय

गायत्री यज्ञों की रूपरेखा युग-निर्माण प्रेरणा की दृष्टि से जन-साधारण की दृष्टि से, नैतिक एवं सांस्कृतिक पुनरुत्थान की दृष्टि से, अत्यन्त उपयोगी और प्रभावशाली है । साथ ही वह पूर्णतया शास्त्र भावना के अनुरूप भी है । धर्म शास्त्रों के कर्मकाण्ड के विधि-विधान का सूक्ष्म अध्ययन करने के उपरान्त इस रूप रेखा को सुनिश्चित किया है । इसलिए इसे पूर्ण शास्त्रोक्त एवं धर्मसम्मत मानने में तनिक भी सन्देह करने की गुजायश नहीं है ।

फिर भी देखा यह गया है, कि कुछ रूढ़िवादी व्यक्ति जिन्हें हर नई बात धर्म विरुद्ध लगती है, इस पुण्य कार्य का विरोध करते हैं । यद्यपि गायत्री-यज्ञ पूर्वकाल में सर्वत्र प्रचलित थे, पर मध्यकाल में उनके स्थान पर पशुबलि प्रधान, तांत्रिक एवं दूसरे प्रकार के यज्ञ चल पड़े और प्राचीनकाल की महान यज्ञ परम्परा धुँधली पड़ गई । अब उसका पुनरुत्थान हुआ है, तो कूप मंडूकों को वह नई बात प्रतीत होती है । जो उनने देखा, सुना है वही सनातन धर्म है और जो उनकी जानकारी में नहीं है, वह सब धर्म-विरुद्ध है । ऐसी संकीर्ण बुद्धि रखने वाले व्यक्ति अक्सर इन यज्ञों में कुछ नुक्ताचीनी करते रहते हैं ।

इन यज्ञों में पण्डित लोगों को उतना लाभ नहीं होता, जितना कि आमतौर से अन्य धार्मिक कर्मकाण्डों में होता है । पिछले दिनों ढर्रा यह रहा है, कि किसी भी धर्मानुष्ठान में जो पैसा खर्च हो उसका एक चौथाई पूजा-कृत्यों में लगे और तीन चौथाई पंडितों के घर में चला जाय । आमतौर से हवन, यज्ञोपवीत-संस्कार, विवाह, उद्यापन, अनुष्ठान आदि में यही अनुपात चलता है । यज्ञ आयोजन की बात सुनकर उस क्षेत्र के पण्डित लोग आमतौर से बहुत बड़े लालच की इच्छाएँ करते हैं । इस व्यवस्था के अनुरूप उसकी गुंजाइश नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दीखती तो ईर्ष्यावश नुक्ताचीनी निकालना और अंट-संट बातें करके भोले लोगों को बहकाना शुरू कर देते हैं । उन्हीं के द्वारा यज्ञों का सबसे बड़ा विरोध होता है ।

इसका समाधान अति सरल है । जिन पण्डितों का दक्षिणा-उद्देश्य पूरा हो जाता है, यदि उनको सम्मिलित कर लिया जाता है, तो वे बाकी को भली प्रकार प्रत्युत्तर दे लेते हैं । इसलिए जहाँ उलझन भरा वातावरण हो, वहाँ स्थानीय पण्डितों का सहयोग लेकर काम चलाया जा सकता है । यों विवेकशील जनता अब अपनी बुद्धि भी रखती है । किसी के कहने मात्र से अनायास बहकती भी नहीं है और विरोध के कारण को भी आसानी से ताड़ जाती है , पर जो मानसिक दृष्टि से इतने दुर्बल हैं कि किसी के कान में कुछ कह देने मात्र से ही विचलित हो जायँ उनका अपने आयोजनों में आने से कुछ लाभ भी नहीं । अपनी निज विवेक-बुद्धि के अभाव में उन्हें जो प्रेरणा दी जायगी, उसे भी वे कब स्थिर रख सकेंगे ? फिर कोई बहका देगा, तो जो अच्छी बातें इन आयोजनों में सुनी थीं, उन्हें भी त्याग देंगे ।

उदार एवं विचारशील पण्डित सदा ही गायत्री यज्ञ-आयोजनों के पक्ष में रहते, सहयोगी बनते एवं प्रशंसा करते देखे गये हैं । वे जानते हैं, कि विरोध केवल पाप एवं दुष्कर्मों का ही करना चाहिए । जुआ, चोरी, झूठ, बेईमानी, व्यभिचार, नशेबाजी, छल-कपट, विश्वासघात, निर्दयता, मांसाहार आदि अपराध व नैतिक एवं सामाजिक बुराइयाँ, सावन की घटाओं की तरह उमड़ती चली आ रही हैं । विरोध इनका करना चाहिए । किसी में विरोध का साहस हो, तो इन दुष्प्रवृत्तियों से संघर्ष करने के लिए मैदान में आना चाहिए । उसके लिए तो भीगी-बिल्ली बने रहना और यज्ञ जैसे शुभ कर्म का विरोध करने के लिए शेर बन जाना किसी व्यक्ति की क्षुद्रता का ही प्रमाण माना जा सकता है । यज्ञ आदि शुभ कर्मों को करने की एक तो किसी की इच्छा ही नहीं होती, फिर सौभाग्यवश कहीं वैसे आयोजन हो रहे हों, तो उनमें रोड़े अटकाना, विरोध करना, लोगों को बहकाना ठीक वैसा ही काम है, जैसा विश्वामित्र का यज्ञ-विध्वंस करने के लिए सुबाहु, मारीच, ताड़का आदि असुरों ने किया था । यज्ञ में बाधा पहुँचाने वालों को भगवान् का असहनीय कोप भोगना पड़ता है और जन्म-जन्मान्तरों तक नरक की दुर्गति सहनी पड़ती है । लोक में निन्दा, विचारशील लोगों की दृष्टि में घृणा तो बढ़ती ही है । अपने व्यक्तित्व पर लांछन लेकर, धर्म-कार्य में बाधक बनकर, केवल अपनी मूढ़ता या ईर्ष्या का परितोष करना, किसी भी प्रकार उचित नहीं कहा जा सकता । ऐसा अनुचित कार्य कोई पण्डित तो कर ही नहीं सकता, जो करता है , वह अपने पण्डित नाम को कलंकित करने वाली क्षुद्रता का ही भौंड़ा प्रदर्शन करता है ।

उस प्रकार का विरोधी वातावरण पैदा किया जाता देख कर कहीं भी किसी से न तो डरना चाहिए और न असमंजस में पड़ना चाहिए । हमारा बीस वर्ष का अनुभव है, कि इस प्रकार के विरोधों से कहीं किसी भी आयोजन में रत्ती भर भी बाधा नहीं पड़ी । कुछ दिन कानाफूसी, घुस-पुस तो अवश्य चलती है, पर अन्त में विवेक की विजय होती है । बुद्धिमानों में से एक भी उस बहकावे में नहीं आता और हर जगह बड़ी शानदार सफलता मिलती है । इसलिए जहाँ-कहीं विरोधी वातावरण चल रहा हो, वहाँ संकोच में पड़ने की रत्तीभर भी आवश्यकता नहीं है, वरन् दूने उत्साह एवं प्रयत्न से अपने कार्य में लग जाना चाहिए । हां, अपनी ओर से किसी विवाद या संघर्ष में नहीं पड़ना चाहिए । उपेक्षा करना और हँसकर टाल देना इतना ही इस प्रकार के विरोधों का सर्वोत्तम उत्तर है ।

हवन सम्बन्धी कुछ आवश्यक बातें

वैसे तो प्रत्येक कार्य ही विधि-पूर्वक करना उचित है, परन्तु यज्ञ जैसे महान् धार्मिक कृत्य को तो और भी अधिक सावधानी, श्रद्धा, एवं तत्परता पूर्वक करना चाहिए । जिन विधि-विधानों का, नियमों का शास्त्रों में उल्लेख हैं, उनका पालन करने में लापरवाही न करनी चाहिए । गीता ने ऐसे अधूरे और लापरवाही से किये हुए यज्ञ की निन्दा की है और उसे तामस ठहराया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम् ।
श्रद्धा विरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ।।

-गीता १७ । १३

शास्त्र विधि से हीन, अन्न-दान से रहित, एवं बिना मन्त्रों के, बिना दक्षिणा के और बिना श्रद्धा के किये हुए यज्ञ को 'तामस यज्ञ' कहते हैं ।

यज्ञ के समय पालन करने योग्य कुछ नियमों की चर्चा नीचे की जाती है ।

सुशुद्धैर्यजमानस्य ऋत्विग्भिश्च यथा विधि
शुद्ध द्रव्योपकरणैयष्टव्यमिति निश्चयः ।
तथा कृतेषु यज्ञेषु देवानां तोषणं भवेत् ।
श्रेष्ठ स्याद्देव संधेषु यज्वा यज्ञ फलं लभेत् ।

-महाभारत

शुद्ध सुयोग्य ऋत्विजों से, विधि पूर्वक शुद्ध सामग्री से यजमान यज्ञ करावे । विधि पूर्वक यज्ञ सम्पन्न होने से देवता सन्तुष्ट होते हैं, जिससे अच्छे सम्मान तथा यथोचित यज्ञ-फल की प्राप्ति होती है ।

होम देवार्चनाद्यास्तु क्रियास्वाचमने तथा ।
नैक वस्त्रः प्रवर्तेत द्विजवाचनिकेतथा ।
वामेपृष्ठे तथा नाभौ कच्छत्रय मुदाहृतम् ।
त्रिभिः कच्छैः परिज्ञेयो विप्रो यः स शुचिर्भवेत् ।।
यज्ञोपवीते द्वेधार्ये श्रौते स्मार्त्ते च कर्मणि ।
तृतीयमुत्तरीयार्थे वस्त्राभावेतदिष्यते ।।
खल्वाटत्वादि दोषेण विषिखश्चेन्नरोभवेत् ।
कौशीं तदाधारयीत् ब्रह्मग्रन्थि युतांशिखाम् ।
कुश पाणि सदातिष्ठेद् ब्राह्मणोदम्भ वर्जितः ।
स नित्यं हन्ति पापानि तूल राशिमिवानिलः ।।

होम, आचमन, सन्ध्या, स्वस्तिवाचन और देव पूजादि कर्मों को एक वस्त्र से न करे । नाभि पर तथा नाभि से वाम भाग में और एक पृष्ठ भाग में इस प्रकार धोती की तीन काछें लगाने से ब्राह्मण कर्म के योग्य शुद्ध होता है । श्रौत और स्मार्त कर्मों में दो यज्ञोपवीत धारण करने चाहिये । कन्धे पर अंगौछा न हो, तो तीसरा यज्ञोपवीत उसके स्थान में ग्रहण करे । यदि गञ्जेपन के कारण शिर-स्थान पर बाल न हों, तो ब्रह्म-ग्रन्थि लगाकर कुश की शिखा धारण करे । जो ब्राह्मण हाथ में कुश लेकर कार्य करता है, वह पापों को नष्ट करता है ।

संकल्पेन बिना कर्म यत्किंचित् कुरुते नरः ।
फलं चाप्यल्पकं तस्य धर्मस्यार्द्धक्षयो भवेत् ।।

संकल्प के बिना जो कर्म किया जाता है, उसका आधा फल नष्ट हो जाता है । इसलिए संकल्प पढ़ कर हवन कृत्य करावे ।

जप होमोपवासेषु धौतवस्त्र धरो भवेत् ।
अलंकृतः शुचिर्मोनी श्रद्धावान् विजितेन्द्रियः ।।

जप, होम और उपवास में धुले हुए वस्त्र धारण करने चाहिए । स्वच्छ, मौन, श्रद्धावान् और इन्द्रियों को जीत कर रहना चाहिए ।

अधोवायु समुत्सर्गे प्रहासेऽनृत भाषणे ।
मार्जार मूषिक स्पर्शे आक्रुष्टे क्रोध सम्भवे ।
निमित्तेष्वेषु सर्वेषु कर्म कुर्वन्नयः स्पृशेत् ।

होम-जप आदि करते हुए, अपान वायु निकल पड़ने, हँस पड़ने, मिथ्या भाषण करने, बिल्ली, मूषक आदि के छू जाने, गाली देने, और क्रोध के आ जाने पर, हृदय तथा जल का स्पर्श करना ही प्रायश्चित्त है ।

ग्रन्थों में अनेक विधि-विधानों का अधिक खुलासा वर्णन नहीं है । संक्षिप्त रूप से ही संकेत कर दिये गये हैं । ऐसे प्रसङ्गों पर कुछ का स्पष्टीकरण इस प्रकार है ।

कर्त्रंगानामनुक्तौतु दक्षिणांगं भवेत्सदा ।
यत्रदिङ्नियमोनास्ति जपादि कथंचन ।
तिस्त्रस्तत्रदिशः प्रोक्ता ऐन्द्री सौम्यांऽपराजिता ।
आसीनः प्रहवऊर्ध्वोवा नियमोयत्रनेदृशः ।
तदासीने न कर्तव्यं न प्रहवेण न तिष्ठता ।

जहाँ कर्त्ता के हस्त आदि का नाम नहीं कहा गया हो कि अमुक अङ्ग से यह करे,वहाँ सर्वत्र दाहिना हाथ जानो । यहाँ जप होम आदि में जहाँ दिशा का नियम न लिखा हो, वहाँ सर्वत्र पूर्व-उत्तर और ईशान इनमें से किसी दिशा में मुख करके कर्म करे । जहाँ यह नहीं कहा गया हो कि खड़ा होकर, बैठकर या झुककर धर्म करे, वहाँ सर्वत्र बैठकर करना चाहिये ।

सदोपवीतिनाभाव्यं सदा बद्ध शिखेन च ।
विशिखोव्युपवीतश्च यत्करोति न तत्कृतम् ।
तिलकं कुंकुमेनैव सदा मंगल कर्मणि ।
कारयित्वा सुमतिमान् न श्वेत चन्दनं मृदा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हवन आदि करते समय यज्ञोपवीत पहने, शिखा में गाँठ लगाये रहे । खुली शिखा न रखे । सब मांगलिक कार्यों में केशर-मिश्रित तिलक लगावे । सफेद चन्दन या मिट्टी का नहीं ।

हविष्यान्नं तिला माषा नीबारा व्रीहयो यवाः।
इक्षवः शालयो मुद्गा पयोदधि घृतं मधु ।।
हविष्येषु यवा मुख्यास्तदनु व्रीह्य स्मृता ।
व्रीहीणामप्यलाभेतुदध्ना वा पयसाऽपिवा ।।
यथोक्तवस्त्वसम्पत्तौग्राह्यं तदनुकल्पतः ।
यवानामिव गोधूमा व्रीहीणामिव शालवः ।।

तिल, उड़द, नीवारल(जंगली चावल) भदौह धान, जौ, ईख, बासमती चावल, मूँग, दूध, दही, घी और शहद ये हवि हैं । इनमें जौ मुख्य है, उसके बाद धान । यदि धान न मिले तो दूध अथवा दही से काम चलावे । कही हुई वस्तु न मिले तो उसके स्थान पर अनुकल्प, समान गुण वाली वस्तु ले लेनी चाहिए,

स्नास्यतो वरुणस्तेजो जुह्वतोऽग्नि श्रियं हरेत् ।
भुञ्जानस्य यमस्त्वायुः तस्यान्न व्याहरेत् त्रिषु ।।

स्नान करते समय बोलने वाले का तेज वरुण हरण कर लेता है । यज्ञ करते समय बोलने वाले की श्री अग्नि हरण करता है । भोजन करने में बोलने वाले की आयु यम हरण कर लेते हैं ।

क्षुतृट्क्रोध समायुक्तो हीन मंत्रो जुहोति यः ।
अप्रवृद्धे सधूमे वा सोऽन्धः स्यादन्य जन्मनि ।

भूख, प्यास क्रोध आदि से व्याकुल व्यक्ति, मन्त्र हीन, अप्रज्ज्वलित अग्नि में हवन करता है, तो वह अगले जन्म में अन्धा होता है ।

न मुक्त केशोजुहुयान्नानिपातित जानुकः ।
अनिपातितजानुस्तु राक्षसैर्हियते हविः ।

खुले बाल रखकर एवं जानु (घुटना) खुली रखकर हवन न करे । क्योंकि ऐसा करने से राक्षस हवि का हरण कर लेते हैं ।

तिलार्ध तण्डुला देयास्तण्डुलार्धं यवास्तथा
यवार्धं शर्कराः प्रोक्ताः सर्वार्द्धंच घृतस्मृतम् ।

-आनन्द रामायण

तिल से आधे चावल, चावल से आधे जौ, जौ से आधी शक्कर, और आधा घी लेना चाहिए ।

सर्व काम समृद्धयर्थं तिलाधिक्यं सदैव हि ।

-विकारिका

सब कामों में सफलता के लिए तिल अधिक लेने चाहिए ।

शमीपलाश न्यग्रोध प्लक्षवैकंकतोद्भवाः ।
अश्वत्थोदुम्बरोविल्वश्चन्दनः सरलस्तथा ।
शालश्च देवदारुश्च खदिरश्चेति याज्ञिकाः ।

शमी (छोंकर) पलाश (ढाक) वट, प्लक्ष (पाकर) विकंकृत, पीपल, उदुम्बर (गूलर) बेल, चन्दन, सरल, शाल, देवदारु और खैर यह याज्ञिक वृक्ष हैं, इनकी समिधा होम में लगावे ।

पलाशाऽश्वत्थन्यग्रोध प्लक्षवैकंकतोद्भवाः ।
वैतसौदुम्बरो विल्वश्चन्दनः सरलस्तथा ।।
शालश्च देवदारुश्च खदिरश्चेति याज्ञिकाः

-ब्रह्म पुराण

ढाक, पीपल, बरगद, वैकंकत, बेंत गूलर, चन्दन, साल, देवदारु, कत्था इनकी लकड़ी कही गई है ।

निवासा ये च कीटानां लताभिर्वेष्टताश्च ये ।
अयज्ञिका गर्हिताश्च वल्मीकैश्च समावृताः
शकुनीनां निवासाश्च वर्जयेत्तान् महीरुहान् ।
अन्यांश्चैवं विधान् सर्वान् यज्ञियांश्च विवर्जयेत् ।

-वायु पुराण

कीड़े-मकोड़ों से भरे हुए, लताओं से लिपटे हुए, इमली, कटहल, आदि वृक्ष यज्ञ के लिए उपयुक्त नहीं । काँटेदार, दीमकों की बाँवी वाले , जिनमें पक्षी रहते हों, ऐसे वृक्ष यज्ञ के लिए ग्राह्य हों , तो भी काम में नहीं लेने चाहिए ।

मन्त्रेणोङ्कार पूतेन स्वाहान्तेन विलक्षणः ।
स्वाहावसाने जुहुयाद् ध्यायन्वै मंत्र देवताम् ।

आरम्भ में ॐ कार और अन्त में स्वाहा लगाते हुए मन्त्र देवता का ध्यान करते हुए स्वाहा के अन्त में आहुति छोड़े ।

यदालेलायते ह्यर्चिः समिद्धे हव्यवाहने ।
तदाज्यभागावन्तरेणाहुतिः प्रतिपादयेत् ।

-मुण्डकोपनिषद

जब अग्नि भली भाँति जल चुके और उसकी लपटें उठने लगे तब उसमें आहुतियाँ देनी चाहिए ।

योऽनर्चिषि जुहोत्यग्नौ व्यङ्गाराणि च मानवः
मन्दाग्नि रामयावी च दरिद्रश्चापि जायते ।
तस्मात्समिद्धे होतव्यं नासमिद्धे कथञ्चन ।

-छान्दोग्य परिशिष्ट

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो मनुष्य बिना प्रज्ज्वलित, बिना अङ्गार की अग्नि में आहुति देता है, वह मन्दाग्नि आदि उदर रोगों का दुःख पाता है । इसलिए प्रज्ज्वलित अग्नि में ही हवन करना चाहिए ।

ऋत्विजा जुह्वता वह्नौ वहिः पतति यद्धविः ।
स ज्ञेयो वारुणो भागः प्रक्षेप्यो विमले जले ।।

-शौनक

अग्नि में हवन करते समय जो हवि बाहर गिर पड़े, उसे वरुण का भाग मान कर पवित्र जलाशय में विसर्जित करना चाहिए ।

उत्तानेन तु हस्तेन अंगुष्ठाग्रेण पंडितम् ।
संहतांगुलि पाणिस्तु वाग्यतो जुहुयाद्ध विः ।।

सीधे हाथ से एवं अँगूठे के अग्रभाग से दबाये हुए, परस्पर मिली हुई अंगुली युक्त हाथ से हवन करे ।

कुशेन रहिता पूजा विफला कथिता मया
उदकेन बिना पूजा बिना दर्भेण या क्रिया ।

जल और कुश के उपयोग बिना पूजा सफल नहीं होती ।

कुशस्थाने च दूर्वाः स्युर्मङ्गलस्याभि वर्द्धय ।

-हेमाद्री

कुश के स्थान पर दूब का उपयोग कर लेने से भी मङ्गल की वृद्धि होती है ।

हवन के समय वेद-मन्त्रों को सस्वर उच्चारण करने या छन्द, ऋषि देवता आदि का विनियोग पढ़ने की आवश्यकता नहीं है । यथा-

उपस्थाने जपे होमे दोहे च यज्ञ कर्मणि ।
हस्त स्वरं न कुर्वीत शेषास्तु स्वर संयुता ।

-श्रौतोल्लास

उपस्थान, जप, गोदोहन (श्रौत याम) और यज्ञ कर्मों में हस्त-स्वर लगाने की आवश्यकता नहीं है । अन्य कर्मों में लगावे ।

जपेहोमे मखे श्राद्धेऽभिषेके पितृकर्मणि ।
हस्तस्वरं न कुर्वीत सन्ध्यादौ देव पूजने ।

-स्मार्त प्रभु

जप, होम, यज्ञ, श्राद्ध, अभिषेक, पितृकर्म, सन्ध्या तथा देव-पूजन, इनमें हस्त, स्वर का प्रयोग नहीं करना चाहिए ।

उपस्थाने जपे होमे मार्जने यज्ञ कर्मणि ।
कण्ठ स्वरं प्रकुर्वीत. . . . . .

-स्मार्त प्रभु

उपस्थान, जप, होम, मार्जन तथा यज्ञ में कण्ठ स्वर पर्याप्त है ।

न च स्मरेत् ऋषि छन्दः श्राद्धे वैतानिकेमखे ।
ब्रह्म यज्ञे च वै तद्वत्तथोङ्कार विवर्जयेत् ।

श्राद्ध, अग्निहोत्र, एवं ब्रह्म यज्ञ में ऋषि छन्द, एवं ओंकार का स्मरण वर्जित है ।

हवन करते समय किन-किन उँगलियों का प्रयोग किया जाय, इसके सम्बन्ध में मृगी और हंसी मुद्रा को शुभ माना गया है । 'मृगी' मुद्रा वह है जिसमें अँगूठा, मध्यमा और अनामिका उँगलियों से सामग्री होमी जाती है । हंसी मुद्रा वह है, जिसमें सबसे छोटी उँगली कनिष्ठका का उपयोग न करके शेष तीन उँगलियों तथा अँगूठे की सहायता से आहुति छोड़ी जाती है ।

होमे मुद्रा स्मृतास्तिस्त्रो मृगी हंसी च सूकरी ।
मुद्रां बिना कृतो होमः सर्वो भवति निष्फलः ।
शान्तके तु मृगी ज्ञेया हंसी पौष्टिक कर्मणि ।
सूकरी त्वभिचारे तु कार्ण तन्त्र विदुत्तमैः ।

-परशुराम कारिका

होम में मृगी, हंसी, तथा सूकरी यह तीन मुद्रा प्रयुक्त होती हैं । मुद्रा रहित हवन निष्फल होता है । शान्तिकर्मों में मृगी मुद्रा, पौष्टिक कर्मों में हंसी और अभिचार कर्मों में सूकरी मुद्रा प्रयुक्त होती है ।

कनिष्ठा तर्जनी हीना मृगी मुद्रा निरुच्यते ।
हंसी मुक्त कनिष्ठा स्यात् कर सङ्कोच सूकरी ।

-परशुराम कारिका ।

कनिष्ठा और तर्जनी उँगलियाँ जिसमें प्रयुक्त न हों, वह मृगी मुद्रा है, कनिष्ठा रहित हंसी मुद्रा होती है और हाथ को सकोड़ने से सूकरी मुद्रा बन जाती है ।

यस्य देवस्य यो होमस्तस्य मन्त्रेण होमयेत् ।

-पद्म पुराण-भूमिखण्ड

जो होम जिस देवता के उद्देश्य से किया जाय उसी के मन्त्र से हवन होना चाहिए ।

देवयात्रा विवाहेषु यज्ञ प्रकरणेषु च ।
उत्सवेषु च सर्वेषु स्पृष्टास्पृष्टं न विद्यते ।

-अत्रि स्मृति २४६

देव-यात्रा, विवाह, यज्ञ एवं उत्सवों में छूत-छात का विचार नहीं किया जाता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शुभ मुहूर्त देखकर उत्तम वेला में शुभ कर्म करना सदा ही उचित है, पर अनावश्यक रूप से अधिक लम्बे समय तक मुहूर्त आदि की अड़चन के कारण उसे टालना ठीक नहीं । क्योंकि टालने से आज का उत्साह एवं सङ्कल्प ठण्डा पड़ जाता है, या कोई अन्य विघ्न उसमें रोड़ा अटका सकता है इसलिए शुभ कार्य को शीघ्र करना उचित है ।

यदैव जायते वित्तं चित्तं श्रद्धा समन्वितम् ।
तदैव पुण्यकालोऽयं यतोऽनियत जीवितम्
अतः सर्वेषु कालेषु रुद्रयज्ञ शुभप्रदः ।।

-परशुराम

जब पैसे की सुविधा हो, जब चित्त में श्रद्धा हो तभी पुण्य-काल (शुभ मुहूर्त) है । क्योंकि इस नाशवान् जीवन का कोई भरोसा नहीं । रुद्र यज्ञ के लिए सभी समय शुभ हैं ।

जन्म-मरण आदि के कारण जो सूतक हो जाते हैं, उनमें शुभ कर्म निषिद्ध हैं । जब तक शुद्धि न हो जाय तब तक यज्ञ, ब्रह्म-भोजन आदि नहीं किये जाते । परन्तु यदि वह शुभ कार्य प्रारम्भ हो जाय तो फिर सूतक उपस्थित होने पर उस कार्य का रोकना आवश्यक नहीं । ऐसे समयों पर शास्त्रकारों की आज्ञा है कि उस यज्ञादि कर्म को बीच में न रोक कर उसे यथावत् चालू रखा जाय । इस सम्बन्ध में कुछ शास्त्रीय अभिमत नीचे दिये जाते है-

यज्ञे प्रवर्तमाने तु जायेताथ म्रियेत वा ।
पूर्व संकल्पिते कार्ये न दोष स्तत्र विद्यते ।
यज्ञ काले विवाहे च देवयागे तथैव च ।
हूयमाने तथा चाग्नौ नाशौचं नापि सूतकम् ।

-दक्षस्मृति ६ । १९-२०

यज्ञ हो रहा हो, ऐसे समय यदि जन्म या मृत्यु का सूतक हो जाय तो इससे उस पूर्व संकल्पित यज्ञादि कर्म में कोई दोष नहीं होता । यज्ञ, विवाह, देवयाग आदि के अवसर पर जो सूतक होता है , उसके कारण कोई कार्य नहीं रुकता ।

न देव प्रतिष्ठोत्सर्गविवाहेषु देशविभ्रमे,
नापद्यपि च कष्टायामाशौचम् ।

-विष्णु स्मृति

देव-प्रतिष्ठा, उत्सर्ग, विवाह आदि में उपस्थिति सूतक से बाधा नहीं ।

विवाह दुर्ग यज्ञेषु यात्रायां तीर्थ कर्मणि ।
न तत्र सूतकं तद्वत् कर्म यज्ञादि कारयेत् ।

-पैठानसि

विवाह, किला बनाना, यज्ञ, यात्रा, तीर्थ-कर्म के समय यदि सूतक हो जाय, तो उसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए ।

यज्ञ करने वाले यजमान पर ही नहीं, यह बात ऋत्विज् ब्रह्मा आचार्य आदि पर भी लागू होती है । उसके यहाँ कोई सूतक हो जाय तो वे यज्ञ करने-कराने या उसमें भाग लेने के अधिकारी नहीं होते । यथा-

ऋत्विजां यजमानस्य तत्पत्न्या देशिकस्यच ।
कर्ममध्ये नाशौचमन्त एव तु तद्भवेत् ।।

ऋत्विजों को, यजमान को, यजमान की पत्नी को, और आचार्य को, जन्म या मरण का सूतक नहीं लगता । यज्ञ कर्म की पूर्ति हो जाने पर ही उन्हें सूतक लगता है ।

ऋत्विजां दीक्षितानां च याज्ञिकं कर्म कुर्वताम् ।
सत्रिव्रति ब्रह्मचरिदातृ ब्रह्म विदां तथा ।
दाने विवाहे यज्ञे च संग्रामे देश विप्लवे ।
आपद्यपि हि कष्टायां सद्यः शौचं विधीयते ।

-याज्ञवल्क्य

ऋत्विज्, दीक्षित अन्नसत्रि, (लम्बे व्रत करने में सक्षम) चान्द्रायण आदि व्रतों में तत्पर, ब्रह्मचारी, दानी, ब्रह्मज्ञानी, और याज्ञिकों की दान में, विवाह में, यज्ञ में, संग्राम में, देश-विप्लव में और आपत्ति में सद्यः (तुरन्त) शुद्धि हो जाती है ।

यज्ञ के मध्य सूतक हो जाने पर तात्कालिक स्नान कर लेने मात्र से उसकी शुद्धि हो जाती है । ऐसे अवसरों पर सूतक निवृत्ति के लम्बे समय तक प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं होती । यथा -

यज्ञे विवाहकाले च सद्यः शौचं विधीयते ।
विवाहोत्सव यज्ञेषु अन्तरामृत सूतके ।
पूर्वसंकल्पितार्थस्य न दोषश्चात्रिरब्रवीत् ।

-अत्रि सं० ९८

यज्ञ और विवाह में जन्म या मृत्यु का सूतक (अशौच) आ जाय, तो उसकी सद्यः शुद्धि हो जाती है । उस पूर्व संकल्पित कार्य या विवाहादि में कोई बाधा नहीं पड़ती ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हवन-सामग्री

प्रत्येक ऋतु में आकाश में भिन्न-भिन्न प्रकार के वायुमण्डल रहते हैं । सर्दी, गर्मी, नमी, वायु का भारी पन, हलकापन, धूल, धुँआ, बर्फ आदि का भरा होना । विभिन्न प्रकार के कीटाणुओं की उत्पत्ति, वृद्धि एवं समाप्ति का क्रम चलता रहता है । इसलिए कई बार वायुमण्डल स्वास्थ्यकर होता है , कई बार अस्वास्थ्यकर हो जाता है । इस प्रकार की विकृतियों को दूर करने और अनुकूल वातावरण उत्पन्न करने के लिए हवन में ऐसी औषधियाँ प्रयुक्त की जाती हैं, जो इस उद्देश्य को भली प्रकार पूरा कर सकती हैं । वर्षा में हैजा, दस्त, फुन्सी, खुजली, आदि रोग फैलते हैं, शरद ऋतु में मलेरिया, जूड़ी, हड़फूटन, शिरदर्द, आदि का जोर चलता है । शीत ऋतु में वातरोग, दर्द, खाँसी, जुकाम, निमोनियाँ आदि बढ़ते हैं, गर्मियों में लू लगना, दाह, दिल की धड़कन, कब्ज आदि की अधिकता रहती है । क्योंकि इस समय वायुमण्डल में वैसे ही तत्वों की अधिकता रहती है । हवन के धूम से आकाश की आवश्यक सफाई हो जाती है । हानिकारक पदार्थ नष्ट होते और लाभदायक तत्व बढ़ते हैं । फलस्वरूप वायुमण्डल सब किसी के लिए आरोग्य वर्धक हो जाता है ।

किस ऋतु में किन वस्तुओं का हवन करना लाभदायक है, और उनकी मात्रा किस परिणाम से होनी चाहिए, इसका विवरण नीचे दिया जाता है । पूरी सामग्री की तोल १०० मान कर प्रत्येक ओषधि का अंश उसके सामने रखा जा रहा है । जैसे किसी को १०० छटांक सामग्री तैयार करनी है, तो छरीलावा के सामने लिखा हुआ २ भाग (२ छटांक) मानना चाहिए, इसी प्रकार अपनी आवश्यकतानुसार तोल में न्यूनता या अधिकता कर लेनी चाहिए ।

यह सभी सामग्री भली प्रकार देख-भाल कर लेनी चाहिए । बहुधा खोटे दुकानदार सड़ी-गली, घुनी हुई, बहुत दिन की पुरानी, हीन वीर्य अथवा किसी की जगह उसी शकल की दूसरी सस्ती चीज दे देते हैं । इस गड़बड़ी से बचने का पूरा प्रयत्न करना चाहिए । सामग्री को भली प्रकार धूप में सुखाकर उसे जौकुट कर लेना चाहिए ।

बसन्त-ऋतु

छरीलावा २ भाग, तालीसपत्र २ भाग, पत्रज २ भाग, मुनक्का ५ भाग, लज्जावती एक भाग, शीतल चीनी २ भाग, कचूर २.५ भाग, देवदारू ५ भाग, गिलोय ५ भाग, अगर २ भाग, तगर २ भाग, केसर १ का ६ वां भाग, इन्द्रजौ २ भाग, गुग्गुल ५ भाग, चन्दन (श्वेत, लाल, पीला) ६ भाग, जावित्री १ का ३ वां भाग, जायफल २ भाग, धूप ५ भाग, पुष्कर मूल ५ भाग, कमल-गट्टा २ भाग, मजीठ ३ भाग, बनकचूर २ भाग, दालचीनी २ भाग, गूलर की छाल सूखी ५ भाग, तेज बल (छाल और जड़) २ भाग, शंख पुष्पी १ भाग, चिरायता २ भाग, खस २ भाग, गोखरू २ भाग, खांड या बूरा १५ भाग, गो घृत १० भाग ।

ग्रीष्म-ऋतु

तालपर्णी १ भाग, वायबिडंग २ भाग, कचूर २.५ भाग, चिरोंजी ५ भाग, नागरमोथा २ भाग, पीला चन्दन २ भाग, छरीला २ भाग, निर्मली फल २ भाग, शतावर २ भाग, खस २ भाग, गिलोय २ भाग, धूप २ भाग, दालचीनी २ भाग, लवङ्ग २ भाग, गुलाब के फूल ५।। भाग, चन्दन ४ भाग, तगर २ भाग, तूम्बर ५ भाग, सुपारी ५ भाग, तालीसपत्र २ भाग, पद्माख (कमल-गट्टा)२ भाग, दारु हल्दी २ भाग, लाल चन्दन २ भाग, मजीठ २ भाग, शिलारस २.५० भाग, केसर १ का ६ वां भाग, जटामांसी २ भाग, नेत्रवाला २ भाग, इलायची बड़ी २ भाग, उन्नाव २ भाग, आँवले २ भाग, बूरा या खांड १५ भाग, घी १० भाग ।

वर्षा-ऋतु

काला अगर २ भाग, इन्द्र-जौ २ भाग, धूप २ भाग, तगर २ भाग देवदारु ५ भाग, गुग्गुल ५ भाग, राल ५ भाग, जायफल २ भाग, गोला ५ भाग, तेजपत्र २ भाग, कचूर २ भाग, बेल २ भाग, जटामांसी ५ भाग, छोटी इलायची १ भाग, बच ५ भाग, गिलोय २ भाग, तुलसी के बीज ३ भाग, बायबिडंग २ भाग, श्वेत चन्दन का चूरा ५ भाग, नाग केसर २ भाग, चिरायता २ भाग, छुहारे ५ भाग, संखाहुली १ भाग, मोचरस २ भाग, नीम के पत्ते ५ भाग, गो-घृत १० भाग, खांड या बूरा १५ भाग,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरद्-ऋतु

सफेद चन्दन ५ भाग, चन्दन सुर्ख २ भाग, चन्दन पीला २ भाग, गुग्गुल ५ भाग, नाग केशर २ भाग, इलायची बड़ी २ भाग, गिलोय २ भाग, चिरौंजी ५ भाग, गूलर की छाल ५ भाग, दाल चीनी २ भाग, मोचरस २ भाग, कपूर कचरी ५ भाग, पित्त पापड़ा २ भाग, अगर ३ भाग, भारङ्गी २ भाग, इन्द्र जौ २ भाग, असगन्ध २ भाग, शीतल चीनी २ भाग, जायफल २ भाग, पत्रज २ भाग, चिरायता २ भाग, केसर १ का ६ वां भाग, किशमिस ६ भाग, वालछड़ ५ भाग, तालमखाना २ भाग, सहदेवी १ भाग, धान की खील २ भाग, कचूर २.७५ भाग, घृत १० भाग, खांड या बूरा १५ भाग ।

हेमन्त ऋतु

कूट २ भाग, मूसली काली २ भाग, घोड़ावच २ भाग, पित्त पापड़ा २ भाग, कपूर २ भाग, कपूर कचरी ४ भाग, गिलोय २ भाग, पटोल पत्र २ भाग, दालचीनी २ भाग, भारङ्गी २ भाग, सोंफ २ भाग, मुनक्का ३.७५ भाग, गुग्गुलु ५ भाग, अखरोट की गिरी ४ भाग, पुष्कर मूल २ भाग, छुहारे ५ भाग, गोखरू २ भाग, कोंच के बीज १ भाग, बादाम २ भाग, मुलहटी २ भाग, काले तिल ५ भाग, जावित्री २ भाग, लाल चन्दन २ भाग, मुश्कवाला १ भाग, तालीस पत्र २ भाग, गोला ५ भाग, तुम्वुरु ५ भाग, खाण्ड या बूरा १५ भाग, गोघृत १०, भाग, रासना १ भाग ।

शिशिर-ऋतु

अखरोट ४ भाग , कचूर २ भाग, वायबिडंग २ भाग, इलायची बड़ी २ भाग, मुलहटी २ भाग , मोचरस २ भाग, गिलोय २ भाग, मुनक्का ५ भाग रेणुका (संभाल) १ भाग, काले तिल ४ भाग , चन्दन ४ भाग, चिरायता २ भाग, छुहारे ४ भाग , तुलसी के बीज ४ भाग, गुग्गुलु ३ भाग, चिरौंजी २ भाग, काकड़ासिङ्गी २ भाग, शतावर २ भाग, दारु हल्दी २ भाग, शंख पुष्पी १ भाग, पद्माख २ भाग , कोंच के बीज १ भाग, जटामांसी १ भाग, भोजपत्र १ भाग, तुम्बुर ५ भाग, राल ५ भाग, सुपारी २ भाग , घी ११.५ भाग खाण्ड या बूरा १५ भाग ।

सर्व ऋतु सामान्य हवन सामग्री

सफेद चन्दन का चूरा ४ भाग, अगर २.५ भाग , तगर २.५ भाग, गुग्गुलु ५ भाग, जायफल १.२५ भाग, दालचीनी २.५ भाग, तालीसपत्र २.५ भाग, पानड़ी २.५ भाग, लौंग २.५ भाग, बड़ी इलायची २.५ भाग , गोला ५ भाग, छुहारे ५ भाग, नागर मौथा २.५ भाग , गुलसुर्ख ५ भाग, इन्द्र जौ २.५ भाग कपूर कचरी २.५ भाग, आँवला २.५ भाग किशमिश ५ भाग , बालछड़ ५ भाग, केशरनाग १.२५ भाग, तुम्वुर ५ भाग, सुपारी ५ भाग, नीम के पत्ते या राल ५ भाग , बूरा या खाण्ड १०भाग, घी १० भाग ।

ब्रीहीन् यवान्वा हविषि

-कात्यायन श्रौत सूत्र १ ।९ ।१

होमं सभारभेत् सपिर्यव ब्रीहि तिलादिना ।

-अनुष्ठान प्रकाश

इन प्रमाणों से तिल, जौ, चावल और घृत को हवि द्रव्य माना गया है । इनका सम्मिश्रण प्रत्येक हवन-सामग्री में होना चाहिए । कहीं-कहीं तो इन्हीं की प्रधानता रहती है और सुगन्धित द्रव्यों का बहुत कम भाग रखा जाता है । कुछ प्रमाण भी इस सम्बन्ध में उपलब्ध होते हैं । जिनमें कहा गया है कि सुगन्धित द्रव्यों एवं ओषधियों की अपेक्षा यही द्रव्य अधिक होने चाहिए । यथा-

तिलास्तु द्विगुणाः प्रोक्ता यवेभ्यश्चैव सर्वदा
अन्ये सौगन्धिकाः स्निग्धा गुग्गुलादि यवैः समाः ।

-आनन्द रामायण

जौ से तिल दूने रखे और गुग्गुलु आदि अन्य सुगन्धित पदार्थ यवों के बराबर ही रखे ।

पञ्च भागा स्तिलाः प्रोक्ता स्त्रिभागो यव एव च ।
द्वौ भागौ तण्डुलस्योक्तौ भागैकं गुग्गुलादिकम् ।
रुद्र भागैः कृते होमे जायते सिद्धिरुत्तमा ।

पाँच भाग तिल, तीन भाग जौ, दो भाग चावल, एक भाग गुग्गुल आदि सुगन्धित द्रव्य इस प्रकार ग्यारह भाग हवनीय द्रव्य रखने से उत्तम सिद्धि प्राप्त होती है ।

इस उपरोक्त क्रम के बारे में मतभेद है । कुछ विद्वानों का मत है कि तिल, जौ, चावल की मात्रा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कम और सुगन्धित द्रव्यों की मात्रा अधिक होनी चाहिए । वस्तुतः होम द्रव्य चार प्रकार के कहे गये हैं (१) सुगन्धित केशर, अगर, तगर, श्वेत चन्दन, इलायची, जायफल, जावित्री आदि (२) पुष्टिकारक-घृत, फल, कन्द, अन्न, जौ, तिल, चावल आदि (३) मिष्ट-शक्कर, छुहारे, दाख आदि (४) रोग नाशक-गिलोय, जायफल, सोमवल्ली आदि विशेष हवनों में स्थली पाक से भी होम होता है । उसमें खीर, हलुआ, लड्डू आदि मिष्ठान्नों का उपयोग होता है ।

उपरोक्त चारों प्रकार की वस्तुएँ हवन में प्रयोग होनी चाहिए । अन्नों के हवन से मेघ-मालाएँ अधिक अन्न उपजाने वाली वर्षा करती हैं । सुगन्धित द्रव्यों से विचार शुद्ध होते हैं, मिष्ट पदार्थ स्वास्थ्य को पुष्ट एवं शरीर को आरोग्य प्रदान करते हैं, इसलिए चारों प्रकार के पदार्थों को समान महत्व दिया जाना चाहिए । यदि अन्य वस्तुएँ उपलब्ध न हों, तो जो मिले उसी से अथवा केवल तिल, जौ, चावल से भी काम चल सकता है ।

समिधाएँ

कुछ अन्य समिधाओं का भी वाशिष्ठी हवन पद्धति में वर्णन है । उसमें ग्रहों तथा देवताओं के हिसाब से भी कुछ समिधाएँ बताई गई हैं । तथा विभिन्न वृक्षों की समिधाओं के फल भी अलग-अलग कहे गये हैं । यथा-

समिदर्कमयी भानोः पालाशी शशिनस्तथा ।
खादिरी भूमिपुत्रस्य त्वपामार्गी बुधस्य च ।।
गुरौरश्वत्थजा प्रोक्ता शक्रस्यौदुम्बरी मता ।
शमीनां तु शनेः प्रोक्ता राहोर्दूर्वामयी तथा ।।
केतोर्दर्भमयी प्रोक्ताऽन्येषां पालाशवृक्षजा ।।१ ।।
आर्की नाशयते व्याधिं पालाशी सर्वकामदा ।
खादिरी त्वर्थलाभायापामार्गी चेष्टदर्शिनी ।
प्रजालाभाय चाश्वत्थी स्वर्गायौदुम्बरी भवेत् ।
शमी शमयते पापं दूर्वा दीर्घायुरेव च ।
कुशाः सर्वार्थकामानां परमं रक्षणं विदुः ।। २।।
यथा बाण हारणां कवचं वारकं भवेत् ।
तद्वद्दैवोपघातानां शान्तिर्भवति वारिका ।।
यथा समुत्थितं यन्त्रं यन्त्रेण प्रतिहन्यते ।
तथा समुत्थितं घोरं शीघ्रं शान्त्या प्रशाम्यति ।।३ ।।

अब समित (समिधा) का विचार कहते हैं, सूर्य की समिधा मदार की, चन्द्रमा की पलाश की, मङ्गल की खैर की, बुध की चिड़चिड़ा की, बृहस्पति की पीपल की, शुक्र की गूलर की, शनि की शमी की, राहु दूर्वा की, और केतु की कुशा की समिधा कही गई है । इनके अतिरिक्त देवताओं के लिए पलाश वृक्ष की समिधा जाननी चाहिए । मदार की समिधा रोग को नाश करती है, पलाश की सब कार्य सिद्ध करने वाली, पीपल की प्रजा (सन्तति) काम कराने वाली, गूलर की स्वर्ग देने वाली, शमी की पाप नाश करने वाली, दूर्वा की दीर्घायु देने वाली और कुशा की समिधा सभी मनोरथ को सिद्ध करने वाली होती है । जिस प्रकार बाण के प्रहारों को रोकने वाला कवच होता है, उसी प्रकार दैवोपघातों को रोकने वाली शान्ति होती है । जिस प्रकार उठे हुए अस्त्र को अस्त्र से काटा जाता है, उसी प्रकार (नवग्रह) शान्ति से घोर संकट शान्त हो जाते हैं ।

ऋतुओं के अनुसार समिधा के लिए इन वृक्षों की लकड़ी विशेष उपयोगी सिद्ध होती है ।

वसन्त-शमी
ग्रीष्म-पीपल
वर्षा-ढाक, बिल्व
शरद-पाकर या आम
हेमन्त-खैर
शिशिर-गूलर, बड़

यह लकड़ियाँ सड़ी घुनी, गन्दे स्थानों पर पड़ी हुई, कीड़े-मकोड़ों से भरी हुई न हों, इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए ।

यज्ञ का मुहूर्त्त

विष्णु याग, रुद्र, लक्ष होम, कोटि होम, ज्योतिष्टोम आदि बड़े यज्ञों के लिए अलग-अलग मुहूर्त्त हैं । ज्योतिष के नियमों के आधार पर उनके मुहूर्त्त निकाले जाते हैं, पर साधारण यज्ञों के लिए बहुत गहराई तक जाने की, बहुत भारी खोज-बीन करने की आवश्यकता नहीं है । साधारण शुभ दिन, तिथि, वार देखकर छोटे यज्ञों को कभी भी किया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जा सकता है । यथा-

यदैव जायते वित्तं, चित्तं श्रद्धा समन्वितम्
तदैव पुण्य कालोऽयं यतोऽनियत् जीवितम्
अतः सर्वेषु कालेषु यज्ञकर्म शुभ प्रदः

-परशुरामः

ईश्वराधनार्थं च सर्व पापापनुत्तये ।
यदि रुद्राद्यनुष्ठानं न मुहूर्तादि चिन्तयेत्

-दीपिका

जब पास में पैसा हो और चित्त में श्रद्धा हो तो उसी समय को पुण्य काल, शुभ मुहूर्त्त मान लेना चाहिए । क्योंकि जीवन का कोई ठिकाना नहीं, आज हैं, कल प्राण चला जा सकता है । इसलिए यज्ञ आदि शुभ कर्मों के लिए सभी दिन शुभ हैं ।

परमात्मा की प्रसन्नता के लिए, पापों से छुटकारा पाने के लिए यदि रुद्र-यज्ञ आदि का अनुष्ठान करे, तो उसके लिए मुहूर्त देखने की आवश्यकता है ।

सकाम यज्ञों में ही मुहूर्तों की बात बहुत खोज बीन के साथ की जाती है । पर निष्काम, भगवत्प्रीत्यर्थ किये जाने वाले हवनों में इसकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं है । फिर भी साधारण मुहूर्त्त का उल्लेख करते हैं-

सोम सौम्य गुरु शुक्र वासराः कर्मसु भवन्ति सिद्धिदाः ।

-रत्न माला

यज्ञ आदि शुभ कर्मों में सोम, बुद्ध, गुरु, शुक्रवार सिद्धिप्रद हैं ।

शुक्ल पक्षे द्वितीयायां तृतीयायां तथैवच
पंचम्यामथ सप्तम्यां दशम्यां च विशेषतः
त्रयोदश्यां च कर्त्तव्यो द्वादश्यां च विशेषतः ।।

शुक्ल पक्ष की द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी, सप्तमी, दशमी, द्वादशी और त्रयोदशी विशेष उत्तम हैं ।

आर्द्रा शतभिषा स्वाती रोहिणी श्रवणं मृगः
पूर्वाषाढोत्तराषाढा ज्येष्ठा श्लेषा च रेवती ।
चित्रा हस्तो धनिष्ठास्यादनुराधा च सिद्धिदा ।
पुनर्वसु गुरोर्वीरे द्वादश्यां श्रवणे तथा ।
मृगशीर्षे तदा योगे विष्णु सर्वार्थ साधकः ।

-नारद संहिता

आर्द्रा, शतभिषा, स्वाति, रोहिणी, श्रवण, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, ज्येष्ठा, श्लेषा, रेवती, चित्रा, हस्त, धनिष्ठा, यह नक्षत्र यज्ञ में शुभ माने गये हैं ।

गुरु-शुक्र-अस्त में यज्ञ न करने की बात भी बहुत बड़े विशाल यज्ञों पर ही लागू होती है । छोटे मध्यम श्रेणी के यज्ञों के लिए उसका विचार आवश्यक नहीं । यथा-

शान्ति कर्मणि कुर्वीत रोगे नैमित्तिके तथा ।
गुरु भार्गव मौढ्येऽपि दोषस्तत्र न विद्यते ।

नैमित्तिक कर्मों में, रोग आदि के निवारणार्थ, तथा शान्ति प्रयोजनों के लिए हवन आदि करने में गुरु शुक्र के अस्त का दोष नहीं ।

अमावस्या-पूर्णमासी को दर्शपौर्णमास्य यज्ञ सदा होते हैं । इसलिये यह दोनों तिथियाँ हवन करने के लिए अतीव शुभ मानी गई हैं ।

साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, पर्वों, त्यौहारों तथा उत्सवों के समय भी अलग से मुहूर्त देखने की आवश्यकता नहीं है । पूर्व निर्धारित कार्यक्रम ही उसका मुहूर्त है ।

कुण्ड एवं मण्डप का निर्माण

यज्ञ का मण्डप एवं कुण्ड बहुत ही सुन्दर तथा सुव्यवस्थित बने हुए तथा कलापूर्ण सुन्दरता के साथ सजे हुए होने चाहिए । कलापूर्ण वस्तुएँ, सुरुचिकर, आकर्षक एवं शोभनीय प्रतीत होती हैं, उनमें चित्त लगता है । कार्यकर्त्ताओं तथा दर्शकों का मन लगता है, चित्त प्रसन्न होता है तथा उत्साह बढ़ता है । इसलिए ज्यों-त्यों, उलटे-तिरछे कुण्ड-मण्डप बना लेने का निषेध किया गया है और इस बात पर जोर दिया गया है, कि कला-व्यवस्था, नाप-तौल, सौन्दर्य, शोभा आदि का ध्यान रखकर ही इनका निर्माण किया जाय ।

यज्ञ का मण्डप किस प्रकार बनाया जाय तथा कुण्ड किस प्रकार तैयार किये जायँ, इस सम्बन्ध में अनेक स्वतन्त्र प्राचीन पुस्तकें उपलब्ध हैं । (१) विट्ठल दीक्षित कृत-कुण्डसिद्धिः (२) शङ्कर भट्ट कृत-कुण्डार्क (३) नारायण भट्ट कृत-कुण्डदर्पण (४) अनन्त देवज्ञ कृत-'कुण्ड मार्त्तण्ड (५) विश्वनाथ कृत कुण्ड कौमुदी (६) लक्ष्मीधर भट्ट कृत कुण्ड कारिका (७) कुण्ड शुल्व कारिका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(८)महादेव गुरुकृत-कुण्ड प्रदीप (९) रामचन्द्राचार्य कृत-कुण्डोदधि (१०) द्विवेदी विश्वनाथ कृत-कुण्ड रत्नाकर (११) श्रीधर कृत-कुण्डार्णव(१२) गङ्गाधर कृत-कुण्डांकुश (१३) नीलकंठ कृत-कुण्डोद्योत (१४) नारद कृत-कुण्ड नारद पंच गात्रम् (१५) बलभद्र कृत-कुण्ड तत्व प्रदीप (१६) शुल्क माधवा कृत-कुण्ड कल्पद्रुम (१७) कुण्ड रचना (१८) परशुराम कृत-परशुराम पद्धत्युक्त कुण्ड मण्डप (१९) राम वाजपेयी कृत-कुण्ड राम वाजपेयी' (२०) विष्णु भट्ट कृत-कुण्ड मरीचि माला' (२१) नारायण सुतानन्द भट्ट कृत-कुण्ड मण्डप दर्पण (२२) नैमिष वासी रामचन्द्र कृत-कुण्ड श्लोक प्रकाशिका (२३) आपदेव कृत खेट पीठ माला (२४) नवकुण्डी विधान (२५) सप्तर्षि नृहरि दैवज्ञ कृत-कुण्ड मण्डप प्रकाशिका (२६) कुण्डशुद्धि (२७) सूक्ष्म गणितानीत कुण्ड मण्डप परिमाण, विचार (२८) रामचन्द्र दीक्षित कृत-कुण्ड रत्नावली (२९) परशुराम भट्ट कृत-पद्मकुण्ड कोष (३०) रामकृष्ण दीक्षित कृत-कुण्ड मण्डप पद्धति (३१) कुण्ड लक्षणम् (३२) शिवरामोपाध्याय कृत- कुण्ड़ार्क दीधिति (३३) कृष्ण दीक्षित कृत-कुण्डार्क पद्मिनी (३४) दामोदर सूरि कृत - कुण्डार्क नौका (३५) कुण्डार्क मिताक्षरा (३६) श्रीधर शास्त्री कृत कुण्डार्क सुप्रभा (३७) करंजकर दीक्षित कृत कुण्डर्कोदय (३८) मयूरेश्वरोपाध्याय कृत-वेदी पद्धति (३९) घुण्डी राज कृत-सामान्य निर्णय कर्म निर्णय आदि अनेक पुस्तकों में अनेक प्रकार के कुण्ड तथा मण्डप बनाने के विधान, आकार तथा नियम लिखे हुए हैं ।

मण्डपों के निर्माण में द्वार, खम्भे, तोरण द्वार, ध्वजा, शिखर, छादन, रङ्गीन वस्त्र आदि वर्णन हैं । इनके वस्तु भेद, रङ्ग भेद, नाप दिशा आदि के विधान बताए गए हैं । मण्डपों के नाम भी अलग-अलग-प्रयोजन विशेष के आधार पर लिखे गये, हैं । कुण्डों में चतुरस्र कुण्ड, योनि कुण्ड, अर्ध चन्द्र कुण्ड त्र्यस्र कुण्ड, वृत्र कुण्ड, षडस्र कुण्ड, पद्म कुण्ड, अष्टास्त्र कुण्ड, सप्तास्त्र कुण्ड, पञ्चास्त्र कुण्ड, आदि अनेक प्रकार के कुण्डों के खोदने के अनेक विधान हैं । कुण्डों के साथ में योनियाँ लगाने का वर्णन है । योनियों के भेद-उपभेद एवं अन्तरों का विवेचन है । इन सबका उपयोग बहुत बड़े यज्ञों में ही सम्भव है । इसी प्रकार अनेक देव-देवियाँ यज्ञ मण्डप के मध्य तथा दिशाओं में स्थापित की जाती हैं ।

साधारण यज्ञों को सरल एवं सर्वोपयोगी बनाने के लिए मोटे आधार पर ही काम करना होगा । मण्डप की अपने साधन और सुविधाओं की दृष्टि से पूरी-पूरी सजावट करनी चाहिये और उसके बनाने में कलाप्रियता, कारीगरी एवं सुरुचि का परिचय देना चाहिए । रंगीन वस्त्रों, रंगीन कागजों, केले के पेड़ों, आम्र पल्लवों, पुष्पों, खम्भों, द्वारों, चित्रों, ध्वजाओं, आदर्श वाक्यों, फल आदि के लुटकनों से उसे भली प्रकार सजाना चाहिए । वेदी का कुण्ड जो कुछ भी बनाया जाय, टेढ़ा-तिरछा न हो । उसकी लम्बाई-चौड़ाई तथा गोलाई सधी हुई हो । कुण्ड या वेदी को रंगविरंगे चौक पूर कर सुन्दर बनाना चाहिये । पिसी हुई मेंहदी से हरा रंग, पिसी हल्दी से पीला रंग, आटे से सफेद रंग, गुलाल या रोली से लाल रंग की रेखाएँ खींचकर, चौक को सुन्दर बनाया जा सकता है । सर्वतोभद्र, देव-स्थापना की चौकियाँ या वेदियाँ, कलश, जल घट, आसन आदि को बनाने या रखने में भी सौन्दर्य एवं शोभा का विशेष ध्यान रखना चाहिए । जिस प्रकार देव मन्दिरों में भगवान की प्रतिमा नाना प्रकार के वस्त्रों, आभूषणों, एवं शृंङ्गारों से सजाई जाती है, उसी प्रकार यज्ञ भगवान की शोभा के लिए भी पूरी तत्परता दिखाई जानी चाहिये । कुण्ड और मण्डप-निर्माण के विधि-विधानों में जहाँ विज्ञान का समावेश है, वहाँ शोभा, सजावट, कला एवं सुरुचि प्रदर्शन भी एक महत्वपूर्ण कारण है ।

कुण्ड और मण्डपों के सम्बन्ध में इस प्रकार के उल्लेख ग्रन्थों में मिलते हैं:-

बड़े यज्ञों में ३२ हाथ (४८ फुट) ३६ फुट अर्थात् १६ ×२४ फुट का चौकोर मण्डप बनाना चाहिये । मध्यम कोटि के यज्ञों में १४ (१८ फुट)हाथ अथवा १२ हाथ (१८ फुट)का पर्याप्त है । छोटे यज्ञों में १० हाथ(१५ फुट) या ८ (१२ फुट) हाथ की लम्बाई चौड़ाई का पर्याप्त है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मण्डप की चबूतरी जमीन से एक हाथ या आधा हाथ ऊँची रहनी चाहिए । बड़े मण्डपों की मजबूती के लिए १६ खंभे लगाने चाहिये । खम्भों को रङ्गीन वस्त्रों से लपेटा जाना चाहिए । मण्डप के लिये प्रतीक वृक्षों की लकड़ी तथा बाँस का प्रयोग करना चाहिए ।

मण्डप के एक हाथ बाहर चारों दिशाओं में ४ तोरण द्वार होते हैं, यह ७ हाथ (१० फुट ६ इंच) ऊँचे और ३.५ चौड़े होने चाहिए । इन तोरण द्वारों में से पूर्व द्वार पर शङ्ख, दक्षिण वाले पर चक्र, पच्छिम में गदा और उत्तर में पद्म बनाने चाहिए । इन द्वारों में पूर्व में पीपल, पच्छिम में गूलर-उत्तर में पाकर, दक्षिण में बरगद की लकड़ी लगाना चाहिए, यदि चारों न मिलें तो इनमें से किसी भी प्रकार की चारों दिशाओं में लगाई जा सकती है । पूर्व के तोरण में लाल वस्त्र, दक्षिण के तोरण में काला वस्त्र, पच्छिम के तोरण में सफेद वस्त्र, उत्तर के तोरण में पीला वस्त्र लगाना चाहिए ।

सभी दिशाओं में तिकोनी ध्वजाएँ लगानी चाहिये । पूर्व में पीली, अग्निकोण में लाल, दक्षिण में काली, नैऋत्य में नीली, पच्छिम में सफेद, वायव्य में धूमिल, उत्तर में हरी, ईशान में सफेद लगानी चाहिये । दो ध्वजाएँ ब्रह्मा और अनन्त की विशेष होती है, ब्रह्मा की लाल ध्वजा ईशान में और अनन्त की पीली ध्वजा नैऋत कोण में लगानी चाहिए । इन ध्वजाओं में सुविधानुसार वाहन और आयुध भी चित्रित किये जाते हैं । ध्वजा की ही तरह पताकाऐं भी लगाई जाती है । इन पताकाओं की दिशा और रङ्ग भी ध्वजाओं के समान ही हैं । पताकाऐं चौकोर होती हैं । एक सबसे बड़ा महाध्वज सबसे ऊँचा होता है ।

मण्डप के भीतर चार दिशाओं में चार वेदी बनती हैं । ईशान में ग्रह वेदी, अग्निकोण में योगिनी वेदी, नैऋत्य में वस्तु वेदी और वायव्य में क्षेत्रपाल वेदी, प्रधान वेदी पूर्व दिशा में होनी चाहिए ।

एक कुण्डी यज्ञ में मण्डप के बीच में ही कुण्ड होता है । उसमें चौकोर या कमल जैसा पद्म कुण्ड बनाया जाता है । कामना विशेष से अन्य प्रकार के कुण्ड भी बनते हैं । पंच कुण्डी यज्ञ में आचार्य कुण्ड बीच में, चतुरस्र पूर्व में, अर्धचन्द्र दक्षिण में, वृत पच्छिम में और पद्म उत्तर में होता है । नव कुण्डी यज्ञ में आचार्य कुण्ड मध्य में चतुरस्र कुण्ड पूर्व में, योनि कुण्ड अग्नि कोण में, अर्धचन्द्र दक्षिण में, त्रिकोण नैऋत्य में, वृत पच्छिम में, षडस्र वायव्य में, पद्म उत्तर में, अष्ट कोण ईशान में होता है ।

प्रत्येक कुण्ड में ३ मेखलाऐं होती हैं । ऊपर की मेखला ४ अंगुल, बीच की ३ अंगुल, नीचे की २ अँगुल होनी चाहिए । ऊपर की मेखला पर सफेद रङ्ग, मध्य की पर लाल रङ्ग और नीचे की पर काला रङ्ग करना चाहिए । ५० से कम आहुतियों का हवन करना हो तो कुण्ड बनाने की आवश्यकता नहीं । भूमि पर मेखलाऐं उठाकर स्थाण्डिल बना लेना चाहिए । ५० से ९९ तक आहुतियों के लिए २१ अंगुल का कुण्ड होना चाहिए । १०० से ९९९ तक के लिए २२.५ अँगुल का, एक हजार आहुतियों के लिए १ हाथ=(१.५) फुट का, दस हजार आहुतियों के लिए २ हाथ (३ फुट) का तथा एक लाख आहुतियों के लिए ४ हाथ (६ फुट) का कुण्ड बनाने का प्रमाण है ।

यज्ञ-मण्डप में पच्छिम द्वार से साष्टाङ्ग नमस्कार करने के उपरान्त प्रवेश करना चाहिए । हवन के पदार्थ चरु आदि पूर्व द्वार से ले जाने चाहिए । दान की सामग्री दक्षिण द्वार से और पूजा प्रतिष्ठा की सामग्री उत्तर द्वार से ले जानी चाहिए ।

कुण्ड के पिछले भाग में योनियाँ बनाई जाती है । इनके सम्बन्ध में कतिपय विद्वानों का मत है कि वह वाममार्गी प्रयोग है । योनि को स्त्री की मूत्रेन्द्रिय का आकार और उसके उपरिभाग में अवस्थित किये जाने वाले गोलकों को पुरुष अण्ड का चिह्न बना कर वे इसे अश्लील एवं अवैदिक भी बताते हैं । अनेक याज्ञिक कुण्डों में योनि-निर्माण के विरुद्ध भी हैं और योनि-रहित कुण्ड ही प्रयोग करते हैं । योनि निर्माण की पद्धति वेदोक्त है या अवैदिक, इस प्रश्न पर गम्भीर विवेचना अपेक्षणीय है ।

लम्बाई, चौड़ाई, गहराई, सब दृष्टि से चौकोर कुण्ड बनाने का कुण्ड सम्बन्धी ग्रन्थों में प्रमाण है । अनेक स्थानों पर ऐसे कुण्ड बनाये जाते हैं, जो लम्बे चौड़े और गहरे तो समान लम्बाई के होते हैं ,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर वे तिरछे चलते हैं और नीचे पेंदे में जाकर ऊपर की अपेक्षा चौथाई-चौड़ाई में रह जाते हैं । इनके बीच में भी दो मेखलाऐं लगा दी जाती हैं । इस प्रकार बने हुए कुण्ड अग्नि प्रज्ज्वलित करने तथा शोभा एवं सुविधा की दृष्टि से अधिक उपयुक्त हैं । आर्य समाजों में ऐसे ही हवन-कुण्ड बनाये जाते हैं । इनके किनारे-किनारे एक पतली नाली भी होती है जिसमें चींटी आदि कीड़े-मकोड़ों का अग्नि तक न पहुँचने देने की रोक रहती है । कुण्ड के आस-पास जल-सिंचन इसी उद्देश्य के लिए ही किया जाता है ।

कुण्डों की रचना एवं भिन्नता का उद्देश्य

शास्त्रों में सामान्य विवेचन इस प्रकार मिलता है 'कुण्ड' शब्द पाणिनीय व्याकरण के अनुसार रक्षणार्थक कुडि अथवा मानार्थक कुण धातु से सिद्ध होता है, तथा कोषकार कुण्ड शब्द का अर्थ व्युत्पत्ति और लक्षण से-रक्षा-स्थान, मान-नाप की वस्तु, अभिमुखकारी, दानादि-द्वारा पोषणकर्ता, हवन की अग्नि का निवास-स्थान तथा जल का पात्र आदि करते हैं । इनमें से हमें 'हवन की अग्नि का निवास -स्थान' अर्थ यहाँ अभिप्रेत है । इस प्रकार कुण्ड में अग्नि के माध्यम से देवता के निकट हवि पहुँचाने की प्रक्रिया को विद्वज्जन यज्ञ कहते हैं ।

किसी भी कार्य के आरम्भ में वह सविधि सानन्द सम्पन्न हो, इस विचार से उसकी पूर्व भूमिका तैयार की जाती है और तत्सम्बन्धी सम्पूर्ण सामग्री सुव्यवस्थित की जाती है । इसी प्रकार यज्ञ-आरम्भ करने से पूर्व मण्डप-निर्माण होता है । वह कितना लम्बा-चौड़ा हो ? इसका निर्णय भी विद्वानों ने ग्रन्थ द्वारा बतला दिया है । जैसे सभागृह में आगन्तुकों के अनुमान से लम्बाई-चौड़ाई का निर्णय होता है, वैसे ही यहाँ आहुति के आधार पर मण्डप की लघुता-दीर्घता का निर्णय होता है । कुण्ड भी मण्डप का अन्योन्याश्रय से अङ्ग ही है । अतः उसका भी निर्माण आहुति के आधार पर अवलम्बित है । तदर्थ-'कुण्डसिद्धि' कार का कथन है कि-

शतार्धेऽरत्निः स्याच्छतपरिमितेऽरत्नि-विततं
सहस्रे हस्तं स्यादयुतहवने हस्तयुगलम् ।
चतुर्हस्तं लक्षे प्रयुतहवने षट्करमितं, ककुद्धिर्वा कोटौ
नृपकरमपि प्राहुरपरे ।। ३४ ।।

पचास अथवा सौ आहुति देनी हो तो कुहनी से कनिष्ठका तक के माप का (१ फुट ३ इंच)कुण्ड बनाना, एक हजार आहुति में एक हस्तप्रमाण (१फुट ६ इंच)का, दस हजार आहुति में दो हस्त-प्रमाण (३ फुट)का, एक लक्ष आहुति में चार हाथ का (६ फुट),दस लक्ष आहुति में छः हाथ (९ फुट) का तथा कोटि आहुति में ८ हाथ का (१२ फुट)अथवा सोलह हाथ का कुण्ड बनाना चाहिये । **भविष्योत्तर पुराण** में पचास आहुति के लिये मुष्टिमात्र का भी निर्देश है । इस विषय में 'शारदातिलक, स्कन्दपुराण आदि का सामान्य मतभेद भी प्राप्त होता है । इसी तरह कुण्डसिद्धिकार ने कुछ विद्वानों के विचार को मान देते हुए यह लिखा है कि-

लक्षैकवृद्धया दशलक्षकान्तं, करैकवृद्धया दशहस्तकं
च कोट्यार्धदिग्विंशतिलक्षलक्ष दले मुनीष्वर्तुकु-
शानुहस्तम् ।। ३२ ।।

एक लक्ष से दस लक्ष आहुति तक क्रमशः एक हाथ (१ फुट ६ इंच)से दस हाथ (१५ फुट)तक का कुण्ड बनाना चाहिये । अथवा पचास लाख, दस लाख, बीस लाख, एक लाख या पचास हजार आहुति में क्रमशः ७ (१० फुट ६ इंच) ५ (७ फुट ६ इंच) ६ (९ फुट) ३ (४ फुट छह इंच)१ हाथ (१ फुट ६ इंच)का कुण्ड बनाना चाहिये ।''

साथ ही विशेष स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि-

वेदाक्षीणि युगाग्नयः शशियुगान्यष्टाब्धयस्त्रीषवो-
ऽष्टाक्षावहिरसा रसाङ्ककमिता नेत्रर्षयोऽक्षस्वराः ।
अडगुल्योऽथ यवाः खमभ्रमिषवः ख पञ्चषट्सागराः,
सप्त भ्रं मुनयस्त्वमी निगदिता वेदास्त्रके बाहवः ।। ३६।।

-कुण्डसिद्धि

एक हस्त (१ फुट ६ इंच)के कुण्ड का आयाम-विस्तार २४ अँगुल का, दो हस्त (३ फुट)का हो तो ३४ अँगुल का, तीन हस्त (४ फुट ६ इंच)का हो तो ४१ अँगुल और ५ यव का, चार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हस्त (६ फुट)का हो तो ४८ अँगुल का, पाँच हाथ (७ फुट ६ इंच)का कुण्ड हो, तो ५३ अँगुल और ५ यव, छः हाथ (९ फुट)का कुण्ड हो, तो ५९ अँगुल और ६ यव, सात हाथ (१० फुट ६ इंच)का कुण्ड हो, तो ६३ अँगुल और ४ यव, आठ हाथ (१२ फुट)का कुण्ड हो, तो ६६ अँगुल और ७ यव, नव हाथ (१३ फुट ६ इंच)का कुण्ड हो, तो ७२ अँगुल तथा दस हाथ (१५ फुट) का कुण्ड हो, तो ७६ अँगुल और ७ यव के प्रमाण से आयाम विस्तार होना चाहिये । ये चतुरस्र कुण्ड के भुज कहे हैं ।

मण्डप के निर्माण में चारों ओर के स्तम्भ, उन के ऊपर छत तथा द्वार, तोरण और ध्वजा आदि के सम्बन्ध में भी शास्त्राज्ञा माननीय है । इसी प्रकार कुण्ड के निर्माण में अङ्गभूत वात, कण्ठ, मेखला तथा नाभि का प्रमाण भी आहुति एवं कुण्ड की आकृति के आधार से निश्चित किये जाते हैं । इस कार्य में न्यूनाधिक होने से रोगशोक आदि विघ्न आते हैं । अतः केवल सुन्दरता पर ही दृष्टि न रख कर शिल्पी के साथ पूर्ण परिश्रम से शास्त्रानुसार कुण्ड तैयार करवाना चाहिये ।

आधुनिक प्रचलित क्रियाओं में निम्नलिखित कुण्डों का उपयोग दृष्टिगोचर होता है:-

प्रमुख कुण्डों की आकृतियाँ निम्न प्रकार से है -

चतुष्कोण, अर्धचन्द्र, त्रिकोण, वृक्ष विषमषड्स्र, विषम अष्टास्र, पद्म, समषडस्र, सम अष्टास्र और योनि कुण्ड । इनके अतिरिक्त सप्तास्र, पञ्चास्र, धनुर्व्याकृति, विषमभुज-मृदङ्गकार, जिंदल पद्म, चतुर्दल पद्मकुण्ड के नाम भी प्राप्त होते हैं ।

देखो '**वाचस्पत्य कोष**' कुण्ड शब्द के अर्थ वाला भाग ।

उनके अनुसार भी 'नवग्रह-मख' करते समय कुण्ड बनाये जा सकते हैं ।

ताराभक्तिसुधार्णव के टीकाकार ने उपर्युक्त चतुरस्त्रादि कुण्डों की स्थापना का क्रम इस प्रकार बतलाया है-

प्राक्प्रोक्ते मण्डपे विद्वान् वेदिकाया वहिस्त्रधा ।
क्षेत्र विभज्य मध्यांशे, पूर्वादि परिकल्पयेत् ।।
अष्टास्वाशासु कुण्डानि, रम्याकाराण्यनुक्रमात् ।
चतुरस्त्र योनिमर्धचन्द्रं त्र्यस्त्र सुवर्तुलम् ।।
षडसां पङ्कजाकारमष्टास्त्र तानि नामतः ।
आचार्यकुण्डं मध्ये स्याद् गौरीपति महेन्द्रयोः ।।

आहुति के मान से मण्डप-निर्णय होने के पश्चात् वेदिका के बाहर तीन प्रकार से क्षेत्र का विभाग करके मध्यभाग में पूर्व आदि दिशाओं की कल्पना करे । फिर आठों दिशाओं में-

आठ दिशाओं के नाम इस प्रकार हैं-पूर्व अग्नि, दक्षिण, निर्ऋति, पश्चिम, वायव्य, उत्तर तथा ईशान ।

क्रमशः चतुरस्त्र, योनि अर्धचन्द्र, त्र्यस्त्र, वर्तुल, षडस्त्र, पङ्कज और अष्टास्त्रकुण्ड की स्थापना सुचारु रूप से करे तथा मध्य में आचार्य कुण्ड वृत्ताकार अथवा चतुरस्त्र बनाये । यह नवकुण्डी याग की प्रक्रिया से सम्बद्ध है ।

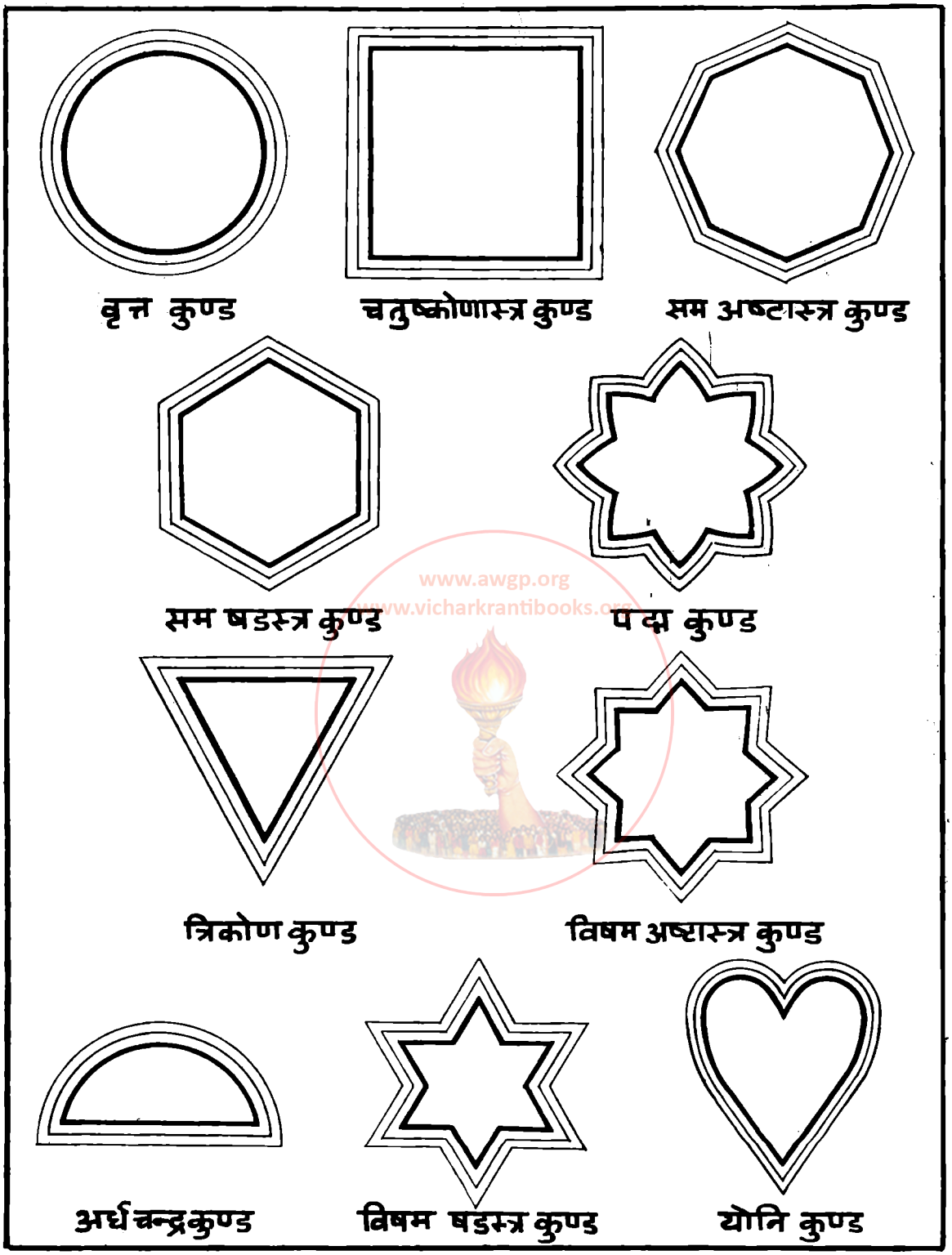
पूर्वापरायतं सूत्रं, हस्तमानं प्रसार्य च ।
तस्याग्र योर्मत्स्ययुग्मं कुर्यात् स्पष्टं यथा भवेत् ।।
द्विभागं कृत्य तत्सूत्रं पातयेद् दक्षिणोत्तरम ।
तदग्रयोर्मत्स्युग्मं कुर्यात् स्पष्टं यथा भवेत् ।।
चतुर्दिक्षु चतुसूत्रं पातयेत् तत्प्रमाणतः चतुरस्त्रं चतुःकोष्ठं, भवेदिति मनोहरम् ।। कोणसूत्रद्वयं दद्यात् प्रमाणं तेन लक्षयेत् ।
चतुरस्त्रं भवेत् कुण्डं, सर्व लक्षण लक्षितम् ।।

गौतमीयतन्त्र में चतुस्त्रकुण्ड निर्माण की विधि-

स्पष्ट करते हुए लिखा है कि-पहले एक सूत्र एक हाथ (१ फुट ६ इंच) २४ अँगुल का लेकर पूर्व से पश्चिम की ओर फैलाकर दो निशान स्पष्ट बनाये । फिर उसी सूत्र के दो भाग करके दक्षिण और उत्तर की ओर फैलाये तथा उसका निशान बनाये । तदनन्तर चारों दिशाओं में सूत्र को नापते हुए प्रमाण युक्त निशान करे, जिस से मनोहर चतुस्त्र कुण्ड का निर्माण होगा । कोनों में सूत्र का नाप करके प्रमाण ज्ञान कर ले । जिससे न्यूनाधिक न हो । इस प्रकार सर्व लक्षण चतुरस्त्र कुण्ड होता है ।

इसी तरह कुण्ड की गहराई के लिये शास्त्रकारों का आदेश है कि जितना कुण्ड का विस्तार और आयाम हो, उतना गहरा प्रथम मेखला तक करना चाहिये । तथा गहराई चौबीसवें भाग में कुण्ड का निर्माण होना श्रेष्ठ है । मेखला के बारे में विद्वानों का अभिप्राय है, कि एक मेखला वाला कुण्ड अधम, दो मेखला वाला मध्यम और तीन मेखला

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org



दस प्रमुख हवन-कुण्ड

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वाला उत्तम होता है । कुछ विद्वान पाँच मेखला वाले को उत्तम मानते हैं ।

सोमशम्भु नामक विद्वान का मत है कि एक मेखला वाला कुण्ड वैश्य के लिये हितकर है, दो वाला क्षत्रिय के लिये सुखद है और तीन मेखला वाला ब्राह्मणों के लिए लाभप्रद है ।

इन मेखलाओं में सत्त्व, रजस् और तमस् की भावना से तीनों रङ्ग भरे जाते हैं तथा पाँच हो, वहाँ पञ्चतत्त्व की भावना से रंग देने का सम्प्रदाय है । इनके निर्माण का गणित भी अविस्मरणीय है ।

नाभि-कुण्ड के आकार से बारह अंश ऊपर तथा छः अंश के विस्तार वाली जैसा कुण्ड हो उसके अनुरूप कमल के आकार वाली बनानी चाहिये ।

पद्मकुण्ड में नाभि नहीं होती है ।

योनि-के लिये त्रैलोक्यसार में लिखा है कि-

दीर्घा सूर्यांगु योनिस्त्र्यंशोना विस्तरेण तु ।
एकाङ्गं लोच्छिता सातु प्रविष्टाऽभ्यन्तरे तथा ।।
कुम्भद्वयार्धसंयुक्त, चाश्वत्थदलवन्मता ।
अङ्गं षष्ठमेखला युक्ता, मध्ये त्वाज्यधृतिक्षमा ।।

बारह अँगुल चौड़ी, विस्तार से तीन अंश छोटी, मध्यभाग में एक अंगुल ऊपर उठी हुई, कुण्ड में झुकी हुई, अश्वत्थ के पत्र की तरह छिद्र और नाल में युक्त, ऊपर कुछ संकोच वाली तथा मेखला के मध्य में पश्चिम की ओर अथवा दक्षिण में, एक अंगुष्ठ-प्रमाण की मेखला से युक्त, घृत धारण करने में समर्थ ऐसी योनि बनानी चाहिये । योनि-कुण्ड में योनि नहीं बनायी जाती है ।

सर्व साधारण कार्यों में प्रायः चतुस्र अथवा वृत्तकुण्ड का निर्माण करके कार्य चलाने की पद्धति है । क्योंकि **'सर्वसिद्धिकर' कुण्ड चतुरस्रमुदाहृतम्-** चतुरस्र कुण्ड सर्व सिद्धि करने वाला है । इसी प्रकार वृत्तकुण्ड भी शान्ति-पुष्टिकारक है ।

कुण्ड-निर्माण का विषय ज्यामिति, भूमिति, क्षेत्र-मिति और वास्तुशास्त्र से अधिक सम्बन्ध रखता है । अतः जिन्हें अधिक इससे रस हो, उन्हें कुण्डसिद्धि, भविष्य पुराण, वायु पुराण, अनुष्ठान प्रकाश, पञ्चसार, क्रियासार समुच्चय, शारदातिलक आदि ग्रन्थों का पूर्णतया अवलोकन करना चाहिये । एवं कर्मकाण्ड करते समय साम्प्रदायिक परिपाटी में क्रियाभेद न हो, तदर्थ गुरु के साथ यज्ञादि के समय उपस्थित रह कर प्रत्यक्ष-शिक्षण प्राप्त करना चाहिए । जिससे स्वपर का कल्याण हो, तथा शास्त्रों के प्रति नवीन मस्तिष्क के लोगों की अभिरुचि बढ़े ।

कुण्डों की रचना में भिन्नता का उद्देश्य यह है कि काम्यकर्मों की प्रधानता के अनुसार पृथक-पृथक आकार वाले भिन्न-भिन्न दिशाओं में कुण्ड बनाने से फलसिद्धि शीघ्र होती है । तदर्थ बहवृच परिशिष्टादि ग्रन्थों की उक्ति है कि-

भुक्तौ मुक्तौ तथा पुष्टौ, जीर्णोद्धारे विशेषतः ।
सदा होमे तथा शान्तौ, वृत्तं वरुणदिग्गतम् ।।

भुक्ति, मुक्ति, पुष्टि, जीर्णोद्धार, नित्य हवन तथा शान्ति के लिए पश्चिम दिशा में वृत्ताकार कुण्ड का निर्माण करना चाहिए । इसी प्रकार दिशाभेद का विशेष स्पष्टीकरण करते हुए अन्य ग्रन्थकारों ने लिखा है कि-

ऐन्द्रयां स्तम्भे चतुष्कोणनग्नौ भोगे भगाकृति ।
चन्द्रार्ध मारणे याम्ये, नैर्ऋते हि त्रिकोणकम् ।।
वारुण्यां शान्तिके वृत्तं, षडस्त्युच्चाटनेऽनिले ।
उदीच्यां पौष्टिके पद्मं रौद्रयामष्टा समुक्तिदम् ।

स्तम्भन करने के लिये पूर्व दिशा में चतुरस्र, भोगप्राप्ति के लिए अग्निकोण में योनि के आकार वाला, मारण के लिए दक्षिण दिशा में अर्धचन्द्र अथवा नैर्ऋत्यकोण में त्रिकोण, शान्ति के लिए पश्चिम में वृत्त, उच्चाटन के लिए वायव्यकोण में षडस्र, पौष्टिक कर्म के लिए उत्तर में पद्माकृति और मुक्ति के लिये ईशान में अष्टास्र कुण्ड हितावह है । इनमें कुछ विशिष्ट कार्यों के लिए भी प्रयुक्त होते हैं यथा-

वाचस्पत्यकोष के अनुसार-

पुत्र प्राप्ति के लिए योनिकुण्ड, भूत-प्रेत और ग्रहबाधा-विनाश के लिए पंचास्र अथवा धनुर्ज्या वृति, अभिचार दोष का शमन करने के लिए सप्तास्र इत्यादि ।

सूक्ष्म दृष्टि से विचार कर ऊपर कुण्ड और यन्त्र का मान्य भी कुछ झलकता है, जैसे यंत्र देवता का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर भाग जाता है वैसे ही कुण्ड भी देवता का शरीर ही है, ऐसा मान लें तो कोई आपत्ति नहीं ।

प्रत्येक कर्म में यथाशक्ति यज्ञ करना ही चाहिये । पर उसमें कुण्ड ही बनाया जाय, यह आवश्यक नहीं । तदर्थ शास्त्रकारों की आज्ञा है कि-

अथवाऽपि मृदा सुवर्णाभासा करमानं चसुरङ्ग लोच्चमल्पे । हवने विदधीत वाङ्गलोच्चः विवुधः स्थण्डिलमेव वेदकोणम् ।।

यदि कुण्ड करने का सामर्थ्य न हो, तो सामान्य हवनादि में विद्वान चार अंगुल ऊँचा, अथवा एक अंगुल ऊँचा एक हाथ लम्बा-चौड़ा सुवर्णाकार पीली मिट्टी अथवा वालू-रेती का सुन्दर स्थण्डिल बनाये ।

नित्यं नैमित्तिक होमं स्थण्डिले वासमाचरेत्

''शारदा तिलक मत से नित्य-नैमित्तिक हवन स्थण्डिल में करना चाहिये ।

स्थण्डिल का स्थान

कुण्ड मेव विधं नस्यात् स्थण्डिले वा समाचरेत स्थानापन्न स्थंडिल का वही स्थान है, जो कुण्ड का है ।

तत्स्थानापन्नस्तद्धर्म लभते स्थान धर्माणां स्थानान्यति देशः।'' कुण्ड स्थापन्न स्थंडिल भी कुण्ड स्थान में ही होता है, स्थानान्तर में नहीं ।

इसके अतिरिक्त ताम्र के और पीतल के भी यथेच्छ कुण्ड बाजार में प्राप्त होते हैं । उनमें प्रायः ऊपर मुख चौड़ा होता है और नीचे क्रमशः छोटा होता है । वह भी शास्त्र की दृष्टि से ग्राह्य है । नित्य हवन-बलिवैश्व-देव आदि के लिए अनेक विद्वान इन्हें उपयोग में लेते हैं ।

इसका उलटा प्रकार जो मण्डल के रूप में कहा जा सकता है । जिसमें नीचे से चौड़ा और ऊपर तक छोटा आकार वाला भी मृत्तिकादि से बनाते हैं । उसमें पाँच या सात मेखला रहती हैं ।

यह सामान्य दिग्दर्शन है । इन्हीं सब बातों पर विचार करते हुए कुण्ड एवं मण्डप का निर्माण करना चाहिए ।

कुण्ड और उनकी संख्या

कुण्डों की संख्या अधिक बनाना इसलिए आवश्यक होता है कि अधिक व्यक्तियों को कम समय में निर्धारित आहुतियाँ दे सकना सम्भव हो , एक ही कुण्ड हो तो एक बार में नौ व्यक्ति बैठते हैं । पुरश्चरण वाले तथा बिना पुरश्चरण करने वाले कुल मिलाकर ६०-७० व्यक्ति हो जायँ या यह संख्या १०० तक पहुँचे तो १०-११ बार तक हवन करना पड़ सकता है । इसमें बहुत समय लगेगा और पूर्णाहुति में बहुत विलम्ब हो जायगा । ऐसी दशा में अधिक कुण्डों के बनाने की आवश्यकता पड़ती है ।

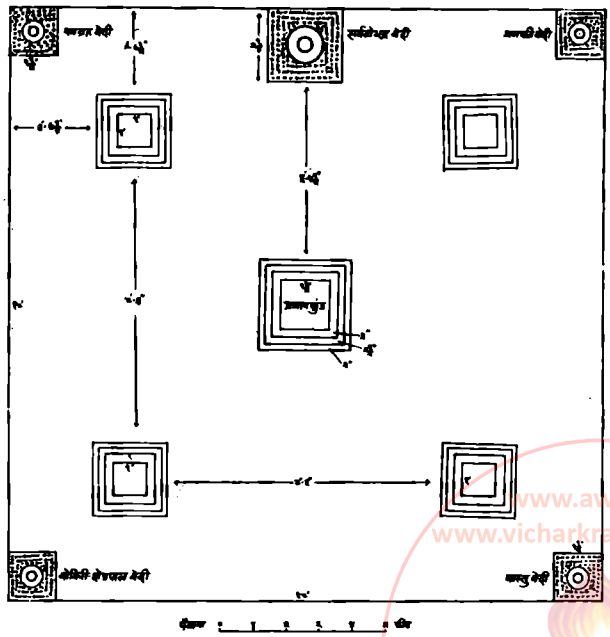
जिन यज्ञों में आहुतियाँ देने वालों की संख्या १०० तक पहुँचे, उनके लिए ५ कुण्डों की यज्ञशाला पर्याप्त है । इससे अधिक बढ़ने पर ३००-४०० के लिए ९ कुण्ड की यज्ञशाला पर्याप्त है ।

कितनी आहुतियाँ देनी हैं ? हवन पर बैठने वाले व्यक्ति कितने हैं ? एक यज्ञशाला पर कितने व्यक्ति बिठाये जायँ ? इन सब बातों पर स्थिति के अनुसार विचार करके यह निश्चित करना होता है कि कितनी पारी बिठाई जायँगी और प्रति पारी में कितनी-कितनी आहुतियाँ लगेंगी । इसके लिए कोई सुनिश्चित एवं पूर्व निर्धारित क्रम नहीं है । सभी यज्ञ करने वालों को अवसर मिल जाय और आहुतियों की निर्धारित संख्या पूरी हो जाय । इसका हिसाब लगाते हुए कितनी पारी हों और प्रतिपारी में कितनी आहुतियाँ हो, उसकी गणना करनी चाहिए ।

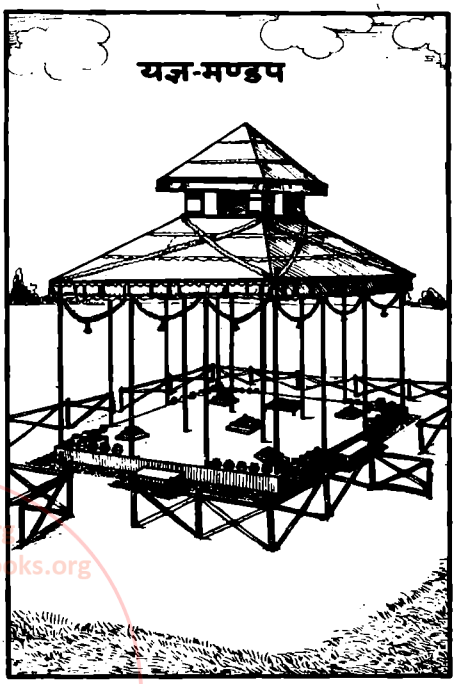
यदि एक ही कुण्ड होता है, तो पूर्व दिशा में वेदी पर एक कलश की स्थापना होने से शेष तीन दिशाओं में ही याज्ञिक बैठते हैं । प्रत्येक दिशा में तीन व्यक्ति बैठें तो ९ व्यक्ति एक बार में बैठ सकते हैं । यदि कुण्डों की संख्या ५ हैं तो प्रमुख कुण्ड को छोड़कर शेष ४ पर १२-१२ व्यक्ति भी बिठाये जा सकते हैं । संख्या कम हो तो चारों दिशाओं में उसी हिसाब से ४, ८ भी बिठा कर कार्य पूरा किया जा सकता है । यही क्रम ९ कुण्डों की यज्ञशाला में रह सकता है । प्रमुख कुण्ड पर ९ और शेष ८ पर १२×८=९६+९=१०५ व्यक्ति एक बार में बैठ सकते हैं । संख्या कम हो तो कुण्डों पर उन्हें कम-कम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

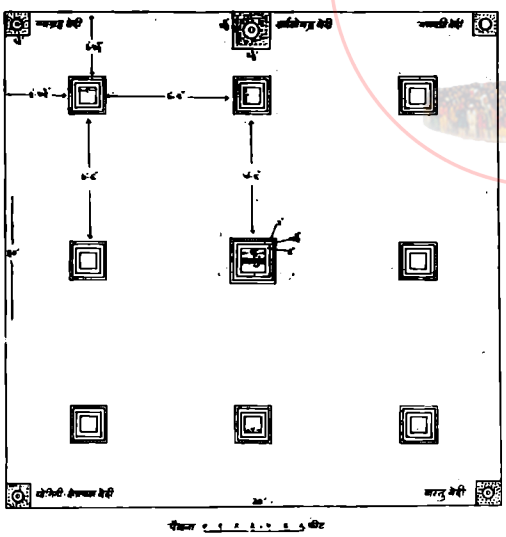
पंच कुण्डी यज्ञ में यज्ञ कुंण्डों की स्थिति



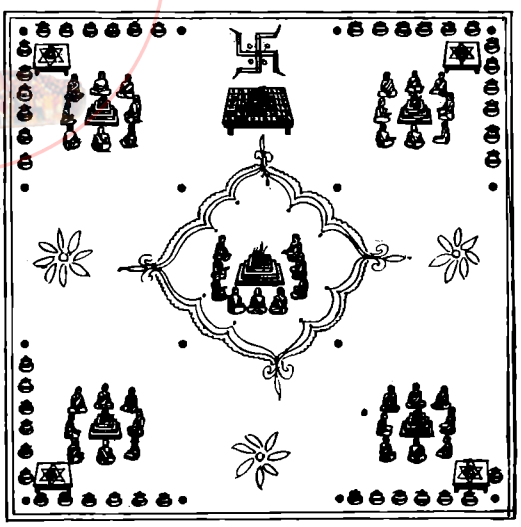
यज्ञ-मण्डप



नौ कुण्डी यज्ञ में कुण्डों का स्थान तथा माप



यज्ञ-शाला



www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बिठाया जा सकता है । अधिक हों तो होताओं को दो, तीन, चार या अधिक पारियों में बिठाया जा सकता है । इस प्रकार तीन, चार सौ यहाँ तक कि पाँच सौ होताओं की भी व्यवस्था नौ कुण्ड की यज्ञशाला में हो सकती है । कितने ही हजार याज्ञिक हों, संख्या बहुत बड़ी हो तो २१, २५, ५१ या १०१ कुण्डों की अत्यधिक विशाल यज्ञशाला बनाने की बात सोचनी चाहिए ।

कहीं-कहीं अपने आयोजन की विशालता की छाप दूसरों पर डालने या मिथ्या विज्ञापन करने की दृष्टि से याज्ञिकों की संख्या कम होते हुए भी अधिक कुण्ड बनाने का प्रयत्न किया जाता है । यह व्यर्थ ही नहीं, हानिकारक भी है । बड़ी यज्ञशाला बनाने में अधिक खर्च पड़ता है । उतनी गुंजाइश न हो तो दरिद्र-आडम्बर और भी बुरा दीखता है । अधिक कुण्डों पर अधिक घी, अधिक सामग्री एवं अधिक समिधाएँ खर्च होती हैं । जितनी आहुतियाँ ५ कुण्डों में दी जाती हैं, उतनी ही यदि २१ कुण्डों में दी जायँ, तो घी, समिधा, पूजा सामग्री, यज्ञशाला निर्माण, व्यवस्था आदि का खर्चा जोड़ने से लगभग दूना हो जायगा । ऐसा तभी करना चाहिए जब इसके बिना और कोई रास्ता न हो । कुण्डों की संख्या बढ़ाकर यज्ञ की विशालता विज्ञापित करने की उपहासास्पद-बाल बुद्धि की अवहेलना ही करनी चाहिए । साधारणतया मध्यम वृत्ति के सामूहिक यज्ञों के लिए ५ या ९ कुण्ड पर्याप्त माने जाने चाहिए ।

प्राचीन काल में कुण्ड चौकोर खोदे जाते थे, उनकी लम्बाई, चौड़ाई गहराई समान होती थी । यह इसलिए था कि उन दिनों भरपूर समिधाएँ प्रयुक्त होती थीं, घी और सामग्री भी बहुत-बहुत होमी जाती थी, फलस्वरूप अग्नि की प्रचण्डता भी अधिक रहती थी । उसे नियंत्रण में रखने के लिए भूमि के भीतर अधिक जगह रहना आवश्यक था । उस स्थिति में चौकोर कुण्ड ही उपयुक्त थे । पर आज समिधा, घी, सामग्री सभी में अत्यधिक मँहगाई के कारण किफायत करनी पड़ती है । ऐसी दशा में चौकोर कुण्डों में थोड़ी ही अग्नि जल पाती है और वह ऊपर अच्छी तरह दिखाई भी नहीं पड़ती । ऊपर तक भर कर भी वे नहीं आते तो कुरूप लगते हैं । अतएव आज की स्थिति में कुण्ड इस प्रकार बनने चाहिए कि बाहर से चौकोर रहें, लम्बाई, चौड़ाई गहराई समान हो । पर उन्हें भीतर तिरछा बनाया जाय । लम्बाई, चौड़ाई चौबीस-चौबीस अँगुल हो तो गहराई भी २४ अँगुल तो रखना चाहिये पर उसमें तिरछापन इस तरह देना चाहिये कि पेंदा छः-छः अँगुल लम्बा चौड़ा रह जाय ।

इस प्रकार के बने हुए कुण्ड समिधाओं से प्रज्वलित रहते हैं, उनमें अग्नि बुझती नहीं । थोड़ी सामग्री से ही कुण्ड ऊपर तक भर जाता है और अग्निदेव के दर्शन सभी को आसानी से होने लगते हैं ।

यज्ञशाला, यज्ञ-मण्डप और उसका निर्माण

यज्ञ विष्णु भगवान् का साक्षात् स्वरूप है । उनके मन्दिर-यज्ञशाला को बहुत ही सुन्दर आकर्षक एवं सुरुचिपूर्ण बनाया जाना चाहिए । सुन्दरता सभी को प्रिय लगती है । भगवान् के मन्दिरों को भी इसीलिए सजावट-शृंगार के साथ शोभायमान बनाया जाता है कि लोगों में उन्हें देखने की सुरुचि उत्पन्न हो । मन्दिरों में मूर्तियों की तथा बाहर की शोभा को ठीक रखने का इसी कारण ध्यान रखा जाता है । सत्यं, शिवं की भाँति सुन्दरम् को भी एक दैवी विभूति माना गया है । यज्ञीय वातावरण तो सुन्दर और सुरुचि का परिचायक है । यदि वह सब फूहड़, कुरूप एवं अस्त-व्यस्त अव्यवस्थित ढंग से बना होगा तो यही समझा जायगा कि इस पुण्य आयोजन के कार्य-संचालक, आलसी, फूहड़, गन्दे एवं छिछले स्तर के लोग हैं । ऐसा स्वरूप नहीं बनने देना चाहिए । यज्ञशाला एवं उसके पार्श्ववर्ती वातावरण को, प्रयोजनीय वस्तुओं को सुन्दर सुसज्जित बनाने में पूरी-पूरी तत्परता का प्रयोग करना चाहिए । सस्ती चीजों से, यहाँ तक कि पत्र-पुष्पों से भी यज्ञशाला सजाई जा सकती है । इसमें खर्च का उतना प्रश्न नहीं, जितना कार्यकर्ताओं की सुरुचि का है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यज्ञशाला बनाने एवं सजाने सम्बन्धी कितने ही ग्रन्थ संस्कृत में मिलते हैं । उनमें विविध आकार-प्रकार के कुण्ड बनाने, विभिन्न ढंग की यज्ञशालाएँ खड़ी करने का बहुत सुन्दर वर्णन है । अनेकों विधियाँ एवं रूप रेखाओं का उनमें वर्णन है । इस विवेचन के मूल में यज्ञशाला को सुन्दर, सुसज्जित बनाना ही प्रयोजन है । यह आवश्यक नहीं कि ठीक उसी ढंग की यज्ञशाला बननी चाहिए, जैसी प्राचीन काल में बनती थी । उसमें हेर-फेर भी हो सकता है पर सुन्दरता एवं सुसज्जा के मूल तत्त्व को बदला नहीं जा सकता ।

हर यज्ञशाला ढकी होनी चाहिए, ताकि आकाश में उड़ने वाले पक्षी कोई गन्दी वस्तु यज्ञशाला में न डाल दें । एक कुण्ड की यज्ञशाला में चार खम्भे करके ऊपर कपड़े से ढक देना पर्याप्त है । खम्भों पर कपड़े कागज या पत्ते लपटे रहने चाहिए । चार द्वारों के मेहराव बाँस की खपच्चियों से, रस्सियों या किसी और दूसरी चीजों से बनाये जा सकते हैं । झल्लर, झाड़ियाँ, बन्दनवार, फूल मालाएँ, पुष्प-गुच्छ आदि यथा स्थान टाँक देने से शोभा-सुन्दरता में वृद्धि होती है ।

यदि पाँच कुण्ड, नौ कुण्ड, की यज्ञशाला बनानी हो तो उसका ढाँचा दूसरी ही तरह खड़ा करना होगा । बारह खम्भे चारों दिशाओं में लगा देने से बारह ही दरवाजे बन जाते हैं । बीच के कुण्ड के चारों ओर चार खम्भे ऐसे गाढ़ने चाहिए जो किनारे के बाहर के खम्भे से बड़े हों । इन चार को ऊँचा रखने और उनकी अलग से छाया कर देने पर नीचे ऐसी जगह बच जाती है, जिसमें होकर यज्ञ का धुआँ एवं गर्मी बाहर निकलती रहती है । बाहर के बारह खम्भे और बीच के चार खम्भों में परस्पर सहारा बाँधकर उस पर रंगीन कपड़ा ताना जा सकता है । खम्भों की, द्वारों की, जितनी शोभा, सुन्दरता बनाई जा सके, बनानी चाहिए ।

पूर्व काल में जंगलों में यज्ञ होते थे । वनस्पति, घास-पात का बाहुल्य रहता था, कपड़े आदि थे नहीं । तब फूँस से छाकर यज्ञशालाएँ बनाई जाती थीं । उस समय यही सस्ता भी था । पर अब वह सुविधा नहीं रही । फूँस मिलना मँहगा हो गया है फिर उसे व्यवस्थित ढंग से छा सकना विशेष कारीगरों का ही काम रह गया है । फूँस एक बार प्रयोग होने के बाद दूसरी बार काम भी नहीं आ सकता । फिर तेज हवा में आग की चिनगारी का खतरा भी रहता है । इसलिए रंगीन कपड़ों से यज्ञशाला की छाया करना आज की स्थिति में अधिक उपयुक्त है ।

तीन मेखलाऐं यज्ञशाला के चारों ओर रहनी चाहिए । नीचे दो मेखलायें दो-दो अंगुल ही हों तो ऊपर की मेखला तीन अंगुल रखनी चाहिए । ऊपर की मेखला को अधिक मजबूत इसलिए रक्खा जाता है कि लकड़ी आदि का दवाब पड़ने पर भी वह टूटने न पावे । इन मेखलाओं में से नीचे की को काली, बीच की को लाल और ऊपर की को सफेद रङ्गने की परम्परा है । मेखलाओं के नीचे एक अंगुल चौड़ी तथा एक अंगुल गहरी नाली जैसी खोद देनी चाहिए, जिसमें जल भरा जाता है । कीड़े, चींटी आदि इस जल के कारण अग्नि की ओर जाने से रुक जाते हैं ।

इस तरह यज्ञशाला-यज्ञमण्डप निर्माण में निम्न बातों का अवश्य ध्यान रखा जाय-

(१) मण्डप को आकर्षक बनाने का पूरा-पूरा प्रयत्न किया जाय । आम, जामुन, अशोक आदि के जल्दी न कुम्हलाने वाले पल्लव, केले के खम्भे-पत्ती के बन्दनवार, उपलब्ध ऋतु-फूल रंग-बिरंगे, छोटे-छोटे फल यदि सूझ-बूझ के साथ लगाए जायें , तो उस प्रकृति-सम्पदा से भी मण्डप को असाधारण साज़-सज्जा के साथ सजाया जा सकता है । श्रमदान से यह वस्तुएँ आसानी से इकट्ठी की जा सकती हैं । भिन्न प्रकृति के कई वृक्ष के पत्ते क्रमबद्ध लगाए जायें, तो वे भी नयनाभिराम लगते हैं । कमल के अरबी के पत्ते भी बड़ी शोभा देते हैं । सिंघाड़े, बेर, अमरूद, करेला, टमाटर, परवल, छोटी ककड़ी जैसी वस्तुओं को यदि पत्तों के पीछे गूँथना आता हो , तो मण्डप बहुत ही सुसज्जित बन जाता है ।

(२) शहरों में जहाँ वन-सम्पदा मिलनी कठिन है, यह सब वस्तुएँ रंगीन कपड़ों की छाया झल्लर द्वार, बाँस बल्लियों पर कपड़े की लपेट से बन सकती हैं । झण्डियाँ, बेलें, फूल-पत्ते आदि यदि कागज को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काटकर बनाना आता हो, तो वह भी अपने ढङ्ग की सुन्दरता से भरा-पूरा होता है । जहाँ-तहाँ शीशे मढ़े चित्र, कपड़े पर लिखे आदर्श वाक्य यदि क्रमबद्ध रूप से लगे हों, तो उससे शोभा में और भी अधिक वृद्धि हो जाती है ।

(३) यज्ञ-वेदी के चारों ओर कई रंगों से मिलाकर कई डिजाइन के चौक पूरे जाते हैं । पिसा सीप स्टोन (सेलखड़ी) रंगकर कितने ही रंग बन जाते हैं । ड्राइंग उपकरणों की सहायता से सधे हुए हाथ ऐसे बढ़िया चौक पूरते हैं, कि उस कलाकारिता को देखकर सबका जी प्रसन्न हो जाता है । महाराष्ट्र का साँचे द्वारा रंगोली काढ़ने का ढंग भी सुगम और आकर्षक है ।

(४) यज्ञ-मण्डप ही नहीं, जहाँ आयोजन हो रहा हो, उस स्थल को झण्डियों, तोरणों से सजाया जाना चाहिए ।

(५) लम्बी बल्लियों पर बड़े आकार के अपने झण्डे लगाये जाने चाहिए । लाल मशाल के टीन से बने छोटे-बड़े स्टेन्सिल हर शाखा के पास रहने चाहिए, ताकि झण्डों का रंग फीका पड़ जाने पर झण्डा रंगाने के साथ-साथ उस पर मशाल दुबारा अङ्कित किया जा सके ।

(६) यज्ञ-मण्डप की भूमि पहले से ही समतल और लीप-पोतकर सही बना लेनी चाहिए । यदि सम्भव हो, तो मण्डप की भूमि को छः इन्च या नौ इन्च ऊँचा उठाने का प्रयत्न किया जाय ।

(७)यज्ञ-कुण्ड जमीन में खोदने की आवश्यकता नहीं है । उन्हें जमीन पर ही बनाया जाय । जमीन से मेखलाओं की ऊँचाई तक की जगह हवन-सामग्री के लिए पर्याप्त है । कुण्ड के स्थान पर वेदी भी बनाई जा सकती है । ईंटों से बनी वेदी सुरुचिपूर्ण नहीं लगती, इसलिए मिट्टी की २ या ३ इंच मोटी वेदी जल छींटकर-पीटकर बना लेनी चाहिए ।

(८) सही माप एवं आकार के कुण्ड या वेदियाँ बनाने का काम लकड़ी के साँचों से जल्दी और सुन्दर ढंग से हो जाता है । मिस्त्री जानकार न हों तो कुण्ड अक्सर बेसाइज और बेतुके हो जाते हैं । इसलिए हर शाखा के पास कुण्ड बनाने के साँचे रहने चाहिएँ ।

(९) यज्ञशाला में चारों और रस्सियों की या बाँसों की बाड़ बना देनी चाहिए, जिससे कुत्ते भीतर न आ सकें । जब यज्ञ बन्द रहे तब तक के लिए उसमें एक छोटा बाँस का दरवाजा भी रहे, जिसे बन्द करने से भीतर की सुरक्षा बनी रहे ।

(१०) एक कुण्ड की यज्ञशाला के लिए स्थान आठ फुट चौड़ा और आठ फुट से कम लम्बा नहीं होना चाहिए, एक दो फुट सुविधानुसार उसे बढ़ाया भी जा सकता है । एक कुण्ड की यज्ञशाला के चार खम्भे पर्याप्त हैं । नीचे-ऊपर पकड़ कसी रहने से वे हिलने-डुलने नहीं पातीं । कपड़े की छाया, झल्लर तथा खम्भों पर लपेटने का कपड़ा लगाने से वह सुन्दर बन जाती है । यह आवश्यकता पल्लवों से भी पूरी की जा सकती है । पाँच कुण्डी, नौ कुण्डी यज्ञशाला का बड़ा साइज होता है । बाहर(१२) खम्भे और बीच में ४ खम्भे लगाने पड़ते हैं । पाँच कुण्डों की यज्ञशाला सामान्य रूप से १८×१८ फुट और ९ कुण्डों की २४×२४ फुट स्थान लेती है । बीच में चार खम्बे ६×६ या ८×८ फुट पर गाड़े जावें, मण्डप की ऊँचाई ९ फुट से १५ फुट तक रखनी उचित है ।

(११) कुण्डों की संख्या बढ़ाने की प्रतिस्पर्धा नहीं की जानी चाहिए । साधारण आयोजनों में एक कुण्ड पर्याप्त है । यदि उपस्थिति अधिक हो तो पाँच कुण्डों या अधिक से अधिक नौ कुण्डों की यज्ञशाला बनाई जा सकती है । बहुत अधिक कुण्डों के यज्ञ नहीं किए जाने चाहिए ।

(१२) तीन मेखलाएँ-तीन रंग से रंगा देनी चाहिए । नीचे की काली, बीच की लाल तथा ऊपर की सफेद रंगनी चाहिए । वेदी बनायें तो उनके चारों ओर मेखला की प्रतीक तीन लकीरें खींची जा सकती हैं । तीनों मेखलाएँ समान ऊँचाई-चौड़ाई की होनी चाहिएँ । एक फुट लम्बा और एक फुट चौड़ा भीतरी भाग रहना पर्याप्त है । इसके लिए औसतन दो-दो इन्च ऊँचाई-चौड़ाई की प्रत्येक मेखला होनी चाहिए । नीचे वाली मेखला से सटी हुई एक नाली-पानी भरने के लिए बनानी चाहिए ।

मण्डप के भीतर सब वेदी, ग्रह स्थापना, सर्वतोभद्र आदि चक्र, पूजन सामग्री, कलश, दीपक, समिधाएँ, हवन सामग्री, घी ठीक प्रकार व्यवस्थित रूप से रख लेना चाहिए, ताकि बीच-बीच में एक वस्तु मँगाने के लिये बार-बार काम न रोकना पड़े । बुद्धिमान आचार्य का कार्य यह है, कि सभी आवश्यक सामग्री मँगाने की यजमान को पूर्व सूचना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दे दें और कार्य आरम्भ होने से पूर्व वस्तुओं की उपस्थिति देख लें, ताकि यज्ञ-कार्य निर्बाध गति से बराबर चलता रहे ।

यज्ञशाला को नियत तिथि से एक दो दिन पहले ही तैयार कर लेना चाहिए । उसे जमीन से एक फुट ऊँचा उठाया जाना चाहिए । समतल रखना चाहिए । और गाय के गोबर-मिट्टी से लीप कर शुद्ध बना लेना चाहिए । बाँस, बल्ली, गाड़ने, छाया बनाने आदि का काम भी पहले ही निपटा लेना चाहिए । यज्ञशाला पर कुत्ते आदि न चढ़ने पावें इसलिये इसके चारों ओर बाँसों की या दूसरी किसी चीज की बाड़ रहनी चाहिए । छोटे-छोटे दरवाजे भी लकड़ियों के रहें, ताकि यज्ञ-कार्य में विराम लगाने पर उसे बन्द करके कुत्तों की रोक रह सके । रात को अक्सर जब पहरे वाले सो जाते हैं, तो कुत्तों के यज्ञशाला पर चढ़ने और उसे अपवित्र करने की आशङ्का रहती है । इसलिए पहले से ही यह बाड़ बना देनी चाहिये, ताकि इस तरह की आशङ्का ही न रहे और पहरेदारी भी न करनी पड़े । यह बाड़ यज्ञशाला से दो-तीन फुट हटाकर बनानी चाहिये और नीचे जो जगह बचती है, उसमें जौ, रिजका, सरसों आदि जल्दी उगने वाले पौधे बो देने चाहिएँ । यह हरियाली देखने में बहुत सुन्दर लगती है । जहाँ-तहाँ फूलों वाले सुन्दर गमले लगाना सम्भव हो तो ऐसा भी करना चाहिए । ऐसे गमले महीने दो महीने पहले से तैयार किए जायँ तो यज्ञ के समय तक वे सुन्दर और हरे-भरे बन सकते हैं ।

यज्ञशाला के बाहर पानी का प्रबन्ध रखना चाहिए, ताकि हर व्यक्ति पहले पैर धोले, तब ऊपर चढ़े । यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि यज्ञशाला के समीप पानी फैलने से कीचड़ न होने पावे । बाड़ से बाहर परिक्रमा करने का प्रबन्ध कर देना चाहिये । यदि परिक्रमा वालों की संख्या अधिक होने की संभावना हो, तो रस्सियों का एक घेरा बाहर भी बना देना चाहिए, जिससे दर्शकों और परिक्रमा करने वालों में अन्तर बना रहे । एक ओर प्रवेश कर दूसरी ओर निकलने का रास्ता छोड़कर बाकी सब ओर रस्सियों की बाड़ बना जाय तो उससे शोभा भी बढ़ती है और सुविधा भी रहती है । यज्ञशाला पर जहाँ-तहाँ सफेदी पोतने या रङ्ग लगाने से सुन्दरता बढ़ाने की जहाँ भी गुंजाइश हो उसका प्रयत्न करना चाहिए ।

श्रौत और स्मार्त्त यज्ञों में प्रयुक्त यज्ञीय पदार्थ एवं पात्र-परिचय

श्रौत-स्मार्त्त यज्ञों में विविध प्रयोजनों के लिये पात्रों की आवश्यकता होती है । जिस प्रकार कुण्ड मण्डप आदि को विधि पूर्वक निर्धारित माप के अनुसार बनाया जाता है, उसी प्रकार इन यज्ञ-पात्रों को निश्चित वृक्षों के काष्ठ से, निर्धारित माप एवं आकार का बनाया जाता है । विधि पूर्वक बने यज्ञ-पात्रों का होना यज्ञ की सफलता के लिये आवश्यक है । नीचे कुछ यज्ञ-पात्रों का परिचय दिया जा रहा है । इनका उपयोग विभिन्न यज्ञों में, विभिन्न शाखाओं एवं सूत्र-ग्रन्थों के आधार पर दिया जाता है ।

वेदों में इनका उल्लेख इस प्रकार मिलता है-

(१) अग्निहोत्रहवणी

अग्निहोत्रहवणी एक प्रकार की सूची का ही नाम है । यह बाहुमात्रलम्बी, आगे हंसमुखी और चार अंगुल गर्त वाली होती है । इसमें स्रुवा से आज्य लेकर अग्निहोत्र किया जाता है, जिससे यह अग्निहोत्र-हवणी कही जाती है-

दक्षिणेनाऽग्निहोत्रहवणीं सव्येन शूर्पं वेषाय त्वा इति *(बौ. श्रौ. १.४)* । दस यज्ञायुधों में इसका उल्लेख अनेक स्थानों में हुआ है-

स्फ्यश्च कपालानि चाऽग्निहोत्रहवणीं च शूर्पं च कृष्णाजिनं च शम्या चोलूखलं च मुसलं च दृषच्चोपला चैतानि वै दश यज्ञायुधानि. . .

(तै० सं० १.६.८) ।

(२) अतिग्राह्यपात्र

सोमाभिषव काल में दक्षिण शकट के पास तीन पात्र, ऐन्द्रपात्र, सौर्यपात्र । इस पात्र-समूह को ही अतिग्राह्य भी कहा जाता है । कात्यायन श्रौतसूत्र में प्रातः कालीन यज्ञ में अतिग्राह्य को ग्रहण करने का

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उल्लेख मिलता है-

प्रातः सवनेऽतिग्राह्यान्गृहीत्वा

-का० श्रौ० १४.१.२६)

ध्रुवसदमिति प्रतिमन्त्रमतिग्राह्यवद्धोमः

-का०श्रौ० १४.२.१ **वीर्याय इत्यतिग्राह्यं वा षोडशिनं वावेक्षते**

-बौ० श्रौ० १४.८)

(३) अदाभ्य पात्र

यह सोमरस रखने का गूलर की लकड़ी का बना एक पात्र है, जो अग्निष्टोम आदि याग में प्रयुक्त होता है । सोम के साथ 'अदाभ्य' नाम उल्लिखित होता है-

यत्ते सोमादाभ्यं नाम जागृति तस्मै ते सोम सोमाय स्वाहा

-मैत्रा० सं० (१.३.४)

अथातोऽश्व श्वदाभ्ययोरेव ग्रहणम् ।
अश्वदाभ्यौ ग्रहीष्यन्नुपकल्पयते द्वे औदुम्बरे नवे पात्रे श्लक्ष्णमदाभ्यपात्रम्

-बा. श्रौ. १४. १२)

(४) अन्तर्धानकट

यह एक अर्धचन्द्राकार यज्ञ-पात्र है, जो गार्हपत्य आग्न पर पत्नी-संयाज (कर्मकाण्ड-विशेष) करने के समय अध्वर्यु द्वारा अपने और यजमान-पत्नी के बीच रखा जाता है, उसी समय देवपत्नियों का आवाहन होता है । यह बारह अँगुल लम्बा, छः अंगुल चौड़ा पात्र होता है, जैसा कि कहा गया-

अन्तर्धानकटस्त्वर्धचन्द्राकारो द्वादशाङ्गुलः ।

(५) अभ्रि

यह एक नोकदार (तीक्ष्णमुख) वाले डण्डे के आकार का तथा एक हाथ लम्ब उपकरण है, जो वेदिका-खनन के काम आता है । अभ्रि की तुलना वज्र से भी की गयी-**वज्रो वाऽअभ्रिः**

-शत० ब्रा० ६.३.१.३.९ ।

अभ्रिं व्याममात्रीं वारत्निमात्री बोभयतः क्ष्णूं मृदं च अन्तर्वेद्यभ्रिं निदधाति । अभ्रिया प्रहरति ऋध्यासमद्य मखस्य शिरः इति-*बौ० श्रौ० ९.१.२*

यजुर्वेद संहिता पाराशष्टांक

(६)अरणि-मंथन

अग्निहोत्री, जिससे श्रौताग्नि को प्रकट करता है, उसे अरणि कहते हैं । इसके चार अंग होते हैं- अधराणि उत्तरारणि, ओविली और नेत्र । अधरारणि पर मन्थी रखकर अग्नि-मन्थन किया जाता है । मन्थी में उत्तरारणि (लम्बा काष्ठ) का टुकड़ा काटकर काम में लेते हैं । इस मन्थी को दबाने के लिए ओविली (१२ अँगुल लम्बा काष्ठ) प्रयुक्त करते हैं । मंथन में उपयोग में आने वाली डोरी को नेत्र कहते हैं । **वपाश्रपण्यौ रशने अरणी अधिमन्थनः शकलोवृषणौ**

-शत० ब्रा० ३.६.३.१०

यह सब मिलकर अरणि-मन्थन का उपकरण पूरा होता है ।

(७) अवट

कूप और गर्त के अर्थों में प्रयुक्त किया गया है । उखा निर्माण के सम्बन्ध में इसका विवेचन होता है-

-यजु० ११.६१ उपट भा० ।

हे अवट गर्त ! अदितिर्देवी पृथिव्याः सधस्थे सहस्थाने उपरिभागे त्वा त्वां खनतु

-यजु० ११.६१ मही० भा० **तदवटं परिलिखति**

-शत० ब्रा० ३.६.१.३

(८) असि-

छेदन और विदारण कार्य में प्रयुक्त होने वाली लोहे की नुकीली शलाका को 'असि' कहते हैं । शतपथ ब्राह्मण में वज्र को ही असि कहा गया है-**वज्रोवाऽ असिः**

-शत० ब्रा० ३.८.२.१२

असिं वै शास इत्याचक्षते

(शत० ब्रा० ३.८.१.४)

(९) आज्य

तप्त घृत को आज्य कहा गया है । स्रुवा पात्रं से स्रुची में लेकर आज्य होम किया जाता है ।

रस रूप द्रव्य को भी आज्य कहा गया है-**रस आज्यम्**

-शत० ब्रा० ३.७.१.१३ ।

देवगण आज्य से ही संतुष्ट होते हैं-

एतद्वै जुष्टं देवाना यदाज्यम्

-शत० १.७.२.१० ।

अखण्ड हवन में सूर्यास्त के बाद के प्रत्येक प्रहर में क्रमशः आज्य, सतू, धाना और लाजा से हवन करने को कहा गया है-

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आज्यसक्तू धानालाजानामेकै जुहोति

-का० श्रौ० २०.४.३२ ।

(१०)आज्यस्थाली

याग में आज्य रखने के पात्र को आज्यस्थाली कहते हैं । आज्यस्थाली में से स्रुवा आज्य जुहू में, आठ स्रुवा उपभृत् में और चार स्रुवा ध्रुवा में भरने को कहा गया है-

स्रुवेणाज्यग्रहणं चतुर्जुह्वा...। अष्टावुपभृति ....। ध्रुवयाञ्च जुहूवत् (का० -श्रौ० २.७.९.१०. १५ ।

वेद ७ होता **स्रुकस्रुवमध्वर्युराज्यस्थालीमग्नीदादाय**

-का० श्रौ० ३.६.२१ ।

(११) आदित्य-ग्रह

आदित्य ग्रह प्रतिप्रस्थाता नामक ऋत्विज् से सम्बन्ध है, जो द्रोणाकलश से सोम को आदित्य ग्रह में लेकर होम करते हैं-

होमाय प्रतिप्रस्थाता आदित्यग्रह पात्रेण द्रोणकलशत् सोमं गृहणति ।

यजुर्वेद भाष्यकार उवट और महीधर ने आदित्य ग्रह से सम्बन्धित इसी तथ्य की पुष्टि की है - **आदित्यग्र संस्रवोत्यर्थं प्रतिप्रस्थाता आदित्यपात्रे द्रोणाकलशादुपयामगृहीतेऽसीति गृहीत्वा द्विदेवत्याननुजुहोति**

-यजु० ८.१ उ० भा० ।

अष्टमे तृतीय सवनगता आदित्यग्रहादिमंत्रा उच्यन्ते

(यजु० ८.१ महीo भा०) ।

आदित्यग्रह रस-युक्त ही रहता है -**अथैष सरसो ग्रहो यदादित्यग्रहः** (कौषी० ब्रा० १६.१) । आदित्यग्रह से याग करने से गायों की वृद्धि होती है-

आदित्यग्रहं (अनु) गावः (प्रजायन्ते)

-तैत्ति० सं० ६.५.१०.१ ।

(१२) आसन्दी

आसन या आश्रय फलक के अर्थ में प्रयुक्त हुई है । औदुम्बर, खदिर आदि काष्ठ की मूँज की डोरी से बीनी हुई खटौली को आसन्दी कहते हैं । वाजपेय याग और सौत्रामणी याग में यजमान को इस पर बिठाकर उनका अभिषेक किया जाता है । अग्निष्टोम याग में धर्मपात्र रखने के लिए धर्मासन्दी और सोमपात्र रखने के लिए सोमासन्दी होती है । अग्निचयन याग में इस पर उखा रखी जाती है । उद्गाता, राजा आदि को बिठाकर अभिषेक करने की आसन्दी उद्गातृ-आसन्दी राजासन्दी आदि कही जाती है-

पुरस्तादुद्गात्रासन्दीवदासन्द्यां चतुरश्राड्ग्याम्

-का० श्रौ० १६. ५.५ । आसन्दी पर अधिष्ठित होने की महत्ता ब्राह्मण ग्रन्थ में दी गयी है-

इयं वा आसन्द्यस्या ७ हीद ७ सर्वमासन्नम् अर्थात् यह आसन्दी है, क्योंकि इस पर सब कुछ आसन्न (रखा हुआ) है

-शत० ब्रा० ६.७.१.१२ ।

(१३) इडापात्री

अध्वर्यु, याग के बाद शेष बचे हविर्द्रव्य को इडापात्री में रखकर होता को देते हैं । इडा पात्री में शेष इस द्रव्य को 'इडा' कहते हैं । होता द्वारा मन्त्र पाठ के अनन्तर ऋत्विज् और यजमान इडा भक्षण करते हैं-**इडा ७ होत्रे प्रदायाविसृजन् दक्षिणाऽतिक्रामति ।**

-का० श्रौ० ३.४.५।

इडापात्री एक हाथ लम्बी, छह अंगुल चौड़ी एवं बीच में गहरी होती है ।

(१४) इष्टका

अग्निचयन के प्रसंग में इष्टकाओं (ईंटों) का प्रयोग होता है । चिति-संरचना ईटों के माध्यम से की जाती है । ईंट-निर्माण की मिट्टी में राख का मिश्रण उचित होता है । चिति-निर्माण में विकृत, भंग और अधपकी ईंटों के प्रयोग को निषिद्ध कहा गया है-**न भिन्नं न कृष्णामुपदध्यात् ।**

-शत० ब्रा० ८.७.१६ ।

ईंटों के यजुष्मती, मण्डल, वृषभ, विकर्णी आदि भेद भी उल्लिखित हैं-

मण्डलमृषभं विकर्णीमितीष्टकासु लक्ष्मणि प्रतीयात्

(बौधा० शु० २.१९) ।

(१५) उखा

मिट्टी की बनायी मंजूषा को उखा कहते हैं । अग्निहोत्री वनीवाहन कर्म में उखा पात्र में अग्नि को लेकर प्रवास में जाते हैं । उखा पात्र में अंगश्रयण भी होता है । उखा पात्र में अग्नि की स्थापना करके उसका भरण करना उखा संभरण कहलाता है-**उखा संभरणमष्टभ्याम् ।**

-का० श्रौ० १६.२.१

शतपथ ब्रा० के अनुसार उखा की ऊँचाई, लम्बाई और चौड़ाई एक प्रादेश (बालिश्त) की

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होती है-**तां प्रादेशमात्रीमेवोर्ध्वाम् करोति ।**

-शत० ६.५.२.८ ।

इसे यज्ञ की मूर्धा (सिरा) भी कहा गया है-**शिर एतद्यजम्य यदुखा** *-का० सं० १९६ ।*

(१६) उपभृत्

यह जुहू के नाप और आकार की अश्वत्थ (पीपल) काष्ठ की बनी एक स्रुची है । जुहू का आज्य समाप्त होने पर इसके आज्य को जुहू में लेकर आहुति दी जाती है-**आश्वत्थ्युपभृत**

-का० श्रौ० १.३.३.६ ।

आज्यस्थाली में से चार स्रुवा आज्य जुहू में आठ स्रुवा उपभृत् में और चार स्रुवा ध्रुवा में रखने का विधान है । जुहू के उत्तर में उपभृत् और उसके उत्तर में ध्रुवा पात्र रखे जाते हैं । 'वाचस्पत्यम्' में भी इसे एक स्रुचि भेद कहा गया है-

आश्वत्थे यज्ञाङ्गपात्रभेदे स्रुचि *-वा० पृष्ठ १२३३ ।*

पाणिभ्यां जुहूं परिग्रह्योपभृत्या धानम्

आश्व० गृ० १.१०.९ ।

(१७) उपयमनी

उपयमनी अग्नि-प्रस्थापन करने का मिट्टी का एक पात्र है । चातुर्मास्य याग में अध्वर्यु और प्रतिप्रस्थाता गार्हपत्य अग्नि में से इन पात्रों में अग्नि निकालकर उत्तरवेदी और आहवनीय में अग्नि का प्रस्थापन करते हैं । जुहू से बड़े आकार की एक स्रुची भी उपयमनी कहलाती है । उपयमनी से धर्मपात्र में आज्य लेने को कहा गया है-

उपयमन्यासिञ्चति धर्मे *-का० श्रौ० २६.६.१*

वाचस्पत्यम् में इसका सम्बन्ध अग्न्याधान से बताया गया है-**अग्न्याधानाङ्ग सिकतादौ** ।

-वा० पृ० १२८२ ।

उपयमनीरुपकल्पयन्ति *शत० ब्रा० ३.५.२.१ ।*

उपयमनीरुपनिवपति *का० श्रौ० ५.४.१८ ।*

(१८) उपयाम

'उपयाम' याग का काष्ठ निर्मित एक ग्रह पात्र है, जो सोम आदि द्रव रखने के उपयोग में आता है-

यज्ञाङ्गे ग्रहरूपे पात्रभेदे-*वा० पृ० १२८३ ।*

यजुर्वेद में उपयाम शब्द अनेक बार उल्लिखित हुआ है-**उपयाम गृहीतोऽसि** *-यजु० ७.४ ।*

वातं प्राणेनापानेन नासिके उपयाममधरेण....

-यजु० २५.२ ।

यही तथ्य संहिता में भी उल्लिखित है - **उपयाममधरेणौष्टेन**

-मैत्रा० सं० ३.१५.२ ।

(१९) उपवेष (धृष्टि)

यह यज्ञ का एक काष्ठ पात्र है । इसका आकार आगे से पंजे का और पीछे डंडे जैसा तथा नाप से एक हाथ लम्बा होता है । अग्निहोत्री इसका उपयोग 'खर' की अग्नि को इधर-उधर हटाने में करते हैं-**अङ्गार विभजनार्थे काष्ठे** *-वा० पृ० १३३० ।* इसे धृष्टि भी कहते हैं-

स उपवेषमादने धृष्टिरसीति *-शत० ब्रा० १.२.१.३ ।*

धृष्टिरसी त्युपवेषमादायापाग्न इत्यङ्गारान् प्राचः करोति

का० श्रौ० २.४.२५ ।

उपवेषोऽङ्गारापोहन समर्थ हस्ताकृति काष्ठम्

-का० श्रौ० २.४.२५ का० भा० ।

पलाश शाखा के मूल को काटकर उपवेष निर्माण करने को कहा गया है-**मूलादुपवेषं करोति**

-का० श्रौ० ४.२.१२ ।

(२०) उपसर्जनी

ताँबे की जिस बटलोई में याग के लिए जल लिया जाता है, जल सहित वह पात्र उपसर्जनी कहलाता है । उपसर्जनी (जलपात्र) को गार्हपत्य अग्नि पर तपाना उपसर्जनी अधिश्रयण कहलाता है **-उपसर्जनीरधिश्रयति** *-का० श्रौ० २.५.१ ।* इसके बाद इसे अध्वर्यु के निकट लाने को कहा गया है-**उपसर्जनी राजयत्यन्यः** *-का० श्रौ० २.५.१२ ।*

(२१) उपांशु (ग्रह)

जिन पात्रों को हाथ में लेकर यज्ञ-कार्य सम्पन्न किया जाता है, उन्हें ग्रह कहते हैं-

तद्यदेनं पात्रैर्व्यवगृहणात् तस्माद्ग्रहा नाम *-शत० ब्रा० ४.१.३.५ ।* अध्वर्यु उपांशु ग्रह से याज्ञिक कार्य (सोमाहुति) करते हैं-**उपांशु यजुषा.**-*मैत्रा० सं० ३.६.५* उपांशु ग्रह को मन्त्र से शुद्ध करके हवन करना चाहिए-

उत्तरादुपांशुं जुहुयात् ..-*कपि० क० सं० ४२.१ ।* याग के बाद भी उसका सम्मार्जन किया जाता है-**उपांशुग्रहं हुत्वा पात्रमार्जन कुर्यात्** *-यजु० ७.३ मही० भा० ।* उपांशु सवन (बट्टा) को उपांशु (ग्रह) के निकट रखा जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(२२) उलूखल

उलूखल हवि रूप द्रव्य पदार्थ को कूटने का एक काष्ठ-पात्र है । पुरोडाश निर्माण के निमित्त जौ या ब्रीहि भी इसी से कूटा जाता है **धान्यादिकण्डनसाधने काष्ठमये पात्रे तच्च यज्ञियपात्रभेदः** *-वा० पृ० १३७० ।* कात्यायन श्रौत सूत्र में उलूखल-मुसल का उल्लेख मिलता है- **उलूखलमुसले स्वयमातृण्णामुत्तरेणारत्निमात्रेऽ औदुम्बरे प्रादेश मात्रे चतुरश्रमुलूखलं मध्यङ्गृहीतमूर्द्ध वृत्तं** *-का० श्रौ० १७.५.३ ।* **अथोलूखलमुसलेऽ उपदधाति** *-शत० ब्रा० ७.५.१.१२ ।*

(२३)-ऋतुग्रह

अग्निष्टोम याग में ऋतुग्रह नामक उपयाम पात्र का समानयन किया जाता है ? ऋतुग्रह से सोम रसाहुति दी जाती है । इस कार्य के ऋत्विज्, अध्वर्यु और प्रतिप्रस्थाता होते हैं । ऋतुओं की संख्या बारह है । अतएव ऋतुग्रह से बारह सोम आहुतियाँ समर्पित की जाती हैं-**ऋतु ग्रहैश्चरत...**

-का० श्रौ० ९.१३.१।

द्वादश वै मासा संवत्सरस्य तस्मात् द्वादशगृहणीयात्

-शत० ब्रा० ४.३.१.५।

ऋतु ग्रह से प्रातः सवन में आहुतियों का विधान है- **ऋतुग्रहैः प्रातः सवनमृतुमत ।**

-मैत्रा० सं. ४.६.८ ।

ऋतुग्रहों की उत्पत्ति सोम-पानक इन्द्र के साथ हुई बताया गया है-**सोमपा प्रातः सवनमृतुमत् ।**

-मैत्रा० सं० ४.६८ ।

ऋतुग्रहों की उत्पत्ति सोम पानक इन्द्र के साथ हुई बताया गया है-**सोमपा इन्द्रस्य सजाता यद् ऋतुग्रहाः ।**

-कपि० क० सं० ४४.२

ऋतुग्रह पात्र से आहुति देने पर प्राणियों की वृद्धि होना बताया गया है- **ऋतुपात्रमेवान्वेकशफं प्रजायते ।**

-शत० ब्रा० ४.५.५.८ ।

(२४) करम्भपात्र

चातुर्मास्य याग में प्रतिप्रस्थाता जौ के आटे का करम्भपात्र बनाता है । इसका आकार डमरू जैसा और नाप अंगुष्ठ पर्व जितना होता है । इनकी संख्या यजमान की प्रजा (सन्तान) से एक अधिक रखी जाती है- **तेषां करम्भपात्राणि कुर्वन्ति यावन्तो गृह्याः स्मुस्तावन्त्येकेनारिक्तानि ।**

-शत० ब्रा० २.५.२.१४ ।

पूर्वेद्युर्दक्षिणाग्नौ निस्तुषाम भृष्टयवानां करम्भपात्र क णम् । यावन्तो यजमानगृह्या एकाधिकानि ।

(का० श्रौ० ५.३.२.३)।

(२७) कुश (दर्भ)

कुश का प्रयोग याज्ञिक कृत्यों में विशेषतः किया जाता है । चारों दिशाओं में कुशकण्डिका आस्तरण एवं जल प्रोक्षण के निमित्त इसका प्रयोग होता है । शोधन-कारक होने के कारण इसे जल रूप भी माना गया है-**आपो हि कुशा** *-शत० ब्रा० १.३.१.३।* कुश का पर्यायवाची शब्द दर्भ माना गया है । दर्भ को मन्युशमन करने वाला कहा गया है । दर्भ का औषधीय प्रयोग द्रष्टव्य है-**उभयं वेतदन्नयद्दर्भा आपश्च होता ओषधयश्च या ।**

-शत० ब्रा० ७.२.३.२ ।

अपां वा एतदोषधीनां तेजो यद्दर्भाः

-काठ० सं० ३०.१० ।

दर्भ की शुद्धता याज्ञिक कृत्य में महत्वपूर्ण होती है-**ते हि शुद्धा मेध्याः।**

-शत० ब्रा० ७.३.२.३ ।

(२६) ग्रह पात्र

जिन पात्रों में हवन सामग्री या द्रव पदार्थ रखे जाते हैं, उन्हें ग्रह कहा गया है । सोमाभिषव काल में निचोड़े हुए सोम को एकत्र करने के लिए इस ग्रह पात्र को छन्ने के नीचे रखा जाता है-**यद् गृह्णाति तस्माद् ग्रहः -**

शत० ब्रा० १०.१.१.५।

यद्वित्तं (यज्ञम्) ग्रैहैर्व्यगृह्णत तद् ग्रहाणां ग्रहत्वम् ।

-ऐत० ब्रा० ३.९ ।

इनका पवित्र प्रोक्षण करने के बाद इसे ग्रहण कर सोमाहुति दी जाती है-**तान् पुरस्तात् पवित्रस्य व्यगृहणात् ते ग्रहा अभवन्** *-तैत्ति० ब्रा० १.४.१.१ ।*

(२७) चमस होतृ अच्छावाक्, उद्गातृ आदि

चमस यज्ञीय सोमपात्र को कहते है- **पलाशादिकाष्ठ जाते यज्ञियपात्रभेदे तल्लक्षणभेदादिकं**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञपार्श्वे । सोमपानपात्रभेदे च *-वा० पृ० २८९५।* **तच्चाविशेषेऽपि सति चतुरश्रं स्यात् "चमसेनापः प्रणयति" इति** *-का० श्रौ० २.३.१ का० भा० ।* अच्छावाक् होता का सहकारी ऋत्विज् होता है । इनके द्वारा उपयोग में लाए जाने वाले अच्छावाक् चमस और उद्गाता एवं अध्वर्यु के नाम पर क्रमशः उद्गातृ चमस एवं चमसाध्वर्यु प्रयुक्त किये जाते हैं । **सोमस्य प्रतिष्ठा चमसोऽस्य प्रतिष्ठा सोमः स्तोमस्य स्तोम उक्थानां ग्रहं वा गृहीत्वा चमसं ।**

-बौधा० श्रौ० १४.२ ।

अच्छावाकचमसमेवैते त्रयः समुपहूय भक्षयन्ति ।

-बौध० श्रौ० ७.२० ।

(२८) चर्म (कृष्णाजिन, शार्दूल, आदि)

याज्ञिक कार्यों में चर्म का विविध प्रयोग पाया जाता है । इनका प्रयोग मुख्यतः आस्तरण के रूप में किया जाता है । फलों पर बिछाकर उनकी रक्षा की जाती थी । चर्म पर सोम को पत्थर से कूटते थे तथा उसके रस को निकालते थे । गाय, मृग, मेष, व्याघ्र आदि के चर्म का उल्लेख यज्ञ-कार्यों में हुआ है- **व्याघ्र चर्मारोहति** *-यजु० १०.५. उ० भा०।* पौर्णमासयाग में अध्वर्यु कृष्णाजिन को हाथ में लेकर विविध क्रियाएँ करते हैं-**कृष्णाजिनादानम्** *-का० श्रौ० २.४.१ ।*

चर्म से चमस बनाकर भी याज्ञिक-कार्य सम्पन्न होते हैं-**अथ होत्राणां चमसानभ्युन्नयन्ति ।**

-शत० ब्रा० ४.२.१.३१ ।

कृष्ण मृग के चर्म को कृष्णाजिन और व्याघ्र या सिंह के चर्म को शार्दूल कहा जाता है : **कृष्णाजिनमादत्ते** *-शत० ब्रा० १.१.४.४ ।* **मृत्योर्वा एषवर्णः । यच्छार्दूल ।**

-तैत्ति० ब्रा० १.७.८.१ ।

(२९) चात्वाल

चातुर्मास्य या अग्निष्टोम याग की वेदिका से उत्तर की ओर चात्वाल बनाया जाता है । यह एक विशेष यज्ञकुण्ड होता है, जिसकी नाप ३२×३२×४ अंगुल है । इसका उल्लेख कात्यायन श्रौत्यायन श्रौतसूत्र में अनेक स्थानों पर मिलता है-

शय्यामादाय चात्वलं मिमीते *-का० श्रौ० ५.३.१९।*
विददग्निरिति चात्वाले प्रहरति *-का. श्रौ. ५.३.२३।*
चात्वालोत्करावन्तरेण सञ्चरः *-का० श्रौ० १.३.४१ ।*

वाचस्पत्यम् में इसका एक अर्थ है-उत्तरवेदी में स्तूप का स्थान **उत्तरवेद्यङ्गे भृत्स्तूपे** *-वा० पृ० २९१२ ।*

(३०) जुहू

याग में हविर्द्रव्य अर्पित करने के निमित्त प्रयुक्त होने वाली स्रुची को जुहू कहते हैं । यह पलाश काष्ठ की, एक अरत्नि (बाहुमात्र नाप की आगे में चार अंगुल गर्तवाली और हंसमुखी होती है-**यज्ञिये स्रुगाख्ये पात्रभेदे सा च पलाशघटिता** *-वा० पृ० ३१४२ ।* **पालाशी जुहूः** *-का० श्रौ० १.३.३५ ।* **पर्णमयी जुहूः** *तै० -सं० ३.५.७.२ ।* इसे यज्ञ का मुख और द्युलोक की उत्पत्तिकारक कहा गया है-**जुहूर्वैयज्ञमुखम्** *-मैत्रा० सं० ३.१.१.।* **जुह्वेहि घृताची द्यौर्जन्मना ।**

-काठ० सं० १.११ ।

(३१) दण्ड

अग्निष्टोम याग में यजमान को ब्रह्मचर्य पूर्वक जीवन यापन करते हुए परिभ्रमण करना पड़ता था, इसलिए उस समय दण्डधारण का विधान आत्मरक्षार्थ किया गया था-दण्डोदेवता ! **हे वनस्पते वृक्षावयव दण्ड, उच्छ्रयस्व उन्नतो भव । ऊर्ध्वोभूत्वा अंह सः पापात् मा मां पाहि रक्ष । तत्र कालावधिरुच्यते** *-यजु० ४.१० महो० भा० ।* याग में यजमान को मुँह के बराबर तक ऊँचाई वाला औदुम्बर काष्ठ का दण्ड धारण कराया जाता है-**मुखसम्मितमौदुम्बरं दण्डं प्रयच्छति** *-का० श्रौ० ७.४.१ ।* दण्ड को वज्र का प्रतीक माना गया है-**वज्रो वै दण्डो विरक्षस्तायै**

-शत० ब्रा० ३.२.१.३२ ।

(३२) दर्वि

यह विकङ्कत काष्ठ की बनी हुई और कलछुल के आकार की होती है । चातुर्मास्य याग में इसी से हवि रूप द्रव्य की आहुतियाँ दी जाती हैं- **दर्व्याऽऽदत्ते पूर्णादर्वीति** (का० श्रौ० ५.६.३०)। **अग्निहोत्रं च हुत्वा अहुत्वा वा दर्विहोमः कर्त्तव्यः**

-का० श्रौ० ५.६.३० का० भा० ।

एष खलु वै स्त्रिया हस्तो यद् दर्वि

-मैत्रा० सं० १.१०.१६ ।

(३३) द्रोणकलश

द्रोणकलश में सोमरस छाना जाता है । यह विकङ्कत काष्ठ का मध्य में गर्तवाला और चारों ओर परिधि वाला होता है । इसकी लम्बाई अठारह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अँगुल और चौड़ाई बारह अँगुल रहती है-**अतिरिक्तं वा एतत् पात्राणां यद् द्रोण कलशः** (कपि० क० सं० ४४.९)। **आहवनीयं गच्छत्यादाय ग्राव द्रोणकलश सोमपात्राणि** *-का० श्रौ० ८.७.४ ।* **द्रोणकलशस्य स्वशब्दाभिधानात् सोमपात्रशब्देन ग्रहपात्राणि गृह्यन्ते** *-का० श्रौ० ८.७.४ का० भा० ।* **स्रुचश्च में चमसाश्च मे वायव्यानि च मे द्रोणकलशश्च मे....।**

-यजु० १८.२१ ।

(३४) धृष्टि

यह एक हाथ लम्बा पलाश काष्ठ का पात्र है, जो कपाल उपधान से पूर्व अग्नि हटाने के काम आता है-

धृष्टिरसीत्युपवेषमादाय इत्यङ्गारान्ग्राचः करोति *-का० श्रौ० २.४.२५ ।* इसे उपवेश रूप वाला यज्ञीय पात्र भी माना **गया है- धृष्टिरस्यपाग्ने अग्निमामादं** *-यजु० १.१७ ।* **हे उपवेश त्वम् धृष्टिरसि प्रगल्भोऽसि** *-यजु० १.१७ मही० भा० ।* **अनेनाग्निर्धृष्टमुपचरतीति धृष्टिः** १.१७ उ० भा० **धृष्टी शतमाने** *-का० श्रौ० २६.२.१० ।* **धृष्टिभ्यांभस्मना परिकीर्याङ्गैरश्च**

-का० श्रौ० २६.३९ ।

स यदनेन अग्निं धृष्णिवबोपचरति तेन धृष्टि

-शत० ब्रा० १.२.३ ।

(३५) ध्रुवा

यह जुहू के नाप और आकार की एक स्रुची है। इसी पात्र का आज्य स्रुवा से लेकर जुहू में छोड़ते हैं और हवन करते हैं-**एत्य जुह्वाऽभिधारणं ध्रुवाया हविषऽउपभृतश्च** *-का० श्रौ० ३.३.९ ।* **आप्यायतां ध्रुवा हविषा घृतेन यज्ञम्** *-का० श्रौ० ३.३.१२ ।* यज्ञ की उत्पत्ति ध्रुवा से मानी गयी है-

ध्रुवाया एव सर्वो यज्ञः प्रभवति ।

-शत० ब्रा० १३.२.२)

(३६) निग्राभ्या

यह पात्र सोमाभिषव में प्रयुक्त होता है । द्रोण-कलश के ऊपर दशापवित्र छत्रक रखते हैं । पवित्र के मध्य में सुवर्ण रखते हैं । उसके ऊपर निग्राभ्या पात्र रखते इसमें सोमरस छोड़ते हैं, जो छनकर नीचे रखे ग्रहपात्रों में एकत्र होता है । सोमाभिषव में यजमान को जो होतृ चमस देते हैं, उसे निग्राभ्या भी कहते हैं । इसके जल को सोम पर छिड़कने का विधान है-**तद्यदेना उरसि (इन्द्रः) न्यगृह्णीत तस्मान्निग्राभ्या नाम** *-शत० ब्रा० ३.९.४.१५ ।*

या मैत्रावरुणस्य चमसे याश्च निग्राभ्यास्त

-मैत्रा० सं० ४.५.२ ।

(३७) पयोग्रह

सौत्रामणीयाग में जिस ग्रहपात्र से पयोहवन होता है, उसे पयोग्रहपात्र कहते है-**पयसो दुग्धस्य ग्रहः, ग्रह आधारे अच् । यज्ञिय पात्र भेदे** *-वा० पृ० ४२३२* पयोग्रह का याग उत्तरवेदी में होता है । गोदोहन करके उत्तरवेदी में पयोग्रह और दक्षिणवेदी में सुराग्रह का एक चतुरस्र खर पर आसादन करते हैं-**उत्तरेऽग्नौ पशुभिः पुरोडाशै पयोग्रहैरिति चरन्ति** *-शत० १२.९.३.१४* अध्वर्यु पयोग्रह पात्र को स्पर्श करते हैं-

पयोग्रह सम्मर्शनम् *-का० श्रौ० १९.२.२९ ।*

(३८) परिस्तरण

तीन दर्भ को एकत्र करके मूल में एक गाँठ लगाकर परिस्तरण तैयार करते हैं । इन्हें गार्हपत्य इत्यादि खरों के चारों ओर रखते हैं- **तृणैरग्नीपरिस्तीर्य** *-का० श्रौ० २.३.६ ।* **दर्भैः स्तृणन्ति हरितै सुवर्णैः आचरन्ति हि दर्भैः परिस्तरणम्** *-का० श्रौ० २.३.६ का० भा० ।* ये पूर्व-पश्चिम दिशा में उदग्र और उत्तर तथा दक्षिण दिशा में पूर्वाग्र रखे जाते हैं ।

(३९) परीशास-

परीशास महावीर पात्र को अग्नि से पकड़कर उठाने का काष्ठ का एक सन्देश (चिमटा) है- **परीशासावादत्ते** *-का० श्रौ० २६.५.१३ ।* **ताभ्यां महावीर प्रतिगृह्णाति** *-का० श्रौ० २६.५.१५. ।* **'ताभ्याम्' इति परीशासावुच्येते** *-का० श्रौ० २६.५.१५ कर्क भा० ।* प्रवर्ग्य विधान में गार्हपत्य के सामने जोड़े के रूप में ये पात्र रखे जाते हैं -

उपयमनीं महावीर परीशासौ पिन्वने

-शत० १४.१.३.१ ।

(४०) पुरोडाश पात्री

संस्कार के अन्तर पुरोडाश रखने का पात्र पुरोडाश-पात्री कहलाता है । यह प्रादेशमात्र एक चतुरस्र पात्र है । पुरोडाश और भोज्य दोनों रूप में प्रयुक्त होता है । यह जौ या व्रीहि के आटे का बनता है । इसका पाचन कपालों पर किया जाता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । पौर्णमासयाग में पुरोडाश पात्री के सम्मार्जन का विधान बताया गया है-

तूष्णी प्राशित्रहरणं शृतावदानं पात्री च । सम्मार्जनान्यपास्यति

-का० श्रौ० २.६.४२.४३ ।

(४१) प्रणीता

यह वारण (काला शीशम) काष्ठ की विनिर्मित बारह अंगुल लम्बी, छह अंगुल चौड़ी होती है । यह चार अंगुल गहरी और परिधियुक्त होती है, जिसमें जल भरकर रखा जाता है । इसके मूल में दो अंगुल डण्डा होता है । दर्शपौर्णमास याग में अध्वर्यु ब्रह्मा से अनुमति लेकर प्रणीता को आह्वनीय के उत्तर में रखता है-

उत्तरेणाऽऽहवनीयं सम्प्रति निदधाति *-का० श्रौ० २.३.३ ।*
प्रणीतानाम् आपो मन्त्रसंस्कृता आहवनीयस्योत्तरतो निहिताः *-आश्व० श्रौ० १.१४ नारा० वृ ।*
यदापः प्राणयंस्तस्मादापः प्रणीतास्तत्प्रणीतानां प्रणीतात्वम् *-शत० ब्रा० १२.९.३.८ ।*

(४२) प्राशित्र

इस पात्र में हविर्द्रव्य रखकर अध्वर्यु इसे ब्रह्मा को निवेदित करते हैं । एक दूसरे पात्र से इसे ढक भी दिया जाता है । ब्रह्मा इसी पात्र में हविर्द्रव्य को प्रसादस्वरूप ग्रहण करते हैं । यह पात्र आयताकार होता है, जो पाँच अंगुल लम्बा और चार अंगुल चौड़ा होता है । इसमें रखा घृतसिक्त पुरोडाश का ब्रह्मा द्वारा भक्षण प्राशित्रप्राशन कहलाता है-

ननुप्राशित्रसमर्पणार्थं कस्मान्न भवति । प्राशित्रमिति ब्रह्मणो भागः *-का० श्रौ० ३.४.१ क० भा० ।*
सञ्चरमभ्युक्ष्य प्राशित्रमवद्यति *-का० श्रौ० ३.४.१ ।*
मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्ष इति प्राशित्रं प्रतीक्षते ।

-का० श्रौ० २.२.१३ ।

यत्प्राशित्रं तदस्मै पर्याहार्षुस्तत्पाशीदथ यमस्मै ब्रह्मभागं पर्याहरन्ति

-शत० ब्रा० १.७.४.१८ ।

(४३) प्रोक्षणी

याज्ञिक कार्य के लिए यज्ञोपयोगी समस्त पदार्थों का शुद्धिकरण किया जाता है । हविर्द्रव्य, पात्र-उपकरण, वेदिका आदि का जल से मंत्र-अभिषिञ्चन ही प्रोक्षण है । अभिषिञ्चन से समय जल अग्निहोत्रवणी में रखा जाता है । प्रोक्षण-जल को आश्रय देने वाली पात्री प्रोक्षणी कही जाती है-

प्रोक्षितास्थेति तासां प्रोक्षणम् *-का० श्रौ० २.३.३५ ।*
असञ्चरे प्रोक्षणीर्निधाय *-का० श्रौ० २.३.३९ ।*
प्रोक्षणीरासादयेध्मं *-का० श्रौ० २.६.२६ ।*

(४४) मणिका

यह एक विशाल आकार का पात्र होता हैं, जिसमें प्रचुर मात्रा में जल भरा रहता हैं । इसे यज्ञशाला में सुरक्षित रखा जाता है । आवसथ्याधान के अनन्तर अग्नि से रक्षा के निमित्त यह जल अत्यन्त उपयोगी होता है । अग्निष्टोम याग में यज्ञोपयोगी जल का आनयन सूर्यास्त से पूर्व नदी से किया जाता है । यदि सूर्यास्त से पूर्व जल का आनयन न हो, तो मणिका पात्र से ही जल की पूर्ति की जाती है ।

(४५) महावीर

अग्निष्टोम इत्यादि याग में प्रवर्ग्य-विधान (अनुष्ठान विधान) विहित है । महावीर पात्र सम्बन्धी कृत्य प्रवर्ग्य-विधान के अंतर्गत आते हैं । प्रवर्ग्य और धर्म परस्पर पर्याय हैं । महावीर पात्र आज्य बनाने के लिए प्रयोग किये जाने वाले मिट्टी के पात्र होते हैं । इसे बीच में दो जगह कुछ सँकरा बनाया जाता है । इसमें घी भरकर खूब तप्त किया जाता है । इस तप्त घृत (आज्य)में दूध छोड़ते हैं । दूध छोड़ते ही तेज आवाज के साथ ज्वालायें निकलती हैं । तत्पश्चात् आहवनीय में उसी पात्र से हवन करते हैं । आहुति से बचे हविर्द्रव्य का ऋत्विज् लोग पान करते है-

महावीरं परिषिञ्चति स्रुवेण प्रतिप्रणवम्

-का० श्रौ० २६.४.५ ।

तेषु महावीरमाज्यवन्तमर्चिरसीति *-का० श्रौ० २६.३.४*
तदेतं प्रचरणीयं महावीरमाज्येन समनक्ति *-शत० ब्रा० १४.१.३.१३ ।* इसे यज्ञ का शिर कहा गया है-**शिरो वा एतद्यज्ञस्य यन्महावीरः** *-कौषी० ब्रा० ८.३ ।*

(४६) माहेन्द्र ग्रह

माहेन्द्र माध्यन्दिनीय ग्रह माना गया है । इसके सेवन से यजमान की कामनाओं की सिद्धि होती है-

माहेन्द्रग्रहः इति माध्यन्दिनीया ग्रहा...तत्सवनाच्च बहवो यजमानस्य कामाः सिध्यन्ति *-य० स० पृ० १५४ ।*

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

माहेन्द्र ग्रह को शुक्रपात्र में ग्रहण करना चाहिए-**अथ माहेन्द्रग्रहं शुक्रपात्रेण गृह्णीयात्** *-य० स० पृ० १८५ ।* **माहेन्द्रं गृह्णाति वैश्वदेवन्महाँ इन्द्र इति** *-का० श्रौ० १०.३.११ ।* माहेन्द्र ग्रह से दक्षिण नाम होम और आग्नीध्र अग्नि में आज्याहुति दी जाती है ।

(४७) मुसल

यह खदिर काष्ठ का एक यज्ञ पात्र है । यह बारह अंगुल लम्बा और गोल आकार का होता है । जौ, ब्रीहि इत्यादि हविर्द्रव्य इसी उपकरण से कूटे जाते हैं । सोमाभिषव कार्य में सोम भी इसी से कूटा जाता है-**मुस्यति खण्डयति इति मुसलम्** । बौधायन श्रौतसूत्र में उलूखल-मुसल द्वारा दक्षिणाभिमुख होकर हविर्द्रव्य कूटने का विधान पाया जाता है-**चर्मण्युलूखलमुसले विधायावहन्ति सकृदेव दक्षिणामुखः** । *-श्रौ० को० पृ० ३०९ ।* दस यज्ञायुधों के अन्तर्गत मुसल का नामोल्लेख पाया जाता है-**स्फ्यश्च कपालानि चाऽग्निहोत्रहवर्णी च शूर्प च कृष्णाजिनं च शय्या चोलूखलं च मुसलं च दृषच्चोपला चैतानि वै दशयज्ञायुधानि** *-मै० सं० १.६.८ ।*

(४८) यूप

पशु याग में पशु-बन्धन के निमित्त यूप का प्रयोग किया जाता है । यह तीन, पाँच से लेकर इक्कीस हाथ तक लम्बा रखा जाता है । ये यूप पलाश, बिल्व, खदिर आदि काष्ठ के लिए जाते हैं-**पशवे वै यूपमुछ्रयन्ति** *-शत० ब्रा० ३.७.२.४ ।* अध्वर्यु प्रतिप्रस्थाता को यूप के निकट पशु लाने का प्रैष आदेश करते हैं । अध्वर्यु यूप में पशु का नियोजन और प्रोक्षण करते हैं । यूप के खण्ड या टुकड़े को 'यूप शकल' कहते हैं । इसे वज्र का प्रतिरूप माना गया है-**वज्रो वै यूपशकलः** *-शत० ब्रा० ३.८.१५ ।* शत० ब्रा० में पलाश यूप की महत्ता कही गयी है-**यः पलाशं यूपं कुरुते तस्मात्पालाशमेव यूप कुर्वीत**

-शत० ब्रा० ११.७.२.८ ।

(४९) रज्जु-बन्धन कार्य के निमित्त रज्जु का प्रयोग किया जाता है । यज्ञ में काष्ठ-बन्धन एवं पशु नियोजन में इसका उपयोग किया जाता है-**या शीर्षण्या रशना रज्जुरस्य** *-ऋ० १.१६२.८ ।* रज्जु को अश्विनी और पूषा की भुजाएँ कहा गया है-**हे रज्जो ! सवितुर्देवस्याज्ञायां वर्तमानोऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां त्वामाददे गृह्णामि**-यजु० ३८.१ महो० भा० रज्जु को वरुण से सम्बद्ध भी माना गया है, **वरुण्या वै यज्ञे रज्जुः** *-शत० ब्रा० ६.४.३.८ ।*

(५०) रथ (सोमरथ)

रथ एवं उसके विविध अङ्गों का उपयोग वेदों में सर्वत्र प्राप्त होता है । यजुर्वेद में याज्ञिक कार्यों में प्रतीकात्मक रथ का उपयोग किया जाता है । वाजपेय याग के प्रसंग में रथ-स्तुति की गयी है । आयुधों को इसी रथ में स्थापित किया जाता है-**शकटद्वारा रथः स्तूयते । अस्यानसो रथवाहणं नाम रथं वहतीति रथवाहनम् । वाजपेये ऽनसि रथस्यारोप्यमाणत्वात्** *-यजु० २९.४५ महो० भा० ।* **तदिदास भुवनेषुज्येष्ठमिति रथस्य हैतद्रूपम्**

-जैमि० ब्रा० २.१२ ।

(५१) वसतीवरी

सोमयाग में यज्ञ प्रारम्भ होने के एक दिन पूर्व नदी में से घड़ों में जल का आनयन किया जाता है । उसी जल का उपयोग सोमाभिषव-आदि याज्ञिक कार्यों में किया जाता है । यज्ञ कार्य के उपयोगी इस जल का नाम वसतीवरी है । सोमलता को कूटकर जो रस निकाला जाता है, उसे बढ़ाने के लिए उसमें वसतीवरी संज्ञक जल मिलाते हैं । इसमें विश्वेदेवा का वास माना जाता है-

वसतु नु इदमिति तद् वसतीवरीणां वसतीवरीत्वम्

तैत्ति० सं० ६.४.२.१ ।

तदासु विश्वान्देवान्त्संवेशयत्येते वै वसतां वरं तस्माद्वसतीवर्यो नाम *-शत० ब्रा० ३.९.२.१६ ।* देवयजन में इस जल का आनयन ऋत्विजगण, यजमान और उसकी पत्नी द्वारा किया जाता है ।

(५२) वास

वस्त्र का सामान्यतया वैदिक प्रयोग वास कहलाता है-**युवोर्हि यन्त्रं हिम्येव वाससोऽभ्यायं सेन्या भवतं मनीषिभिः** (ऋ० १.३४.१) । व्यक्ति वस्त्रों से ही सुशोभित होता है-**तस्मादु सुवासा एव बुभूषेत्** *-शत० ब्रा० ३.१.२.१६ ।* अग्निष्टोम याग में मेखला नीवी बन्धन के अनन्तर यजमान द्वारा वस्त्र-धारण किया जाता है । मन्त्र युक्त वस्त्र देवत्व को प्राप्त कर लेते हैं-**सौम्यं हि देवतया वासः**

-तैत्ति० सं० १.६१.११ ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(५३) शकट

शकट शब्द वेदों में अनेक बार प्रयुक्त हुआ है-**उतो अरण्यानिः सायं शकटीरिव सर्जति** *-ऋ० १०.१४६.३ ।* पौर्णमास याग, अग्निष्टोम और सोम याग में शकट का प्रयोग हवि और सोम आनयन के निमित्त किया जाता है-**सोमसम्बद्धशकटं तद्धि तत्र युज्यते** *-नि० ६.२२ दु० ।* हवि रूप द्रव्य आनयन के निमित्त प्रयुक्त होने के कारण इसे 'हविर्धान शकट' भी कहा जाता है ।

(५४) शतमान

एक सौ रत्ती स्वर्ण खण्डों से गुँथी माला को शतमान कहते हैं । शतमान स्वर्णदक्षिणा देने का विधान यज्ञों में किया जाता है-**सौवर्ण शतमानं दक्षिणा ष्ठ** (दे० प० पृ० ६४०)। **ते सुवर्ण रजताभ्यां रुक्माभ्यां पर्यस्ते भवतः शतमानं च हिरण्यम्**

-बौधा० श्रौ० १४.१२ ।

(५५) शम्या

शम्या यज्ञीय काष्ठ-यन्त्र है । जौ या ब्रीहि पीसने के समय शिला के मध्य अवस्थित कील के अर्थ में तथा जुए के दोनों कोनों पर बैलों को नियोजित करने वाले काष्ठ-खण्ड के अर्थ में इसका प्रयोग किया गया है-**पुत्रो यत्पूर्वः पित्रोर्जनिष्ट शम्यां गौर्जगार यद्धपृच्छानम्** *-ऋ० १०.३१.१० ।* यह बारह अंगुल लम्बी और आगे से नुकीली होती है

(५६) शुक्रपात्र

जिस पात्र में विशुद्ध या निर्मल सोम रखा जाता है, उसे शुक्रपात्र कहते हैं । निर्मल सोम देवों को अतिशय रुचिकर है-**शुक्रः (निर्मलः) सोमः** *-ता० मा० ब्रा० ६.६.९ ।* **शुक्रो देवेषु रोचते** *-मैत्रा० सं० २.७.५ ।* विधान के अनुसार उसमें मधु, दधि, दुग्ध आदि मिश्रित करके यज्ञोपयोगी बनाया जाता है । शुक्रपात्र का प्रयोग प्रजावृद्धि कारक है-**शुक्रपात्रमेवानु मनुष्यः प्रजायन्ते** *-शत० ब्रा० ४.५.५.७ ।* **शुक्रपात्रं प्रयुज्यतेत्रीरेव तत् प्रजा अनुप्रजायन्ते**

-काठ० सं० २८.१० ।

(५७) शूर्प

कूटे गये हविर्द्रव्य के अनिच्छित अंश को निकालने हेतु शूर्प का प्रयोग किया जाता है । यज्ञीय द्रव्यों में अपद्रव्य को शूर्प से हवा करके साफ किया जाता है । यह बाँस या नरकट का बना हुआ होता है । ब्राह्मण ग्रन्थ में इसे विवेचित किया गया है-**द्वन्द्वं पात्राण्युदाहरति शूर्पञ्चाग्निहोत्र ष्ठ** *-शत० ब्रा० १.१.१.२२ ।* ब्रीहि परिष्कार के निमित्त शूर्प के मन्त्रपूर्वक ग्रहण करने का उल्लेख है-**अथ शूर्प चाग्निहोत्रहवणीं चादत्ते** *-शत० ब्रा० १.१.२.१ ।* **यज्ञः हविः तदिह निर्वापकाले ब्रीहिरूपम् । तदग्निहोत्रहवण्या शूर्पे निर्वपन् वेवष्टीव** *-शत० ब्रा० १.१.२.१ हरिस्वामी भा०*

(५८) समित्

यज्ञ में हवि, ईंधन, काष्ठ खण्डों को समित् या समिधा कहा जाता है । यज्ञ, वेदिका में इन काष्ठ खण्डों को प्रज्ज्वलनार्थ विधिपूर्वक रखा जाता है-**यदेनं समयच्छत् तत्समिधः समित्तम्**। *-तैत्ति० ब्रा० २.१.३.८ ।* इसकी लम्बाई बाहुमात्र तथा मोटाई अँगुली के समान होती है । इसे सड़ी या घुनी नहीं होना चाहिए-**प्रादेशमात्रीं पालाशी समिधमाधाय**

-शां० श्रौ० २.८.२२ ।

(५९) सुराग्रह

सौत्रामणी याग में जिस ग्रहपात्र से सुरा का हवन होता है, वह सुराग्रह पात्र है । सुराग्रह का हवन प्रतिप्रस्थाता की दक्षिण वेदि में आहवनीय अग्नि में किया जाता है । सुरा आसवन में लावा, गुड़, नग्नहु चूर्ण (दालचीनी, त्रिफला, सोंठ, पुनर्नवा इत्यादि) और दुग्ध डालकर चार दिन रखा रहने दिया जाता है, पुनः उसका आसवन किया जाता है-**अपां च वा एष ओषधीनां च रसो यत्सुरा** *-श० ब्रा० १२.८.१.४ ।* सुराग्रह से देवों के निमित्त सुरा की आहुति दी जाती है-**सुराग्रहान् श्रीणाति** *-का० श्रौ० १९.२.२३ ।* याग के उपरान्त सुराग्रह में अवशिष्ट सुरा के पान का विधान अथवा निषेध प्रतिप्रस्थाता द्वारा प्राप्त होता है । सामान्यतया सुरा उन्मादित करने वाली थी, अतएव ब्राह्मणों के लिए उसके पान का निषेध किया गया है-**तस्मात् सुरां पीत्वा रौद्रमनाः** *-श० ब्रा० १२.७.३.२० ।*

तस्माद् ब्राह्मणः सुरां न पिबेत् पाप्मनात्मानं नेत्संसृजा इति *-मैत्रा० सं० २.४.२ ।*

(६०) सोमग्रह

सोमरस का संग्रह जिस पात्र में किया जाता है, वह सोमग्रह-पात्र कहलाता है । सोमग्रह देवलोक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विजय का प्रतीक है-**देवलोकमेव सोमग्रहैरभिजयति** *-का० सं० १४.६ ।* अग्निष्टोम याग में सोमग्रह का संस्पर्श यजमान स्वयं करता है तथा पत्नी सुराग्रह का स्पर्श करती है-**आत्मानमेव सोमग्रहैस्स्पृणोति पत्नी सुराग्रहैः** *-का० सं० १४.६ ।* अध्वर्यु सोम की आहुति उपांशु ग्रह से देता है ।

(६१) स्फ्य

यह खदिर काष्ठ का एक हाथ लम्बा धारदार और आगे से नुकीला यज्ञपात्र है, जिसे आग्नीध्र नामक ऋत्विज् ग्रहण करते है-**खादिरः स्रुवः, स्फ्यश्च** *- का० श्रौ० १.३.३३.३४* **स्फ्योऽस्याकृतिरादर्शाकृति** *-का० श्रौ० १.३.४० ।* स्फ्य को वज्र का प्रतीक माना गया है-**स यत्स्फ्मादत्ते । यथैव तदिन्द्रो वृत्राय वज्रमुदयच्छदेवम्** *-श० ब्रा० १.२.४.३ ।* यह **उदपात्र के रूप में भी उल्लिखित हुआ है-उतपात्रं निधाय जघनेन गार्हपत्य ꣳ स्फ्यं निदध्यात् । स्फ्योपरि पात्रीम्** *-बौधा० श्रौ० २५.८ ।*

(६२) स्रुक् (स्रुची या स्रुच्)

घृताहुति स्रुक् से प्रदान की जाती है । घृत का संग्रह भी इसी पात्र में किया जाता है-**घृतं वै देवा वज्रं कृत्वा सोममघ्नन्त्स्रुचौ बाहू** *-मैत्रा० सं० ३.८.२. ।* स्रुच् आहुत घृत, वज्र स्वरूप होकर वृत्रवध में सक्षम होता है । स्रुच् बाहु का प्रतीक है-**आज्येन वै वज्रेण देवा वृत्रमघ्नन् स्रुग्भ्याम् बाहुभ्याम्** *-काठ० २४.९ ।* स्रुक अरत्निमात्र विशाल पात्र होता है-**अरत्निमात्री स्रुग्भवति** *-काठ० सं० ६.१ ।* यज्ञ में स्रुच् द्वय के प्रयोग का विधान है- **युजौ ह वाऽएते यज्ञस्य यत्स्रुचौ** *-शत० ब्रा० १.८.३.२७ ।* दो जुहू दो उपभृत् और एक ध्रुवा-इन पाँच स्रुचियों को स्रुक्पंचक कहते हैं ।

(६३) स्रुव

जिस पात्र से अग्नि में आज्य की आहुति दी जाती है, उसे स्रुव कहते हैं । यह अरत्नि मात्र लम्बा और आगे में आज्य लेने हेतु अंगुष्ठ पर्व मात्र गर्त वाला होता है । यह खदिर काष्ठ का बनता है-**खादिरः स्रुवः** *-का० श्रौ० १.३.३३ ।*

यज्ञीय पात्र किन काष्ठों एवं पदार्थों से बने होते हैं तथा उनके क्या उपयोग हैं, इसका वर्णन अन्यान्य शास्त्रों में इस प्रकार मिलता है-

१-अन्तर्धान काट बारण काष्ठ का आध अंगुल मोटा, बारह अंगुल का अर्ध चन्द्राकार पात्र । गार्हपत्य कुंड के ऊपर पत्नी संयाज के समय देव पत्नियों को आड़ करने के लिए इसका उपयोग होता है ।

२-पशु-रशना तीन मुख वाली बारह हाथ की पशु बाँधने की रस्सी ।

३-मयूख गूलर का एक अंगुल मोटा, बारह अंगुल का वत्स-बन्धन के लिये शकु मयूख होता है ।

४-वसा हवनी-पाक भाण्ड स्थित स्नेह-बसा हवन करने का जूहू सदृश घाऊ का स्रुक ।

५-वेद-दर्शपूर्णमासादि में ५० कुशाओं से रचित वेणी सदृश कुशमुष्टि ।

६-कर्पूर-चातुर्मास्यादि यज्ञ में बड़े गर्त्तवाला धान भूँजने का पात्र ।

७-अनुष्टुब्धिः-जुहू सदृश पीपल का स्रुक ।

८-विष्टुतिः-उद्गाता द्वारा साम मन्त्रों की गिनती के लिये, नीचे चतुरस्र ऊपर गोल, दश अंगुल की शलाका ।

९-पूर्ण पात्र-दर्शादि इष्टि में यजमान के मुख धोने के लिये जल रखने की स्मार्त्त-प्रोक्षणी ।

१०-शराव-पायस रखने के लिए मृत्तिका का बढ़े मुख एवं लोटे वाला पात्र ।

११-शकट-सोम को रखने के लिए वारण काष्ठ का ढाई हाथ लम्बा त्रिकोण, डेढ़ हाथ चौड़ा दो हाथ ऊँचा शकट, जिसमें एक हाथ ऊँचे दो चक्र हों ।

१२-परिप्लवा-कलश से सोमरस निकालने वाला काष्ठ का बना स्रुक, दस अगुल लंबा हंसमुख सदृश नालीदार पाँच अंगुल गोलाई में बना हुआ ।

१३-पशुकुम्भी -पशु श्रवण के लिये तैजस् पात्र ।

१४-मुसल -खैर काष्ठ का बना, मध्य में कुछ मोटा दस अंगुल का मूसल ।

१५-ऋतुग्रह पात्र-काष्मरी या पीपल का बना प्रोक्षणी पात्र जिसमें हंसमुख सदृश नलिका होती हैं ।

१६-आज्यस्थाली-घृत गर्म करने का मण्मय पात्र

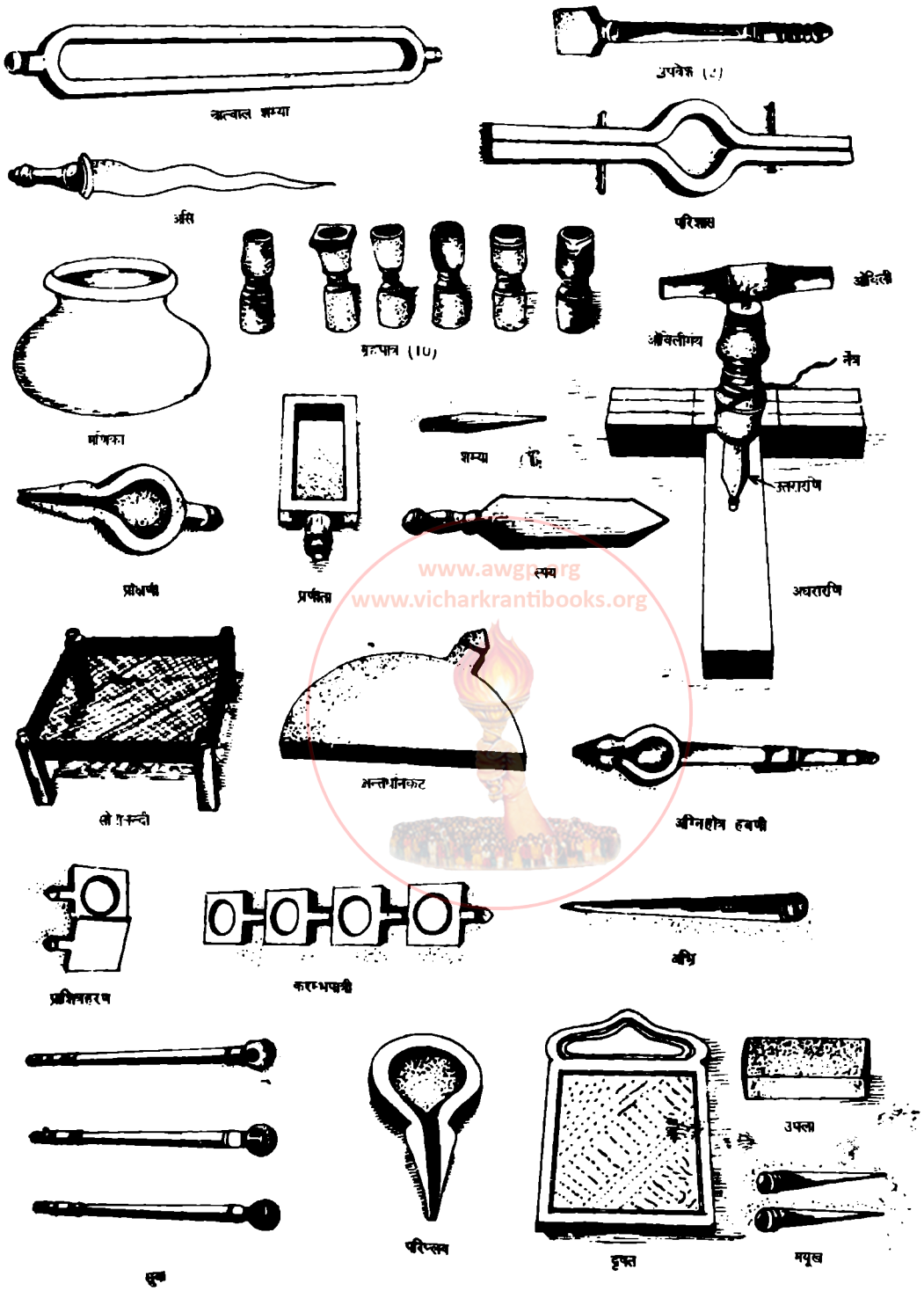
१७-उपवेष-अंगारों को दूर करने के लिये वारण काष्ठ का बना, हाथ के सदृश पाँच अंगुल बना हुआ दण्ड ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

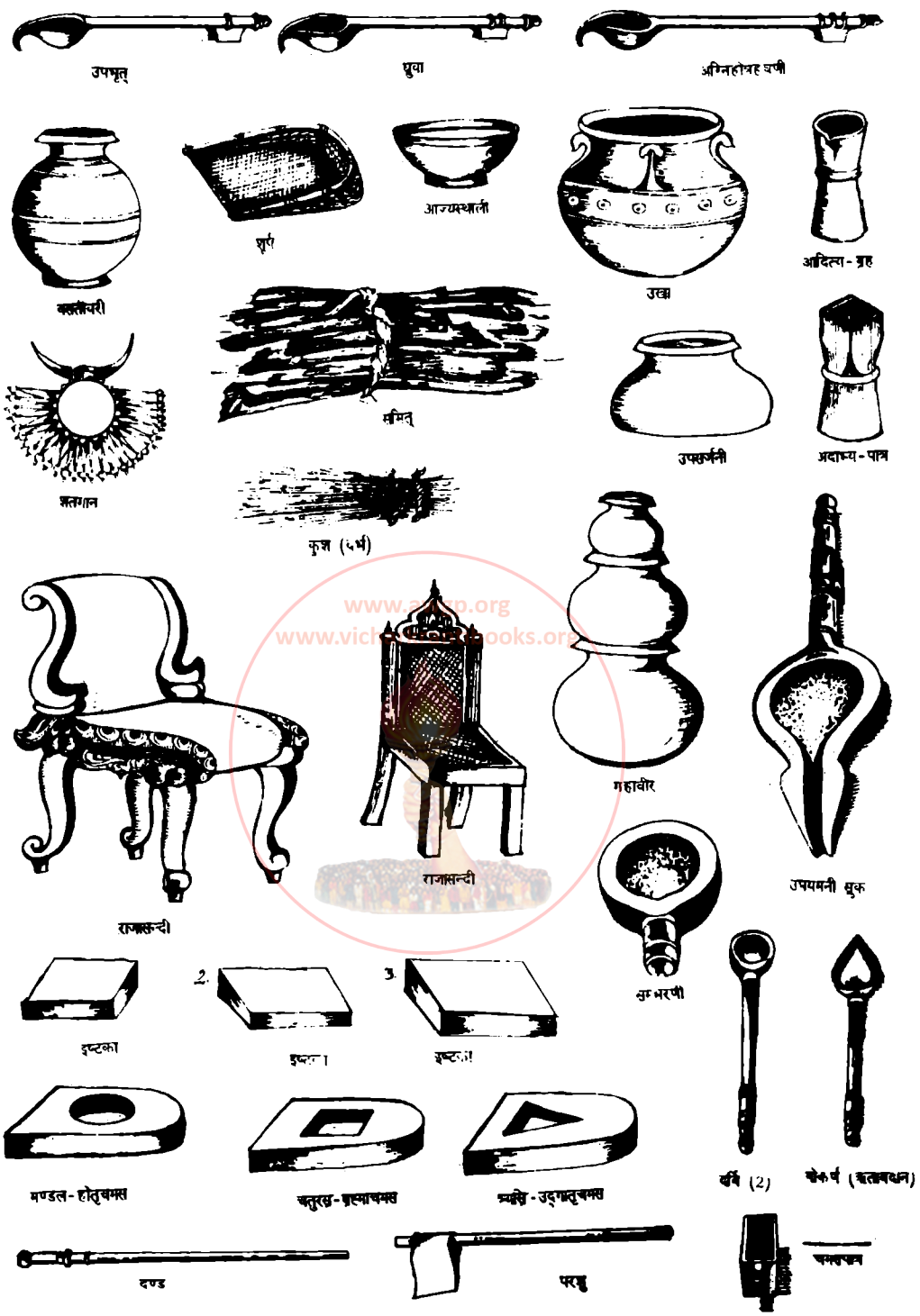
१८-स्थाली-सोमरम रखने की मृण्मयी थाली ।
१९-इडापात्री-ब्रह्मा, होता, अध्वर्यु, अग्नीत् और यजमान के भाग रखा जाने वाला पात्र ।
२०-मेक्षण-चरू हष्टि में इससे चरू का ग्रहण और होम होता है ।
२१-पृषदाज्य ग्रहणी-पीपल का स्रुक, जिससे दधि मिश्रित घी ग्रहण किया जाता है ।
२२-प्रचरणी-सोम याग में वैकङ्कत काष्ठ का बना जुहू सदृश स्रुक जिसका होम करने में उपयोग होता है ।
२३-परशु-खदिर काष्ठ का बना हुआ परशु ।
२४-अग्नि होत्र हवणी-श्रौत अग्नि होत्र में विङ्कत काष्ठ का बना, जुहू के सदृश बाहुमात्र लम्बा स्रुक ।
२५-अभि-वारण काष्ठ की बनी नुकीली अभ्रि का वेदी खनन में उपयोग होता है ।
२६-दोहन पात्र-वैकंकत का प्रणाली रहित सदण्ड पोरोक्षणी पात्र सदृश आकार होता है ।
२७-दर्वी-दण्ड सहित कलछी ही दर्वी है ।
२८-अधिपवण-फलक-(दृढ़)धारण काष्ठ के बने सोमलता कूटने का एक हाथ लम्बा, बारह अंगुल चौड़ा दो काष्ठ फलक होते हैं ।
२९-असिद-कुशा काटने के लिये खैर का छुरा ।
३०-अन्वाहार्य पात्र-दर्शपूर्ण-मास में, ब्रह्मा, होता, अध्वर्यु और अग्नीघ्र को दक्षिणा में दिया जाने वाला ओदन जिसे पात्र में पकाया जाता है ।
३१-ग्रावा-पत्थर का बना सोलह अंगुल का मूसल, जिससे सोमलता कूटी जाती है ।
३२-उपमृत- पीपल की जुहू सदृश स्रुक उपभृत होती है ।
३३-उत्पवन पात्र- प्रोक्षणी पात्र सदृश होता है
३४-उपांशु सवन-उपांश नामक सोमलता को जिस पाषाण से कूटा जाता है ।
३५-उलूखल-पलास, खैर, वारण का जानु प्रमाण ऊखल ।
३६-एक धन-सोमरस को बढ़ाने वाले जल ।
३७-मूरशल-वारण पलास, खैर का दश अंगुल का मूरशल ।
३८-जुहू-श्रौत कर्म में जिस स्रुक से हवन किया जाता है ।
३९-चमस-चौकोर प्रणीता पात्र सदृश सोमरस को रखने, होम करने और पानी के लिये चमस होते हैं । ये दस भाँति के होते हैं ।
४०-यजमानाभिषेक सन्दी-वाजपेय यज्ञ में यजमान को बैठने के लिये मूँज की बनी हुई एक हाथ लम्बी चौड़ी चतुष्कोण:-लघु खाट ।
४१-यूपरशना-आठ हाथ लम्बी दूनी कुश की रस्सी, यूप में लपेटने के लिये यूपरशना होती है ।
४२-शृतावदान-पितृ-यज्ञ में पक्व पुरोडाश तोड़ने के लिये विकंकत-काष्ठ का होता है ।
४३-पूत भृत-सोम रस धारण करने वाले स्वर्ण या मृण्मय-कलश ।
४४-पुरोडाश पात्री-वारण काष्ठ की पुरोडाश के स्थान में प्रयुक्त होने वाली पात्री ।
४५-पिन्वन-वारण का स्रुक मुख सदृश बना बिना दण्ड का पात्र ।
४६-पान्तेजन कलश-पशु अङ्गों को प्रक्षालन करने का जल जिस कलश में रखा जाता है ।
४७-परिशास-कलछी मुख के सदृश महावीर पात्र को पकड़ने लायक गूलर के बने पात्र ।
४८-सन्नहन:-इध्म(यज्ञ हेतु लकड़ी)और वर्हि बाँधने के लिये कुशा की वेण्याकार गूँथी रस्सी ।
४९-होतृ सदन:-वरना काष्ठ की बनी होता के बैठने की पीठ ।
५०-सोमा सन्दी-गूलर की बनी चार पाँवों वाली मुञ्ज की रस्सी से बनी हुई सोम रखने के लिए बनी आसन्दी
५१-सोम पर्याणहन वस्त्र से बँधे सोम को ढाँकने का वस्त्र ।
५२-सम्भरणी-वारण काष्ठ का बना सोम रखने का कटोरा ।
५३-शंकु -गूलर का दश अंगुल लम्बा अग्निष्टोमादि यज्ञ में दीक्षिता पत्नी के कन्डूयनादि में उपयुक्त होने वाला ।
५४-उदत्रवन-सोम याग में अम्भृण पात्रों से जल निकालने के लिये मिट्टी की दो हाथ लम्बी, स्रुत्री के मुख से दूने मुख की, जुहू सदृश स्रुक ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

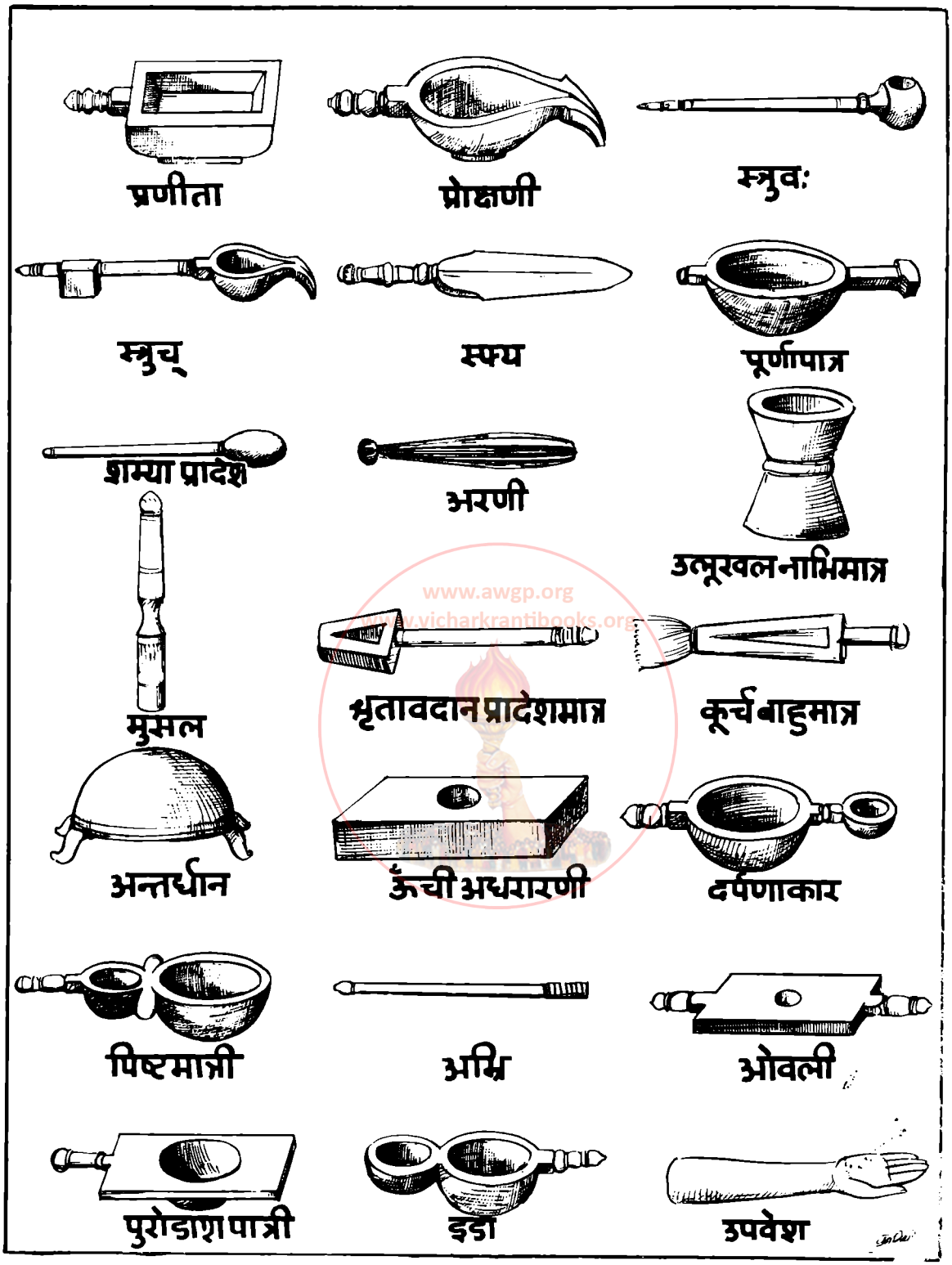
५५-उदयमनी-उदुम्बर की दो हाथ लम्बी, स्रुची के मुख से दुगने मुख वाली, जुहू सदृश स्रुक ।
५६-इध्म-पलाश की एक हाथ लम्बी, सीधी, सुन्दर त्वचा सहित एकशाखा वाली समिधा ।
५७-वर्हि असंस्कृत तथा असंख्यात कुशा ।
५८-सम्भरण पात्र-वाजपेय यज्ञ में हवन किये जाने वाले सत्रह प्रकार के अन्नों को जिस पात्र में रखा जाता है ।
५९-वाजिन-भाण्ड-फटे दूध के द्रव भाग (वाजिन) को जिस भाण्ड में रखा जाता है ।
६०-उपसर्जनी पात्र-यजमान के लिये गार्हपत्य अग्नि में जल को इस पात्र में गर्म किया जाता है ।
६१-रौहिणकपाल-मृत्तिका का पका पकाया पात्र जो रौहिणक पुरोडाश पकाने के लिये बनाया जाता है ।
६२-योक्त्र-दर्शपूर्णमासादि यज्ञ में यजमान पत्नी के कटि प्रदेश में बाँधने के लिये तीन लड़ी मुञ्ज की बनी वेणी सदृश रस्सी ।
६३-उद्गात्रासन्दी-गवामय गवामयन यज्ञ में उद्गाता बैठने के एक हाथ लम्बी चौड़ी मुञ्ज से बिनी मीड़ ।
६४-विघन-पीपल का एक हाथ का शंकु ।
६५-विकङ्कत शकल-विकङ्कत काष्ठ की दश अंगुल की समिधा ।
६६-दण्ड-सोमयाग में यजमान तथा मैत्रावरुण के लिये मुख तक लम्बाई का गूलर का बना दण्ड ।
६७-दधि धर्म-प्रग्वर्य में दस अंगुल का दधि को ग्रहण तथा हवन के लिये गूलर का बना पात्र ।
६८-दारुपात्री-कात्यायनों की पात्री ।
६९-धवित्र-मृगचर्म से बना पंखा ।
७०-धृष्टि-अंगार भस्मादि हटाने के लिये विकेकत काष्ठ का बना पात्र ।
७१-कृष्ण विषाण कृष्ण मृग का शृंग ।
७२-वाजिनचमस फटे दूध के द्रव भाग को रखने का प्रणीता सदृश पात्र ।
७३-गलग्रही तांबा या पीतल की एक हाथ की सण्डसी ।
७४-स्रुक-विकंकत काष्ठ का बना बाहु प्रमाण लम्बा हवन करने का हंसमुख सदृश चोंचदार पात्र ।
७५-यूप खैर का बना लम्बा शंकु । इसकी लम्बाई भिन्न-भिन्न यज्ञों में भिन्न-भिन्न रखी जाती है ।
७६-ग्रह विकंकत काष्ठ का बना उलूखल सदृश सोमरस तथा होमोपयोगी वस्तु रखने का पात्र ।
७७-स्फ्य अग्रवेदी को खोदने रेखा करने के लिये एक हाथ लम्बा चार अंगुल चौड़ा खैर काष्ठ का वज्र-दण्ड ।
७८-स्रुवा होम करने के लिये खैर-काष्ठ का बना गोल छिद्र संयुक्त एक हाथ लम्बा पात्र ।
७९- ऋतु पात्र ग्रह काष्मर्य-पीपल के प्रोक्षणी पात्र सदृश दोनों तरफ हंसमुख सदृश सोमरस ग्रहण करने का पात्र ।
८०-प्रोक्षणधानी-जुहू(अग्नि में घी की आहुति देने का अर्द्ध चन्द्राकार चम्मच) के सदृश बना स्रुक
८१-शूल वारण काष्ठ का बना, अभ्रि सदृश शूल होता है ।
८२-पाशित्रहरण-ब्रह्मा को हुत शेष, इस चार अंगुल लम्बे-चौड़े वारण काष्ठ से बने चौकोर पात्र द्वारा दिया जाता है ।
८३-निश्रेणी-वाजपेय यज्ञ में सत्रह हाथ यूप से ऊपर जाने के लिये वारण काष्ठ से बनी सीढ़ी ।
८४-नेत्र-सन और गौपुच्छ के वालों से बनाई गयी चार हाथ की तीन लड़ वाली गूँथी हुई वेणी ।
८५-निदान-सोमयाग में गौ तथा बछड़े को बाँधने के लिये बनी रस्सी ।
८६-चात्र उपमन्थ-अरणि मन्थन के लिये आठ अंगुल का बना काष्ठ शंकु ।
८७-चपाल-सोमयाग में पलास का दश अंगुल लम्बा एक अंगुल गोल आर-पार छिद्र वाला पात्र विशेष ।
८८-शम्या-दर्शपूर्ण मासादि में सिल-लोढ़ी के कुट्टन आदि में प्रयुक्त होने वाला पात्र विशेष ।
८९-षडवत्तपात्र-अग्नीध्र ऋत्विक् को भाग देने के लिये वारण काष्ठ का बना एक विशेष प्रकार का पात्र ।
९०-सगर्त्तपुरोडाशपात्री-सर्वहुत पुरोडाश के स्थापन और होमादि में प्रयुक्त होने वाला पात्र ।
९१-स्वरु पशुलता स्पर्श एवं होमादि में प्रयुक्त



यज्ञ पात्र एवं पदार्थ



यज्ञ पात्र एवं पदार्थ

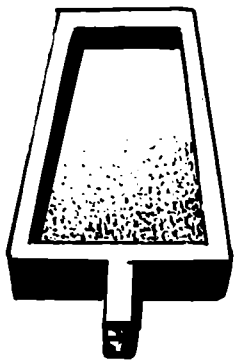


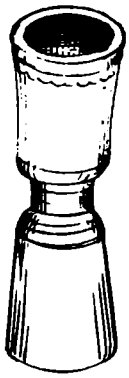
यज्ञ पात्र एवं पदार्थ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

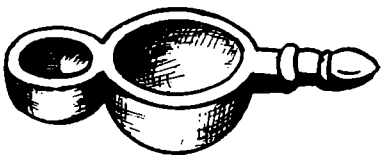

अरणी


धृष्टि

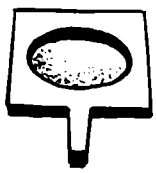

द्रोणकलश

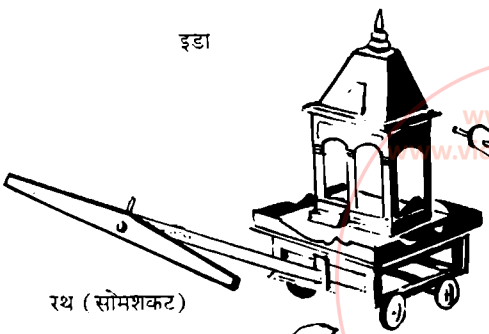

उलूखल

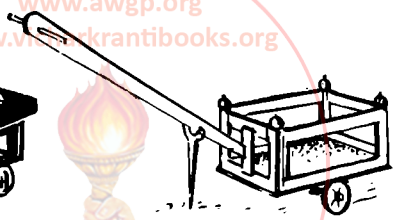

मुसल

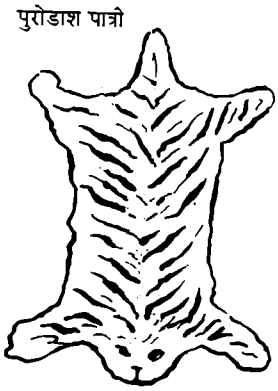

इडा


ऋतुपात्र


पुरोडाश पात्रो

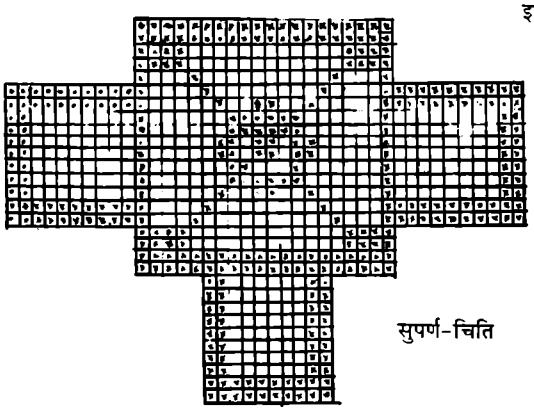

रथ (सोमशकट)

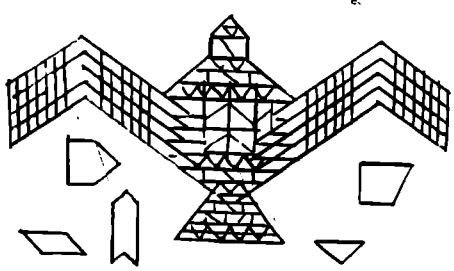

हविर्धान शकट


शार्दूल-चर्म


कृष्णाजिन


इडापात्री


सुपर्ण-चिति


श्येन-चिति

यज्ञ पात्र एवं पदार्थ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

होने वाला दश अंगुल का खड्गाकार पात्र ।

९२-स्थूण-गौ बाँधने के लिये बनी खूँटी ।

९३-सेम्मोपनहन-सोमलता बाँधे जाने वाले दोहरे-चौहरे वन्त्र ।

९४-दृषत उपला-पुरोडाश के पेषण में प्रयुक्त होने वाले वाले दश अंगुल लम्बे आठ अगुल चौड़े पाषाण ।

९५-करम्भ पात्री-दक्षणग्नि में पक्व सतु तथा दधि रखने के छोटे-छोटे गोल पात्र ।

९६-पञ्चबिलापात्रीः-कृष्ण यजुर्वेदियों के काम आने वाला पात्र विशेष ।

९७-पिशीलक-चातुर्मासिसान्तर्गत गृहमेधि में उपयोग होने वाला पायस रखने का धातु का बड़े मुख वाला पात्र ।

९८-परिवेचन घट-आपस्तम्ब के लिये आधबनीय सदृश कलश ।

९९-त्रिविला पात्री-वारण काष्ठ से बना एक विशिष्ट भाँति का बना पात्र ।

१००-दशा पवित्र-जीवित भेड़ के ऊनों से बना सोमरस छानने के लिये बना हुआ छन्ना ।

१०१-कूर्च-सायं-प्रातः अग्निहोत्र के समय स्रुक रखने का वारण काष्ठ से बना पात्र विशेष ।

१०२-ओविली-मन्थन-दण्ड को दबाने के लिये खैर काष्ठ का बना उपमन्थ ।

१०३-समित्-पलासादि की दश अंगुल लम्बी सुन्दर अविशाखा लकड़ी ।

१०४-महावीर-सोमयाग में दीपक रखने के लिये मृत्तिका से बना एक विशिष्ट पात्र ।

१०५-मेखला-यजमान के कटि-प्रदेश में बाँधने के लिये चार हाथ की मुञ्ज से वेणी सदृश गुँथी रस्सी ।

१०६-तानूनप्त्र चमस-इष्टि के अनन्तर सोलहों ऋत्विक जिस घृत को स्पर्श कर परस्पर अद्रोह की शपथ लेते हैं, उस घी को रखने का पात्र ।

१०७-धर्मासन्दी-धर्म सम्बन्धी सभी पात्रों को रखने के लिये तीन हाथ ऊँचा गूलर का बना आसन विशेष ।

१०८-ध्रुवा-वारण काष्ठ का बना जुहू के सदृश वाहुप्रमाण स्रुक, जो यज्ञ के अन्त तक रखी जाती है ।

यज्ञ में मन्त्र-शक्ति के प्रखर प्रयोक्ता

महत्वपूर्ण कार्य करने के लिए उपयुक्त साधन जुटाने और उपयुक्त व्यक्ति उस कृत्य में लगाने की आवश्यकता पड़ती है । यज्ञ असाधारण महत्व की प्रक्रिया है, उसकी विद्युत उत्पादक संस्थान से तुलना की जा सकती है । उसके लिए सभी साधन-सामग्री सही स्तर की होनी चाहिए । सही अर्थात् असली, स्वच्छ और संस्कारिता यह उपकरणों तथा यजन हविष्य के सम्बन्ध में यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि उनसे सम्बद्ध व्यक्तियों की श्रद्धा-सद्भावना का-सतर्कता एवं तत्परता का समुचित समावेश हुआ हो । इसके अतिरिक्त उन व्यक्तियों की बारी आती है, जो इस प्रयोजन में भागीदार बनकर रहे हैं । उनको शरीर की दृष्टि से स्वच्छ-स्वस्थ एवं मन की दृष्टि से सन्तुलित समर्थ होना चाहिए । चरित्र ही वह सम्पदा है, जिसके आधार पर व्यक्ति सच्चे अर्थों में अध्यात्मवादी कहा जा सकता है । वेष, वंश या क्रिया-काण्डों के आधार पर कोई चरित्रहीन एवं निकृष्ट चिन्तन वाला व्यक्ति अपने को आत्मवादी माने और ऐसे लोगों को मिलने वाले श्रेय की अपेक्षा करे तो इसे उपहासास्पद ही माना जायगा ।

यज्ञ-प्रयोजन में न केवल उस कृत्य को सही रीति से सम्पन्न करा सकने की प्रवीणता ही चाहिए , वरन् सूत्र-संचालकों को उस स्तर का भी होना चाहिए, जो पुरोहित वर्ग के लिए आवश्यक है । यज्ञ का सारा वातावरण संस्कार-युक्त होना चाहिए । यज्ञ-कर्त्ता एवं कराने वाले दोनों ही उपयुक्त स्तर के होने चाहिए ।

व्यक्तिगत, पारिवारिक यज्ञों में घर-कुटुम्ब के लोग ही मिल-जुलकर सारी व्यवस्था बना लेते हैं , किन्तु यदि किन्हीं विशिष्ट प्रयोजनों के लिए बड़े यज्ञ-आयोजन करने हो, तो उनके लिए विभागाध्यक्ष नियुक्त करने होते हैं, ताकि सारे क्रिया-कलाप विधिवत् चलते रहें । कार्य-विभाजनों के अनुरूप ही व्यवस्था ठीक तरह चल पाती है । यों एक व्यक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भी अनेक कार्यों को सम्भाल सकता है, पर उसके लिए हर विभाग पर समुचित ध्यान दे सकना, बारीकी से वस्तुस्थिति देखना और तदनुरूप सुव्यवस्था बनाते चलना कठिन पड़ता है, अतएव महत्वपूर्ण काम में प्रयुक्त होने वाली कार्य विभाजन-पद्धति का उपयोग बड़े यज्ञ-आयोजनों में भी किया जाता है ।

यज्ञ-प्रक्रिया को चार भागों में विभक्त किया गया है । इनके मन्त्र-शक्ति के कुछ प्रखरप्रयोक्ता - प्रधान कार्यकर्त्ता नियुक्त किये जाते हैं । जिनके ऊपर कुछ कार्यों का विशेष उत्तरदायित्व होता है । इन्हें ऋत्विज् कहते हैं । इनकी संख्या बड़े यज्ञों में १६ तक होती है, पर साधारण यज्ञों में भी यह एक-एक तो होने ही चाहिए । इनके नाम हैं

१-ब्रह्मा (२) अध्वर्यु (३) उद्गाता (४)होता ।

अत्यन्त विशालकाय आयोजनों में इन चारों को अपने एक से लेकर तीन तक सहायक नियुक्त करने का भी अधिकार है । इन अधिकारियों की भी अपनी-अपनी जिम्मेदारी होती है और उनकी पदवी घोषित की जाती है ।

ब्रह्मा वर्ग में (१) ब्राह्मणाच्दसी (२) आग्नीध्र (३) होता ।

आध्वर्यु वर्ग में (१) प्रति प्रस्थाता (२) नेष्टा (३) उन्नेता ।

उद्गाता वर्ग में (१)प्रस्तोता (२) प्रति हर्ता (३) सुब्रह्मण्य ।

होता वर्ग में-(१) प्रशस्ता (२) अच्छा वाक् (३) ग्रावस्तोता ।

इनके कार्यक्रमों के सम्बन्ध में ऋग्वेद का एक मन्त्र है-

ऋचांत्वः पोषमास्ते पुपुष्मान् गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु ।
ब्रह्मात्वो वदति जात विद्याम् यज्ञस्य मात्रां विमिमीत उत्वः ।

इस मन्त्र में उपरोक्त कार्यकर्त्ताओं का कार्य - विभाजन इस प्रकार किया गया है ।

होता-**ऋचांत्वः पोषमास्ते पुष्मान्** -

अपनी प्रत्येक बात को प्रामाणिक रखे ।

उद्गाता-**गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु**

गायन करना । अपने कार्य की महत्ता के पक्ष में भावनाएँ तरंगित करना । उद्गाता इस पुनीत कार्य को ''उद्गीथ'' कहते हैं ।

ब्रह्मा-ब्रह्मात्वो वदति जात विद्याम्

ब्रह्म-विद्या का प्रतिपादन करें । सद् उद्देश्य को ही बढ़ावें ।

अध्वर्यु-यज्ञस्य मात्रां विमिमीत उत्वः ।

यज्ञ का निश्चित मात्रा में ठीक परिमाण में करना, यज्ञ को हिंसा से बचाना भी अध्वर्यु का काम है ।

(१) ब्रह्मा-

यज्ञ का प्रधान संरक्षक-अध्यक्ष एवं अधिष्ठाता ब्रह्मा कहलाता है । यह सभी कार्यों का मुख्य निरीक्षक होता है । इसे पुरोहित भी कहा जाता था । कहीं-कहीं इसी को 'अथर्वा' भी कहा गया है । जब यह कृत्य कुल-परम्परा के रूप में चल पड़ता था, तब उन प्रयोजनों में पारंगतों की पीढ़ियाँ अंगिरस कही जाने लगती थीं । वैदिक काल से अंगिरसों का विशेष मान था, वे न केवल यज्ञ-कृत्य कराने में कुशल होते थे, वरन् निजी जीवनचर्या में भी ब्रह्म-कर्म का परिपूर्ण समावेश रखते थे । वेद शास्त्रों के अनुसार ब्रह्मा श्रौतयाग के प्रमुख ऋत्विज् हैं । श्रौतयाग के यथाविधि सम्पन्न करने का उत्तरदायित्व इन्हीं का होता है । याग के कार्यों में इनसे अनुमति ली जाती है । याग-कर्म में वैषम्य होने पर इन्हें प्रायश्चित करना पड़ता है- **ब्रह्मानुज्ञातोनुयाजैः** *-का० श्रौ ३.५.५ ।*

यायतो हि प्रैषसमनन्तरं प्रैषार्थः प्राप्नोति तन्माभूदित्यत इदमुच्यते 'ब्रह्मानुज्ञात' इति *-का० श्रौ० ३.५.५ क० भा० ।*

ब्रह्मा की आज्ञा पाकर होतृगण देव-आवाहन करते हैं-**एतद्वै देवानां ब्रह्मानिरुक्तं यच्चुतुर्होतारः** *-काठ० ९.१६* ब्रह्मा के तीन अन्य सहयोगी ऋत्विज- ब्राह्मणाछंसी, आग्नीध्र और पोता होते हैं-**ब्रह्मा ब्राह्मणाच्छंस्याग्नीध्रः पोता** *-आश्व० श्रौ०४.१.६ ।* गोपथ ब्राह्मण के अनुसार इन्हें अथर्ववेद का ज्ञाता होना चाहिए **-एष ह वै विद्वान्त्सर्वविद् ब्रह्मा यद् भृग्वङ्गिरोविद् (अथर्ववेदविद्)** (गो० ब्रा० १.२.१८)। **यज्ञस्य हैष भिषग्यद् ब्रह्मा यज्ञायेव तद्भेषजं कृत्वा हरित** (ऐत० ब्रा० ५.३४) इन्हें यज्ञ का हृदय भी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहा गया है-**हृदयं (वै यज्ञस्य) ब्रह्मा**

-शत० ब्रा० १२.८.२.२३ ।

(२) अध्वर्यु-

यज्ञों में देवताओं के स्तुति-मन्त्रों को जो पुरोहित गाता था, उसे 'उद्गाता' कहते थे । जो पुरोहित यज्ञ का प्रधान होता था, वह 'होता' कहलाता था, उसके सहायतार्थ एक तीसरा पुरोहित होता था, जो हाथ से यज्ञों की क्रियाएँ होता के निर्देशानुसार किया करता था । यह सदस्य 'अध्वर्यु' कहलाता था ।

वेदों में याग में सोलह ऋत्विजों के वरण की बात कही गयी है, जिसमें से चार प्रमुख हैं-ब्रह्मा उद्गाता, होता और अध्वर्यु । **षोडशर्त्विजो ब्रह्मोद्गातृहोत्रध्वर्यु..** *-का० श्रौ० ७.१.७ ।* इनमें प्रत्येक के अन्य तीन-तीन सहयोगी ऋत्विज् भी होते हैं-**चत्वारस्त्रिपुरुषाः । तस्य तस्योत्तरे त्रयः** *-आश्व० श्रौ० ४.१.४-५ ।* इनका नामोल्लेख महर्षि कात्यायन ने इस प्रकार किया है-**ब्राह्मणाच्छ ंसि प्रस्तोतृमैत्रावरुणप्रतिप्रस्थातृपोतृप्रहित्र्च्छावाक ंष्ट्रग्नी त्सुब्रह्मण्यग्रावस्तुदुन्नैतृवृणीते** *-का० श्रौ० ७.१.७ ।* अध्वर्यु श्रौतयाग के प्रमुख ऋत्विज् हैं, जो प्रार्थना आदि के साथ यजुर्वेद के अनुसार यज्ञ का व्यावहारिक कार्य करते हैं-**तमेतमग्निरित्यध्वर्यव उपासते । यजुरति ।** *-शत० ब्रा० १०.५.२.२० ।* **अध्वर्यु पुरो वाचं विभजति मैत्रावरुणः पश्चात्** *-मैत्रा० सं० ३.६.८ ।* याग का आरम्भ और समापन इन्हीं के द्वारा होता है । अध्वर्यु द्वारा प्रैष करने पर होता मंत्रोच्चारण करते हैं-**अध्वर्युर्वाऽनुज्जयत्वयं** *-का० श्रौ० ३.५.१९ ।* अध्वर्यु के तीन अन्य सहयोगी ऋत्विज्-प्रतिप्रस्थाता, नेष्टा और उन्नेता होते हैं-**अध्वर्युः प्रतिप्रस्थाता नेष्टोन्नेता ...** *-आश्व० श्रौ० ४.१.६ ।* इन्हें यज्ञ की प्रतिष्ठा कहकर सम्मानित किया गया है-**प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्य यदध्वर्युः** *-तैत्ति० ब्रा० ३.३.८.१० ।*

(३) उद्गाता-

सामगान करने वाला याजक 'उद्गाता' कहलाता है । हरिवंश में कथन है-

ब्रह्माणं परमं वक्त्रादुद्गातारञ्च सामगम् ।
होतारमथ चाध्वर्युं बाहुभ्यामसृजत्प्रभुः ।।

अर्थात् प्रजापति ने ब्रह्मा को तथा सामगान करने वाले उद्गाता अपने मुख से और होता तथा अध्वर्यु को बाहुओं से उत्पन्न किया ।

वैदिक यज्ञों में विशेषकर सोम-यज्ञ में सामवेद के मन्त्रों का गान होता था । गाने वाले पुरोहित को उद्गाता कहते थे । उद्गाता को दो प्रकार की शिक्षा लेनी पड़ती थी । पहली शिक्षा थी, शुद्ध एवं शीघ्र मन्त्रों का गायन, तथा उन सभी स्वरों की जानकारी जो विशेषकर सोम-यज्ञों में प्रयुक्त होते थे । दूसरी शिक्षा में इस बात स्मरण रखना होता था कि किस सोम यज्ञ में कौन-सा सूक्त या मन्त्र-गान करना पड़ेगा ।

सामगान के पाँच भेद पाये जाते हैं-प्रस्ताव, उद्गीथ, प्रतिहार, उपद्रव और निधन । उद्गाता ऋत्विज् सामगान के उद्गीथ अंश का गान करते हैं-**उद्गीथ एवोद्गातृणाम्** *-तैत्ति० सं० ३.२.९.५ ।* उद्गाता के तीन अन्य सहयोगी ऋत्विज्-प्रस्तोता, प्रतिहर्ता और सुब्रह्मण्य होते हैं-**उद्गाता प्रस्तोता प्रतिहर्ता सुब्रह्मण्य इति** *-आश्व० श्रौ० ४.१.६ ।* प्रस्तोता प्रस्ताव का उद्गाता उद्गीथ का, प्रतिहर्ता प्रतिहार का, उपगाता (सुब्रह्मण्य) उपद्रव का और ये सब ऋत्विज् निधन का पाठ करते हैं । शतपथ ब्राह्मण में इन्हें वर्षा से सम्बद्ध किया गया-**वर्षाउद्गाता तस्माद् यदा बलवद् वर्षति काम्र इवोपब्दिः क्रियते**

-शत० ११.२.७.३२ ।

पर्यन्यो वा उद्गाता

-शत० ब्रा० १२.१.१.३.२ ।

(४) होता-

ऋग्वेद का पाठ करने वाला । अमरकोश -२.७.१७ । में इसका अर्थ 'ऋग्वेद वेत्ता बताया गया है । 'दायभाग' टीका में श्रीकृष्णतर्कालंकार ने इसका अर्थ 'होमकर्त्ता' किया है । उनका कथन है **विशिष्ट देशावच्छिन्नप्रक्षेपोपहितहविस्त्यागस्य होमत्वात् प्रक्षेपस्य तदभिधाननिभिलमित्यर्थः । तेन हुधात्वर्थतावच्छेदक प्रक्षेपानुकूल व्यापारयति ऋत्विजि होता इत्यादि व्यपदेशः ।।''** होम-क्रिया में मुख्यतः ऋग्वेद मन्त्र पढ़कर आहुतियाँ दी जाती है । अतः होता ऋग्वेद-वेत्ता ही होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ये श्रौतयाग और सोमयाग के एक प्रमुख ऋत्विज् हैं । ये ऋग्वेद के अनुसार देवों को आवाहन और स्तुति आदि करते हैं । दूसरे शब्दों में इन्हें ऋचा-गान करने वाले ऋत्विज् और देवों के आह्वाता कहा गया है-**यद्वा स तत्र यथाभाजनं देवता अमुमावहामुमावहेत्यावहायति तदेव होतुर्होतृत्वम्** *-ऐत० ब्रा० १.२ ।* वेदी के पश्चिम में उत्तरश्रेणी के निकट इनके बैठने का स्थान होता है, जिसे होत्रासन कहते हैं । सामिधेनी संज्ञक ऋचाओं का पाठ होता-गण ही करते हैं-**एषा तऽ इति होताऽनुमन्त्रयते** *-का० श्रौ० ३.५.२ ।* होता के अन्य तीन सहयोगी होते हैं - होता **मैत्रावरुणे ऽच्छावाकोग्रावस्तुत्** *-आश्व० श्रौ० ४.१.६ ।* इन्हें यज्ञ का नाभि (केन्द्र) भी कहा गया है-**नाभिर्वा एषा यज्ञस्य यद्धोता** *-काठ० सं० २६.१ ।*

इस तरह ब्रह्मा, अध्वर्यु, उद्गाता एवं होता-यह चारों ही ऋत्विज् हैं । ऋत्विज का अर्थ है-जातं जातं विदेता, आवश्यक सभी बातों के जानकार । ऋत्विज् को 'ऋत्विक्' भी कहा जाता है ।

ऋत्विक् (ऋत्विज्) मनु इनके सन्दर्भ में -२.१४३ में उल्लेख है ।

अग्न्याधेयं पाकयज्ञानग्निष्टोमादिकान्मखान् ।
यः करोति वृतो यस्य स तस्यत्विगहोच्यते ।।

अर्थात् अग्नि की स्थापना, पाकयज्ञ, अग्निष्टोम आदि यज्ञ,जो यजमान के लिए करता है, वह उसका ऋत्विक् कहा जाता है । ऋत्विक् के कुछ पर्यायवाची नाम भी है-(१) याचक (२) भरत, (३) कुरु, (४) वाग्यत, (५) वृक्त वर्हिष, (६) यतश्रुच (७) मरुत् (८) सवाध और (९) देवयव ।

श्रोत-यज्ञ में सोलह ऋत्विक् होते हैं, जिन के नाम और परिचय ये हैं-

१-ब्रह्मा- यज्ञ कर्म में ऋक्विक् और यजमान के समस्त कार्यों का जो सावधानी से निरीक्षण करता है और प्रायश्चित्तादि का उपदेश करता है, उसे ब्रह्मा कहते हैं ।

२-उद्गाता- साम-मन्त्र पढ़ कर स्तुति करने वाले को 'उद्गाता' कहते हैं ।

३-होता - देवताओं को बुलाने वाले को 'होता' कहते हैं । यह ऋग्वेदी होता है ।

४-अध्वर्यु- प्रारम्भ से अन्त तक यज्ञ करने वाले को 'अध्वर्यु' कहते हैं । (यह यजुर्वेदी होता है ।

५-ब्राह्मणच्छंसी- ब्रह्मा के सहायक ऋत्विक् को 'ब्राह्मणच्छंसी' कहते हैं ।

६-प्रस्तोता- प्रत्येक सामगान के पाँच भाग होते हैं । उसके प्रथम भाग को प्रस्ताव कहते हैं । उस प्रस्ताव को पढ़ने वाले उद्गाता के सहायक ऋत्विक को "प्रस्तोता" कहते हैं ।

७-मैत्रावरुण- (प्रशास्ता) मित्र वरुण देवता वाले मन्त्रों को पढ़ने वाले होता के सहायक ऋत्विक् को "मैत्रावरुण कहते हैं ।

८-प्रतिप्रस्थाता- विशेष कर यजमान की पत्नी से सम्बन्ध रखने वाले कार्यों के करने वाले अध्वर्यु के सहायक को प्रतिप्रस्थाता कहते हैं ।

९-पोत- सोम-रस को वस्त्रादिक से छानकर पवित्र करने वाले ब्रह्मा के सहायक ऋत्विक् के 'पोता' कहते हैं ।

१०-प्रतिहर्त्ता- साम के तृतीय भाग के पढ़ने वाले उद्गाता के सहायक ऋत्विक् को प्रतिहर्त्ता कहते हैं

११-अच्छावाक्- होता के सहायक ऋत्विक् को 'अच्छावाक्' कहते है ।

१२-नेष्टा- अध्वर्यु के सहायक ऋत्विक् को नेष्टा कहते हैं ।

१३-अग्नात्- अग्नि के प्रदीप्ति करने वाले ब्रह्मा एवं अध्वर्यु के सहायक को 'अग्नात्' कहते हैं ।

१४-सुब्रह्मण्य- सुब्रह्मण्य नामक ऋचा से इन्द्र देवता की स्तुति करने वाले उद्गाता के सहायक को 'सुब्रह्मण्य' कहते हैं ।

१५-ग्रावस्तुत- 'होता के सहायक को 'प्रावस्तुत' कहते हैं ।

१६-उन्नेता:- यज्ञ पात्रों में सोमरस को भरने वाले को उन्नेता कहते हैं ।

सोम-याग के सोलह ऋत्विकों के भी चार प्रकार है:(१)अध्वर्युगण (२) ब्रह्मगण (३)होतृगण तथा (४) उद्गातागण ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन प्रत्येक गणों के चार-चार विभिन्न ऋत्विज् होते हैं, जिनके नाम भी भिन्न-भिन्न हैं ।

१-अध्वर्युगण-(१)अध्वर्यु(२) प्रतिप्रस्थाता (३) नेष्टा और (४) उन्नेता ।

(२) ब्रह्मगण-(१)ब्रह्मा (२) ब्राह्मणच्छंसी (३) आग्नीध्र और (४) पोत्र ।

३-होतृगण-(१) होता (२) मैत्रावरुण (प्रशास्ता) ३-आच्छावक और (४) ग्रावस्तुत ।

४-उद्गातृगण (१) उद्गाता (२) प्रस्तोता (३) प्रतिहर्त्ता और (४) सुब्रह्मण्य ।

साधारणतया-होता या यजमान वह व्यक्ति होता है, जो उस कार्य को आरम्भ करने का, आयोजन करने का संकल्प करता है । इसे संचालक भी कहते हैं ।

अध्वर्यु-यज्ञ-सामग्री, समिधा, वेदी, कुण्ड, घृत, पात्र आदि की शुद्धि तथा अग्नि में चींटी आदि कीड़े-मकोड़े न जाने देने का ध्यान रखता हैं । उद्गाता-सामगान वेद मन्त्रों का गायन अथवा भजन कीर्तन आदि गाकर जनता की मनोभावनाएँ परमार्थ की ओर विकसित करता है । ब्रह्मा इन सबका प्रधान, सभापति, नेता, नियंत्रक एवं यज्ञ-उद्देश्य के अनुकूल ही सब काम हो, इसका ध्यान रखता है । ऋत्वज् यह सभी हैं । ऋत्विज् का एक अर्थ ऋतु का समय एवं परिस्थिति को ध्यान में रखने वाला भी है । इन सभी ऋत्विजों को यज्ञ आरम्भ करने से पूर्व आवश्यक जानकारी प्राप्त करना, एवं परिस्थिति का विचार करके कार्य का आयोजन करना उचित होता है ।

यज्ञ के लिए ही किसी भी कार्य को यदि भली प्रकार पूरा करना है, तो इन सब कार्यों का आयोजन करना होता है (१) कार्य के सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी प्रामाणिक रूप से प्राप्त करना (२) उसके उपयुक्त अवसर एवं परिस्थिति का ध्यान रखना (३) अपने कार्य के सम्बन्ध में अनुकूल वातावरण पैदा करना, प्रचार या विज्ञापन करना (४) कार्य-पद्धति एवं उपकरणों में खराबी न होने देना (५)उद्देश्य ऊँचा रखना (६) कार्य का नियन्त्रण और निरीक्षण तथा विवेचन बारीकी के साथ करना । यही कार्य यज्ञ-कार्यकर्ताओं के हैं । अन्य कार्यों में भी इन सब बातों का ध्यान रखने से वे सफलता एवं पूर्णता प्राप्त करते हैं । यज्ञ जैसे महान कार्य में तो इन कर्तव्यों की ओर विशेष रूप से ध्यान रखा जाना चाहिये । इन सब कार्यों में सभी का ध्यान और सहयोग होना आवश्यक है । 'सम्मिलित जिम्मेदारी' के आधार पर सरकारों के मन्त्रिमन्डल बनते हैं । यज्ञ में भी सब कार्यकर्त्ताओं की सम्मिलित जिम्मेदारी है, फिर भी जिस प्रकार एक विभाग का एक मिनिस्टर होता है, वैसे ही उपरोक्त कार्य पद्धतियों के उत्तरदायी व्यक्ति अलग-अलग हों, तो अधिक उत्तम व्यवस्था हो सकती है ।

यज्ञ में इन कार्यकर्त्ताओं-विभागाध्यक्षों के स्थान इस प्रकार होते हैं-यजमान-पूर्वाभिमुख ।

यजमान-पत्नी-यजमान के पास दाहिने अङ्ग की ओर । उद्गाता-यजमान के सामने ।

अध्वर्यु-बाई ओर,

ब्रह्मा-दाहिनी ओर,

यज्ञ के सब कार्यकर्त्ता अपने-अपने स्थान पर स्वस्थ शाति चित्त, प्रसन्न, शुद्ध शरीर तथा शुद्ध वस्त्र-धारण करके बैठते हैं और आचार्य के आदेशानुसार सब कार्य अनुशासन एवं शिष्टता पूर्वक करते है । कार्यकर्त्ता हवन के दिनों में उपवास, व्रत, संयम, ब्रह्मचर्य, भूमिशयन आदि तपश्चर्याओं के साथ रहते हैं, ऐसा शास्त्रीय निर्देश है । ऐसा न होने पर यज्ञीय लाभ, जो मिलने चाहिए संदिग्ध ही बने रहते हैं ।

सामान्य मनुष्य वार्त्तालाप से शब्दोच्चार का प्रयोग करते हैं । जीभ ही उनकी अभिव्यक्तियों को प्रकट करती है । यज्ञ-पुरोहित अपनी जिह्वा को आहार तथा सम्भाषण का संयम करके सरस्वती स्तर की बनाते हैं । उनके वचन ही मन्त्र होते हैं । मन्त्रों का चमत्कारी प्रतिफल उत्पन्न करने के लिए परिष्कृत स्तर की ऐसी जीभ चाहिए, जिसके वचन उच्चारण को 'वाक्' कहा जा सके । वाक् को देवत्व की अभिव्यक्ति कहा गया है । मन्त्राराधन में उसी के माध्यम बनाने से काम चलता है । धनुष सही हो, तो ही तीर दूर तक जाता है और निशाना सही साधता है । मन्त्र तीर है और परिष्कृत वाणी 'वाक्' को प्रत्यञ्चा की उपमा दी गई है । कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

संस्कृतज्ञ अथवा कर्मकाण्ड ज्ञाता मन्त्रों का सही उच्चारण भर कर सकता है । इससे उसकी शिक्षा को सही समझा जा सकेगा । मन्त्र का प्रभाव दिखाने में उच्चारण की प्रवीणता नहीं, उसकी आत्मशक्ति काम करती है । परिष्कृत स्तर को वाणी ही यज्ञ जैसे अध्यात्म विज्ञान से सम्बन्धित कार्यों में उपयुक्त परिणाम प्रस्तुत कर सकती है । वाक् की महिमा शास्त्रकारों ने विस्तारपूर्वक बतलाई है और उसी का प्रबन्ध हो जाने पर यज्ञ की सफलता का विश्वास दिलाया है । शास्त्र कहते हैं-

वागक्षकं प्रथमजाऋतस्य वेदानां माताऽमृतस्य नाभिः ।

-तैत्त० ब्रा० २-८-८-५

अर्थात्-कल्याण का प्रथम सूत्र वाक् है । वही वेदों की माता है । अमृत की धुरी उसी को कहा गया है ।

चत्वारि वाक् परिमिता पदानि तानि विन्दु ब्राह्मणाये मनीषिणः। गुहा त्रीणि निहिता ते गायन्ति तुरीय वाचो मनुष्या बदन्ति ।।

-ऋग्वेद १-२२-१६-४०

अर्थात्-यह 'वाक्' शक्ति चार चरण वाली है । उसे पूरी तरह केवल ब्रह्मवेत्ता ही जानते हैं । इनमें से तीन तो अन्तः गुफा में छिपे हैं । मात्र बैखरी को ही जिह्वा द्वारा मनुष्य बोलते हैं ।

क्लयद्वाग्यदन्त्य विचेतनानि ।
राष्ट्री देवानां निषसाद मन्द्रा ।
चतस्त्रवलर्जदुदुरे पयांसि ।
क्वल्विदस्याः परमं जगाम् ।।

-सरस्वती रहस्योपनिषद्

अर्थात्-यह 'वाक्' विश्वव्यापी है । समस्त जड़चेतन उसके प्रभाव क्षेत्र में आते हैं । देवताओं का सूत्र संचालन वही करता है । न जाने हम उसका मर्म कब जान सकेंगे ।

स वै वाचमेव प्रथमात्यवहत् । सा यदा मृत्युमत्य मुच्यत ।
सोऽग्निरभवत् । सोऽयमग्निः परेण मत्युमतिक्रान्तोदीप्यते

-वृह० उ० १-३-१२

अर्थात्-प्राण ने 'वाक्' के सहारे मृत्यु को पार किया । यह वाक् अग्नि बनकर अमर हो गई, वेद असीम शक्तियों से ओत-प्रोत होकर ज्योतिर्मयी बने ।

यज्ञ कराने वाले पुरोहितों की प्रवीणता, पवित्रता एवं प्रखरता ही वह प्रमुख शक्ति है, जिनसे अध्यात्म विज्ञान के प्रत्यक्ष प्रयोग और यज्ञ अपनी सार्थकता सिद्ध करते हैं । जिन्हें इस सन्दर्भ में रुचि हो, उन्हें यज्ञ-प्रयोजन के साधन जुटाने एवं उपयुक्त याजक तो तलाशने ही चाहिए । साथ ही यह भी प्रयत्न करना चाहिए, कि इस सन्दर्भ में जो कुछ भी प्रयुक्त किया जाएँ, वह आध्यांत्मिक सुसंस्कारिता से भरा-पूरा हो । यह न बन पड़ने पर प्रयत्न प्रायः निष्फल ही चले जाते हैं । क्योंकि कहा गया है-

जिह्वा दग्धा परान्नेन करौदग्ध प्रतिग्रहात् ।
मनोदग्धम् परस्त्रीभि मन्त्र सिद्धि कथं भवेत् ।।

-तन्त्रसार

अर्थात्-पराया अन्न खाने से जिह्वा जल गई । दान लेने से हाथ जल गये । कामुकता से मन जल गया । फिर भला मन्त्र सिद्धि कैसे हो !

यज्ञ से सूक्ष्म संस्कार का समुद्भव

मीमांसाकार ने कहा है कि यज्ञ के परिणाम स्वरूप एक ऐसा सूक्ष्म संस्कार उत्पन्न होता है, जो कभी विनष्ट नहीं होता । यदि यजन कर्त्ता ने समस्त व्रत-अनुबन्धों को निभाया है, तो उसका परिणाम देवत्व की प्राप्ति के रूप में मिलकर ही रहता है । मीमांसाकार ने इस सूक्ष्म संस्कार को अपूर्व या अदृष्ट नाम दिया है । यज्ञ-क्रिया से समुत्पन्न यह अपूर्व रूप सूक्ष्म संस्कार व्यक्ति को समयानुसार महत्वपूर्ण लाभों की प्राप्ति कराता है । ब्राह्मणादि ग्रन्थों में यज्ञ का श्रेष्ठतम कर्म के रूप में इसी कारण उल्लेख हुआ है ।

यज्ञ का कारण शक्ति को सूक्ष्मीकरण के सन्दर्भ में कुछ उदाहरणों द्वारा समझा जा सकता है । प्याज के छिलके के भीतर, केले के तने के भीतर एक के भीतर एक परत आती चली जाती है । वस्तुओं एवं प्राणियों के भीतर भी इस आधार पर परतें बनती है । सूक्ष्म-अशरीरी जिसके अस्तित्व के रूप में भूत-प्रेतों के अनेकों प्रमाण मिलते हैं । जिसका कारण देव शरीर है । यह तीनों एक से अधिक शक्तिशाली हैं, किन्तु साथ ही सूक्ष्मतम भी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पदार्थ के भी तीन शरीर होते हैं । तुलसी का मोटा स्थूल रूप मानवी जीवनचर्या में दैनन्दिन दिखाई पड़ता है । इस रूप में वह मक्खी, मच्छरों को भगाती, वातावरण संशोधित करती है । सूक्ष्म में वह और भी प्रखर होकर मनोरोगों को मिटाती है । चरणामृत-पंचामृत में मिल जाने पर वह मन में पवित्रता भर देती है, देव कर्मों के प्रयोजन में प्रयुक्त होती है । रासायनिक संरचना की दृष्टि से तुलसी व करंजवा मिलते-जुलते हैं, पर सूक्ष्म एवं कारण स्थितियों में भिन्नता स्पष्ट मालूम होती है ।

यज्ञ में चार आधार हैं, और वे चारों ही सूक्ष्म बनाने पड़ते हैं । पहला 'व्यक्ति' दूसरा 'अग्नि' तीसरी वाणी, चौथा 'चरु ।' यदि ये चारों ही स्थूल रूप में प्रयुक्त किये जायें, तो उनका यज्ञीय-प्रयोजन पूरा न होगा और जो चमत्कारी परिणाम वर्णित किया गया है, वह हस्तगत न हो सकेगा ।

यज्ञ-प्रक्रिया में चार ऋत्विज् गण भाग लेते हैं- होता, अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा । ये चारों किसी भी व्यक्ति का नामकरण करके नियुक्त नहीं कर दिये जाते, वरन् उन्हें अमुक समय तक अमुक स्तर का त्याग, तप करना पड़ता है । यदि तप-साधना का उपक्रम न अपनाया गया हो, तो वह प्रभाव उत्पन्न न हो सकेगा, जो यज्ञ की सूक्ष्म एवं कारण-शक्ति उभारने हेतु अभीष्ट है । प्रथम होता ज्ञानकाण्डी ऋग्वेद के अनुशासनों पर चलने वाला होता है । अध्वर्यु कर्मकाण्डी, यजुर्वेदी एवं उद्गाता गायक सामवेदी होता है, साधारण गाने वाला नहीं, वरन् भक्ति भाव का समर्पित साधक । ब्रह्मा चतुर्वेदों का जानकार, अथर्ववेदी जो सारी प्रक्रिया का नियमन करने वाला, प्रबन्ध-निदेशक, व्यवस्था-संयोजक है । यह वर्णन यहाँ व्यक्तित्व के सूक्ष्मीकृत उच्चस्तरीय स्वरूप को दर्शाने के लिए किया गया जो कि याजक गणों, ऋत्विजों को हस्तगत करना पड़ता है ।

यज्ञ जैसे श्रेष्ठतम कर्म के चारों ऋत्विज् गण साधक स्तर के होने पर ही उस प्रयोजन को पूरा कर पाते हैं । दशरथ द्वारा पुत्रेष्टि यज्ञ सम्पन्न होना था, उसके लिये जिस स्तर के अध्वर्यु की अपेक्षा थी, वह शृंगी ऋषि के माध्यम से पूरा हुआ इसके पूर्व उनके सभी प्रयास असफल रहे थे । संयम-तपोबल के धनी ऋत्विज् के ऋषि द्वारा यह कार्य सम्पन्न होते ही अभीष्ट कार्य पूरा हो गया । यह व्यक्तित्व के सूक्ष्मीकृत कारण रूप की फलश्रुति है ।

ऋत्विजों के बाद यज्ञाग्नि का प्रसंग आता है । यज्ञाग्नि पवित्र है, उसे अभिमन्त्रित किया जाता है । माचिस की तीली से, अँगीठी जलाने अथवा हुक्का गुड़गुड़ाने के लिये सुलगाने से वह प्रयोजन पूरा नहीं होता, यों ही आहुतियाँ देना आरम्भ नहीं कर दी जातीं, अग्नि-मन्त्र शक्ति द्वारा अभिमन्त्रित कर मंथन के माध्यम से प्रकट की जाती हैं । अखण्ड दीप में जो अग्नि सतत ज्वलनशील रहती है, वह यज्ञाग्नि का ही एक रूप है ।

आहुति दी गयी सामग्री को अग्नि ऊपर ले जाती हैं एवं वायु उसे अन्तरिक्ष में ले जाती है । भूमि पर होम होता है, लेकिन यज्ञाग्नि की उर्ध्वीकरण की शक्ति उसे अन्तरिक्ष में तथा फिर अग्नि के द्वितीय, किन्तु अद्वितीय रूप विद्युत-ऊर्जा के माध्यम से और भी ऊपर ले जाता है । आहुति दी गयी हवि, अग्नि और विद्युत से ऊँची उठती हुई स्थूल से सूक्ष्मतम होती हुई अपने दिव्य रूप को प्राप्त होती है । अपने इस सूक्ष्मीकृत रूप में यज्ञाग्नि न केवल मनुष्य, प्राणी जगत, वनस्पति जगत को प्रभावित करती है, वरन् समग्र पर्यावरण एवं परोक्ष वातावरण का नियमन, संशोधन, एवं अनुकूलन का प्रयोजन पूरा करती है । यज्ञ-ऊर्जा मात्र अग्निहोत्र से उत्पन्न ताप नहीं, अपितु एक अति सूक्ष्म सामर्थ्य सम्पदा है, जो व्यक्ति एवं समग्र वातावरण पर प्रभाव डालकर उन्हें शक्ति-सम्पन्न बनाती है ।

तीसरा पक्ष मन्त्र-शक्ति अथवा वाणी का है । कोई भी संस्कृत पढ़ा व्यक्ति, संस्कृत भाषा में सही-सही उच्चारण कर सकता है । पर इससे क्या ? इतने भर से तो प्रयोजन पूरा नहीं होता । जो कथा शुकदेव जी ने परीक्षित को सुनाई, यह कोई अन्य ऋषि से सम्भव नहीं हो पाती । जबकि उनके पिता मन्त्रों के दृष्टा माने जाते थे । कोई भी व्यक्ति अक्षरों का स्मरण कर, नाम-जप द्वारा ऋषि या दृष्टा नहीं कहा जा सकता । इसलिये कुछेक अपवादों के अतिरिक्त पुरातन काल में हर ऋषि कुछ चुने हुए मन्त्रों के प्रवीण पारंगत एवं दृष्टा कहे जाते थे । इस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सम्बन्ध में गायत्री मन्त्र के ऋषि-दृष्टा विश्वामित्र का उल्लेख किया जा सकता है, जिनका नाम विनियोग प्रसंग में लिया जाता है ।

ज्ञान एवं कर्म की अपनी सीमा है, किन्तु भाव का उदात्तीकरण जब वाणी के माध्यम से मन्त्रों द्वारा होता है तो वह मानवी काया के अन्तराल को ही नहीं, सारे वातावरण को झकझोर डालता है । यज्ञ में वाणी का प्रयोग सूक्ष्म रूप में सामगान के रूप में होता है । भावप्रधान संगीत लहरी में गायी गयी ऋचाएँ सारे शरीर को स्पन्दित कर डालती है, साथ ही सारा वायुमण्डल आन्दोलित हो उठता है । सामवेद की इस प्राणदायिनी मधुर रस वर्षा को **छान्दोग्योपनिषद् ने इस प्रकार कहा है-वाचः ऋक् रसः ऋचः सोम रसः ।**

यह देव-संस्कृति का एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक पक्ष है कि वाक्शक्ति के विस्तृतीकरण हेतु यज्ञाग्नि का एम्पलीफायर के रूप में प्रयोग होता है । परिष्कृत वाणी जब विशिष्ट व्यक्ति के मुख से विशिष्ट प्रयोजन के लिये निकलती है, तो मिसाइल का काम करती है । शब्द-शक्ति का यह सूक्ष्मीकृत रूप आज अल्ट्रासोनिक तरंगों के रूप में विभिन्न रोगों के निदान एवं चिकित्सा कार्य में प्रयुक्त होता रहा है, किन्तु शाप-वरदान तथा परामर्श-सत्संग के रूप में यह चिरपुरातन काल से प्रयुक्त होता रहा है । ऐसे शब्दभेदी वाण तो आज के युग में देखे नहीं गए जो लक्ष्य बेधकर उसी स्थान पर वापस लौट आएं किन्तु इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में वैज्ञानिक आश्वस्त हैं कि शक्ति, सम्पन्न विचार क्वाण्टा के समुद्र में प्रकाश की गति से दौड़ते हैं एवं लक्ष्य सिद्धि के बाद वापस लौट आते हैं । लेसर व मेसर के माध्यम से वैज्ञानिकों ने वाक् की इस सूक्ष्म शक्ति को ही सिद्ध किया है ।

चौथा प्रकरण हविष्य एवं चरु का है । स्थूलतः यह पदार्थ-परक होते हैं, किन्तु यज्ञ प्रक्रिया में इनकी कारण शक्ति को उभारा जाता है । उपयुक्त याजक द्वारा ही हविष्य का संग्रह, पवित्रीकरण एवं संस्कारीकरण किया जाता है । यज्ञाग्नि में पकाये गये चरु में ही उन अंश का समावेश होता है, जो आनुवांशिकी से लेकर कर्म-प्रारब्ध के सूक्ष्म संस्कारों पर प्रभाव डालते हैं । होम किया जाने वाला पदार्थ कितना पवित्र है, शुद्ध है, उसी पर उसकी कारण-शक्ति का प्रकटीकरण निर्भर है । पदार्थ तो अपने स्थूल रूप में मात्र एक वनस्पति, खाद्यान्न-मेवा अथवा दुग्ध रूप में है । लेकिन यज्ञाग्नि का स्पर्श उसे परिवर्धित कर डालता है । जिस प्रकार प्राणाग्नि का उद्दीपन कुण्डलिनी - जागरण के रूप में तथा साधना द्वारा योगाग्नि का प्रकटीकरण ब्रह्मतेजस् के रूप में देखा जाता है । ठीक उसी प्रकार यज्ञ-प्रयोजन में प्रयुक्त होने वाली हर सामग्री की परिष्कृति चमत्कारी होती है । शरीर रोग एवं मनोविकारों के निवारण तथा जीवनी शक्ति सम्वर्धन में इनकी भूमिका को भलीभाँति देखा जा सकता है । चरु, जो कि मेवे, खाद्यान्न, दुग्ध, शर्करा का सम्मिश्रण होता है एवं यज्ञाग्नि में पकाया, संस्कारित किया जाता है, विशेष रूप से महत्व दिया जाना चाहिए, क्योंकि इसके प्रभाव न केवल जीवकोश, वरन् डी० एन० ए० जीन्स जैसे सूक्ष्मतम घटक पर पड़ते हैं ।

इस प्रकार ऋत्विज्, यज्ञाग्नि, वाक् शक्ति एवं हविष्य चरु में चारों ही यजन प्रक्रिया के ऐसे प्रसंग हैं, जिनमें प्रखरता के सूक्ष्मीकरण का प्राधान्य है । वस्तुतः यज्ञ एक ज्वलन-प्रक्रिया भाव नहीं है, वरन् चारों तत्वों की कारण शक्ति को उभारने की एक विज्ञान सम्मत प्रक्रिया है । इतना न किया जाय तो यज्ञ प्रयोजन में अभीष्ट सफलता नहीं प्राप्त होती ।

ऋत्विक् अध्वर्यु, उद्गाता, ब्रह्मा आदि यज्ञकर्त्ता परिकर के शरीरों में ब्रह्मचर्य, उपवास व्रत धारण आदि से उत्पन्न हुई ऊर्जा सद्ज्ञान और सद्भाव उत्पन्न करती है, उसके प्रभाव से विग्रहों और संक्षोभों का शमन होता है । अनावृष्टि, महामारी, युद्ध, अराजकता जैसे उपद्रवों का निराकरण होता है और सुख -शान्ति की स्थापना के आधार बनते हैं ।

श्रद्धा युक्त मन्त्र उद्भव सामान्य जिह्वा में शब्द संचार मात्र ही नहीं होता, वरन् उसके भीतर ब्रह्म वाणी 'वाक्' काम करती है । वह अन्तराल की गहराई में उत्पन्न होती है और जिह्वा को प्रखर बनाने वाले विविध जप अनुष्ठान से उद्भुत होती है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस वाक् को शब्दभेदी बाण कहा गया है जो सूक्ष्म जगत में अपना अद्‌भुत काम करती है और देव जगत में निर्धारित लक्ष्य-स्थल तक जा पहुँचती है । दैवी शक्तियों को, ब्राह्मी अनुकम्पा को आकर्षित करना उसी का काम है । वरदान देकर वही लौटती है । सिद्धियों का दर्शन उसी के प्रयोग से सम्भव होता है ।

यजमान के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है । यज्ञपुरुष की पत्नी का नाम श्रद्धा है । यजमान को यज्ञ का और अग्निहोत्र की क्रियाप्रक्रिया को श्रद्धा का प्रतिनिधित्व करना पड़ता है । कहा गया है कि पत्नी के बिना यज्ञ नहीं होता पर यह बात आलंकारिक ही है । ब्रह्मचारी, विधुर-विधवायें, वनवासी, वानप्रस्थ यह सभी यज्ञ-कृत्य करते हैं फिर पत्नी का बन्धन क्यों ? यहाँ पत्नी का अर्थ श्रद्धा है । श्रद्धा को दक्षिणा भी कहा गया है । इसमें कोई प्रथकता नहीं है । श्रद्धा-भावना का क्रिया रूप ही दक्षिणा है । यज्ञ को त्याग और पवित्रता का समन्वय कहा गया है । यह आधार तभी बनता है , जब अन्तःकरण में श्रेष्ठता के प्रति असीम प्यार हो और उस प्यार की प्रौढ़ता का परिचय दक्षिणा के उदार अनुदान के रूप में मिलने लगे ।

प्राचीन यज्ञानुष्ठानों में यज्ञस्थली में 'यूप' खड़ा किया जाता था । उसी की छाया में यजमान तथा पत्नी को व्रत-रज्जु में बाँधने की क्रिया होती थी । यूप भावी जीवन की आदर्श क्रिया पद्धति का उद्‌घोष है । उसकी छाया में श्रद्धायुक्त यजमान का अन्तःकरण स्वेच्छापूर्वक बँधता है । उसके संकल्प की साक्षी देव समुदाय होता है । इस कृत प्रकरण की पृष्ठभूमि का एक ही मन मर्म है-जीवन-प्रक्रिया को अगले दिनों अधिक पवित्र और प्रखर रखे जाने का संकल्प । अग्नि के सम्पर्क में हर वस्तु परिपक्व होती है । सत्संकल्प भी यज्ञाग्नि के सहयोग से प्रखर होगें, तो उज्ज्वल भविष्य की संरचना निश्चित रूप से होगी ही ।

यज्ञ यूप से सम्बद्ध एक और साहसिक प्रकरण जुड़ता है, वह है, पशु बन्ध । इसी को दुर्बुद्धिवश पशु मान लिया गया । इस प्रकरण में संयोगवश कुछ ऐसे शब्दों का उपयोग आलंकारिक रूप से हो गया जो पशु-प्रवृत्ति और पशु-प्राणी दोनों के लिए प्रयुक्त हो सकते हैं । यजमान व्रतशील बनें-भावी जीवन में अधिकाधिक श्रेष्ठता के समावेश का सत्संकल्प करें । यह वरण-व्रत-बंध है । इसके समकक्ष ही दूसरा कृत्य है, पशु-बध । अर्थात् पशु प्रवृत्तियों का उद्‌देश्य यहाँ निरीह पशु को यज्ञ जैसे पुनीत कृत्य में किसी भी प्रकार मारने-काटने का वीभत्स कृत्य नहीं हो सकता, यह मारकाट तो पशु-प्रवृत्तियों की ही हो सकती है, जो व्यक्ति के भीतर कुसंस्कारों के कुविचारों के रूप में गहराई तक घुसी बैठी होती है ।

अज, अवि, गौ, अश्व, नर जैसे शब्द पशु बन्ध कृत्य के लिए प्रयुक्त हुए हैं । इनका अर्थ विशुद्ध रूप में दुष्प्रवृत्तियों से है । अज कामुकता को-अविमूढ़ता को, गो इन्द्रिय लिप्सा को-अश्व, उच्छृंखलता को, नर, अहंता को कहा गया है । इन्हीं का उच्छेदन संकल्प पशु बन्ध है । यहाँ बकरी, भेड़, गाय, घोड़ा, मनुष्य जैसे प्राणियों की हत्या करने की विसंगति बिठा देने से तो अर्थ का अनर्थ ही हो जायगा, फिर यज्ञ का तात्पर्य, परमार्थ न रहकर नृशंस क्रूर कर्म ही बन जायगा । भगवान बुद्ध को अपने समय में प्रचलित ऐसे ही अनर्थ से जूझने में अपनी सारी शक्ति लगानी पड़ी थी ।

यज्ञ-प्रयोजन में सुसंस्कारिता का समावेश

भारतीय संस्कृति के संस्कारों को संस्कृति कह सकते हैं । प्रकृत पदार्थ अनगढ़ स्थिति में होते हैं उन्हें सुरम्य, सुव्यस्थित एवं उपयोगी बनाने के लिए उन्हें संस्कारित किया जाता है । लोहा जमीन से जब निकलता है, तब विशुद्ध न होकर मिट्टी मिला होता है, उसे आग में तपाकर शोधित किया जाता है । हीरा खरादा जाता है । कच्ची धातुओं से उपयोगी औजार उपकरणों के रूप में परिवर्त्तन करने की प्रक्रिया भी ऐसी ही है । विष को अमृत बनाने वाली रासायनिक पद्धति के सम्बन्ध में भी यही कहा जायगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जन्मत: सभी नर पशु होते हैं, उन्हें सभ्य, सुसंस्कृत, महान देव बनाने का कार्य जिस रीति-नीति को अपनाने से सम्भव होता है, उसे संस्कार पद्धति ही नाम दिया जायगा । अपनी धर्म-परम्परा में जन्म से लेकर मरण-पर्यन्त पुंसवन से लेकर अन्त्येष्टि तक मनुष्य को सोलह बार निर्धारित कर्मकाण्डों के अनुसार संस्कारित किया जाता है । उन प्रेरणाओं के अनुरूप साधन जुटाते एवं अनुशासन रखने में ही सामान्य को असामान्य-नर-पशु को देव-मानव बनने का अवसर मिलता है । वस्तु का जितना महत्व है, उससे अधिक उसकी प्रस्तुत क्षमता सुन्दरता उभारने वाली कुशलता कलाकारिता की है । यह है संस्कृति का चमत्कार । जो मानवी कलाकारिता के सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक पदार्थ या प्राणी में दृष्टिगोचर होता है । इसी को परिष्कार की प्रक्रिया कहते हैं ।

अग्नि, प्रज्ज्वलन मनुष्य की सामान्य आवश्यकता एवं कुशलता है । इसके सहारे भोजन पकाने से लेकर कारखाने चलाने तक के अनेकानेक कार्य सर्वत्र सम्पन्न होते रहते हैं । इसी सामान्य को असामान्य बनाने की पद्धति अग्निहोत्र है । अग्नि प्रज्ज्वलन और अग्निहोत्र का मौलिक अन्तर एक ही है । एक अनगढ़ प्राकृत होता है, दूसरे में प्रयुक्त होने वाला प्रत्येक उपकरण संस्कारित किया जाता है । संस्कारित, अर्थात् अध्यात्म विज्ञान के आधार पर भाव सम्वेदना एवं चेतन ऊर्जा द्वारा किया गया अनुप्राणित है । इस आधार पर सामान्य जड़ पदार्थों को भी दिव्य क्षमता सम्पन्न बनाया जाता है और उसके उसी स्तर का काम लिया जाता है ।

प्रसाद, पंचामृत, चरणोदय, यज्ञोपवीत, प्रतिमा, आदि का भौतिक बाजारू मूल्य नगण्य है, पर उन्हें उच्चस्तरीय भावनात्मक प्रयोग-प्रक्रिया द्वारा दिव्य बनाया जाता है । अभिमन्त्रित करना इसी को कहते हैं । इसमें मात्र मन्त्रोच्चार से ही काम नहीं चलता वरन् और भी ऐसे कितने ही भाव-पक्ष जुड़ते हैं जिनके कारण जड़ वर्ग की वस्तुएँ सचेतन से भी एक कदम आगे बढ़ कर देव-वर्ग में गिनी जाने योग्य बन जाती हैं । तब उनका प्रभाव भी वैसा ही होता है । प्रतिभा में प्राण-प्रतिष्ठा करने से लेकर-अभिमन्त्रित वस्तुएँ आशीर्वाद-वरदान देने तक का सुविस्तृत अनुदान प्रकरण इसी तथ्य पर टिका हुआ है कि प्रयुक्त वस्तुएँ कितनी प्रखरता के साथ अनुप्राणित की गईं ।

यज्ञ का तत्वज्ञान यहीं से आरम्भ होता है । अग्नि प्रज्ज्वलन से तो गर्मी भर पैदा की जा सकती है । जलाने-पकाने से जो लाभ-हानि मोटे तौर पर हो सकती है, उस परिणाम का पता लगाया जा सकता है । पर जब अग्निहोत्र की देव सत्ता को-दिव्य ऊर्जा उत्पादन की संज्ञा मिलती है, तो निश्चय उसमें उन विधि-विधानों का चमत्कार होता है, जो मात्र क्रिया-कृत्य न होकर भाव-सम्वेदनाओं से भरे होते हैं और उनका सूत्र-संचालन उष्कृष्ट स्तर की जीवन-पद्धति अपनाने वाले याजक वर्ग द्वारा होता है । अभिमन्त्रण की शास्त्रीय परम्परा में देवत्व का समावेश करने वाला रहस्य उस संस्कार प्रकरण में ही खोजा जा सकता है,जो यजनकृत्य के हर छोटे-बड़े उपकरण या कर्मकाण्ड के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ा होता है । यदि उस प्राण-प्रतिष्ठा की उपेक्षा की जाय और मात्र अग्नि में सुगन्धित पदार्थ भर होमे जाते रहे, तो उनका प्रतिफल उतना ही होगा, जितना कि अगरबत्तियों का एक गट्ठा अँगीठी पर रखकर जला देने का ।

सुसंस्कारी अग्नि, समिधा, हविष्य, उपकरण, सम्बद्ध व्यक्ति एक निर्धारित पद्धति के अनुरूप संस्कारित किया जाता है । इसमें मन्त्रोच्चार से लेकर अनेक निर्धारित क्रिया-कृत्यों का समावेश करना होता है और वह कार्य बाजारू लोग नहीं , ब्राह्मणोचित जीवनचर्या अपनाने वाले पुरोहित द्वारा सम्पन्न किया जाता है । इतना बन पड़े, तो समझना चाहिए, सच्चे अर्थों में अग्निहोत्र हो रहा है और उसका निर्धारित प्रतिफल मिलने का आधार बन रहा है ।

देव-संस्कृति में हर वस्तु को संस्कारित करने पर जोर दिया गया है । स्नान, जल, परोसा भोजन, शयन, जागरण आदि सभी को संस्कारवान बनाने की विधि-व्यवस्था निर्धारित है और उसी को नित्य कर्म विधि कहते हैं । देव-पूजा में तो प्रतिमा से लेकर उपचार-सामग्री तक को दिव्यता सम्पन्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनाने के लिए मन्त्र पाठ एवं दूसरे कृत्य करने पड़ते हैं । उससे पूजा कृत्य भावनात्मक ऊर्जा से भरा-पूरा बनता है और देखने में खिलवाड़ जैसा लगने पर भी महान परिणामों का आधार बनता है ।

यज्ञाग्नि चूल्हे या अलाव में से निकालकर नहीं लाई जाती थी, वरन् विधि-विधान के साथ आरणि मन्थन से उत्पन्न की जाती थी । यजन-कृत्य के लिए प्रयुक्त होने वाली अग्नियाँ कर्मकाण्डी ब्रह्मवेत्ताओं द्वारा अखण्ड सुरक्षित एवं नित्य यजन द्वारा परिपुष्ट रखी जाती थीं । उन्हीं को यज्ञ कार्यों में उपयोग किया जाता था । आह्वनीय, गार्हपत्य, दक्षिणाग्नि ये तीन अग्नियाँ व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं विश्व कल्याण के देव-प्रयोजनों के निमित्त प्रयुक्त होती थीं । इन्हें सुरक्षित रखने तथा यजन द्वारा परिपुष्ट करते रहने वाले अग्निहोत्री शास्त्रों में 'अहिताग्नि' नाम से सम्मानित किये गये हैं और देव-कृत्यों में उन्हें प्रमुखता, प्रधानता देने का निर्देश किया गया है । अग्नि-स्थापना, प्रज्ज्वलन, यजन, स्विष्टिकृत पूर्णाहुति, वसोधारा आदि की आहुतियों में विशेष मन्त्रोच्चार एवं विधि-विधान अपनाना पड़ता है । इसे संस्कार-प्रकरण ही समझा जाना चाहिए ।

जिस भूमि पर यज्ञ किया जाय , जहाँ वेदी या कुण्ड बनाया जाय, वहाँ भूमि-शोधन संस्कार करना होता है । शास्त्रों में आया है कि भूमि की शुद्धि सम्मार्जन (स्वच्छ झाड़ देने) प्रोक्षण दूध, गोमूत्र या जल छिड़कने या धोने , उपलेपन (गोबर से लीपने) अवस्तरण (कुछ मिट्टी को ऊपर डाल देने) एवं उल्लेखन (मिट्टी को कुछ खुरचकर निकाल देने) से हो जाती है । जब ये विधियाँ भूमि की स्थिति के अनुसार प्रयुक्त होती हैं, तो उस प्रकार की अशुद्धि दूर हो जाती है । **धर्मस्तु सम्मार्जन प्रोक्षणोपलेपनावस्तरणोल्लेखनैर्यथास्थान दोषविशेषात्प्रायत्यम्** । *-बा० ध० सू० १/५/६६ ।* यही बात वशिष्ठ *३//५६* में भी आती है । एक अन्य स्थान पर *-बौधा० ध० सू० (१/६/१७-२१)* में आया है-जब कठोर भूमि अशुद्ध हो जाय तो वह उपलेपन (गोबर से लीपने) से शुद्ध हो जाती है, नरम (छिद्रवती) भूमि-कर्षण (जोतने) से शुद्ध होती है, अशुद्ध तरल पदार्थ से भीगी भूमि प्रच्छादन किसी अन्य स्थान से शुद्ध मिट्टी लाकर ढँक देने से और अशुद्ध पदार्थों को हटा देने से शुद्ध हो जाती है ।

वशिष्ठ *-३/५७* ने बौधायन के समान पाँच शुद्धिसाधन दिये हैं । मनु *५/१२४* ने भी पाँच साधन दिये हैं-झाड़ू से बुहारना, गोबर से लीपना, जल-छिड़काव, खोदना (एवं निकाल बाहर करना) और उस पर (एक दिन एवं रात) गायों को रखना । *विष्णु० २३/५७* ने छठा अन्य भी जोड़ दिया है, यथा-दाह (कुछ जला देना) *याज्ञ० (१/८८)* ने दाह एवं काल जोड़कर साथ साधन दिये हैं ।

वामन पुराण (१४/६८) के अनुसार भूमि की अशुद्धि का दूरीकरण खनन, दाह, मार्जन, गोक्रम (गायों को ऊपर चलाना), लेपन, उल्लेखन (खोदना) एवं जलमार्जन से होता है-

भमिर्विशुद्यते खातदाहमार्जन गोक्रमै ।
लोपादुल्लेखनात्सेकाद्वेश्म सम्मार्जनार्चनात् ।।

-वामन पुराण १४/६८

देवल *-अमिता० एवं जपरार्क, याज्ञ, १/८८* ने विस्तृत विवरण उपस्थित किया है । उनके मत से अशुद्ध भूमि के तीन प्रकार हैं, अमेध्य (अशुद्ध) दुष्ट एवं मलिन । जहाँ प्रजनन कृत्य हो, कोई मरे, या जलाया जाय या जहाँ कुकर्मी रहें या जहाँ दुर्गन्ध युक्त वस्तुओं, विष्ठा आदि को ढेरी आदि हो, जो भूमि इस प्रकार गन्दी वस्तुओं से भरी हो उसे अमेध्य घोषित किया गया है । कुत्तों, सूअरों गधों एवं ऊँटों के निवास वाली भूमि दुष्ट कही जाती है ।

इसके उपरान्त देवल ने इन भूमि प्रकारों की शुद्धि की चर्चा की है । शुद्धि पाँच प्रकार की होती है, यथा खनन, दहन, अवलेपन, वापन (मिट्टी से भर देना) एवं पर्जन्य वर्षण । इन पाँचों द्वारा अमेध्या (अनुपयुक्त) भूमि की शुद्धि की जा सकती है, इन्हीं विधानों का संकेत महर्षि देवल ने इस प्रकार किया है-

"दहनं खननं भूमखलेपन वापन । पर्जन्य वर्षण चेति शौचं पञ्चविधं स्मृतम् ।। पञ्चधा वा चतुर्धा वा भूरमेध्या विशुध्यति । द्विधा त्रिधा वा दुष्टा तु शुध्यते मलिनैकधा ।। देवल *-शु० कौ० ।*

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ उपकरणों में स्रुवास्रुचि, प्रणीता, प्रोक्षणी आज्य स्थली चरुस्थली आदि का प्रयोग होता है । उन्हें काष्ठकार से खरीदकर ऐसे ही प्रयुक्त नहीं किया जा सकता । इन्हें आरम्भ में तो देव प्रयोजन में प्रयुक्त हो सकने का कृत्य करना ही पड़ता है । हर यज्ञ में उन्हें प्रयुक्त करते समय अग्नि-संस्कारित करना होता है । इन्जेक्शन की पिचकारी की तरह इनका भी परिशोधन आवश्यक माना गया है । इसका निर्देशन-सूत्र ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर हुआ है ।

शतपथ के संस्काराध्याय में समिधाओं को संस्कृत करने के लिए उसके धोने, अभिसिंचित करने का विधान है -

प्रोक्षणीरध्वर्युरादत्ते । स इध्ममवाग्रे प्रोक्षति कृष्णोऽस्याखरेष्टोऽग्नये त्वा जुष्टं प्रोक्षामि-इति । तन्मेध्यमवैतदग्नये करोति ।। १ ।।

-शतपथ१ १/३/३

अर्थात्-अध्वर्यु प्रोक्षणी को लेता है । यह अध्वर्यु **कृष्णास्याऽखरेष्ठोऽग्नये** इत्यादि मन्त्र बोलते हुए समिधाओं का अभिसिंचन करता है । इस प्रोक्षण-कर्म द्वारा समिधाओं को यज्ञ-कर्म के अनुरूप संगमनीय पावन और पवित्र बनाया जाता है ।

मार्जनं यज्ञपात्राणां पाणिना यज्ञकर्मणि ।
चमसाना : ग्रहाणां च शुद्धि प्रक्षालनेन तु ।।
चरुणां सक् स्रुवाणां च शुद्धिरुष्णेन वारिणा ।
स्फ्य शूर्प शकटानं च मूसलोलखयस्य च ।।

-मनु० ५/११६-११७

अर्थात्-यज्ञ कर्म में यज्ञ-पात्रों की शुद्धि हाथ द्वारा मार्जन करने से और चमस तथा ग्रह नाम के पात्रों की शुद्धि जल के धोने से होती है । चरु तथा स्रुक् और स्रुवा आदि यज्ञ पात्रों की शुद्धि गरम जल से और स्फ्य, शूर्प, शकट, मुसल और ओखली की शुद्धि जल के प्रक्षालन से होती है ।

याज्ञवल्क्य स्मृति में भी कहा है-

'मार्जनं यज्ञपात्राणां पाणिना यज्ञकर्मणि ।'

-आचाराध्याय, १८५

अर्थात्-'यज्ञ-कर्म में यज्ञ पात्रों की शुद्धि दाहिने हात से कुशा द्वारा मार्जन करने से ही हो जाती है ।

स्वच्छता का उपयोग सर्वत्र होना चाहिए । अस्पतालों, भोजनालयों, में जिस प्रकार सफाई का ध्यान रखा जाता है । उसी प्रकार यज्ञ-कृत्य की प्रत्येक वस्तु तथा विधि-व्यवस्था में इस प्रकार का ध्यान रखा जाय । स्नान, शुद्ध वस्त्र-धारण की मर्यादा में जहाँ स्वच्छता को आवश्यक बताया गया है, वहाँ याजक को अभिमन्त्रित जल से नहाने या 'दश स्नान' पद्धति के अनुसार सुसंस्कारित बनाने का विधान है । स्नान के सम्बन्धों में तो और भी स्पष्ट निर्देश है:-

अस्नात्वानाचरेत्कर्म जप होमादि किंचन ।

-धर्म सिन्धु

अर्थात्-बिना स्नान किये जप, होम आदि नहीं करने चाहिए ।

स्वच्छता और सुसंस्कारिता के समन्वय से यज्ञ की विधि-व्यवस्था देव-प्रयोजन के अनुरूप बनती और अपना सत्परिणाम प्रस्तुत करती है । यज्ञाग्नि मौलिक उत्पादन की होनी चाहिए । उसमें अन्य व्यक्तियों या प्रयोजनों के संस्कार नहीं जुड़े होना चाहिए । अरणि-मन्थन का तरीका यह है कि पीपल के पके और सूखे काष्ठ में एक ओर गट्ठा और दूसरे में शंकु निकालते हैं । दही मथने की तरह इसे दबाव देते हुए मथा जाता है । उस मन्थन से चिनगारियाँ निकलती हैं । चिनगारियों को रुई में लेते हैं । वह जलने लगे तो कपूर के माध्यम से ज्वलनशील बनाकर उन्हें भी मिश्रित समिधाओं में फैला देते हैं । अग्नि जलने लगती है, तो सर्वप्रथम उसमें सात आहुति घी की डालते हैं, ताकि परिपूर्ण प्रज्वलन में सुविधा हो । यज्ञ-वेदी के चार कोनों पर चार जल-पात्र रख देते हैं, ताकि उत्पन्न होने वाली कार्बनडायआक्साइड का अंश उन जल-पात्रों द्वारा सोख लिया जाय ।

अग्नि प्रज्ज्वलन का अरणि-मन्थन वाला तरीका अब अभ्यास में न रहने और उपयुक्त काष्ठ का चयन न हो सकने पर अग्नि-स्थापन के लिए चुम्बक लौह आदि का प्रयोग करना चाहिए । यह मैगनेट तरीका इन दिनों उपयुक्त है । माचिस में फास्फोरस जैसी अनुपयुक्त वस्तुओं का सम्मिश्रण रहता है । अग्नि-प्रयोजनों में लगी हुई अग्नि काम में लाई जाय तो उसमें पूर्व संस्कार सम्मिलित हो जाते हैं । इन सब बातों का ध्यान रखते हुए यज्ञ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रयोजनों के लिए पवित्र अग्नि ही काम में लानी चाहिए । आतिशी शीशे पर सूर्य किरणों को एकत्रित करने से भी वह मौलिक अग्नि उत्पन्न हो सकती है ।

यज्ञ कृत्य में मन्त्र, कृत्य और साधना का अवलम्बन रहता है । मन्त्र में श्रद्धायुक्त उद्‌गारों का वाणी के माध्यम से उच्चारण किया जाता है और ये सूक्ष्म जगत् में भावनात्मक प्रवाह उत्पन्न करते हैं । तपश्चर्या द्वारा प्राणवान् बनाये गये अवयवों की विशिष्ठ हलचलें प्रस्तुत अन्तरिक्ष में सशक्त कम्पन उत्पन्न करती है । अग्नि में होमी गई पवित्रता तथा विशिष्ठता-युक्त हवन सामग्री समीपवर्ती क्षेत्र में अभीष्ट प्रयोजन पूरा कर सकने योग्य ऊर्जा उत्पन्न करती है । इन तीनों ही अग्नियों का समन्वय होने से यज्ञ की परिपूर्ण प्रक्रिया सम्पन्न होती है ।

यही वह रहस्य है, जिसे समझने और अपनाने पर शास्त्रकारों ने बहुत जोर दिया है और अभीष्ट फल प्राप्त करने के लिए इस मर्म को विस्मृत न होने देने का निर्देशन किया है ।

* * *

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञीय-कर्मकाण्ड प्रकरण

हवनों का क्रम

यह क्रम स्मार्त विधान के अनुसार मध्यमम वृत्त के यज्ञों के लिए बनाया गया है । एक दिन में समाप्त हो जाने वाले हवनों के लिए यह विधान समुचित है । इस विधान के अनुसार इस प्रकार कार्यक्रम निर्धारित करना होता है ।

(१) मंगलाचरण
(२) पवित्री करण
(३) आचमन विधि
(४) शिखा बन्धन
(५) प्राणायाम
(६) अभिसिंचन
(७) अघमर्षण
(८) न्यास
(९) पृथ्वी पूजनम
(१०) संकल्प
(११) यज्ञोपवीत परिवर्तन
(१२) यज्ञोपवीत धारण
(१३) पुराना यज्ञोपवीत उतारना
(१४) चन्दन धारण
(१५) वरण
(१६) रक्षा सूत्र
(१७) कलश स्थापना-पूजन
(१८) दीप पूजन
(१९) गणेश गौरी पूजन-पुरुषसूक्त
(२०) षोडशोपचार देव पूजन
(२१) नवग्रह स्थापना एवं पूजन
(२२) गायत्री आवाहन-पूजन
(२३) छः दिशाओं में देव स्थापन तथा पूजन
(२४) देवों का आह्वान
(२५) सर्वदेव नमस्कार
(२६) पंचवेदी स्थापना
(२७) स्विष्टकृत भोग
(२८) सर्वदेव स्थापना के लिए सर्वतोभद्रचक्र
(२९) लघु सर्वतोभद्र मण्डल-पूजन
(३०) स्वस्तिवाचन
(३१) रक्षा विधान
(३२) पंच भू संस्कार
(३३) कुण्ड प्रतिष्ठा एवं मेखला पूजन
(३४) पंचामृत
(३५) कुश कण्डिका
(३६) प्रोक्षण
(३७) अग्नि स्थापना आवाहन-पूजन
(३८) समिधा धान
(३९) जल प्रसेचन
(४०) आज्याहुतिः
(४१) पंचवारुणी होम
(४२) नवग्रह होम
(४३) नवग्रह अधि देवता होम
(४४) नवग्रह प्रत्यधि देवता होम
(४५) पंच लोकपाल होम
(४६) दश दिक्पाल होम
(४७) सर्वतोभद्र मण्डल देवताओं का होम
(४८)प्रधान देव का होम-गायत्री की आहुति
(४९) स्विष्टकृत होम
(५०) पूर्णाहुति होम
(५१) वसोर्धारा
(५२) बर्हिहोम
(५३) तर्पण
(५४) नीराजन-आरती
(५५) घृत अवघ्राण
(५६) भस्म धारण
(५७) क्षमा प्रार्थना
(५८) साष्टांग नमस्कार
(५९) शुभ कामना
(६०) शांति अभिसिंचन
(६१) पुष्पांजलि
(६२) सूर्यार्घ्यदान
(६३) प्रदक्षिणा
(६४) दिक्पालों को बलिदान
(६५) नवग्रह बलि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(६६) महाक्षेत्रपाल बलि
(६७) संक्षिप्त दश दिक्पाल एवं महाक्षेत्रपाल बलि
(६८) गणेश-गौरी बलि
(६९) योगिनी बलि
(७०) अन्य देवताओं की बलि
(७१) बलिदान क्रिया एवं बलिदान संकल्प
(७२) क्षमा प्रार्थना-यज्ञ भगवान की स्तुति
(७३) विसर्जन
(७४) अभिषेक
(७५) तिलक-फलदान

बड़े हवनों में-

कुछ अधिक विस्तार करना होता है, तो कुण्ड और मण्डप की विशेष विधि पूर्वक रचना करके पाँच वेदी स्थापित करते हैं (१) सर्वतो भद्र की प्रधान वेदी (२) गणपति वेदी (३) वास्तु वेदी (४) योगिनी क्षेत्रपाल वेदी (५) नवग्रह वेदी । इन वेदियों की रचना रंगीन धान्यों से की जाती है । इन पर कलश स्थापित किये जाते हैं । नवग्रह वेदी के ईशान में रुद्र कलश स्थापित किया जाता है । इन वेदियों पर स्थापित देवताओं का विस्तृत विधि पूर्वक पूजन कराया जाता है । स्वस्ति वाचन के साथ-साथ शान्ति पाठ भी करते हैं । वसोर्धारा की स्थापना और पूजा की जाती है । नान्दी श्राद्ध भी बड़े हवनों में होता है । यज्ञ मण्डप के चार द्वारों पर चार पण्डित चार वेदों का पाठ करते हैं । पंच गव्य से यज्ञ की सभी वस्तुओं का तथा भूमि का प्रक्षालन किया जाता है । कुश कंडिका के समय चरु पकाया जाता है और उसे हवन करते हैं । हवन के आरम्भ में प्रजापति आदि ४ आहुतियों के पश्चात् गणपति की ८, २८ या १०८ आहुतियाँ देते हैं । उत्तरांग पूजन किया जाता है । पूर्णाहुति के बाद वसोर्धारा से भी घी होमा जाता है । पूर्ण पात्र दान, प्रणीता विमोक, यज्ञ अवशिष्ट घृत का अवघ्राण किया जाता है । इस प्रकार बड़े यज्ञों में कुछ विधियाँ बढ़ जाती हैं ।

छोटे हवन

नित्य के हवन या छोटे हवन में मध्यम होम से भी विधान को संक्षिप्त कर लिया जाता है । (१) जल से पवित्र करना (२) आसन पवित्र करना (३) आचमन (४) शिखा बन्धन (५) प्राणायाम- (६) अघमर्षण (७) न्यास (८) चन्दन धारण (९) संकल्प (१०) स्वस्ति वाचन (११) रक्षा विधान (१२) कलश (१३) देव पूजन (१४) गायत्री पूजन (१५) षोडसोपचार देव पूजन (१६) पंच भू संस्कार (१७) अग्नि स्थापना (१८) कुश कण्डिका (१९) समिधाधान (२०) जलप्रसेचनम् (२१) प्रधान होम (२२) तर्पण (२३) पुष्पांजलि (२४) स्विष्टि कृत होम (२५) पूर्णाहुति (२६) नीरांजना (२७) भस्म धारण (२८) घृत अवघ्राण (२९) क्षमा प्रार्थना (३०) अभिषेक (३१) विसर्जन (३२) शुभ कामना (३३) प्रदक्षिणा (३४) प्रसाद वितरण कहीं कहीं देशान्तर, लोकान्तर परम्परागत पद्धति एवं स्मृति तथा सूत्र भेद के कारण कुछ क्रियाऐं न्यूनाधिक तथा आगे पीछे भी हो जाती हैं । उनमें दोष का विरोध नहीं मानना चाहिए ।

अति संक्षिप्त हवन

जिनको कोई मन्त्र याद नहीं है, वे उपरोक्त सब क्रियाऐं गायत्री मन्त्र से कर सकते हैं । जिनको उपरोक्त सब क्रियाऐं करने में असुविधाऐं हैं वे इसमें भी संक्षिप्त कर सकते हैं । जिन्हें कोई विधान न आता हो वे १२ अंगुल लम्बी चौड़ी, ३ अंगुल ऊँची मिट्टी की वेदी बना कर अथवा ताँबे का हवन कुण्ड लेकर आम की समिधाओं में कपूर से अग्नि प्रज्वलित करें और अकेले हों तो घृत, शक्कर, हवन सामग्री मिलाकर गायत्री मन्त्र से हवन करलें । दो या अधिक व्यक्ति हों तो एक घृत चढ़ावे एक शेष हवन सामग्री चढ़ावें । सुपाड़ी, घृत, अक्षत तथा कुछ मिष्ठान्न चम्मच में रख कर उससे पूर्णाहुति करलें । बचे हुए घृत को शिर नेत्रों पर लगाना सूंघना तथा भस्म धारण करना भी उचित है । इस प्रकार अति सरल रीति से भी हवन हो सकता है ।

कर्मकाण्ड प्रारम्भ

कराये जाने वाले कर्मकाण्ड की व्यवस्था बनाकर जाँच कर जब कर्मकाण्ड प्रारम्भ करना हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तो संचालक को सावधान होकर वातावरण को अनुकूल बनाना चाहिए । कुछ जयघोष बोलकर शान्त रहने की अपील करके कार्य प्रारम्भ किया जाय । संचालक-आचार्य का काम करने वाले स्वयं सेवक को नीचे दिए गए अनुशासन के साथ कार्य प्रारम्भ करना चाहिए, वे हैं-(१) व्यास पीठ नमन, (२) गुरु वन्दना, (३) सरस्वती वन्दना, (४) व्यास वन्दना ।

यह चारों कृत्य कर्मकाण्ड के पूर्व के हैं । यजमान के लिए नहीं संचालक-आचार्य के लिए हैं । कर्मकाण्ड ऋषियों-मनीषियों द्वारा विकसित ज्ञान-विज्ञान समन्वित अद्भुत कृत्य है, उस परम्परा का निर्वाह हमसे हो सके, इसलिए उस स्थान को तथा अपने आपको संस्कारित करने, उस दिव्य प्रवाह का माध्यम बनने की पात्रता पाने के लिए यह कृत्य किए जाते हैं ।

व्यास पीठ-नमन- व्यास पीठ पर संचालक के आसन पर बैठने के पूर्व उसे श्रद्धा पूर्वक नमन करें । यह हमारा आसन नहीं-व्यास पीठ है । इसके साथ एक पुनीत परिपाटी जुड़ी है । उस पर बैठकर उस परिपाटी के साथ न्याय कर सकें-इसके लिए उस पीठ की गरिमा मर्यादा को प्रणाम करते हैं, तब उस पर बैठते हैं ।

गुरु-वन्दना- गुरु व्यक्ति तक सीमित नहीं, वह एक दिव्य चेतन प्रवाह का ईश्वर का ही एक अंश होता है । परीक्षा लेकर पास फेल करने वाला तथा पास बिठाकर पढ़ाने वाला दोनों ही शिक्षक कहे जाते हैं । चेतना का एक अंश जो अनुशासन कर्म व्यवस्था बनाता, उसके फल देता है-वह ईश्वर है, दूसरा अंश जो अनुशासन, कर्म मर्यादा सिखाता है, उसमें गति पैदा कराता है, वह गुरु है ।

ऐसे चेतना के रूप में गुरु की वन्दना करके उस अनुशासन को अपने ऊपर आरोपित करना चाहिए, उसका उपकरण बनाने के लिए भावभरा आवाहन करना चाहिए ताकि अपनी वृत्तियाँ और शक्तियाँ उसके अनुरूप कार्य करती हुई उस सनातन गौरव की रक्षा कर सकें । हाथ जोड़कर नीचे लिखी गुरु-वन्दनाओं में से कोई एक अथवा वैसी ही अन्य वन्दनाएँ भावनापूर्वक सस्वर बोलें ।

ब्रह्मानन्दं परम सुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं ।
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्वमस्यादिलक्ष्यम् ।।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं ।
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ।। १।।
अखण्डानन्दबोधाय शिष्यसंतापहारिणे ।
सच्चिदानन्दरूपाय तस्मै श्री गुरवे नमः ।। २ ।।

सरस्वती वन्दना- माँ सरस्वती वाणी की देवी हैं । कर्मकाण्ड में वाणी का प्रयोग करना पड़ता है । यदि वाणी सुसंस्कार-निःसृत न हुई तो उसमें प्रवाह पैदा नहीं होगा, बोले गये मन्त्र शब्द मात्र न रह जावें, मन्त्र बनें, कहे हुए शब्दों में अन्तःकरणों को प्रभावित करने योग्य प्राण पैदा हों, इस कामना-भावना के साथ माँ सरस्वती की भावभरी वन्दना की जाय ।

लक्ष्मीमेधा धरापुष्टिगौरी तुष्टिः प्रभा धृतिः ।
एताभिः पाहि तनुभिरष्टाभिर्मां सरस्वती ।। १।।
सरस्वत्यै नमो नित्यं भद्रकाल्यै नमो नमः ।
वेद वेदान्तवेदाङ्ग विद्यास्थानेभ्य एव च ।।२ ।।
मातस्त्वदीय पदपंकजभक्तियुक्ता ।
ये त्वां भजन्ति निखिलानपरान्विहाय ।
ते निर्जरत्वमिह यान्ति कलेवरेण ।
भूवह्निवायुगगनाम्बुविनिर्मितेन ।।

व्यास वन्दना- व्यास पीठ पर बैठकर कर्मकाण्ड संचालन का जो उत्तरदायित्व उठाया है उसके अनुरूप अपने अन्तःकरण, बुद्धि, मन, वाणी, आदि को बनाने की याचना, उसके निर्वाह का प्रयास पूरी ईमानदारी से करने के संकल्प की घोषणा के भाव से व्यास वन्दना के एक दो श्लोक भाव विभोर होकर बोले जावें ।

व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे ।
नमो वै ब्रह्मनिधये वाशिष्ठाय नमो नमः ।। १ ।।
नमोस्तुते व्यास विशाल बुद्धे,
फुल्लारविन्दायतपत्र नेत्र ।
येन त्वया भारततैलपूर्णः
प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः ।।

यह सभी कृत्य आचार्य-संचालक के अपने संस्कार के हैं । इन्हें जितनी प्रगाढ़ श्रद्धा के साथ किया जाता है, दिव्य प्रवाह से जुड़ जाने की उतनी ही प्रभावी सम्भावना बन जाती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधनादिपवित्रीकरणम

सत्कार्यों-श्रेष्ठ उद्देश्यों के लिए यथाशक्ति साधना-माध्यम भी पवित्र रखने चाहिए । यज्ञ संस्कार आदि कार्यों में जो उपकरण साधन-सामग्री प्रयुक्त हों, उनमें भी देवत्व का संस्कार जगाया जाता है । फल काटने का चाकू साफ किया, पोंछा जाता है । आपरेशन के चाकू को भाप में ऊँचे दबाव और तापक्रम पर शोधित किया जाता है । अदृश्य विषाणुओं से मुक्त किया जाता है । कर्मकाण्ड में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों, साधनों में सन्निहित अशुभ संस्कार हटाये जाते हैं, उन्हें मन्त्र शक्ति से नष्ट किया जाता है ।

परिस्थितियों के अनुरूप एक या अधिक स्वयंसेवक स्वच्छ कलश लेकर खड़े हों । मन्त्र पाठ के साथ पल्लवों, कुशों या पुष्पों से सभी उपकरणों साधनों का सिंचन करें । समिधा, पात्र, हव्य आदि सभी का सिंचन किया जाय । भावना करें कि भाव भरे आह्वान और मन्त्र-शक्ति के प्रभाव से उनमें कुसंस्कारों के पलायन और सुसंस्कारों के उभार-स्थापन का क्रम चल रहा है ।

ॐ पुनाति ते परिस्रुत ꣳ सोम ꣳ सूर्यस्य दुहिता ।
वारेण शश्वता तना ।

- यजु० १९/४१

ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः ।
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहिमा ।।

- यजु० १९/३९

ॐ यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने वितततमन्तरा । ब्रह्म
तेन पुनातु मा ।।

- यजु० १९/४१

ॐ पवमानः सो अद्य नः पवित्रेण विचर्षणि : ।
यःपोता स पुनातु मा ।

- यजु० १९/४२

ॐ उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च । मा पुनीहि विश्वतः ।।

- यजु० १९/४३

यह क्रम यज्ञों, संस्कारों, भूमि-पूजन, प्राण-प्रतिष्ठा, पर्वायोजनों आदि सभी में अपनाया जाने योग्य है ।

यज्ञ-संचालन

मङ्गलाचरण

यज्ञ कर्म अथवा अन्य धर्मानुष्ठानों को सम्पन्न करने वाले याजकों के आसन पर बैठते समय उनके कल्याण, उत्साह अभिवर्धन, सुरक्षा और प्रशंसा के लिए पीले अक्षत अथवा पुष्प वर्षा करके आसन दिया जाता है, स्वागत किया जाता है, उनके सौभाग्य को सराहा जाता है-मन्त्र के साथ भावना की जाय कि इस पुण्य कर्म में भाग लेने वालों पर देव अनुग्रह बरस रहा है और देवत्व के धारण तथा निर्वाह की क्षमता का विकास हो रहा है । आचार्य निम्न मन्त्र से यजमान के ऊपर चावल फैंकें ।

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाभद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्रा।
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा ꣳ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देव हितं यदायुः।

- यजु० २५/२१

पवित्रीकरण

देव उद्देश्य की पूर्ति के लिए मनुष्य को स्वयं भी देवत्व धारण करना होता है । देव शक्तियाँ पवित्रता प्रिय हैं । उन्हें शरीर और मन से आचरण और व्यवहार से शुद्ध मनुष्य ही प्रिय होते हैं । इसलिए यज्ञ जैसे देव प्रयोजन में संलग्न होते समय शरीर और मन को पवित्र बनाना पड़ता है । पवित्रता की भावना करनी पड़ती है । भावना करें कि हमारे भाव भरे आवाहन के नाते सूक्ष्म सत्ता हम पर पवित्रता की वृष्टि कर रही है । हम उसे धारण कर रहे हैं ।

बाँयें हाथ में जल लेकर उसे दाहिने हाथ से ढक लिया जाय । पवित्रीकरण का मन्त्रोच्चारण किया जाय । तदुपरान्त उस जल को सिर तथा शरीर पर छिड़क लिया जाय ।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स वाह्याभ्यन्तरः शुचि : ।।
ॐ पुनातु पुण्डरीकाक्षः पुनातु पुण्डरीकाक्षः पुनातु ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आचमन

वाणी, मन और अन्त:करण की शुद्धि के लिए तीन बार आचमन किया जाता है, मन्त्रपूरित जल से तीनों को भाव स्नान कराया जाता है । आयोजन के अवसर पर तथा भविष्य में तीनों को अधिकाधिक समर्थ एवं प्रामाणिक बनाने का संकल्प किया जाता है ।

आचमन विधि

आचमन के समय जल का नख से स्पर्श तथा ओष्ठ का शब्द नहीं करना चाहिए । प्रथम आचमन से आध्यात्मिक, दूसरे से आधिभौतिक और तीसरे से आधिदैविक शान्ति होती है । इसलिये तीन बार करें।

संहतांङ्गुलिना तोयं गृहीत्वा पाणिना द्विजः ।
मुक्ताङ्गुष्ठ कनिष्ठेन शेषेणाचमनं चरेत् ।।

- नागदेव ।।

अँगुलियों को मिलाकर दाहिने हाथ की हथेली में जल लेकर अँगूठा तथा कनिष्ठा को अलग करके आचमन करना चाहिए । आचमन-मन्त्र इस प्रकार है । हर मंत्र के साथ एक आचमन किया जाय ।

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ।। १ ।।
ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा ।। २ ।।
ॐ सत्यम् यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ।। ३ ।।

- आश्व० गृ सू० १/२४/१२-२१-२२

शिखाबन्धन

शिखा भारतीय धर्म की ध्वजा है जो मस्तक रूपी किले के ऊपर हर भारतीय संस्कृति प्रेमी को फहराते रहनी पड़ती है । इसे गायत्री का प्रतीक भी माना गया है । मस्तिष्क सद्विचारों का केन्द्र है । इसमें देव भाव ही प्रवेश करने पावें । भावना करें कि सांस्कृतिक ध्वजा को धारण करने योग्य प्रखरता, तेजस्विता का विकास हो रहा है ।

दाहिने हाथ की उंगलियों को गीला कर शिखा स्पर्श करें । मन्त्र बोलने के बाद शिखा में गांठ लगायें । जिनके संयोगवश शिखा नहीं है, ऐसे व्यक्ति तथा महिलायें उस स्थान को भावना पूर्वक स्पर्श करें

ॐ चिद्रूपिणी महामाये दिव्यतेजः समन्विते ।
तिष्ठ देवी शिखामध्ये तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे ।।

प्राणायाम

विधि- कमर सीधी, बायाँ हाथ मुड़ा हुआ, हथेली चौड़ी, दाहिने हाथ की कोहनी बाँये हाथ की हथेली पर बीचों-बीच, चारों उँगलियाँ बन्द । अंगूठे से दाहिने नथुने को बन्द करके, बांये नथुने से धीरे-धीरे पूरा साँस खींचना-यह पूरक हुआ । साँस को भीतर रोकना, दाँये हाथ की तर्जनी और मध्यमा उँगलियों से बाँया नथुना भी बन्द कर लेना, अर्थात् दोनों नथुने बन्द । यह अन्तः कुम्भक हुआ । अंगूठा हटाकर दाहिना नथुना खोल देना उसमें से साँस को धीरे-धीरे बाहर निकलने देना, यह रेचक हुआ । इसके बाद कुछ समय साँस बाहर रोक देना चाहिए । बिना साँस के रहना चाहिए इसे वाह्य कुम्भक कहते हैं । इन चार क्रियाओं को करने में एक प्राणायाम पूरा होता है, यह क्रिया कठिन लगे तो दोनों हाथ गोद में रखते हुए दोनों नथुनों से श्वास लेते हुए पूरक, कुम्भक, रेचक का क्रम नीचे लिखी भावनानुसार पूरा करें । साँस खींचने के साथ भावना करनी चाहिए कि संसार में व्याप्त प्राणशक्ति और श्रेष्ठता के तत्वों को साँस द्वारा खींच रहे हैं । साँस रोकते समय भावना करनी चाहिए कि वह प्राणायाम दिव्यशक्ति तथा श्रेष्ठता अपने रोम-रोम में प्रवेश करके उसी में रम रही है । जैसे मिट्टी पर जल डालने से वह उसे सोख लेती है, उसी तरह शरीर और मन ने प्राणायाम की साँस जो भीतर पहुँचती है, की समस्त श्रेष्ठता को अपने में सोख लिया । साँस छोड़ते समय यह भावना करनी चाहिए कि जितने भी दुर्गुण अपने में थे, वे साँस के साथ निकल कर बाहर चले गये और अब कभी वापिस लौटकर नहीं आवेंगे । इसके उपरान्त कुछ समय बिना सांस के ग्रहण किये रहना चाहिए और भावना करनी चाहिए कि निकलते हुए दोष-दुर्गुणों को सदा के लिए बहिष्कृत कर दिया गया और उनके वापिस न आने देने को दरवाजा बन्द कर दिया गया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मन्त्रोच्चार दूसरे लोग करते रहें । याज्ञिक केवल उपरोक्त प्राणायाम विधान पूरा करें । यह प्राणायाम अपने भीतर शरीरबल-मनोबल और आत्मबल की वृद्धि के लिए है । दोष-दुर्गुणों के निवारण निष्कासन के लिए उन्हीं भावनाओं के साथ उसे करना चाहिए ।

प्राणायाम विनियोग

ॐ कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायात्री छन्दोऽग्निर्देवता शुक्लो वर्णः सर्व कर्मारम्भे विनियोगः ।। ॐ सप्तव्याहृतीनां प्रजापतिऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहती पंक्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि । अग्निवाय्वादित्यबृहस्पति वरुणेन्द्र विश्वेदेवा देवताः अनादिष्टप्रायश्चित्ते प्राणायामे विनियोगः ।। ॐ गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवताग्नि र्मुखमुपनयने प्राणायामे विनियोगः ।। ॐ शिरसः प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिपदा गायत्री छन्दो ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवता प्राणायामे विनियोगः ।।

प्राणायाम मन्त्र

नीचे लिखे मन्त्र को प्रत्येक प्राणायाम के समय तीन या एक बार जपें । इस प्रकार तीनों प्राणायाम तीन या पाँच बार करें ।

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् । ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं, ब्रह्म भूर्भुवः स्वः ॐ ।।

अभिसिंचन

ॐ आपो हिष्ठेत्यादि ऋचस्य सिन्धुद्वीप ऋषिर्गायत्री छन्दः आपो देवता मार्जने विनियोगः ।।

बाँयें हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ से नीचे लिखे मन्त्र बोलते हुए एक से सात तक अपने शरीर पर, आठवें से पृथ्वी पर और नवें से मस्तक पर जल छोड़ें ।

ॐ आपो हि ष्ठा मयो भुवः ।।१।। ॐ ता न ऊर्जे दधातन ।।२।। ॐ महेरणाय चक्षसे ।।३।। ॐ यो वः शिवतमो रसः ।।४।। ॐ तस्य भाजयते ह नः ।।५।। ॐ उशतीरिव मातरः ।।६।। ॐ तस्माऽअरङ्गमामवः ।।७।। ॐ यस्य क्षयाय जिन्वथ ।।८।। ॐ आपो जनयथा च नः ।।

हे जल! जैसे माता अपने पुत्र का दूध आदि से कल्याण करती है, वैसे ही मुझे उत्तम गरिष्ठ भोजन और सन्तान उत्पन्न तथा सुखादि भोगने की शक्ति दो ।

अघमर्षण

ॐ अघमर्षण सूक्तस्याघमर्षण ऋषिरनुष्टुप्छन्दो भाववृत्तो देवता अश्वमेधावभृथे विनियोगः ।।

दाहिने हाथ में जल लेकर नासिका से स्पर्श करके नीचे लिखा मन्त्र तीन बार या एक बार पढ़ें और ध्यान करें कि यह जल श्वास के साथ नासिका के दाहिने छिद्र से भीतर जाकर अन्तःकरण को शुद्ध करके बांये छिद्र से बाहर आया है । पश्चात् उस जल को बिना देखे बांयी ओर फेंक देवें । नीचे लिखा मन्त्र पढ़ें :-

ॐ ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत । ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ।। समुद्रादर्णवादीध संवत्सरो अजायत् । अहो रात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी । सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ।।

भावार्थ- महा प्रलय के अन्धकार में केवल परब्रह्म रहे । सृष्टि के आदि में जलमय समुद्र हुआ, पश्चात् ब्रह्मा हुए, उन्होंने दिन और रात्रि करने वाले सूर्य-चन्द्रमा को रचा । पश्चात् रात्रि दिन, सम्वत्सर और स्वर्ग लोकादि की रचना की ।

न्यास

शरीर के विभिन्न अंगों की शुद्धि एवं शक्ति के लिए स्पर्श करना 'अङ्गन्यास' और हाथ की उंगलियों का स्पर्श करना 'न्यास' कहलाता है । इसका विधान इस प्रकार है -

बाँये हाथ की हथेली पर जल लेना, दाहिने हाथ की पाँचों उँगलियों को इकट्ठा करना, उन एकत्रित उँगलियों को हथेली वाले जल में डुबोना । अब जहाँ-जहाँ मन्त्रोच्चार के संकेत हैं वहाँ पहले दाहिनी ओर फिर बाँयी ओर के क्रम से स्पर्श करते हुए हर बार में एकत्रित उँगलियाँ डुबोते और लगाते चलना-यह न्यास कर्म है । इसका प्रयोजन है-शरीर के अति महत्वपूर्ण अंगों में पवित्रता की भावना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भरना, उनकी देव चेतना को जाग्रत करना । अनुष्ठान काल में उनके जागृत देवत्व के सारे कृत्य पूरे करना तथा इसके अनन्तर ही इन अवयवों को, इन्द्रियों को सशक्त एवं संयत बनाये रहना ।

भावना करें कि इन्द्रियों-अंगों में मन्त्र शक्ति के प्रभाव से दिव्य प्रवृत्तियों की स्थापना हो रही है । ईश्वरीय चेतना हमारे आवाहन पर वहाँ विराजित होकर अशुभ का प्रवेश रोकेगी, शुभ को क्रियान्वित करने की प्रखरता बढ़ायेगी ।

ॐ वाङ्मे आस्येऽस्तु । (मुख को)
ॐ नासोर्मेप्राणोऽस्तु । (नासिका के दोनों छिद्रों को)
ॐ अक्ष्णोर्मेचक्षुरस्तु । (दोनों नेत्रों को)
ॐ कर्णोयोर्मे श्रोतमस्तु । (दोनों कानों को)
ॐ बाह्वोर्मे बलमस्तु । (दोनों भुजाओं को)
ॐ ऊर्वोर्मेओ जोऽस्तु । (दोनों जंघाओं को)
ॐ अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु । (समस्त शरीर को)

- पार गृह १ । ३ । २५

करन्यास

ॐ भूः अंगुष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथ की तर्जनी अंगुलियों से अंगूठों का स्पर्श करें) । **ॐ भुवः तर्जनीभ्यां नमः** (अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श करें) । **ॐ स्वः मध्यमाभ्यां नमः** (अंगूठे से मध्यमा बीच वाली अंगुली का स्पर्श करें) । **ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं अनामिकाभ्यां नमः** (अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श करें) । **ॐ भर्गो देवस्य धीमहि कनिष्ठाभ्यां नमः** (अंगूठे से कनिष्ठका अंगुली का स्पर्श करें) ।**ॐ धियो योनः प्रचोदयात् करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः** (दोनों हाथों की मध्यम व अनामिका अंगुलियों से दोनों हथेली व उनकी पीठ का क्रम से स्पर्श करें)। *इति करन्यासः ।।*

अंगन्यास

ॐ भूः हृदयाम् नमः (दाहिने हाथ की मध्यमा व अनामिका अंगुलियों से हृदय का स्पर्श करे) । **ॐ भुवः शिरसे स्वाहा** (उन्हीं अंगुलियों से मस्तक का स्पर्श करे) । **ॐ स्वः शिखायैवषट्** (उन्हीं अंगुलियों से शिखा-चोटी का स्पर्श करे) । **ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं कवचाय हुं** (दाहिने हाथ की मध्यमा अनामिका अंगुलियों से बांया कन्धा और बांये हाथ की अंगुलियों से दाहिने कन्धे का स्पर्श करे) । **ॐ भर्गोदेवस्य धीमहि नेत्रत्रयाय वौषट्** (दाहिने हाथ की अनामिका अंगुली से दोनों नेत्रों व माथे के मध्य तृतीय नेत्र के वास्ते स्पर्श करे) । **ॐ धियो योनः प्रचोदयात् अस्त्रायफट्** (दाहिने हाथ की मध्यमा व अनामिका अंगुलियों से दाहिने हाथ को सिर के पीछे की ओर से लगाकर बाईं तरफ बांये हाथ की हथेली का स्पर्श करे) ।

ॐ तत्पादयोः ।। (दाहिने हाथ की उन दोनों अंगुलियों से पैरों का स्पर्श करें) । **सवितुर्जंघयोः** (दोनों जंघाओं का स्पर्श करें) । **वरेण्यं कटि देशे**(कमर का स्पर्श करे) । **भर्गो नाभौ** (नाभि का स्पर्श करे) । **देवस्य हृदये** (हृदय का स्पर्श करे) । **धीमहि कंठे** (कंठ का स्पर्श करे) । **धियो नासाग्रे** (नाक के अग्र भाग का स्पर्श करे) । **यो नेत्रयोः** (प्रथम रीति से तीनों नेत्रों का स्पर्श करे) । **नः ललाटे :** (ललाट-माथा का स्पर्श करे) । *इत्यंगन्यासः।।*

पृथ्वी पूजन

जहाँ से अन्न, जल, वस्त्र, ज्ञान तथा अनेक सुविधा-साधन प्राप्त करते हैं वह मातृ भूमि सबसे बड़ा देवता है । माता के प्रति जैसी हमारे मन में अगाध श्रद्धा रहती है, वैसी ही मातृभूमि के प्रति भी रहनी चाहिए और मातृ ऋण से उऋण होने के लिए अवसर ढूँढते रहना चाहिए । भावना करें कि धरती माता के पूजन के साथ उसके पुत्र होने के नाते माँ के दिव्य संस्कार हमें प्राप्त हो रहे हैं । माँ विशाल है, सक्षम है हमें भी क्षेत्र वर्ग आदि की संकीर्णता से हटाकर विशालता, सहनशीलता, उदारता जैसा दिव्य संस्कार प्रदान कर रही है । दाहिने हाथ में चावल, पुष्प, जल लें, बाँया हाथ नीचे लगावें, मन्त्र बोलें और पूजा वस्तुओं को किसी पात्र में छोड़ दें । धरती माँ को हाथ से स्पर्श करके नमस्कार करें ।

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संकल्प

हर महत्वपूर्ण कर्मकाण्ड के पूर्व संकल्प कराने की परम्परा है, उसके कारण इस प्रकार हैं- अपना लक्ष्य, उद्देश्य निश्चित होना चाहिए । उसकी घोषणा भी की जानी चाहिए । श्रेष्ठ कार्य घोषणा पूर्वक किये जाते हैं, हीन, स्वार्थपरक कृत्य चुपचाप लुक-छिपकर करने का मन होता है । संकल्प करने से मनोबल बढ़ता है । मन के ढीलेपन के कुसंस्कार पर अंकुश लगता है, स्थूल घोषणा से सत्पुरुषों का तथा मन्त्रों द्वारा घोषणा से सत् शक्तियों का मार्गदर्शन और सहयोग मिलता है । संकल्प में अपने गोत्र का उल्लेख भी किया जाता है । गोत्र ऋषि-परम्परा के होते हैं । यह बोध किया जाना चाहिए कि हम ऋषि परम्परा के व्यक्ति हैं, तदनुसार उनके अनुरूप कार्यों को करने का उपक्रम उन्हीं के अन्तर्गत करते हैं । संकल्प बोलने के पूर्व मास, तिथि, वार आदि सभी की जानकारी कर लेनी चाहिए । बीच में रुक-रुककर पूछना अच्छा नहीं लगता । यहाँ जो संकल्प दिया जा रहा है वह किसी भी कृत्य के साथ बोला जा सकता है । वैसे भिन्न कृत्यों के अनुरूप संकल्प-नामाऽहं के आगे भिन्न-भिन्न निर्धारित वाक्य बोलकर भी पूरा किया जा सकता है । सामूहिक पर्वों आदि में साप्ताहिक यज्ञों आदि में संकल्प नहीं भी बोले जायें तो कोई हर्ज नहीं ।

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य, विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य, अद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्धे श्री श्वेतवाराहकल्पे, वैवस्वत मन्वन्तरे, भूर्लोके, भरतखण्डे, आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते, मासानां मासोत्तमेमासे.....मासे.....पक्षे.....तिथौ.....वासरे.... गोत्रोत्पन्न.....नामाऽहं.....सत्प्रवृत्तिसम्बर्धनाय, दुष्प्रवृत्युन्मूलनाय, लोककल्याणाऽऽत्मकल्याणाय, वातावरणपरिष्कराय, भविष्योज्ज्वलकामनापूर्तये च प्रबल पुरुषार्थं करिष्ये, अस्मै प्रयोजनाय च कलशाद्यावाहितादेवता पूजन पूर्वकम्..... कर्मसम्पादनार्थं संङ्कल्पमहं करिष्ये ।

यज्ञोपवीतपरिवर्तन

यज्ञोपवीत को व्रतबन्ध भी कहते हैं । यह व्रतशील जीवन के उत्तरदायित्व का बोध कराने वाला पुण्य प्रतीक है । विशेष यज्ञ संस्कार आदि आयोजनों के अवसर पर उसमें भाग लेने वालों का यज्ञोपवीत बदलवा देना चाहिए । साप्ताहिक यज्ञों में यह आवश्यक नहीं । नवरात्रि आदि अनुष्ठानों के संकल्प के समय जो यज्ञोपवीत बदला गया है तो पूर्णाहुति आदि में फिर न बदला जाय । व्यक्तिगत संस्कारों आदि में प्रमुख पात्रों का, बच्चों के अभिभावकों आदि का यज्ञोपवीत बदलवा देना चाहिए । यदि वे यज्ञोपवीत पहने ही न हों तो कम से कम कृत्य के लिए अस्थाई रूप से पहना देना चाहिए । वे चाहें तो स्थाई भी करा लें ।

यज्ञोपवीत बदलने के लिए यज्ञोपवीत का मार्जन किया जाय । यज्ञोपवीत संस्कार की तरह पाँच देवों का आवाहन-स्थापन उसमें किया जाय फिर यज्ञोपवीत धारण मन्त्र के साथ साधक स्वयं ही पहन लें । पुराना यज्ञोपवीत दूसरे मन्त्र के साथ सिर की ओर से ही उतार दिया जाय । पुराने यज्ञोपवीत जल में विसर्जित कराये जाते हैं अथवा पवित्र भूमि में गाड़ दिये जाते हैं ।

यज्ञोपवीत धारण

निम्न मन्त्र बोलकर नया यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए ।

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् ।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ।।

- पार० गृ० सू० २/२/११

पुराना यज्ञोपवीत उतारना

निम्न मन्त्र पाठ करते हुए पुराना यज्ञोपवीत गले में से ही होकर निकालना चाहिए ।

ॐ एतावद्दिनपर्यन्तं ब्रह्मत्वं धारितं मया ।
जीर्णत्वात्तेपरित्यागो गच्छ सूत्र यथा सुखम् ।।

चन्दन-धारण

मस्तिष्क को शान्त शीतल एवं सुगन्धित रखने की आवश्यकता का स्मरण कराने के लिए चन्दन धारण किया जाता है । अन्तर में ऐसी सद्भावनायें रखनी चाहिए, जिनकी सुगन्ध से अपने को सन्तोष एवं दूसरों को आनन्द मिले ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भावना करें जिस महाशक्ति ने चन्दन को शीतलता-सुगन्धि दी है, उसी की कृपा से हमें भी वह तत्व मिल रहे हैं जिनके आधार पर हम चन्दन की तरह ईश्वर सानिध्य के अधिकारी बन सकें ।

इन भावनाओं के साथ चन्दन या रोली यज्ञ कर्त्ताओं एवं उपस्थित लोगों के मस्तिष्क पर लगाया जाय ।

ॐ चन्दनस्य महत्पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ।
आपदां हरते नित्यं लक्ष्मीस्तिष्ठति सर्वदा ।।

अथ वरण

यज्ञ का कोई एक यजमान होना चाहिए । जो ऋत्विजों को आचार्य, ब्रह्मा आदि को वरण करे । यदि सामूहिक या सार्वजनिक यज्ञ हो तो भी इसका कोई कार्यकर्ता यजमान बने । कई दिन यज्ञ हो तो एक एक दिन का एक एक यजमान भी बन सकता है । आचार्य आदि का वरण केवल प्रारम्भिक दिन ही होता है और वे ही अन्त तक कार्य करते हैं ।

तत्र पूर्वमाचार्यस्य वरणम् पश्चात्सर्वेषां वरणम् ।

अर्थात् :- सर्व प्रथम यजमान को आचार्य का वरण करना चाहिए, पीछे ब्रह्मा आदि का (यज्ञ में दस वरण होना चाहिए, कम से कम चार-आचार्य, ब्रह्मा, ऋत्विक् और होता तो अवश्य ही होने चाहिये) ।

तद्यथाः- आचार्य प्रति यजमानो ब्रूयात्-अस्मिन्नातसने आस्यताम् ।

यथा क्रम यजमान आसन देते हुये आचार्य से कहें:- भगवन् ! इस आसन पर विराजिये !

आचार्यो ब्रूयात्-आस्ये ।

आचार्य बोले- '**आस्ये**' अर्थात् बैठता हूँ ।

ततो यजमानः- नमोस्त्वनन्तायेति मंत्रेण पादप्रक्षालनं कुर्यात् ।

यजमान आचार्य को आसन पर बैठाकर, ''**नमोस्त्वनन्ताय**'' मन्त्र को पढ़ता हुआ उनके पैर धोवे। मन्त्रः- **नमोस्त्वनन्ताय सहस्त्र मूर्त्तये सहस्त्र पादाक्षिशिरोरुबाहवे ।**
सहस्त्र नाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्त्र कोटियुगधारिणे नमः ।। १ ।।
नमो ब्रह्मण्यदेवा ' गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमोनमः ।। २ ।।
गंधमाल्यादिभिरभ्यर्च्य ॐ युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः । रोचन्ते रोचनादिवि ।। १ ।। युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसारथे । शोणाधृष्णूनृवाहसा ।। २ ।।
ॐ अद्येत्यादिनवग्रहमखहोमकर्मकर्तुमेभिश्चन्दनताम्बूलकुण्डलाङ्गुलीयककमण्डलुवासोभिराचार्यत्वेन अमुकगोत्रमुकशर्माणममुकवेदाध्यायिनं त्वामहं वृणे ।

गन्ध, पुष्पादि से पूजा करके, चन्दन, ताम्बूल, पुष्पाक्षत, यज्ञोपवीत, वस्त्रादि के साथ उनका वरण करे । फिर यजमान अपने गोत्रादि का नाम लेकर कहे- मैं आपको आचार्य स्वीकार करता हूँ ।

(आचार्य) **वृतोऽस्मीत प्रतिवचनं दद्यात् ।**

आचार्य कहे- ''मैं स्वीकार करता हूँ ।''

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ।।
इत्येन मन्त्रेण कुशस्थैर्जलबिन्दुभिर्यजमानमभिषिञ्चेत् ।

''**ॐ वृतेन.....सत्यमाप्यते**'' मन्त्र से कुशस्थ जलबिन्दु द्वारा आचार्य यजमान का अभिसिंचन करें ।

आचार्य प्रार्थना

आचार्यस्तु यथा स्वर्गे शक्रादीना बृहस्पतिः ।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्नाचार्यो भव सुव्रत ।।

इस प्रकार यजमान आचार्य की प्रार्थना करें । हे सुव्रत! जिस प्रकार स्वर्ग में बृहस्पति इन्द्रादि देवताओं के आचार्य हैं वैसे ही आप हमारे इस यज्ञ में आचार्य हों ।

ब्रह्मावरण

ब्रह्माणं प्रति यजमानो ब्रूयात्- अस्मिन्नासने आस्यताम् ।

फिर जिसको ब्रह्मा बनाना हो, उससे यजमान बोले- हे ब्रह्मन्! आप इस आसन पर बैठिये ।

(ब्राह्मणः) आस्ये ।

ब्राह्मण बोले- बैठता हूँ ।

ततो यजमानः- नमोस्त्वनन्तायेति मन्त्रेण पाद प्रक्षालनं कुर्यात् ।

फिर यजमान ''**नमोस्त्वनन्ताय**'' मन्त्र को पढ़ता हुआ ब्राह्मण के पैर धोये ।

गन्धपुष्पमाल्यादिभिरभ्यर्च्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ अद्येत्यादिनवग्रहमखहोमकर्मणि न्यूनाधिक संरक्षणार्थमेभिश्चन्दनतांबूलकुण्डलांगुलीयककमण्डलु भिर्ब्रह्मत्वेनामुकगोत्रममुकशर्माणममुकवेदाध्यायिनं त्वामहं वृणे ।

तदनन्तर गन्ध, पुष्प, चन्दनादि से यजमान ब्राह्मण का पूजन करे और उपरोक्त विधि से ब्रह्मा का वरण करते हुए कहे- ''मैं आपको इस यज्ञ के निरीक्षणार्थ ब्रह्मा रूप से वरण करता हूँ ।

(ब्राह्मणः) वृतोऽस्मीति प्रतिवचनम् ।

ब्राह्मण कहे- मैं आपका वरण स्वीकार करता हूँ ।

(यजमानः) यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्ववेदधरः प्रभुः ।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्ब्रह्मा भव द्विजोत्तम ।।

यजमान हाथ जोड़ कर ब्रह्मा से निवेदन करे । हे विप्रवर! जैसे चतुर्मुख ब्रह्मा चारों वेदों को धारण करने में समर्थ हैं, वैसे ही आप मेरे इस यज्ञ में ब्रह्मा हों ।

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ।।
इत्यनेन मन्त्रेण कुशस्थैर्जलबिन्दु भिर्यजमानम - भिषिञ्चेत् ।।

तदनन्तर ब्रह्मा ''ॐ व्रतेन.....सत्यमाप्यते'' मन्त्र पढ़कर कुशयुक्त जलबिन्दु से यजमान का अभिषिंचन करे ।

ऋत्विग्वरण

ऋत्विजं प्रति यजमानो ब्रूयात्- इदमासनमास्यताम् ।

आसन देकर यजमान ऋत्विक् से कहे कि यह आसन है इस पर बैठिये ।

(ऋत्विक्) आस्ये ।

ऋत्विक बोले:- मैं बैठता हूँ ।

ततो यजमानः नमोऽस्त्वनन्तायति मन्त्रेण पादप्रक्षालनं कुर्यात् ।

आसन पर बैठाकर यजमान ''नमोस्त्वनन्ताय'' मन्त्र पढ़ते हुए ऋत्विक् के पाद प्रक्षालन करे ।

गन्धपुष्पमाल्यादिभिरभ्यर्च्य

ॐ अद्येत्यादिनवग्रहम -खहोमकर्मणि हवन कर्तुमे भिश्चन्दनताम्बूलकुण्डलाङ्गुली यककमण्डलुवासोभिः ऋत्विक्त्वेन अमुकगोत्रममुकशर्माणममुकवेदाध्यायिनं त्वामहं वृणे ।

तब यजमान चन्दन, पुष्पादि से उनका वरण करके उसी समय कहे-मैं आपको हवन करने के लिए ऋत्विग्भाव से स्वीकार करता हूँ ।

(ऋत्विक्) वृतोऽस्मीति प्रतिवचनम् ।

ऋत्विक् कहे-मुझे स्वीकार है ।

(यजमानः) ऋग्वेदः पद्मपत्राक्षो गायत्रः सोमदैवतः ।
अत्रिगोत्रस्तु विप्रेन्द्र ऋत्विक्त्वं मे मखे भव ।।

यजमान कहे- हे द्विज श्रेष्ठ ! यज्ञ में आप मेरे ''ऋत्विक्'' होइये ।

(ऋत्विक्) ॐ व्रतेनदीक्षामाप्नोति दीक्षायाप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ।।
इत्यनेन मन्त्रेण कुशस्थैर्जलबिन्दुभिर्यजमान-भिषिञ्चेत् ।
एवमध्वर्युं होतारं सदस्यमुपद्रष्टारं च वृणुयात् ।।

ऋत्विक् ''ॐ व्रतेन.....सत्यमाप्यते'' मन्त्र पढ़कर यजमान पर कुशा से जल छिड़के ।

इसी प्रकार अध्वर्यु, होता, सदस्य और उपद्रष्टा सबका वरण करे ।

निम्न लिखित मन्त्र से यजमान आचार्यादि सब की प्रार्थना करे । अथ सर्वेषां प्रार्थना:-

त्वन्नो गुरुः पिता माता त्वं प्रभुस्त्वं परायणः ।
त्वत्प्रसादाच्च विप्रर्षे सर्वं मे स्यान्मनोगतम् ।। १ ।।
आपद्विमोक्षणार्थाय कुरु यज्ञमतन्द्रितः ।
ऋत्विग्भिः सहितैः शुक्लैः संयतैः सुसमाहितैः ।। २ ।।
आचार्येण च संयुक्तः कुरु कर्म यथोदितम् ।
भगवन्सर्वधर्मज्ञ सर्वधर्मभृतां वर ।। ३ ।।
वितते मम यज्ञेऽस्मिन्नुपद्रष्टा भव द्विज ।।

इसके बाद ''**येन बद्धो**'' इत्यादि मन्त्र से यजमान के दाहिने हाथ में रक्षा-सूत्र बाँधे । यजमान के ही शरीर के बराबर रक्षा-सूत्र होना चाहिए ।

रक्षा-सूत्र

यह वरण सूत्र है । आचार्य की ओर से प्रतिनिधियों द्वारा बाँधा जाना चाहिए । इसके लिए स्वयं सेवक भेजे जावें । पुरुषों तथा अविवाहित कन्याओं के दायें हाथ में तथा महिलाओं के बायें हाथ में बाँधा जाता है । जिस हाथ में कलावा बाँधे उसकी मुट्ठी बँधी हो, दूसरा हाथ सिर पर हो । इस पुण्य कार्य के लिए व्रतशील बनकर उत्तरदायित्व स्वीकार करने का भाव रखा जाय ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाऽऽप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ।।

– यजु० १९ / ३०

ॐ येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः । तेन त्वां प्रतिबध्नामि रक्षे मा चल मा चल ।।

कलश-स्थापना

पूजा पीठ पर कलश रखा जाता है । यह धातु का होना चाहिए । कण्ठ में कलावा बँधा, पुष्पों से सुसज्जित जल से भरे कलश के ऊपर कटोरी में ऊपर की ओर मुख वाली बत्ती का दीपक जला कर रखें ।

यह कलश विश्व ब्रह्माण्ड का, विराट् ब्रह्म का, भू पिण्ड (ग्लोव) का प्रतीक है । इसे शान्ति और सृजन का संदेश वाहक कह सकते हैं । सम्पूर्ण देवता कलश रूपी पिण्ड या ब्रह्माण्ड में व्यष्टि या समष्टि में एक साथ समाये हुए हैं । वे एक हैं, एक ही शक्ति से सुसम्बन्धित । बहुदेववाद वस्तुतः एक देववाद का ही एक रूप है । एक माध्यम में, एक ही केन्द्र में समस्त देवताओं को देखने के लिए कलश की स्थापना है । जल जैसी शीतलता, शान्ति एवं दीपक जैसे तेजस्वी, पुरुषार्थ की क्षमता हम सबमें ओत प्रोत हो, यही दीपयुक्त कलश का संदेश है । दीप को यज्ञ और जल कलश को गायत्री का प्रतीक माना जाता है । यह दो आधार भारतीय धर्म के उद्गम स्रोत माता-पिता हैं । इसी से इनकी स्थापना-पूजा धर्मानुसार की जाती है । पूजा के मन्त्र बोलने के साथ-साथ कलश का पूजन किया जाय । कोई एक व्यक्ति ही प्रतिनिधि रूप में कलश पूजन करे, शेष सब लोग भावना पूर्वक हाथ जोड़ें ।

कलश में देवताओं की स्थापना तथा प्रतिष्ठा की जाती है । वह समुद्र तथा समस्त पवित्र सरिता सागरों का प्रतिनिधि है । हवन में उत्पन्न 'कार्बन गैस' की शान्ति भी कलश द्वारा होती है ।

यज्ञ मण्डप के ईशान कोण में कलश की स्थापना करनी चाहिए । जिस स्थान पर कलश की स्थापना करनी हो, वहाँ की भूमि का स्पर्श करते हुये यह मन्त्र पढ़े ।

ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसिविश्वधायाविश्वस्य-भुवनस्यधर्त्री ।। पृथिवींयच्छ पृथिवीह्न हपृथिवींमाहिंसीः महीद्यौः पृथिवि चनइमंयज्ञंमिमिक्षताम् ।। पिपृतान्नोभरीमभिः ।। इति भूमिस्पृष्ट्वा ।।

उस भूमि पर शुद्ध मिट्टी की वेदी बनावे । वेदी में जौ या गेहूँ मिला लेने चाहिये । कहा भी है :-

यवान्वै वापयेत्तत्र गोधूमैश्चापि संयुतान् ।
तत्र संस्थापयेत् कुम्भं विधिना मन्त्र पूर्वकम् ।।

वेदी बनाते हुए यह मन्त्र पढ़े :-

ॐ धान्यमसिधिनुहिदेवान्प्राणायत्वो दानायत्वाव्या नायत्वा ।। दीर्घामनुप्रसिति मायुषेधान्देवोवः-सविताहिरण्यपाणिः प्रतिगृब्भणत्वंच्छिद्रेणपाणिना चक्षुयेत्वामहीनां पयोसि ।। ओषधयः संवदन्तेसामेनसह राज्ञायस्मैकृणोतिब्राह्मणस्तंराजंपारयामसि ।।

इतियवान्गोधूमान्वाप्रक्षेपः ।

कहीं, कहीं केवल धान्य राशि भी कलश के नीचे स्थापित की जाती है । अब उस वेदी पर कलश स्थापित करें । मन्त्र :-

ॐ आजिघ्रकलशंमह्यात्वाविशंत्विन्दवः पुनरूर्जा निवर्तस्वसानः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्माविशताद्रयिः ।। आकलशेषुधावति पवित्रे परिषिच्यते ।। उक्थैर्यज्ञेषु वर्द्धते ।।

इति कलशं स्थाप्य ।।

अब कलश में जल डाले । मन्त्र :-

ॐ वरुणस्योत्तंभनमसि वरुणस्यस्कंभसर्जनी स्थोवरुणस्यऽऋतसदन्यसि वरुणस्यऽऋतसदनमसि वरुणस्यऽऋतसदन मासीद ।। इति जल प्रक्षेपः ।

अब कलश में गंगा जल या यमुना जल डालें। मन्त्र-

ॐ इमंमेगंगेयमुनेसरस्वति शुतुद्रिस्तोमेसच तापरुष्ण्याम रुद्वृधेवितस्तयाजीकीयेशृणुह्यासुसोमय ।। इति तीर्थ जले नापूर्य ।

फिर कलश में गन्ध (चन्दन) डालें । मन्त्रः-

ॐ गंधद्वारांदुराधर्षांनित्य पुष्टांकरीषिणीं ईश्वरींसर्व भूतानां तामिहोपह्वयेश्रियम् । इति कलशे गंधं प्रक्षेपः ।।

अब कलश के जल में सर्वौषधी डालें । सर्वौषधी से प्रयोजन यहाँ इन दस ओषधियों से है:-

कुष्टं मांसी हरिद्र द्वे मुरा शैलेय चन्दनम् ।
वचा चंपक मुस्ते च सर्वौषध्यः दशस्मतः ।।

अर्थात्- कूट, जटामांसी, हल्दी, मुरा, शैलेय, चन्दन,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वच, चम्पक, यह दस सर्वौषधि कही जाती हैं । इन ओषधियों को कलश में डालते हुए यह मन्त्र पढ़े:-

ॐ याऽओषधीः पूर्वायातादेवेभ्यस्त्रियुगंपुरा ।।
मनैनवभ्रूणमह ँ शतंधामानिसप्तच ।।
इति सर्वौषधी प्रक्षेपः ।।

अब कलश में दूर्वा (दूब) डाले । मन्त्रः-

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ति.पुरुषः परुषस्परि ।।
एवानो दूर्वेप्रतनु सहस्त्रेणशतेनच ।।
इति दूर्वा प्रक्षेपः ।।

अब कुश डाले । मन्त्र-

ॐ पवित्रेस्थोवैष्णव्यौसवितुर्वैः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्यरश्मिभिः ।। तस्यतेपवित्रपतेपवित्र पूतस्य यत्कामः पुनेतच्छकेयम् ।।
इति कुश प्रक्षेपः ।।

अब पुंगीफल (सुपाड़ी) डाले । मन्त्रः-

ॐ याः फलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्चपुष्पिणीः वृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चत्वँ हसः ।।
इति पुङ्गीफल प्रक्षेपः ।।

अब कलश में स्वर्ण डाले (अभाव में दक्षिणा डाले) मन्त्र -

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् ।। सदाधार पृथिवीन्द्या मुतेमां कस्मैदेवाय हविषा विधेम् ।।
इति दक्षिणा प्रक्षेपः ।।

फिर कलश के मुख पर पंचपल्लव रखें । मन्त्रः-

अश्वत्थोदुम्बरं प्लक्ष चूत न्यग्रोध पल्लवाः ।
पञ्च भङ्गा इति ख्याता सर्व कुर्मसु शोभनाः ।।

इन पांच पेड़ों के पत्ते पंच पल्लव कहे जाते हैं । इन्हें कलश के मुख पर रखते हुए यह मन्त्र पढ़े:-

ॐ अश्वत्थेवो निषदनं पर्णेवोव सतिष्कृता ।।
गो भाजऽइत्किला सथयत्सनवथ पुरुषम् ।।
इति पञ्च पल्लवानि प्रक्षेपः ।।

अब कलश के कण्ठ में रंगीन सूत्र (कलावा) बांधते हुए यह मन्त्र पढ़े:-

ॐ युवा सुवासाः परिवीतऽआगात्सऽउश्रेयान् भवति जायमानः ।। तन्धीरासः कवयऽउन्नयन्ति साध्यो मनसा देवयन्तः ।।
इति कौसुम्ब सूत्र बन्धनम् ।।

एक पात्र में चावल भर कर कलश के ऊपर रखे । मन्त्र-

ॐ पूर्णादर्विपरापत सुपूर्णा पुनरापत ।।
वस्त्रे वविक्रीणा वहाऽइष मूर्ज ँ शतक्रतो ।।
इति कलशोपरि तंदुल पूरित पर्ण पात्र निधानम् ।।

अब नारियल के ऊपर कलावा बंधा हुआ, स्वस्तिक लगा हुआ कलश के ऊपर स्थापित करे । मन्त्र-

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहो रात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् ।। इष्णन्निषाण मुम्मऽइषाण सर्वलोकम्मऽइषाण ।।
इति श्रीफलनिधानम् ।।

इस प्रकार कलश स्थापित होने के पश्चात् कलश पर वरुण का पूजन करें । वरुण-पूजन का मन्त्र इस-प्रकार है-

ॐ तत्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुश ँ समान आयुः प्रमोषीः ।

- यजु० १८/४९

ॐ मनोजूतिर्जुषता माज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञ मिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञ ँ समिमं दधातु । विश्वेदेवासऽइह मादयन्तामोऽ३प्रतिष्ठः ।।

- यजु० २/१३

ॐ वरुणाय नमः । वरुणमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, ध्यायामि ।

-यजु० १८/४९

तत्पश्चात् जल, गंध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से कलश का पूजन करें ।

गन्धाक्षत पुष्पाणि धूपं, दीपं नैवेद्यं समर्पयामि ।
ॐ कलशस्थ देवताभ्यो नमः ।

तदुपरान्त निम्नलिखित मन्त्र से हाथ जोड़कर कलश में प्रतिष्ठित देवताओं की प्रार्थना करें ।

कलश प्रार्थना

ॐ कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः ।
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृतः ।। १ ।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपाः वसुन्धराः ।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ।। २ ।।
अंगैश्च सहिताः सर्वे कलशन्तु समाश्रिताः ।
अत्र गायत्री सावित्री शान्ति पुष्टिकरी सदा ।। ३ ।।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिता ।
शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ।। ४ ।।
आदित्याः वसवो रुद्राः विश्वेदेवाः सपैतृकाः ।
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ।। ५ ।।
त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव ।
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ।। ६ ।।

अथ कलशाधिष्ठातृदेवतानामावाहनम्

ॐ सरिताः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः ।
आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः ।।
इति मन्त्रेण कलशे गन्धाक्षतपातितः ।।

''ॐ सरितः सागराः'' इस मन्त्र से कलश पर चन्दन मिश्रित अक्षत छोड़ें ।

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः ।
मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ।।
कुक्षौ तु सागरास्सप्तद्वीपा वसुन्धरा ।
ऋग्वेदोऽथयजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ।
अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः ।।
इत्यावाह्य पूजनं कुर्य्यात् ।।

तदुपरान्त ''कलशस्य मुखे विष्णु'' इत्यादि मन्त्रों से कलश पर विष्णु, रुद्र, ब्रह्मादि देवताओं का आवाहन करना चाहिए ।

तत्रादौ सङ्कल्पः ।। महामाङ्गल्यप्रदे मासोत्तमेऽमुक मासेऽमुक पक्षेऽमुक तिथौ अमुकगोत्र स्यामुकशर्मणः सपरिवारस्य निखिलकामना प्राप्तयर्थं कर्त्तव्यामुकतृप्ति जनकामुककर्म कर्त्तं कलशाधिष्ठातृ देवतानां पूजनमहं करिष्ये ।। इति सङ्कल्पः ।।

ॐ कलशाधिष्ठातृ देवताभ्यो नमः । इति मन्त्रेण गन्धादिभिः सम्पूज्य पुष्पाञ्जिलिं निवेद्यं नतिं कुर्यात् ।।

फिर ''महामाङ्गल्यप्रदे मासोत्तमे'' इत्यादि वाक्य से संकल्प करें । तत्पश्चात् ''ॐ कलशाधिष्ठातृ देवताभ्यो नमः'' इस मन्त्र से गन्ध-अक्षत आदि से विधिवत् पूजन करें तथा हाथ में पुष्पांजलि लेकर निवेदन करें ।

अथ कलश प्रार्थना

देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ । उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ निधृतो विष्णुना स्वयम् ।। त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः । त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ।। शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुत्वं च प्रजापतिः । आदित्या वसवोरुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः ।। त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि ये च कामफलप्रदाः । त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव ।। सानिध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ।
इति कलश स्थापनम् ।।

फिर ''देवदान'' इत्यादि मन्त्र पढ़कर कलश की प्रार्थना करें ।

दीप-पूजन

कलश के साथ दीपक भी पूजन वेदी पर रखा जाता है । इसे सर्वव्यापी चेतना का प्रतीक मानकर पूजना चाहिए । वैज्ञानिक भी स्वीकार करने लगे हैं कि मूलतः चेतना से पदार्थ बना है, पदार्थ से चेतना नहीं । उस महा चेतना रूप, परम प्रकाश का पूजन, आराधन दीपक के माध्यम से करें । मन्त्र -

ॐ अग्निर्ज्योतिरग्निः स्वाहा । सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा । अग्निर्वर्च्चो ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा । सूर्योवर्च्चो ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा । ज्योतिः सूर्य्यः सूर्य्यो ज्योतिः स्वाहा ।
इति मन्त्रेण कलशसमीपे पूर्वदिशि एकस्मिन् पात्रे दीपं निदध्यात् ।।

गणेश गौरी पूजन

कलश पूजन के साथ गणेश गौरी पूजन की भी परम्परा अनेक स्थानों पर पायी जाती है, वास्तव में यह संक्षिप्तीकरण की पद्धति है । कलश पूजन के साथ गणपति को सभी देव शक्तियों का प्रतिनिधि तथा गौरी को सभी मातृ-शक्तियों की प्रतीक मानकर पूजन कर लिया जाता है । यदि इस प्रकार का संक्षिप्त पूजन करना हो तो इस पुस्तक के प्रथम भाग में दिए देव प्रसंग के आरम्भिक चार मन्त्रों से काम चल सकता है । उस स्थिति में क्रमशः गुरु तत्व का **'गुरु ब्रह्मा'**..... आद्य शक्ति गायत्री को **आयातु वरदे देवि** .....'गणपति' का **'अभिप्सितार्थ सिद्यर्थं**-तथा **गौरी का सर्व मंगल मांगल्ये**-मन्त्र से आवाहन करके पंचोपचार पूजन करा देना चाहिए ।

पुरुष सूक्त

सूत्र संकेत- पुरुष सूक्त का प्रयोग विशेष पूजन के क्रम में किया जाता है । षोडशोपचार पूजन के

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक-एक उपचार के साथ क्रमशः एक-एक मन्त्र बोला जाता है । जहाँ कहीं भी किसी देव शक्ति का पूजन विस्तार से करना हो तो पुरुष सूक्त के मन्त्रों के साथ षोडशोपचार पूजन करा दिया जाता है । पंचोपचार पूजन में भी इस सूक्त से सम्बन्धित मन्त्रों का प्रयोग किया जाता है । यज्ञादि के विस्तार देव पूजन में, पर्वों पर पर्व से सम्बन्धित देव शक्ति के पूजन में बहुधा इसका प्रयोग किया जाता है । वातावरण में पवित्रता और श्रद्धा के संचार के लिए भी पुरुष-सूक्त का पाठ सधे हुए कण्ठ वाले व्यक्ति सामूहिक रूप से करते हैं ।

पुरुष-सूक्त में परमात्मा की विराट सत्ता का वर्णन किया गया है । उस महान चेतना के विस्तार के संकल्प से ही इस जड़-चेतन की सृष्टि हुई है । किसी भी प्रतीक देव विग्रह का पूजन करते हुए यही चिन्तन उभरता रहता है कि हम उसी एक विराट सनातन अविनाशी का पूजन कर रहे हैं ।

पुरुष-सूक्त के पूजन से प्रारम्भ कराने से पूर्व उपस्थित श्रद्धालुओं को उक्त सिद्धान्त बतलाया जाना चाहिए ताकि पूजन में उनका भी भाव-संयोग हो सके । यदि सम्भव हो तो सभी के हाथ में अथवा पूजन केन्द्र के निकटवर्ती प्रतिनिधियोंके हाथ में अक्षत पुष्प दे देने चाहिए । उसे पूरे पूजन के साथ हाथ में रखे भाव पूजन में सम्मिलित रहें और अब वे पुष्पांजलि के साथ उन्हें अर्पित करें । भावना करें कि हमारे पास जो कुछ भी है उसी का दिया हुआ है । उसके विराट स्वरूप एवं उद्देश्यों को हम पहचानें और उनके निमित्त अपने साधनों को, क्षमताओं को अर्पित करते हुए उन्हें सार्थक करें, धन्य बनायें । उस सर्वव्यापी को, उसके आदर्शों को हर कदम पर, हर स्तर पर, हर प्रसंग में प्रत्यक्ष की तरह देखते हुए श्रद्धासिक्त होकर पूजन भाव से सक्रिय रहें । उसके दिए साधनों को उसके उद्देश्यों में लगाने में कृपणता न बरतें, उदार भक्ति-भावना का परिचय-प्रमाण दें ।

सम्बन्धित सामग्री हाथ में लेकर मन्त्र बोला जाय । मन्त्र पूरा होने पर जिस देव -शक्ति का पूजन है, उसका नाम लेते हुए षोडशोपचार के आधार पर स्थापयामि, समर्पयामि आदि कहते हुए उसे चढ़ाते चलें ।

पुरुष सूक्तम्

१- आवाहनम्

ॐ सहस्त्रशीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात् ।
स भूमिꣳसर्वत स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशांगुलम् ।।

२- आसनम्

ॐ पूरुषएवेदः ꣳसर्व यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ।।

३- पाद्यम्

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्यविश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृंतदिवि ।।

४- अर्घ्यम्

ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्ये ह्याभवत्पुनः ।
ततो विश्वङ् व्यक्रामत्साशनानशनेअभि ।।

५- आचमनम्

ॐ ततो विराडजायत विराजो अधिपूरुषः ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः ।

६- स्नानम्

ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्यानाराण्या ग्राम्याश्च ये ।।

७- वस्त्रम्

ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ।।

८- यज्ञोपवीतम्

ॐ तस्माद्यश्वा ऽ अजायन्त ये के चोभयादतः ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ।।

९- गन्धम्

ॐ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवाअयजन्त साध्या ऽ ऋषयश्च ये ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

१०- पुष्पाणि

ॐ यतपुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।

मुखं किमस्यासीत्किं बाहू किमूरु पादाउच्येते ।।

११- धूपम्

ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।

ऊरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याꣳ शूद्रो अजायत ।।

१२- दीपम्

ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्योजायत ।

श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ।।

१३- नैवेद्यम्

ॐ नाभ्याआसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत ।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ२ अकल्पयन ।।

१४- ताम्बूल पुंगीफलानि

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।

वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ।।

१५- प्रदक्षिणा

ॐ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः ।

देवा यद्यज्ञं तन्वानाअबध्नन् पुरुषं पशुम् ।।

१६- मन्त्र पुष्पांजलिम्

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन।

तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।।

– यजु० ३१/१/१६

षोडशोपचार देव पूजन

देव पूजन के लिए षोडशोपचार विधान प्रसिद्ध है । यों पंचोपचार, दशोपचार, अष्टादशोपचार भी होते हैं । पूजन के लिए जितने प्रकार का पूजन-विधान प्रयुक्त किया जाव, उसे उपचार कहते हैं । पंचोपचार में (१) गन्ध (२) पुष्प (३) धूप (४) दीप (५) नैवेद्य यह पांच हैं । दशोपचार में (१) पाद्य (२) अर्घ्य (३) स्नान (४) मधुपर्क (५) आचमन (६) गन्ध (७) पुष्प (८) धूप (९) दीप (१०) नैवेद्य हैं । षोडशोपचार में (१) आसन (२) स्वागत (३) पाद्य (४) अर्घ्य (५) आचमन (६) मधुपर्क (७) पुनराचमन (८) स्नान (९) वस्त्र (१०) आभरण (११) गन्ध (१२) पुष्प (१३) धूप (१४) दीप (१५) नैवेद्य (१६) बन्दन यह हैं । अष्टादश उपचार में (१)आसन (२) आवाहन(३) स्नान (४) आरती (५) वस्त्र (६) आचमन (७) यज्ञोपवीत (८)पुनराचमन (९) आभूषण (१०) दर्पण (११)गन्ध (१२) पुष्प (१३) धूप (१४) दीप (१५) नैवेद्य (१६) ताम्बूल (१७) इत्रादि सुगन्ध लेपन (१८) स्तुति यह १८ उपचार हैं ।

अनेक पूजन ग्रन्थों तथा आचार्यों के अनुसार इनमें थोड़े थोड़े हेर-फेर भी हैं । पुरुष-देवताओं तथा स्त्री-देवताओं के लिए पूजन सामग्री, क्रम तथा मन्त्रों में भी कुछ हेर फेर है । वैदिक विधान के अनुसार पुरुष देवताओं का षोडशोपचार पूजन "पुरुष सूक्त के १६ मन्त्रों से तथा स्त्री देवताओं का षोडशोपचार पूजन श्री सूक्त के १६ मन्त्रों से किया जाता है । चूँकि इन पृष्ठों में हम स्मार्त विधि की हवन पद्धति का उल्लेख कर रहे हैं, इसलिए यहाँ स्मार्त श्लोकों से ही पूजन मन्त्रों का विधान दिया गया है । इसी प्रकार षोडशोपचार के १६ विधानों में जो हेर फेर हैं, उनमें से जो १६ उपचार अधिक उपयुक्त जाँचे हैं, उन्हीं का वर्णन किया गया है । इस प्रकार देवशक्तियों एवं अतिथियों के पूजन-सत्कार के जो १६ उपचार भारतीय संस्कृति में प्रचलित हैं, उनमें अपनी स्थिति तथा अतिथि के स्तर के अनुरूप स्वागत उपचारों का निर्धारण किया जा रहा है । देव-पूजन-प्रसंग में दो बातें ध्यान रखने योग्य हैं, देवताओं को पदार्थ की आवश्यकता नहीं, इसलिए उन प्रसंगों में उपेक्षा एवं प्रमाद न बरता जाय । कोई सम्पन्न और सम्मानीय अतिथि अपने यहाँ आवें, तो 'उन्हें क्या कमी' कहकर उन्हें आवश्यक वस्तुऐं उपलब्ध कराने में उपेक्षा नहीं बरती जाती । जो है, उसे भावनापूर्वक, सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया जाता है । ऐसी ही सावधानी देवपूजन के प्रसंग में रखी जाय ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

देवताओं को पदार्थों की भूख नहीं है, पदार्थों के समर्पण द्वारा जो भावना, श्रद्धा व्यक्त होती है देवता उसी से सन्तुष्ट होते हैं । यह ध्यान में रखकर अच्छे पदार्थ देकर देवताओं पर अहसान का भाव नहीं आने देना चाहिए । श्रद्धा भरे समर्पण को प्रमुख मानकर उसे बनाये रखना आवश्यक है । अभाववश पदार्थों में कमी रह जाय, तो उसकी पूर्ति भावना द्वारा हो जाती है । यों तो सामान्य क्रम में भी किसी गृह-आगत अतिथि के दर्शन होते ही उसे हाथ जोड़कर नमस्कार किया जाता है । इसके अनन्तर भारतीय शिष्टाचार में सम्मानीय अतिथि का सत्कार सोलह प्रकार से किया जाता है । (१) **आवाहन**- आइये, पधारिये कहकर सत्कार करना । (२) आसन, बैठने के लिए चौकी, कुर्सी आदि देना । (३) पाद्य, थकान दूर करने के लिए पैर धुलाना । (४) अर्घ्य- मुँह हाथ धुलाना । (५) आचमन, जल पिलाना । (६) स्नान- दूर से आये थके-माँदे के लिए स्नान की व्यवस्था करना । (७) वस्त्र- यात्रा के मैले वस्त्रों को धुलवाने का प्रबन्ध करना । (८) यज्ञोपवीत- श्रेष्ठ सांस्कृतिक उपहार । (९) गन्ध- सुगन्धित तेल चन्दन आदि । (१०) पुष्प- फूल, गुलदस्ता, माला आदि भेंट करना । (११) धूप- अगरबत्ती आदि जलाना । (१२) दीप - आरती उतारना, दीपक जलाना । (१३) नैवेद्य - जलपान, भोजन । (१४) ताम्बूल- सौंफ, सुपाड़ी आदि मुख शुद्धि । (१५) प्रदक्षिणा- ठहरने के स्थान तक साथ चलकर जाना, सुविधा की देख-रेख । (१६) मन्त्र पुष्पांजलि- कुशल प्रश्न, मधुर भाषण, आगमन की प्रसन्नता-अभिव्यक्ति, विचार-विनिमय ।

प्राचीन काल में द्रुतगामी वाहन न होने के कारण पैदल या मन्दगामी वाहनों से यात्रा करनी पड़ती थी । उन दिनों थकान उतारने के लिए इतना शिष्टाचार आवश्यक था । फिर देव शक्तियाँ तो सुदूर अन्तरिक्ष की यात्रा करके यज्ञशाला तक पधारी हैं, यह भावना की जाती है । इस पूजा सत्कार विधान में उनके प्रति अपनी आस्था, कृतज्ञता, स्वागत, प्रसन्नता, सन्मान की अभिव्यक्ति का श्रद्धासिक्त भाव रखना अनिवार्य है ।

यर्जुर्वेदोक्त पुरुष सूक्त के १६ मन्त्र- इस षोडशोपचार प्रक्रिया के लिए काम में लाये जाते हैं । एक-एक करके क्रमशः एक-एक मन्त्र इन सोलहों प्रयोजनों में काम में लाया जाता है । यदि समय हो तो उन सोहल मन्त्रों को काम में लाना चाहिए । एक-एक मंत्र बोलते हुए एक-एक वस्तु समर्पित करनी चाहिए।। यदि समय की कमी हो तो 'समर्पयामि' वाला वाक्य बोलकर संक्षेप में पूजन भी किया जा सकता है । दोनों में से कोई एक प्रक्रिया अपना लेनी चाहिए ।

यज्ञ में वस्तुतः एक यज्ञ पुरुष भगवान् की ही स्थापना पूजा है । देव शक्तियाँ तो उसी के विभिन्न स्पन्दन है । पूजन-सत्कार-नमस्कार एक बार ही करने में उसे सम्पूर्ण देवताओं का पूजन हो जाता है ।

भगवान एक ही है । वे न नर हैं, न नारी, अथवा दोनों ही हैं । अस्तु, इनके पूजन में नर की दृष्टि से पुरुष सूक्त और नारी की दृष्टि से श्री सूक्त का भेद करने की आवश्यकता नहीं है । एकमात्र पुरुष सूक्त ही भगवान के नर रूप या नारी रूप के पूजन में प्रयुक्त करना चाहिए ।

जलपात्र, चमची एवं पूजा सामग्री एक थाल में रहनी चाहिए । एक दूसरी छोटी तस्तरी में पूजा की सामग्री मन्त्रोच्चार के बाद छोड़ी जाय । आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान इन छः कार्यों के लिए एक-एक करते छः चमची जल छोटी तस्तरी में डालना चाहिए । वस्त्र के लिए सूत के धागे डाले जायँ । यज्ञोपवीत पूरा रखा जाय, जो पीछे प्रसाद रूप यज्ञ कर्ता के काम आ जाय । गन्ध, अगरबत्ती जलाई जाय, पुष्प चढ़ाये जायें, दीपक पहले से ही जला रखा होगा, हाथ से उस ओर संकेत कर दिया जाये । नैवेद्य कोई ऋतु फल मेवा, या बताशे रख दिये जायँ । चावल से भी काम चल सकता है, वह भी नैवेद्य है । ताम्बूल-सौंफ, सुपाड़ी-पान की जरुरत नहीं है । आसाम बंगाल में सुपाड़ी को ही तम्बूल कहते हैं । पान खर्चीला भी है और विलासिता का चिह्न भी । प्रदक्षिणा, आँखें बन्द करके उनके साथ चलने का ध्यान । मन्त्र-पुष्पांजलि, मधुर भाषण के प्रतीक पुष्प या गुलदस्ता भेट करना ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पंचोपचार

समय की कमी या संक्षिप्तीकरण की दृष्टि से पंचोपचार पूजन से भी काम चल सकता है । पंचोपचार में पाँच सत्कार यह हैं- (१) आवाहन (२) आचमन (३) गन्ध (४) पुष्प (५) नैवेद्य ।

इनमें आवाहन आचमन के लिए जल की चमची दो बार छोड़ी जाय, चन्दन पुष्प, नैवेद्य (चावल) इन्हें समर्पित किया जाय और (१) आवाहयामि (२) आचमनम् समर्पयामि(३) गन्धान् समर्पयामि, (४) पुष्पाणि समर्पयामि(५) नैवेद्यम् समर्पयामि, यह उच्चारण किया जा सकता है । पुरुष सूक्त से पञ्चोपचार पूजन करना हो तो (१) आवाहन के लिए - सहस्र शीर्षा (२) आचमन के लिए - ततो विराड०(३) गन्ध के लिए - तं यज्ञं० (४) पुष्प के लिए - यत् पुरुषं० (५) नैवेद्य के लिए -नाभ्यां० मन्त्र बोलने चाहिए ।

पुरुष सूक्त मन्त्रों में विराट् ब्रह्माण्ड के रूप में विश्वात्मा भगवान का वर्णन है । अर्जुन को भगवान् कृष्ण ने और कोशिल्या को राम ने जिस अपने विराट् रूप के दर्शन कराये थे, उसका वर्णन प्रति पादन इन पुरुष सूक्त के १६ मन्त्रों में है । इनके पठन-पाठन, उच्चारण एवं विवेचन से विश्व रूप भगवान् की भक्ति करने की वास्तविक प्रक्रिया लोक-मंगल में निरत होने की भावना जागृत होती है । इस संसार को सुन्दर सुसज्जित, समुन्नत, सुविकसित, सुखी बनाने के लिए जो प्रयत्न पुरुषार्थ या त्याग अनुदान प्रस्तुत किया जाता है, भगवान् का वास्तविक पूजन वही है । षोडशोपचार अथवा पंचोपचार प्रतीक पूजा में उस विराट् पुरुष की सेवा साधना में निरत होकर यथार्थ पूजा भक्ति करने की प्रेरणा है ।

षोडशोपचार पूजन

यदि समय कम हो तो निम्न वाक्यों से ही पूजन करें, अन्यथा पुरुष सूक्त के मन्त्रों के बाद क्रमशः यह वाक्य बोलते हुए पूजन कराया जाय ।

ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः

आवाहयामि स्थापयामि ।। १ ।।
आसनं समर्पयामि ।। २ ।।
पाद्यं समर्पयामि ।। ३ ।।
अर्घ्यं समर्पयामि ।। ४ ।।
आचमनं समर्पयामि ।। ५ ।।
स्नानम् समर्पयामि ।। ६ ।।
वस्त्रम् समर्पयामि ।। ७ ।।
यज्ञोपवीतं समर्पयामि ।। ८ ।।
गन्धम् समर्पयामि ।। ९ ।।
पुष्पाणि समर्पयामि ।। १० ।।
धूपमाघ्रापयामि ।। ११ ।।
दीपम् दर्शयामि ।। १२ ।।
नैवेद्यं निवेदयामि ।। १३ ।।
ताम्बूलपुङ्गीफलानि समर्पयामि ।। १४ ।।
प्रदक्षिणाम् करोमि ।। १५ ।।
मन्त्र पुष्पाञ्जलिम् समर्पयामि ।। १६ ।।
सर्वाभावे अक्षतान् समर्पयामि ।।

अन्य मन्त्र -

पुलिङ्ग रूप से षोडशोपचार पूजन

आवाहन-मन्त्र-

आगच्छ भगवन्देव स्थाने चात्र स्थिरो भव ।
यावत्पूजां करिष्यामि तावत्वं सन्निधौ भव ।। १ ।।

आसन-मन्त्र

रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्वसौख्यकरं शुभम् ।
आसनञ्च मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ।। २ ।।
आसनम् समर्पयामि ।।

पाद्य-मन्त्र

पाद्यं गृहाण देवेश सर्वक्षेमसमर्थकम् ।
भक्त्या समर्पितं देव लोकनाथ नमोऽस्तुते ।। ३ ।।
पाद्यं समर्पयामि ।।

अर्घ्य-मन्त्र

अर्घ्यं गृहाण देवेश गन्धपुष्पाक्षतैः सह ।
करुणां कुरु मे देव गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते ।। ४ ।।
अर्घ्यं समर्पयामि ।।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आचमन-मन्त्र

सर्वतीर्थसमायुक्तं सुगन्धि निर्मलं जलम् ।
आचम्यतां मया दत्तं गृहीत्वा परमेश्वर ।। ५ ।।
आचमनम् समर्पयामि ।।

स्नान-मन्त्र

गङ्गासरस्वतीरेवा पयोष्णीनर्मदाजलैः ।
स्नापितोऽसि मया देव तथा शान्तिं कुरुष्व मे ।। ६ ।।
स्नानम् समर्पयामि ।।

वस्त्र-मन्त्र

सर्वभूषाधिके सौम्ये लोकलज्जा निवारणे ।
मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम् ।। ७ ।।
वस्त्रम् समर्पयामि ।।

यज्ञोपवीत-मन्त्र

नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणां देवतामयम् ।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ।। ८ ।।
यज्ञोपवीतम् समर्पयामि ।।

गन्ध-मन्त्र

श्रीखण्डचन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपितं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।। ९ ।।
गन्धम् समर्पयामि ।।

पुष्प-मन्त्र

पुष्पैर्नानाविधैर्दिव्यैः कुमुदैरथ चम्पकैः ।
पूजार्थं नीयते तुभ्यं पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम् ।। १० ।।
पुष्पाणि समर्पयामि ।।

धूप-मन्त्र

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
अघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।। ११ ।।
धूपम् समर्पयामि ।।

दीप-मन्त्र

आज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम् ।।
भवत्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने ।
त्राहि मां तिरयाद्घोराद्दीपोयं प्रतिगृह्यताम् ।।१२।।
दीपम् दर्शयामि ।।

नैवेद्य-मन्त्र

नैवेद्यं गृह्यतां देव दधिक्षीरघृतानि च ।
आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ।।१३।।
नैवेद्यं समर्पयामि ।।

नमस्कार-मन्त्र

नमः सर्व हितार्थाय जगदाधार हेतवे ।
साष्टाङ्गोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः ।।
नमोस्त्वनन्ताय सहस्त्रमूर्तये सहस्त्रपादाक्षिशिरो - रुबाहवे ।
सहस्त्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्त्रकोटि युग धारिणे नमः ।। १४ ।।

प्रदक्षिणा-मन्त्र

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण-पदे-पदे ।।१५।।

दक्षिणा-मन्त्र

पूजा फल समृध्यर्थं तावाग्रे स्वर्णमीश्वरि ।
स्थापितं तेन मे प्रीता पूर्णान्कुरु मनोरथान् ।।
न्यूनातिरिक्त पूजायां सर्म्पूण फलहेतवे ।
दक्षिणां काञ्चनीं देव स्थापयामि तवाग्रतः ।।१६।।
दक्षिणां समर्पयामि ।।

स्त्री रूप से षोडशोपचार पूजन

आवाहन-मन्त्र

ॐ आगच्छेमहादेवि! सर्वसम्पद्प्रदायिनी ।
यात्तृव्रतं समाप्येत तावत्त्वं सन्निधाभव ।।
अथवा
ॐ आगच्छ वरदे देवि दैत्यदर्पनिषूदिनि ।
पूजां गृहाण सुमुखि नमस्ते शङ्कर प्रिये ।। १ ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आसन-मन्त्र

अनेकरत्न संयुक्तं नानामणिगणाचितम् ।
कार्तस्वरमयं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम् ।। २ ।।

पाद्य-मन्त्र

गङ्गादि सर्व तीर्थेभ्योमया प्रार्थनयाहृतम् ।
तोयमेतत्सुख स्पर्श पाद्यार्थ प्रतिगृह्यताम् ।। ३ ।।

अर्घ्य-मन्त्र

निधीनां सर्व रत्नानां त्वमनर्घ्य गुणाह्यसि ।
सिंहोपरिस्थते देवि ! गृहाणार्घ्यनमोस्तुते ।। ४ ।।

आचमन-मन्त्र

कर्पूरेणसुगन्धेन सुरभिस्वादु शीतलम् ।
तोयमाचमनीयार्थं देवि ! त्वं प्रतिगृह्यताम् ।। ५ ।।

स्नान-मन्त्र

मन्दाकिन्याः समानीतै र्हेमांमोरूहवासितैः ।
स्नानं कुरुष्व देवेशि ! सलिलैश्च सुगन्धिभिः ।।६।।

वस्त्र-मन्त्र

पहकूल युगं देवि ! कंचुकेन समन्वितम् ।
परिधेहि कृपां कृत्वा दुर्गे ! दुर्गति नाशिनि ।।७।।

कञ्चुक-मन्त्र

स्वर्ण सूत्र मयं दिव्यं ब्राह्मणा निर्मितं पुरा ।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वरि ।। ८ ।।

गन्ध-मन्त्र

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं च देवेशि ! चन्दनं प्रति गृह्यताम् ।।९।।

अक्षत-मन्त्र

अक्षतान्निर्मलां शुद्धां मुक्तामणि समन्वितान् ।
गृहाणेमान्महा देवि ! देहि मे निर्मलां धियम् ।। १० ।।

पुष्प-मन्त्र

पुष्पैर्नाना विधैर्दिव्यैः कुमुदैरथचम्पकैः ।
पूजार्थनीयते तुभ्यं पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम् ।। ११ ।।
अथवा-
वस्त्रञ्च सोमदैवत्यं लज्जायास्तु निवारणम् ।
मया निवेदितं भक्त्या गृहाण परमेश्वरि ।। ११ ।।

धूप-मन्त्र

दशांगगुग्गुलं धूपं चन्दनागरुसंयुतम् ।
समर्पितं मया भक्त्या देवि ! धूपं प्रतिगृह्यताम् ।। १२ ।।

दीप-मन्त्र

घृतवर्तित समायुक्तं महातेजो महोज्ज्वलम् ।
दीपं दास्यामि देवेशि ! सुप्रीताभवसर्वदा ।।१३।।
दीपं दर्शयामि ।।

नैवेद्य, फल, ताम्बूल-मन्त्र

अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम् ।
नैवेद्यं गृह्यतां देवि ! भक्तिं मे ह्यचलां कुरु ।।
द्राक्षा खर्जूर कदली पनसाम्र कपित्थकम् ।
नारिकेलेक्षुजम्बादि फलानि प्रतिगृह्यताम् ।।
एला लवङ्ग कस्तूरी कर्पूरं पुष्प वासितां ।
वीटिकां मुख वासार्थं समर्पयामि सुरेश्वरि ।।१४।।

दक्षिणा, नीराजन, पुष्पाञ्जलि-मन्त्र

पूजाफल समृद्ध्यर्थं तवाग्रे स्वर्णमीश्वरि ।
स्थापितं तेन मे प्रीता पूर्णान कुरु मनोरथान् ।।
दक्षिणां समर्पयामि ।।
नीराजनं सुमाङ्गल्यं कर्पूरेण समन्वितम् ।
चन्द्रार्कवह्निसदृशं महादेवि ! नमोऽस्तुते ।।१५।।
दुर्गे ! स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दरिद्र्यदुःख भयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ।। १५ ।।

नमस्कार-मन्त्र

नमः सर्व हितार्थायै जगदाधार हेतवे ।
साष्टांगौऽयं प्रणामस्तु प्रयत्नेन मया कृतः ।।
नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्त्रमूर्तये सहस्त्रपादाक्षि शिरोरु बाहवे ।
सहस्त्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्त्रकोटि युगधारिणे नमः ।। १६ ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अथ नवग्रह स्थापना पूजन

सूर्यावाहन

रक्तपुष्पाक्षतान् गृहीत्वा आवाह्ये । ॐ सप्तम्यां विशाखान्वितायां कलिङ्गजातं कश्यपगोत्रं लोहितवर्णं वर्तुलाकृतिं मण्डलमध्यस्थं प्राङ् मुखं द्विभुजं पद्महस्तं सप्ताश्वरथवाहनं क्षत्रियाधिपतिमीश्वराधि दैवतमग्नि प्रत्यधिदैवतसहितं सूर्यमावाहयामि ॐ भूर्भुवः स्वः भगवन् सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ।

जपाकुसुमसङ्काशं काश्यपेयं महाद्युतिम् । तमोऽरिं सर्व पापघ्नं सूर्यमावाह्याम्यहम् ।। इत्यावाह्य।।

ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृत मर्त्यं च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ।। पद्मासनः पद्मकरः पद्मगर्भसमद्युतिः । सप्ताश्वः सप्तरज्जुश्च द्विभुजः स्यात्सदा रविः ।। इति मन्त्रेण पाद्यादिभिः सूर्य्यं सम्पूज्यानेनैव मन्त्रेण रक्त पताका दानम् । इति सूर्य पूजनम् ।। १ ।।

अग्नि स्थापना के बाद नवग्रहों का पूजन करें । यथा- यजमान हाथ में लाल फूल और अक्षत लेकर ''सप्तम्यां'' से ''सूर्य मावाहयाम्यहम्'' तक मन्त्र पढ़ कर सूर्य का आवाहन करें और कहे कि हे सूर्य भगवान ! यहाँ आइये मेरे इस यज्ञ में स्थित हो इसकी रक्षा कीजिये । (इसी प्रकार नव ग्रहों के आवाहनान्त में भी कहना आवश्यक है ।) तत्पश्चात् ''ॐ आकृष्णेन'' इत्यादि मन्त्र को पढ़कर गन्धादि से सूर्य देवता की विधिवत् पूजा करे, फिर पुनः इसी मन्त्र से लाल पताका दान करें ।

चन्द्रावाहन

श्वेतपुष्पाक्षतान् गृहीत्वाऽऽवाहयेत्- ॐ चतुर्दश्यां कृत्तिकान्वितायां समुद्रजातमत्रिगोत्रं श्वेतवर्णं चतुरस्त्रकृतिं मण्डलात्पूर्व दक्षिणदिक्स्थं पश्चिमाभिमुखं दशाश्वरथवाहनं निशापतिमुमाधिदैवतं जलप्रत्यधिदैवतसहितं चन्द्रामावाहयामि । ॐ भूर्भुवः स्वः चन्द्र इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ।

दधिशङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम् । ज्योत्स्ना पतिं निशा नाथं सोम मावाहयाम्यहम् ।। इत्यावाह्य ।।

ॐ इमं देवाऽअसपत्नाकुँ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय ।। इममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विशऽएष वोमीराजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ꣳ राजा ।।

श्वेतः श्वेताम्बरधरो दशाश्वः श्वेतभूषणः । गदा-पाणिर्द्विबाहुश्च कर्त्तव्यो वरदः शशी ।। इति मन्त्रेण पाद्यादिभिश्चन्द्रं संपूज्यानेनैव मन्त्रेण श्वेतपताकादानम् ।। इति चन्द्र पूजनम् ।। २ ।।

यजमान सफेद फूल-अक्षत लेकर ''ॐ चतुर्दश्यां से सोममावाहयाम्यहम्'' तक मन्त्र पढ़कर चन्द्रमा का आवाहन करके ''ॐ इमं देवा से वरदः शशीः'' तक मन्त्र पढ़कर पाद्यादि से विधिवत् चन्द्रमा की पूजा करें और इन्हीं उपर्युक्त मन्त्रों से सफेद पताका दान करें ।

भौमावाहन

रक्तपुष्पाक्षतान्गृहीत्वा आवाह्येत् । ॐ दशम्यां पूर्वाषाढ़ान्वितायामवन्तीजातं (अयोध्याजातं) भारद्वाजगोत्रं रक्तवर्णं त्रिकोण मण्डलाद्दक्षिण दिग्वि भागस्थं दक्षिणाभिमुखं मेषवाहनं क्षत्रियाधिपतिं स्कन्दाधिदैवतं क्षितिप्रत्यधि दैवत सहितं भौम मावाहयामि । ॐ भूर्भुवः स्वः भौम इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ।

धरणीगर्भ सम्भूतं विद्युत्तेजसमप्रभम् । कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम् ।। इत्यावाह्य ।।

ॐ अग्निर्मूर्द्धादिव ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् । अपा ꣳरेता ꣳसि जिन्वति ।।

रक्तमाल्याम्बरधरः शक्तिशूलगदाधरः । चतुर्भुजो मेषगमो वरदः स्याद्धरासुतः ।।

इति मन्त्रेण पाद्यादिभिः भौमं सम्पूज्य, अनेनैव मन्त्रेण रक्तपताकादानम् ।। इति भौम पूजनम् ।। ३ ।।

यजमान लाल फूल और अक्षत लेकर ''ॐ दशम्यां से भौममावाहयाम्यहम्'' तक मन्त्र पढ़कर भौम का आवाहन करें तत्पश्चात् ''ॐ अग्निर्मूर्द्धादिवः से लेकर स्याद्धरासुत'' तक मन्त्र पढ़कर पाद्यादि से विधिवत् भौम की पूजा करें तथा इसी पूर्वोक्त मन्त्र से लाल पताका दान करें ।

बुधावाहन

हरित्पुष्पाक्षतान् गृहीत्वा आवाहयेत् । ॐ द्वादश्यां धनिष्ठान्वितायां मगधदेशजातमत्रिगोत्रं हरिद्वर्णं -

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वाणाकृतिं मण्लात्पूर्वोत्तरस्थममुत्तराभिमुखं सिंहवाहनं नारायणाधिदैवतं विष्णु प्रत्यधिदैवतसहितं बुधमावाहयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः बुध इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ।

प्रियङ्गकलिकाभासं रूपेणाप्रतिमं बुधम् । सौम्यं सौम्यगुणोपेतं बुधमावाहयाम्यहम् ।। इत्यावाह्य ।।

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते स ँ सृजेथामयंच । अस्मिन् सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ।।

पीतमाल्याम्बरधरः कर्णिकारसमद्युतिः खड्गचर्म गदापाणिः सिंहस्थो वरदो बुधः ।।

इति मन्त्रेण पाद्यादिभिर्बुधं सम्पूज्य अनेनैव मन्त्रेण हरित्पताकादानम् ।। इति बुधपूजनम् ।। ४ ।।

हरे रंग के फूल और अक्षत लेकर ''ॐ द्वादश्यां से लेकर बुधमावाहयाम्यहम्'' तक मन्त्र पढ़कर बुध देवता का आवाहन करें और ''ॐ उद्बुध्य'' इत्यादि मन्त्र पढ़कर पाद्यादि से पूजन कर इसी मन्त्र से हरे रंग की पताका दान करें ।

गुर्वावाहन

पीत पुष्पाक्षतान् गृहीत्वा आवाह्येत् ।

ॐ एकादश्यामुत्तरा फाल्गुनीयुतायां सिन्धु देशजातमाङ्गिरसगोत्रं गोरोचनाभं दीर्घ चतुष्कोणाकृति मण्डलादुत्तरस्थितमुत्तराभिमुखं सिंहवाहनं ब्रह्मादिदैवतमिन्द्र प्रत्यधिदैवतसहितं गुरुमावाहयामि ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गुरो इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ।

देवानां च मुनीनां च गुरुकाञ्चनसन्निभम् । वन्द्यभूतं त्रिलोकानां गुरुमावाहयाम्यहम् ।। इत्यावाह्य ।।

ॐ वृहस्पतेऽअतियदर्योऽअर्हाद्यु मद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवसऽक्रतु प्रजातत दस्मासुद्रविणंधेहि चित्रम् ।। इति मन्त्रेण पाद्यादिभिः संपूज्य अनेनैव मन्त्रेण पीत पताकादानम् ।। इति गुरु पूजनम् ।। ५ ।।

पीला फूल और अक्षत लेकर ''ॐ एकादश्यां से लेकर गुरुमावाहयाम्यहम्'' तक मन्त्र पढ़कर गुरुदेव का आवाहन करें और ''ॐ बृहस्पते'' इत्यादि मन्त्र को पढ़कर पाद्यादि से विधिवत् पूजन करें तथा इसी मन्त्र से पीत पताका दान करें ।

शुक्रावाहन

श्वेतपुष्पाक्षतान् गृहीत्वा आवाहयेत् ।

ॐ नवम्यां पुष्ययुतायां भोजकटे जातं भार्गवगोत्रं शुक्लवर्णं पञ्चकोणं मण्डलात्पूर्वदिक्स्थं पूर्वाभिमुखं श्वेताश्ववाहनमिन्द्राधि दैवतमिन्द्राणी प्रत्यधिदैवत सहितं शुक्रमावाहयामि ।। ॐ भूर्भुवः स्वः शुक्र इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ।

हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् ।

सर्वशास्त्रप्रवक्तारं शुक्रमावाहयाम्यहम् ।। इति आवाह्य ।

ॐ अन्नात्परिस्रतो रसं ब्रह्मणा व्यपिवत्क्षत्रम्पयः सोमम्प्रजापतिः । ऋतेनसत्यमिन्द्रियं विपानशुक्र मन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतम्मधुः ।।

देव दैत्यगुरु तद्वत् पतिश्वेतौ चतुर्भुजौ ।

दण्डिनौ वरदौ कार्यौ साक्षासूत्र कमण्डलू ।।

इति मन्त्रेण पाद्यादिभिः शुक्रं संपूज्य अनेनैव मन्त्रेण श्वेतपताकादानम् ।। इति शुक्रपूजनम् ।। ६ ।।

सफेद फूल और अक्षत लेकर ''ॐ नवम्यां से लेकर शुक्र मावाहयाम्यहम्'' तक मन्त्र पढ़कर शुक्र का आवाहन करें तत्पश्चात् ''ॐ अन्नात्परिस्रतौ' इत्यादि मन्त्र पढ़कर पाद्यादि से पूजन करें तथा इसी मन्त्र से सफेद पताका दान करें ।

शन्यावाहन

बिल्वपत्राक्षतान् गृहीत्वा आवाह्येत् ।

ॐ अष्टम्यां रेवतीयुतायां सौराष्ट्रजातं काश्यपगोत्रं लौहवर्णां धनुराकृतिं मण्डलात्पश्चिमस्थं पश्चिमाभिमुखं गृध्रवाहनम् संकरजातिं यमाधिदैवतं प्रजापतिप्रत्यधिदैवतसहितं शनिमावाहयामि । ॐ भूर्भुवः स्वः शने इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ।

नीलाम्बुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।

छायामार्तण्डसम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम् ।।

इति आवाह्य ।

ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपोभवन्तु पीतये । शंयोरभिस्त्रवन्तुनः ।।

इन्द्रनीलद्युतिः शूली वरदो गृध्रवाहनः ।

बाणाबाणासनधरः कर्त्तव्योऽर्कसुतः सदा ।।

इति मन्त्रेणपाद्यादिभिः शनिं संपूज्य अनेनैव मन्त्रेण कृष्णपताका दानम् । इति शनिपूजनम् ।। ७ ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बिल्वपत्र तथा अक्षत लेकर "ॐ अष्टम्यां से शनिमावाहयाम्यहम्" तक मन्त्र पढ़कर शनि का आवाहन करें और फिर "ॐ शन्नो देवी" इत्यादि मन्त्र पढ़कर पाद्यादि से पूजन करें तथा इसी मन्त्र से काले रंग की पताका का दान करें ।

राहावाहन

कृष्णपुष्पाक्षतान् गृहीत्वा आवाहयेत् ।

ॐ पौर्णमास्यां भरणीयुतायां बर्बरजातं पैठीनसिगोत्रं कृष्णवर्णं शूर्पाकृतिं मण्डलात्पश्चिमदक्षिण दिक्स्थं दक्षिणाभिमुखं शूद्राधिपतिं सिंहवाहनं कालाधिदैवतं सर्पप्रत्यधि दैवतसहितं राहुमावाहायाम्यहम् । ॐ भूर्भुवः स्वः राहो इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ।

अर्द्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् ।
सिंहिका गर्भसम्भूतं ाहुमावाहयाम्यहम् ।। इत्यावाह्य ।।

ॐ कयानश्चित्रऽआभुवदूती बुधः सखा । कया सचिष्ठ्यावृता ।।

कराल वदनः खड्गचर्मशूली वरप्रदः ।
नीलः सिंहासनस्थश्च राहुरत्र प्रशस्यते ।।

इति मन्त्रेण पाद्यादिभिः राहुँ संपूज्यानेनैव मन्त्रेण कृष्ण पताकादानम् ।। इति राहुपूजनम् ।। ८ ।।

काले फूल और अक्षत लेकर "ॐ पौर्णमास्यां से राहुमावाहयाम्यहम्" तक मन्त्र पढ़कर राहु का आवाहन करें तथा "ॐ कयानश्चित्र" इत्यादि मन्त्र से पाद्यादि से विधिवत् पूजन करें तथा इसी मन्त्र से काली पताका का दान करें ।

केत्वावाहन

कृष्णपुष्पाक्षतान् गृहीत्वा आवाहयेत् ।

ॐ अमावस्यायामाश्लेषान्वितायां जातं जैमिनिगोत्रं धूम्रवर्णं ध्वजाकृतिं कपोतवाहनमन्त्यजाधिपतिं मण्डलात्पश्चिमोत्तरस्थं दक्षिणाभिमुखं चित्रगुप्ताधिदैवतं ब्रह्मप्रत्यधिदैवतसहितं केतुमावाहयाम्यहम् । ॐ भूर्भुवः स्वः केतो इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ।

पलाश धूम्रसङ्काशं तारकाग्रहमस्तकम् रौद्र रौद्रात्मकं घोरं केतुमावायाम्हम् ।। इत्यावाह्य ।।

ॐ केतुं कृण्वन्न केतवे पेशो मर्याऽअपेशसे । समुषद्भिरजायथाः ।।

धूम्रा द्विबाहवः सर्वे गहिनो विकृताननाः ।
गृधासनगता नित्यं केतवः स्युर्वरप्रदाः ।।

इति मन्त्रेण पाद्यादिभिः केतुं सम्पूज्यानेनैव मन्त्रेण धूम्रपताकादानम् ।। इति केतुपूजनम् ।। ९ ।।

काले फूल और अक्षत लेकर "ॐ अमावश्यायां से लेकर केतुमावाहयाम्यहम्" तक मन्त्र पढ़कर केतु का आवाहन करें एवं "केतु" इत्यादि मन्त्र पढ़कर पाद्यादि से विधिवत् पूजन करें तथा इसी मन्त्र से धूम्र रंग की पताका दान करें ।

प्रार्थना

(अंजलि बांध प्रार्थना करें)

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपरान्तकारी ।
भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च ।।
गुरुश्च शुक्रः शनि राहु केतवः ।
सर्वग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु ।।

गायत्री आह्वान

गायत्री के चित्र, मूर्ति, प्रतिमा, अग्नि अथवा जल पात्र को गायत्री माता का प्रतीक मानकर उस पर आवाहन करना चाहिए । शान्त चित्त से गायत्री माता की छवि का ध्यान करते हुए निम्नलिखित आवाहन मन्त्र पढ़ना चाहिए ।

ॐ आयातु वरदा देवि अक्षरं ब्रह्मवादिनी ।
गायत्री छन्दसां माता ब्रह्मयोनि नमोऽस्तुते ।।

आवाहन मन्त्र के अनन्तर पाद्य, अर्घ्य, आचमन, धूप, दीप, अक्षत आदि से पूजन करके निम्नलिखित प्रार्थना अष्टक पढ़ना चाहिए ।

गायत्री अष्टक

सुकल्याणी वाणी सुरमुनिवरैः पूजितपदाम् ।
शिवामाद्यां वन्द्या त्रिभुवनमयी वेदजननीम् ।।
परां शक्तिं स्त्रष्टुंविविध विध रूपा गुणमयीम् ।
भजेऽम्बां गायत्रीं परममृतमानन्दजननीम् ।। १ ।।
विशुद्धां सत्वस्थामखिल दुःख दोषार्निहरणीम् ।
निराकारां सारां सुविमल तपो मूर्तिमतुलाम् ।।
जगज्ज्येष्ठां श्रेष्ठासुरमसुरपूज्यां श्रुतिनुताम् ।
भजेऽम्बां गायत्रीं परममृतमानन्दजननीम् ।। २ ।।
तपो निष्ठाभीष्टांम्बजनमन सन्ताप शमनीम् ।
दयामूर्तिं स्फूर्तिं यिति तति प्रसादैक सुलभाम् ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वरेण्यां पुण्यां तां निखिल भव बन्धापहरणीम् ।
भजेऽम्बां गायत्रीं परममृतमानन्दजननीम् ।। ३ ।।
सदाराध्यां साध्यां सुमति मति विस्तार करणीम् ।
बिशोकामालोकां हृदयगत मोहान्ध हरणीम् ।।
परां दिव्यां भव्यामगम भव सिन्ध्वेक तरणीम् ।
भजेऽम्बां गायत्रीं परममृतमानन्दजननीम् ।। ४ ।।
अजां द्वैतां त्रैतां त्रिविध गुण रूपां सुविमलाम् ।
तमो हन्त्रीं तन्त्रीं श्रुति मधुरनादां रसमयीम् ।।
महामान्यां धान्यो सततकरुणाशील विभवाम् ।
भजेऽम्बां गायत्रीं परममृतमानन्दजननीम् ।। ५ ।।
जगद्धात्रीं पात्रीं सकल भव संहार करणीम् ।
सुधीरां धीरां तां सुविमलतयो राशि सरणिम् ।।
अनेकामेकां वै त्रयजगदधिष्ठानपदवीम् ।
भजेऽम्बां गायत्रीं परममृतमानन्दजननीम् ।। ६ ।।
प्रबुद्धां बुद्धां तां स्वजनयति जाड्यापहरणिम् ।
हिरण्यां गुण्यां तां सुकविजन गीतां सुनिपुणाम् ।।
सुविद्यां निवरद्यामकथ गाथां भगवतीम् ।
भजेऽम्बां गायत्रीं परममृतमानन्दजननीम् ।। ७ ।।
अनन्तां शान्तां यां भजितं बुध वृन्दः श्रुतिमयीम् ।
सुगेयां ध्येयां यां स्मरति हृदि नित्यं सुरपतिः ।।
सदा भक्त्या शक्त्या प्रणति यतिभिः प्रीतिवशगः।
भजेऽम्बां गायत्रीं परममृतमानन्दजननीम् ।। ८ ।।
शुद्ध चित्तः पठेद्यस्तु गायत्रीं अष्टकं शुभम् ।
अहो भाग्यो भवेल्लोके तस्य माता प्रसीदति ।। ९।।

छः दिशाओं में देव-स्थापन तथा पूजन

जो देव-शक्तियाँ जिस दिशा में प्रतिष्ठित हैं, उनका पूजन उसी दिशा में किया जाता है । सर्वतो-भद्र में प्रतिष्ठित देवताओं के अतिरिक्त कुछ विशेष देवताओं की स्थापना इन विशेष दिशाओं में की जाती है ।

पूर्व में पञ्चोङ्कार, अग्नि कोण में- द्वादश गणेश, नैऋत में- वास्तु, वायव्य में- योगिनी तथा क्षेत्रपाल, उत्तर में- षोडस मातृका, स्थल मातृका तथा घृत मातृका, ईशान में- वरुण तथा नवग्रह की विशेष स्थापना है । पश्चिम में पूर्वाभिमुख होकर यजमान बैठता है और दक्षिण में उत्तराभिमुख होकर आचार्य बैठता है । इन दो दिशाओं को छोड़कर शेष छः दिशाओं में उपरोक्त विशेष देवों की स्थापना की गई है । इनमें से कुछ देवता सर्वतोभद्र में भी आ गये हैं । फिर भी उनकी विशेष स्थापना उनकी अपनी दिशा में भी की जाती है । इस प्रकार दो बार स्थापना में कोई भ्रम या दोष मानने की आवश्यकता नहीं है ।

जहाँ समुचित सुविधा है, वहाँ यज्ञ-मण्डप के-उपर्युक्त दिशा भागों में पूजा वेदी बनाकर अथवा चौकी स्थापित करके कलश, नारियल, अक्षत आदि मांगलिक वस्तुओं को देवस्थापना का प्रतीक मानकर वहाँ आवाहन तथा पूजनीय वस्तुओं से पूजन करते हैं । इस दिक् देव पूजन का क्रम निम्न प्रकार है -

पूर्व में पंचोङ्कार पूजन करना । (अक्षत लेकर)

ॐ ब्रह्मा देवी च गायत्री तथा गोवर्द्धनेश्वरः ।
पृथ्वी यज्ञ पतिश्चैतान् पंचोङ्कारान्नमाम्यहम् ।।

ॐ भुर्भुवः स्वः पूर्वे ब्रह्मन् दक्षिणे गायत्रि पश्चिमे गोवर्द्धन उत्तरे पृथिवि मध्ये च यज्ञपते इहागच्छत् इहातिष्ठत् । ब्रह्मादि पंचोङ्कारेभ्यो नमः ब्रह्मादि पंचोङ्कारान् आवाहयामि स्थापयामि नमः ।

अग्नि कोण में वक्रतुण्डादि द्वादश गणेश पूजन करना ।

ॐ नमो देव गणेशाय नमस्ते विघ्न नाशक ।
नमो मूषकमारूढ़ शुभ कर्त्रे नमोनमः ।
नमः कात्यायनीपुत्र नमः परशुपाणये ।।
रवेरुदयतेरूपं विद्याबुद्धि विचक्षण ।।
देहि मे रूप सौभाग्यं देहि पुत्र सम्पदः ।।
इच्छासिद्धि प्रदो देव यथोक्त मे सदा शुभ ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वक्रतुण्डादि द्वादश मूर्ति गणपा इहागच्छ इहतिष्ठत् । वक्रतुण्डादि द्वादशमूर्तिगणपतेभ्यो नमः । वक्रतुण्डादि द्वादश गणपान् आवाहयामि स्थापयामि नमः ।

नैर्ऋत्य कोण में वास्तु पूजन कराना ।

नागपृष्ठसमारूढं शूलहस्तं महाबलम् ।।
पाताल नायकं देवं वास्तुदेवं नमाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वास्तुपुरुष इहागच्छ इहतिष्ठ वास्तु पुरुषाय नमः । वास्तु पुरुषमावाहयामि स्थापयामि नमः ।

वायव्य कोण में दिव्यादि ६४ योगिनी का पूजन कराना ।

ॐ जयादि सर्वायोगिन्यः दुर्गारूपाश्चताः स्मृता ।
पूजया बलिदानेनसन्तुष्टास्संतु मे सदा ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ भूर्भुवः स्वः दिव्यादि ६४ योगिन्यः इहागच्छत इहतिष्ठत ।। दिव्यादि ६४ योगिनीभ्यो नमः ।। दिव्यादि ६४ योगिनीः आवाहयामि स्थापयामि नमः ।।

वायव्य कोण में योगिनी के समीप अजरादि ५० क्षेत्रपाल का पूजन कराना ।

ॐ क्षेत्रपालान्नमस्यामि सर्वारिष्टानि पूजनान् ।
अस्य यागस्यसिध्यर्थं पूजयाराधितान् मया ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अजरादि पंचाशत्क्षेत्रपाल-इहागच्छत इहतिष्ठत अजरादि क्षेत्रपेभ्यो नमः । अजरादि क्षेत्रपान् आवाहयामि स्थापयामि नमः ।।

उत्तर दिशा में षोडषमातृका का पूजन कराना ।

ॐ गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजयाजया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरोलोक मातराः ।।
हृष्टिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवताः ।
गणेशेनाधिकाह्येता वृद्धौपूज्याश्चषोडश ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गौर्यादिषोडशमातर इहागच्छत इहतिष्ठत । गौर्यादि १६ मातृकाभ्योनमः । गौर्यादिमातः आवाहयामि स्थापयामि नमः ।।

स्थल मातृका पूजन

ॐ ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा ।
वाराही च तथेन्द्राणी चामुण्डाः सप्तमातरः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्राह्मी माहेश्वर्यादि सप्तस्थल मातरः । इहागच्छत । इहतिष्ठत । ब्राह्मी माहेश्वर्यादि सप्तस्थलमातृकाभ्यो नमः । ब्राह्मी माहेश्वर्यादि मातः आवाहयामि स्थापयामि नमः ।।

घृत मातृका पूजन

ॐ कुण्ड्यलग्नवसोर्द्धारा पञ्चधारा घृतेन तु ।
कारयेत्सप्तधारा वा नातिनीचा नचोच्छ्रिताः ।।१।।
कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा सिद्धिः प्रज्ञा सरस्वती ।
माङ्गल्येषु प्रपूज्याश्च सप्तैता घृतमातरः ।। २ ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः कीर्तिर्लक्ष्म्यादि सप्तघृतमातरः इहागच्छत् इहतिष्ठत् । कीर्तिर्लक्ष्म्यादि सप्तघृतमातृकाभ्यो नमः । कीर्तिर्लक्ष्म्यादि मातः आवाहयामि स्थापयामि नमः ।।

ईशान कोण में वरुण पूजन

ॐ नागपाशधरं देवं वरुणं नक्रवाहनम् ।
शुद्धस्फटिकसंकाशं प्राणरूपं नमाम्यहम् ।।
पाशहस्तं च वरुणमर्णसां प्रतिपीश्वरम् ।
आवाहयामियज्ञेस्मिन्पूजेयं प्रति गृह्यताम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ इहतिष्ठ । वरुणाय नमः । वरुणमावाहयामि स्थापयामि नमः ।।

ईशान कोण में सूर्यादि नवग्रह पूजन कराना

ॐ शिवोगौरीतथास्कन्दो विष्णु ब्रह्मापुरन्दरः ।
यमकालश्चित्रगुप्तश्चाधिदेवा इमे स्मृताः ।।
ॐ अधिदेवताभ्यो नमः ।।
ॐ अग्निरापोमहीविष्णुरिन्द्रेन्द्राणिका तथा ।
प्रजापतिर्भुजंगश्च ब्रह्माप्रत्यधिदेवताः ।।
ॐ प्रत्यधिदेवताभ्यो नमः ।।
ॐ विनायकस्तथादुर्गा वायुराकाशमेव च ।
अश्विनो चैव पंचैतांल्लोकपालान्नमाम्यहम् ।।
ॐ गणादिपंचलोकपालेभ्यो नमः ।।
ॐ इन्द्रो वन्हिः पितृपतिर्नैर्ऋतो वरुणो मरुत् ।
कुवेर इशो ब्रह्मा च अनन्तश्च दिगीश्वराः ।।
ॐ इन्द्रादि दशदिग्पालेभ्यो नमः ।।

देवों का आवाहन

देव शक्तियाँ, आदि शक्ति की, परब्रह्म की विभिन्न धाराएँ हैं । शरीर एक है, उसमें रक्त परिभ्रमण संस्थान, पाचन संस्थान, वायु संचार संस्थान, विचार संस्थान आदि अनेक संस्थान हैं । वे सब स्वतन्त्र हैं और आपस में जुड़े हुए भी । इसी प्रकार सृष्टि संतुलन व्यवस्था के लिए इस विराट् सत्ता की विभिन्न चेतना धारायें विभिन्न उत्तरदायित्व संभालती हैं । उन्हें ही देव शक्तियाँ कहा जाता है । ईश्वरेच्छा दिव्य योजना के अनुरूप हर कार्य में उनका सहयोग अपेक्षित भी है और वह प्राप्त भी होता है । इसलिए सत्कार्यों में देव-शक्तियों के आवाहन-पूजन का विधि-विधान सम्मिलित रहता है । साधकों के पुरुषार्थ के साथ वह दिव्य सहयोग भी जुड़ सके, इसके लिए भाव श्रद्धायुक्त देव पूजन किया जाता है ।

उपस्थित सभी जनों से निवेदन किया जाय कि वे पूजा में सम्मिलित रहें । पूजन कृत्य एक प्रतिनिधि भले करे, परन्तु देवों की प्रसनन्ता सबकी भावना के सहयोग के बिना नहीं पायी जा सकती ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भावोहि विद्यते देवाः तस्मात् भावेहि कारण के अनुसार भाव संयोग से ही पूजन में शक्ति आती है । सबका ध्यान आकर्षित करते हुए उन्हें भाव सूत्र में बाँध कर पूजन क्रम चलाया जाय ।

हर देव शक्ति का भाव चित्रण करके मन्त्र बोलें । मन्त्र के साथ प्रतिनिधि पूजा करें, सभी भावना पूर्वक आवाहन, ध्यान एवं नमस्कार करते रहें ।

यहाँ प्रत्येक मन्त्र के पूर्व उसमें सम्बद्ध देव शक्ति का स्वरूप समझाया गया और अन्त में आवाहन-स्थापना का निवेदन किया गया है । बड़े यज्ञों में इस क्रम को चलाने से वातारण अधिक प्रखर और भाव-भरा बनता है । यदि संक्षिप्त आयोजन है, तो उसमें संक्षिप्त हवन पद्धति के ढंग से केवल मन्त्र बोलते हुए आगे बढ़ा जा सकता है । समय और परिस्थितियाँ देखते हुए विस्तार या संक्षिप्तीकरण का निर्णय विवेक पूर्वक लेना चाहिए।

गुरु- परमात्मा की दिव्य चेतना का वह अंश जो साधकों का मार्ग-दर्शन और सहयोग करने के लिए व्यक्त होता है ।

ॐ गुरूर्ब्रह्मा गुरूर्विष्णुः गुरुरेव महेश्वरः ।
गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः ।। १ ।।
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः ।। २ ।।

ॐ श्री गुरुवे नमः आवाहयामि, स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।

गायत्री- वेद माता, देव माता, विश्व माता, सद्ज्ञान, सद्भाव की अधिष्ठात्री सृष्टि की आदि कारण मातेश्वरी ।

ॐ आयातु वरदे देवि अक्षरे ब्रह्म वादिनि ।
गायत्रिच्छन्दसां माता ब्रह्मयोनिर्नमोऽस्तुते ।। ३ ।।

ॐ श्री गायत्र्यै नमः । आवाहयामि, पूजयामि, ध्यायामि । ततो नमस्कारं करोमि ।

ॐ स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ताम् पावमानी द्विजानाम् आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम् । मह्यम दत्वा ब्रजत ब्रह्मलोकम् ।

- अथर्व १९/७१/१

गणेश- विवेक के प्रतीक, विघ्नों को दूर करने में कुशल प्रथम पूज्य-

अभीप्सितार्थसिद्धयर्थं पूजितो यः सुराऽसुरैः ।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ।। ४ ।।

गौरी- श्रद्धा निर्विकारिता, पवित्रता की प्रतीक मातृशक्ति-

सर्वमङ्गलमांगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके !
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि ! नमोस्तुते ।। ५ ।।

ॐ श्री गौर्यै नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

हरि- हृदयस्थ सत् प्रेरणा के स्रोत खोलने वाले करुणा निधान-

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ।। ६ ।।
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममंगलम् ।
येषां हृदिस्थो भगवान्मंगलायतनं हरिः ।। ७ ।।

ॐ श्री हरये नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

सप्तदेव- सप्तलोकों एवं सप्तद्वीपा वसुन्धरा का सन्तुलन रखने वाली सात महाशक्तियों का युग्म-

विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्माविष्णुमहेश्वरान् ।
सरस्वतीं प्रणम्यादौ शान्तिकार्यार्थसिद्धये ।। ८ ।।

ॐ सप्तदेवेभ्यो नमः । आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि ।

पुण्डरीकाक्ष- कमल जैसी निर्विकार, निर्दोष भावना एवं अन्तर्दृष्टि देने वाले भक्तवत्सल-

मंगलं भगवान् विष्णुः मंगलं गरुड़ध्वजः ।
मंगलं पुण्डरीकाक्षः मंगलायतनं हरिः ।। ९ ।।

ॐ पुण्डरीकाक्षाय नमः । आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि ।

ब्रह्मा- सृष्टिकर्ता, निमार्ण की क्षमता आदि के स्रोत ।

त्वं वै चतुर्मुखो ब्रह्मा सत्यलोक पितामहः ।
आगच्छ मण्डले चास्मिन् मम सर्वार्थ सिद्धये ।। १० ।।

ॐ ब्रह्मणे नमः । आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि ।

विष्णु- पालन-पोषण करने वाले साधनों-विभूतियों को सार्थक बनाने वाले प्रभु-

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम् ।
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगम् ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लक्ष्मीकातं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ।। १० ।।

ॐ श्री विष्णवे नमः आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

शिव- परिवर्तन, अनुशासन के सूत्रधार, कल्याणकारी प्रवृत्तियों के दाता-

वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणम्
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनाम्पतिम् ।
वन्दे सूर्यशशाङ्कवह्निनयनं वन्दे मुकुन्दप्रियम् ।
वन्दे भक्त जनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवशंकरम् ।। १२ ।।

ॐ श्री शंकराय नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

त्र्यम्बक- भव-बन्धनों और मृत्यु के ऊपर उठाकर मुक्ति का अधिकारी बनाने वाली सत्ता-

ॐ त्र्यबकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।। १३ ।।

ॐ श्री त्र्यम्बकाय नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

दुर्गा- सङ्गठन, सहकार, सत्साहस एवं सामर्थ्य की अधिष्ठात्री मातृशक्ति-

दुर्गे स्मृता हरसि भीतमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृतः मतिमतीव शुभं ददासि ।
दारिद्र्य दुःखभयहारिषि का त्वदन्या,
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ।। १४ ।।

ॐ श्री दुर्गायै नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

सरस्वती- अज्ञान एवं नीरसता हटाने वाली ज्ञान और कला की अधिष्ठात्री माँ-

शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीं ।
वीणापुस्तक धारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ।
हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थिताम् ।
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ।। १५ ।।

ॐ श्री सरस्वत्यै नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

लक्ष्मी- साधनों व धन-वैभव की अधिष्ठात्री माँ-

आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं सुवर्णा हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।। १६ ।।

ॐ श्री लक्ष्म्यै नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

काली- अकल्याणकारी वृत्तियों का संहार करने में समर्थ प्रचण्ड चेतना-

कालिकां तु कलातीतां कल्याणहृदयां शिवाम् ।
कल्याणजननीं नित्यं कल्याणीं पूजयाम्यहम् ।। १७ ।।

ॐ श्री कालिकायै नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

गंगा- अपवित्रता एवं पापवृत्तियों का हरण-शमन करने वाली दिव्यधारा-

विष्णुपादाब्जसम्भूते गङ्गे त्रिपथगामिनी ।
धर्मद्रवेति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि ।। १८ ।।

ॐ श्री गङ्गायै नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

तीर्थ- मानवी अन्तःकरण में सत्प्रवृत्तियों, सदिच्छाओं का बीजारोपण एवं विकास करने में समर्थ दिव्य प्रवाह-

पुष्करादीनि तीर्थानि गंगादिः सरितस्थता ।
आगच्छन्तु पवित्राणि पूजाकाले सदामम ।। १९ ।।

ॐ श्री तीर्थेभ्यो नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

नवग्रह- विश्व की जड़-चेतन प्रकृति को तालमेल, सूत्रबद्धता प्रदान करने वाली सामर्थ्यों के प्रतीक-

ब्रह्मामुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशीभूमिसुतो बुधश्च
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वेग्रहाः शान्ति करा भवन्तु ।। २० ।।

ॐ श्री नवग्रहेभ्यो नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

षोडशमातृका- अन्तरंग एवं अन्तरिक्ष में विद्यमान १६ कल्याणकारी शक्तियों का युग्म-

गौरी पद्मा शची, मेधा, सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ।। २१ ।।
हृष्टि पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता ।
गणेशेनाधिका होता वृद्धौ पूज्याश्च षोडशः ।। २२ ।।

ॐ श्री षोडशमातृकाभ्यो नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

सप्तमातृका- सात महाशक्तियाँ, जिनका नियोजन मंगल कार्यों में ही करने से वे माता की तरह संरक्षण देती हैं -

कीर्तिलक्ष्मीधृतिर्मेधा सिद्धः प्रज्ञा सरस्वती ।
मांगल्येषु प्रपूज्याश्च सप्तैताः दिव्यमातरः ।। २३ ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ श्री सप्तमातृकाभ्यो नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

वास्तुदेव- वस्तुओं में अदृश्य रूप से सन्निहित, सुसंस्कार समर्थक चेतना शक्ति-

नागपृष्ठसमारूढं शूलहस्तं महाबलम् ।
पातालनायकं देवं वास्तुदेवं नमाम्यहम् ।। २ ।।

ॐ श्री वास्तुदेवाय नमः । आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि ।

क्षेत्रपाल- विभिन्न क्षेत्रों में देवत्व का संचार करने वाली सूक्ष्म व्यवस्था के अधिष्ठाता-

क्षेत्रपालान्नमस्यामि सर्वारिष्टनिवारकान् ।
अस्य यागस्य सिद्धर्थं पूजयाराधितान् मया ।। २४ ।।

ॐ श्री क्षेत्रपालेभ्यो नमः । आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि ।

सर्वदेव नमस्कार

देव पूजन के बाद सर्वदेव नमस्कार करना चाहिए । नमस्कार का उद्देश्य देव शक्तियों का सम्मान, उनके प्रति अपनी श्रद्धा का प्रकटीकरण तो है ही, अपने मन का, रुचि का झुकाव देवत्व की ओर करना भी है । हमारे मन में देवत्व से विपरीत अनर्थकारी आसुरी प्रवृत्तियों के प्रति झुकाव भी पैदा होता रहता है । उसे निरस्त करके पुनः कल्याणप्रद देवत्व के प्रति झुकाव- अभिरुचि पैदा करना भी एक पुरुषार्थ है । देव नमस्कार के समय ऐसे भाव रखे जायें ।

नमस्कार में छह देव दम्पत्तियों का तथा विशेष सामाजिक कर्त्तव्यों का वहन करने वाले देव तत्वों का सम्मान, अभिनन्दन, अभिवन्दन, करते हुए मानवता के प्रति नमन-वन्दन की प्रक्रिया को पूरा किया गया है ।

(१) बुद्धि और विवेक को गणेश और उनकी पत्नी को सिद्धि-बुद्धि ।

(२) समृद्धि और वैभव को लक्ष्मीनारायण ।

(३) व्यवस्था और नियन्त्रण को उमा-महेश ।

(४) वाणी और भावना को वाणी हिरण्यगर्भ ।

(५) कला और उल्लास को शची-पुरन्दर ।

(६) जन्म और पालन कर्त्री देव प्रतिमाओं को माता-पिता कहा गया है । इन छः युग्मों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने, उनकी उपयोगिता समझने-आवश्यकता अनुभव करने के लिए नमन वन्दन किया जाय ।

(७) कुल देवता- अपने वंश में उत्पन्न हुए महामानव ।

(८) जीवन लक्ष्य को सरल बनाने वाले माध्यम- इष्ट देवता ।

(९) शासन-संचालक- ग्राम देवता ।

(१०) स्थान देवता- पंच, समाज सेवक ।

(११) वास्तु देवता- शिल्पी, कलाकार, वैज्ञानिक ।

(१२) किसी भी लोकमंगल में निरत परमार्थ परायण-सर्वदेव ।

(१३) आदर्श चरित्र, सद्ज्ञान, साधनारत ब्राह्मण ।

(१४) प्रेरणा और प्रकाश देने वाले स्थान या व्यक्ति-तीर्थ ।

(१५) मानवता की दिव्य चेतना-गायत्री । यह सब देव तत्व हुए ।

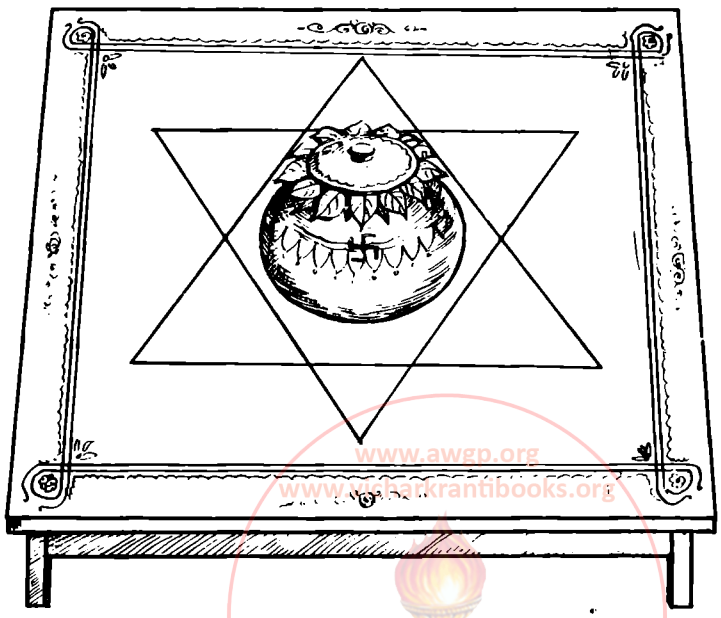
ॐ सिद्धि बुद्धिसहिताय श्रीमन्महागणाधिपतये नमः ।
ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यान्नमः ।
ॐ उमामहेश्वराभ्यान्नमः ।
ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यान्नमः ।
ॐ शचीपुरन्दराभ्यान्नमः ।
ॐ मातृ पितृ चरणकमलेभ्यो नमः ।
ॐ कुलदेवताभ्यो नमः ।
ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः ।
ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः ।
ॐ स्थानदेवताभ्यो नमः ।
ॐ वास्तु देवताभ्यो नमः ।
ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ।
ॐ सर्वेभ्यस्थीर्थेभ्यो नमः ।
ॐ एतत्कर्म प्रधान श्रीगायत्री देव्यै नमः ।
ॐ पुण्यं पुण्याहं दीर्घ मायुरस्तु ।

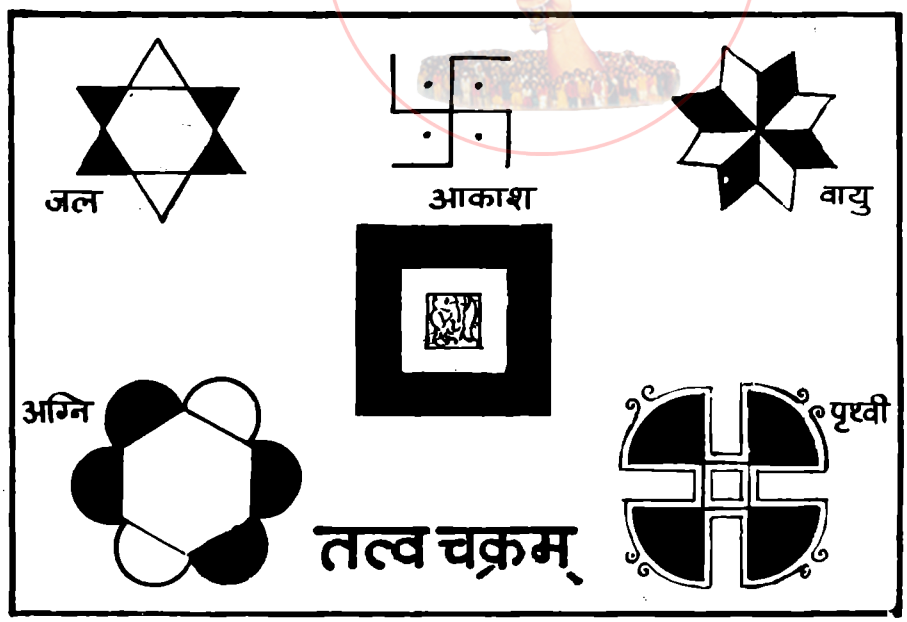
पंचवेदी-स्थापना

विशेष देवों में पाँच प्रधान माने गये हैं । इन्हीं से यह जगत बना है । शरीर से लेकर समस्त दृश्य जड़ जगत केवल परमाणुओं का बना पदार्थ ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तत्व वेदी





नहीं है, वरन् उनके अन्तराल में दैवी चेतना काम करती है । जड़ में चेतन की भावना यही-अध्यात्मवाद है । चेतन को जड़ मानना यही भौतिकवाद है । सृष्टि के आधारभूत पंचतत्वों को अध्यात्म ने चेतन देव सत्ता से ओत-प्रोत माना है, उनका स्थूल रूप से तो कलेवर मात्र है । इस तत्व आत्मा को ही यज्ञानुष्ठानों में देव रूप में प्रतिष्ठापित और पूजित किया जाता है । पूजा का अर्थ है कृतज्ञ भावना का जागरण । यह जागृति देवताओं के माध्यम से अपने अन्त:करण को ही उदात्त और महान बनाती है ।

पंचतत्वों के रूप में पाँच देवता मुख्य हैं । सृष्टि का एवं प्राणियों का निर्माण, अभिवर्धन एवं अन्त इन्हीं तत्वों में सम्पन्न होता है । इसलिए यज्ञ-कार्य में इन पंचतत्वों- आकाश, भूमि, अग्नि, वायु, वरुण देवताओं की पूजा, उनके सम्मानार्थ एवं स्मरण आदि के लिये विभिन्न दिशाओं में पाँच वेदियाँ स्थापित की जाती हैं ।

पंच वेदियों में प्रधान वेदी सर्वतोभद्रमण्डल की पूर्व दिशा में स्थापित की जाती है । पूर्व और दक्षिण के बीच अर्थात् आग्नेय कोण में अग्नि देवता की वेदी, दक्षिण और पश्चिम के बीच अर्थात् नैऋत्य कोण में पृथ्वी देवता की वेदी, पश्चिम और उत्तर के बीच अर्थात् वायव्य कोण में वायु देवता की वेदी, उत्तर तथा पूर्व अर्थात् ईशान कोण में वरुण देवता की वेदी स्थापित की जानी चाहिए । अग्नि देवता की वेदी पर लाल रंग, आकाश के लिए सफेद, वायु के लिए पीला, धरती के लिए हरा एवं वरुण के लिए काला रंग उपयोग में लाया जाता है । प्रत्येक वेदी पर तत्वों के रंग के अनुसार रंगे हुए चावलों से षटकोण बनाकर उस पर कलश स्थापित करने चाहिए ।

यह बड़े यज्ञों का क्रम है । छोटे सामान्य यज्ञों में इस स्थापना की आवश्यकता नहीं पड़ती । जहाँ स्थापना की जाय, वहाँ चार कोनों पर चार चौकियाँ रख कर उन पर पीले कपड़े बिछाये जायँ । ऊपर रंगे हुए चावलों के मंगल चिह्न-बद्ध कोष्ठ बना दिये जायें । मध्य में सुसज्जित कलश रखे जायें, ये चार तत्वों के चार कलश हुए । मध्य पीठ की प्रधान देवता चौकी को आकाश कलश माना जाय ।

आकाश का कोई रंग नहीं । अथवा सब रंगों का सम्मिश्रण है । इस लिए इसका प्रतीक सर्वतोभद्र चक्र सब रंगों से मिला कर बनाया जाता है । और ३३ कोटि देवताओं का आवाहन उसी में कर लिया जाता है ।

हमारा शरीर अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश, आनन्दमय कोश इन्हीं के द्वारा विनिर्मित हैं । स्वेदज, अंडज, उद्भिज, जरायुज चार प्रकार के प्राणी और पाँचवें जड़ पदार्थ, यह पंचधा प्रकृति भी इन्हीं पाँच देवताओं की प्रतिक्रिया है । जड़-चेतन इस जगत के पंचधा विश्लेषण को पंच देवों के रूप में माना गया है ।

पाँच चौकियों पर स्थापित पाँच कलशों को एक-एक देवता का प्रतीक मानकर उनसे प्रत्येक का पूजन जल, पुष्प, अक्षत, चन्दन, नैवेद्य इन पाँच वस्तुओं से किया जाय ।

प्रधान कलश की मुख्य वेदी आकाश तत्व की है । इस पर तेतीस प्रधान देवता स्थापित होते हैं तथा "अन्तरिक्ष सूक्त" का पाठ होता है । अग्निकोण में अग्नि देवता की स्थापना के लिए अग्नि सूक्त, नैऋत में जल देवता के लिए वरुण सूक्त, वायव्य में वायु सूक्त तथा ईशान में पृथ्वी का भू सूक्त पढ़ा जाता है । कलशों के नीचे तत्वों के यन्त्र बनाये जाते हैं । इन तत्व यन्त्रों के चित्र आगे दिये गये हैं ।

अथ अन्तरिक्ष सूक्तम् (प्रधान वेदी)

ॐ अन्तरिक्ष आसां स्थाम श्रान्तसदामिव । आस्थानमस्य भूतस्य विदुष्टद् वेधसो न वा ।। १ ।। ॐ अन्तरिक्षेण पतति विश्वा भूतावचाकशत् । शुनो दिव्यस्य यन्महस्तेना ते हविषा विधेम ।। २ ।। ॐ अन्तरिक्षेण सह वाजिनीवन् कर्की वत्सामिह रक्ष वाजिन् । अयं घासो अयं व्रज इह वत्सां नि बध्नीमः । यथानाम व ईश्महे स्वाहा ।। ३ ।। ॐ अन्तरिक्षेण सह वाजिनीवन् कर्की वत्सामिह रक्ष वाजिन् । इमे ते स्तोका बहुला एह्यर्वाङ्डियं ते कर्कीह ते मनोऽस्तु ।। ४ ।। ॐ अन्तरिक्षे वायवे समनमन्त्स आर्ग्नोत् । यथान्तरिक्षे वायवे समनमन्नेवा मह्यं संनमः सं नमन्तु ।। ५ ।। ॐ अन्तरिक्षं जालमासीज्जालदण्डा दिशो महीः । तेनाभिधाय दस्यूनां

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्रः सेना मपावपत ।। ६ ।। ॐ अन्तरिक्षं दिवं भूमिमादित्यान् मरुतो दिशः । लोकान्त्स सर्वानाप्नोति यो ददाति शतौदनाम् ।। ७ ।। ॐ अन्तरिक्षं धेनुस्तस्या वायुर्वत्सः । सा मे वायुना वत्सेनेषमूर्जं कामं दुहाम् । आयुः प्रथमं प्रजां पोष रयिं स्वाहा ।। ८ ।।

अथ अग्नि सूक्तम् (अग्नि कोण)

ॐ अग्नि मीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ।। १ ।। ॐ अग्निरात्रिं भरद्वाजं गविष्ठिरं प्रावन्नः कण्यं त्रसदस्युमाहवे । अग्निं वसिष्ठो हवते पुरोहितो मृलीकाय पुरोहितः ।। २ ।। ॐ अग्निरिव मन्यो त्विषतः सहस्व सेनानीर्नः सहुरेहूत एधि । हत्वाय शत्रून्वि भजस्व वेद ओजो मिमानो वि मृधो नुदस्व ।। ३ ।। ॐ अग्निरीशे बृहतो अध्वरस्याग्निर्विश्वस्य हविषः कृतस्य । क्रतुं ह्यस्य वसवो जुषन्ताथा देवा दधिरे हव्यवाहम् ।। ४ ।। ॐ अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमोमहे महागयम् ।। ५ ।। ॐ अग्निर्जाता देवानामग्निर्वेद मर्तानामपीच्यम् । अग्निः स द्रविणोदा अग्निर्द्वारा व्यूर्णुते स्वाहुतो नवीयसा नभन्तामन्यके समे ।। ६ ।। ॐ अग्निदाद् द्रविणं वीरपेशा अग्निर्ऋषियःसहस्त्रा सनोति । अग्निर्दिवि हव्यमा ततानाग्नेर्धामानि विभृता पुरुत्रा ।। ७ ।। ॐ अग्निस्तिग्मेन शोचिषा यासद्विश्वंन्य त्रिणम् । अग्निर्नो वनते रयिम् ।। ८ ।।

अथ वरुण सूक्तम् (नैऋत कोण)

ॐ हिरण्यवर्णाः शुचयः पवित्राः पावको यासु जातः कश्यपो यास्विन्द्रः ।। अग्नि या गर्भं दधिरे विरूपा स्तान आपः शश्वं स्योना भवन्तु ।। १ ।। ॐ यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम् ।। मधुश्च्युतः शुचयो याः पावका स्तान आपः शश्वंस्योना भवन्तु ।। २ ।। ॐ यासां देवा हि विकृण्वन्ति भक्ष्यं या अन्तरिक्षे बहुधा भवन्ति ।। या पृथिवीं पयसोन्दन्ति शुक्रा स्तान आपः शश्वंस्योना भवन्तु ।। ३ ।। ॐ आपोहिष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधातनः । महेरणाय चक्षसे, योवः शिवतमोरसः ।। ४ ।। तस्य भाजयते ह नः, उशतीरिव मातरः ।। तस्मा अरङ्गमामवः, यस्य क्षयाय जिन्वथ आपोजन यथा च नः ।। ५ ।। ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु दुर्मित्रिया स्तस्मैसन्तु । योऽस्मान्द्वेष्टि यञ्च वयंद्विष्मः ।। ६ ।। ॐ हिरण्यशृंङ्ग वरुणं प्रपद्ये तीर्थं मे देहि याचित ।। यन्मया भुक्तमसाधूनां पापेभ्यश्च प्रतिग्रहः ।। ७ ।। ॐ यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम् ।। तन्नइन्द्रोवरुणोबृहस्पतिः सविता च पुनन्तु पुनः पुनः ।। ८ ।।

अथ वायु सूक्तम् (वायव्य कोण में)

ॐ वायो येते सहस्त्रिणो रथासस्तेभिरा गहि नियुत्वान् सोम पीतये ।। १ ।। ॐ वायुरग्रगा यज्ञप्रीः साकं गन्मनसा यज्ञम् शिवो नियुद्भिः शिवाभिः ।। २ ।। ॐ वायो शुक्रोऽअयामि ते मध्वोऽअग्र दिविष्टिषु । आ याहि सोम पीतये स्पार्हो देव नियुत्वता ।। ३ ।। ॐ वायोः पूतः पवित्रेण प्रत्यङ्सोमोऽ अतिद्रुतः । इन्द्रस्य युज्य सखा ।। ४ ।। ॐ वायोः पूतः पवित्रेणप्राङ् सोमोऽ अतिद्रुतः । इन्द्रस्य युज्यः सखा ।। ५ ।। ॐ वायुः पुनातु सविता पुनात्वग्नेर्भ्राजिसा सूर्यस्य वर्चसा । विमुच्यन्तामुस्त्रिया ।। ६ ।।
ॐ वायवा याहि दर्शतेमे सोमा अरंकृता । तेषां पाहि श्रुधी हवम् ।। ७ ।। ॐ वायु उक्थेभिर्जरन्ते त्वामच्छा जरितारः । सुत सोमाअहर्विदः ।। ८ ।।

अथ भू सूक्तम् (ईशान में)

ॐ भूमिर्भूम्ना द्यौर्वरिणान्तरिक्षं महित्वा । उपस्थे ते देव्यदितेऽग्निमन्नादमन्नाद्याया दधे । १ ।
ॐ आयंगौः पृश्निरक्रमी दसदनमातरं पुरः । पितरञ्च प्रियन्त्स्वः । २ । ॐ त्रिंशद्धामविराजति वाक्पतङ्गाय शिश्रये प्रत्यस्य वहद्युभिः । ३ । ॐ अस्य प्राणादपानन्त्यन्तश्चरति रोचना । व्यख्यन्महिषः सुम्वः । ४ ।
ॐ यत्वाक्रुद्धः परोवष मन्युना यदवत्या । सुकल्पमग्नेतत्तव पुनस्त्वो द्दीपयामसि । ५ ।
ॐ यत्ते मन्युः परोप्तस्य पृथिवी मनुदध्वसे । आदित्या विश्वे तद्देवा वसवश्चसमाभरन् । ६ ।
ॐ मेदिनी देवी वसुन्धरा स्याद्वसुधा देवी वासवी । ब्रह्मवर्चसः पितृणां श्रोत्रं चक्षुर्मनः । ७ ।
ॐ देवी हिरण्यगर्भिणी, देवीप्रसूवरी । रसनेसत्यायनेसीद । ८ ।

संक्षेप में पाँचों के देव मन्त्र नीचे दिये गये हैं । समय की कमी न हो तो पाँच पूजा वस्तुएँ अलग-अलग समर्पित करते समय पुरुष सूक्त में से वे पाँच मन्त्र भी बोले जा सकते हैं ।

।। पृथ्वी ।।

ॐ मही द्यौ पृथिवी च न इमं यज्ञं मिमिक्षताम् । पिपृतां नो भरीमभिः ।।

- यजु० ८/३२

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

।। वरुण ।।

ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुश ꣳस मा न आयुः प्र मोषीः ।।

– यजु० १८/४९

।। अग्नि ।।

ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अवयासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् ।।

– यजु० २१/३

।। वायु ।।

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वर ꣳ सहस्त्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् । वायोअस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।। – यजु० २७/२८

।। आकाश ।।

ॐ या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती । तया यज्ञं मिमिक्षतम् । उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वैष ते योनिर्माध्वीभ्यां त्वा ।।

– यजु० ७/११

स्विष्टकृत भोग

आवाहित किए गये देवी-देवताओं के प्रीत्यर्थ एवं तत्सम्मानार्थ नैवेद्य भेंट करने के लिए स्विष्टकृत भोग का विधान है ।

स्विष्टकृत नैवेद्य के लिए पाँच पत्तलों में मेवा, मिठाई, हलुवा, खीर, फल एवं एक-एक में पाँच-पाँच घृत दीप जलाकर निम्न मन्त्रों के साथ एक-एक पत्तल विभिन्न वेदियों पर रक्खें ।

निम्न मन्त्र से जल देवता की वेदी पर भोग चढ़ावें ।

ॐ तत्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुषꣳस मा नऽआयुः प्र मोषीः ।

इस मन्त्र से पृथ्वी देवता की वेदी पर भोग चढ़ावें ।

ॐ मही द्यौः ꣳ पृथिवी च नऽ इमं यज्ञं मिमिक्षताम् । पिपृतां नो भरीमभिः ।। ॐ पृथिव्यै नमः ।

इस मन्त्र से अग्नि देवता की वेदी पर भोग चढ़ावें ।

ॐ त्वां नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽ अव यासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् ।। ॐ अग्नेय नमः ।

इस मन्त्र से वायु देवता की वेदी पर भोग चढ़ावें ।

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्त्रिणी भिरुपयाहि यज्ञम् । वायो ऽअस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।। ॐ वायवे नमः ।

इस मन्त्र से आकाश देवता की वेदी पर भोग चढ़ावें ।

ॐ या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती । तया यज्ञं मिमिक्षतम् । उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वैष ते योनिर्माध्वीभ्यां त्वा । । ॐ आकाशाय नमः ।

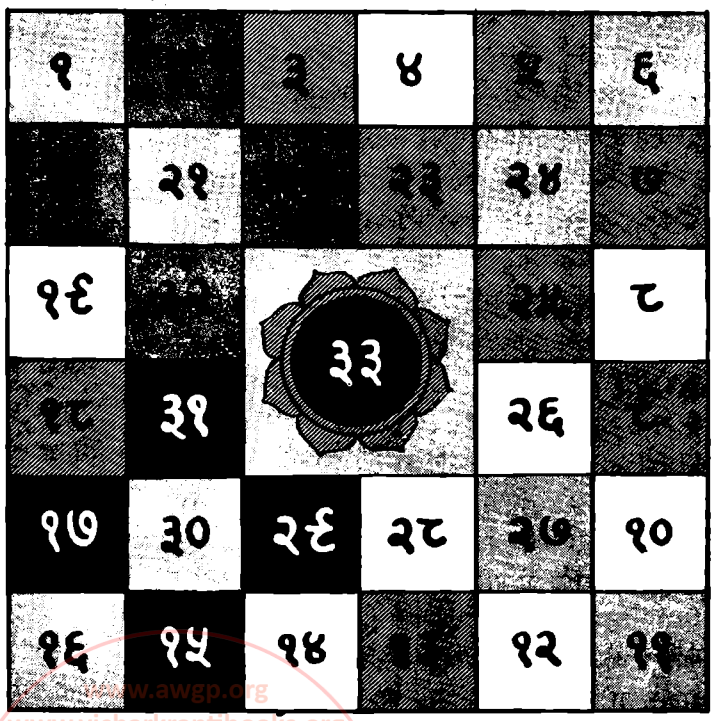
पाँचों वेदियों पर नैवेद्य (भोग) की पत्तल रक्खे जाने के बाद लोगों को बुराइयाँ छोड़ने एवं अच्छाइयों के व्रत ग्रहण करने का संकल्प कराना चाहिए । इसके लिए पहले से ही जब भोग की पत्तलों का कार्य चल रहा हो तो लोगों में विशेष प्रकार के छपे पत्र बाँट देने चाहिए, जिसमें बुराइयों तथा अच्छाइयों के विवरण हों और प्रत्येक व्यक्ति उनमें से अपने लिए कुछ विचार सके । प्रत्येक व्यक्ति विचारपूर्वक कम से कम एक बुराई छोड़ने और एक अच्छाई ग्रहण करने का व्रत लें और उस पत्र में लिख दें । तत्पश्चात् एक टोकरी या थाली में उन्हें इकट्ठा कर लिया जाय ।

सर्व देवस्थापन के लिए सर्वतोभद्र चक्र

सर्वतोभद्र चक्र लाल, हरे, काले और सफेद रंगों से बनाया जाता है । यह सभी प्रधान देवों की स्थापना का शास्त्रोक्त आसन है । सो यों अर्धलिङ्गतो भद्र, एकलिङ्गतो भद्र, चतुर्लिङ्गतो भद्र, द्वादश लिङ्गतो भद्र, नवग्रह भद्र, वरुण मण्डल भद्र, वास्तु चक्र आदि अनेक भद्र होते हैं । इनका वर्णन भद्र मार्तण्ड में विस्तार पूर्वक दिया गया है । यह भद्र अनेक अवसरों पर अनेक प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होते हैं । इन सब में सर्वतोभद्र सर्वोपयोगी, सरल, प्रचलित एवं उपयुक्त है । सब देवताओं को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

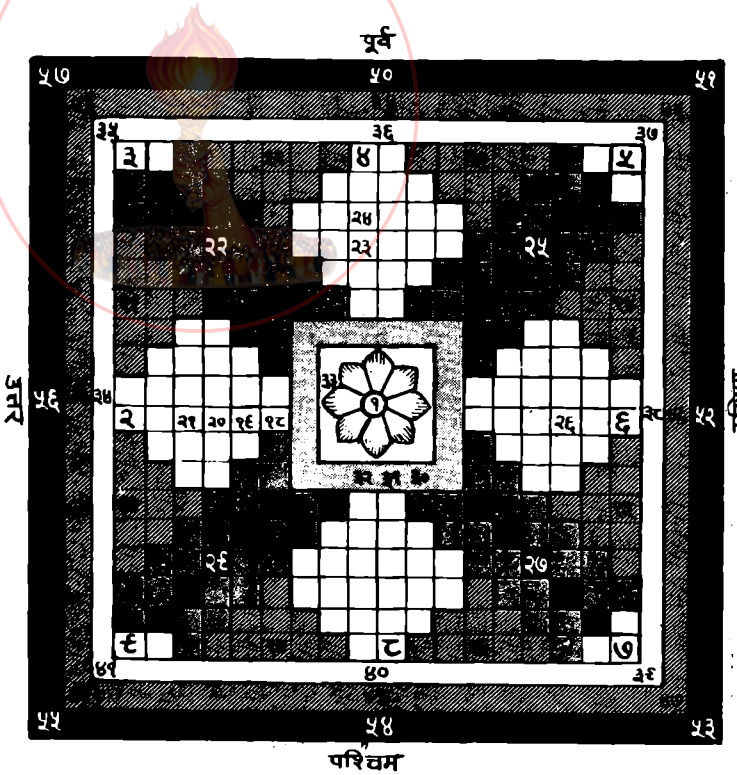
लघु सर्वतो भद्र



www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

सर्वतोभद्र में देवताओं की स्थापना के स्थान

१- ब्रह्मा, २- सोम, ३- ईशान, ४- इन्द्र ५-अग्नि, ६- यम, ७- निऋति, ८- वरुण ९-वायु, १०-अष्टवसु, ११- एकादशरुद्र, १२-द्वादश आदित्य, १३-अश्विनौ, १४-सपितृ-विश्वेदेवा, १५-सप्त यज्ञ, १६-भूत नाग, १७-गन्धर्व अप्सरस: १८-स्कन्द, १९-शिव, २०-शूल, २१-महाकाल, २२-दक्ष, २३-दुर्गा, २४- विष्णु, २५ - स्वधा, २६-मृत्युरोग, २७- गणपति, २८- अप, २९- मरुत:, ३०-पृथिवी ३१-गंगादि नदी, ३२-सप्तसागर, ३३-मेरु, ३४-गदा, ३५-त्रिशूल, ३६-बज्र, ३७-शक्ति, ३८-दण्ड, ३९-खड्ग, ४०-पाश, ४१- अंकुश, ४२- गौतम,४३- भरद्वाज, ४४-विश्वामित्र, ४५-कश्यप, ४६-जमदग्नि, ४७-वशिष्ठ, ४८- अत्रेय, ४९- अरुन्धती, ५०- ऐन्द्री, ५१- कौमारी; ५२- ब्राह्मी, ५३-वाराही, ५४-चामुण्डा, ५५- वैष्णवी, ५६-माहेश्वरी, ५७-वैनायकी,



www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक स्थान पर प्रतिष्ठित करने के लिए यह रंग बिरंगा गलीचा जहाँ शास्त्रोक्त एवं अनेक विशेषताओं से संयुक्त हैं, वहाँ यह देखने में भी बड़ा मनोहर एवं हृदयग्राही प्रतीत होता है ।

चौकोर चौकी पर कोई उत्तम वस्त्र बिछाकर उस पर सर्वतो भद्र चक्र की स्थापना की जाती है । १८ कोष्टक लम्बाई में और १८ कोष्टक चौड़ाई इसमें होते हैं । बीचों बीच ४-४ कोष्टकों की लम्बाई चौड़ाई में अष्टदल कमल बनाया जाता है । कमल के चारों ओर एक-एक कोष्ट की पीत वर्ण परिधि होती है । इसका प्रमाण इस प्रकार है ।

प्रागुदीच्यायता रेखाः कुर्यादेकोन विंशतिम् ।
खण्डेन्दुस्त्रिपदैः कोणे शृङ्खला पञ्चभिः पदैः ।। १ ।।
एकादश पदा वल्ली भद्रं तु नवभिः पदैः ।
चतुर्विंशत्पदा वापी परिधिर्विंशतिः पदैः ।। २ ।।
मध्ये षोडशभिः कोष्ठैः पद्ममष्ट दलं स्मृतम् ।
श्वेतेन्दुः शृङ्खला कृष्णा वल्ली नीलेन पूरयेत् ।। ३ ।।
भद्ररुणा सिता वापी परिधिः पीत वर्णकः ।
वाह्यान्तर्दलाश्वेता कर्णिका पीत वर्णिका ।। ४ ।।
परिध्या वेष्टितमं पद्मं वाह्ये सत्वं रजस्तमः ।
तन्मध्ये स्थापयेद्देवान् ब्रह्माद्यांच सुरेश्वरान् ।। ५ ।।
भद्रेणा पूजनाशक्तौ कार्यमष्टदलं शुभम् ।
गोधूमान्नेम तत्कार्य तण्डुलेनाऽथवा शुभम् ।। ६ ।।

उपरोक्त प्रमाण को भाषा में समझाने से भावार्थ ठीक प्रकार वे ही समझ सकते हैं, जिन्होंने पहले सर्वतोभद्र को देखा या बनाया हो । सर्व साधारण की सुविधा के लिए रंगीन चक्र ही अच्छा रहता है, जिसे देख कर पाठक उसे स्वयं ही बना सकें ।

चावलों को प्रयुक्त रंगों से रंग कर उनकी स्थापना की जाती है । कई बार लाल रंग का कार्य मसूर की दाल से, काले रंग का का कार्य उर्द की दाल से, हरे रंग का कार्य मूँग की दाल से, पीले रंग का कार्य चने की दाल से और सफेद रंग का कार्य चावलों से लिया जाता है । कपड़े पर उपरोक्त रंगों की कढ़ाई छपाई करके अथवा चाँदी-सोने की चद्दर पर इन रंगों की मीनाकारी करके भी भद्र बनाये जाते देखे गये हैं । कोई-कोई रोली, पिसी मेंहदी, हल्दी, आटा, छनी हुई भस्म से क्रमशः लाल, हरा, पीला, सफेद एवं काला रंग बनाते हैं । इस प्रकार कई प्रकार की वस्तुओं की सहायता से लोग भद्र बनाते हैं । पर अधिक उपयुक्त धान्यों द्वारा रंग प्रदर्शन करना ही है ।

भद्र बन जाने पर उसके ऊपर यथा स्थान देवताओं की स्थापना तथा पूजा करें, उसकी विधि इस प्रकार है :-

अक्षतान् गृहीत्वाऽऽवाहनं कुर्यात् ।

हाथ में अक्षत लेकर देवताओं का क्रम से आवाहन-पूजन करें ।

तत्र मध्ये कर्णिकायां ब्रह्माणमावाहयेत् :-
ॐ त्वं वै चतुर्मुखो ब्रह्मा सत्य लोक पितामहः ।
आगच्छ मण्डले चास्मिन्मम सर्वार्थ सिद्धये ।।

सर्वतोभद्र में देवताओं की स्थापना के स्थान-

१. ब्रह्मा, २. सोम, ३. ईशान, ४. इन्द्रम्, ५. अग्नि, ६. यम, ७. निऋति, ८. वरुण, ९. वायु, १०. अष्टवसु, ११. एकादशरुद्र, १२. द्वादश आदित्य, १३. अश्विनौ, १४. सपितृ विश्वेदेवा, १५. सप्त यक्ष, १६. भूत नाग, १७. गन्धर्व अप्सरसः, १८. स्कन्द, १९. शिव, २०. शूल, २१. महाकाल, २२. दक्ष, २३. दुर्गा, २४. विष्णु, २५. स्वधा, २६. मृत्युरोग, २७. गणपति, २८. अप, २९. मरुतः, ३०. पृथिवी, ३१. गङ्गादि नदी, ३२. सप्तसागर, ३३. मेरु, ३४. गदा, ३५. त्रिशूल, ३६. वज्र, ३७. शक्ति, ३८. दण्ड, ३९. खड्ग, ४०. पाश, ४१. अंकुश, ४२. गौतम, ४३. भरद्वाज, ४४. विश्वामित्र, ४५. कश्यप, ४६. जमदग्नि, ४७. वशिष्ठ, ४८. अत्रेय, ४९. अरुन्धती, ५०. ऐन्द्री, ५१. कौमार्यी, ५२. ब्राह्मी, ५३. वाराही, ५४. चामुण्डा, ५५. वैष्णवी, ५६. माहेश्वरी, ५७. वैनायकी ।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः । ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि ।। भो ब्रह्मन् इहागच्छ इह तिष्ठ ।। १ ।। इति मध्ये ब्रह्माणं ।।

सर्व प्रथम उपर्युक्त मन्त्र से मण्डप के मध्य में ब्रह्माजी का आवाहन, पूजन करे ।। १ ।।

ततः उत्तरे वाप्यां सोममावाहयेत् :-
ॐ क्षीरोदार्णव सम्भूतं लक्ष्मीबन्धुं निशाकरम् ।
मण्डले स्थापयाभ्यत्र सोमं सर्वार्थ सिद्धये ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः । सोममावाहयामि स्थापयामि ।। भो सोम इहागच्छ इह तिष्ठ ।। २ ।।
इति उत्तरे सोमम् ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तदन्तर ॐ क्षीरोदार्णव । आदि मन्त्रों से उत्तर में सोम (चन्द्रमा) का आवाहन करें ।

तत ईशान्यां खण्डेन्दावीशानमावाहयेत् :-
ॐ ईशानीपालकं श्रेष्ठं सर्वलोकभयङ्करम् ।
मण्डले स्थापयामीह ईशानं सर्वसिद्धये ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः । ईशानमावाहयामि स्थापयामि । । भो ईशान इहागच्छ इह तिष्ठ ।। ३ ।। इति ऐशान्यामीशानम् ।।

तदन्तर ॐ ईशानीपालकं आदि मन्त्रों से ईशान कोण में ईशान देवता का आवाहन, पूजन करें ।

ततः पूर्वस्यां वाप्यामिन्द्रमावाहयेत् :-
ॐ सर्वलोकाधिकं श्रेष्ठं देवर्षीणां च पालकम् ।
पूर्वदिक्पालकं देवराजं वै स्थापयाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः । इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि ।। भो इन्द्र इहागच्छ इह तिष्ठ ।। ४ ।। इति पूर्वे इन्द्रम् ।।

तत्पश्चात् ॐ सर्व लोकाधिक मन्त्र से पूर्व भाग में इन्द्र देवता का आवाहन पूजन करें ।

तत आग्नेय्यां खण्डेन्दावग्नि मावाहयेत् :-
ॐ त्रिपादं मेषवाहं च त्रिशिखं च त्रिलोचनम् ।
आग्नेय्यां स्थापयाम्यत्र ह्यग्निं पुरुषमुत्तमम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः । अग्निमावाहयामि स्थापयामि ।। भो अग्ने इहागच्छ इह तिष्ठ ।। ५ ।। इत्याग्नेय्यामग्निम् ।।

फिर ॐ त्रिपादं मेषवाहं मन्त्र से अग्नि कोण में अग्नि देवता की स्थापना, आवाहन पूजन करें ।

ततो दक्षिणो वाप्यां यममावाहयेत् :-
ॐ अन्तकः सर्वलोकानां धर्मराज इतिश्रुतः ।
अतस्त्वां स्थापयाम्यत्र दक्षिणस्यां स्थिरो भव ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः । यममावाहयामि स्थापयामि ।। भो यम इहागच्छ इह तिष्ठ ।। ६ ।। इति दक्षिणे यमम् ।।

फिर ॐ अन्तकः सर्व लोकानां मन्त्र से दक्षिण भाग में यमराज की स्थापना, पूजन करें ।

ततो नैर्ऋत्यां खण्डेन्दौ निर्ऋतिमावाहयेत् :-
ॐ नैर्ऋत्यां वसतिर्यस्य घोररूपी सदा हि यः ।
निर्ऋतिं स्थापयाम्यत्र नैर्ऋत्यां मण्डले शुभे ।।

ॐभूर्भुवःस्वः निर्ऋतये नमः । निर्ऋति मावाहयामि स्थापयामि ।। भो निर्ऋते इहागच्छ इहतिष्ठ ।। ७ ।। इति नैर्ऋत्यां निर्ऋतिम् ।।

तदन्तर ॐ नैर्ऋत्या मन्त्र से नैर्ऋत्य कोण में निर्ऋति देवता की स्थापना करें ।

ततः पश्चिमे वाप्यां वरुणमावाहयेत् :-
ॐ अपाम्पतिं पाशधरं यादसाम्पत्तिमुत्तमम् ।
वरुणं स्थापयाम्यत्र वारुण्यां मण्डले शुभे ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः । वरुणमावाहयामि स्थापयामि ।। भो वरुण इहागच्छ इह तिष्ठ ।। ८ ।। इति पश्चिमे वरणम् ।।

फिर ॐ अपाम्पतिं पाशधरं मन्त्र से पश्चिम दिशा में वरुण की स्थापना पूजन करें ।

ततो वायव्यां खण्डेन्दौ वायुमावाहयेत् :-
ॐ आशुगं स्पर्शबोधं च गन्धवाहं सुशीतलम् ।
मण्डले स्थापयामीह वायव्यां वायुमुत्तमम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः । वायुमावाहयामि स्थापयामि । । भो वायो इहागच्छ इह तिष्ठ ।। ९ ।। इति वायव्यां वायुम् ।।

फिर ॐ अशुगं स्पर्शबोधं मन्त्र से वायव्य कोण में वायु की स्थापना करें ।

ततो वायुसोमयोर्मध्ये भद्रे अष्टवसूनावाहयेत् :-
ॐ धरो ध्रुवश्च सोमश्चाप्यांशुगाश्चानिलोऽनलः ।
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वस्वष्टकमिह स्थिरम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अष्टवसुभ्यौ नमः । अष्टवसूनावहयामि स्थापयामि ।। भो अष्टवसवः इहागच्छ इह तिष्ठत् ।। १० ।। इति वायुसोमयोर्मध्ये वसून् ।।

फिर ॐ धरो ध्रुवश्च मन्त्र से वायु तथा सोम के बीच में, धर, ध्रुव, सोम, आशुग, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास इन आठों वसुओं की स्थापना, आवाहन, पूजन करें ।

ततः सोमेशानयोर्मध्ये भद्रे एकादश रुद्रानावाहयेत् :-
ॐ त्रिनेत्राय त्रिरूपाय त्रिजटाय महात्मने ।
नमस्कृत्वा स्थापयामि मण्डलोपरि मध्यतः ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः एकादशरुद्रेभ्यो नमः । एकादश रुद्रानावाहयामि स्थापयामि ।। भो एकादश रुद्राः इहागच्छत् इह तिष्ठत् ।। ११ ।। इति सोमेशानयोर्मध्ये रुद्रान् ।।

तत्पश्चात् ॐ त्रिनेत्राय इस मन्त्र से सोम तथा ईशान के बीच में एकादश रुद्रों की स्थापना पूजन करें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ततः ईशानपूर्वयोर्मध्ये भद्रे द्वादशादित्यानवाहयेत्:-
ॐ आदित्यं भास्करं चैव प्रभाकरदिवाकरौ ।
सूर्य्यं ग्रहपतिं चैव ब्रध्नं तेजो हरिद्धरिम् ।।
सप्ताश्वं वेदमूर्तिं च त्रिदेवत्यं क्रमेण च ।
इत्यादि द्वादशादित्यान्मण्डले स्थापयाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः द्वादशादित्येभ्यो नमः । द्वादशादित्यानावाहयामि स्थापयामि ।। भो द्वादशादित्या इहगच्छ इह तिष्ठत् ।। इति ईशानेन्द्रयोर्मध्ये द्वादशादित्यान् ।।१२ ।।

तत्पश्चात् ॐ आदित्यं मन्त्र से ईशान और इन्द्र के बीच में द्वादश सूर्यों की स्थापना, पूजन करें ।

तत इन्द्राग्नोर्मध्ये भद्रेऽश्विनावावाहयेत् :-
ॐ अश्विनौ देववैद्यौ च सर्गस्थित्यन्तकारकौ ।
मण्डले स्थापयित्वा तु पूजयाभीष्ट सिद्धये ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः । अश्विनावा वाहयामि स्थापयामि ।। भो अश्विनौ इहागच्छतम् इहतिष्ठतम् ।। इति इन्द्राग्न्योर्मध्ये अश्विनौ ।। १३ ।।

तत्पश्चात् ॐ अश्विनौ मन्त्र से इन्द्र तथा अग्नि के बीच में अश्विनीकुमारों की स्थापना करें ।

ततः अग्नियमयोर्मध्ये भद्रे सपित्रीन् विश्वेदेवाना - वाहयेत् :-
ॐ दैवे कर्मणि पित्र्ये च ये मुख्यास्सर्वदा शुभाः ।
मण्डले स्थापयामीह सुखानुष्ठान सिद्धये ।।

ॐ भूभुर्वः स्वः विश्वेभ्यो नमः । विश्वेदेवा- नावाहयामि स्थापयामि ।। भो विश्वेदेवा इहागच्छत् इहतिष्ठत् ।।
ॐ अहमावाहयिष्यामि पितॄंस्तांस्तेजसोऽधिकान् ।
आयान्तु पितरः सर्वे यज्ञान्ते शुभदायकाः ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः पितृभ्यो नमः । पितृनावाहयामि स्थापयामि ।। भो पितर इहागच्छत् इहतिष्ठत् ।। १४ ।।
इति अग्नियमयोर्मध्ये सपित्रीन विश्वेदेवान् ।।

तत्पश्चात् ॐ दैवे कर्मणि मन्त्र से अग्नि और यम के बीच में विश्वेदेव की स्थापना करें तथा ॐ अहमावाहयिष्यामि आदि मन्त्र से पितरों की स्थापना करें ।

ततो यमनिर्ऋतयोर्मध्ये भद्रे सप्तयक्षानावाहयेत्:-
ॐ यदृच्छया पर्यटन्ति यक्षराजा महीतले ।
कौतुकं प्रेक्षितुं चास्मिन्मण्डले सन्तु सुस्थिराः ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सप्तयक्षेभ्यो नमः । सप्तयक्षानावाहयामि स्थापयामि ।। भो सप्तयक्षा इहागच्छत् इह तिष्ठत् ।। इति यम निर्ऋत्योर्मध्ये यक्षान् ।। १५ ।।

तदन्तर ॐ यदृच्छया पर्यटन्ति मन्त्र से यम और निर्ऋति के बीच में यक्षों की स्थापना करें ।

ततो निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये भद्रे भूतनागानावाहयेत्:-
ॐ अनन्तो वासुकिश्चैव कालीयो मणिभद्रकः ।
शङ्खश्च शङ्खपालश्च कर्कोटकधनञ्जयौ ।।
धृतराष्ट्रश्च नागेशाः प्रगृह्णन्तु ममार्चनम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः भूतनागेभ्यो नमः । भूतनागान्या - वाहयामि स्थापयामि ।। भो भूतनागानि इहागच्छत् इहतिष्ठत् ।। इति निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये नागान् ।। १६ ।।

तदन्तर ॐ अनन्तो वासुकिश्चैव मन्त्र से निर्ऋति और वरुण के बीच नागदेवताओं की स्थापना करें ।

ततो वरुण वाय्वोर्मध्ये भद्रे गन्धर्वाप्सरस आवाहयेत् :-
ॐ उर्वशीप्रमुखाः सर्वाः स्वर्वेश्याः शक्रपूजिताः ।
गन्धर्वैश्च सहायान्तु मण्डलेऽस्मिन्सुशोभनाः ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गन्धर्वेभ्यो नमः । गन्धर्वानावा- हयामि स्थापयामि ।। भो गन्धर्वा इहागच्छत् इहतिष्ठत् ।।
तत्रैव अप्सरस आवाहयेत् ।।
ॐ आवाहयेऽहं सुरदेव सेव्याः स्वरूपतेजो मुखपद्मभासः।
सर्वामरेशैः परिपूर्णकामाः पूजां गृहीतुं मम यज्ञभूम्यै ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अप्सरोभ्यो नमः । अप्सरसः आवाहयामि स्थापयामि । भो अप्सरस इहागच्छत् इहतिष्ठत् ।। इति वरुण वाय्वोर्मध्ये गन्ध- र्वाप्सरसः ।। १७ ।।

तत्पश्चात् ॐ उर्वशी आदि मन्त्रों से वरुण और वायु के बीच में गन्धर्व तथा अप्सराओं की स्थापना करें ।

ततो ब्रह्मसोमयोर्मध्ये वाप्याम् स्कन्दं नंदीश्वरं शूलञ्चावाहयेत् :-
ॐ षडाननं चतुर्हस्तं स्कन्दं गौरीसुतं शुभम् ।
इहैव पूजयिष्यामि सर्वकामार्थ सिद्धये ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्दाय नमः । स्कन्दमावाहयामि स्थापयामि ।। भो स्कन्द इहागच्छ इह तिष्ठ ।। १८ ।।

तदन्तर ॐ षडाननं आदि मन्त्र से ब्रह्मा और सोम के बीच में स्कन्द की स्थापना करें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ त्र्यम्बकं त्रिपुरुषं नीलकण्ठं सदाशिवम् ।
मण्डले स्थापयामीह सुखानुष्ठाम सिद्धये ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः नन्दीश्वराय नमः । नन्दीश्वरमावाहयामि स्थापयामि ।। भो नन्दीश्वर इहागच्छ इह तिष्ठ ।। १९ ।।

तदन्तर उपर्युक्त मन्त्र से ब्रह्म और सोम के मध्य में नन्दीश्वर (महादेव) की स्थापना करें ।

ॐ भूर्भुवः स्वः नन्दिने नमः । नन्दिनमावाह यामि स्थापयामि ।। भो नन्दिन् इहागच्छ इह तिष्ठ । इति स्कान्दादुत्तरे नन्दिनं ।। १९ ।।

नन्दीश्वर (महादेव जी) के साथ -साथ स्कन्द के उत्तर में नन्दिन (नन्दी, शिवजी का वाहन) की स्थापना करें ।

नन्दिकेश्वरादुत्तरः शूलं तदुत्तरतस्तत्रैव महाकालाञ्चावाहयेत् ।।

ॐ आयातमायातमुमाप्रियस्य,
प्रियौ मुनींद्रादिकसिद्धसेव्यौ ।।
ग्रहीतमेतां मम शूलकालौ,
सूजां सुखौघं कुरुतंनमो ताम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः शूलमहाकालाभ्यां नमः । शूलमहाकालौ आवाहयामि स्थापयामि ।। भो शूल महाकालौ इहागच्छतम् इह तिष्ठतम् ।। २० ।।

तत्पश्चात् ॐ आयातमायातमुमाप्रियस्य आदि मन्त्र से नन्दिकेश्वर के उत्तर में शूल तथा शूल के उत्तर में वहीं महाकाल की स्थापना करें ।

ततो ब्रह्मेशानयोर्मध्ये वल्लीषु दक्षादीन सप्त प्रजापतीनावाहयेत् :-

ॐ दक्षोऽसि सर्वकार्येषु महायज्ञकर प्रियः ।
ऋषिश्च सर्वदा दक्ष मण्डलेस्मिन् स्थिरो भव ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः दक्षादि सप्तप्रजापतिभ्यो नमः । दक्षादिसप्तप्रजापतीनावाहयामि स्थापयामि ।। भो दक्षादिसप्त प्रजापतयः इहागच्छ इह तिष्ठत् ।। २१ ।।

इति ब्रह्मेशान योर्मध्येदक्षम् ।।

तदन्तर ॐ दक्षोऽसि सर्वकार्येषु मन्त्र से ब्रह्म और ईशान के मध्य में दक्ष आदि सप्त प्रजापतियों की स्थापना करें ।

ततो ब्रह्मेन्द्रयोर्मध्ये वाप्यां दुर्गामावाहयेत् :-

ॐ तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं सर्वदा शुभाम् ।
भक्तानां वरदां नित्यां दुर्गामावाहयाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गायै नमः । दुर्गामावाहयामि स्थापयामि ।। भो दुर्गे इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति ब्रह्मेन्द्रयोर्मध्ये दुर्गाम् ।। २२ ।।

तत्पश्चात् ॐ तामग्निवर्णां मन्त्र से ब्रह्म और इन्द्र के मध्य में दुर्गा देवी की स्थापना, पूजन करें ।

ततो दुर्गापूर्वे विष्णुमावाहयेत् :-

एह्येहि नीलाम्बुद मेचक त्वं श्रीवत्सवक्ष कमला-धिनाथ ।।
सर्वामरैः पूजितपादपद्म ग्रहाण पूजां भगवन्नमस्ते ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः । विष्णुमावाहयामि स्थापयामि ।। भो विष्णो इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति गुर्गापूर्वे विष्णुम् ।। २३ ।।

तदनन्तर ॐ एह्येहि नीलाम्बुद मन्त्र से दुर्गा के पूर्व में विष्णु भगवान की स्थापना, पूजन करें ।

ततो ब्रह्माग्न्योर्मध्ये वल्लीषु स्वधासहित पितृना वाहयेत्

ॐ सुखायपितृन् कुलवृद्धिकर्त्रीन्,
रक्तोत्पलाभानिहरक्तनेत्रान् ।
सुरक्तमाल्याम्बरभूषितांश्च,
नमामि पीठे कुलवृद्धिहेतोः ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः स्वधासहितपितृभ्यो नमः । स्वधासहित पितृनावाहयामि स्थापयामि ।। भो स्वधासहितपितरः इहागच्छत् इह तिष्ठत् इति ब्रह्माग्न्योर्मध्ये स्वधाम् ।। २४ ।।

तत्पश्चात् ॐ सुखाय मन्त्र से ब्रह्म और अग्नि के मध्य में पितरों के सहित स्वधा की स्थापना करें ।

ततो ब्रह्मयमयोर्मध्ये वाप्यां मृत्युरोगानावाहयेत् :-

ॐ मृत्युरोगानन्तकस्य प्रेष्यान्प्राणहरान् गणान् ।
आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन् पूजार्थं लोकनाशकान् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः मृत्युरोगेभ्यो नमः । मृत्युरोगानावाहयामि स्थापयामि ।। भो मृत्युरोगौ इहागच्छत् इह तिष्ठत् ।। इति ब्रह्मयमयोर्मध्ये मृत्युरोगान् ।। २५ ।।

तदनन्तर ॐ मृत्युरोगानन्तकस्य मन्त्र से ब्रह्म और यम के मध्य में मृत्यु तथा रोगों की स्थापना करें ।

ततो ब्रह्मनिर्ऋत्योर्मध्ये वल्लीषु गणपतिमावाहयेत् :-

ॐ कुङ्कुमाभं सदानन्दं भक्तसङ्कटनाशनम् ।
चतुर्बाहुं त्रिनेत्रं च मण्डले स्थापयाम्यहम् ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः । गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ।। भो गणपते इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति ब्रह्म निर्ऋत्योर्मध्ये गणेशम् ।। २६ ।।

तदनन्तर ॐ कुङ्कुमाभं मन्त्र से ब्रह्म और निर्ऋति के मध्य में गणपति की स्थापना करें ।

ततो ब्रह्मवरुणयोर्मध्ये वाप्यामप आवाहयेत् :-

ॐ पावनाः सर्वलोकानां निमग्नाः शुद्धिकारकाः ।
सर्वपापहराः श्रेष्ठा मण्डले स्थापयाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः । अपआवाहयामि स्थापयामि ।। भो अप इहागच्छत् इह तिष्ठत् ।। २७ ।। इति ब्रह्मवरुणयोर्मध्ये अपः ।।

तदनन्तर ॐ पावनाः मन्त्र से ब्रह्म और वरुण के मध्य में अप (जल) की स्थापना करें ।

ततो ब्रह्मावाय्वोर्मध्ये मरुत आवाहयेत् :-

ॐ सुगन्धिनश्च शैलाद्या मन्दमन्दवहाः सदा ।
तानहं स्थापयामीह मरुतो मण्डले शुभे ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः मरुद्भ्यो नमः । मरुत आवाहयामि स्थापयामि ।। भो मरुत इहागच्छत् इह तिष्ठत् ।। इति ब्रह्मवाय्वोर्मध्ये मरुतः ।। २८ ।।

तत्पश्चात् ॐ सुगन्धिनश्च मन्त्र से ब्रह्मा और वायु के बीच में मरुत् की स्थापना करें ।

ततो ब्रह्मणः पादमूले कर्णिकाधः पृथिवीमावाहयेत् :-

ॐ पृथिव्या धार्यते विश्वं दुर्ग्रहं सागरैर्नरैः ।
अतस्त्वां स्थापयामीह ब्रह्मणो मण्डले पदे ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः पृथिव्यै नमः । पृथिवीमावाहयामि स्थापयामि ।। भो पृथिवी इहागच्छ । इह तिष्ठ ।। इति ब्रह्मण पादमूले पृथिवीम् ।। २९ ।।

तदनन्तर ॐ पृथिव्या मन्त्र से ब्रह्मा के चरणों पर पृथ्वी की स्थापना करें ।

ततस्तत्रैव तदुत्तरतो गङ्गादिसप्तसरित आवाहयेत् :-

ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धुकावेर्यौ मण्डले स्थापयाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गङ्गादिनदीभ्यो नमः । गङ्गादिनदीरावाहयामि स्थापयामि ।। भो गङ्गादिनद्यः इहागच्छत् इह तिष्ठत् । इति ब्रह्मणः पादमूले नदीः ।।

तत्पश्चात् ॐ गङ्गे च यमुने मन्त्र से ब्रह्मा के चरणों पर ही गंगा आदि सात नदियों की स्थापना करें ।

ततस्तत्रैव तदुत्तरत सप्तसागरानावाहयेत् :-

ॐ समुद्राः सर्वतोयेषु श्रेष्ठा वै हरिवल्लभाः ।
मण्डले स्थापयामीह तान्नदीशान् सुखाप्तये ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सप्तसागरेभ्यो नमः । सप्तसागरानावाहयामि स्थापयामि ।। भो सप्तसागरा इहागच्छत् इह तिष्ठत् ।। इति ब्रह्मण पादमूले गङ्गाद्युत्तरे सप्तसागरान् ।। ३१ ।।

तदनन्तर ॐ समुद्रा मन्त्र से ब्रह्मा के चरणों पर गंगा उत्तर से सप्त सागरों (क्षारसागर, क्षीरसागर, दधिसागर, घृतसागर, इक्षुसागर, सुरासागर, तथा स्वादूदक सागर) की स्थापना करें ।

ततः कर्णिकोपरि मेरुमावाहयेत् :-

ॐ एह्येहि कार्त्त स्वररूप सर्व भूभृत्पते चन्द्र रवीदधान ।
सर्वौषधिस्थान महेन्द्रमित्र लोकत्रयावास नमोऽस्तु तुभ्यम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः मेरवे नमः । मेरुमावाहयामि स्थापयामि ।। भो मेरो इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति कर्णिकोपरि मेरुम् ।। ३२ ।।

तदनन्तर "ॐ एह्येहि कार्त्तस्वररूप" मन्त्र से कर्णिका (मण्डल) के ऊपर (मध्य) मेरु की स्थापना करें ।

मण्डलवाह्ये श्वेतपरिधौ उत्तरादिक्रमेण गदाद्यष्टायुध देवता स्थापनम्

यथा सोमसमीपे उत्तरे गदामावाहयेत् :-

ॐ निषिक्ता कुमुदाक्तस्य नाम्ना कौमोदकी गदा ।
शान्तिदा स्मरणादेव तस्यै तुभ्यं नमो नमः ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गदायै गमः । गदामावाहयामि स्थापयामि ।। भो गदे इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति सोम समीपे उत्तरे गदाम् ।। ३३ ।।

फिर ॐ निषिक्ता मन्त्र से सोम के समीप उत्तर में गदा की स्थापना करें ।

तत ऐशान्यां त्रिशूलं आवाहयेत् :-

ॐ महायोगीन्द्र हस्तस्य शङ्करस्य प्रियङ्कर ।
त्रिशूल त्वमिहागच्छ पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः त्रिशूलाय नमः । त्रिशूलमावाहयामि स्थापयामि ।। भो त्रिशूल इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति ऐशान्यामीशान समीपे त्रिशूलम् ।। ३४ ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तत्पश्यात् **ॐ महायोगीन्द्रिहस्तस्य** मन्त्र से ईशान में ईशान के समीप त्रिशूल की स्थापना करें।

ततः पूर्वे इन्द्रसमीपे वज्रमावाहयेत् :-

ॐ तप्तकाञ्चन वर्णाभं वज्रं वै शस्त्रनायकम् ।
आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन् गृहाणेमां नमोऽस्तुते ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वज्राय नमः । वज्रमावाहयामि स्थापयामि ।। भो वज्र इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति पूर्वे इन्द्रसमीपे वज्रम् ।। ३५ ।।

तत्पश्चात् **ॐ तप्तकाञ्चवर्णाभं** मन्त्र से पूर्व में इन्द्र के समीप वज्र की स्थापना करें ।

तत आग्नेय्यामग्नि समीपे शक्तिमावाहयेत् :-

ॐ सर्व दैत्यविनाशाय सर्वकामफलप्रदे ।
सर्वसत्वहिते शक्ते शान्तिं यच्छ नमोऽस्तुते ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः शक्तये नमः । शक्तिमावाहयामि स्थापयामि ।। भो शक्ते इहागच्छ इह तिष्ठ ।। ३६ ।। इति आग्नेय्याम् अग्नि समीपे शक्तिम् ।

तदनन्तर **ॐ सर्वदैत्य विनाशाय** मन्त्र से अग्नि कोण में अग्नि के समीप शक्ति की स्थापना करें ।

ततो दक्षिणास्यां यमसमीपे दण्डमावाहयेत् :-

ॐ धर्मराजस्य हस्तस्य यमस्य च सदा प्रिय ।
दण्डायुध नमस्तेऽस्तु सर्व सिद्धिप्रदो भव ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः दण्डाय नमः । दण्ड मावाहयामि स्थापयामि ।। भो दण्ड इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति दक्षिणास्यां यम समीपे दण्डम् ।। ३७ ।।

तदनन्तर **ॐ धर्मराजस्य** मन्त्र से दक्षिण दिशा में यम के समीप दण्ड की स्थापना करें ।

ततो नैऋत्यां निर्ऋति समीपे खड्गमावाहयेत् :-

ॐ नीलजीमूतवर्ण त्वं तीक्ष्णदंष्ट्र कृशोदर ।
खड्गराज नमस्तुभ्यं पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः खड्गाय नमः । खड्गमावाहयामि स्थापयामि ।। भो खड्ग इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति नैऋत्यां निर्ऋति समीपे खड्गम् ।। ३८ ।।

तत्पश्चात् **ॐ नीलजीमूतवर्ण** मन्त्र से नैऋत्य कोण में निर्ऋति के समीप खड्ग की स्थापना करें ।

ततः पश्चिमे वरुणसमीपे पाशमावाहयेत् :-

ॐ देवासि वरुणास्त्रं त्वं दैत्यवंशविदारणा ।
पाश मां समरे रक्ष रज्जुराज नमोऽस्तुते ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः पाशाय नमः । पाशमावाहयामि स्थापयामि ।। भो इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति पश्चिमे वरुणसमीपे पाशम् ।। ३९ ।।

तदनन्तर **ॐ देवासि वरुणास्त्रं** मन्त्र से पश्चिम में वरुण के समीप पाश की स्थापना करें ।

ततो वायव्यां वायुसमीपे अङ्कुशमावाहयेत् :-

ॐ गजघ्नं परवीरघ्नं परसैन्यापहारकम् ।
गणेशस्य प्रियं तस्मांदङ्कुशाय नमो नमः ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अङ्कुशाय नमः । अङ्कुशमावाहयामि स्थापयामि ।। भो अङ्कुश इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति वायव्यां वायुसमीपे अङ्कुशम् ।। ४० ।।

तदनन्तर **ॐ गजघ्नं** मन्त्र से वायव्य कोण में वायु के समीप अङ्कुश की स्थापना करें ।

मण्डल बाह्ये रक्तपरिधौ उत्तरादिक्रमेण गौतमाद्यष्टदेवतास्थापनम्

तत उत्तरे गौतममावाहयेत् :-

ॐ गौतमः सर्वभूतानामृषीणां च सदा प्रियः ।
श्रोतानां कर्मणां चैव संप्रदायप्रवर्तकः ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गौतमाय नमः । गौतममावाहयामि स्थापयामि ।। भो गौतम इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति उत्तरे गौतमम् ।। ४१ ।।

तदनन्तर **ॐ गौतमः** मन्त्र से उत्तर में गौतम ऋषि की स्थापना करें ।

तत ऐशान्यां भरद्वाजमावाहयेत् :-

ॐ भारद्वाज नमस्तेऽस्तु सदाध्ययनतत्परः ।
आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन् पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः भरद्वाजाय नमः । भरद्वाज मावाहयामि स्थापयामि ।। भो भरद्वाज इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति ऐशान्याम् भरद्वाजम् ।। ४२ ।।

तत्पश्चात् **ॐ भरद्वाज** मन्त्र से ईशान कोण में भरद्वाज ऋषि की स्थापना करें ।

ततः पूर्वे विश्वामित्रमावाहयेत् :-

ॐ विश्वामित्र नमस्तुभ्यं ज्वलदग्निसमप्रभ ।
अध्यक्षीकृतगायत्री तपोरूपेण संस्थितः ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वामित्राय नमः । विश्वामित्रमावाहयामि स्थापयामि ।। भो विश्वामित्र इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति पूर्वे विश्वामित्रम् ।। ४३ ।।

तदनन्तर **ॐ विश्वामित्र** मन्त्र से पूर्व दिशा में विश्वामित्र की स्थापना करें ।

तत आग्नेय्यां कश्यपमावाहयेत् :-

ॐ कश्यपः सर्वलोकाढ्यः सर्वभूतदयाकरः ।
असि त्वां प्रार्थयामीश पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ भूर्भुवः स्वः कश्यपाय नमः । कश्यपनावाहयामि स्थापयामि ।। भो कश्यप इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति आग्नेय्याम् कश्यपम् ।। ४४ ।।

तत्पश्चात् ॐ कश्यपः मन्त्र से अग्नि कोण में कश्यप की स्थापना करें ।

ततो दक्षिणे जमदग्निमावाहयेत् :-

ॐ जमदग्निर्महातेजास्तपसा ज्वलतीहतम् ।
आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन् पूजेयं प्रति गृह्यताम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः जमदग्नये नमः । जमदग्निमावाहयामि स्थापयामि ।। भो जमदग्ने इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति दक्षिणे जमदग्निम् ।। ४५ ।।

तदनन्तर ॐ जमदग्निर्महातेजास्तपसा मन्त्र से दक्षिण में जमदग्नि की स्थापना करें ।

ततो नैर्ऋत्यां वसिष्ठमावाहयेत् :-

ॐ नमस्तुभ्यं वसिष्ठाय कर्मकर्त्रे महामुने ।
धर्मरूपाय महते लोकानां हितकारिणे ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वसिष्ठाय नमः । वसिष्ठमावाहयामि स्थापयामि ।। भो वसिष्ठ इहागच्छ इह तिष्ठत ।। इति नैर्ऋत्यां वसिष्ठम् ।। ४६ ।।

तत्पश्चात् ॐ नमस्तुभ्यं मन्त्र से नैऋत्य कोण में वसिष्ठ की स्थापना करें ।

ततः पश्चिमे अत्रि मावाहयेत् :-

ॐ अत्रये तु नमस्तुभ्यं सर्वलोकहितैषिणे ।
तपोरूपाय सत्याय ब्रह्मणेऽमिततेजसे ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अत्रये नमः । अत्रिमावाहयामि स्थापयामि ।। भो अत्रे इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति पश्चिमे अत्रिम् ।। ४७ ।।

तत्पश्चत् ॐ अत्रये मन्त्र से पश्चिम में अत्रि की स्थापना करें ।

ततो वायव्यामरुन्धतामावहयेत् :-

ॐ अरुन्धत्यै नमस्तुभ्यं सर्वसौख्यप्रदायिनि ।
एहि मण्डलमध्ये त्वं नमः पूजां गृहाण मे ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अरुन्धत्यै नमः । अरुन्धतीमावाहयामि स्थापयामि ।। भो अरुन्धति इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति वायव्याम् अरुन्धतीम् ।। ४८ ।।

तदनन्तर ॐ अरुन्धत्यै मन्त्र से वायव्य कोण में अरुन्धती की स्थापना करें ।

मण्डलवाह्ये कृष्णपरिधौ पूर्वादिक्रमेण ऐन्द्र आदि इष्टदेवता स्थापनम्

तत्र पूर्वे ऐन्द्रीमावाहयेत् :-

ॐ इन्द्राणीं गजकुम्भस्थां सहस्रनयनोज्ज्वलाम् ।
नमामि वरदां देवीं सर्वदेवैर्नमस्कृताम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः ऐन्द्रयै नमः । ऐन्द्रीमावाहयामि स्थापयामि ।। भो ऐन्द्रि इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति पूर्वे ऐन्द्रीम् ।। ४९ ।।

तदनन्तर ॐ इन्द्राणी मन्त्र से पूर्व में ऐन्द्री की स्थापना करें ।

तत आग्नेय्यां कौमारीमावाहयेत् :-

ॐ एह्येहि कौमारि विधेहि शान्तिं शक्तिं दधानेऽपि सदानेमध्ये ।
स्कन्धाधिरुढे शिखिपुंगवाभ्यां मातः प्रसादप्रसृतिं प्रयच्छ ।

ॐ भूर्भुवः स्वः कौमार्यै नमः । कौमारीमावाहयामि स्थापयामि ।। भो कौमारि इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति आग्नेय्यां कौमारीम् ।। ५० ।।

तत्पश्चात् ॐ एह्येयेहिकौमारि मन्त्र से अग्नि कोण में कौमारी की स्थापना करें ।

ततो दक्षिणस्यां ब्राह्मीमावाहयेत् :-

ॐ चतुर्मुखीं जगद्धात्रीं हंसारूढां वरप्रदाम् ।
सृष्टिरूपां महाभागां ब्रह्मणीं तां नमाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्राह्मयै नमः । ब्राह्मीमावाहयामि स्थापयामि ।। भो ब्राह्मि इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति दक्षिणेब्राह्मीम् ।। ५१ ।।

तत्पश्चात् ॐ चतुर्मुखी मन्त्र से दक्षिण में ब्राह्मी की स्थापना करें ।

ततो नैर्ऋत्यां वाराहीमावाहयेत् :-

ॐ वाराहरूपिणीं देवीं दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धराम् ।
शुभदां पीतबसनां वाराहीं तां नमाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वाराह्यै नमः । वाराहीमावाहयामि स्थापयामि ।। भो वाराहि इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति नैर्ऋत्यां वाराहीम् ।। ५२ ।।

तदनन्तर ॐ वाराहरूपिणीं मन्त्र से नैऋत्य कोण में वाराही की स्थापना करें ।

ततः पश्चिमे चामुण्डामावाहयेत् :-

ॐ चामुण्डां मुण्डमथनां मुण्डमालोपशोभिताम् ।
अट्टाट्टहासमुदितां नमाम्यात्मविभूतये ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ भूर्भुवः स्वः चामुण्डायै नमः । चामुण्डामावाहयामि स्थापयामि ।। भो चामुण्डे इहागच्छ इह तिष्ठ । इति पश्चिमे चामुण्डाम् ।। ५३ ।।

तत्पश्चात् **ॐ चामुण्डां** मन्त्र से पश्चिम में चामुण्डा की स्थापना करें ।

ततो वायव्यां वैष्णवीमावाहयेत् :-

ॐ शङ्खचक्रगदापद्मधारणीं कृष्णरूपिणीम् ।
स्थितिरूपां खगेन्द्रस्थां वैष्णवीं तां नमाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वैष्णव्यै नमः । वैष्णवीमावाहयामि स्थापयामि ।। भो वैष्णवि इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति वायव्यां वैष्णवीम् ।। ५४ ।।

तदनन्तर **ॐ शङ्ख चक्र गदा पद्म धारिणी** मन्त्र से वायव्य कोण में वैष्णवी की स्थापना करें ।

तत उत्तरस्यां माहेश्वरीमावाहयेत् :-

ॐ वृषारूढ़ां शुभां शुभ्रां त्रिनेत्रां वरदां शिवाम् ।
माहेश्वरी नमाम्यहम् सृष्टिसंहारकारिणीम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः माहेश्वर्यै नमः । माहेश्वरीमावाहयामि स्थापयामि ।। भो माहेश्वरी इहागच्छ इह तिष्ठ ।। इति उत्तरे माहेश्वरीम् ।। ५५ ।।

तत्पश्चात् **ॐ वृषारूढ़ां** मन्त्र से उत्तर में माहेश्वरी की स्थापना करें ।

तत ऐशान्यां वैनायकीमावाहयेत् :-

ॐ चतुर्भुजां त्रिनेत्रां च सर्वाभरणभूषिताम् ।
आवाहयामि देवीशीं पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वैनायक्यै नमः । वैनायकीमावाहयामि स्थापयामि ।। भो वैनायकि इहागच्छ इह तिष्ठ । इति ऐशान्यां वैनायकीम् ।। ५६ ।।

तदनन्तर **ॐ चतुर्भुजं** मन्त्र से ईशान कोण मे वैनायकी की स्थापना करें ।

ततो हस्ते जलं गृहीत्वा । अनेन यथा मिलितोपचारैः कृतेन पूजनेन ब्रह्मादि सर्वतोभद्र मण्डलस्थ देवताः प्रीयन्तांन मम ।।

तब हाथ में जल लेकर सर्वतोभद्र मण्डल के सभी देवताओं की पाद्यादि षोडशोपचार से पूजा करके सभी को नमस्कार करें तथा ''ब्रह्मादि सर्वतो भद्र मण्डलस्थ देवताः प्रीयन्तां न मम'' उच्चारण करें ।

समय कम हो या आयोजन छोटे हों तो लघु सर्वतोभद्रमण्डल से भी काम चलाया जा सकता है ।

लघु-सर्वतोभद्र-मण्डल पूजन

ईश्वर एक है, उसकी शक्तियाँ देव कही जाती हैं । यों शक्तियाँ अनन्त हैं । उनमें से जिन्हें पूजनीय और संग्रहणीय माना गया है उनकी संख्या ३३ है । इनमें भी भेद-प्रभेद हो सकते हैं । इसलिए उन्हें ३३ श्रेणी (कोटि) भी कहा जा सकता है । प्राचीन काल में विशाल भारत की जन संख्या ३३ कोटि (करोड़) थी । सभी नागरिक देव तुल्य जीवन यापन करते थे । इसलिए तेतीस कोटि देवताओं से यहाँ के महान नागरिकों का भी बोध होता है ।

मध्य चौकी पर बीच में प्रधान कलश, एक ओर दीपक दूसरी ओर धातु कलश रखें । बड़े कलश के नीचे त्रिदेव चित्र रखा जाता है । बाकी जो जगह आगे बच जाती है, उसी में ३३ कोष्ठ वाला सर्वतोभद्र मण्डल बना दिया जाता है । रंगीन चावलों को एक विशेष क्रम से रख कर यह मंडल बनाया जाता है । यह क्रम साथ वाले चित्रों में देखा जा सकता है । एक खाना एक देवता का प्रतीक है । कौन खाना किस देवता का प्रतीक है, यह भी चित्र में दिया है ।

प्रत्येक देवता के पूजन का एक एक वेद मन्त्र है । उसे उच्चारण करते हुए उस स्थान पर एक एक चन्दन लगा हुआ पुष्प रखते चलना चाहिए ।

तेतीस देवताओं को तेतीस ईश्वरीय दिव्य शक्तियाँ माननी चाहिए । इनका विवरण इस प्रकार है :- (१) गणेश-विवेक, (२) गौरी-तपश्चर्या, (३) ब्रह्मा-निर्माण, (४) विष्णु-ऐश्वर्य, (५) रुद्र-दमन,(६) गायत्री-ऋतम्भरा प्रज्ञा, (७) सरस्वती-शिक्षा, (८) लक्ष्मी-समृद्धि, (१०) पृथ्वी-क्षमा, (११) अग्नि-तेज, (१२) वायु-गतिशीलता, (१३) इन्द्र-व्यवस्था, (१४) यम-न्याय, (१५) कुबेर-मितव्ययिता, (१६) अश्विनी-आरोग्य, (१७) सूर्य-प्रेरणा, (१८) चन्द्र-शान्ति, (१९) मङ्गल-कल्याण, (२०) बुध-सन्तुलन, (२१) बृहस्पति-अनुशासन, (२२) शुक्र-संयम, (२३) शनि-तितीक्षा, (२४) राहु-संघर्ष, (२५) केतु-साहस, (२६) गङ्गा-

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पवित्रता, (२७) पितृ-दान, (२८) इन्द्राणी-श्रमशीलता, (२९) रुद्राणी-वीरता, (३०) ब्रह्माणी-नियमितता, (३१) अनन्त-धैर्य, (३२) वस्तु, कला, (३३) आकाश-विशालता ।

उपर्युक्त ३३ देवताओं की प्रतिमा, स्वरूप तथा चरित्रों का भी पुराणों में वर्णन मिलता है और ऐसा भी माना जाता है कि देव पूजन से उनकी आत्माओं को आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए आमन्त्रित करते हैं । ईश्वर की शक्तियों या विभूतियों को खण्ड-खण्ड में आवाहन करके उसके समग्र विराट् रूप का ही आह्वान करते हैं । जैसे शरीर के अवयवों की अलग-अलग मालिश की जाय तो भी वह अन्ततः समस्त शरीर की ही मालिश कहलायेगी । इसी प्रकार देव-पूजा में भी ईश्वर की अलग-अलग शक्तियों का स्मरण-पूजन करके भी उसके समग्र रूप का ही पूजन होता है ।

हर देवता को ईश्वर की एक महत्वपूर्ण शक्ति एवं प्रेरणा मानना चाहिए । इन सामर्थ्यों, विशेषताओं एवं विभूतियों को हम हृदयङ्गम करें, उन्हें अपने में बढ़ावें, तो हम दिव्य मानव देव पुरुष बन सकते हैं । तुच्छ को महान् बना सकने वाली इन शक्तियों की महत्ता को समझने और उन्हें अपनाने के लिए मनोभूमि तैयार करने के लिए भी देव पूजन किया जाता है । इन शक्तियों में उपर्युक्त ३३ प्रमुख हैं जिनका लघु सर्वतोभद्र मण्डल में स्थापन पूजन किया जाता है । इन तेतीस शक्तियों का स्मरण, पूजन, ध्यान आदि ही भगवान् का अनेकाङ्गी रूप से पूजन करना है ।

प्रधान वेदी पर अर्थात् सर्वतोभद्र मण्डल पर निम्न मन्त्रों के साथ तेतीस देवताओं का श्रद्धा-भक्तिपूर्वक आवाहन करना चाहिए । प्रत्येक देवता के आवाहन के साथ अक्षत्, पुष्प, सुपाड़ी छोड़ते रहना चाहिए ।

(१) गणेश

ॐ गणानां त्वा गणपति ꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति ꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपति ꣳ हवामहे वसो मम । आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् ।। ॐ गणपतये नमः गणपतिमावाहयामि स्थापयामि पूजियामि ध्यायामि ।।

(२) गौरी

ॐ आयङ्गौः पृश्निरक्रमीदसदन् मातरं पुरः । पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ।। ॐ गौर्यै नमः । गौरीमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।।

(३) ब्रह्मा

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेनऽआवः । स बुध्न्याऽ उपमाऽ अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ।। ॐ ब्रह्मणे नमः । ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।।

(४) विष्णु

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा ।। ॐ विष्णवे नमः। विष्णुमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।।

(५) रुद्र

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यवऽ उतो तऽ इषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः ।। ॐ रुद्राय नमः । रुद्रमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।।

(६) गायत्री

ॐ गायत्री त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पंक्तया सह । बृहत्युष्णिहा ककुप्सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ।। ॐ गायत्र्यै नमः । गायत्रीमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।।

(७) सरस्वती

ॐ पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती यज्ञं वष्टु धियावसुः । सरस्वतीमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।।

(८) लक्ष्मी

ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुं मऽइषाण सर्वलोकं मऽइषाण । ॐ लक्ष्मीमावहयामि स्थापयामि पूजियामि ध्यायामि ।।

(९) दुर्गा

ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दुरितात्यग्निः ।। ॐ दुर्गायै नमः । दुर्गामावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।।

(१०) पृथ्वी

ॐ मही द्यौः पृथिवी च न ऽइमं यज्ञं मिमिक्षताम् । पिपृतां नो भरीमभिः ।। ॐ पृथ्व्यै नमः । पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(११) अग्नि

ॐ त्वं नोऽअग्ने वरुणस्य विद्वान देवस्य हेडोऽ अव यासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् । ॐ अग्नये नमः । अग्निमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(१२) वायु

ॐ आनो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्त्रिणीभिरुप याहि यज्ञम् । वायोऽ अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।। ॐ वायवे नमः । वायुमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(१३) इन्द्र

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र ꣳ हवेहवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रꣳ स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः । ॐ इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(१४) यम

ॐ सुगन्नुपंथां प्रदिशन्नऽएहि ज्योतिष्मध्ये ह्यजरन्नऽआयुः । अपैतु मृत्युभमृतं म ऽआगाद्वै वस्वतोनो ऽ अभयं कृणोतु । ॐ यमाय नमः । यममावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(१५) कुवेर

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वय वै श्रवणाय कुर्महे । स मे कामान्कामकामाय महां । कामेश्वरो वै श्रवणी ददातु । कुवेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ।। ॐ कुवेराय नमःकुवेरमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(१६) अश्विनी कुमार

ॐ अश्विना तेजसा चक्षुः प्राणेन सरस्वती वीर्यम् । वाचेन्द्रो बलेनेन्द्राय दधुरिन्द्रियम् ।।

ॐ अश्विनीकुमाराभ्यां नमः । अश्विनीकुमारमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(१७) सूर्य

ॐ आ कृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यच । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ।। ॐ सूर्याय नमः । सूर्यमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(१८) चन्द्रमा

ॐ इमं देवा ऽअसपत्नꣳ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठचाय महते जानराज्यायेन्द्रःस्यन्द्रियाय । इममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश ऽएष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाꣳ राजा ।। ॐ चन्द्रमसे नमः । चन्द्रमसमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(१९) मङ्गल

ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या ऽअयम् । अपाꣳरेताꣳसि जिन्वति ।। ॐ भौमाय नमः । भौममावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(२०) बुध

ॐ उद बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथामयं च । अस्मिन् सधस्थे ऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ।। ॐ बुधाय नमः । बुधमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(२१) बृहस्पति

ॐ बृहस्पतेऽअति यदर्योऽअर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् । उपयामगृहीतोऽसि बृहस्पतये त्वैष ते योनिर्बृहस्पतये त्वा ।। ॐ बृहस्पतये नमः । बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(२२) शुक्र

ॐ अन्नात्परिस्त्रतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत् क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपान ꣳ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ।।
ॐ शुक्राय नमः । शुक्रमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(२३) शनिश्चर

ॐ शन्नो देवीरभिष्टय ऽआपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्त्रवन्तु नः ।। ॐ शनिश्चराय नमः । शनिश्चरमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(२४) राहु

ॐ कया नश्चित्रऽआभुवदूती सदावृधः सखा । कयाशचिष्ठया वृता । ॐ राहवे नमः । राहुमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(२५) केतु

ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्याऽअपेशसे । समुषद्भिरजायथाः ।। ॐ केतवे नमः । केतुमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(२६) गङ्गा

ॐ पंच नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः । सरस्वती तु पंचधा सो देशेऽभवत्सरित् ।। ॐ गङ्गायै नमः । गङ्गामावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(२७) पितृ

ॐ पितृभ्य स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्य स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः । अक्षन्पितरोऽमीमदन्त पितरोतीतृपन्त पितरः शुन्धध्वम् ।। ॐ पितृभ्यो नमः । पितृनावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(२८) इन्द्राणी

ॐ अदित्यै रास्ना सीन्द्राण्याः उष्णीषः । पूषासि धर्माय दीष्वः ।। ॐ इन्द्राण्यै नमः । इन्द्राणीमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(२९) रुद्राणी

ॐ या ते रुद्र शिवातनूर धोराः पापनाशिनी । तया नस्तन्वा शन्त मया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ।। ॐ रुद्राण्यै नमः । रुद्राणीमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(३०) ब्रह्माणी

ॐ इन्द्रा याहि धियेषितो विप्रजूतः सुतावतः । उप ब्रह्माणि बाघतः ।। ॐ ब्रह्माण्यै नमः । ब्रह्माणीमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(३१) सर्प

ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु । येऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ।। ॐ सर्पेभ्यो नमः । ॐ सर्पानावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(३२) वास्तु

ॐ वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः । यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नोभव द्विपदे शं चतुष्पदे ।। ॐ वास्तुपुरुषाय नमः । वास्तुपुरुषमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

(३३) आकाश

सर्वतोभद्र के मध्य में रखे हुए कलश को प्रतीक मानकर आकाश- अन्तरिक्ष देवता का निम्न मन्त्रों से आवाहन-पूजन आदि करें ।

ॐ या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती । तया यज्ञं मिमिक्षतम् । उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वैष ते योनिर्माध्वीभ्यां त्वा ।

ॐ आकाशाय नमः । आकाशमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि ।।

स्वस्तिवाचन

स्वस्ति-कल्याणकारी, हितकारी के तथा वाचन घोषणा के अर्थों में प्रयुक्त होता है । वाणी से, उपकरणों से स्थूल जगत् में घोषणा होती है । मन्त्रों के माध्यम से सूक्ष्म जगत् में अपनी भावना-सदिच्छा का प्रवाह भेजा जाता है । शत् शक्तियाँ हमारे ईमान, हमारे कल्याणकारी भावों का प्रमाण पाकर अपने अनुग्रह के अनुकूल वातावरण पैदा करें, यह भाव रखें । अनुकूलता दो प्रकार से पैदा होती हैं- (१) अवांछनीयता से बचाव तथा (२) वांछनीयता का योग । यह अधिकार भी देवशक्तियों को सौंपते हुए स्वस्तिवाचन करना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञकर्त्ताओं तथा उपस्थित सभी लोगों को स्वस्तिवाचन के लिए दाहिने हाथ में अक्षत, पुष्प, जल लिया जाय । बांया हाथ नीचे रहे । स्वस्तिवाचन मन्त्र बोलें और सबके कल्याण की भावनायें मन में रखें । मन्त्र पूरे होने पर पूजा सामग्री सबके हाथों से लेकर एक तश्तरी में इकट्ठी कर ली जाय ।

ॐ गणानां त्वा गणपति ꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति ꣳ हवामहे निधिनां त्वा निधिपति ꣳ हवामहे बसोमम आहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम् ।।

- यजु० २३/१९

ॐ स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदां । स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु ।।

- यजु० २४/१९

ॐ पयपृथिव्यां पयऽओषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्षे पयोधाः । पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ।।

- यजु० १८/३६

ॐ विष्णो रराटमसिविष्णोः श्नपत्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्धुवोऽसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा ।।

- यजु० ५/२१

अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवाताऽऽदित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवादेवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ।।

- यजु० १४/२०

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ꣳ शान्ति पृथ्वी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्ति । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधिः ।।

- यजु० ३६/१७

ॐ विश्वानि देवसवितर्दुरितानि परासुव यद्भद्रं तन्न आ सुव ।।

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

रक्षाविधान

जहाँ उत्कृष्ट बनने की, शुभ कार्य करने की आवश्यकता है, वहाँ यह भी आवश्यक है कि दुष्टों की दुष्प्रवृत्ति से सतर्क रहा जाय और उनसे जूझा जाय । दुष्ट प्रायः सज्जनों पर ही आक्रमण करते हैं इसलिए नहीं कि देवतत्व कमजोर होते हैं, वरन् इसलिए कि वे अपने समान ही सबको सज्जन समझते हैं और दुष्टता के घात-प्रतिघातों से सावधान नहीं रहते, संगठित नहीं होते और क्षमा-उदारता के नाम पर इतने ढीले हो जाते हैं कि अनीति से लड़ने का साहस, शौर्य और पराक्रम ही उनमें से चला जाता है । इससे लाभ अनाचारी तत्व उठाते हैं । यज्ञ जैसे सत्कर्मों की अभिवृद्धि से ऐसा वातारण बनता है, जिसकी प्रखरता से असुरता के पैर टिकने ही न पावें । इस आशंका में असुर-प्रकृति के विघ्न सन्तोषी लोग ही ऐसे षड्यन्त्र रचते हैं, जिसके कारण शुभ कर्म सफल न होने पायें ।

इस स्थिति से भी धर्म-परायण व्यक्ति को परिचित रहना चाहिए और संयम-उदारता, सत्य-न्याय जैसे आदर्शों को अपनाने के साथ-साथ ऐसी वैयक्तिक और सामूहिक सामर्थ्य इकट्ठी करनी चाहिए, जिससे दुष्टता को निस्स्त किया जा सके । इसी सतर्कता और तत्परता का नाम रक्षा-विधान है दसों दिशाओं में विघ्नकारी हो सकते हैं । उनकी ओर दृष्टि रखने, उन पर प्रहार करने में तैयारी के रूप में सब दिशाओं में मन्त्र पूरित अक्षत फैंके जाते हैं । भगवान से उन दुष्टों से लड़ने की शक्ति की याचना भी इस क्रिया कृत्य में सम्मिलित है ।

बायें हाथ पर अक्षत रखें, जिस दिशा की रक्षा का मन्त्र बोला जाय उसी ओर अक्षत फैंके ।

ॐ पूर्वे रक्षतु बाराहः आग्नेयां गरुडध्वजः ।
दक्षिणे पद्मनाभस्तु नैऋत्यां मधुसूदनः ।। १ ।।
पश्चिमे चैव गोविन्दो वायव्यां तु जनार्दनः ।
उत्तरे श्रीपतिः रक्षे दैशान्यां हि महेश्वरः ।। २ ।।
ऊर्ध्वं रक्षतु धाता वो ह्यधोऽनन्तश्च रक्षतु ।
अनुक्तमपि यत् स्थानं रक्षत्वीशो ममाद्रिधृक् ।।३।।
अपसर्पन्तु ते भूताः ये भूताः भूमि संस्थिताः ।
ये भूताः विघ्न कर्तारस्ते गच्छन्तु शिवाज्ञया ।। ४ ।।
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम् ।
सर्वेषामविरोधेन यज्ञकर्म समारभे ।। ५ ।।

इसके पश्चात् निम्न मन्त्रों को पढ़ते हुए दिगरक्षण करें :-

स्थानाधिपं नमस्कृत्यग्रहनाथंनिशाकरम् । धरणीगर्भसंभूतं शशिपुत्रं बृहस्पतिम् ।। १ ।। दैत्याचार्यं नमस्कृत्य सूर्य पुत्रं महाग्रहम् । राहुं केतुं नमस्कृत्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञारंभे विशेषतः ।। २ ।। शक्राद्यादेवताः सर्वान्मुनींश्च प्रणमाम्यहम् । गर्गं मुनिं नमस्कृत्य नारदं मुनि सत्तमम् ।।३ ।। वसिष्ठं मुनिशार्दूलं विश्वामित्रं तथैव च । व्यासंमुनिं मनस्कृत्य सर्वशास्त्र विशारदम् ।। ४ ।। विद्याधिका पे मुनय आचार्याश्च तपोधनाः । तान्सर्वान्प्रणमाम्येव यज्ञ रक्षा करान्सदा ।। ५ ।। पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेयां गरुड़ध्वजः । याम्यां रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते ।। ६ ।। वारुण्यां केशवो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः । उत्तरे श्रीधरो रक्षेदीशाने तु गदाधरः ।। ७ ।। ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेदधस्ताच्च त्रिविक्रमः । एवं दश दिशोरक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः ।।८ ।। शङ्खो रक्षेच्च यज्ञाग्रे पृष्ठे खडग्स्तथैव च । वामपार्श्वे गदा रक्षेद्दक्षिणो तु सुदर्शनः ।। ९ ।। ब्राह्मणं माधवो रक्षेदाचार्यं पातु माधवः । अच्युतोऽवतु ऋग्वेदं यजुर्वेद मधोक्षजः ।। १० ।। कृष्णश्च सामगं रक्षेदाथर्विकं च माधवः । उपदेष्टातु यो विप्रस्तं रुद्रोऽवतु सर्वदा ।। ११ ।। यजमानं सपत्नीकं कमलाक्षश्च रक्षतु रक्षाहीनंतु यत्स्थान तत्सर्वं रक्षतां हरिः ।। १२ ।। यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वदा । स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु ।। १३ ।। अपः सर्पन्तु ये भूता ये भूताभूमि संस्थिताः । ये भूता विघ्न कर्तारस्ते गच्छेत शिवाज्ञया ।। १४ ।। अपक्रामन्तुभूता निपिशाचाः सर्वतोदिशम् । सर्वेषामविरोधेन यज्ञ कर्मसमारभे ।। १५ ।।

पंच भू संस्कार

भूमि के पाँच संस्कार करके तब उस पर हवन किया जाता है । जैसे पवित्रीकरण आचमन, प्राणायाम, अघमर्षण और न्यास से शरीर गत पंचभूतों की शुद्धि होने से मनुष्य देव पूजन के योग्य बनता है । उसी प्रकार परिसमूहन, उपलेपन, उल्लेखन, उद्धरण, अभ्युक्षण के पांच संस्कारों से भूमि की शुद्धि होती है । इस प्रकार शुद्ध की हुई भूमि पर ही हवन करना उचित है । इन पाँच भूमि संस्कारों का विधान नीचे दिया जाता है :-

(१) परिसमूहन

आचार्यः कश्चिद्विप्रो वा यजमानानुज्ञया हस्ते जलं गृहीत्वा । अस्मिन्कुण्डे (यजमानानुज्ञया) पंच भू संस्कार पूर्वकम् अग्नि प्रतिष्ठां करिष्ये । इति संकल्प्य दक्षिणहस्ते दर्भपुंजं गृहीत्वोत्थाय दक्षिणत आरभ्योदक संस्थं पश्चिमतः प्रागन्तं त्रिवारं परिसमूहनं कुर्यात् ।। तद्यथा ।। दर्भैः परिसमूह्य परिसमूह्य परिसमूह्य ।। एवं परिसमूहनं विधाय कुंडाद्बहिः पूर्वस्यामीशान्यां वा दर्भत्यागं कुर्यात् ।

आचार्य अथवा कोई ब्राह्मण यजमान के आदेशानुसार हाथ में जल लेकर- **''अस्मिन्कुण्डे पंच भू संस्कार पूर्वकम् अग्नि प्रतिष्ठां करिष्ये ।''** यह संकल्प करें । फिर दाहिने हाथ में कुछ कुश लेकर दक्षिण से पच्छिम की ओर से पूर्व तक उनसे जल छिड़के । **''दर्भैः परिसमूह्य परिसमूह्य परिसमूह्य''** इस प्रकार उच्चारण करते हुए उन कुशाओं को पूर्व या ईशान में छोड़ दे । यह परिसमूहन हुआ ।

यह परिसमूहन क्यों किया जाता है, इसके सम्बन्ध में लिखा है कि-

कृमिकीट पतंगाद्या विचरन्ति महीतले ।
तेषां संरक्षणार्थाय परिसमूहनमुच्यते ।।

पृथ्वी पर कृमि, कीट, पतंग आदि विचरण करते रहते हैं, उनसे रक्षा के लिए परिसमूहन किया जाता है ।

(२) उपलेपनम्

ततो दक्षिण हस्तेन गोमयमादाय पूर्ववत् दक्षिणत् आरभ्योदक्संस्थं पश्चिमतः प्रागन्तं गोमयेनोपलिंपेत् । तद्यथा । गोमयेन उपलिप्य उपलिप्य उपलिप्य । एवं त्रिवारम् उपलेपनं कृत्वा हस्तं प्रक्षाल्य ।

फिर दाहिने हाथ से गोबर लेकर उसे जल से गीला करके पहिले की भाँति दक्षिण से पच्छिम की ओर होते हुए पूर्व तक लीपे । **'गोमयेन उपलिप्य उपलिप्य उपलिप्य'** ऐसा तीन बार कह कर लेपन करे और हाथ धो डाले ।

यह लेपन क्यों किया जाता है, उसको इतिहास से बताया गया है कि-

पुरा शक्रेण वज्रेण हतो वृत्तो महासुरः ।
व्यापिता मेदसा पृथ्वी तदर्थमुपलेपनम् ।।

पूर्व काल में इन्द्र ने बज्र से वृत्रासुर को मारा । उसकी चर्बी से पृथ्वी दूषित हो गई । उसकी शुद्धि के लिए गोबर से पृथ्वी लीपी गई । इस प्रकार की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अशुद्धियों को शुद्ध करने के लिए पृथ्वी का लेपन किया जाता है ।

(३) उल्लेखनम्

दक्षिण हस्तेन स्रुवमादाय पूर्ववद्दक्षिणत आरभ्योदक्संस्थं पश्चिमतः प्रागन्तं स्रुव मूलेन त्रिरुल्लेख कुर्यात् । तद्यथा । स्रुवमूलेन उल्लिख्य उल्लिख्य उल्लिख्य इति ब्रूयात् ।।

दाहिने हाथ में स्रुवा लेकर पहले की भाँति दक्षिण से पच्छिम की ओर से पूर्व तक स्रुवामूल से तीन रेखाऐं खीचें और **'स्रुव मूलेन उल्लिख्य उल्लिख्य उल्लिख्य'** ऐसा कहे ।

स्रुवा के मूल से अथवा खदिर के स्फय से तीन रेखाऐं भी क्रमशः उत्तरोत्तर खींची जाती हैं । उसे उल्लेखन कहते हैं । मिट्टी में छिपी हुई वस्तुओं का प्रकटीकरण हो जाय, कोई कीट-पतंग उसमें न छिपा हो, यह देख लिया जाय तथा तीन रेखाओं से आधिदैविक, आधि भौतिक, आध्यात्मिक तत्वों को पृथ्वी के अन्तराल में जाग्रत कर लिया जाय, यह भी इस उल्लेखन का उद्देश्य है । मानसिक रूप में **स्रुवमूलेन उल्लिख्य उल्लिख्य उल्लिख्य'** यह कहना चाहिए ।

(४) उद्धरणम्

अनामिकांगुष्ठेन पूर्ववत् कुण्डतः पांसूनामुद्धरणं विदग्धात । तद्यथा । अनामिकङ्गुष्ठेन उद्धृत्य उद्धृत्य उद्धृत्य । मन्त्रं त्रिवारं पांसूनामुद्धरणं कृत्वा तान् प्राच्यां क्षिप्त्वा ।

अनामिका उँगली और अँगूठे से पहले की भाँति दक्षिण से पूर्व की ओर रेखाओं को ऊपर की मिट्टी को उठाकर पूर्व दिशा में रखे और मन ही मन **''अनामिकांगुष्ठेन उद्धृत्य उद्धृत्य उद्धृत्य''** यह तीन बार कहे ।

(५) अभ्युक्षणम्

पूर्ववत् न्युब्ज पाणिना जलेन त्रिवारं अभ्युक्षणं कुर्यात् । तद्यथा । उदकेन अभ्युक्ष्य अभ्युक्ष्य अभ्युक्ष्य । इति

फिर पूर्ववत् हाथ से उसी क्रम से जल को तीन बार छिड़के । **''उदकेन अभ्युक्ष्य अभ्युक्ष्य अभ्युक्ष्य''** यह मन ही मन कहे ।

कई बार देव-पूजन के समय ही अग्नि-स्थापना कर ली जाती है, ताकि धीरे-धीरे समिधाओं में अग्नि-प्रज्ज्वलित होने में जितना समय लगे, उतनी देर में देव-पूजा के कार्य से निवृत्ति हो जाय । दूसरी विधि यह है कि देव-पूजन के उपरान्त अग्नि-स्थापन एवं अग्नि-पूजन करके हवन आरम्भ किया जाय । हमें हवन के समय ही अग्नि-स्थापना का विधान अधिक उपयुक्त जँचा है । इसलिए इस पुस्तक में हवन के समय ही अग्नि-स्थापना की विधि लिखी गई है । जो इससे कुछ पूर्व देव-पूजन के समय ही अग्नि-स्थापना में सुविधा देखते हों, वे इसी विधान से उस समय भी स्थापना कर सकते हैं ।

कुण्ड-प्रतिष्ठा एवं मेखला पूजन

यज्ञ कुण्ड, मात्र गड्ढा नहीं है । यज्ञ भगवान की स्थापना के लिए बनाया गया देव-मन्दिर है । इसके लिए उसे मन्त्राभिषिक्त करना चाहिए । कुण्ड गाय के गोबर से लीप कर रखा जाय, ताकि हवन करते समय तक सूख जाय । अग्नि-स्थापना से पूर्व उसे जल से अभिसिंचत करना चाहिए । कुण्ड के बीच स्वस्तिक बनाना चाहिए । उस पर अक्षत्, पुष्प, चन्दन समर्पित करना चाहिए । यह कुण्ड का भीतरी पूजन हुआ ।

बाहर तीन मेखलाएँ होती हैं, जो क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु महेश की हैं । अपना यह यज्ञ धर्मानुष्ठान ब्रह्मा की तरह सत्प्रवृत्तियों का सृजन-कर्ता, विष्णु की तरह सद्भावनाओं का अभिवर्धन-कर्ता और शिव की तरह दुष्ट दुष्प्रवृत्तियों का संहारक हो, ऐसी भावना करनी चाहिए । भौतिक जगत् में इस यज्ञ का प्रभाव आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन, साधन सुविधाओं के अभिवर्धन एवं कष्ट क्लेशों के निराकरण की परिस्थितियाँ उत्पन्न करे, ऐसी भावना करनी चाहिए ।

कुण्ड में ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों देवों की शक्ति का आवाहन करने के लिए, रजोगुणी, सतोगुणी, तमोगुणी शक्तियों का समन्वय करने के लिए कुण्ड की तीन मेखलाओं का पूजन किया जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुण्ड की तीन मेखलाओं में जो ऊपर की सफेद, बीच की लाल और नीचे की काले रंग की पुती होती है, इनमें क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु और महेश की पूजा करनी चाहिए । निम्न मन्त्र में से प्रत्येक के साथ तत्सम्बन्धी देवता का आवाहन-पूजन आदि विधिपूर्वक किया जाना चाहिए ।

प्रथम मेखला (ब्रह्मा, रंग सफेद) का पूजन मन्त्र ।

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरिस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन ऽआवः ।। स बुध्न्याऽ उपमाऽ अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः । ॐ ब्रह्मणे नमः आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।

– यजु० १३/३

मध्य मेखला पूजन मन्त्र (देवता विष्णु, रंग लाल)

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा ।। ॐ विष्णवे नमः आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।।

– यजु० ५/१५

अन्तिम मेखला पूजन मन्त्र (देवता - रुद्र, रंग काला)

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यवऽ उतो तऽ इषवे नमः । वाहुभ्यामुत ते नमः ।। ॐ रुद्राय नमः आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।।

– यजु० १६/१

पंचामृत

गौ का महत्व ब्राह्मण के तुल्य है । उसके भौतिक लाभ भी अनेक हैं । भारत जैसे कृषि प्रधान और छोटी जोतों वाले-आर्थिक विपन्नता से ग्रस्त देश के लिए बैल से उपयुक्त और कोई शक्ति-साधन नहीं । गोबर के रूप में वे सर्वश्रेष्ठ खाद देते हैं । देहाती यातायात के लिए बैल से युक्त वाहनों के अतिरिक्त और किसी का गुजारा नहीं । गाय के दूध में विटामिन ए, फास्फोरस, उत्कृष्ट कैलशियम, प्रोटीन को देखते हुए, समस्त संसार के विचारशील समाज में केवल गाय का दूध ही प्रयुक्त किया जाता है । सुपाच्य तथा शरीर की आवश्यकता-पूर्ण करने की क्षमता उसी में है । भैंस के दूध में चिकनाई भर है । गाय के दूध जैसी विशेषताएँ उसमें नहीं है । इस देश की आय का पाँचवां हिस्सा गोधन से ही प्राप्त होता है । बैल का विकल्प न मशीनें हो सकती हैं और न गाय का स्थान दूसरे दुग्ध पशु ले सकते हैं ।

आत्मिक लाभ असाधारण हैं । तुलसी, आंवला, पीपल, बेल की तरह गाय में सूक्ष्म दिव्यता की - सतोगुण की- मात्रा अत्यधिक है । गोरस हमारे शरीर ही नहीं, मन-मस्तिष्क और अन्तःकरण को भी उत्कृष्टता के तत्वों से भरता है । गोरस केवल उत्तम आहार ही नहीं दिव्य गुण सम्पन्न देव-प्रसाद भी है । उसकी सात्विकता का यज्ञानुष्ठानों में समुचित समावेश होना चाहिए । जहाँ तक सम्भव हो यज्ञ आहुतियों के लिए गो घृत का प्रबन्ध करना चाहिए । न मिलने पर ही दूसरे घृत काम में लाने चाहिए । इसी प्रकार यज्ञ प्रसाद के रूप में पंचामृत को ही उसकी विशेषताओं के कारण उपयोगी मानना चाहिए । सस्ता होने की दृष्टि से भी वह सर्वसुलभ है । उपस्थिति अधिक हो जाने पर जल और शर्करा मिला देने से वह सहज ही बढ़ सकता है । यह सुविधा अन्य किसी प्रसाद में नहीं है । गौरक्षा की दृष्टि से यह नितान्त आवश्यक है कि हमारे धर्मानुष्ठानों में गोरस का महत्व साधारण को विदित होता रहे और उस ओर आज जो उपेक्षा वरती जा रही है, उसका अन्त हो सके । गोरस के उपयोग का प्रचलन करने से ही गौ रक्षा, गौ सम्वर्धन सम्भव हो सकेगा ।

पंचामृत में पाँच वस्तुएँ काम आती हैं- (१) दूध (२) दही (३) घी (४) शक्कर (५) तुलसी पत्र । प्राचीन काल में शहद का बाहुल्य था इस लिए उसे मिलाते थे । आज की परिस्थितियों में शक्कर भी- किसी जमाने के शहद से अनेक गुनी मँहगी है । अब शक्कर से ही काम चलाना पड़ता है । सम्भव हो सके तो पाउडर का उपयोग बिना किये बनने वाली देशी खाण्डसारी को प्राथमिकता देनी चाहिए । गोरस न मिले तो ही भैंस का दूध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान ६.४८

दही लेना चाहिए । तुलसी पत्र प्रायः हर जगह मिल जाते हैं । धर्मानुष्ठानों पर रखने वालों को उसे अपने घरों में स्थापित करना चाहिए ।

दूध अधिक, दही कम, घी बहुत थोड़ा, शक्कर भी आवश्यकतानुसार यह सब अन्दाज से बना लेना चाहिए इनका कोई अनुपात निश्चय नहीं किया जा सकता, तुलसी पत्र के महीन टुकड़े करके डालने चाहिए ताकि कुछ टुकड़े हर किसी के पास जा सकें । जल भी आवश्यकतानुसार मिलाया जा सकता है ।

पंचामृत में प्रयोग होने वाली पाँचों वस्तुओं को मन्त्रोच्चार पूर्वक लेना चाहिए । इससे उनमें भाव शक्ति का, मन्त्र शक्ति का देवत्व भी सम्मिश्रित हो जाता है । पीने के समय का भी मन्त्र है ।

यज्ञ के अन्त में प्रसाद स्वरूप यह पंचामृत ही दिया जाय । दाहिनी हथेली पर लोग लें और पीलें । हाथ चिपचिपे हो जाते हैं, इसलिए पास ही बाल्टी लोटे से हाथ धुलाने और तौलिया हाथ पोंछने के लिए भी रखनी चाहिए ।

पञ्चामृत तैयार करना

पंचामृत की सभी वस्तुएँ अलग-अलग पात्रों में रखी जावें । जिस पात्र में पंचामृत बनाना है, उसमें एक-एक वस्तु क्रमशः मन्त्रोच्चार के साथ डालें ।

पात्र में दूध डालने का मन्त्र

दूध के बराबर धवल और निर्मल कोई पदार्थ नहीं होता है । पंचामृत में दूध का भाग मनुष्य को निर्मल, अन्तर से दुग्धवत् धवल अर्थात् सच्चरित्र बनाने का काम करता है ।

ॐ पयः पृथिव्यां पयः ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ।।

- यजु० १८/३६

दही मिलाने का मन्त्र

दही शीतल तथा गाढ़ा होने से मनुष्य में सूक्ष्म रूप से गम्भीरता, शीतलता अर्थात् सन्तुलन, स्थिरता आदि सद्गुणों को बढ़ता है ।

ॐ दधिक्राव्णो अकारिषि जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ।
सुरभि नो मुखा करत्प्राण आयूꣳषि तारिषत् ।।

- यजु० २३/३२

पञ्चामृत में घृत मिलाने का मन्त्र

घी तरल, स्नेहयुक्त, सुगन्धियुक्त और गम्भीरता प्रदर्शक है । इसके सेवन करने से मनुष्य का व्यवहार नम्र स्नेहपूर्ण, प्रसन्नतादायक और शान्त बनता है । शुभ कार्यों में इसी तरह का व्यवहार अपेक्षित है ।

ॐ घृतं घृतपावानः पिबत वसां वसापावानः । पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रदिशः आदिशो विदिश उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।

- यजु० ६/१९

शहद मिलाने का मन्त्र

मधु या शहद स्वास्थ्यवर्धक, रोग निवारक, शुद्धिकारक, प्राकृतिक पदार्थ होता है । मनुष्य अपने आहार-विहार में प्राकृतिक पदार्थों का अधिकाधिक उपयोग करें, इसी के लिए शहद पञ्चामृत में मिलाया जाता है ।

पंचामृत में मधु (शहद) व शर्करा (खाँड) दोनों को मिलाने का विधान है । प्राचीन समय में शहद का ही विशेष रूप से प्रयोग होता था । पर वर्तमान परिस्थितियों में शुद्ध मधु मिलना कठिन हो गया है । इसलिए थोड़ा शहद और अधिक शर्करा मिलाकर भी काम चलाया जाता है ।

ॐ मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः । माध्वर्नः सन्त्वोषधीः । मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳ रजः । मधुद्यौरस्तु नः पिता । मधुमान्नो वनस्पतिर्मधु मां२ अस्तु सूर्य्यः । माध्वीर्गावो भवन्तु नः।

- यजु० १३/२७.२८.२९

तुलसी-दल मिलाने का मन्त्र

तुलसी शरीर और मन को नीरोग करने वाली अद्भुत बूटी है । उसमें दिव्य तत्वों की अतिशय प्रधानता है । इसलिए उसे पृथ्वी का अमृत माना गया है । पाँच अमृतों में तुलसी भी एक है । इसलिए उसे पंचामृत में सम्मिलित करते हैं ।

या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा ।
मनै नु बभ्रूणामह ꣳ शतं धामानि सप्त च ।।

- यजु० १२/७५

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पंचामृत में अधिकांश वस्तुएँ गोद्रव्य ही होती हैं, इसलिए इसे माता के पय-पान तथा भगवान् के प्रसाद के रूप में श्रद्धा, निष्ठा एवं प्रसन्नता के साथ ग्रहण करना चाहिए । इस भूलोक के प्राणियों को अमरत्व प्रदान करने वाला यही पंचामृत होता है ।

निम्न मन्त्र को बोलते हुए पंचामृत का पान करें ।

ॐ माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्या नाम मृतस्य नाभिः । प्र नु वोचं चिकितेसु जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्टः ।

कुशकण्डिका

यज्ञ में कुशाओं का प्रयोग इतना आवश्यक है कि इस प्रकरण को एक स्वतंत्र विषय ही मान लिया गया है । यज्ञ से एक विशेष प्रकार की शक्ति का उद्भव होता है । इस शक्ति उत्पादन के लिए वही वस्तुऐं आवश्यक होती हैं, जो स्वयं शक्तिवान् हैं एवं शक्ति उत्पादक गुणों, तत्वों एवं सामर्थ्यों से परिपूर्ण हैं । यज्ञ के काष्ठ पात्रों में जो काष्ठ प्रयुक्त होता है, उसमें इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि इस पात्र के लिए किस वृक्ष का उपयोग किया जाय और उस वृक्ष के किस भाग की लकड़ी काम में लाई जाय । इसी प्रकार की आवश्यकताओं में कुशों का उपयोग भी एक महत्वपूर्ण कार्य है ।

यज्ञ आदि देव-पूजा के कार्यों में कुश का उपयोग लगभग अनिवार्य माना गया है ।

कुशेन रहिता यज्ञ विफला कथिता मया ।
उदकेन बिना पूजा बिना दर्भेण या क्रिया ।।

कुशों के उपयोग रहित यज्ञ निष्फल होता है । जल और कुश सभी कार्यों में आवश्यक होते हैं ।

कुशों में एक विशेष प्रकार की विद्युत शक्ति होती है । घन गर्जन और बिजली की तड़कन के समय जो सोम तत्व आकाश से पृथ्वी पर आता है, उसी से कुशा उत्पन्न होती है । उस में सोम तत्त्व की अधिकता रहने से यज्ञाग्नि की उग्रता का शमन होता रहता है । यज्ञाग्नि में धन विद्युत (पॉजेटिव) तत्त्व अधिक होता है, उसका संतुलन ठीक रखने के लिए ऋण विद्युत (निगेटिव) सोम तत्व की आवश्यकता पड़ती है । यह पूर्ति कुशाओं द्वारा होती है । हाथ में कुश की पवित्री का धारण, कुशों का मार्जन, कुश कूर्च का प्रयोग, कुशों का विस्तरण, यज्ञ पात्रों का कुशों से आच्छादन, हवि आज्य आदि में कुश उपयोग आदि के विधान को कुशकण्डिका कहते हैं। अथर्व वेद में कुशों की उत्पत्ति इस प्रकार बताई गई है -

यत् समुद्रो अभ्यक्रन्दत् पर्जन्यो विद्युता सह ।
ततो हिरण्ययो विन्दुस्ततो दर्भो अजायत् ।।

- अथर्व १९/५/३०/५

जिस समय आकाश में सोम तत्व का समुद्र क्षुभित होकर उमड़ता है, घन गर्जन के साथ बिजली चमकती है, उस समय सोमविन्दु गिरती हैं और उन सोम बूदों से कुशा की उत्पत्ति होती है ।

ऐसी ही विशेषताओं के कारण कुशों का उपयोग विधान पूर्वक यज्ञ में किया जाता है । जहाँ कुश उपलब्ध न हों वहाँ उसका प्रतिनिधि दूर्वा (दूब) को भी लिया जा सकता है । यथा:-

कुशस्थाने च दूर्वाः स्युर्मङ्गलस्याभिवर्द्धयः ।

- हेमाद्रौ

कुश के स्थान पर दूब का उपयोग कर लेना भी मंगलीक है ।

कुश कण्डिका की विधि नीचे दी जाती है:-

अत्र वा ब्रह्मावरणं कुर्यात्-

प्रधान देवता पूजन के पश्चात् ब्रह्म-वरण करना चाहिए ।

ततोग्निं प्रदक्षिणीकृत्य पुष्पचन्दनताम्बूल पूगीफल द्रव्यवस्त्राण्यादाय अग्नेर्दक्षिणतो वस्त्रास्तरणं कल्पयित्वा ब्राह्मणं पादप्रक्षालनगन्धमाल्यादि भिरभिपूज्य हस्ते धौतवस्त्रोत्तरीयकमण्डलुभूषणादिकं गृहीत्वा ॐ अद्य कर्त्तव्यामुकहवनकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूप ब्रह्मकर्म कर्त्तुममुकगोत्रममुकशर्माणं ब्राह्मणमेभिर्द्रव्याक्षत पूगीफल वासोभिर्ब्रह्मत्वेन त्वामहं वृणे । इति ब्रह्माणं वृणुयात् ।

यथा क्रम-पूर्व स्थापित अग्नि की प्रदक्षिणा करके अग्नि से दक्षिण दिशा में ब्रह्मा को आसन देकर तथा ब्रह्मा के चरण धोकर गन्ध, पुष्प, माला आदि से उनकी पूजा करके, हाथ में ब्रह्मा की धोती, चादर, कमण्डल, भूषण, पुष्पाक्षत, तांबूल,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुंगीफल सहित लेकर "ॐ अद्य .....त्वामहं वृणे" तक वाक्य पढ़कर ब्रह्मा का वरण करें ।

ततो ब्रह्मा-वृतोऽस्मि ।

तत्पश्चात् ब्रह्मा "वृतोऽस्मि" अर्थात् मैं स्वीकार करता हूँ, ऐसा कहे ।

व्रतेन दीक्षामाप्नोतिं दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ।।

इति प्रतिवचनमुक्त्वाऽग्नेर्दक्षिणतः कल्पितासनोपरि उपविशेत् ।

उसके बाद ब्रह्मा "व्रतेन" इत्यादि मन्त्र से यजमान का मार्जन करे और अग्नि की दक्षिण दिशा में कल्पित अपने आसन पर बैठ जाय ।

ततः प्रणीतापात्रं दारूकाष्ठमयं द्वादशाङ्गुलोच्यं चतुरङ्गुलमध्यखातं पद्माकृतिं पुरतो निधाय जलेनापूर्य कुशैराच्छाद्य ब्रह्मणो मुखमवलोक्य अग्नेरूत्तरतः कुशोपरि निदध्यात् ।।

ब्रह्म वरण के पश्चात् प्रणीता पात्र, जो कि यज्ञ काष्ठ का बना हुआ १२ अंगुल तथा ४ अंगुल गहरा कमल के सदृश बना रहता है, उसे आगे रखकर, जल से भरकर कुशाओं से आच्छादित (ढक) कर तथा ब्रह्मा का मुख देखकरे अग्नि के उत्तर भाग में कुशा के ऊपर रख दें ।

ततो बर्हिषा परिस्तरणम्

उसके बाद परिस्तरण (बिछाने की) विधि कहते हैं:-

एकाशीतिदर्भदलानां चतुर्द्धा भागं कृत्वा यथा एकेन दर्भेण शून्य हस्तो न भवति तथा प्रथमभागमादाय (बर्हि षश्चतुर्थभागमादाय) आग्नेयादीशानान्तम्, द्वितीयभागमादाय ब्रह्मणोऽग्नि पर्यन्तम्, तृतीयभागमादाय नैर्ऋत्याद्वायव्यान्तम्, चतुर्थभागमादाय अग्नितः प्रणीता पर्यन्तं परिस्तरणं कुर्यात् ।

इक्यासी कुशाओं को हाथ में लेकर उनके चार भाग करें (चार भाग करने पर १ शेष बच जायगा । उस एक कुशा से हाथ खाली नहीं करना चाहिए । इसीलिए ८१ कुशा का विधान है) । प्रथम भाग (२० कुशा) लेकर अग्नि कोण से ईशान कोण तक, द्वितीय भाग लेकर ब्रह्मा से अग्नि पर्यन्त, तृतीय भाग लेकर नैऋत्य से वायव्य कोण तक तथा चतुर्थ भाग लेकर अग्नि से प्रणीता पर्यन्त परिस्तरण करें (बिछावें) ।

यज्ञ कुण्ड के चारों ओर कुशाएँ इसलिए बिखेरी जाती हैं, कि बाहर से कीड़े-मकोड़े कुण्ड में न आवें तथा कुशाएँ पवित्र होने से कुण्ड के आस-पास का वातावरण भी शुद्ध और पवित्र होता है ।

निम्न चार मन्त्रों से यज्ञ कुण्ड के चारों ओर क्रमशः पूर्व, दक्षिण, पश्चिम उत्तर दिशाओं में निम्न मन्त्रों में से प्रत्येक के साथ कुशाएँ रक्खें ।

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु । १ ।

पूर्व दिशा में कुशाएँ रक्खें ।

ॐ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभंयावानो विदथेषु जग्मयः । अग्निजिह्वामनवः सूरचक्षसा विश्वे नो देवाऽ अवसागमन्निह । २ ।

दक्षिण दिशा में कुशाएँ रक्खें ।

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्ष भिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः । ३ ।

पश्चिम दिशा में कुशाएँ रक्खें ।

शतमित्नु शरदोऽअन्तिदेवायत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरोभवंति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तौ ।४।

उत्तर दिशा मं कुशाएँ रक्खें ।

ततोऽग्नेरूत्तरतः पश्चिमदिशि पवित्रच्छेदनार्थं कुशत्रयं, पवित्रकरणार्थं साग्रमनन्तर्गर्भं कुशपत्रद्वयं, प्रोक्षणीपात्रम्, आज्यस्थाली, सम्मार्जनकुशाः पञ्च, उपयमनकुशाः सप्त, समिधस्तिस्त्रः प्रादेशमात्राः, स्रुवः खदिरः, आज्यं, षट्पञ्चाशदुत्तरशतद्वयमुष्टयवच्छिन्नं तण्डुलपूर्णपात्रं दक्षिणा, वरो वा पवित्रच्छेदनकुशानां पूर्वपूर्व क्रमेणतान्यासादनीयानि ।

इसके बाद अग्नि से उत्तर-पश्चिम भाग में पवित्र छेदन के लिए तीन कुशा, पवित्र करने के लिए तीन कुशा के बीच के दो पत्र, प्रोक्षणीपात्र घृतपात्र, खीरपात्र, पाँच स्रुवसंमार्जनकुशा, सात उपयमन कुशा, प्रादेश प्रमाण (अंगुष्ठ और तर्जनी के विस्तार को प्रादेश कहते हैं) तीन समिधा, खैर काष्ठ का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बना हुआ स्रुव, घृत तथा ब्राह्मण की दक्षिणा के लिए २५६ मुट्ठी (साढ़े बारह सेर) चावलों से भरा हुआ पूर्ण पात्र तथा विशिष्ट (फल-वस्त्र समन्वित-सुवर्ण गो आदि) दक्षिणा को क्रमशः उत्तरोत्तर क्रम से पूर्व दिशा में रखना चाहिए ।

अथ त्रिभिः कुशैः पवित्रे छित्वा सपवित्रकरेण प्रणीतोदकं त्रिः प्रोक्षणीपात्रे निधाय प्रोक्षणीपात्रं वामहस्ते कृत्वा दक्षिणहस्तानामिकाङ्गुष्ठाभ्यां पवित्रे गृहीत्वा विरूत्पवनम् ।

इसके बाद तीन कुशाओं से दोनों पवित्री (बनाने योग्य) कुशाओं के तीन-तीन खण्ड करके पवित्री बनावें और अनामिका में इस पवित्री को धारण करके प्रणीता पात्र के जल को प्रोक्षणी पात्र में तीन बार छोड़ें । फिर प्रोक्षणी पात्र को बायें हाथ में रख कर दाहिने हाथ के अनामिका तथा अंगुष्ठ से प्रोक्षणी पात्र का जल, उस पवित्री से लेकर तीन बार (शरीर के) ऊपर उछालें ।

ततः प्रोक्षणीपात्रं (आकाशस्थ) प्रणीतोदकेना-पूरयेत् । (भूमौपतति चेत्तदा प्रायश्चितं गोदानम्) ।

तदुपरान्त प्रणीता के जल से (संभाल कर) प्रोक्षणी पात्र को भर देवें (याद रहे जल भरते समय भूमि पर एक बूँद भी जल गिरेगा तो उसके प्रायश्चित्त के लिए गो दान करना पड़ेगा) ।

ततः प्रोक्षणीजलेन यथासादितवस्तुसेचनम् ।
ततोऽग्निप्रणीतयोर्मध्ये प्रोक्षणीपात्रं निदध्यात् ।

फिर प्रोक्षणी पात्र के जल से समीपस्थ यज्ञ सामग्रियों का सिंचन करें । तदुपरान्त अग्नि और प्रणीतापात्र के बीच में प्रोक्षणीपात्र को रख दें ।

आज्यस्थाल्यामाज्यनिर्वापः । चरुपात्रे चरुप्रक्षेपः ।

तदुपरान्त घृतपात्र में घृत रखें और चरुपात्र में चावल छोड़ दें ।

आज्याऽधिश्रयणम् । ततो ज्वलत्तृणमादाय आज्यस्योपरि प्रदक्षिणं भ्रामयित्वा वह्नौ तत्प्रक्षेपः ।।

फिर घृत पात्र को अग्नि पर चढ़ाकर गर्म करके जलते हुए एक तृण (तिनका) को लेकर घृत के ऊपर प्रदक्षिणा क्रम से घुमाकर अग्नि में फेंक देवें ।

ततः स्रुवप्रतपनं कृत्वा सम्मार्जनकुशैः स्रुवसम्मार्जनं मूलेन मूलं, मध्येन मध्यं, अग्रेणाग्रम । पुनः स्रवं प्रतप्य दक्षिणतो निदध्यात् ।।

तदनन्तर स्रुवा को अग्नि में तपाकर (बायें हाथ में लेकर दाहिने हाथ से) सम्मार्जन कुशाओं के मूल (जड़) से स्रुवा के मूल भाग को, तथा सम्मार्जन कुशाओं के मध्य से स्रुवा के मध्य भाग को, एवं सम्मार्जन कुशाओं के अग्रभाग से स्रुवा के अग्रभाग को सम्मार्जन करके पुनः उस स्रुवा को अग्नि में तपा कर दक्षिण भाग में रख देवें ।

तत आज्योत्तारणम्, अवेक्षणम्, अपद्रव्यनिरसनं च ।

तदुत्तर अग्नि पर से घृत पात्र को उतार लें और उसमें देखें, यदि कोई तिनका वगैरह घृत में हो तो उसे निकाल कर साफ कर देवें ।

तत उपयमन कुशानादाय वामहस्ते धृत्वा अग्निपर्युक्षणं कृत्वा उत्तिष्ठन्मनसा प्रजापतिं ध्यात्वा तूष्णीमग्नौ घृताक्ताः समिधस्तिस्रः क्षिपेत् ।

तदनन्तर उपयमन कुशा को बायें हाथ में लेकर जल से अग्नि का सिंचन करके खड़े होते हुए (झुक कर) ब्रह्मा का मन ही मन ध्यान करके घृत में डुबोई हुई तीन समिधाओं को चुपचाप (बिना मन्त्र के) अग्नि में छोड़ दें ।

उपविश्य सपवित्रप्रोक्षण्युदकेनाग्नि पर्युक्ष्य पवित्रे प्रणीतापात्रे निधाय पातित दक्षिणजानुः कुशेन ब्रह्मणान्वारब्धः समिद्धतमेऽग्नौ स्रुवेणाज्याहुतीर्जुहोति।।

पुनः बैठकर प्रोक्षणी पात्र का जल पवित्री से लेकर अग्नि सिंचन करके पवित्री को प्रणीता पात्र पर रख दें और अपने दाहिने जंघे को पृथिवी पर रख कर तथा अपने और ब्रह्मा के बीच में कुशा से संयोग कर प्रज्ज्वलित अग्नि में स्रुवा से घृत की आहुति देवें ।

तत्राधारादारभ्य द्वादशाहुतिषु प्रत्याहुत्यनन्तरं स्रुवस्थितशेषघृतस्य प्रोक्षणीपात्रे प्रक्षेपः । इति कुशकण्डिका विधिः ।

यहाँ आधार से लेकर द्वादश (बारह) आहुति पर्यन्त स्रुवा में बचे हुए घृत शेष को प्रोक्षणीपात्र में छोड़ देवें । इति ।।

प्रोक्षण

यज्ञ कार्य में आने वाली सभी वस्तुओं की पवित्रता एवं शुद्धि के लिए प्रोक्षण क्रिया की जाती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । शुद्ध एवं पवित्र वस्तुएँ ही यज्ञीय कार्य की सफलता के लिए उपयुक्त होती हैं ।

यज्ञ कुण्ड के आस-पास और यज्ञ कार्य में प्रयुक्त होने वाली सभी वस्तुओं पर "**आपोहिष्ठा मयो भुव**" मन्त्र से जल का अभिषिञ्चन करें । किसी पात्र में जल लेकर उसे आमृपल्लवों या कुशाओं से छिड़कना चाहिए । इसके पश्चात् अग्नि स्थापन करना चाहिए ।

यज्ञ कुण्ड में स्थापित की जाने वाली अग्नि सामान्य अग्नि नहीं होती, वरन् वह भगवान् के प्रतिनिधि के रूप में आकर यज्ञीय पदार्थों को ग्रहण करती है । इसलिए भगवान् के आवाहन के रूप में ही अग्नि की स्थापना कुण्ड में की जाती है ।

अग्नि-स्थापना एवं पूजन

अब अग्नि स्थापन का विधान लिखते हैं -

ततः कुण्डमध्ये 'ॐ रं' इति वह्निबीजं लिखेत् । कुण्ड के बीच में 'ॐ रं' इस अग्नि बीज मन्त्र को लिखें ।

ततोऽग्निं स्थापयेत् । बहुपशोर्वैश्यस्य गृहात् श्रोत्रियागारात् सूर्यकान्तसम्भूतात् स्वकीय गृहाद्वा सुवासिन्या स्त्रिया आनीतं निर्धूमम् अन्य ताम्रादि पात्रेणाच्छादितम् अग्निं कुण्डस्य अग्नियां दिशिनिधाय आच्छादितं पात्रम् उद्घाट्य 'हुं फट्' इति क्रव्यादांशम् अग्निं नैर्ऋत्यां दिशि परित्यज्य अग्निं कुण्डस्य उपरि त्रिवारं भ्रामयित्वा अग्निं स्थापयेत् ।

अग्नि को बहुत पशुओं वाले वैश्य के यहाँ से, श्रोतिय ब्राह्मण के घर से, सूर्यकान्त (आतिशी शीशे) से पैदा करके, अपने घर से, धूम रहित अग्नि को तांबे से ढक कर लावे । उसे अग्नि कुण्ड की आग्नेय दिशा में रखकर ढकने को उठावे । '**हुं फट**' यह उच्चारण करके कृव्यादांश को नैऋत्य में छोड़े । फिर अग्नि कुण्ड के ऊपर उसे तीन वार फिरा कर अग्नि की स्थापना करें ।

अग्नि-स्थापना का मन्त्र

निम्न मन्त्र बोलते हुये अग्नि स्थापना करनी चाहिए । अग्नि स्थापना से पूर्व कुण्ड में समिधाएँ इस कुशलता से चुननी चाहिए कि अग्नि प्रदीप्त होने में बाधा न पड़े । अग्नि के ऊपर पतली सूखी समिधाएँ रखी जायें ताकि अग्नि का प्रवेश जल्दी हो सके । एक चम्मच में कपूर अथवा घी में भीगी हुई रुई की मोटी बत्ती रखी जाय, उसमें अग्नि जलाकर तब स्थापित किया जाय । ऊपर पतली लकड़ी लगाने से ही अग्नि प्रवेश में सुविधा होती है । अग्नि स्थापना के पश्चात् उसका विधिवत् पूजन करना चाहिए । मन्त्रः-

ॐ भूर्भुवः स्वद्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा ।

तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यादधे । अग्निं दूतं पुरोदधे । हव्यवाहमुपब्रुवे । देवाँऽआसादयादिह । ॐ अग्नये नमः । अग्निमावाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि ।

- यजु० ३/५, २२/१७

तदुपरान्त गन्ध आदि से अग्नि देवता की पूजा करें ।

स्थापना-विधि

आत्माभिमुखं स्थापयेत् तद्रक्षार्थं किञ्चन्नियुज्याग्नि पात्रेऽक्षतादि प्रक्षेपः ।

उपरोक्त मन्त्र 'ॐ अग्नि' को पढ़कर अग्नि पात्र को अपनी तरफ घुमाकर अग्नि स्थापन करें और अग्नि प्रज्ज्वलन के लिए हवन की लकड़ी उस पर धर दें तथा अग्निपात्र में अक्षतादि रख दें ।

अग्नि-आवाहन तथा पूजन

केवल स्थूल अग्नि में सामग्री का जलाना ही हवन नहीं हो जाता । हवन से पूर्व स्थूल अग्नि में अग्नि देवता के दिव्य प्राण की प्रतिष्ठा करके तब उसमें जो आहुति छोड़ी जाती है, वही देवताओं तक पहुँचती है और दिव्य उद्देश्य पूरा करती है । इसलिए हवन कुण्ड में अग्नि का बीज मन्त्र '**ॐ रं**' लिख कर कुण्ड में अग्नि की प्रतिष्ठा करें । फिर अग्नि देव का आवाहन मन्त्र पढ़ें और पुष्पादि से पूजन करे । इसी प्रकार समिधाओं का जल से अभिसिंचन, मार्जन, पूजन करके ही उनमें पवित्रता एवं सोमतत्व की स्थापना की भावना करें । इस प्रकार भावना पूर्वक किये हुए यज्ञ से ही दैवी उद्देश्यों की पूर्ति होती है । भावना रहित होम तो आग में सुगन्धित वस्तुऐं जलाकर कुछ थोड़े से क्षेत्र की वायु को सुवासित कर देना मात्र है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उत्पत्तिमुद्रां कृत्वा चाऽऽवाहयेदग्निपुरुषम् ।

तदुत्तर उत्पत्ति मुद्रा करके (निम्न लिखित मन्त्र पढ़कर) अग्नि देवता का आवाहन करें । मन्त्रः-

रुद्रतेजः समुद्भूतं द्विमूर्धानं द्विनासिकम् ।।
स्रुचं स्रुवं च शक्तिं चाप्यक्षमालां चदक्षिणैः ।
तोमरं व्यजनं चैव घृतपात्रं तु वामकैः ।।
विभ्रन्तं सप्तभिर्हस्तैर्द्विमुखं सप्तजिह्वकम् ।
दक्षिणं च चतुर्जिह्वं त्रिजिह्वं चोत्तरं मुखम् ।।
कोटिद्वादशमूर्त्याख्यं द्विपञ्चाशत्कलायुतम् ।
स्वाहास्वधावषट्कारैरङ्कितं मेषवाहनम् ।
रक्तमाल्याम्बरं रक्तं रक्तपद्मासनस्थितम् ।
रौद्रं वागीश्वरीरूपं वह्निमावाहयाम्यहम् ।।
त्वं मुखं सर्वदेवानां सप्तार्चिर्मितद्युते ।
आगच्छ भगवन्नग्ने यज्ञेस्मिन्सन्निधोभव ।।
इति आवाहन मन्त्रः ।।

अग्ने वैश्वानर! इहागच्छ इह तिष्ठ । इत्यावाह्य पञ्चोपचारैः पूजयेत् ।

तब '**अग्ने वैश्वानर**' इत्यादि वाक्य से उसकी स्थापना करके पंचोपचार से पूजन करें ।

ततोऽग्नेः सप्तजिह्वानां पूजा

कनकायै नमः । रक्तायै नमः । कृष्णायै नमः । उद्गारिण्यै नमः । उत्तरमुखे सुप्रभायै नमः । बहुरूपायै नमः । अतिरिक्तायै नमः ।

ऊपर लिखे हुए '**कनकायै नमः**' इस क्रम से अग्नि की सातों नामों से पूजा करें । यह अग्नि देव की सात जिह्वायें हैं, इसलिए अग्नि का नाम ''सप्तजिह्व'' पड़ा ।

तदनन्तरं सर्वसमिद्वनस्पतीनां पूजनञ्चेति ।।

इसके बाद समित्काष्ठों और वनस्पतियों का पूजन करें । अग्नि स्थापन, अग्नि पूजन, समिधा पूजन के पश्चात् सभी लोग मधुर स्वर से गायत्री स्तवन का पाठ करें । इसी बीच में अग्नि भी भली प्रकार कुण्ड में प्रज्ज्वलित हो जाती है ।

स्तवन पाठ

सविता गायत्री का अधिष्ठाता देवता है । इसलिए यज्ञ कार्य में सविता भगवान् की स्तुति प्रार्थना आदि के रूप में गायत्री स्तवन किया जाता है ।

गायत्री स्तवन के १२ मन्त्रों में इस महामन्त्र के अधिष्ठाता यज्ञपुरुष सवितादेव की प्रार्थना है । इसे उपस्थित अग्नि का अभिवन्दन, अभिनन्दन भी कहते हैं । सभी लोग हाथ जोड़कर स्तवन की मूल भावना को हृदयंगम करें । हर टेक में कहा गया है । 'वह वरण करने योग्य सविता हमें पवित्र करे ।' दिव्य पवित्रता के संचार की पुलकन का अनुभव करते चलें ।

यन्मंडलं दीप्तिकरं विशालम्
रत्नप्रभं तीव्रमनादिरूपम् ।
दारिद्र्य दुःखक्षयकारणं च,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।। १ ।।
यन्मंडलं देवगणैः सुपूजितम्
विप्रैःस्तुतं मानवमुक्तिकोविदम् ।
तं देवदेवं प्रणमामि भर्गं,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।। २ ।।
यन्मंडलं ज्ञानघनंत्वगम्यं
त्रैलोक्य पूज्यं त्रिगुणात्मरूपप् ।
समस्त तेजोमय दिव्य रूपं
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।। ३ ।।
यन्मण्डलं गूढ़मति प्रबोधम्,
धर्मस्य वृद्धिं कुरुते जनानाम् ।
यत् सर्वपापक्षय कारणं च,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।। ४।।
यन्मण्डलं व्याधि विनाशदक्षम्,
यदृग् यजुः सामसु सम्प्रगीतम् ।
प्रकाशितं ये न च भूर्भवः स्वः ,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।। ५ ।।
यन्मण्डलं वेदविदो वदन्ति ,
गायन्ति यच्चारण सिद्धसङ्घाः ।
यद्योगिनो योगजुषां च सङ्घाः,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।। ६ ।।
यन्मण्डलं सर्व जनेषु पूजितं ,
ज्योतिश्च कुर्यादिह मर्त्यलोके ।
यत्काल कालादिमनादि रूपम् ,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।। ७ ।।
यन्मण्डलं विष्णुचतुर्मुखास्य,
यदक्षरं पापहरं जनानाम् ।
यत्कालकल्पक्षयकारणं च,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।। ८ ।।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यन्मण्डलं विश्वसृजां प्रसिद्धं,
उत्पत्तिरक्षाप्रलयप्रगल्भम् ।
यस्मिन् जगत्संहरतेऽखिलं च,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।। ९ ।।
यन्मण्डलं सर्वगतस्य विष्णोः,
आत परंधामं विशुद्ध तत्वम् ।
सूक्ष्मान्तरैर्योगपथानुगम्यं ,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।१० ।।
यन्मण्डलं ब्रह्मविदो वदन्ति,
गायन्ति यच्चारण सिद्धसंघाः ।
यन्मण्डलं वेदविदः स्मरन्ति,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्म् ।।११।।
यन्मण्डलं वेद विदोपगीतं,
यद्योगिनां योगपथानुगम्यम् ।
तत्सर्ववेदं प्रणमामि दिव्यं
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।१२।।

अग्नि प्रदीपन

जलती हुई दीप्त अग्नि में ही आहुति दी जाती है । पंखे से हवा करके समिधाओं में सुलगती हुई अग्नि को प्रदीप्त करते हैं । धुएँ वाली अधजली आग में आहुतियाँ नहीं दी जाती ।

जीवन दीप्तिमान, ज्वलनशील, प्रचण्ड प्रखर और प्रकाशमान जिया जाना चाहिए, चाहे थोड़े ही दिन का क्यों न हो । धुआँ निकालती हुई आग एक वर्ष जले इस की अपेक्षा एक क्षण का प्रकाशयुक्त ज्वलन अच्छा । अपनी प्रसुप्त शक्तियों को जाग्रत करने की प्रेरणा इस अग्नि प्रदीपन में है ।

गायत्री स्तवन करके समाप्त होने पर निम्न मन्त्रों से अग्नि को पंखा करके अथवा कर्पूर आदि की सहायता से भली प्रकार प्रज्वलित कर लेना चाहिए ।

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टा पूर्ते स ꣳ सृजेथामयं च; अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ।

-यजु १५/५४, १८/६

समिधाधान

यज्ञ पुरुष अग्निदेव के प्रकट होने पर पलाशादि की पतली छोटी लगभग आठ-आठ अंगुल की चार समिधाएँ घी में डुबोकर एक-एक करके चार मन्त्रों के साथ चार बार में चढ़ाई जायें ।

यह चार समिधाएँ चार तथ्यों को अग्निदेव की साक्षी में स्मरण करने के लिए चढ़ाई जाती हैं । (१) ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ व संन्यास की व्यवस्था को पूर्ण करना । (२) धर्म, अर्थ, मोक्ष के जीवन लाभ प्राप्त करा सकने वाला जीवनक्रम अपनाना । (३) साधना, स्वाध्याय, संयम, सेवा इन चारों का अवलम्बन । (४) शरीर बल, मनोबल, आत्मबल, ब्रह्मबल इन चारों विभूतियों के लिए प्रबल-पुरुषार्थ । इन चारों उपलब्धियों को यज्ञ-रूप बनाना, यज्ञ के लिए समर्पित करना, चार समिधाओं का प्रयोजन है । इस लक्ष्य को चार समिधाओं द्वारा स्मृतिपटल पर अंकित किया जाता है । स्नेहसिक्त, चिकना, लचीला, सरल अपना व्यक्तित्व हो, यह प्रेरणा प्राप्त करने के लिए स्नेह घृत में डुबोकर चार समिधाएँ अर्पण की जाती हैं । भावना की जाय कि घृतयुक्त समिधाओं से जिस प्रकार अग्नि प्रदीप्त होती है, उसी प्रकार उपरोक्त क्षमताएँ अपने संकल्प और देव अनुग्रह के संयोग से साधकों को प्राप्त हो रही हैं ।

समिधाधान वह करता है, जो घी की आहुति देने के लिए मध्य में बैठता है । जल-प्रसेचन तथा आज्याहुति की सात घृत आहुति भी वही देता है ।

१- ॐ अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व । चेद् वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसे नान्नाद्येन समेधय, स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम ।

- आश्व गृ० १/१०/१२

२- ॐ समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । आस्मिन हव्या जुहोतेन स्वाहा । इदमग्नये इदं न मम ।।

३- ॐ सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्र जुहोतन । अग्नये जातवेदसे स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

४- ॐ तत्वा सदिभिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि । बृहच्छोचा यविष्ठय स्वाहा । इदमग्नये अंगिरसे इदं न मम ।।

- यजु० ३/१-३

जल-प्रसेचन

अग्नि और जल का युग्म है । यज्ञ अग्नि और गायत्री जल है । इन्हें ज्ञान और कर्म भी कह सकते हैं । इस युग्म को- (१) तेजस्विता-मधुरता (२) पुरुषार्थ-सन्तोष (३) उपार्जन-त्याग (४) क्रान्ति-शान्ति भी कह सकते हैं ।

प्रोक्षणी पात्र (लकड़ी का बिना हत्थे वाला चम्मच जैसा उपकरण) में पानी लेकर निम्न मन्त्रों से वेदी के चारों दिशाओं में डालें । भावना करें कि अग्नि के चारों ओर शीतलता का घेरा बना रहे । शक्ति प्रयोग के परिणाम शान्तिदायी हों ।

ॐ अदितेऽनुमन्यस्व ।। (इति पूर्वे)
ॐ अनुमतेऽनुमन्यस्व ।। (इति पश्चिमे)
ॐ सरस्वत्यऽनुमन्यस्व ।। (इति उत्तरे)

- गोभिल गृ० १/३/१-३

ॐ देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिम् भगाय दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केत नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ।। (दक्षिण सहित चारों ओर)

- यजु० ११/७

आज्याहुतिः

सर्वप्रथम सात मन्त्रों से सात आहुतियां केवल घृत की दी जाती हैं । हवन सामग्री इन आहुतियों के साथ नहीं होमी जाती । घी पिघला हुआ रहे । स्रुवा को घी में डुबाने के बाद उसका पैंदा घृत पात्र के किनारे से पोंछ लेना चाहिए, ताकि घी जमीन पर न टपके । स्वाहा उच्चारण के साथ ही आहुति दी जाय । स्रुवा लौटाते समय घृत पात्र के समीप ही रखे हुए, जल भरे प्रणीता पात्र में बचे हुए घृत की एक बूँद टपका देनी चाहिए ।

घृत का दूसरा नाम स्नेह है । स्नेह अर्थात् प्रेम, सहानुभूति, सेवा, संवेदना, दया, ममता, आत्मीयता, करुणा, उदारता, वात्सल्य जैसे सद्गुण इस प्रेम-अभिव्यक्ति के साथ जुड़े हुए हैं । निःस्वार्थ भाव से उच्च आदर्शों के साथ साधना सम्पन्न की जाती है उसे दिव्य प्रेम कहते हैं । यह दिव्य प्रेम, स्नेह, घृत, यदि यज्ञ-परमार्थ के साथ जोड़ दिया जाय तो वह देवताओं को प्रसन्न करने वाला बन जाता है । वही शिक्षण इन सात घृत आहुतियों में है । सच्चे प्रेम पात्र सात ही हैं । इन सातों को ईश्वर रूपी सूर्य की सात किरणें कह सकते हैं । यही ब्रह्म आदित्य के सात अश्व हैं । (१) प्रजा-पति-परमेश्वर (२) इन्द्र-आत्मा (३) अग्नि-वैभव (४) सो-शान्ति (५) भूः-शरीर (६) भुवः-मन (७) स्वः- अन्तःकरण । इन सात देवताओं को सच्चे मन से प्यार करना चाहिए, अर्थात् इनके परिष्कार, अभिवर्धन के लिए सतत् प्रयत्न करना चाहिए । यही सब देवताओं को दी गई सात आहुतियों का प्रयोजन है । इसे प्रायश्चित्त होम भी कहते हैं ।

१- ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये इदं न मम ।।
२- ॐ इन्द्राय स्वाहा । इदमिन्द्राय इदं न मम ।।
३- ॐ अग्नये स्वाहा । इदमग्नये इदं न मम ।।
४- ॐ सोमाय स्वाहा । इदं सोमाय इदं न मम ।।
५- ॐ भूः स्वाहा । इदमग्नये इदं न मम ।।
६- ॐ भुवः स्वाहा । इदं वायवे इदं न मम ।।
७- ॐ स्वः स्वाहा । इदं सूर्याय इदं न मम ।।

एता महा व्याहृतयः । यथा बाणप्रहाराणां कवचं वारकं भवेत् । तद्वद्दैवोपघातान शान्तिर्भवति वारिका ।। शांतिरस्तु, पुष्टिरस्तु, तुष्टिरस्तु, वृद्धिरस्तु, यत्पापं तत्प्रतिहतमस्तु । द्विपदे चतुष्पदे सुशांतिर्भवतु ।। इति प्रायश्चित्तहोमः ।।

पहले मन ही मन '**ॐ प्रजापतये स्वाहा**' इत्यादि मन्त्र पढ़कर यथाक्रम से महा व्याहृति नामक हवन करें । तदनन्तर "**यथा बाणप्रहाराणां**" इत्यादि (जैसे बाण के प्रहार को रोकने वाला कवच है, वैसे ही दैवघात को रोकने वाली शांति है) मन्त्र को पढ़कर यजमान के ऊपर जल छिड़क कर मार्जन करें और '**शान्तिरस्तु**' इत्यादि मन्त्र पढ़ें ।। इति ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पञ्चवारुणी होमः

ॐ त्वन्नोऽअग्ने व्वरुणस्यव्विद्वान्देवस्य हेडोऽ-अवयासिसीष्ठाः । यजिष्ठोव्वह्नितमः शाशुचानो व्विश्वाद्विषा सिप्रमुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम । ॐ सत्वन्नोऽग्रेवमो भवोती नेदिष्ठोऽअस्याऽउषसो व्युष्टौ । अवयक्ष्वनो व्वरुणꣳ रराणोव्वीहिमृडीकꣳ सुहवोनऽएधि स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम । ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यन-भिशस्तिपाश्च सत्वमयाऽसि । अयानो यज्ञं वहास्य यानोधेहि भेषजमित्व स्वाहा इदमग्नये न मम । ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रंयज्ञियाः पाशाव्विताता महान्तः । तेभिर्नोऽद्य सवितोत विष्णुर्व्विश्वे मुंचन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा, इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम । ॐ उदुत्तमं व्वरुण पाशमस्मदवाधमंव्विमध्यम ऽश्रथाय । अथाव्वयमादित्यव्व्रते तवानागसोऽअदितयेस्याम स्वाहा, इदं वरुणायादित्यायादितये न मम । अत्रोदकस्पर्शः । इति पञ्चवारुणीहोमः ॥

अब 'ॐ त्वन्नो अग्ने' इत्यादि मन्त्र पढ़कर यथाक्रम से हवन कर अन्त में जल स्पर्श (आचमन) करें ॥ इति ॥

नवग्रहाणां होमः

तत्रादौ नवग्रहाणां समिधः । अर्कः पलाशो खदिरो ह्यपामार्गोऽथपिप्पलः । उदुम्बरः शमी दूर्वाः कुशाश्च समिधः क्रमात् ॥ ततो घृताक्ताः समिधो जुहुयात् । ॐ आकृष्णेन राजसाव्वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवोयाति भुवनानि पश्यन् स्वाहा, इदं सूर्याय न मम । ॐ इमं देवाऽअसपत्नꣳ सुवध्वंमहते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इममुष्य पुत्रमस्यै व्विशएष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजा स्वाहा, इदं चन्द्राय न मम । ॐ अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् । अपा रेता ऽसि जिन्वति स्वाहा, इदं मङ्गलाय न मम । ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्ते स ऽसृजेथामयञ्च । अस्मिन्त्सधस्थेऽध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत स्वाहा, इदं बुधाय न मम ॥ ॐ वृहस्पतेऽअति यदर्योऽअर्हाद्द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवसऽऋत प्रजाततदस्मासुद्रविणं धेहि चित्रꣳ स्वाहा, इदं वृहस्पतये न मम । ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसम्ब्रह्मणाव्यपिवत्क्षत्रम्पयः सोमम्प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियंव्विपानꣳ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोऽमृतम्मधु स्वाहा, इदं शुक्राय न मम ।

ॐ शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये । शंय्योरभिस्त्रवन्तु नः स्वाहा, इदं शनैश्चराय न मम । ॐ कयानश्चित्रऽआभुवदूती सदावृधः सखा । कयाशचिष्ठयावृता स्वाहा, इदं राहवे न मम । ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्याऽअपेशसे । समुषद्भिरजायथाः स्वाहा, इदं केतवे न मम । इति नवग्रहाणां होमः ॥

तदनन्तर मदार, पलाश, खैर, चिचिड़ी, पीपर, गूलर, शमी, दूर्वा तथा कुशा ये, यथाक्रम से नवग्रहों के समिधा कहे गये हैं । यथाक्रम से अर्थात् पहले मदार की समिधा लेकर घी में डुबो कर 'ॐ आकृष्णेन' इत्यादि मन्त्र से सूर्य का हवन करें । पलाश की समिधा लेकर 'ॐ इमं देवा' इत्यादि मन्त्र से चन्द्रमा का हवन करें । खैर की समिधा लेकर 'ॐ अग्नि मूर्द्धा' इत्यादि मन्त्र से मंगल का हवन करें । चिचिड़ी की समिधा लेकर 'ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने' इत्यादि मन्त्र से बुध का हवन करें । पीपर की समिधा लेकर 'ॐ वृहस्पतेऽअति' इत्यादि मन्त्र से वृहस्पति का हवन करें । गूलर की समिधा लेकर 'ॐ अन्नात्परिस्रुतो' इत्यादि मन्त्र से शुक्र का हवन करें । शमी की समिधा लेकर 'ॐ शन्नोदेवी' इत्यादि मन्त्र से शनिश्चर का हवन करें । दूर्वा की समिधा लेकर 'कयानश्चित्र' इत्यादि मन्त्र से राहु का हवन करें । कुशा की समिधा लेकर 'ॐ केतुं' इत्यादि मन्त्र से केतु का हवन करें ॥ इति ॥

नवग्रहाऽधिदेवता होमः

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगंधिम्पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव वन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतत्तात्स्वाहा, इदं त्र्यम्बकाय न मम । ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्याव्वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौव्यात्तम । इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्वलोकम्मऽइषाण स्वाहा, इदमुमायै न मम । ॐ यदक्रन्दः प्रथमं जायमानऽउद्यन्त्समुद्रादुतवा पुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहूऽउपस्तुत्यं महिजातं ते अर्वन् स्वाहा, इदं स्कन्दाय न मम । ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

श्नप्वेस्थो व्विष्णोः स्यूरसि व्विष्णोर्ध्रुवोऽसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा स्वाहा, इदं विष्णवे न मम । ॐ ब्रह्मजज्ञानं प्रथम पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोव्वेनऽआवः स बुध्न्याऽउपमाऽअस्य व्विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च व्विवः स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम । ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳहवे हवेसुहवे ꣳशूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रँ स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः स्वाहा । इदमिन्द्राय न मम । ॐ असि यमोऽअस्यादित्योऽअर्वन्नसि त्रितो गुह्येनव्व्रतेन । असि सोमेन समया व्विपृक्तऽआहुस्ते त्रीणि दिवि बन्धनानि स्वाहा, इदं यमाय न मम । अत्रोदकस्पर्शः । ॐ कार्षिरसि समुद्रस्यत्वाक्षित्याऽउन्नयामि । समापोऽअद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः स्वाहा, इदं कालाय न मम । अत्राप्युदकस्पर्शः । ॐ इन्धानास्त्वा शत ꣳहिमाद्यमन्त ꣳसमिधीमहि । वयस्वन्तौ वयस्कृतँ सहस्वन्तः सहस्कृतम् । अग्ने सपत्नदम्भव नम दब्धासोऽदाभ्यम् । चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय स्वाहा, इदं चित्रगुप्ताय न मम । इति नवग्रहाधिदेवानां होमः ।।

इसके बाद 'ॐ त्र्यम्बकं' इत्यादि मन्त्र से त्र्यम्बक (महादेव जी) के लिए हवन करें । 'ॐ श्रीश्चते' आदि मन्त्र से उमादेवी (पार्वती) के निमित्त हवन करें । 'ॐ यदक्रन्द' आदि मन्त्र से स्कन्द (षडानन) के निमित्त हवन करें । 'ॐ विष्णो०' आदि मन्त्र से विष्णु भगवान के लिए हवन करें । 'ॐ ब्रह्मज० मन्त्र से ब्रह्मा के लिए हवन करें । 'ॐ त्रातार०' आदि मन्त्र से इन्द्र के लिए हवन करें । 'ॐ असि०' मन्त्र से यम के लिए हवन करें । यहाँ जल का स्पर्श करना चाहिए । 'ॐ कार्षिरसि' मन्त्र से काल के लिए हवन करें । यहाँ भी जल स्पर्श करें । 'ॐ इन्धात्' मन्त्र से चित्रगुप्त के लिए हवन करें ।। इति ।।

नवग्रहप्रत्यधिदेवताना होमः

ॐ अग्निदूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रु वे । देवांऽऽआसादयादिह स्वाहा, इदमग्नये न मम । ॐ अप्स्वन्तरमृतमप्सु वेषजमपामुत प्रशस्तिष्वश्वा भवत व्याजिनः । देवीरापो यो व ऊर्म्मिः प्रमूर्ति ककुद्मान्वाजसास्तेनायं बाज ꣳसेत् स्वाहा, इदमद्भ्य न मम । ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृपरा निवेशिनी । यच्छानः शर्म सप्रथाः स्वाहा, इदं पृथिव्यै न मम । ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमेत्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳ सुरे स्वाहा, इदं विष्णवे न मम । ॐ सजोपाऽइन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमम्पिव वृत्रहा शूर विद्वान् । जहि शत्रुꣳरपमृधो नुदरबाधाभयं कृणुहि व्विश्वतो नः स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम । ॐ आदित्यै रास्नासीन्द्राण्या उष्णीषः । षूपासि धर्मायदीष्व स्वाहा, इदमिन्द्राण्यै न मम । ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वारूपाणि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्त-न्नोऽअस्तु व्वयꣳस्याम पतयो रयीणा ꣳस्वाहा, इदं प्रजापत्ये न मम । ॐ नमोऽस्तु सर्प्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु । येऽअन्तरिक्षे दिवितेभ्यः सर्वेभ्यो नमः स्वाहा, इदं सर्प्पेभ्यः न मम । ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो व्वेन आवः । स बुध्न्या उपमाऽअस्य व्विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च व्विवः स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम । इति नवग्रहप्रत्यधिदेवतानां होमः ।।

अब नवग्रहों के प्रत्यधिदेवताओं के लिये निम्न लिखित मन्त्रों से हवन करें । 'ॐ अग्निदूतं' मन्त्र से अग्नि के लिए हवन करें । 'ॐ अप्स्वन्तर' मन्त्र से जल के लिए हवन करें । 'ॐ स्योना प्रथिवि' मन्त्र से पृथ्वी के लिए हवन करें । 'ॐ इदं विष्णु०' मन्त्र से विष्णु भगवान के लिए हवन करें । 'ॐ सजोपा०' मन्त्र से इन्द्र के लिए हवन करें । 'ॐ आदित्यै०' मन्त्र से इन्द्राणी देवी के लिए आहुति दें । 'ॐ प्रजापते०' मन्त्र से प्रजापति के लिए आहुति दें । 'ॐ नमोऽस्तु०' मन्त्र से सर्प (नाग) देवता के लिए आहुति दान करें । 'ॐ ब्रह्मजज्ञानं' मन्त्र से ब्रह्मा के लिए आहुति दें ।। इति ।।

पञ्चलोकपाला होमः

अथ पञ्चलोकपालानां होमः ।। ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳहवाहे प्रियाणांत्वा प्रियपतिꣳहवामहे । निधीनांत्वा निधिपतिँ हवामहे व्वसो मम । आहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भध ꣳस्वाहा, इदं गणपतये न मम । ॐ अम्बेऽअम्बिकेऽअम्बालिके नमानयति कश्चन । स सत्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीꣳ स्वाहा, इदं दुर्गायै न मम । ॐ वातोवा मनो वा गन्धर्वा सप्तवि ꣳशतिः । तेऽअग्रेऽश्वयुञ्जस्तेऽअस्मिञ्जवमादधुः स्वाहा, इदं वायवे न मम । ॐ ऊद्ध्वाअस्य समिधो भवन्त्यूद्धर्वाशुक्रा शोची ꣳष्यग्नेः द्युमत्तमा सुप्रतीकस्य सूनोः स्वाहा, इदमाकाशाय न मम ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ अश्विनोर्भैषज्येन ब्रह्मवुर्चसायाभिषिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्यायान्नाद्याया - भिषिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियैः यशशेऽभिषिञ्चामि स्वाहा, इदमश्विभ्यां न मम ।।

तदनन्तर **'ॐ गणानां'** मन्त्र से गणपति के लिए आहुति दें । **'ॐ अम्बे'** मन्त्र द्वारा श्री दुर्गा देवी के लिए हवन प्रदान करें । **'ॐ वातो वा०'** मन्त्र से वायु देवता के लिये आहुति देवे । **'ॐ अर्ध्वा०'** मन्त्र से आकाश तत्व की आहुति दें । **'ॐ अश्विना०'** मन्त्र से अश्विनीकुमारों को आहुति दें ।

दशदिक्पाला होमः

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र ꣳ हवे हवे सुवहꣳ शूरमिन्द्रम् । ह्वायामिशक्रम्पुरुहूतमिंद्र ꣳस्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः सवाहा, इदमिन्द्राय न मम । ॐ अग्निदूतं पुरो दधे हव्य वाहमुपब्र वे । देवाँऽऽआसादयादिह स्वाहा, इदमग्नये न मम । ॐ असि यमोऽअस्यादित्योऽअर्वन्नसि त्रितो गुह्येन व्रतेन । असि सोमेन समयाविपृक्तऽआहुस्ते त्रीणि दिवि बन्धनानि स्वाहा, इदं यमाय न मम । ॐ एष ते निर्ऋते भागस्ते जुषस्व स्वाहा, अग्निनेत्रेभ्यो देवेभ्यः पुरः सद्भ्यः स्वाहा, यम नेत्रेभ्यो देवेभ्यो दक्षिणासद्भ्यः स्वाहा, व्विश्वेदेवनेत्रेभ्यो देवेभ्यः पश्चात्सद्भ्यः स्वाहा, मित्रावरुण नेत्रेभ्यो वा मरुन्नेत्रेभ्यो वा देवेभ्यः उत्तरासद्भ्यः दुवस्वद्भ्यः स्वाहा, सोमनेत्रेभ्यो देवेभ्यः उपरिसद्भयो दिवः स्वन्तस्तेभ्यः स्वाहा, इदं निर्ऋतये न मम । ॐ इमम्मे व्वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडया त्वामवस्युराचके स्वाहा, इदं वरुणाय न मम । ॐ वायु ग्रेणा यज्ञमीः साकं गन्मनसा यज्ञम् । शिवो नियुद्भि शिवाभिः स्वाहा, इदं वायवे न मम । ॐ कुविदङ्गयवमन्तो यवंचिद्यथादान्त्यनु पूर्व वियूय । इहेहैषां कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषो नम उक्तिं यजन्ति स्वाहा, इदं कुबेराय न मम ।

ॐ ईशा वास्यमिदँ सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत् । तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् स्वाहा, इदमीशानाय न मम । अत्रोदकस्पर्शः ।। ॐ ब्रह्मजज्ञानम्प्रथमम्पुर स्तद्विसीमतः सुरुचोव्वेन आवः । सुबुध्न्याऽउपमाऽअस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च व्विवः स्वाहा । इदं ब्रह्मणे न मम । ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु । येऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः स्वाहा, इदमनन्ताय न मम । इति दशदिक्पालानां होमः ।

तदनन्तर दश दिक्पालों के लिए हवन करें । **'ॐ त्रातार'** मन्त्र से इन्द्र देवता को आहुति दें । **'ॐ अग्निदूतं'** मन्त्र से अग्नि देवता के लिए आहुति प्रदान करें । **'ॐ असि०'** मन्त्र से यम देवताओं को आहुति प्रदान करें । **'ॐ एष ते'** इत्यादि मन्त्रों से निर्ऋति देवता को आहुति दें । **'ॐ इमं व्वरुण'** मन्त्र से वरुण देवता के लिए हवन प्रदान करें । **'ॐ वायु'** मन्त्र से वायु देवता के लिए हवन करें । **'ॐ कुविदङ्ग०'** मन्त्र से कुबेर देवता के निमित्त आहुति प्रदान करें । **'ॐ ईशा०'** मन्त्र को पढ़कर ईशान देवता को आहुति दें । यहाँ पर जल स्पर्श करें । **'ॐ ब्रह्म०'** मन्त्र से ब्रह्मा के लिये आहुति प्रदान करें । **'ॐ नमोस्तुते'** मन्त्र से अनन्त वासुकी (सर्प) के निमित्त आहुति प्रदान करें ।

सर्वतोभद्रमण्डलदेवता होमः

ॐ ब्रह्मणे नमः स्वाहा ।। ॐ सोमाय नमः स्वाहा ।। ॐ ईशानाय नमः स्वाहा ।। ॐ इन्द्राय नमः स्वाहा ।। ॐ अग्नये नमः स्वाहा ।। ॐ यमाय नमः स्वाहा ।। ॐ निर्ऋति नमः स्वाहा ।। ॐ वरुणाय मनः स्वाहा ।। ॐ वायवे नमः स्वाहा ।। ॐ अष्टवसुभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ एकादशरुद्रेभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ द्वादशादित्येभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ अश्विभ्यां नमः स्वाहा ।। ॐ सपैतृकविश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ सप्तयक्षेभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ भूतनागेभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ गन्धर्वाप्सुरोभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ स्कन्दाय नमः स्वाहा ।। ॐ नन्दीश्वराय नमः स्वाहा ।। ॐ शूलमहाकालाभ्यां स्वाहा ।। ॐ दक्षादिसप्तगणेभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ दुर्गायै नमः स्वाहा ।। ॐ विष्णवे नमः स्वाहा ।। ॐ स्वधासहितपितृभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ मृत्युरोगाभ्यां नमः स्वाहा ।। ॐ गणपतये नमः स्वाहा ।। ॐ अद्भ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ मरुद्भ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ पृथिव्यै नमः स्वाहा ।। ॐ गङ्गादिनदीभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ सप्तसागरेभ्यो नमः स्वाहा ।। ॐ मे खे नमः स्वाहा ।। ॐ गदायै नमः स्वाहा ।। ॐ वज्राय नमः स्वाहा ।। ॐ शक्तये नमः स्वाहा ।। ॐ दण्डाय नमः स्वाहा ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ खड्गाय नमः स्वाहा ।। ॐ पाशाय नमः स्वाहा् ।। ॐ अङ्कुशाय नमः स्वाहा ।। ॐ गौतमाय नमः स्वाहा ।। ॐ भारद्वाजाय नमः स्वाहा ।।
ॐ विश्वामित्राय नमः स्वाहा ।। ॐ कश्यापाय नमः स्वाहा ।। ॐ जमदग्नये नमः स्वाहा ।। ॐ वसिष्ठाय नमः स्वाहा ।। ॐ अत्रये नमः स्वाहा ।। ॐ अरुन्धत्ये नमः स्वाहा ।। ॐ ऐन्द्रयै नमः स्वाहा ।। ॐ कौमार्यै नमः स्वाहा ।। ॐ ब्राह्यै नमः स्वाहा ।। ॐ वाराह्यै नमः स्वाहा ।। ॐ चामुण्डायै नमः स्वाहा ।।
ॐ वैष्णव्यै नमः स्वाहा ।। ॐ माहेश्वर्यै नमः स्वाहा ।। ॐ वैनायक्यै नमः स्वाहा ।।

- इति सर्वतोभद्रमण्डलदेवतानां होमः

प्रधानदेव का होमः- गायत्री की आहुति

सब देवताओं की आहुतियाँ देने के पश्चात् प्रधान देवता गायत्री की गायत्री मन्त्र से जितनी आहुतियाँ देनी निश्चित की हों, उतनी आहुतियाँ देवें।

गायत्री मन्त्र की जितनी आहुतियाँ देना हों, उसी अनुपात से सामग्री, घी, समिधा आदि की व्यवस्था पहले से ही कर लेनी चाहिए । मध्यमा और अनामिका उँगलियों पर सामग्री रखी जाय । अँगूठे का सहारा लेकर उसे आगे खिसकाने का प्रयोजन पूरा करना चाहिए ।आहुति देने वाले सभी लोग साथ-साथ मन्त्र बोलें 'स्वाहा' शब्द उच्चारण के साथ-शाथ आहुतियाँ थोड़ा आगे हाथ बढ़ाकर डालें कि सामग्री अग्नि में ही गिरे, इधर-उधर न बिखरे । आहुति एक साथ छोड़ें और हथेली ऊपर की दिशा में ही रहे, नीचे की ओर नहीं ।

आहुति डालने के बाद **''इदं गायत्र्यै इदन्नमम''** पद का उच्चारण किया जाता है । इसका अर्थ यह है कि यज्ञानुष्ठान पुण्य परमार्थ अपने स्वार्थ साधना के लिए नही, पुण्य परमार्थ के लिए-लोकमंगल के लिए किया जाता है ।

जिस प्रकार अति सम्मानीय अतिथि को प्रेमूर्वक भोजन परोसा जाता है, उसी श्रद्धा और सम्मान भावना के साथ अग्निदेव के मुख में आहुति दी जानी चाहिए, लोक कल्याण के लिए श्रम, तप, त्याग किया जा रहा है, जैसे अग्नि के स्पर्श से लकड़ी अग्नि रूप हो जाती है, उसी तरह यज्ञ पुरुष के सान्निध्य में आकर जीवन को यज्ञमय बनाने का प्रयास आहुति देते हुए किया जा रहा है । इन भावनाओं के साथ आहुतियाँ दी जानी चाहिए ।

गायत्री मन्त्र से २४ आहुतियाँ देनी चाहिए । परिस्थिति को देखकर संख्या को न्यनूधिक किया जा सकता है ।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा । इदं गायत्र्यै इदं न मम ।

- यजु० ३६/३

स्विष्टकृतहोम

यह प्रायश्चित्य आहुति भी कहलाती है । आहुतियों में जो कुछ भूल रही हो उसकी पूर्ति के लिए, यज्ञाग्नि के लिए नैवेद्य समर्पण के रूप में यह कृत्य किया जाता है । स्वष्टकृत आहुतियों में मिष्ठान्न समर्पित किया जाता है । मिष्ठान्न का संकेत है सर्वांङ्गीण मधुरता । वाणी से मधुर वचन, व्यवहार में मधुर शिष्टाचार, मन में सबके लिए मधुर संवेदनाएँ, हंसता-हँसाता हलका-फुलका मधुर स्वभाव यह मधुर मिष्ठान्न को प्रतीक बनाकर देवताओं के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है । अपना व्यक्तित्व मधुरतायुक्त विशेषताओं से ढला हुआ हो । हम मधुर बनकर भगवान की सेवा में प्रस्तुत होते हैं । यह स्विष्टकृत आहुति का प्रयोजन है ।

स्रुचि (चम्मच जैसा, लम्बी डण्डी वाला काष्ठ पात्र) में मिष्ठान और घी भरकर इसे केवल घी होमने वाला ही देता है । आरम्भ और अन्त में कुछ विशेष कृत्य घृत होमने वाले व्यक्ति को करने पड़ते हैं । यह सब वह अपने अन्य साथियों के प्रतिनिधि के रूप में करता है । स्विष्टकृत आहुति अपने स्थान पर बैठे हुए करें ।

ॐ यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वान्यूनमिहाकरम् अग्निष्टत् स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नये, स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्व प्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा ।

- आश्व गृ० सू० १/१०/११

इदमग्नये स्विष्टकृते इदन्न मम ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूर्णाहुति होम

मनुष्य की गरिमा इस बात में है कि जो श्रेष्ठ सङ्कल्प करे, उसे पूर्णता तक पहुँचाये । मनुष्य सम्पूर्ण है । उसे अपनी पूर्णता के लिए प्रयत्न करना चाहिए । यज्ञीय जीवन में रुचि रखने वाले आदर्शवादियों को अग्नि की साक्षी में यह व्रत लेना चाहिए कि पूर्णता की दिशा में निरन्तर अग्रसर रहेंगे और लक्ष्य को प्राप्त करके ही चैन लेंगे । भावना करें कि परमात्मा ने अपनी इस सुरम्य सृष्टि में सभी वस्तुएँ पूर्ण बनायी हैं, उस गौरव को हम समझें भी, उसे बनाये भी रखें ।

सब लोग खड़े हों । सबके हाथ में एक-एक चुटकी सामग्री हो । घृत होमने वाले स्रुचि में सुपाड़ी अथवा नारियल का गोला तथा घृत हो, स्वाहा के साथ आहुति दें ।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।
ॐ पूर्णादर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत ।
वस्नेव विक्रीणा वहा इषमूर्जꣳशतक्रतो स्वाहा ।।
सर्वं वै पूर्णꣳस्वाहा ।

– यजु० ३४१

वसोर्धारा

घृत की अन्तिम बड़ी आहुति है वसोर्धारा अर्थात् स्नेह सौजन्य । प्रारम्भ में घृत की सात आहुतियाँ दी थीं । उस प्रारम्भ का अन्त और भी बड़ा-चढ़ा होना चाहिए । वसोर्धारा में घृत की अविच्छिन्न धारा टपकाई जाती है और अधिक घृत होमा जाता है । कार्य के प्रारम्भ में जितना उत्साह एवं त्याग हो, अन्त में उससे भी अधिक होना चाहिए । अक्सर शुभ कार्यों के प्रारम्भ में सब लोग बहुत साहस, उत्साह दिखाते हैं, पर पीछे ठण्डे पड़ जाते हैं मनस्वी लोगों की नीति दूसरी ही है । वे यदि धर्म मार्ग पर कदम बढ़ा देते हैं, तो हर कदम पर अधिक तेजी का परिचय देते हैं और अन्ततः उसी में याज्ञिक कर्म में तन्मय हो जाते हैं । भावना करें कि यज्ञ भगवान् सत्कृत्यों में अविरल स्नेह की धार चढ़ाने की प्रवृत्ति और क्षमता हमें प्रदान करें ।

मन्त्रः-

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्त्र धारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शताधारेण सुप्वा कामधुक्षः स्वाहा ।

– यजु० १/३

बर्हिहोमः

अब फैली हुई कुशाओं को घृत में डुबोकर '**ॐ देवागान्तु**' इत्यादि मन्त्र से कुश का हवन करें ।

ॐ देवागान्तु विदोगातुं वित्वागातुमित । मनसस्पत इमं देवयज्ञꣳस्वाहा व्वातेधाः स्वाहा । इति बर्हिहोमः ।।

ततो ब्रह्मग्रन्थिविमोकः

उसके बाद ब्रह्म ग्रन्थिका, जो कि ब्रह्मा के वरण के समय रखी थी, खोल देवें ।

ॐ सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु ।।

इति मन्त्रेण पवित्रकं गृहीत्वा प्रणीताजलेन शिरः संमृज्य ।

ॐ दुर्मित्रियास्तम्भै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयंद्विष्मः इति मन्त्रेण ऐशान्यां प्रणीता पात्रं न्युब्जी कुर्यात् ।

तदुपरान्त "**ॐ सुमित्रिया**" इस मन्त्र को पढ़कर पवित्री द्वारा प्रणीता पात्र से जल लेकर मस्तक पर छिड़कें और "**ॐ दुर्मित्रियातस्मै**" इस मन्त्र को पढ़कर ईशान कोण में प्रणीता पात्र के जल को डाल दें और प्रणीता को वहीं उलटा कर रख दें । तत्पश्चात् ब्रह्मा को पूर्ण पात्र की दक्षिणा गो आदि यथा शक्ति देवें ।

तर्पण

तर्पण के लिए जल पात्र में दूध, पुष्प, तिल, जौ, अक्षत, शर्करा डालें । कुश हाथ में लेकर, यज्ञोपवीत को अंगूठे और तर्जनी के बीच में होते हुए हाथ में अटका हुआ निकाल कर अंजलि में जल भर कर अर्घ्य की भाँति उंगलियों के छोरों की ओर जल विसर्जित करें । तर्पण के समय दोनों हाथों की अनामिका उंगलियों में कुश की बनी हुई अंगूठी पहनें । शिखा में, दोनों पैरों के नीचे, यज्ञोपवीत में तथा धोती की अंटी में कुश के टुकड़े लगा लेने चाहिये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तर्पण मन्त्रः-

ॐ भूर्भुव स्वः पुरुषमृग्यजु सम मण्डलान्तर्गत सविता रमावाह्ययामीत्यावाह्य तर्पणं कुर्यात् ।।
ॐ भूः पुरुषमृग्वेदं तर्पयामि ।
ॐ भुवः पुरुषं यजुर्वेदं तर्पयापि ।
ॐ स्वः पुरुषं सामवेदं तर्पयामि ।
ॐ महः पुरुषमथर्ववेदं तर्पयामि ।
ॐ जनः पुरुषमितिहास पुराणं तर्पयामि ।
ॐ तपः पुरुषं सर्वांगमं तर्पयामि ।
ॐ सत्यं सर्वलोकं तर्पयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः (पुरुषं) ऋग्यजुः साम मण्डलान्तर्गत तर्पयामि ।
ॐ भूरेकं पादं गायत्रीं तर्पयामि ।
ॐ भुवर्द्विपादं गायत्रीं तर्पयामि ।
ॐ स्वस्त्रिपादं गायत्रीं तर्पयामि ।
ॐ भूर्भुवः स्वश्चतुष्पादं गायत्रीं तर्पयामि ।
ॐ उषसं तर्पयामि । ॐ गायत्रीं तर्पयामि ।
ॐ सावित्रीं तर्पयामि । ॐ सरस्वतीं तर्पयामि ।
ॐ पृथवीं तर्पयामि । ॐ जयां तर्पयामि ।
ॐ कौशिकीं तर्पयामि । ॐ सांकृतीं तर्पयामि ।
ॐ सर्वापराजितां तर्पयामि । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं तर्पयामि
ॐ सहस्त्रमूर्तिं तर्पयामि । ॐ अनन्त मूर्तिं तर्पयामि ।
एभिर्मन्त्रैश्च यो नित्यं चतुर्विंशतिभिर्द्विजः ।
सुतर्पति गायत्री स यज्ञफलमाप्नुयात् ।।

नीराजन-आरती

आरती उतारने का तात्पर्य है, कि यज्ञ भगवान का सम्मान, परमार्थ परायणता का ज्ञान-प्रकाश दशों दिशाओं में फैले, सर्वत्र उसी का शंख बजे, घण्टा-निनाद सुनाई पड़े और हर धर्मप्रेमी इस प्रयोजन के लिए उठ खड़ा हो । आरती में पैसे चढ़ाये जाते हैं, अर्थात् ऐसे प्रयोजनों के लिए सहयोग का परिचय दिया जाता है । यज्ञ भगवान की आरती-प्रतिष्ठा ज्ञान दीपों के प्रकाश-विस्तार से ही सम्भव है । यज्ञीय परम्परा इस अनुष्ठान तक ही सीमित न रहे, वरन् उसके विस्तार की व्यवस्था भी यज्ञ प्रेमी करेंगे, इसी कर्त्तव्य का उद्घाटन प्रतीक रूप से आरती में किया जाता है । थाली में पुष्पादि से सजाकर आरती जलाएँ, तीन बार जल घुमाकर यज्ञ भगवान व देव प्रतिमाओं की आरती उतारें, पुनः तीन बार जल घुमाकर उपस्थित जनों तक आरती पहुँचा दें । यह सारा कृत्य एक प्रतिनिधि करे, आवश्यकतानुसार आरती की संख्या बढ़ाई जा सकती है ।

ॐ यं ब्रह्मवेदान्तविदो वदन्ति ।
परं प्रधानं पुरुषं तथान्ये ।
विश्वोद्गते कारणमीश्वरं वा,
तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय ।।

ॐ यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवैर्वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ।।
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो ।
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणाः देवाय तस्मै नमः ।।
साज्यं त्रिवर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापह ।।
भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने ।
त्राहिमां निरयाद् घोराद्दीपज्योतिर्नमोस्तुते ।।

घृत अवघ्राण

घृत आहुतियों से बचने पर टपकाया हुआ घृत जल भरे प्रणीता पात्र में जमा रहता है । इसे थाली में रखकर सभी उपस्थित लोगों को दिया जाय । इस जल मिश्रित घृत में दाहिने हाथ की उँगलियों के अग्रभाग को डुबोते जायें और दोनों हथेलियों पर मल लिया जाये । मन्त्र बोलते समय दोनों हाथ यज्ञ कुण्ड की ओर इस तरह रखें, मानों उन्हें तपाया जा रहा हो । यज्ञीय वातावरण एवं संदेश को मस्तिष्क में भर लेने, आँखों में समा लेने, कानों में गुंजाते रहने, मुख से चर्चा करते रहने और उसी दिव्य गन्ध को सूँघते रहने, वैसे ही भाव-भरा वातावरण बनाये रखने, विनिर्मित करने की सामर्थ्य पाने की इच्छा रखने वालों को यज्ञ भगवान का प्रसाद घृत अवघ्राण से प्राप्त होता है ।

ॐ तनूपा अग्नेऽसि तन्वं मे पाहि ।
ॐ आयुर्दा अग्नेऽस्यायुर्मे देहि ।।
ॐ वर्चोदा अग्नेऽसि वर्चो मे देहि ।
ॐ अग्नेयन्मे तन्वाऽऊनन्तन्म आपृण ।।
ॐ मेधां मे देवः सविता आदधातु ।
ॐ मेधां मे देवी सरस्वती आदधातु ।।
ॐ मेधां मे अश्विनौ देवा वाधतां पुष्करस्त्रजो ।।

- पारस्कर गृ० सू० २/४/७-८

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भस्मधारणम्

जीवन का अन्त भस्म की ढेरी के रूप में होता है । मुट्ठी भर बनकर हवा में उड़ जाने वाले अकिंचन मनुष्य का लोभ, मोह, अहंकार में निरत रहना कितना मूर्खता पूर्ण है । इस दूरगामी किन्तु नितान्त सत्य स्थिति को यदि वह समझ सका होता, तो उसने अपनी गतिविधियों का निर्धारण ऐसे आधारों पर किया होता, जिसे सुरदुर्लभ मानव-जीवन व्यर्थ और अनर्थ जैसे कार्यों में गँवा देने का पश्चात्ताप न करना पड़ता । मृत्यु कभी भी आ सकती है और इस सुन्दर कलेवर को देखते-देखते भस्म की ढेरी बना सकती है । यह बात मस्तिष्क में भली प्रकार बिठा लेने के लिए यज्ञ भस्म मस्तक पर लगाई जाती है ।

इस भस्म को मस्तक, कण्ठ तथा हृदय पर भी लगाते हैं, मस्तक अर्थात् ज्ञान, कण्ठ अर्थात् वचन, भुजा अर्थात् मन । मन, वचन, कर्म से हम ऐसे विवेक-युक्त कर्म करें, जो जीवन को सार्थक-कृत-कृत्य बनाने वाले सिद्ध हों ।

स्फय की पीठ पर भस्म लगा ली जाती है और लोग अनामिका उँगली में लेकर मन्त्र में बताए हुए स्थानों पर क्रमशः लगाते हैं ।

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेरिति ललाटे ।
ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषमिति ग्रीवायाम् ।
ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषमिति दक्षिणाबाहुमूले ।
ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषमिति हृदि ।

- यजु० ६/३

क्षमा-प्रार्थना

अपने दोषों को देखते रहना, जिनके साथ कुछ अनुचित या अप्रिय व्यवहार बन पड़ा, उनके मनोमालिन्य को दूर करना, जिसको हानि पहुँचाई हो, उसकी क्षति पूर्ति करना, यह सज्जनता का लक्षण है । यज्ञ कार्य के विधि-विधान में कोई त्रुटि रह सकती है, साथियों के प्रति कुछ अनुचित व्यवहार बन पड़ा हो यह सम्भव है । इन सबके लिए सम्बन्धित देव-शक्तियों एवं व्यक्तियों से क्षमा याचना कर लेने से जहाँ अपना जी हल्का होता है, वहाँ सामने वाले की अप्रसन्नता भी दूर हो जाती है । यह आत्म निरीक्षण, आत्म शोधन की दूसरे के प्रति दृष्टि रखने की सज्जनोचित प्रक्रिया है । यज्ञ के अवसर पर तथा उसके पश्चात् भी इस प्रक्रिया को अपनाये रहने के लिए क्षमा प्रार्थना का विधान यज्ञ-आयोजन के अन्त में रहता है । सब लोग हाथ जोड़कर खड़े होकर मन्त्रोच्चारण करें, साथ ही उस स्तर के भाव मन में भरे रहें ।

आवाहनं न जानामि नैव जानामि पूजनम् ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर! ।।१।।
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर!
यत्पूजितं मया देव! परिपूर्णं तदस्तु मे ।।२।।
यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव! प्रसीद परमेश्वर! ।।३।।
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ।।४।।
प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् ।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ।।५।।

साष्टांग नमस्कार

सर्वव्यापी विराट् ब्रह्म को, विश्व ब्रह्माण्ड को भगवान का दृश्य रूप मानकर **"सिया राम मय सब जग जानी । करौं प्रणाम जोरि-जुग पानी ।।"** की भावना से घुटने टेककर भूमि में मस्तक लगाकर देव शक्तियों को, महामानवों को भाव-विभोर अभिवन्दन-नमस्कार किया जाता है । उनके चरणों में अपने को समर्पित करने अर्थात् अनुगमन करने का संकल्प आश्वासन व्यक्त किया जाता है । यही भूमि प्रणिपात साष्टांग नमस्कार है ।

ॐ नमो ऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये
सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ।।

शुभकामना

यह शुभकामना मन्त्र भी सबके कल्याण की अभिव्यक्ति के लिए है । हमारे मन में द्वेष किसी के प्रति भी न हो, अशुभ चिन्तन किसी के लिए भी न करें । जिनसे सम्बन्ध कटु हो गये हों, उनके लिए भी हमें मंगलकामना ही करनी चाहिए । द्वेष-दुर्भाव किसी के लिए भी नहीं करना चाहिए । सबके कल्याण में अपना कल्याण समाया हुआ है, परमार्थ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में स्वार्थ जुड़ा हुआ है-यह मान्यता रखते हुए हमें सर्वमंगल की, लोक कल्याण की आकांक्षा रखनी चाहिए ! शुभ कामनाएँ इसी की अभिव्यक्ति के लिए हैं

सब लोग दोनों हाथ पसारें । इन्हें याचना मुद्रा में मिला हुआ रखें । मन्त्रोच्चार के साथ-साथ इन्हीं भावनाओं से मन को भरे रहें ।

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां न्यायेन मार्गेण महीं महीशाः ।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं लोकाःसमस्ताः सुखिनोभवन्तु ॥१॥
सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्रणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात् ॥२॥
श्रद्धां मेधां यशः प्रजां विद्यां पुष्टिंश्रियं बलम् ।
तेजमायुष्यमारोग्यं देहि मे हव्यवाहन ॥३॥

शान्ति अभिसिंचन

यज्ञशाला के दिव्य वातवारण में रखा हुआ जल कलश अपने भीतर उन मंगलकारक दिव्य तत्वों को धारण कर लेता है, जो मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शान्ति एवं आत्मिक-गरिमा की अभिव्यक्ति में सहायक होते हैं । जल कलश से पुष्प द्वारा सभी उपस्थित लोगों पर छींटे लगाने के अभिसिंचन के साथ यह भावना रखी जानी चाहिए कि यज्ञ की भौतिक एवं आत्मिक उपलब्धियाँ इस जल के माध्यम से उपस्थित लोगों को प्राप्त हो रही हैं और वे असत् से सत् की ओर, मृत्यु से अमृत की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर बढ़ेंगे ।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳशान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्वꣳशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ सर्वारिष्टा सुशान्तिर्भवतु ।

पुष्पांजलि

यह विदाई सत्कार है । पुरुष सूक्त के मन्त्रों को आरम्भ करके देव आगमन पर उनका आतिथ्य, स्वागत-सत्कार किया गया था । यह विदाई सत्कार मन्त्र पुष्पाञ्जलि के रूप में किया जाता है ।

सब लोग हाथ में पुष्प अथवा चन्दन केशर से रँगे हुए पीले चावल लेते हैं । पुष्पाञ्जलि मन्त्र बोल जाता है और पुष्प वर्षा की तरह ही उसे देव शक्तियों पर बरसा दिया जाता है । पुष्पहार-गुलदस्ता आदि भी प्रस्तुत किया जा सकता है । पुष्प भाव भरी सहज श्रद्धा के प्रतीक माने जाते हैं । उन्हें अर्पित करने का तात्पर्य है, अपनी सम्मान भावना की अभिव्यक्ति ।

इस विश्व में असुरता और देवत्व के दो ही वर्ग अन्धकार और प्रकाश के रूप में हैं । इन्हीं को स्वार्थ और परमार्थ, निकृष्टता और उत्कृष्टता कहते हैं । दोनों में से एक को प्रधान दूसरे को गौण रखना पड़ता है । यदि भोगवादी असुरता प्रिय होगी तो मोह, लोभ, अहङ्कार तृष्णा, वासना में रुचि रहेगी और उन्हीं के लिए निरन्तर मरते-खपते रहा जायेगा । फिर जीवनोद्देश्य की पूर्ति के लिए सत्कर्म करने की न इच्छा होगी न अवसर मिलेगा । पर यदि लक्ष्य देवत्व हो, तो शरीर को निर्वाह भर और परिवार को उचित आवश्यकता पूरी करने भर के साधन जुटाने के उपरान्त उत्कृष्ट चिन्तन और आदर्श कर्तृत्व के लिए मस्तिष्क में पर्याप्त स्थान और शरीर को पर्याप्त अवसर मिल सकता है । देवत्व का मार्ग उत्थान का और असुरता का मार्ग कष्ट-क्लेशों से भरे पतन का है । दोनों में से किसे चुना ? किससे मैत्री स्थापित की ? किसे लक्ष्य बनाया ? इसका उत्तर पुष्पाञ्जलि के अवसर पर दिया जाता है । विदाई के अवसर पर भाव भरी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करना मानो यह कहना है कि हमें देवत्व प्रिय है, हम उसी मार्ग पर चलेंगे ।

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥
मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ॥

सूर्यार्घ्यदान

सूर्यार्घ्य दान हर उपासनात्मक कृत्य के बाद किया जाता है, जल का स्वभाव अधोगामी नीचे की ओर बहने का है, वही सूर्य की ऊष्मा के संसर्ग से ऊर्ध्वगामी बनता है, असीम में विचरण करता है । साधक भावना करता है, हमारी हीन वृत्तियाँ-सविता देव के संसर्ग से ऊर्ध्वगामी बनें, विराट् में फैलें, सीमित जीव चंचल जीवन, असीम अविचल ब्रह्म से जुड़े, यही है सूर्यार्घ्य दान की भावना और उपलब्धि ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्य की ओर मुख करके जल-कलश का पानी धीरे-धीरे धार बाँधकर छोड़ना चाहिए । किसी थाल को नीचे रखकर यह अर्घ्य जल उसी में इकट्ठा कर लिया जाय और फिर किसी पावन स्थान पर उसका विसर्जन किया जाय ।

ॐ सूर्यदेवसहस्त्रांशो तेजोराशि जगत्पते ।
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर ।
ॐ सूर्याय नमः । आदित्यायः नमः । भास्कराय नमः ।।

प्रदक्षिणा

यज्ञ वेदी की चार परिक्रमा, यह यज्ञ पुरुष परमात्मा के साथ आत्मा का विवाह माना जाय । विवाह में चार भावरें फिरी जाती हैं । अब तक बैठकर मन, वचन से ही मन्त्रोच्चार किया जाता रहा । हाथों का ही प्रयोग हुआ । अब यज्ञ मार्ग पर चलना शेष है । इसी पर तो भावना के परिष्कार की, यज्ञ प्रक्रिया की सफलता निर्भर है । अब यह कर्म यात्रा आरम्भ होती है । यज्ञ अनुष्ठान में जिस दिशा में चलने का संकेत है, प्रदक्षिणा में उसी दिशा में चलना आरम्भ किया जाता है । कार्य के चार चरण हैं-(१) संकल्प(२) प्रारम्भ (३) पुरुषार्थ (४) तन्मयता । इन चार प्रक्रियाओं से समन्वित जो भी कार्य किया जायेगा, वह अवश्य सफल होगा । यज्ञमय जीवन जीने के लिए चार कदम बढ़ाना, चार अध्याय पूरे करने का पूर्वाभ्यास प्रदर्शन किया गया । एकता, समता, क्षमता, शुचिता चारों लक्ष्य पूरे करने के लिए साधना, स्वाध्याय, सेवा और संयम की गतिविधि अपनाने के लिए चार परिक्रमायें हैं । हम इस मार्ग पर चलें, यह संकल्प प्रदक्षिणा के अवसर पर हृदयंगम किया जाना चाहिए और उस पथ पर निरन्तर चलते रहना चाहिए ।

सब लोग दायें हाथ की ओर घूमते हुए यज्ञशाला की परिक्रमा करें, स्थान कम हो तो अपने स्थान पर खड़े रहकर चारों दिशाओं में घूमकर एक परिक्रमा करने से भी काम चल जाता है ।

परिक्रमा करते हुए दोनों हाथ जोड़कर गायत्री वन्दना एवं यज्ञ-महिमा का गान करें । परिक्रमा केवल मन्त्र से करें, कोई एक स्तुति करें या दोनों करें, इसका निर्धारण समय की मर्यादा को ध्यान में रखकर कर लेना चाहिए ।

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च ।।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणां पदे-पदे ।।

दिक्पालों को बलिदान

दश दिक्पालों (दिशाओं की रक्षा करने वाले देवताओं के बलि, हवन वेदी के दश ओर दी जाती है । बलि का अर्थ है भेंट या आहार । पशु बलि से इसका कोई संबन्ध नहीं है । निर्धारित दिशा में दिक्पालों के लिए पत्तलों पर लवण रहित पक्वान्नों और मिष्टान्नों को रखते हैं और मन्त्र पढ़कर उन दिक्पालों को उस आहार को ग्रहण करने के लिए प्रार्थना करते हैं ।

साधारणतः दही, चावल, उर्द के बड़े आदि वस्तुऐं इस बलि में दी जाती है । उर्द के बड़े बनाने की प्रथा इसलिए प्रचलित हुई मालुम पड़ती है कि मध्यकाल में मांस का प्रयोग इस कार्य में किया गया होगा, पीछे उसके सुधार के लिए मांस शब्द के स्थान पर माष अर्थात् उर्द को उपयुक्त माना गया होगा । हमारी दृष्टि में दधि, चावल, तथा अन्य मिष्टान्न पकवानों की बलि ही दिक्पालों को दी जानी उचित है । यह बलि भाग पीछे पशु पक्षियों को खिलाने के लिए किसी पवित्र स्थान पर रख दिया जाता है ।

दिग्पालादिस्थापितदेवतादीनां बलिदानम्

यजमानो हस्ते जलं गृहीत्वा । मया प्रारब्धस्य सग्रहमख श्रीगायत्री यज्ञ कर्मणः साङ्गतासिद्धयर्थ दशदिक्पाल देवतानां स्थापित देवतादींनाञ्च पूजनपूर्वकबलिदानं करिष्ये ।।

यजमान हाथ में जल लेकर उपर्युक्त वाक्य पढ़कर दशदिक्पालों को बलिदान के लिए संकल्प करे ।

प्राच्यां- ॐ इन्द्रं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् सभिर्गन्धाद्युपचारैः त्वामहं पूजयामि । इन्द्राय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपम् असाद्वितं बलिं समर्पयामि ।। भो इन्द्र दिशं रक्षं बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुः कर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्यणकर्ता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वरदो भव ।। अनेन पूजन पूर्वकं बलिदानेन इन्द्रः प्रीयतां न मम ।। १ ।।

बलि सामग्री लेकर "प्राच्यां इन्द्रं" आदि मन्त्र से पूर्व दिशा में इन्द्र के लिए बलि देवें ।

आग्नेय्याम्- ॐ अग्निं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । अग्नये साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि । भो अग्ने दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुः कर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । अनेन पूजनपूर्वकबलिदानेन अग्निः प्रीयतां न मम ।। २ ।।

इसी प्रकार "अग्निं साङ्गं" आदि मन्त्र से बलि सामिग्री लेकर अग्निकोण में अग्नि के लिए बलि देवें ।

दक्षिणस्यां- ॐ यमं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । यमाय साङ्गाय सपरिवाराय सशक्तिकाय इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि ।। भो यम दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुः कर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । अनेन पूजनपूर्वकं बलिदानेन यमः प्रीयतां न मम ।। ३ ।।

तत्पश्चात्- "यमं साङ्गं" आदि मन्त्र से बलि सामग्री लेकर दक्षिण दिशा में यम के लिए बलि देवें ।

नैऋत्यां- ॐ निर्ऋतिं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वाहमहं पूजयामि । निर्ऋतये साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि । भो निऋते दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुः कर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । अनेन पूजनपूर्वकबलिदानेन निर्ऋतिः प्रीयतां न मम ।। ४ ।।

तदनन्तर "निर्ऋतिं साङ्गं" आदि मन्त्र से हाथ में बलि सामग्री लेकर नैर्ऋत्य कोण में निर्ऋत्य देवता के लिए बलि देवें ।

पश्चिमायाम्- ॐ वरुणां साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । वरुणाय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि ।। भो वरुण दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुः कर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव ।। अनेन पूजनपूर्वकबलिदानेन वरुणः प्रीयतां न मम ।। ५ ।।

तत्पश्चात् "वरुणं साङ्गं" आदि मन्त्र से बलि सामग्री लेकर पश्चिम दिशा में वरुण देवता के लिए बलि देवें ।

वायव्याम्- ॐ वायुं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । वायवे साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि । भो वायो दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुः कर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । अनेन पूजमपूर्वक बलिदानेन वायुः प्रीयतां न मम ।। ६ ।।

तत्पश्चात्- "ॐ वायुं साङ्गं" आदि मन्त्र से हाथ में बलि सामग्री लेकर वायव्य कोण में वायु देवता के प्रति बलि अर्पण करें ।

उत्तरस्यां- ॐ सोमं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि ।। सोमाय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि । भो सोम दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुःकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन सोमः प्रीयतां न मम ।। ७ ।।

तत्पश्चात्- बलि सामग्री लेकर "ॐ सोमं साङ्गं" आदि मन्त्र से उत्तर दिशा में सोम के लिए बलि अर्पित करें ।

ऐशान्याम्- ॐ ईशानं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । ईशानाय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि । भो ईशान

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुःकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन ईशानः प्रीयतां न मम ॥ ८ ॥

तत्पश्चात्- बलि सामग्री लेकर "ॐ ईशानं साङ्गं" मन्त्र से ईशान कोण में ईशान देवता के लिए बलि प्रदान करें ।

पूर्वेशानयोर्मध्ये ऊर्ध्वायाम्- ॐ ब्रह्माणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । ब्रह्मणे साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि ॥ भो ब्रह्मन् दिशं रक्ष बलि भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुःकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । अनेन पूजन पूर्वक बलिंदानेन ब्रह्मा प्रीयतां न मम ॥ ९ ॥

तत्पश्चात्- बलि सामग्री लेकर पूर्व ईशान के बीच ऊर्ध्व में "ॐ ब्रह्माणं" मन्त्र से ब्रह्मा के लिए बलि अर्पित करें ।

निर्ऋतिवरुणयोर्मध्येऽधः- ॐ अनन्तं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । अनन्ताय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि ॥ भो अनन्त, दिशं रक्ष बलि भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुःकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन अनन्तः प्रीयतां न मम ॥ १० ॥ इति दशदिकपाल वलि ॥

तत्पश्चात्- बलि सामग्री लेकर निर्ऋति और वरुण के बीच में नीचे "ॐ अनन्त साङ्गं" मन्त्र से अनन्त के लिए बलि प्रदान करें ।

ईशान्यां नवग्रह बलि

ॐ भूर्भुवः स्वः सूर्यादिनवग्रहमण्डलदेवान् साङ्गान् सपरिवारान् सायुधान् सशक्तिकान् एभिर्गन्धाद्युपचारैः वः अहं पूजयामि । ॐ भूर्भुवः स्वः सूर्यादि नवग्रह मण्डल देवेभ्यः साङ्गेभ्यः सपरिवा रेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि । भो भो सूर्यादिनवग्रहमण्डलदेवाः इमं बलिं गृह्णीत । मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरुत । आयुःकर्तारः क्षेमकर्तारः शान्तिकर्तारः पुष्टिकर्तारः तुष्टिकर्तारः निर्विघ्नकर्तारः कल्याणकर्तारः वरदा भवत । अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन सूर्यादिनवग्रहमण्डलदेवाः प्रीयतां न मम ॥

अब यजमान हाथ में बलि सामग्री लेकर उपर्युक्त मन्त्र से नवग्रहों के लिए बलि देवें । अन्त में "अनेन बलिदानेन" आदि वाक्य पढ़ें ।

महाक्षेत्रपाल बलि

ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्रपालं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् भूतप्रेतपिशाच डाकिनीशाकिनीसहितम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । ॐ भूर्भुवः स्वः भूतप्रेतपिशाचडाकिनीशाकिनी सहिताय क्षेत्रपालाय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं सदीपम् आसादितं महाबलिं समर्पयामि । भो क्षेत्रपाल इमं बलि गृहाण । मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुःकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । (हस्त जलं गृहीत्वा) अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन भूतप्रेतपिशाच- डाकिनीशाकिनीसहितः महाक्षेत्रपालः प्रीयतां न मम ॥

अब हाथ में सामग्री लेकर उपर्युक्त मन्त्र से महाक्षेत्रपालों के लिए बलि देवें । तथा हाथ में जल लेकर "अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन" आदि वाक्य पढ़ें ।

संक्षिप्त दशदिकपाल बलि

ॐ प्राच्यैदिशे स्वाहार्वाच्यैदिशे स्वाहा दक्षिणायैदिशे स्वाहा वाच्यैदिशे स्वाहा प्रतीच्यैदिशे स्वाहार्वाच्यैदिशे स्वाहा दीच्यै दिशेस्वर्वाच्यैदिशे- स्वाहोर्द्धायैदिशेस्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशेस्वाहार्वाच्यैदिशे स्वाहा ॥

(१) पूर्वे, इन्द्रायनमः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ।

(२) आग्नेयां, अग्नयेनमः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ।

(३) दक्षिणै, यमायनमः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ।

(४) नैर्ऋत्यां, निर्ऋतयेनमः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(५) पश्चमे, वरुणायनमः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ।

(६) वायव्ये, वायवेनमः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ।

(७) उत्तरे, सोमायनमः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ।

(८) ईशाने, ईश्वरायनमः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ।

(९) पूर्वेशानयोर्मध्ये, ब्रह्मणेनमः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ।

(१०) निर्ऋतिपश्चियोर्मध्ये, अनन्तायनमः इमं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्रादिदशदिग्पालान् साङ्गान् सपरिवारान् सायुधान् सशक्तिकान् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्रादि दशदिक्पालेभ्यः साङ्गेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः इमं सदीपं आसादितं दधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि । भो भो इन्द्रादि दशदिक् पालाः इमं बलिं गृह्णीत । मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्य चाभ्युदयं कुरुत । आयुः कर्तारः क्षेमकर्तारः शान्तिकर्तारः पुष्टिकर्तारः निर्विघ्नकर्तारः कल्याणकर्तारः वरदा भवत । अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन इन्द्रादि दश दिक्पालदेवताः प्रीयन्ताम् न मम ।।

महाक्षेत्रपाल बलि

ॐ नहिस्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुरऽएतारमग्नेः एमेनमबृधन्नमृताऽअमर्त्यं वैश्वानरं क्षैत्र जित्याय देवाः । ॐ क्षेत्रपालाय नमः षोडशोपचारैः सम्पूज्य ।। प्रार्थयेत् ।। ॐ नमो क्षेत्रपालस्त्वं भूतप्रेतगणैः सह । पूजां बलिंगृहाणेणं सोम्योभवतुसर्वदा । आयुरारोग्यं मे देहि निर्विघ्नं कुरु सर्वदा ।। क्षेत्रपाल महाबाहो महाबलः पराक्रम । क्षेत्राणांरक्षणार्थाये बलिं गृह्णनमोस्तुत क्षेत्रपालाय साङ्गाय भूतप्रेत पिशाच शाकिनी डाकिनी वेतालादि परिवारयुताय सायुधाय सशक्तिकाय सवाहनाय इमं दधिमाषभक्त बलिं समर्पयामि ।। भो भो क्षेत्रपाल सर्वतोदिशंरक्षबलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्याभ्युदयं कुरु । आयुःकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता वरदोभव ।। अनेन बलिदानेन क्षेत्रपाल प्रीयताम् न मम ।।

तद्दक्षिणे वसोर्धारासमन्वितसगणेश गौर्यादिमातृकाणां बलिः

ॐ भूर्भुवः स्वः वसोर्धारासमन्वित सगणेश-गौर्याद्यावाहितमातृः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः एभिर्गन्धाद्युपचारैः वः अहं पूजयामि । ॐ भूर्भुवः स्वः वसोर्धारासमन्वित सगणेशगौर्या-द्यावाहितमातृभ्यः साङ्गाभ्यः सपरिवाराभ्यः सायुधाभ्यः सशक्तिकाभ्यःइमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि । भो भो वसोर्धारासमन्वित सगणेशगौर्या-द्यावाहितमातरः इमं बलिं गृह्णीत । मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरुत । आयुःकर्त्र्यः क्षेमकर्त्र्यः शान्तिकर्त्र्यः पुष्टिकर्त्र्यं तुष्टिकर्त्र्यः निर्विघ्नकर्त्र्यः कल्याणकर्त्र्यः वरदा भवत । अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन वसोर्धारासमन्वित सगणेश गौर्याद्यावाहित मातराः प्रीयन्तां न मम ।।

दक्षिण में बलि सामग्री से वसोर्धारासमन्वित गणेश गौरी आदि के लिए बलि देवें ।

आग्नेय्यां गणपतिबलिः

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतिं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । गणपतये साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकम् इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि । भो गणपते इमं बलिं गृहाण । मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुःकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन गणपतिः प्रीयतां न मम ।।

अब हाथ में बलि सामग्री लेकर अग्नि कोण में गणपति के लिए बलि देवें । तथा अन्त में " अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन" आदि वाक्य पढ़ें ।

ब्रह्मादि वास्तुमण्डलदेवतासहित वास्तु पुरुष बलिः

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मादिवास्तुमण्डलदेवतासहितं वास्तुपुरुषं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मादिवास्तुमण्डलदेवतासहिताय साङ्गाय सपरिवाराय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सायुधाय सशक्तिकाय वास्तुपुरुषाय इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि ।। भो ब्रह्मादि-वास्तुमण्डलदेवतासहितवास्तुपुरुष इमं बलि गृहाण । सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुःकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता वरदो भव । अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन ब्रह्मादिवास्तुमण्डलदेवतासहित-वास्तुपुरुष प्रीयतां न मम ।।

तदनन्तर बलि सामग्री लेकर उपर्युक्त मन्त्र से ब्रह्मादिवास्तुमण्डलसहित वास्तु पुरुष के लिए बलि देवें । और अन्त में "अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन" वाक्य पढ़ें ।

आग्नेय्यां योगिनीबलिः

ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती गजाननादिचतुः षष्टियोगिनीः साङ्गा सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः एभिर्गन्धाद्युपचारैः अहं पूजयामि । ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती सहिताभ्यः गजाननादि-चतुषष्टियोगिनीभ्यः साङ्गाभ्यः सपरिवाराभ्यः सायुधाभ्यः सशक्तिकाभ्यः इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि ।। भो भो श्री महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती सहिता गजाननादिचतुःषष्टियोगिन्यः इमं बलिं गृह्णीत । मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरुत । आयुःकर्त्र्यः क्षेमकर्त्र्यः शान्तिकर्त्र्यः पुष्टिकर्त्र्यः तुष्टिकर्त्र्यः निर्विघ्नकर्त्र्यः कल्याणकर्त्र्यः वरदा भवत । अनेन पूजन बलिदानेन श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती सहिता गजाननादिचतुःषष्टियोगिन्यः प्रीयन्तां न मम ।।

तदनन्तर बलि सामग्री लेकर उपर्युक्त मन्त्र से श्री महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती सहित चौंसठ योगिनी के लिए अग्नि कोण में बलि देवें और अन्त में "अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन" आदि वाक्य पढ़ें ।

वायव्यां क्षेत्रपाल बलिः

ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्रपालसहितान अज राद्येक-पञ्चाशत्क्षेत्रपालदेवान् साङ्गान् सपरिवारान् सायुधान् सशक्तिकान् एभिर्गन्धाद्युपचारैर्धः अहं पूजयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्रपाल सहितेभ्योऽजराद्येक-पञ्चाशत्क्षेत्रपाल देवेभ्यः साङ्गेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः इमं सदीपम् आसादितं बलिं समर्पयामि ।। भो भो क्षेत्रपालसहिता अजराद्येक-पञ्चाशत्क्षेत्रपालदेवाः इमं बलिं गृह्णीत । मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरुत । आयुःकर्तारः क्षेमकर्तारः शान्तिकर्तारः पुष्टिकर्तारः तुष्टिकर्तारः निर्विघ्नकर्तारः कल्याणकर्तारः वरदा भवत । अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन क्षेत्रपाल सहिता अजराद्येक-पञ्चाशत्क्षेत्रपालदेवाः प्रीयतां न मम ।।

तदनन्तर बलि सामिग्री लेकर उपर्युक्त मन्त्र से वायव्य कोण में क्षेत्रपाल सहित अजरादि एक पञ्चाशतदेवों के लिए बलि देवें । तथा अन्त में "अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन" आदि वाक्य पढ़ें ।

मध्यपीठे प्रधानदेवतायाः श्रीगायत्र्या बलिः

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मादिसर्वतोभद्र मण्डल-देवतासमन्वितां श्रीगायत्रीपीठयन्त्रावरणदेवतासहितां भगवतीं श्री गायत्रीदेवीं साङ्गां सपरिवारां सायुधां सशक्तिकाम् एभिर्गन्धाद्युपचारैस्त्वामहं पूजयामि । ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मादिसर्वतोभद्रमण्डलदेवतासमन्वितायै श्री गायत्री पीठ यन्त्रावरणदेवतासहितायै भगवत्यै श्री गायत्रीदेव्यै साङ्गायै सपरिवारायै सायुधायै सशक्तिकायै इमं सदीपम् आसादितं बलि समर्पयामि ।। भो भो ब्रह्मादिसर्वतोभद्रमण्डलदेवतासमन्विते श्री गायत्रीपीठ यन्त्रावरणदेवतासहिते भगवति श्री गायत्रीदेवि इमं बलिं गृहाण । मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु । आयुःकर्त्री क्षेमकर्त्री शान्तिक र्त्री पुष्टिकर्त्री तुष्टिकर्त्री निर्विघ्नकर्त्री वरदा भव । अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन सर्वतोभद्रमण्डल-देवतासमन्विता श्री गायत्रीपीठयन्त्रावरणदेवता सहिता भगवती श्री गायत्रीदेवी प्रीयतां न मम ।।

तदनन्तर हाथ में बलि सामग्री लेकर उपर्युक्त मन्त्र से मध्य में सर्वतोभद्र देवताओं के सहित श्री गायत्रीदेवी के लिए बलि देवें तथा अन्त में "अनेन पूजन पूर्वक बलिदानेन" आदि वाक्य पढ़ें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अन्य देवताओं को बलि

ॐ भूताय त्वा नारातये स्वरभिविख्ये येषंदु ष्टहन्तां दुर्य्याः पृथिव्यामुर्वन्तरिक्षमन्वेमि । पृथिव्यास्त्वानाभौसा दयाम्यदित्याऽउपस्थेऽग्ने हव्य ष्टरक्ष ।।

अनेन मन्त्रेण क्षेत्रपालबलिनेतारं प्रति तण्डुला-न्प्रक्षिपेत् ।

"ॐ भूताय" इस मन्त्र से अक्षत प्रक्षेप करके अन्य देवताओं को बलि प्रदान करें ।

बलिदान क्रिया

यज्ञों में पशुबलि का आलंकारिक वर्णन आया है, जिसके अनुसार गौ, अश्व, अज आदि की बलि के विषय में लोग समझते आये हैं, किन्तु बात ऐसी नहीं है । यज्ञ जैसे शुभ कृत्यों में बलिदान का अर्थ मनुष्य की बुराइयाँ छोड़ने से सम्बन्ध रखता है । वैदिक काल में मनुष्य की विभिन्न बुराइयों के नामों के रूप में ही अज, गौ, अश्व आदि शब्दों का प्रयोग किया गया होगा । यज्ञ कार्यों में बलिदान की क्रिया सम्पन्न कराने के लिए लोगों से यज्ञ भगवान् की साक्षी में अपनी बुराइयों का त्याग कराना चाहिए ।

बुराइयाँ

(१) नशेबाजी- शराब, चरस, भाँग, अफीम, तम्बाकू का सेवन ।

(२) मांसाहार- पशुबलि, मांस, मछली, अण्डे आदि अभक्ष्य पदार्थों का उपभोग ।

(३) अनीति और बिना परिश्रम की कमाई- चोरी, रिश्वत, जुआ, लाटरी आदि ।

(४) कटु भाषण- गाली देना, तू कहना, अपमानजनक कठोर शब्द बोलना, निन्दा, चुगली आदि करना ।

(५) विवाह विकृति- अनमेल विवाह, विवाह में अपव्यय, बाल विवाह, दहेज माँगना आदि ।

(६) मृत्युभोज- अन्त्येष्टि क्रियोपरान्त शास्त्रोक्त ब्राह्मण भोजन के अलावा बड़े प्रीति भोज करना ।

(७) प्रमाद-आलस्य- परिश्रम से जी चुराना, नियत समय पर काम न करना, आलस्य में समय बिताना, नियमितता न बरतना ।

(८) छल, धोखादेही- विश्वासघात ढोंग, शेखीखोरी, ठगना, शुद्ध वस्तु में मिलावट करना, कम तोलना, कम नापना, झूठ बोलना आदि ।

(९) काम विकृति- पतिव्रत और पत्नीव्रत धर्म की मर्यादाओं का उल्लंघन, कामुकता की दृष्टि, अश्लील साहित्य का अध्ययन, अश्लील चित्र दर्शन, कामुकता की कल्पना ।

अच्छाइयाँ या सद्गुण-

(१) उपासना- परमात्मा को सर्वव्यापी और न्यायकारी मानना और इसकी नित्य नियमित उपासना करना ।

(२) स्वच्छता- शरीर, वस्त्र, मकान, सामान एवं मन को स्वच्छ, पवित्र रखना ।

(३) सादगी- रहन, सहन एवं वेशभूषा में सादगी बर्तना ।

(४) शिष्टाचार- बड़ों का आदर पूर्वक अभिवादन, नागरिक कर्तव्यों का पालन, दूसरों के साथ आत्मीयतापूर्ण व्यवहार ।

(५) स्वाध्याय- जीवन की समस्याओं को सुलझाने वाले सत्साहित्य का अध्ययन ।

(६) संयम- जिह्वा तथा कर्मेन्द्रिय का संयम ।

(७) दान- समाज में सत्प्रवृत्तियों की वृद्धि एवं गिरे हुओं को उठाने के लिए समय श्रम एवं धन का नियमित दान ।

(८) पुरुषार्थ- धैर्य साहस के साथ जीवन में आगे बढ़ते रहना, दुष्प्रवृत्तियों से असहयोग एवं संघर्ष, उज्ज्वल भविष्य में आस्था रखना ।

(९) प्रसन्नता- चिन्ता, निराशा, भय, क्षोभ आदि को छोड़ना एवं सदैव प्रसन्न रहने की चेष्टा करना ।

बलिदान-सङ्कल्प

यज्ञ-मण्डप में बैठे हुए आहुतियाँ देने वाले याज्ञिकों को तो बलिदान-सङ्कल्प अनिवार्य रूप से करना चाहिए । जो यज्ञशाला से बाहर हैं, दर्शन करने या किसी अन्य प्रकार से यज्ञ में भाग ले रहे हैं, वे भी बलिदान कृत्य में भाग ले सकते हैं ।

पीछे लिखी हुई बुराइयों को छोड़ने एवं अच्छाइयों को ग्रहण करने के सम्बन्ध में उपस्थित लोगों को विस्तारपूर्वक समझा दिया जाना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने में जो बुराई हो उसी का त्याग किया जाना चाहिए । जो बुराई है ही नहीं उसका त्याग संकल्प करके बलिदान की लकीर मात्र नहीं पीटी जानी चाहिए । हर व्यक्ति में बहुत-सी बुराइयाँ होती हैं, उनमें से कम से कम एक तो यज्ञ भगवान को प्रसन्न करने के लिए छोड़नी ही चाहिए और उसका त्याग संकल्प करना ही चाहिए । इसी प्रकार गुण, कर्म, स्वभाव में समावेश किये जाने योग्य अनेकों अच्छाइयाँ भी हैं, जिनमें से कुछ का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है । इनमें से जो अपने में कम दीखें उनमें से कम से कम एक का आरम्भ इसी समय कर देना चाहिए । इसका भी संकल्प लेना चाहिए ।

बलिदान संकल्प करने वाले लोग अपने मनों में पहले से ही निश्चय करलें कि क्या छोड़ना और क्या ग्रहण करना है, तब संकल्प करें ।

दाहिने हाथ में चावल, पुष्प, जल लें और बाँये हाथ को उसके नीचे लगा लें । कहीं-कहीं यज्ञोपवीत को भी संकल्प में साक्षी किया जाता है और दाहिने हाथ के अँगूठे में उसे भी लगा लेते हैं ।

संकल्प मन्त्र

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीय परार्धे, श्रीश्वेतवाराह कल्पे, वैवस्वतमन्वंतरे, अष्टाविंशतितमे कलौ, कलियुग प्रथम चरणे, भूलोके भारतवर्षे, अस्मिन्वर्त्तमाने..... मासे..... पक्षे.....तिथौ..... वासरे.....गोत्रोत्पन्न..... नामाहं,.....दोषाणां दूरी करणार्थं सुदृढां सत्यं प्रतिज्ञा महं करिष्ये ।

नाम के पश्चात् खाली स्थान में जिस बुराई को छोड़ना हो, उसका उल्लेख करना चाहिए । प्रकारान्तर से यही देव-दक्षिणा, श्रद्धांजलि है ।

यज्ञ आयोजन में उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति को यज्ञ भगवान की देवताओं की श्रद्धा-दक्षिणा के रूप में अपनी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक दुष्प्रवृत्तियों में से कोई एक छोड़ने का अनुरोध करना चाहिए । कहना चाहिए, देवता किसी की श्रद्धा भक्ति इसी आधार पर परखते हैं कि उनने कुमार्ग छोड़ने और सन्मार्ग अपनाने के लिए कितना साहस दिखाया । साहस ही वह धन है, जिसके आधार पर देव शक्तियों की प्रसन्नता एवं अनुकम्पा प्राप्त की जा सकती है । इस अवसर पर जबकि सभी देवता उपस्थित हुए हैं, सब उपस्थित सज्जनों को उन्हें कुछ भेंट करनी चाहिए । खाली हाथ स्वागत और विदाई नहीं करनी चाहिए । इस श्रद्धांजलि में दुष्प्रवृत्ति वही छोड़ी जाय जो इस समय अपने में हो । जो नहीं है उन्हें छोड़ने का कोई प्रयोजन नहीं प्रतिज्ञा को दृढ़ता पूर्वक निभाया जाना चाहिए ।

श्रद्धाञ्जलि अर्पणकर्ताओं को पुरोहित मंगल आशीर्वाद तिलक समेत एक मंगल पुष्पोपहार देते जायँ ।

क्षमा प्रार्थना

यज्ञ भगवान की स्तुति

यज्ञ रूप प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए ।
छोड़ देवें छल कपट को, मानसिक बल दीजिए ।।
वेद की बोलें ऋचाएँ, सत्य को धारण करें ।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोक सागर से तरें ।।
अश्वमेधादिक रचाएँ, यज्ञ पर उपकार को ।
धर्म मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को ।।
नित्य श्रद्धा-भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें ।
रोग पीड़ित विश्व के, सन्ताप सब हरते रहें ।।
कामना मिट जायँ मन से, पाप अत्याचार की ।
भावनाएँ पूर्ण होवें, यज्ञ से नर-नारि की ।।
लाभकारी हो हवन, हर जीव-धारी के लिए ।
वायु जल सर्वत्र हों, शुभ गन्ध को धारण किए ।।
स्वार्थ भाव मिटे हमारा, प्रेम पथ विस्तार हो ।
'इदं न मम' का सार्थक, प्रत्येक में व्यवहार हो ।।
हाथ जोड़ झुकाय मस्तक, वन्दना हम कर रहे ।
नाथ करुणा रूप करुणा, आपकी सब पर रहे ।।

विसर्जन

आवाहन किये गये यज्ञ पुरुष, गायत्री माता सर्वतोभद्र चक्र में स्थापित देव परिवार, सबको भावभरी विदाई देते हुए पूजा-वेदी पर पुष्प वर्षा की जाती है । पुष्पों के अभाव में पीले अक्षत बरसाये जाते हैं । विसर्जन के साथ यह प्रार्थना भी है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसा ही देव अनुग्रह बार-बार मिलता रहे । देव विसर्जन के लिए बायें हाथ में पुष्प या चावल लेकर निम्नलिखित मन्त्रों को पढ़ें और जिस -जिस देवता का विसर्जन करना है, उसके स्थान पर दाहिने हाथ से अक्षत छोड़ते जायँ । मन्त्र :-

गच्छ त्वं भगवन्नग्ने स्वस्थाने कुण्ड मध्यतः ।
हुतमादाय देवेभ्यः शीघ्रं देहि प्रसीद मे ।। १ ।।
गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर ।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन ।। २ ।।
भूमध्ये गच्छ सिद्ध त्वं गोलोके त्वं प्रजापते ।
वरुण त्वं जले गच्छ सागरे कलशं व्रज ।। ३ ।।
हेमन्ते गच्छ गणप ब्रह्माण्डे त्वं पितामह ।
विष्णो त्वं गच्छ वैकुण्ठे कैलासे त्वं महेश्वर ।। ४।।
लक्ष्मी त्वं हि महाविष्णुं स्वभर्तारमनुव्रज ।
रवे गच्छ कलिङ्गे त्वं चन्द्रे त्वं यमुनातटे ।। ५ ।।
अवन्तीं गच्छभौम त्वं बुध मगधे व्रज
सिन्धुदेशे जीव गत्छ कवे भोज कटे व्रज ।। ६ ।।
शने त्वं गच्छ सौराष्टे राहो राठी नकं व्रज ।
अवन्ती गच्छ केतो त्वं स्वं एवं स्थानं नवग्रहाः ।। ७।।
इन्द्राऽमरावतीं गच्छ तथाग्नेयीं च पावक ।
व्रज संयमिनीं धर्म नैर्ऋतीं व्रज निर्ऋते ।। ८ ।।
वरुणाऽम्भोनिधौ गच्छ सर्वत्र व्रज मारुत ।
गच्छाऽलकां कुवेर त्वं मीशैशानीं दिशं व्रज ।। ९।।
माहेन्द्रे त्वं व्रजागस्त्य ध्रुव त्वं मेरुपर्वते ।
तथा भवद्भिर्ऋषिभिर्गन्तव्यमृषि मण्डले ।। १० ।।
वसवोऽष्टौ तु गङ्गायां रुद्र रुद्रपुरीं व्रज ।
गन्धर्वाः किन्नराः सर्वे स्वं स्वं स्थानं च गच्छत ।। ११ ।।
उत्तमे शिखरे देवी, भूम्यां पर्वत मूर्धनि ।
ब्राह्मणेभ्यो ह्यनुज्ञातं गच्छदेवि यथा सुखम् ।। १२।।
यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम् ।
इष्टकामसमृद्धयर्थं पुनरागमनाय च ।। १३ ।।

अथाऽभिषेकः

अभिषेके पत्नी वामतः । रुद्रकलशात्पल्लवोदकैः सकलत्रपुत्रमभिषिञ्चेत् ।

अभिषेक के समय पत्नी को वाम भाग में किये हुए सपरिवार (खड़े हुये) यजमान के ऊपर आचार्य निम्न लिखित मन्त्रों को पढ़कर (रुद्रकलश के जल से पञ्चपल्लव द्वारा) अभिषेक करें। जल सिंचन, मार्जन करें । मन्त्र :-

सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
वासुदेवो जगन्नाथस्तथा सङ्कर्षणो विभुः ।। १ ।।
वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः ।
ब्रह्मणा सहिताः सर्वे दिक्पालाः पान्तु ते सदा ।। २ ।।
कीर्त्तिलक्ष्मीर्धृतिमेधा पुष्टिः श्रद्धा क्रिया मतिः ।
बुद्धिर्लज्जा वपुः शान्तिः कान्तिस्तुष्टिश्च मातरः ।। ३ ।।
सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदानदाः ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च मुनयः सकला ग्रहाः ।। ४ ।।
सोंभाग्यं ते प्रयच्छन्तु वेदमन्त्राश्च कल्पकाः ।
ब्रह्माणी चैव गायत्री सावित्री श्रीरुमा सती ।। ५ ।।
अरुन्धत्यनसूया च तव सन्तु फलप्रदाः ।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ।। ६ ।।
शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं ज्योतिषं तथा ।
छन्दाः शास्त्राणि सर्वाणि पुराणैः सकलैः सह ।। ७ ।।
भूराद्याः सप्तलोकाश्च पातालानि चतुर्युगम् ।
ब्रह्मादिसप्तकल्पाश्च मनवश्च चतुर्दश ।। ८ ।।
संवत्सराश्च ऋतवो मासपक्षदिनानि च ।
एते त्वामभिषिञ्चन्तु सर्वकामार्थ सिद्धये ।। ९ ।।
सहस्राक्षं शतधारमृषिभिः पावनं कृतम् ।
तेन त्वामभिषिञ्चामि पावमान्यः पुनन्तु ते ।। १० ।।
यत्ते केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यच्च मूर्द्धनि ।
ललाटे कर्णयोरक्ष्णोरापो निघ्नन्तु ते सदा ।। ११ ।।
शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु । अमृताभिषेकोऽस्तु ।

अभिषेक के पश्चात् "ॐ स्वस्ति नऽइन्द्रो" इत्यादि मन्त्र पढ़कर यजमान को तिलक लगावें और "मन्त्रार्थः सफलाः" इत्यादि वाक्य पढ़कर फल दान देवें ।

तिलक एवं फलदान

ॐ स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ।। १ ।।
मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ।
शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव ।। २ ।।

यजमान आचार्य तथा ऋत्विजों को दक्षिणा दें । अन्न, वस्त्र, पात्र, गौ तथा धन जो देना हो उसका संकल्प करके ब्राह्मणों के चरण स्पर्श करें ।

इसके पश्चात् जयघोष अन्त में प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम समाप्त किया जाय ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

'दक्षिणा वाद' का स्वरूप'

ब्राह्मण को भू सुर भी कहते हैं । 'भूसुर' का अर्थ है पृथ्वी का देवता । अन्य मनुष्य तो मानवता के साधारण नियमों का पालन करते हुए अपने कर्तव्य-धर्म की रक्षा ही कर पाते हैं । पर ब्राह्मण इससे बहुत आगे बढ़ा होता है, वह अपने ऊपर संयम, त्याग, तपस्या के कठोर नियमों का पालन करके अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताऐं न्यूनतम बना लेता है, यहाँ तक कि भोजन-वस्त्र में भी इतनी कमी करता है कि उसका जीवन निर्वाह अत्यन्त ही सरल हो जाय । कारण यह है कि ब्राह्मण को अपनी शक्तियों का अधिकतम भाग परमार्थ में, लोक सेवा में, भगवत् आराधना में लगाना होता है । यदि वह अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं और आवश्यकताओं को बढ़ा ले, तो फिर वह अपने अभीष्ट उद्देश्यों को पूरा नहीं कर सकता । ब्राह्मण सदा से इस तथ्य को भली प्रकार समझते रहे हैं और सांसारिक प्रलोभनों से बचते रहे हैं । उनकी इस त्याग वृत्ति ने ही उन्हें भूसुर बनाया । समस्त समाज में वे श्रेष्ठ गिने गये । संसार ने उनके त्याग का प्रत्युपकार अपने अन्तःकरण की सच्ची श्रद्धा उनके चरणों पर उड़ेल कर, चुकाया ।

इस गये-गुजरे जमाने में भी उन सच्चे ब्राह्मणों के वंशजों का मान इसलिए होता है कि इनके पूर्वज किसी समय में भूसुर थे । आज ये अपने पूर्वजों जैसे श्रेष्ठ नहीं रहे, तो भी यदि उन भूसुरों की महानता का एक कण भी इनमें शेष होगा तो भी ये प्रणाम करने योग्य हैं । आज भी ब्राह्मण को अपने पूर्वजों की विशेषताओं के कारण मान प्राप्त होता है और उन्हें सब लोग झुककर प्रणाम करते हैं ।

ब्राह्मणत्व की माता गायत्री और पिता यज्ञ हैं । भगवान मनु ने कहा है कि कोई व्यक्ति जन्म से ही ब्राह्मण नहीं होता वरन् स्वाध्याय, व्रत, होम, वेद-ज्ञान, तप, यज्ञ आदि द्वारा उसे ब्राह्मण बनाया जाता है । यथा :-

स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनज्यासुतैः
महायज्ञैश्च यज्ञश्च ब्राह्मी यं क्रियते तनुः ।

स्वाध्याय, व्रत, होम, त्रियै विद्या के ज्ञान, धार्मिक सन्तानोत्पादन, यज्ञ तथा महायज्ञों से यह शरीर ब्राह्मण किया जाता है ।

वेद-जननी गायत्री की उपासना से स्वाध्याय, व्रत, वेदज्ञान आदि का आरम्भ होता है और यज्ञ का तपश्चर्या से सम्बन्ध है । इस प्रकार गायत्री माता और यज्ञ पिता से ही ब्राह्मणत्व का जन्म होता है । माता-पिता की महिमा बढ़ाना, उनके महत्व को उज्ज्वल एवं प्रकाशवान् करना सत्पुत्र का कर्त्तव्य है । पूर्व काल में ब्राह्मण लोग बड़े प्रयत्न, उत्साह, लगन एवं श्रम से स्वयं गायत्री उपासना करते थे और सभी द्विजों को इस कल्याण-परक मार्ग पर प्रवृत्त करके उन्हें सुख-शान्ति के परमलक्ष्य तक पहुँचाने का पुण्य-लाभ करते थे । इसी प्रकार वे स्वयं यज्ञ करते थे और अन्य अधिकारियों को प्रेरणा पूर्वक यज्ञ कराके विश्व कल्याण के एक महान् परमार्थ का आयोजन करते थे। उन्हें यज्ञादिक में कोई दान-दक्षिणा मिलती थी, तो उसके एक-कण का उपयोग भी व्यक्तिगत भोग-ऐश्वर्य में नहीं करते थे वरन् इस हाथ लेकर उसे यज्ञ, गुरुकुल, ग्रन्थ-निर्माण, सत्संग-आयोजन, चिकित्सा आदि कार्यों में लगा देते थे । ब्राह्मण का कर्तव्य ही यह था- (१) विद्या पढ़ना-विद्या पढ़ाना (२) दान लेना-दान देना (३) यज्ञ करना-यज्ञ कराना । स्पष्ट है कि ब्राह्मण-जीवन की गतिविधि परमार्थमय ही होती थी । वह वेद विद्या (गायत्री) यज्ञ और परमार्थ (दान) में निरन्तर संलग्न रहता था ।

समय के कुचक्र ने ब्राह्मण का भी पतन कर दिया । वह अपने कर्त्तव्य-धर्म को भुलाकर लोभ में फँसने लगा । कष्ट साध्य तपश्चर्याओं और लोक-सेवा की प्रवृत्तियों से आँख चुराकर, पैर पुजाने और दक्षिणा बटोरने के लालच में फिसलने लगा । धीरे-धीरे जब यह प्रवृत्ति अधिक बढ़ी, तो उसने दक्षिणा बटोरना ही अपना लक्ष्य बना लिया । जिस कार्य में उन्हें अधिक दक्षिणा मिले, उसे ही करना उनने लक्ष्य बनाया । लोगों से कहने लगे, स्वाध्याय, उपासना, तप, यज्ञ आदि में समय और धन खर्च करने की अपेक्षा भरपूर दक्षिणा हमें दो और स्वर्ग के अधिकारी बन जाओ । ऐसे अनेक श्लोक उनने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुस्तकों में सम्मिलित कर लिये और ''दक्षिणा वाद'' का झण्डा गाड़ दिया । सारे धर्म-कर्म की धुरी दक्षिणा बन गई ।

ब्राह्मण को उसकी शारीरिक आवश्यकता की वस्तुऐं अन्न, वस्त्र, दूध (गौ) यज्ञ में दी जाती थीं । ऐसा प्राचीन ग्रन्थों में उल्लेख है :-

गां दद्यातय वानन्ते ब्रह्मणे वाससी तथा ।

- कात्यायन

यज्ञ के अन्त में ब्राह्मण को गौ और वस्त्र देना चाहिए ।

गौ, अन्न, वस्त्र जैसी सस्ती और अधिक संख्या में जमा करने में असुविधा जनक वस्तुओं को लेने के स्थान पर उनने सोना-चांदी आदि कीमती और अधिक मात्रा में आसानी से संग्रह हो सकने वाली वस्तुओं के विधान बनाये । यथा -

सुवर्णं परमं दानं सुवर्णं दक्षिणा परा ।
सर्वेषामेव दानानां सुवर्णं दक्षिणेष्यते ।

सोने का दान ही परम दान है । सोने की दक्षिणा ही विशेष दक्षिणा है । सब दानों में स्वर्ण का दान ही प्रशंसनीय है ।

एकादश स्वर्ण निष्कः प्रदातव्या सदक्षिणाः ।
पलान्येकादश तथा दद्याद्वित्तानुसारतः ।
अन्येभ्योऽपि यथाशक्ति द्विजेभ्यो दक्षिणां दिशेत् ।।

यज्ञ कराने वाले को ११ अशर्फी देनी चाहिए । अपनी सामर्थ्य ठीक हो तो ४४ तोले सोना देना चाहिए । अन्य ब्राह्मणों को भी शक्ति भर दक्षिणा देनी चाहिए ।

''दक्षिणा च फलप्रदा ।''

दक्षिणा ही फल देने वाली है ।

सर्वेषा कर्मणं देवि सारभूता च दक्षिणा ।

सब कर्मों में दक्षिणा ही सार है ।

दक्षिणा दक्षतेः समर्धयात् कर्मणः व्यद्धं समर्धयतीति ।

यदि यज्ञ कर्म में कुछ न्यूनता रह जाती है, तो दक्षिणा बढ़ा देने से उसकी पूर्ति हो जाती है ।

माषाणां षोडशादूर्ध्वं कुर्याद्धेम पवित्रकम् ।
तेभ्यः स्वल्पतरं न्यूनं न कुर्वीत् कदाचन ।।

सोलह मासे से अधिक भारी सोने की पवित्री बनावे । इससे जरा भी कम वजन न हो ।

वस्त्र युग्मं महावस्त्रं केयूरं कर्णभूषणम् ।
अंगुलिभूषणश्चैव मणि बन्धस्य भूषणम् ।।
कण्ठाभरण युक्तानि प्रारम्भे धर्म कर्मणः ।
पुरोहिताय दत्वाऽथ ऋत्विग्भ्यश्चापि दापयेत् ।।

- लिंग पुराण

धोती, दुपट्टा, दुशाला, कानों के आभूषण, कर्णफूल, अंगूठी, कङ्कण, गले का हार, यह वस्तुएँ धर्म-कर्म आरम्भ करते ही पुरोहित और ऋत्विजों को दान करे ।

दक्षिणात्युत्तमा मध्यमाचाधमेति त्रिधामता ।
तत्र सौवर्ण निष्काणि दस साहस्त्रिकोत्तमा ।
तदर्ध मध्यमा प्रोक्ता तृतीया त्रिसहस्त्रिका ।।

- महार्णवे

दक्षिणा तीन प्रकार की कही गई है । उत्तम १० हजार निष्क (३६२५० रुपया) मध्यमा ५ हजार निष्क (१८१२५ रुपया) अधम दक्षिणा तीन हजार निष्क (१०८७५ रुपया) होती है ।

कभी-कभी ऐसा भी होता था कि मन चाही दक्षिणा न दे सकने पर यजमान लोग दक्षिणा उधार कर देते थे । उधार पटाने की जब उनमें सामर्थ्य न होती थी, ब्राह्मण तकाजा करते थे, फिर भी वह वसूल न हो पाता था, ऐसी दशा में यजमान को नरक जाने का भय दिखाया गया । देखिये-

कर्ताकर्मणि पूर्णोऽपि तत्क्षणात् यदि दक्षिणाम् ।
न दद्यात् ब्राह्मणेभ्यश्च दैवेनाज्ञानतोऽथवा ।
मुहुर्ते समतीते च द्विगुणा सा भवेद् ध्रुवम् ।
एकरात्रे व्यतीते तु भवेद्दस गुणा च सा ।
त्रिरात्रेवै दशगुणां सप्ताहे द्विगुणा ततः ।
मासे लक्षगुणा प्रोक्ता ब्राह्मणानां च वर्द्धते ।
सम्वत्सरे व्यतीते तु सा त्रिकोटि गुणा भवेत् ।
कर्म तद्य जमानानां सर्व वै निष्फलं भवेत् ।
स च ब्रह्मस्वापहारी न कर्माहोऽशुचिनेः ।
दरिद्री व्याधि युक्तश्च तेन पापेन पातकी ।
तद्गृहाधाति लक्ष्मी च शापं दत्वा सुदारुणम् ।
पितरो नैव गृह्णन्ति तद्दतं श्राद्ध तर्पणम् ।
एवं सुराश्च तत्पूजां तद्दत्तं पावका हुतम् ।।

- ब्रह्म वैवर्त

यज्ञ आदि कार्य पूरा हो जाने पर भी जो दैवयोग से अज्ञान वश दक्षिणा नहीं देता, तो प्रतिक्षण वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दक्षिणा दूनी होती जाती है । एक रात बीत जाने पर छः गुनी, तीन रात बीत जाने पर दस गुनी, सात दिन बीत जाने पर बीस गुनी, एक महीना बीत जाने पर लाख गुनी, एक वर्ष बीत जाने पर करोड़ गुनी हो जाती है । और यजमान का वह सब कर्म निष्फल हो जाता है । वह यजमान ब्रह्म-धन का चोर, सत्कर्मों का अयोग्य और अपवित्र हो जाता है । तथा उस भयकंर पाप के कारण दरिद्री एवं व्याधि ग्रस्त हो जाता है । लक्ष्मी उसके घर से कठिन शाप देकर अन्यत्र चली जाती है । पितृगण उसके हाथ का श्राद्ध-तर्पण ग्रहण नहीं करते । देवता उसकी आहुति तथा पूजा को स्वीकार नहीं करते ।

नार्ययेद् यजमानश्चैद् याचितारं च दक्षिणाम् ।
भवेद् ब्रह्म स्वापहारी कुम्भी पाकं व्रजेद् ध्रुवम् ।
वर्षलक्षं वसेत्तत्र यमदूतेन ताडितः ।
ततो भवेत् स चाण्डालो व्याधि युक्ते दरिद्रकः ।
पातयेत् पुरुषान् सप्त पूर्वकान् वे पूर्व जन्मनः ।

उधार हुई दक्षिणा का तकाजा करने पर भी यदि यजमान दक्षिणा नहीं देता, तो वह ब्रह्म धनहारी निश्चय ही कुम्भीपाक नरक में पड़ता है, वहाँ एक लक्ष वर्ष रहता है और यमदूतों द्वारा कुटता-पिटता है । इसके बाद वह चाण्डाल, व्याधि- ग्रस्त, दरिद्री बनता है । उसकी सात पीढ़ी के पूर्वज नरक में चले जाते हैं ।

यत्कर्म दक्षिणाहीनं कुरुते मूढ़धीशठः ।
सपापी पुरुष हीनश्च..... ।।

जो दक्षिणा-रहित कर्म करता है, वह मूढ़ बुद्धि, शठ, पापी, पुण्यहीन है ।

यों यज्ञ कराने वाले ब्राह्मणों को दक्षिणा देना उचित और आवश्यक है, शास्त्रों में इसका उल्लेख भी है । साधारण विवेक बुद्धि से सभी यज्ञ कराने वाले यथा शक्ति देते भी हैं, पर ''दक्षिणा वाद'' को ऐसे निकृष्ट रूप में उपस्थित करने से यज्ञ कराने वालों का मान बढ़ा नहीं, वरन् घटा ही । दक्षिणा और ब्रह्म-भोज का बहुत बोझ होने पर यजमान लोगों के लिए यज्ञादि करना कठिन हो गया । उनकी उपेक्षा होने लगी और धीरे-धीरे उनकी प्रथा ही घट गई । उसकी हानि सभी को हुई, ब्राह्मणों को सोने का अण्डा देने वाली मुर्गी का पेट चीरने की कोशिश में केवल पछताना हाथ लगा । यजमान यज्ञ से प्राप्त होने वाले लाभों से वञ्चित हो गये । संसार में अवांछनीय वातावरण बढ़ा और उसकी शुद्धि न होने से जनता दैवी कृपाओं से वंचित होकर सुख-शान्ति से वंचित हो गई । इस प्रकार 'दक्षिणा वाद' किसी के पक्ष में भी हितकर सिद्ध न हुआ, वरन् सभी की हानि हुई । यज्ञ-रहित ब्राह्मण अपने ब्राह्मणत्व से च्युत हुए और उनने अपनी वेदमाता तथा यज्ञपिता को उपेक्षित, लाञ्छित एवं अस्त-व्यस्त दशा में डाल दिया ।

***

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दैनिक उपासना में अग्निहोत्र का समावेश

गायत्री उपासना में यज्ञ का घनिष्ट सम्बन्ध है । शास्त्रों में कहा गया है कि गायत्री उपासक को अपनी सुविधा और स्थिति के अनुसार हवन करना चाहिए । सामान्य उपासना क्रम में तो हवन का समावेश किया जाना ही श्रेष्ठ फलदायक कहा गया है, पर अनुष्ठान में तो उसकी विशेष अनिवार्यता बतायी गई है । बड़े यज्ञों की हवन विधि बहुत विस्तृत है, उन्हें अकेले किया भी नहीं जा सकता। उनके लिए अधिक साधन और अधिक समय चाहिए, इसलिए बड़े यज्ञों की हवन विधि का वर्णन पिछले पृष्ठों पर किया जा चुका है, पर जिन्हें नित्य हवन करना हो, या जिनके पास समय बहुत कम हो, उनके लिए संक्षिप्त हवन विधि नीचे दी जा रही है । यह विधि रविवार, गुरुवार अथवा किन्हीं विशेष पर्वोत्सवों पर कम से कम पाँच व्यक्ति भी मिलकर सामूहिक रूप से सम्पन्न कर सकते हैं । जिन्हें व्यक्तिगत या पति-पत्नी मिलकर ही हवन करना हो, उन्हें उपासना के बाद अग्नि-स्थापन, प्रदीपन, समिधादान, जल-प्रसेचन तथा आज्याहुति करके ही गायत्री मंत्र के साथ २४ आहुतियों का हवन कर लेना चाहिए । हवन के तदनन्तर स्विष्टकृत होम, पूर्णाहुति, वसोधारा, आरती, घृत अवघ्राण तथा भस्म-धारण के बाद शान्ति पाठ कर लेना पर्याप्त है। यह मंत्र इसी हवन विधि में दिये गये हैं । वे अलग से नोट किये जा सकते हैं तथा एक दिन के अभ्यास से यह मंत्र कण्ठस्थ भी किए जा सकते हैं ।

सामूहिक हवन के लिए सभी आगन्तुक परिजनों को स्नान आदि से शुद्ध होकर वेदी के तीन ओर तीन-तीन की संख्या में पालथी मारकर बैठना चाहिए । पूर्ण वेदी पर मंगल कलश, दीप, अक्षत, नैवेद्य, पुष्प आदि रखे जाते हैं । पूजा वेदी के सम्मुख घृत आहुति के लिए यजमान बैठते हैं । शेष सभी के सम्मुख तश्तरियों में हवन सामग्री घृत-दुग्ध मिली हुई रहती हैं । पूजन पवित्रीकरण से प्रारम्भ करें । मंत्र सब लोग सस्वर साथ-साथ बोलें, आगे-पीछे नहीं । यज्ञ में अनुशासन पूरी तरह रखा जाता है । हवन की सरल एवं संक्षिप्त विधि इस प्रकार है-

सरल संक्षिप्त हवन-विधि

(१) पवित्रीकरण

इस मंत्र से हाथ में जल लेकर मस्तक तथा सिर पर छिड़कें ।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोपिऽवा ।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ।।

(२) आचमन

निम्नलिखित मंत्रों से तीन बार आचमन करें -

ॐ अमृतोपस्तरणमसिस्वाहा ।। १ ।।
ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा ।। २ ।।
ॐ सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ।। ३ ।।

(३) शिखाबंधन

निम्न मंत्र पढ़कर शिखा में गाँठ लगावें --

चिद्रूपिणी महामाये दिव्यतेजः समन्विते ।
तिष्ठ देवि शिखामध्ये तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे ।

(४) प्राणायाम मंत्र

निम्न मन्त्र पढ़कर कम-से-कम एक बार प्राणयाम करें -

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् । ॐ भूर्भुव स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वः ॐ ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(५) न्यास

तत्पश्चात् बाँयें हाथ की हथेली में थोड़ा - सा जल लेकर दाहिने हाथ की अँगुलियों से निम्न मंत्रों द्वारा शरीर के अलग-अलग अंगों का स्पर्श कीजिये और साथ ही यह भावना कीजिये, कि मेरे ये सब अंग-प्रत्यंग शक्तिशाली, पवित्र और महा तेजवान हो रहे हैं ।

ॐ वाङ् मे आस्येऽस्तु । (मुख को)
ॐ नसोर्मेप्राणोऽस्तु । (नासिका के दोनों छिद्रों को)
ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु । (दोनों नेत्रों को)
ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु । (दोनों कानों को)
ॐ बाह्वोर्मे बलमस्तु । (दोनों बाहों को)
ॐ ऊर्वोर्मेओजोस्तु । (दोनों जंघाओं को)
ॐ अरिष्टानिमेऽङ्गानि मनुस्तन्वा मे सह सन्तु ।
(शरीर पर जल छिड़कें)

(६) पृथ्वीपूजन

निम्न मन्त्र पढ़कर पृथ्वी पर जल छिड़कें ।

ॐ पृथ्वि ! त्वया धृता लोका देवि ! विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ।

(७) कलशपूजन

निम्न मन्त्र पढ़ते हुए रोली, अक्षत, चन्दन, पुष्प, धूप, नैवेद्य आदि से कलश पूजन करना चाहिए ।

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः ।
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ।। १ ।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धराः ।
ऋग्वेदोथ यजुर्वेदो सामवेदो ह्यथर्वणः ।। २ ।।
अंगैश्च सहिताः सर्वे कलशन्तु समाश्रिताः ।
अत्र गायत्री सावित्री शान्ति पुष्टिकरी सदा ।। ३ ।।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ।
शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ।। ४ ।।
आदित्याः वसवो रुद्राः विश्वेदेवाः सपैतृकाः ।
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ।। ५ ।।
त्वत्प्रसादादिमं यज्ञ कर्तुमीहे जलोद्भवः ।
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ।। ६ ।।

(८) देवपूजन

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुरेव महेश्वरः ।
गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः ।। १ ।।
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः ।। २ ।।
आयातु वरदे देवि अक्षरे ब्रह्मवादिनी ।
गायत्रिच्छन्दसां माता ब्रह्मयोनिर्नमऽस्तु ते ।। ३ ।।
अभीप्सितार्थसिद्धयर्थं पूजितो यः सुरासुरैः ।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ।। ४ ।।
सर्वमङ्गलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ।। ५ ।।
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेतसर्वविघ्नोपशान्तये ।। ६ ।।
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम् ।
येषां हृदिस्थो भगवान्मंगलायतनो हरिः ।। ७ ।।
विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्माविष्णु महेश्वरान् ।
सरस्वतीं प्रणम्यादौ शान्तिकार्यार्थसिद्धये ।। ८ ।।
मङ्गलं भगवान् विष्णु मङ्गलं गरुड़ध्वजः ।
मङ्गलं पुण्डरीकाक्षो मङ्गलायतनो हरिः ।। ९ ।।
त्वं वै चतुर्मुखो ब्रह्मा सत्यलोक पितामहः ।
आगच्छ मंडले चास्मिन् मम सर्वार्थसिद्धये ।। १० ।।
शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम् ।
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगम् ।।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगभिर्ध्यानगम्यम् ।
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ।। ११ ।।
वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणम् ।
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनाम्पतिम् ।।
वन्दे सूर्यशशांकवह्निनयनं वन्दे मुकुन्दप्रियम् ।
वन्दे भक्त जनाश्रयं च वरदं शिवं शङ्करम् ।। १२ ।।
ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।। १३ ।।
दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तोः,
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
द्रारिद्र्य दुःखभयहारिणि का त्वदन्या,
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ।। १४ ।।
शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनी ।
वीणा पुस्तकधारणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम्।।१५।
हस्ते स्फाटिक मालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थितां ।
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ।।
आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।। १६ ।।
कालिकां तु कलातीतां कल्याणहृदया शिवाम् ।
कल्याणजननीं नित्यं कल्याणीं पूजयाम्यम् ।। १७ ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विष्णुपादाब्जसम्भूते गंगे त्रिपथगामिनी ।
धर्मद्रवेति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि ।। १८ ।।
पुष्कराद्यानि तीर्थान् गङ्गाद्याः सरितस्तथा ।
आगच्छन्तु पवित्राणि पूजाकाले सदामम ।। १९ ।।
ब्रह्मामुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशीभूमिसुतो बुधश्च गुरुश्च शुक्रशनिराहुकेतवः सर्वेग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु ।। २० ।।
गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ।। २१ ।।
हृष्टिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता ।
गणेशेनाधिकां ह्येता वृद्धौ पूज्याश्च षोडश ।। २२ ।।
कीर्तिलक्ष्मीधृतिर्मेधा सिद्धिः प्रज्ञा सरस्वती ।
मांगल्येषु प्रपूज्याश्च सप्तैता दिव्यमातरः ।। २३ ।।
नागपृष्ठसमारुढ़ं शूलहस्तं महाबलम् ।
पातालनायकं देवं वासुदेवं नमाम्यहम् ।। २४ ।।
क्षेत्रपालान्नमस्यामि सर्वानिष्टनिवारकान् ।
अस्य यागस्य सिद्ध्यर्थं पूजयाराधितान् मया ।। २५ ।।

सर्वदेव नमस्कारम्

ॐ सिद्धि बुद्धि सहित श्रीमन्महागणाधिपतये नमः ।
ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यान्नमः ।
ॐ उमामहेश्वराभ्यान्नमः ।ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यान्नमः।
ॐ शचीपुरन्दराभ्यान्नमः ।
ॐ मातृपितृ चरण कमलेभ्यो नमः ।
ॐ कुलदेवताभ्यो नमः । ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः ।
ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः । ॐ स्थानदेवताभ्योः नमः ।
ॐ वास्तुदेवताभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ।
ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः ।
ॐ सर्वेभ्यो तीर्थेभ्यो नमः ।
ॐ एतत्कर्म प्रधान श्री गायत्री देव्यै नमः ।
ॐ पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु ।

(९) षोडशोपचार पूजनम्

ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः-आवाहयामि स्थापयामि।।१।।
आसनं समर्पयामि ।। २ ।। पाद्यं समर्पयामि ।। ३ ।।
अर्घ्यं समर्पयामि ।। ४ ।। आचमनं समर्पयामि ।। ५ ।।
स्नानम् समर्पयामि ।। ६ ।। वस्त्रम् समर्पयामि ।। ७ ।।
यज्ञोपवीतं समर्पयामि ।। ८ ।।
गन्धम् समर्पयामि ।। ९ ।। पुष्पाणि समर्पयामि ।। १० ।।
धूपम् आघ्रापयामि ।। ११ ।। दीपम् दर्शयामि ।। १२ ।।
नैवेद्यम् निवेदयामि ।। १३ ।।
अक्षतान् समर्पयामि ।। १४ ।।
ताम्बूल पुङ्गीफलानि समर्पयामि ।। १५ ।।
दक्षिणाम् समर्पयामि ।। १६ ।।
सर्वाभावे अक्षतान् समर्पयामि ।। १७ ।।
ततो नमस्कारम् करोमि ।
नमः सर्वहितार्थाय जगदाधार हेतवे ।
साष्टांगोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः ।
नमोस्त्वनन्ताय सहस्त्रमूर्तये सहस्त्र पादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्त्र नाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्त्रकोटि युगधारिणे नमः ।

चन्दन लगाने का मन्त्र-

चन्दनस्य महत्पुण्यं पवित्रं पापनाशम् ।
आपदां हरते नित्यं लक्ष्मीस्तिष्ठति सर्वदा ।।

(१०) स्वस्तिवाचनम्

हाथ में जल, पुष्प, अक्षत लेकर स्वस्तिवाचन बोला जाय । यह शुभ कार्यों की सफलता, शान्ति, सार्थकता एवं मंगलमय कार्यों के समय कल्याणकारक मन्त्र है ।

ॐ गणानां त्वा गणपति ꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिं ꣳ हवामहे निधीनां त्वां निधिपति ꣳ हवामहे वसोमम आहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम् ।। १ ।

ॐ स्वस्ति नः इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्वेदेवा स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो ऽरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ।। २ ।।

ॐ पयः पृथिव्यां पयओषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्षं पयोधा । पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ।। ३ ।।

ॐ विष्णोः रराट्मसिविष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णो स्यूरसि विष्णोध्रुवोऽसि वैष्णावमसि विष्णावे त्वा ।। ४ ।।

अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रो देवता आदित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ।।५।।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवा शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ।। ६ ।।

ॐ विश्वानिदेव सवितुर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रम् तन्न आ सुव ।। ७ ।।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!
सर्वारिष्टा सुशान्तिर्भवतु ।

(११) रक्षाविधान

आत्म रक्षा और यज्ञ कार्य की रक्षा के लिएं रक्षा-विधान किया जाता है । यज्ञकार्य में आसुरी शक्तियाँ बहुत विघ्न फैलाती रहती हैं । पूर्वकाल में भी राक्षस लोग यज्ञ-विध्वंस के लिए प्रयत्न करते थे । शुभ कार्यों में बहुधा कोई न कोई विघ्न आते रहते हैं। उनसे रक्षा करने के लिए रक्षा-विधान किया जाता है । जल, सरसों या चावलों को निम्न मन्त्रों से दशों दिशाओं में फेंकें ।

ॐ पूर्वे रक्षतु बाराहः आग्नेयां गरुड़ध्वजः ।
दक्षिणे पद्मनाभस्तु नैर्ऋत्यां मधुसूधनः ॥ १ ॥
पश्चिमे चैव गोविन्दो वायव्यां तु जनार्दनः ।
उत्तरे श्रीपति रक्षेदैशान्यां हि महेश्वरः ॥ २ ॥
ऊर्ध्वं रक्षतु धाता वो ह्यधोऽनन्तश्च रक्षतु ।
अनुक्तमपि यत् स्थानं रक्षत्वीशो ममाद्रिधृक् । ३॥
अपसर्पन्तु ये भूता ये भूता भुवि संस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते गच्छन्तु शिवाज्ञया ॥ ४ ॥
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम् ।
सर्वेशामविरोधेन यज्ञकर्म समारभे ॥ ५ ॥

(१२) अग्निस्थापन

तत्पश्चात् किसी पात्र या चमचे में अग्नि रखकर या कपूर जलाकर नीचे लिखे हुए मन्त्र का उच्चारण करते हुए श्रद्धा और भक्ति के साथ हवन-कुण्ड में अग्नि स्थापित करें ।

ॐ भूर्भुवः स्वद्यौरिव भूम्ना पृथिवीवरिम्णा ।
तस्यास्ते पृथिवी देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे । अग्निं दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे । देवांऽआसादयादिह । ॐ अग्नेयः नमः । अग्निं आवाहयामि स्थापयामि इहागच्छ इहतिष्ठ ।
इत्यावाह्य पंचोपचारैः पूजयेत् ।

(१३) गायत्री स्तवन

यन्मंडलं दीप्तिकरं विशालम्, रत्नप्रभं तीव्रमनादि रूपम्।
दारिद्र्य दुःखक्षयकारणं च,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ १ ॥
यन्मंडलं देवगणैः सुपूजितं,
विप्रैःस्तुतं मानवमुक्तिकोविदम् ।
तं देवदेवं प्रणमामि भर्ग,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ २ ॥
यन्मंडलं ज्ञान घनत्व गम्यं,
त्रैलोक्य पूज्यं त्रिगुणात्मरूपम् ।
समस्त तेजोमय दिव्य रूपं,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ३ ॥
यन्मंडलं गूढयति प्रबोधं,
धर्मस्य वृद्धिं कुरुते जनानाम् ।
तत् सर्व पापक्षयकारणं च,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ४ ॥
यन्मंडलं व्याधि विनाश दक्षं,
यदृग् यजुः सामसु सम्प्रगीतम् ।
प्रकाशितं ये न च भूर्भुवस्वः,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ५ ॥
यन्मंडलं वेदविदो वदन्ति,
गायन्ति यच्चारण सिद्ध संघाः ।
यद्योगिनो योगजुषां च संघाः,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ६ ॥
यन्मंडलं सर्व जनेषु पूजितं,
ज्योतिश्च कुर्यादिह मर्त्यलोके ।
यत्काल कालादिमनादि रूपम्,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ७ ॥
यन्मंडलं विष्णु चतुर्मुखास्यं,
यदक्षरं पापहर जनानाम् ।
यत्काल कल्पक्षय कारणं च,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ८ ॥
यन्मंडलं विश्वसृजां प्रसिद्धं,
उत्पत्तिरक्षा प्रलय प्रगल्भम् ।
यस्मिन् जगत् संहरतेऽखिलं च,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ९ ॥
यन्मंडलं सर्व गतस्य विष्णोः,
आत्मा परं धाम विशुद्ध तत्वम् ।
सूक्ष्मातिगैर्योगपथानुगम्यं,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ १० ॥
यन्मंडलं ब्रह्मविदो वदन्ति,
गायन्ति यच्चारण सिद्धसङ्घाः ।
यन्मंडलं वेदविदः स्मरन्तिः,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ११ ॥
यन्मंडलं वेद विदोपगीतं, यद्योगिनां योगपथानुगम्यम् ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तत्सर्ववेदं प्रणमामि दिव्यं,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।। १२ ।।

(१४) अग्निप्रदीपन

तत्पश्चात् अग्नि पर छोटी-छोटी समिधाएँ और कपूर रख कर, निम्न मन्त्र पढ़कर व्यजन (पंखा) से अग्नि को प्रदीप्त करें -

ॐ उद् बुध्यस्याग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टा पूर्ते स ꣳ सृजेथामयं च अमिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ।

(१५) समिधाधान

तत्पश्चात् निम्न चार मन्त्रों से आठ-आठ अंगुल की पलासादि की चार समिधाएँ प्रत्येक मन्त्र के उच्चारण के बाद क्रम से घी में डुबोकर अग्नि में डालें -

(१) ॐ अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तनेध्यस्व वर्धस्व । चेद् वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन नान्नाद्येन समधेय, स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम ।।

(२) ॐ समिधाग्निं दुस्वयत घृतैर्बोधयता तिथम् अस्मिन् हव्या जुहोतन, स्वाहा । इदमग्नये इदं न मम ।।

(३) ॐ सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्र जुहोतन । अग्नये जातवेदसे स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम।।

(४) ॐ तं त्वा समिद्भिरगिरो घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोसा यविष्ठ्य स्वाहा। इदमग्नये अंगिरसे इदं न मम ।।

(१६) जल प्रसेचन

तत्पश्चात् अंजली (आचमनी) में जल लेकर कुण्ड (वेदी) के पूर्व दिशा आदि में चारों ओर छिड़कें । इसके मन्त्र ये हैं-

ॐ आदित्येऽनुमन्यस्व ।। (इति पूर्वे)
ॐ अनुमतेऽनुमन्यस्व ।। (इति पश्चिमे)
ॐ सरस्वत्यनुमन्यस्व ।। (इति उत्तरे)

ॐ देव सविता प्रसुवः यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिम् भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपू केत न पुनातुः वाचस्पतिर्वाजं नः स्वदतु ।

इस मन्त्र से यज्ञकुण्ड (वेदी) के चारों ओर जल छिड़कावें ।

(१७) आज्याहुति होमः

बड़े हवनों में सभी आवाहित एवं प्रतिष्ठापित देवताओं के लिये आहुतियाँ दी जाती हैं । छोटे हवनों में सात आहुतियाँ केवल घृत की देते हैं और स्रुवा से बचा हुआ घृत 'इदं न मम' उच्चारण के साथ प्रणीता में हर आहुति के बाद टपकाते जाते हैं। यही टपकाया हुआ घृत अन्त में अवघ्राण के काम आता है ।

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये इदं न मम ।
(२) ॐ इन्द्राय स्वाहा । इदमिद्राय इदं न मम ।
(३) ॐ अग्नये स्वाहा । इदमग्नये इदं न मम ।
(४) ॐ सोमाय स्वाहा । इदं सोमाय इदं न मम ।
(५) ॐ भूः स्वाहा । इदमग्नये इदं न मम ।
(६) ॐ भुवः स्वाहा । इदं वायवे इदं न मम ।
(७) ॐ स्वः स्वाहा । इदं सूर्याय इदं न मम ।

इसके पश्चात् गायत्री मन्त्र से जितनी आहुतियाँ देनी हों, सो देनी चाहिये । मन्त्र-

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । इदं गायत्र्यै इदं न मम ।

(१८) स्विष्टकृत होमः

प्रत्येक कर्म ठीक-ठीक रीति से करना चाहिये तभी फलदायक होता है । पर मनुष्य से त्रुटि व अशुद्धि हो जाना स्वाभाविक है । अतः यह आहुति उस त्रुटि व अशुद्धि की पूर्ति के प्रायश्चित्त रूप से है। निर्धारित संख्या में गायत्री मन्त्र से आहुतियाँ देने के पश्चात् मिष्ठान्न, खीर, हलुआ आदि से आहुति देनी चाहिये-

ॐ यदस्य कर्मणो त्यरीरिचं यद्वान्यूनमिहाकरं अग्निष्टत् स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नयेस्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्धयित्रे सर्वान्नः कामान् समर्धय स्वाहा । इदमग्नये स्विष्टकृते इदन्न मम ।।

(१९) पूर्णाहुति

स्रुचि में सुपाड़ी या नारियल घृत समेत रख कर पूर्णाहुति दें ।

ॐ पूर्ण मदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।। १ ।।
ॐ पूर्णा दर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत ।
वस्नेव विक्रीणा वहा इसमूर्जꣳ शतक्रतो स्वाहा ।। २ ।।
ॐ सर्वं वै पूर्णꣳ स्वाहा ।

वसोधरा मन्त्र

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्त्रं धारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः स्वाहा ।।

(२०) आरती

तत्पश्चात निम्न मन्त्रों को पढ़ते हुए आरती उतारें-

ॐ यं ब्रह्मा वेदान्तविदो वदन्ति,
परमं प्रधानं पुरुषस्तथान्ये ।
विश्वोद्गते कारणमीश्वरं वा,
तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय ।।
ॐ यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवैर्वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ।।
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो ।
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणाः देवाय तस्मै नमः ।।

(२१) घृत अवघ्राण

प्रणीता में इदं न मम, के साथ टपकाके घृत को हथेलियों में लगाकर अग्नि पर सेकें और उसे सूँघें तथा मुख, नेत्र, कर्ण आदि पर लगावें । मन्त्र-

ॐ तनूपा अग्नेसि तन्व मे पाहि ।
ॐ आयुर्दा अग्नेऽस्यायुर्मे देहि ।
ॐ वर्चोदा अग्नेसि वर्चो मे देहि ।
ॐ अग्नेयन्त्रे तन्वा ऊनन्तन्म आपृण ।
ॐ मेधां मे देव सविता आदधातु ।
ॐ मेधां मे देवी सरस्वती आदधातु ।
ॐ मेधां मे अश्विनौ देवां वाधतां पुष्कर स्त्रजौ ।

गायत्री मन्त्र बोलते हुए घृत मुखमंडल पर लगाना और सूँघना चाहिए ।

(२२) भस्म धारण

स्रुवा से यज्ञ-भस्म लेकर अनामिका उँगली से निम्न मन्त्रों द्वारा ललाट, ग्रीवा दक्षिण बाहुमूल तथा हृदय पर लगावें -

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेरिति ललाटे ।
ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषमिति ग्रीवायाम् ।
ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषमिति दक्षिण बाहुमूले ।
ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषमिति हृदि ।

(२३) क्षमा-प्रार्थना

आवाहनं न जानामि नैव जानामि पूजनम् ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ।। १ ।।
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर ।
यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे ।। २ ।।
यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर ।। ३ ।।
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ।। ४ ।।
प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् ।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णः स्यादिति श्रुतिः ।।५ ।।

(२४) साष्टांग नमस्कार

तत्पश्चात् यज्ञ भगवान के प्रति घुटनों के बल झुककर साष्टांग प्रणाम करें तथा निम्न मन्त्र बोलें-

नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्त्रमूर्तये सहस्त्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्त्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्त्रकोटियुगधारिणे नमः।।
नमो ब्रह्मण्देवाय गोब्राह्मण हिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ।।
वसुदेव-सुतं देवं कंस-चाणूर मर्दनम् ।
देवकी परमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ।।

(२५) शुभकामना

तत्पश्चात् समस्त प्राणियों के कल्याणार्थ यज्ञ भगवान से हाथ जोड़कर शुभ-कामना करें-

स्वस्ति प्रजाभ्य परिपालयन्तां न्यायेनमार्गेण महीं महीशा
गोब्राह्मणेभ्यो शुभमस्तु नित्यं, लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ।। १ ।।
सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात् ।। २ ।।
अपुत्राः पुत्रिणः सन्तु पुत्रिणः सन्तु पौत्रिणः ।
निर्धनाः सधनाः सन्तु जीवन्तु शरदां शतम् ।। ३ ।।
श्रद्धा मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां पुष्टिं श्रियम् बलम् ।
तैंज आयुष्यमारोग्यं देहि मे हव्य वाहन ।। ४ ।।

(२६) अभिसिंचन

अभिषेक के समय सपरिवार यजमान के ऊपर आचार्य निम्न मन्त्र से, रुद्र कलश के जल से, पञ्च

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पल्लव अथवा पुष्प द्वारा अभिषेक (जल सिंचन) करें- छिड़कें-

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरौषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शांन्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ।।

ॐ शान्तिः । शान्तिः । शान्तिः ।। सर्वारिष्टा सुशान्तिर्भवतु ।

(२७) आरती गायत्री जी की

जयति जय गायत्री माता जयति जय गायत्री माता ।
आदि शक्ति तुम अलख निरञ्जन जग पालन कर्त्री ।
दुःख शोक भय क्लेश कलह दारिद्र्य दैन्य हर्त्री ।।
ब्रह्म रूपिणी: प्रणत पालिनी, जगतधातृ अम्बे ।
भवभयहारी, जनहितकारी, सुखदा जगदम्बे ।।
भय हारिणी भव तारिणि अनघे, अज आनन्द राशि
अविकारी, अघहरी, अविचलित अमले, अविनाशी ।।
कामधेनु सत् चित् आनन्दा जय गङ्गा गीता ।
सविता की शाश्वती शक्ति तुम सावित्री सीता ।।
ऋग, यजु, साम, अथर्व प्रणयिनी, प्रणव महामहिमे ।
कुण्डलिनी, सहस्त्रार, सुषुम्ना, शोभा गुण गरिमे ।।
स्वाहा, स्वधा, शची, ब्रह्माणी, राधा, रुद्राणी ।
जय सतरूपा वाणी, विद्या, कमला, कल्याणी ।।
जननी हम हैं दीन-हीन, दुःख दारिद के घेरे ।
यदपि कुटिल, कपटी कपूत तऊ बालक हैं तेरे ।
स्नेह सनी करुणामय माता चरण शरण दीजै ।
बिलख रहे हम शिशु सुत तेरे दया दृष्टि कीजै ।।
काम, क्रोध, मद, लोभ, दम्भ, दुर्भाव, द्वेष हरिये ।
शुद्ध बुद्धि, निष्पाप हृदय मन को पवित्र करिये ।।
तुम समर्थ सब भाँति तारिणी, तुष्टि पुष्टि त्राता ।
सत मारग पर हमें चलाओ जो है सुख दाता ।।
जयति जय गायत्री माता । जयति जय गायत्री माता ।।

(२८) यज्ञ की महिमा

यज्ञ रूप प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिये ।
छोड़ देवें छल कपट को, मानसिक बल दीजिये ।।
वेद की बोलें ऋचाएँ, सत्य को धारण करें ।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोक सागर से तरें ।।
अश्वमेधादिक रचाएँ, यज्ञ पर-उपकार को ।
धर्म-मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को ।।
नित्य श्रद्धा-भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें ।
रोग पीड़ित विश्व के, सन्ताप सब हरते रहें ।।
कामना मिट जाएँ मन से पाप अत्याचार की ।
भावनाएँ पूर्ण होवें, यज्ञ से नर-नारि की ।।
लाभकारी हों हवन, हर जीवधारी के लिए ।
वायु जल सर्वत्र हों शुभ गन्ध को धारण किये ।।
स्वार्थ भाव मिटे हमारा, प्रेम पथ विस्तार हो ।
'इदं न मम, का सार्थक, प्रत्येक में व्यवहार हो ।।
हाथ जोड़ झुकाए मस्तक वन्दना हम कर रहे ।
नाथ करुणारूप करुणा, आपकी सब पर रहे ।।

(२९) अर्घ्यदान

पुरुश्चरण से बचे हुए जल से सूर्य के सामने अर्घ्य देना चाहिए । नीचे लिखे हुए मन्त्र से सूर्य को अर्घ्य दें ।

ॐ सूर्य देव सहस्त्रांशो तेजो राशे जगत्पते ।
अनुकम्पाय मां भक्त्या गृहणार्घ्यं दिवाकर ।।

(३०) प्रदक्षिणा

यज्ञ के अंत में सब लोग खड़े होकर बांये हाथ से दांये हाथ की ओर यज्ञ की चार परिक्रमा करें -

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञात कृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदिक्षिणायां पदे-पदे ।।

(३१) विसर्जन

गच्छत्वं भगवन्नग्ने सर्वस्थाने कुण्ड मध्यतः ।
हुतमादाय देवेभ्यः शीघ्रं देहि प्रसीद मे ।। १ ।।
गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वरः ।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन ।। २ ।।
यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम् ।
इष्ट काम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च ।। ३ ।।

***

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

आर्यसमाज की हवन पद्धति

सब प्रकार बाह्य शुद्धि से पवित्र हो आरम्भ में यज्ञ भावना से उपस्थित् जन (प्रातः सूर्योदय के पश्चात् तथा सायं सूर्यास्त से पूर्व) यज्ञ मण्डल में आसनारूढ़ हो एकाग्र चित्त से निम्न लिखित ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना के ८ मन्त्रों का तथा स्वस्तिवाचन और शान्ति प्रकरण का सामूहिक रूप से सस्वर पाठ करें ।

ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना मन्त्राः

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रन्तन्न आसुव ॥ १ ॥

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ २ ॥

ॐ य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः । यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ३ ॥

ॐ यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव । य ईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ४ ॥

ॐ येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः । यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ५ ॥

ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिताबभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ ६ ॥

ॐ स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेदभुवनानि विश्वा । यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये, धामन्नध्यैरयन्त ॥ ७ ॥

ॐ अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानिदेववयुनानि विद्वान् । युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठन्ते नम उक्तिं विधेम ॥ ८ ॥

अथ स्वतिवाचनम्

ॐ अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥ १ ॥

ॐ स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव । सचस्वा नः स्वस्तये ॥ २ ॥

ॐ स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्य दितिरनर्वणः स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥ ३ ॥

ॐ स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः । बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥ ४ ॥

ॐ विश्वे देवा नो आद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये । देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥ ५ ॥

ॐ स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति । स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥ ६ ॥

ॐ स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव । पुनर्ददताघ्नता जानता संगमे महि ॥ ७ ॥

ॐ ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः । ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ८ ॥

ॐ येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः । उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्यां अनुमदा स्वस्तये ॥ ९ ॥

ॐ नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्दे वासो अमृतत्वमानशुः । ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥ १० ॥

ॐ सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम् । तां आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्यां अदितिं स्वस्तये ॥ ११ ॥

ॐ को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुष्यो यतिष्ठाल । को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥ १२ ॥

ॐ येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः । त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ॥ १३ ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः । ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ।। १४ ।।

ॐ भरेश्विन्द्रं सुहवं हवामर्हेऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम् । अग्निं मित्रं वरुणं सताये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ।। १५ ।।

ॐ सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् । दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्त्रवन्तीमारुहेमा स्वस्तये ।। १६ ।।

ॐ विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः । सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये ।। १७ ।।

ॐ अपामीवामप विश्वामनाहु तिमपारातिं दुर्विदंत्रामघायतः । आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरुणः शर्म यच्छता स्वस्तये ।। १८ ।।

ॐ अरिष्टः स मर्त्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि । यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ।। १९ ।।

ॐ यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने । प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ।। २० ।।

ॐ स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति । स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ।। २१ ।।

ॐ स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति । सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपाः ।। २२ ।।

ॐ इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा वः स्तेन ईशत माघशं सोधुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात् बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ।। २३ ।।

ॐ आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धा सी अपरीतास उद्भिदः । देवा नो यथा सदमिद्वृधे असन्न प्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ।। २४ ।।

ॐ देवानां भद्रा सुमतिऋ जूयतां देवानाँ रातिरभि नो निवर्त्तताम् देवानाँ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ।। २५ ।।

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ।। २६ ।।

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ।। २७ ।।

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ।। २८ ।।

ॐ अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये । नि होता सत्सि बर्हिषि ।। २९ ।।

ॐ त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः । देवेभिर्मानुषे जने ।। ३० ।।

ॐ ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः । वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ।। ३१ ।।

इति स्वस्तिवाचनम् ।।

अथ शान्ति प्रकरणम्

ॐ शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या । शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ।। १ ।।

ॐ शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शन्नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः । शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ।। २ ।।

ॐ शं नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु शं न उरुची भवतु स्वधाभिः । शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ।। ३ ।।

ॐ शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् । शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभिवातु वातः ।। ४ ।।

ॐ शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूता शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु । शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ।। ५ ।।

ॐ शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः । शं नो रुद्रो रुद्रेभिजलाषः शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह शृणोतु ।। ६ ।।

ॐ शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः । शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ।। ७ ।।

ॐ शं नः सूर्य उरुचक्ष उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशोभवन्तु । शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ।। ८ ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐ शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः । शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवन्तु शम्वस्तु वायुः ॥ ९ ॥

ॐ शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥ १० ॥

ॐ शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु । शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः ॥ ११ ॥

ॐ शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः । शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ॥ १२ ॥

ॐ शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्यः शं समुद्रः । शं नो अपांनपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपाः ॥ १३ ॥

ॐ इन्द्रो विश्वस्य राजति । शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ १४ ॥

ॐ शं नो वातः पवतां शं नस्तपतु सूर्यः । शं नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षत् ॥ १५ ॥

ॐ अहानि शं भवन्तु नः शं रात्रीः प्रतीधीयताम् । शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या । शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः ॥ १६ ॥

ॐ शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्त्रवन्तु नः ॥ १७ ॥

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व ँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥ १८ ॥

ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ १९ ॥

ॐ यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति । दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २० ॥

ॐ येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः । यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २१ ॥

ॐ यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु । यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २२ ॥

ॐ येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् । येनयज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्प मस्तु ॥ २३ ॥

ॐ यस्मिन्नृचः साम यजूँ षि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः । यस्मिंश्चित्तँ सर्वमोतं प्रजाना तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २४ ॥

ॐ सुषारथिरश्वानिव-यन्मनुष्यान्नेनी- यतेऽभीशुभिर्वाजिन इव । हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २५ ॥

ॐ स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते, शं राजन्नोषधीभ्यः ॥ २६ ॥

ॐ अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे । अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥ २७ ॥

ॐ अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात् । अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥ २८ ॥

इति शान्ति प्रकरणम्

इतने पाठ के उपरान्त सभी उपस्थित व्यक्ति अपने जल-पात्र से, जो यज्ञ में यज्ञ वेदी के समीप बैठे हों, वे इन निम्नलिखित तीन मन्त्रों से तीन आचमन करें अर्थात् एक-एक मन्त्र से एक बार आचमन करें और अन्य व्यक्ति भी उपस्थित कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्य न करें ।

आचमन मन्त्राः

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥ १ ॥

ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥ २ ॥

ॐ सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥ ३ ॥

अंगस्पर्शः

आचमन के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों को बोलकर जल से निम्न लिखित अङ्गों का स्पर्श करे ।

ॐ वाङ्मेऽआस्येऽस्तु- से मुख को
ॐ नसोर्मे प्राणोऽस्तु - से नाक को
ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु - से आँखों को
ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु - से कानों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ॐ बाह्वोर्मे बलमस्तु - से बाहों को
ॐ ऊर्वोर्मेऽओजोऽस्तु - से दोनों जाँघों को
ॐ अरिष्टानि मेऽङ्गगानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु - से सब अङ्गों पर जल छिड़कें ।

कार्यारम्भ

कुण्ड या वैदी पर समिधा चयन कर और कार्य आरम्भ करते हुए-

''**ॐ भूर्भुवः स्वः**'' इस मन्त्र का उच्चारण करें

अग्न्याधानम्

इस मन्त्र का उच्चारण करके ब्राह्मण क्षत्रिय व वैश्य के घर से अग्नि ला अथवा घृत का दीपक जला उससे कपूर लगा किसी एक पात्र में धर, उसमें छोटी-छोटी समिधा लगा के यजमान या पुरोहित उस पात्र को दोनों हाथों से उठा यदि गर्म हो तो चिमटे से पकड़ कर अगले मन्त्र से अग्न्याधान करे । वह मन्त्र यह है:-

ॐ भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा ।

तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे

अग्नि प्रदीपनम्

इस मन्त्र से वेदी के बीच में अग्नि को धर, उस पर छोटे-छोटे काष्ठ और थोड़ा कपूर धर, अगला मन्त्र पढ़ें, व्यजन (पंखे) से अग्नि को प्रदीप्त करे:-

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳ सृजेथामयञ्च । अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ।

समिधाधानम्

जब अग्नि समिधाओं में प्रविष्ट होने लगे, तब चन्दन की अथवा पलाश आदि की तीन लकड़ी आठ-आठ अंगुल की घृत में डुबो, उनमें से नीचे लिखे एक-एक मन्त्र से एक-एक समिधा को अग्नि में चढ़ावें, वे मन्त्र ये हैं-

पहली समिधा के लिये-

ॐ अयन्त इध्म आत्मा जात वे दस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्धवर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय, स्वाहा ।। इदमग्नये, जातवेदसे इदन्न मम ।।

दूसरी समिधा के लिए-

ॐ समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । अस्मिन् हव्याजुहोतन स्वाहा ।। इदमग्नये, इदन्न मम ।।

ॐ सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन । अग्नये जातवेदसे स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम ।

तीसरी समिधा के लिए-

ॐ तन्त्वा समिद्भिरंगिरो घृतेन वर्द्धयामसि । बृहच्छोचायविष्ठ्य स्वाहा ।। इदमग्नयेऽङ्गिरसे, इदन्न मम ।।

घृत सिंचनम्

इन मन्त्रों से समिधा धान करके, होम का शाकल्य, जो कि यथावत् विधि से बनाया हो, सुवर्ण, चाँदी, काँसा आदि धातु के पात्र अथवा काष्ट पात्र में वेदी के पास सुरक्षित धरें, पश्चात् घृतादि जो कि उष्णकर छान कर सुगन्ध्यादि पदार्थ मिलाकर पात्रों में रखा हो, वह घृत अथवा मोहन भोग आदि जो कुछ सामग्री हो उसमें से कम से कम छः मासा भर कर अधिक से अधिक एक छटांक भर की आहुति देवें । यही आहुति का प्रमाण है । उस घृत में से चमस, जिसमें छै मासे घृत आवे ऐसा बनवाया हो, भर कर नीचे लिखे मन्त्र से पाँच आहुति देवें ।

ॐ अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे, इदन्न मम ।।

जल प्रसेचनम्

तत्पश्चात् अञ्जलि में जल लेके वेदी के पूर्व दिशा आदि में चारों ओर छिड़कें । उसके मन्त्र है:-

ॐ अदितेऽनुमन्यस्व (इस मन्त्र से पूर्व में)
ॐ अनुमतेऽनुमन्यस्व (इससे पश्चिम में)
ॐ सरस्वत्यनुमन्यस्व (इससे उत्तर में)
ॐ देव सवितः । प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय । दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचन्नः स्वदतु ।।

इस मन्त्र से वेदी के चारों ओर जल छिड़कें ।

होमाहुति

होम के आदि और अन्त में जो आहुति दी जाती है, उनमें से यज्ञ कुण्ड उत्तर भाग में जो एक आहुति और यज्ञ कुण्ड के दक्षिण भाग में जो दूसरी आहुति देनी होती है उसका नाम.'आघारावाज्याहुति'

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहते है । जो कुण्ड के मध्य भाग में आहुतियाँ दी जाती हैं, उनको 'आज्या भागाहुति' कहते हैं । सो घृत पात्र में से स्रुवा को भर अँगूठा मध्यमा अनामिका से स्रुवा पकड़ के निम्न प्रकार से आहुतियाँ देवे ।

निम्नलिखित आठ आहुतियाँ केवल घृत की ही देवें । स्वाहा के पश्चात् जिस मन्त्र में इदन्नमम आता है वहाँ स्रुवा में बचे हुए घृत को जल से भरी हुई प्रोक्षणी में टपकायें ।

आघारावाज्याहुति

ॐ अग्नये स्वाहा । इदमग्नये इदन्न मम ।।

इस मन्त्र से वेदी के उत्तर भाग अग्नि में ।

ॐ सोमाय स्वाहा । इदं सोमाय इदन्न मम

इस मन्त्र से दक्षिण भाग अग्नि में प्रज्ज्वलित समिधा पर आहुति देवें, तत्पश्चात् -

आज्याभागाहुति

ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये इदन्न मम ।।

ॐ इन्द्राय स्वाहा । इदमिन्द्राय इदन्न मम ।।

इन दोनों मन्त्रों से वेदी के मध्य में दो आहुतियाँ देवें । उसके पश्चात् चार आहुति अर्थात् आधारावाज्यभागाहुति दे के जब प्रधान होम अर्थात् जिस कार्य में जितना-जितना होम करना हो, करके पश्चात् पूर्णाहुति पूर्वोक्त चार (आघारावाज्य - भागाहुति) देवें, पुनः शुद्ध किये हुए उसी घृत-पात्र में से स्रुवा को भर के प्रज्ज्वलित समिधाओं पर व्याहृति की चार आहुति देवें ।

ॐ भूरग्नये स्वाहा । इदमग्नये-इदन्न मम ।।

ॐ भुवर्वायवे स्वाहा । इदं वायवे-इदन्न मम ।।

ॐ स्वरादित्याय स्वाहा । इदमादित्याय-इदन्न मम ।।

ॐ भूर्भुवः स्वरग्निवायवादित्येभ्यः स्वाहा । इदमग्निवाटवादित्येभ्यः इदन्न मम ।

यह चार घी की आहुति देकर स्विष्टकृत होमाहुति जो एक ही है, यह घृत अथवा भात (या किसी मीठी चीज) की देनी चाहिये ।

ॐ यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यून मिहाकरम् । अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्व स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा । इदमग्नये स्विष्टकृते इदन्न मम ।।

इससे एक आहुति करके प्रजापत्याहुति नीचे लिखे मन्त्र को मन में बोल के देनी चाहिए ।

ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये इदन्न मम ।।

इससे मौन करके एक आहुति देकर चार आज्याहुति घृत की देवें, परन्तु जो नीचे लिखी आहुतियाँ चौल, समावर्तन और विवाह में मुख्य हैं, वह चार मन्त्र नित्य कर्म में नहीं हैं । जब कभी बड़ा हवन करना हो, तो इनमें भी घी से आहुतियाँ दी जावें ।

ॐ भूर्भुवः स्वः ! अग्ने । आयूँ षि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः । आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ।। १ ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः । अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ।। २ ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः ! अग्ने ! पवस्व स्वपाऽस्मेवर्चः सुवीर्यम् । दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय-इदन्न मम ।। ३ ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः । प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा । इदं प्रजापतये इदन्न मम ।। ४ ।।

इनसे घृत की चार आहुतियाँ देकर नीचे लिखे मन्त्रों से, आठ आज्याहुति सर्व मङ्गल-कार्यों में या जब कभी बड़ा हवन करना हो, तो देवें ।

ॐ त्वन्नो अग्ने ! वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो ऽवयासिसीष्ठाः यजिष्ठो बह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा । इदमग्निवरुणाभ्यां इदन्न मम ।। १ ।।

ॐ स त्वन्नो अग्नेऽवमो भवोती, नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ । अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृडीकं सुहवो न एधि स्वाहा । इदमग्नि वरुणाभ्यां इदन्न मम ।। २ ।।

ॐ इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचक्रे स्वाहा ।। इदं वरुणाय इदन्न मम ।। ३ ।।

ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्रमोषीः स्वाहा । इदं वरुणाय-इदन्न मम ।। ४ ।।

ॐ ये ते शतं वरुण ! ये सहस्त्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नोऽद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः सवर्का स्वाहा । इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्य-इदन्न मम ।। ५ ।।

ॐ अयाश्चाग्ने ! ऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयासि । अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भैषजूँ स्वाहा । इदमग्नये अयसे-इदन्न मम ।। ६ ।।

ॐ उदुत्तमं वरुण ! पाशमस्मदवाधमं विमध्यमं श्रथाय । अथा वयमादित्यव्रते तवानागसोऽदितये स्याम स्वाहा । इदं वरुणायऽऽदित्यायाऽदितये च-इदन्न मम ।। ७ ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ॐभवतन्नः समनसौ, सचेतसावरेपसौ । मा यज्ञꣳ हिꣳसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा । इदं जातवेदोभ्यां-इदन्न मम ।। ८ ।।

प्रातःकाल हवन मन्त्राः

ॐ सूर्य्यो ज्योतिर्ज्योति सूर्य्यः स्वाहा ।। १ ।।
ॐ सूर्य्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ।। २ ।।
ॐ ज्योतिः सूर्य्यः सूर्य्यो ज्योतिः स्वाहा ।। ३ ।।
ॐ सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या जुषाणः सूर्य्यो वेतु स्वाहा ।। ४ ।।
ॐ भूरग्नये प्राणाय स्वाहा । इदमग्नये प्राणाय इदन्न मम ।। १ ।।
ॐ भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा । इदं वायवेऽपानाय इदन्न मम ।। २ ।।
ॐ स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा । इदमादित्याय व्यानाय-इदन्न मम ।। ३ ।।
ॐ भूर्भुवः स्वरग्निवायवादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा । इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः इदन्न मम ।। ४ ।।
ॐ आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् स्वाहा ।। ५ ।।
ॐ यां मेधां देवगणः पितरश्चोपासते तया मामद्य मेधयाऽग्ने ! मेधाविनं कुरु स्वाहा ।। ६ ।।
ॐ विश्वानि देव ! सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव स्वाहा ।। ७ ।।
ॐ अग्ने ! नय सुषयाराये अस्मान् विश्वानि देव । वयुनानि विद्वान् युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा ।। ८ ।।

अब नीचे लिखे हुए मन्त्र केवल सायंकाल के अग्निहोत्र के जानो ।

सायंकाल हवन मन्त्राः आघारावाज्याहुति

ॐ अग्नये स्वाहा । इदमग्नये-इदन्नमम ।।

इस मन्त्र से उत्तर भाग अग्नि में ।

ॐ सोमाय स्वाहा । इदम् सोमाय-इदन्न मम ।।

इस मन्त्र से वेदी के दक्षिण भाग में प्रज्ज्वलित समिधा पर आहुति देवें, तत्पश्चात् ।

आज्याभागाहुति

ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये-इदन्न मम ।।
ॐ इन्द्राय स्वाहा । इदमिन्द्राय-इदन्न मम ।।

इन दोनों मन्त्रों से वेदी के मध्य में दो आहुति देनी चाहिए ।

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ।। १ ।।
ॐ अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ।। २ ।।
ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ।। ३ ।।

इस मन्त्र को मन में उच्चारण करके तीसरी आहुति देवें ।

ॐ सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ।। ४ ।।
ॐ भूरग्नये प्राणायस्वाहा । इदमग्नये प्राणाय इदन्न मम ।। १ ।।
ॐ भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा । इदं वायवेऽपानाय इदन्न मम ।। २ ।।
ॐ स्वरग्निदत्याय व्यानाय स्वाहा । इदमादित्याय व्यानाय इदन्न मम ।। ३ ।।
ॐ भूर्भुवः स्वरग्निवायवादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा । इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः इदन्न मम ।। ४ ।।
ॐ आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम स्वाहा ।। ५ ।।
ॐ यां मेधां देवगणः पितरश्चोपासते तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ।। ६ ।।
ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव यद्भद्रं तन्न आसुव स्वाहा ।। ७ ।।
ॐ अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा ।। ८ ।।

इसके पश्चात् अपनी इच्छा के अनुसार गायत्री मन्त्र से आहुति दें ।

गायत्री मन्त्रः

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा ।।

पूर्णाहुतिः-

ॐ पूर्णपदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

इसको पढ़ कर

ॐ सर्वं वै पूर्णꣳ स्वाहा ।।

इस मन्त्र से तीन पूर्णाहुति अर्थात् एक-एक बार पढ़ के एक-एक करके तीन आहुति देवें ।

***

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गायत्री यज्ञों की विधि-व्यवस्था

यज्ञ का अर्थ है-त्याग, परोपकार । वैयक्तिक उन्नति और सामाजिक प्रगति का सारा आधार इसी एक प्रवृत्ति पर निर्भर है । यदि माता अपने रक्त-मांस में से एक भाग नये शिशु का निर्माण करने के लिये न त्यागे, प्रसव की वेदना न सहे, अपना शरीर निचोड़ कर उसे दूध न पिलाये, पालन-पोषण में कष्ट न उठाये और यह सब कुछ नितान्त निःस्वार्थ भाव से न करे, तो मनुष्य का जीवन-धारण कर सकना ही सम्भव न हो । इसलिये कहा जाता है कि मनुष्य-जन्म यज्ञ-भावना के द्वारा या उसके कारण ही सम्भव होता है । गीताकार ने इसी तथ्य को इस प्रकार कहा है कि-"प्रजापति ने यज्ञ को मनुष्य के साथ जुड़वाँ भाई की तरह पैदा किया और यह व्यवस्था की कि एक-दूसरे का अभिवर्धन करते हुये दोनों फलें-फूलें ।"

यज्ञ का आध्यात्मिक स्वरूप-

अध्यात्म का मूल तत्त्व है भक्ति । भक्ति का अर्थ है-प्रेम । प्रेम का स्वरूप है त्याग । प्रेम का परिचय त्याग में ही दिया है । जो त्याग नहीं कर सकता, वह प्रेमी नहीं । भक्ति का अर्थ-परमात्मा के लिये, विश्वात्मा के लिये, अपने संकुचित स्वार्थों का त्याग करना ही है । सच्ची भक्ति इसी प्रकार की जाती है । त्याग का ही दूसरा नाम यज्ञ है । यज्ञ को विष्णु का रूप भी कहा गया है । उसे प्रत्यक्ष परमेश्वर भी माना जा सकता है । जहाँ कहीं निःस्वार्थ त्याग-भावना परिलक्षित होती हो, वहाँ परमेश्वर की प्रत्यक्ष उपस्थिति माननी चाहिये ।

मानसिक एवं भावनात्मक प्रसन्नता जितनी अधिक प्रेम को पाकर होती है, उतनी और किसी प्रकार नहीं । माता-पिता या स्वजन, सम्बन्धियों का परिपूर्ण प्रेम जिन बालकों को नहीं मिलता, उनकी मनोवृत्तियाँ विकृत हो जाती हैं । दाम्पत्य-जीवन में समुचित प्रेम न हो, तो दोनों के ही मन पर आघात लगता है और गृहस्थ-जीवन में अनेक विकृतियाँ उठ खड़ी होती हैं । माता-पिता, बच्चों के लिये जो त्याग करते हैं, उनके बदले में वे भी उनसे प्रेम चाहते हैं । नहीं मिलता तो खिन्न होते हैं । भाई-भाई में जहाँ प्रेम है, मित्र-मित्र में जहाँ आत्मीयता है, वहाँ उनकी मिली हुई शक्ति एक और एक मिलकर एक ग्यारह बनने की उक्ति चरितार्थ करती है । यह अविस्मरणीय तथ्य है, कि प्रेम की कसौटी त्याग है । जो माँगता है, वह भिखारी और जो देता है, वह प्रेमी है । प्रेमी का दूसरा नाम ही यज्ञ-पुरुष है । उन्हें धरती के देवता भी कह सकते हैं । प्राचीनकाल में ब्राह्मण और सन्तों का जीवन, यज्ञ-कार्यों में लगता था । यज्ञ करना, यज्ञ कराना ब्राह्मण का प्रथम धर्म है । यज्ञ का प्रतीक अर्थ हवन भी है, पर यहाँ जिसे अविच्छिन्न धर्म, कर्म के रूप में कहा गया है, वह त्याग, धर्म, प्रेम, धर्म ही है । ब्राह्मण, विश्व-मानव के लिये निरन्तर त्याग करते थे और सारे समाज में उस मनोवृत्ति का प्रचलन-अभिवर्धन करते थे । यही उनका यज्ञ करना और यज्ञ कराना है ।

मानव-प्रगति का मूल तत्त्व

मनुष्य-जाति ने पशुओं की तुलना में जो आश्चर्यजनक प्रगति की है, उसका मूल-तत्त्व उसकी बुद्धिमत्ता नहीं, सहयोगात्मक प्रवृत्ति है । मिल-जुलकर रहने, एक-दूसरे की सेवा-सहायता करने, उदारता बरतने एवं प्रेम-भाव रखने की भावनात्मक प्रगति ने उसे समूह-जीवी प्राणी के रूप में विकसित किया, परिवार, ग्राम और संघ बनाकर रहने लगा । इस परम्परा के साथ-साथ, एक-दूसरे को अपनी अनुभूतियों, चेतनाओं से परिचित कराया, एक के ज्ञान से दूसरे ने लाभ उठाया, इसी क्रम से बुद्धिमत्ता बढ़ती गई, मस्तिष्क सतेज होता गया और मनुष्य धीरे-धीरे इसी क्रम से आगे बढ़ता हुआ आज सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ प्राणी की स्थिति तक आ पहुँचा ।

जिन देश, समाजों में देश-भक्ति, समाज-भक्ति, धर्म-भक्ति, कर्त्तव्य-भक्ति की उत्कृष्ट प्रेम-भावनाएँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विद्यमान हैं, वे व्यक्तिगत स्वार्थ को तिलाञ्जलि देकर दूसरों को सुखी बनाने के निमित्त बड़े से बड़े त्याग करते हैं, अपना सर्वस्व उसी प्रयोजन के लिये समर्पित कर देते हैं । इसी आधार पर वहाँ प्रगति और समृद्धि का, सुख और शान्ति का मंगलमय वातावरण बनता है । जहाँ इस तत्त्व की कमी है, वहाँ के लोग अपनी संकुचित स्वार्थपरता में संलग्न रहकर खुद तो कुछ त्याग करते नहीं, दूसरों का शोषण करने लगते हैं । जहाँ ऐसा क्रम चल रहा होगा, वहाँ परस्पर कलह और संघर्ष का नारकीय वातावरण बनेगा । अनैतिकता का बोलबाला होगा और प्रगति का सारा ढाँचा चरमराकर बिखर जायगा । ऐसे ही समाज, परस्पर आन्तरिक कलह के शिकार होकर अपना अस्तित्त्व खो बैठते हैं ।

सुख-शान्ति की आधार-शिला

इतिहास का पन्ना-पन्ना इसी सत्य और तथ्य के प्रमाणों से भरा पड़ा है । यदि यज्ञ-भावना के साथ मनुष्य ने अपने को जोड़ा न होता तो अपनी शारीरिक असमर्थता और दुर्बलता के कारण अन्य पशुओं की प्रतियोगिता में वह कब का अपना अस्तित्त्व खो बैठा होता । वह जितना भी अब तक बढ़ा है, उसमें उसकी यज्ञ-भावना ही एक मात्र माध्यम है । आगे भी यदि उसे प्रगति करनी है, तो उसका आधार यही भावना होगी । यज्ञ-वृत्ति के अभाव में विज्ञान, शिक्षा, चिकित्सा, अर्थोन्नति की सारी सुख-सामग्री, उलटी विपत्ति उत्पन्न करेगी । सदुपयोग से थोड़े से साधन भी बहुत सुख उत्पन्न करते हैं और दुर्बुद्धि के कारण दुरुपयोग किये जाने पर वे उलटे विपत्ति के हेतु बन जाते हैं । समस्त विपत्तियों का एक ही कारण है-दुर्बुद्धि, खुदगर्जी । इसी को यज्ञ विरोधी वृत्ति कहना चाहिये । गीताकार ने इस प्रवृत्ति की भर्त्सना करते हुए कहा है-"अयज्ञकर्त्ता, स्वार्थी के लिए यह लोक भी सुख-शान्ति का नहीं हो सकता, फिर परलोक का तो कहना ही क्या ?"

इस प्रकृति का स्वभाव, यज्ञ-परम्परा के अनुरूप है । समुद्र बादलों को उदारतापूर्वक जल देता है, बादल एक स्थान से दूसरे स्थान तक उसे ढोकर ले जाने और बरसाने का श्रम वहन करते हैं । नदी, नाले प्रवाहित होकर भूमि को सींचते और प्राणियों की प्यास बुझाते हैं । वृक्ष एवं वनस्पतियाँ अपने अस्तित्त्व का लाभ दूसरों को ही देते हैं, पुष्प और फल दूसरों के लिये ही जीते हैं । पशुओं के दूध, चर्म, बाल एवं सन्तान का लाभ मनुष्यों को ही मिलता है । सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, वायु आदि की क्रियाशीलता उनके अपने लाभ के लिए नहीं, वरन् दूसरे के लिए ही है । शरीर का प्रत्येक अवयव अपने निज के लिए नहीं, वरन् समाज, शरीर के लाभ के लिए ही अनवरत गति से कार्यरत रहता है । इस प्रकार जिधर भी दृष्टिपात किया जाय, यही प्रकट होता है, कि इस संसार में जो कुछ भी स्थिर व्यवस्था है, वह यज्ञ-वृत्ति पर ही अवलम्बित है । यदि इसे हटा दिया जाय, तो सारी सुन्दरता, कुरूपता में और सारी प्रगति, विनाश में परिणित हो जायगी । उपनिषद्कार ने कहा है-"यज्ञ ही इस संसार-चक्र की धुरी है ।" धुरी टूट जाने पर गाड़ी का तनिक भी आगे बढ़ सकना कठिन है ।

विकृतियों का निवारण

इन दिनों जो कुछ भी विकृतियाँ दिखाई पड़ती हैं, उनका एक मात्र कारण लोगों की अयज्ञ भावना, खुदगर्जी ही है । अनैतिकता, कायरता, अपराध, कृपणता, निष्ठुरता एवं विलासिता, असुरता इसी दुष्प्रवृत्ति के दूसरे नाम हैं । समाज में वह जब जितनी पनपेगी, तब वहाँ उतना ही अवांछनीय वातावरण उत्पन्न होगा । संसार में हर वस्तु इतनी अधिक मात्रा में विद्यमान है, कि सब लोग यदि मिल-बाँटकर उसका प्रेमपूर्वक उपयोग करें तो धरती पर स्वर्ग जैसा आनन्द दिखाई पड़े । कमी वस्तुओं की नहीं, भावनाओं की है । विपत्तियाँ और किसी कारण नहीं, सद्भावनाओं का दुर्भिक्ष पड़ने के कारण उत्पन्न होती हैं । चेचक की फुंसियों पर मरहम लगाने से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता, रोग की निवृत्ति के लिए रक्त-शुद्धि की दवा देनी पड़ती है । पत्ते पर जल छिड़कने से मुरझाया पेड़ हरा नहीं होता, प्रयोजन तो जड़-सींचने से पूरा होता है । आज मानव-समाज के सामने, समस्त विश्व के सामने जो अगणित समस्याएँ हैं, उनका एक ही कारण है-मनुष्य के अन्तःकरण से यज्ञ-तत्त्व की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

न्यूनता हो जाना और समस्त उलझनों को सुलझाने का एक ही हल है, संसार में यज्ञ-भावनाओं की अधिकाधिक अभिवृद्धि करना । इस दिशा में जितना अधिक प्रयास होगा, जितनी अधिक प्रगति होगी उसी अनुपात में विश्व-शान्ति का, रामराज्य का, युग परिवर्तन का उद्देश्य पूर्ण होगा । प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान के अनुसार संसार में एक ही रोग है-पेट की खराबी । अध्यात्म-विज्ञान की दृष्टि से संसार में एक ही विपत्ति है-अयज्ञ मनोवृत्ति । इसके समाधान किये बिना अमन-चैन का दिन देखना सम्भव नहीं हो सकता ।

संसार की सर्वोत्तम सेवा

यज्ञ-भावना को जन-साधारण के अन्तःकरण में बोने, उगाने और बढ़ाने का कार्य करना, इस संसार को नन्दन वन में परिणत करने का सुनिश्चित मार्ग है । इसके लिये हमें हर सम्भव उपाय करना चाहिये । स्वाध्याय, सत्संग, धर्मप्रेमियों का संगठन, सद्भावनाएँ बढ़ाने वाले रचनात्मक कार्यक्रम, लोक सेवा के सामूहिक प्रयत्न, दुष्प्रवृत्तियों से संघर्ष आदि अनेक कार्य इस दिशा में किये जा रहे हैं और किये जाने चाहिए । लेखन, भाषण और संगठन के साधनों को इस दिशा में लगाया जा रहा है और लगाया जाना चाहिए, पर साथ ही यह भी न भूलना चाहिये कि भावनाओं का परिवर्तन भौतिक उपकरणों से नहीं हो सकता । जहाँ भावनाओं का निवास है, उस गह्वर तक केवल धर्म एवं अध्यात्म की, तत्त्व-ज्ञान की ही पहुँच हो सकती है । शरीर के भीतरी भाग में कोई विकृति घुसी बैठी हो, गोली लग गई हो, तो उसे बाह्य उपकरणों से नहीं, वरन् आपरेशन के चाकू, चिमटी जैसे औजारों से ही निकाला जा सकना संभव है ।

हृदय-परिवर्तन, भावनाओं का परिष्कार, दृष्टिकोण में सुधार का काम तर्क-बुद्धि एवं बाह्योपचारों से संभव नहीं, क्योंकि मोटे तौर से असुरता, स्वार्थपरता में तात्कालिक लाभ देखती है । भले ही पीछे उससे दुःसह दुःख सहना पड़ता है । यज्ञ-प्रक्रिया से तत्काल हानि है । पीछे उससे कितना ही हित साधन क्यों न होता हो । अधिकांश जन-समाज अदूरदर्शी होता है, उसे तत्काल का लाभ रुचता है, इसलिये अनेक धर्म-बन्धनों, कठोर कानूनों, सामाजिक मान्यताओं के बन्धनों को तोड़ता हुआ वह प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से दुष्कर्म करने के लिये तत्पर हो जाता है । जो नीति और सदाचार का समर्थन करते हुये भी उनका उल्लंघन करे, जो जगाते हुएँ भी सोवे उसके लिये बाह्योपचार क्या करेंगे ? इसके लिए एक ही उपाय है, भावना स्तर को पलट डालने वाले अध्यात्म-तत्त्व ज्ञान का अन्तःकरण के गहन स्तर में प्रवेश कर सकना ।

इसके लिये जादू जैसी अद्भुत, विज्ञान जैसी सुनिश्चित एवं गणित जैसी प्रामाणिक पद्धति तत्त्व-वेत्ता ऋषियों ने विनिर्मित की थी, उसका नाम है-यज्ञ प्रक्रिया । मोटे अर्थों में यज्ञ, अग्निहोत्र को कहते हैं । मन्त्रोच्चारण के साथ अमुक विधि-विधान का प्रयोग करते हुए अग्नि में घृत तथा साकल्य की आहुतियाँ देने का नाम अग्निहोत्र या हवन है । यह क्रिया भारतीय धर्म-कृत्यों में अविच्छिन्न रूप से जुड़ी हुई है । हमारा कोई भी पर्व, त्यौहार, संस्कार, धर्म-कृत्य एवं शुभारम्भ इसके बिना नहीं हो सकता । नई फसल का नया अन्न तब खाया जाता है, जब होलिका-यज्ञ में उसकी आहुतियाँ दे दी जाती हैं । प्रत्येक भारतीय धर्मानुयायी का शरीर यज्ञ की चिता में ही जलाया जा सकता है । हिन्दू के मृत शरीर को यज्ञ-भावना की गोदी में ही समर्पित किया जाता है । इतना अटूट सम्बन्ध सूत्र, हिन्दू-धर्म का, यज्ञ के साथ है कि एक के बिना दूसरे की कल्पना भी नहीं की जा सकती ।

अग्निहोत्र के लाभ

अग्निहोत्र के दो लाभ हैं, एक आध्यात्मिक, दूसरा भौतिक । आध्यात्मिक लाभ का वैज्ञानिक पहलू यह है कि हर वेद-मन्त्र विशिष्ट शक्ति और सामर्थ्य भरी एक शृंखला के साथ विनिर्मित है , उसके उच्चारण में विशेष प्रकार के शक्तिशाली ध्वनि-कम्पन निकलते हैं और जिस प्रयोजन के लिये जो मन्त्र बना है, उसके अनुकूल वातावरण व्यापक क्षेत्र में बनता है । जो भी उस ध्वनि-प्रवाह के सम्पर्क में आता है, उस पर उसका गहरा प्रभाव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पड़ता है । यज्ञादि के विशेष विधि-विधान के साथ प्रस्तुत किया गया कर्मकाण्ड उस मन्त्र-ध्वनि को और अधिक शक्तिशाली बना देता है, फलस्वरूप जो लोग उस वातावरण के साथ जुड़े होते हैं, उन पर अन्तःकरण की गहराई तक प्रभाव पड़ता है, जिसके कारण आन्तरिक स्थिति में तेजी से सुधार होता है ।

विधिवत् किये हुए यज्ञ के विषय में एक वैज्ञानिक तथ्य है, जिसके द्वारा मानसिक दोषों, दुर्गुणों का निष्कासन एवं सद्भावों का अभिवर्धन नितान्त संभव है । काम, क्रोध, भय, मोह, मद, मत्सर, ईर्ष्या, द्वेष, कायरता, कामुकता, आलस्य, आवेश, संशय आदि मानसिक उद्वेगों की चिकित्सा के लिये यज्ञ एक विश्वस्त पद्धति है । शरीर के असाध्य रोगों तक का निवारण उससे हो सकता है । प्राचीनकाल में प्रारम्भिक एवं मानसिक स्वस्थता, समर्थता बढ़ाने के लिये यज्ञ आयोजित होते थे । ब्राह्मण अपने जीवन का बहुत समय, अग्निहोत्रों के सान्निध्य में बिताते थे, यज्ञ नित्य करते थे, फलस्वरूप उनके शरीरों और मनों की स्थिति देव-तुल्य बनी रहती थी, आज वे महान वैज्ञानिक परम्पराएँ हमारे आलस्य, प्रमाद और अज्ञान के गर्त में गिरकर लुप्त हो गई हैं, फिर भी जो बची हैं , उनका ठीक तरह प्रयोग करने पर मानव-जाति का बहुत हित साधन हो सकता है ।

अग्निहोत्र के भौतिक लाभ भी हैं । वायु को हम, मल, मूत्र, श्वास तथा कल-कारखानों के धुँए आदि से गन्दी करते हैं । गन्दी वायु रोगों का कारण बनती है । वायु को हम जितना गन्दा करें, उतना ही उसे शुद्ध भी करना चाहिये । यज्ञों से वायु शुद्ध होती है । इस प्रकार सार्वजनिक स्वास्थ्य की सुरक्षा का एक बहुत बड़ा प्रयोजन उससे सिद्ध होता है ।

वैज्ञानिक आधार

विज्ञान साक्षी है, कि कोई वस्तु जलाने पर भी नष्ट नहीं होती, वह वायुभूत होकर आकाश में फैल जाती है । लाल मिर्च जलाई जाय, तो वह वायु में मिलकर दूर-दूर तक फैल जाती है और लोगों को खाँसी तथा छींक आती है । इसी प्रकार यज्ञ में हवन की गई ओषधियाँ तथा घृत आदि पौष्टिक वस्तुएँ वायुभूत होकर आकाश में अनेक गुनी शक्तिशाली होकर फैलती हैं और उस कम खर्च के हवन में भी असंख्य लोगों को महत्त्वपूर्ण शारीरिक लाभ होता है । महामारियों और बीमारियों की सम्भावना नष्ट होती है, फैले हुये सामयिक रोग उनसे दूर होते हैं ।

यज्ञ का धूम आकाश में जाकर बादलों में खाद बनकर मिल जाता है । वर्षा के जल के साथ जब वह पृथ्वी पर आता है, तो उससे परिपुष्ट अन्न, घास तथा वनस्पतियाँ उत्पन्न होती हैं , जिनके सेवन से मनुष्य तथा पशु-पक्षी सभी परिपुष्ट होते हैं । यज्ञाग्नि के माध्यम से शक्तिशाली बने मन्त्रोच्चार के ध्वनि-कम्पन, सुदूर क्षेत्र में बिखर कर लोगों का मानसिक परिष्कार करते हैं, फलस्वरूप शरीरों की तरह मानसिक स्वास्थ भी बढ़ता है । अनेक प्रयोजनों के लिये, अनेक कामनाओं की पूर्ति के लिये अनेक विधि-विधानों के साथ अनेक विशिष्ट यज्ञ भी किये जा सकते हैं । दशरथ जी ने पुत्रेष्टि यज्ञ करके चार उत्कृष्ट सन्तानें प्राप्त की थीं । अग्नि पुराण में तथा उपनिषदों में वर्णित पंचाग्नि-विद्या में यह रहस्य बहुत विस्तारपूर्वक बताये गये हैं । विश्वामित्र आदि ऋषि प्राचीनकाल में असुरता - निवारण के लिये बड़े-बड़े यज्ञ करते थे । राम, लक्ष्मण को ऐसे ही एक यज्ञ की रक्षा के लिये स्वयं जाना पड़ा था । लंका-युद्ध के बाद राम ने दस अश्वमेध यज्ञ किये थे । महाभारत के लिये कृष्ण ने भी पाण्डवों से एक महायज्ञ कराया था, उनका उद्देश्य युद्ध जन्य विक्षोभ से क्षुब्ध वातावरण की असुरता का समाधान करना ही था । जब कभी आकाश के वातावरण में असुरता की मात्रा बढ़ जाय, तब उसका उपचार यज्ञ-आयोजनों से बढ़कर और कुछ हो नहीं सकता । आज पिछले दो महायुद्धों के कारण, जन-साधारण में स्वार्थपरता की मात्रा अधिक बढ़ जाने से, वातावरण में वैसा ही विक्षोभ फिर उत्पन्न हो गया है । उसके समाधान के लिये यज्ञीय प्रक्रिया को पुनर्जीवित करना आज की स्थिति में और भी अधिक आवश्यक हो गया है ।

पुरोहित की मार्मिक शिक्षा

अग्निहोत्र की यज्ञ-प्रक्रिया पर बारीकी से दृष्टिपात किया जाय, तो यज्ञ-आदर्शों की बहुमूल्य प्रेरणा उससे उपलब्ध की जा सकती है । ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र में यज्ञाग्नि को 'पुरोहित' कहा गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुरोहित धर्म-शिक्षा दिया करते हैं । यज्ञाग्नि भी वैसी ही शिक्षा देती है ।

(१) जो कुछ हम बहुमूल्य पदार्थ हवन करते हैं, उसे वह अपने पास संग्रह करके नहीं रखती, वरन् उसे सर्व साधारण के उपयोग के लिये वायुमण्डल में बखेर देती है । ईश्वर प्रदत्त विभूतियों का उपयोग हम भी वैसा ही करें, जैसा कि हमारा यज्ञ-पुरोहित अपने आचरण द्वारा सिखाता है । हमारी शिक्षा, समृद्धि, शक्ति, प्रतिभा, प्रतिष्ठा आदि विभूतियों का न्यूनतम उपयोग हमारे लिये और अधिकाधिक उपयोग जन-कल्याण के लिये होना चाहिये ।

(२) जो वस्तु अग्नि के सम्पर्क में आती है, उसे वह दुरदुराती नहीं, वरन् अपने में आत्मसात, करके अपने समान ही बना लेती है । जो पिछड़े, छोटे या बिछुड़े व्यक्ति अपने सम्पर्क में आवें, उन्हें आत्मसात् करने और अपने समान बनाने का **कृण्वन्तो विश्वमार्यम्** का आदर्श पूरा करें ।

(३) अग्नि की लौ कितना ही दबाव पड़ने पर भी नीचे की ओर नहीं होती, वरन् अपनी उठने की दिशा ऊपर को ही रखती है । प्रलोभन, भय कितना ही सामने क्यों न हो, हम अपने विचारों और कार्यों की अधोगति न होने दें । विषम स्थितियों में भी अपना संकल्प और मनोबल अग्नि-शिखा की तरह ऊँचा ही रखें ।

(४) अग्नि जब तक जीवित है, उष्णता एवं प्रकाश की अपनी विशेषताऐं छोड़ती नहीं । उसी प्रकार हमें भी अपनी गतिशीलता की गर्मी और धर्म परायणता की रोशनी घटने नहीं देनी चाहिए । जीवन भर पुरुषार्थी और कर्तव्यनिष्ठ रहना चाहिए ।

(५) यज्ञाग्नि का अवशेष भस्म, मस्तक पर लगाते हुए हमें सीखना होता है कि मानव-जीवन का अन्त, मुट्ठी भर भस्म के रूप में शेष रह जाता है । इसलिये अपने अन्त को, मृत्यु को-ध्यान में रखते हुए जीवन के सदुपयोग का प्रयत्न करना चाहिए ।

लोक-शिक्षण का प्रखर माध्यम

यज्ञ आयोजनों के पीछे जहाँ संसार की लौकिक सुख-समृद्धि को बढ़ाने की विज्ञान सम्मत परम्परा सन्निहित है, जहाँ देव-शक्तियों का आह्वान, पूजन का मंगलमय समावेश है, वहाँ लोक-शिक्षण की भी प्रचुर सामग्री उसमें भरी पड़ी है । जिस प्रकार वाल-फ्रेम में, तार में लगी हुई रंगीन लकड़ी की गोलियाँ दिखाकर छोटे विद्यार्थियों को गिनती सिखाई जाती है, उसी प्रकार यज्ञ का दृश्य दिखाकर लोगों को यह भी समझाया जाता है, कि हमारे जीवन की प्रधान नीति 'यज्ञ' भावनाओं से परिपूर्ण होनी चाहिए । हम यज्ञ-आयोजनों में लगें, परमार्थ - परायण बनें और जीवन को यज्ञ-परम्परा में ढालें । हमारा जीवन-यज्ञ के समान पवित्र प्रखर और प्रकाशवान हो । गंगा-स्नान से जिस प्रकार पवित्रता, शान्ति, शीतलता, आर्द्रता को हृदयंगम करने की प्रेरणा ली जाती है, उसी प्रकार यज्ञ से तेजस्विता, प्रखरता, परमार्थ-परायणता एवं उत्कृष्टता का प्रशिक्षण मिलता है । यज्ञ की प्रक्रिया को जीवन-यज्ञ का एक 'रिहर्सल' कहा जा सकता है । अपनी घी, शक्कर, मेवा, ओषधियाँ आदि बहुमूल्य वस्तुएँ जिस प्रकार हम परमार्थ-प्रयोजन के लिए होम करते हैं, उसी तरह अपनी प्रतिभा, विद्या, बुद्धि, समृद्धि, सामर्थ्य आदि को भी विश्व-मानव के चरणों में समर्पित करना चाहिए । इस नीति को अपनाने वाले व्यक्ति, न केवल समस्त समाज का, बल्कि अपना भी सच्चा कल्याण करते हैं । संसार में जितने भी महापुरुष, देव-मानव हुए हैं, उन सभी को यही नीति अपनानी पड़ी है । जो उदारता, त्याग, सेवा और परोपकार से लिए कदम नहीं बढ़ा सकता, उसे जीवन की सार्थकता का श्रेय और आनन्द भी नहीं मिल सकता है ।

जन-साधारण में इस प्रवृत्ति का प्रसार करना, यही नव-निर्माण का एकमात्र आधार है । अतएव यज्ञ-भावनाओं का प्रचार किया जाय, तो वैसा ही प्रयोजन पूर्ण होगा जैसे देव-मन्दिरों के माध्यम से आस्तिकता की भावना का प्रसार किया जाता है । यज्ञ भारतीय संस्कृति का मूल है । इसलिए उसको एक प्रतीक बना कर सांस्कृतिक पुनरुत्थान के पुनीत कार्य का शुभारम्भ किया जाय, तो यह ऋषि-परम्परा के अनुकूल ही होगा । इस मार्ग से विश्व-कल्याण के लक्ष्य की प्राप्ति में अधिकाधिक सफलता ही मिलेगी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोगों को एकत्रित करने के लिए कितने ही आकर्षक प्रोग्राम रखे जाते हैं । प्रदर्शनियाँ, मेले, समारोह, नाटक, सिनेमा, सम्मेलन, जुलूस, आदि उपकरणों से जनता को एकत्रित कर उसे अभीष्ट विचार देने का तरीका आमतौर से अपनाया जाता है । इन उपायों में खर्च भी काफी होता है । यज्ञ-प्रक्रिया को इस प्रयोजन के लिए भी अपनाया जा सकता है । भारतीय जनता में धार्मिकता की भावनाएँ चिर अतीत से नस-नाड़ियों में भरी चली आ रही हैं । वह अभी भी राजकीय टैक्स की तुलना में कहीं अधिक खर्च धर्म-प्रयोजनों में करती है । समय भी इस दिशा में कम नहीं लगता । इस प्रवृत्ति के अनुरूप प्रत्येक भावनाशील भारतीय, यज्ञ-कार्यों में सहयोग करने के लिए तत्परता प्रकट करता है । इन आयोजनों में भारी संख्या में जनता भाग लेती है और जहाँ तक आर्थिक सहयोग का प्रश्न है, वह इसके लिए बड़ी आसानी से मिल जाता है । देहातों में सर्वथा ऊल-जलूल ढंग के साधू बाबा यज्ञों के नाम पर हजारों रुपया इकट्ठा कर लेते हैं और भण्डारा, मालपुआ, गाँजा, चरस, भेंट-दक्षिणा में उसे मनमाने ढंग से खर्च करते रहते हैं । यदि इस प्रकार निरुद्देश्य यज्ञ-अभिनय के लिए असंख्य लोगों को इतना अधिक सहयोग मिल सकता है, तो कोई कारण नहीं कि विचारशील लोगों द्वारा लोक-निर्माण जैसे अत्यन्त उपयोगी उद्देश्य को सामने रखकर यदि उनकी व्यवस्था की जाय तो उसका सर्वत्र स्वागत ही न हो । केवल धर्माग्रही लोग ही नहीं विचारशील-दूरदर्शी भी उसके महत्त्व को स्वीकार करते हुए अपना सहयोग प्रदान करेंगे । जो लोग व्यर्थ में पैसा खर्च होने और खाद्य वस्तुएँ जलाने की शिकायत करते हैं, यदि उन्हें उस माध्यम से जन जागरण की सम्भावनाओं का थोड़ा सा भी परिचय मिल जाय, तो वे यही कहें कि इतने कम खर्च में जन भावनाओं को आन्दोलित कर सकने वाला और कोई सस्ता माध्यम हो ही नहीं सकता ।

आन्दोलनात्मक व्यापक प्रयत्न

अब हमें यज्ञ को एक विशाल अभियान आन्दोलन के रूप में प्रयुक्त करना चाहिए । युग-निर्माण के लिए यह एक प्रभावशाली ब्रह्मास्त्र सिद्ध हो सकता है । गायत्री सद्बुद्धि की देवी और यज्ञ सत्कर्मों का पिता है, सद्भावनाओं एवं सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्धन के लिए गायत्री माता और यज्ञ पिता का युग्म हर दृष्टि से सफल एवं समर्थ सिद्ध हो सकता है । गायत्री-यज्ञों की विधि-व्यवस्था बहुत ही सरल ,लोकप्रिय एवं आकर्षक भी है । जगत के दुर्बुद्धिग्रस्त जन-मानस का संशोधन करने के लिए सद्बुद्धि की देवी, गायत्री-महामन्त्र की शक्ति एवं सामर्थ्य अद्भुत भी है और अद्वितीय भी ।

नगर, ग्राम अथवा क्षेत्र की जनता को धर्म प्रयोजन के लिए एकत्रित करने के लिए जगह-जगह में गायत्री-यज्ञों के आयोजन करने चाहिए । गलत ढंग से करने पर वे मँहगे भी होते हैं और शक्तियों की बर्बादी भी बहुत करते हैं । पर यदि उन्हें विवेक-बुद्धि से किया जाय, तो कम खर्च से अधिक आकर्षण भी बन सकता है और उपयोगिता भी बहुत हो सकती है ।

गायत्री-यज्ञों की सफलता का केन्द्र-बिन्दु यह है, कि उनमें अधिकाधिक व्यक्ति सम्मिलित हो सकें । (१) आहुतियाँ देने वाले, (२) परिक्रमा अथवा दर्शन करने वाले, (३) श्रमदान करने वाले, (४) आर्थिक सहायता देने वाले, (५) दर्शक, (६) प्रवचनों को सुनने वाले । इनमें से जो जिस स्थिति में हो, उसे उस तरह का, कई तरह के मिले हुए सहयोग करने का निमन्त्रण देना चाहिए और यह प्रयत्न करना चाहिए, कि उस क्षेत्र के लोगों में से हर व्यक्ति का किसी न किसी प्रकार सहयोग मिले । जितने लोग उसमें भाग लेंगे, वे उसे अपनी वस्तु समझेंगे, समर्थन करेंगे और उस वातावरण में उत्पन्न होने वाली प्रेरणाओं से लाभ उठावेंगे । जिस आयोजन में जितने अधिक सहयोगी मिल सकें, उसे उतना ही सफल समझना चाहिए ।

इसके लिए पहले से ही योजनाबद्ध तैयारी करनी चाहिए । यज्ञ-समिति का निर्माण किया जाय, उसमें प्रभावशाली तथा उत्साही कार्यकर्त्ता रहें । वे उत्साहपूर्वक समय दें और आयोजन को सफल बनाने का पूरा प्रयत्न करें । उत्साही और कर्मठ लोगों की कार्य-समिति जहाँ बन गई, वहाँ सफलता की आधी मंजिल तय हो गई जाननी चाहिए । समिति के सदस्यों का मुख्य कार्य जन-सहयोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एकत्रित करना हो । इसके लिए पर्चे छपा देना या बँटवा देना पर्याप्त नहीं, उसके लिए टोली बनाकर घर-घर जाना, आयोजन की सूचना देना, उसकी उपयोगिता बताना तथा सम्मिलित होने के लिए आमन्त्रण देना आवश्यक है । इलेक्शन के दिनों में वोटरों के पास उम्मीदवार लोग जिस मुस्तैदी, नम्रता एवं चतुरता की नीति बरतकर वोटरों को अपने पक्ष में करने का प्रयत्न करते हैं, ठीक वैसा ही प्रयास उस क्षेत्र की जनता को उस आयोजन में किसी न किसी रूप में भागीदार बनाने के लिए किया जाना चाहिए । व्यक्तिगत जन-सम्पर्क ही अब एक मात्र वह उपाय रह गया है, जिसके आधार पर अधिक जनता को किसी कार्य में सम्मिलित किया जाना सम्भव है ।

क्रियाकृत्य की विधि-व्यवस्था

जल-यात्रा के लिए यज्ञ-कलश लेकर जुलूस में निकलने वाली महिलाओं को पीले वस्त्र पहनकर आना होता है । इसके लिए घर-घर जाकर पहले से ही यदि महिलाओं को तैयार न किया जाय, तो वे ऐन वक्त पर बड़ी संख्या में इकट्ठी नहीं की जा सकतीं । प्रथम दिन की जलयात्रा का जुलूस जितना बड़ा, शानदार, व्यवस्थित एवं गाजे-बाजे सहित होगा उसी अनुपात से यज्ञ में जनता की उपस्थिति भी अधिक होगी । यह जुलूस नगर में यज्ञ की स्थिति एवं सम्भावना का परिचय जनता को करा देता है । उस आधार पर उपस्थिति की आशा निश्चित रूप से बढ़ जाती है ।

जो मन्त्रोच्चारण कर सकते हों, शुद्ध वस्त्र और कंधे पर पीले दुपट्टे धारण करके आ सकें, उन्हें आहुतियों पर बिठाना चाहिये । उत्साही नवयुवकों से श्रमदान करके यज्ञशाला, कुण्ड-निर्माण, बिछावन-व्यवस्था, भोजन आदि में सहयोग देने की बात कहनी चाहिये । आर्थिक सहयोग नकदी या वस्तु के रूप में सभी से लिया जाय, भले ही वह कितना ही स्वल्प क्यों न हो, महिलाएँ तथा दूसरे लोग दर्शन करने तथा परिक्रमा करने आ सकते हैं । प्रवचन सुनने के लिये तो हर विचारशील को उपस्थित होने का अनुरोध करना चाहिये । कई बार याद दिलाने और घर-घर अनुरोध करने जाने का प्रबन्ध यदि हो सके तो निश्चय ही यज्ञ-कार्य के निमित्त कहीं भी, किसी भी प्रकार की कमी न रहेगी ।

यज्ञशाला, प्रवचन-पण्डाल, बैठने की व्यवस्था, गायत्री मन्त्र से झाँकी आदि को जितना अधिक आकर्षक एवं सुन्दर बनाया जा सकना सम्भव हो, उतने में तनिक भी कोताही नहीं रहने देनी चाहिये । इस ओर उपेक्षा बरतने से आधा आनन्द नष्ट हो जाता है । अच्छा यह है कि एक केन्द्रीय यज्ञ समिति, कुछ रुपया लगाकर यज्ञ-आयोजन सम्बन्धी सभी वस्तुऐं बनवा लें । एक क्षेत्र में होने वाले कई यज्ञ में यदि बाँट-बाँट कर अपने हिस्से की चीजें बना लें और उनका केन्द्रीकरण कर लें, तो फिर उस क्षेत्र में होने वाले बहुत से यज्ञों में वही वस्तुएँ काम आती रह सकती हैं ।

१६ बल्लियाँ, तीन कोड़ी बाँस, १८×१८ फुट चौड़ा, छाया के लिए रंगीन कपड़ा, बाँस-बल्लियों पर लपेटने का कपड़ा, आदर्श वाक्य, विभिन्न चित्र, गायत्री माता का बड़ा चित्र, झाँकी के छोटे मण्डप का कपड़ा, पाँच चौकियाँ, कलश, लकड़ी के यज्ञ-पात्र, पंचपात्र, घृत-पात्र, सामग्री होमने के पात्र, पूजा की थाली, आरती, शंख, घड़ियाल, कलशों के ऊपर रखने के नारियल, चौकियों पर बिछाने के कपड़े, बैठने के आसन, घृत दीप, धूपदानी, झण्डियाँ, झण्डे, व्याख्यान-मंच के उपकरण, बिछावट के कपड़े आदि अनेक वस्तुएँ ऐसी हैं, जो एक बार बना ली जायँ तो अनेक आयोजनों में काम दे सकती हैं । जहाँ आयोजन हो, वहाँ के लोग सामग्री ले जाँय, वापसी जमा कर जाँय और टूट-फूट के लिए निर्धारित शुल्क जमा कर जाया करें, तो हर यज्ञ में बहुत ही कम खर्च में सारी साधन-सामग्री बड़ी आसानी से जुट सकती है और आधा खर्च घट सकता है । किसी बड़े यज्ञ में दो-तीन हजार रुपया इस कार्य के लिये खर्च कर दिया जाय, तो यज्ञशाला, यज्ञ में प्रयोजनीय वस्तुएँ, झाँकी, प्रवचन मंच तथा बिछावट आदि सभी चीजें खरीदी जा सकती हैं, और फिर उतने से ही उस क्षेत्र में सदा के लिए इन वस्तुओं की व्यवस्था चलती रह सकती है । हो सके तो सैल-बैटरी से चलने वाला, एक लाउडस्पीकर भी खरीद लेना चाहिये, जो कुछ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सौ रुपये में मिल सकता है । लाउडस्पीकर की तो हर आयोजन में आवश्यकता पड़ती है । वह कभी मिलता है, कभी नहीं मिलता, दाम भी बहुत देने पड़ते हैं । इसलिये यज्ञ-प्रचार की दृष्टि से ऐसे बैटरी के लाउडस्पीकर भी बहुत काम दे जाते हैं ।

उपयोगिता ध्यान में रखी जाय

कुछ दिन पूर्व कुण्डों की अधिक संख्या बढ़ाने की प्रतिद्वन्द्विता चल पड़ी थी । अधिक कुण्डों वाले यज्ञ बड़े माने जाते थे, यह माप-दण्ड ठीक नहीं । आहुतियों पर बैठने वालों की संख्या बहुत हो, तो ही कुण्डों की संख्या बढ़ानी चाहिए । अन्यथा ५ या ९ कुण्ड पर्याप्त माने जाने चाहिये । ५ कुण्डों पर हर पारी में कम से कम २७ और ९ कुण्डों पर ४० व्यक्ति बैठ सकते हैं । थोड़ी-थोड़ी आहुतियों की यदि कई पारी कर दी जायँ, तो इतने कुण्डों पर भी ४-५ सौ तक यज्ञकर्ता बैठ सकते हैं । इतने सही आदमी मिलना कठिन है । इसलिये कुण्डों की संख्या बढ़ाने पर जोर नहीं देना चाहिये । १८ फुट लम्बी-चौड़ी यज्ञशाला भी इतने ही कुण्डों का प्रयोजन पूरा कर सकती है । इतने को ही यदि ठीक तरह आकर्षक ढंग से सुसज्जित कर लिया जाय, तो वही पर्याप्त सिद्ध हो सकता है ।

यज्ञ-कार्य संचालन की खूबी इस बात में है कि हर कार्य पूर्ण व्यवस्थित एवं सुचारु रूप से ठीक समय पर हो । चुस्ती और श्रद्धा का समुचित पुट रहने से हर काम सुन्दर प्रतीत होता है । यज्ञाचार्य के मस्तिष्क में आदि से अन्त तक की सारी व्यवस्था रहनी चाहिये । कार्यकर्त्ताओं को समय-समय पर किये जाने वाले कार्यों एवं उपयोग में आने वाली वस्तुओं की लिखित रूप से जानकारी होनी चाहिये । कार्य बँटे रहें । जनता का मार्गदर्शन एवं व्यवस्था करने के लिये स्वयं-सेवक तैनात हों और वे लोगों से वह करने को कहते रहें, जो किया जाना चाहिये । जहाँ ऐसी व्यवस्था बन गई, वहाँ का कार्यक्रम दर्शनीय और वातावरण अत्यधिक रूप से प्रभावित करने वाला होगा । जहाँ प्रबन्ध पर ध्यान नहीं दिया जाता, वहाँ सारा प्रयत्न गुड़-गोबर हो जाता है, और उसे देखकर न किसी को प्रसन्नता होती है और न श्रद्धा जागती है ।

इन बातों का स्मरण रखें

यह ध्यान रखना चाहिये, कि अपने गायत्री-यज्ञों का मूल उद्देश्य जन-जागरण एवं नव-निर्माण है । इसलिये प्रयत्न यह किया जाय, कि आयोजन में सम्मिलित होने वाले सभी लोग कुछ न कुछ प्रेरणा एवं प्रकाश लेकर जायँ । अपने जीवन क्रम में जो बुराइयाँ हों, उन्हें छोड़ें और जिन अच्छाइयों की कमी है, उन्हें आरम्भ करें । सदाचार, गुण, कर्म, स्वभाव का परिष्कार, सामाजिक दोष-दुर्गुणों का उन्मूलन, सामूहिक सत्प्रयत्नों का अभिवर्धन जैसी प्रवृत्तियों को अपनाने की जितनी प्रेरणा जनता को यह यज्ञ दे सकेंगे, उतनी ही उनकी उपयोगिता और सार्थकता मानी जायगी । इसलिये सद्विचारों के प्रचार का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाय । आधा समय, आधा ध्यान और आधा धन इसी प्रयोजन के लिये प्रयुक्त किया जाना चाहिये ।

यज्ञशाला के क्षेत्र में दीवारों पर आदर्श वाक्य लिखे जाने चाहिये, ताकि उधर जाने वाले को हर दीवार बोलती हुई, पुस्तक की तरह कुछ प्रेरणा देती हुई दिखाई पड़े । कपड़ों पर या कागजों पर लगे हुये पोस्टर यज्ञशाला की शोभा ही नहीं बढ़ावें, अपितु आगन्तुकों को कुछ सोचने के लिये भी विवश करें । जलयात्रा-जुलूस में गाये जाने वाले गायन पहले से ही याद हों । नारे लगाने में अपने उद्देश्यों का परिचय दिया जाय । यज्ञ में जो किसी भी रूप में भागीदार बने हैं, उन्हें अपने में कुछ न कुछ परिवर्तन करने के लिये कदम उठाने की प्रेरणा मिले, इसके लिये भाषणों का सुव्यवस्थित तारतम्य बनाया जाय । यज्ञ के अन्तिम दिन पूर्णाहुति के समय 'बलिदान' क्रिया होती है, जिसमें याज्ञिकों को अपनी त्याग-वृत्ति का कुछ प्रमाण देना पड़ता है । इसके लिये यज्ञ आरम्भ के दिन से लेकर दो या तीन दिन जब तक भी वह चले, तब तक भाषणों का क्रम बराबर उसी लक्ष्य की ओर ले चलने वाला, रचनात्मक सुझावों से भरा होना चाहिये ।

इन प्रवृत्तियों को पनपाया जाय

यज्ञ-आन्दोलन की पृष्ठ-भूमि में वैयक्तिक एवं सामाजिक दुर्गुणों का त्याग करने की प्रेरणा प्रमुख है । आलस्य, गन्दगी, कटु-भाषण, आवेश, चटोरापन,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कामुकता, कृतघ्नता, ईर्ष्या, द्वेष, चिन्ता, निराशा भाग्यवाद, काम से जी चुराना, संकीर्णता, खुदगर्जी, आमदनी से अधिक एवं निरर्थक कामों में खर्च, देर से सोना, देर से उठना, अस्त-व्यस्त दिनचर्या, साज सँभाल की कमी, जैसी अनेकों त्रुटियाँ अपने में हो सकती हैं । जुआ, चोरी, नशेबाजी, मांसाहार, व्यभिचार, बेईमानी, जीवन में मृत्युभोज, विवाहोन्माद, नारी-तिरस्कार, जातिगत ऊँच-नीच, फैशनपरस्ती, जेवर, गाली देना, अन्न की झूठन छोड़ना, भिक्षाटन, पर्दा, बाल-विवाह, अनमेल विवाह, भूत-पलीत, अन्धविश्वास आदि अनेकों बुराइयाँ गहराई तक जड़ें जमाये बैठी हैं, उनको हटाना-मिटाना आवश्यक है । सदाचार और सज्जनता की, पुरुषार्थ और व्यवस्था की भावनाओं की जो कमी आज हो चली है, उसे दूर किया जाना चाहिए । लोगों को ऐसी प्रेरणा देनी चाहिए कि वे व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में कुछ रचनात्मक कदम उठायें । विद्याध्ययन, स्वाध्याय, व्यायाम, उपासना, लोकसेवा के लिए समय-दान, सफाई, एवं व्यवस्था के लिये सदा प्रयत्न, बजट बनाकर खर्च करना, सादगी, नियमित दिनचर्या, बड़ों का चरण - स्पर्शपूर्वक अभिवादन, परिवार-निर्माण के लिए नित्य का घरेलू प्रशिक्षण, इन्द्रिय संयम, मधुर भाषण का अभ्यास आदि अनेक अच्छी आदतों का दैनिक जीवन में समारम्भ तथा अभिवर्धन आवश्यक है । सामूहिक सत्प्रयत्नों में प्रौढ़-पाठशाला, पुस्तकालय, व्यायाम-शाला, पर्व संस्कारों का प्रचलन, विद्यालयों की स्थापना जैसे कार्यों का आरम्भ तथा अभिवर्धन हर जगह आवश्यक है । विवाहों में होने वाले अपव्यय, मृत्यु भोज, पशुबलि आदि का सामूहिक वहिष्कार किया जा सकता है । सप्ताह में एक दिन का उपवास, विजय व्रत, शाक-फूल एवं वृक्षों का उत्पादन, श्रम-दान से नगर की सुव्यवस्था आदि अनेक रचनात्मक कार्य हो सकते हैं, जिन्हें उस क्षेत्र में आरम्भ कराया जाय । कितनी ही स्थानीय आवश्यकताएँ एवं समस्याएँ, भी हो सकती हैं जिनके लिये सामूहिक प्रयत्नों की आवश्यकता हो ।

बलिदान की तैयारी

इन विषयों पर लगातार प्रवचन हों, और सुनने वालों को इसके लिये तैयार किया जाय, कि वे यज्ञ की पूर्णाहुति के समय कुछ न कुछ साहसिक कदम उठावें, बलिदान की प्रतिज्ञा में अपनी आदर्शवादिता, श्रद्धा एवं धर्म-भावना का परिचय दें । निजी सुधार के लिये तथा सामाजिक प्रगति के कुछ न कुछ व्रत हर व्यक्ति को लेना चाहिये, चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो । संगीत-भजन के माध्यम से जनता की भावनाएँ अधिक तरंगित की जा सकती हैं, इसलिये इन विषयों पर बने भजनों का पहले से ही अभ्यास कर रखा जाय । वक्ताओं को पहले से ही उनके विषय दे दिये जायँ, ताकि वे तैयारी के साथ नियत समय के अन्दर अपनी बात प्रभावशाली ढंग से कह सकने में समर्थ हो सकें । हर वक्ता का लक्ष्य यह हो, कि पूर्णाहुति के समय हर व्यक्ति कुछ प्रगतिशील कदम उठायें । इसके लिये लोगों की स्थिति के अनुरूप ऐसे सुझाव उपस्थित करने चाहिये, जिन्हें वे आसानी से समझने और अपनाने में समर्थ हो सकें । भाषणों की सार्थकता इसी में है कि उनके प्रकाश में कुछ करने का उत्साह लोगों को मिल सके, अन्यथा वे एक मनोरंजन मात्र बनकर निरर्थक गाल बजाना सिद्ध होते हैं । विदूषकों की तरह कई वक्ता हँसाने और औंधी-सीधी बातें कहकर कौतूहल उत्पन्न करने की कला में प्रवीण होते हैं । उथले स्तर की जनता ऐसी बातों में रस भी बहुत लेती है, पर हमें इस प्रकार सस्ते मनोरंजन के लिये जन-सम्मेलन के महत्त्वपूर्ण अवसर की बर्बादी नहीं होने देनी चाहिये । जनता को हम नाटकीय मनोरंजन देने के लिये नहीं, वरन् नई दिशा, नई प्रेरणा एवं नई भावना प्रदान करने के लिए एकत्रित करते हैं, अतएव ठीक प्रयोजन के लिए कार्य भी ठीक ही किया जाना चाहिये ।

जितने भी प्रवचन एवं भजन हों, वे पूर्णाहुति के समय बलिदान-क्रिया में अपना महत्त्वपूर्ण कदम घोषित करने की तैयारी की प्रेरणा के लिये ही होने चाहिए । पूर्णाहुति के समय अधिकाधिक लोगों को आने की बात कहनी चाहिए । बलिदान के समय यज्ञाचार्य द्वारा उस प्रक्रिया को यज्ञ भगवान का मर्म

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थल प्रतिपादित करना चाहिए और कहना चाहिये कि बुलाये गये देवताओं के सम्मान-पूजन में लोग अपनी श्रद्धा-तत्परता का परिचय 'बलिदान' में अधिक साहस का प्रदर्शन करते हुए दें । यह क्रिया हाथ में जल, पुष्प, रोली लेकर लोग संकल्प करें और अपनी यह श्रद्धांजलि, यज्ञ-वेदी पर उपस्थित करें । इस क्रिया को अधिक प्रेरक, अधिक प्रभावशाली, अधिक आकर्षक बनाने में कुछ कमी न रहने दी जाय । संकल्पकर्त्ताओं के संकल्प लाउडस्पीकर पर जनसाधारण को सुनाए जायँ । उन्हें आशीर्वाद, पुष्प, फल, प्रसाद आदि दिए जायँ, तिलक, कलावा आदि के साथ आशीर्वाद दिये जायँ । इन संकल्पों के लिए छोटे प्रतिज्ञा-पत्र छपे हों, जिस पर अपना पता, परिचय तथा क्या व्रत लिया, इसकी घोषणा लिखकर समर्पित करें । हो सके तो यज्ञ समाप्ति के बाद इन संकल्पों का ब्यौरा तथा विवरण छपाकर जनता में वितरित किया जाय, ताकि यज्ञ रक्षा के लिए वे लोग अपनी प्रतिज्ञाएँ दृढ़ता से निभायें तथा दूसरे लोगों को भी अगले यज्ञ में वैसा ही करने की प्रेरणा मिले ।

प्रत्येक यज्ञ में नव- साहित्य की एक दुकान आवश्यक रूप से लगाई जाय और प्रयत्न किया जाय कि उपस्थित लोग उसे खरीदें और अपनावें । इस अवसर पर कुछ सस्ता साहित्य वितरण भी किया जाय ।

गायत्री-यज्ञों के स्मारक

हर गायत्री यज्ञ की समाप्ति पर एक स्मारक, पुस्तकालय, विद्यालय, प्रौढ़-पाठशाला, व्यायामशाला किसी रचनात्मक कार्य के रूप में बनाये जायँ । इसके लिए यज्ञ की बचत का पैसा तथा पीछे कुछ और एकत्रित करके उस सामूहिक लोक-प्रेरणा उत्पन्न करने वाले कार्य का शुभारम्भ किया जाय । यज्ञ में आये और खर्च हुए पैसे का हिसाब या तो छपाकर देने वालों में बाँट दिया जाय या फिर बड़े अक्षरों में लिखकर किसी सार्वजनिक स्थान पर चिपका दिया जाय । हिसाब-बही में पूरा ब्यौरा, प्रमाणों समेत रखा जाय, ताकि हिसाब सम्बन्धी गलतफहमी होने की कहीं कोई गुंजायश न रहे ।

अवांछनीय मूढ़ता न अपनायें

आजकल यज्ञों के नाम पर रूढ़िवादियों ने जो अन्धेर मचा रखा है, उससे लाभ तो दूर, उलटी हानि होती है । अन्धाधुन्ध पैसा इकट्ठा किया जाता है, हवन में आहुतियाँ तो नाम-मात्र की पड़ती हैं पर तथाकथित पंडित, दक्षिणा और सामग्री के नाम पर उसमें से बहुत कुछ समेट ले जाते हैं । यज्ञ कराने वालों की इन लोगों से साँठ-गाँठ रहती है । ब्रह्म-भोज के नाम पर हजारों निठल्ले लोग खीर, पुआ उड़ाते हैं । व्याख्यानों के नाम पर कोई सड़ी-गली कथा बिठा दी जाती हैं । कीर्तनों का हुल्लड़ मचता रहता है । गाँजा पीने वाले बाबा लोग धूनी रमाये पड़े रहते हैं । कोई हरिद्वार का किराया माँगता है, तो कोई काशी का । ऐसे ही अपव्ययों में जनता की गाढ़ी कमाई का प्रचुर धन स्वाहा हो जाता है । बड़े नामधारी तथा कथित विद्वान अथवा सन्त बुला लिए जाते हैं । उनके भाषण निष्प्रोजन, अव्यावहारिक और बेतुकी बातों से भरे रहते हैं, बेचारी जनता उनके दर्शन-लाभ को ही पुण्य मान लेती है ? इस तरह मूढ़ता को एक कदम और मजबूत बना देने वाले ये रूढ़िवादी यज्ञ तथाकथित साधु-सन्तों की प्रेरणा से जहाँ-तहाँ होते रहते हैं । इनमें होने वाली धन तथा समय की बर्बादी को देखकर ही विचारशील को दुःख होता है और उनका विरोध भी करते हैं । यही क्रम चलता रहा तो लोगों में यज्ञ के नाम से अश्रद्धा हो जायगी । इस विचारशीलता के युग में हमें यज्ञों की उपयोगिता सिद्ध करनी होगी । भारतीय संस्कृति के मूल आधार यज्ञ के प्रति लोक-श्रद्धा तभी स्थिर रहेगी, जब उनकी उपयोगिता प्रकाशित की जा सके । जनता का जितना धन, समय और मनोभाव उसमें लगा है, उससे अनेक गुना सत्परिणाम उत्पन्न हो सके, इसका पूरा-पूरा ध्यान रखना यज्ञ-संयोजकों का परम पवित्र धर्म-कर्तव्य होना चाहिए ।

जिस प्रकार यज्ञ-आरम्भ में जलयात्रा का जुलूस निकाला था, सम्भव हो तो पूर्णाहुति के पश्चात् भी वैसा ही विसर्जन जुलूस निकाला जाय । जुलूसों से जन-उत्साह बढ़ता है और मिशन की लोकप्रियता प्रमाणित होती है । जो उसमें सम्मिलित होते हैं, वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आन्दोलन के अगले चरणों में भी भाग लेते हैं । यज्ञ समाप्त होने पर यज्ञ की भस्म की एक-एक पुड़िया तथा थोड़ा प्रसाद उन सब घरों में पहुँचाया जाय जिनसे कि आयोजन में सहयोग मिला है । कृतज्ञताज्ञापन एवं धन्यवाद देने का यह एक अच्छा तरीका है । जिनके यहाँ से जो सामान मँगाया गया था, वह आयोजन समाप्त होते ही वापस पहुँचा देना चाहिये । आदि से अन्त तक सारी व्यवस्था, शोभा एवं कार्य-पद्धति ऐसी रहे, जिससे लोग आकर्षित हों, दूसरे लोग भी अपने यहाँ वैसा ही आयोजन कराने के लिए लालायित हों । जहाँ यज्ञ हुआ है, वहाँ भी अगले वर्ष फिर ऐसा ही आनन्द बरसने की अभिलाषा रहे । यह सब व्यवस्थित एवं सुझावपूर्ण ढंग से कार्य करने की पद्धति पर निर्भर है । फूहड़पन बढ़ती जायगी तो अश्रद्धा उत्पन्न होगी और भविष्य में उनका प्रचलन बन्द हो जायगा ।

युग-निर्माताओं का प्रशिक्षण

यज्ञों को जन-नेतृत्व करने या शिक्षा का माध्यम भी बनाया जा सकता है । इन आयोजनों का प्रबन्ध करने वाले यह जान और सीख सकते हैं, कि जनता की मनोवृत्ति क्या होती है, और उसे किस प्रकार नियंत्रित, व्यवस्थित एवं सही दिशा में अग्रसर किया जा सकता है । अब राजनीति की धूर्तताएँ देखकर जनसाधारण की उस पर से श्रद्धा उठ रही है । जहाँ तक भावनात्मक निर्माण का प्रश्न है, वह क्षेत्र पीछे भी धर्म पर ही अवलम्बित रहा है, आगे भी वह कार्य धर्ममंच द्वारा ही सम्पन्न होगा । इसलिए असली लोक-नेतृत्व अब धर्म-क्षेत्र में काम करने वाले लोगों के हाथ रहना है । युगनिर्माण की महानतम क्रान्ति का अगले दिनों बहुत ही व्यापक एवं विशाल रूप सामने आवेगा । गायत्री-यज्ञ आयोजनों के माध्यम से हम उसका अग्न्याधान, शिलान्यास मात्र कर रहे हैं । जब वह अभियान अपने प्रौढ़ स्तर पर पहुँचेगा, तब उसे सँभालने एवं बढ़ाने के लिए लाखों प्रबुद्ध युग-निर्माताओं की आवश्यकता पड़ेगी । वह समय दूर नहीं, जब ऐसे लोगों को हाथ पसार कर पुकारा जायगा । इन भावी लोक-नेताओं का निर्माण हमें इन छोटे यज्ञ-आयोजनों के द्वारा ही करना होगा ।

हवन, पूजन का कर्मकाण्ड जितना महत्त्वपूर्ण है, उतना ही रहस्यमय एवं सारगर्भित भी । हर क्रिया-कृत्य को कराते समय उसका प्रयोजन जनता को बताते चलना चाहिये । ताकि देव-पूजन करते समय लोग यह भी समझते चलें कि जो कुछ हम कर रहे हैं, आखिर उसका प्रयोजन क्या है ? हर क्रिया-काण्ड के माध्यम से एक विशेष भावना का जागरण करना इन धर्मानुष्ठानों का मूल उद्देश्य है । यदि क्रियाकृत्य तो चलता रहे, पर उसके माध्यम से जो भावना जागनी चाहिये, उसके लिये कोई प्रशिक्षण न हो, तो फिर उस कर्मकाण्ड का कलेवर ही रह जायगा और उससे मूल उद्देश्य पूर्ण न होगा । आजकल पंडित लोग मन्त्र बोलते रहते हैं और क्रिया कराते रहते हैं, वे न तो स्वयं समझते हैं कि यह सब आखिर क्यों कराया जा रहा है और न यजमान को वह सब समझा पाते हैं । शास्त्र में ऐसा ही लिखा है, परम्परा ऐसी ही है, इतना मात्र कह देने से इस बुद्धिजीवी युग में किसी का सन्तोष - समाधान नहीं हो सकता, और न भाव-जागरण का वह उद्देश्य पूरा हो सकता है, जिसके लिये कि ऋषियों ने इस सारे विधि-विधान की रचना की थी,अस्तु । यज्ञाचार्य को इस बात में भी दक्ष होना चाहिये कि वह प्रत्येक विधि-विधान का प्रयोजन भी लोगों को समझाता चले ।

भावनाओं का परिष्कार-मूल प्रयोजन

जनता की प्रस्तुत धर्म-भावनाओं को विकसित करने और उन्हें रचनात्मक दिशा में मोड़ देने के लिये गायत्री-यज्ञ-आयोजनों को एक सुव्यवस्थित आन्दोलनों के रूप में चलाया जाना चाहिये । भारतवर्ष की धार्मिक जनता में यही तरीके लोकप्रिय एवं प्रभावशाली सिद्ध हो सकते हैं, उनके बढ़ने और फलने-फूलने की पूरी-पूरी गुंजायश इस देश में है । तथ्यों को हमें समझना चाहिये और उनके सामयिक सदुपयोग के लिये सचेष्ट रहना चाहिये । देश की, आज की सबसे बड़ी आवश्यकता भावनात्मक नव-निर्माण की है । हमें बौद्धिक पराधीनता के पाश से भी राजनैतिक गुलामी की तरह ही मुक्ति प्राप्त करनी पड़ेगी, इसके लिये स्वाधीनता-संग्राम की भाँति ही विचार-क्रान्ति का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आह्वान करना पड़ेगा । नव-निर्माण केवल आर्थिक सुविधा-साधन बढ़ाने से संभव न हो सकेगा । उससे प्रगति की राई-रत्ती ही आवश्यकता पूरी होगी । मनुष्य में मूल तत्त्व विचारणा तथा भावना है । भावना एवं विचार-निर्माण से ही व्यक्ति-निर्माण होता है और सुसंस्कृत-सुविकसित व्यक्ति ही विकास की सर्वतोमुखी आवश्यकता पूर्ण कर सकते हैं । हमें व्यक्ति-निर्माण के लिये, विचार-निर्माण के लिये साहसिक कदम उठाने होंगे । सोई हुई जन-शक्ति को, उसमें छिपी हुई उत्कृष्ट आदर्शवादिता एवं भाव-शक्ति को जगाना होगा । इस जन-जागरण के लिये जिन माध्यमों को अधिक सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया जा सकता है, उसमें गायत्री-यज्ञों का प्रचलन सर्वोत्तम है ।

शक्तियों के सम्बन्ध में अभी लोगों का ध्यान उन्हीं की ओर गया है, जो प्रत्यक्ष है । धन, शस्त्र, बल और कौशल इन्हीं को सब कुछ समझा जाता है और इन्हीं के संवर्धन पर समाज के, शासन के मूर्धन्य लोगों का ध्यान केन्द्रित है । गरीबी दूर करने हेतु बड़े-बड़े कल कारखाने, सुरक्षा हेतु शस्त्र बनाने व खरीदने की प्रक्रिया तथा स्वास्थ्य-सम्वंर्धन हेतु चिकित्सकों, चिकित्सालयों व ओषधियों के निर्माण हेतु बहुत कुछ हो रहा है । सामान्य जनशिक्षा की दिशा में भी बहुत कुछ हो रहा है । ये सभी प्रत्यक्ष शक्तियाँ है जिनका महत्त्व समझा और अभिवृद्धि के लिए भरसक प्रयास किया जा रहा है । इसमें कोई संदेह नहीं कि इस अभिवर्धन से हमारी भौतिक आवश्यकताएँ पूरी होंगी ।

परन्तु मनुष्य मात्र भौतिक ही नहीं है उसके भीतर आध्यात्मिक सम्पदा भी अच्छी खासी मात्रा में है । वह परोक्ष होते हुए भी भौतिक सामर्थ्यों से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । चिन्तन, चरित्र और भावनाएँ यह तीनों, व्यक्ति की भीतरी शक्तियाँ है । इनके बल पर व्यक्ति और समाज ऊँचे उठते हैं । यदि इनमें खोखलापन आ जाय, तो भौतिक सामर्थ्यों की प्रचुरता होते हुए भी सब कुछ गुड़-गोबर हो जाएगा ।

आदर्श-विहीन, आस्थाविहीन मनुष्य बेपेंदी के लोटे के समान होते हैं, जो आकर्षण और दबाव के आगे किसी भी ओर झुक सकते हैं । अनीति का समर्थन भी हो सकता है और कायरता अपनाकर औचित्य का परित्याग भी किया जा सकता है । आदर्शों के प्रति निष्ठा में वह शक्ति है । जिसके सहारे साधन-विहीन व्यक्ति भी बड़ी से बड़ी हिम्मत कर सकता है और गान्धी, विनोबा की तरह वह कर सकता है, जो चमत्कार जैसे प्रतीत होते हैं ।

विचारों की अपनी शक्ति है, जिसने प्रजातंत्र और साम्यवाद जैसे असम्भव लगने वाले प्रचलनों को सम्भव कर दिखाया । राजा-सामन्तों की जड़ें पाताल तक गहरी घुसी हुई प्रतीत होती थीं, पर वह उलट कर औंधी हो गई । दास-दासियों की खरीद-फरोख्त अब कहाँ होती है ? छूत-अछूत का चक्कर अपना दम तोड़ रहा है । आर्थिक विषमता के विरुद्ध प्रत्यक्ष आन्दोलन और परोक्ष ईर्ष्या तथा आंतकवाद का जन्म हो रहा है । विचारों की आत्मिक सम्पदा ऐसी है, जिसके समर्थ रहने पर जापान और इस्राइल जैसे छोटे देश बड़े-बड़ों के कान काट रहे हैं । विचार-क्षेत्र में जो क्रान्तियाँ चल रही है, उनके सही और गलत रूप कभी-कभी देखने को मिलते रहते हैं ।

इन सबसे भी बढ़ी-चढ़ी शक्ति है 'भावना' । इसी के ऊपर देश, धर्म, समाज, संस्कृति, दया, करुणा, पुण्य, परमार्थ, संयम, सदाचार आदि की आधारशिला रखी हुई है । यदि भावनाओं का लोप हो जाय, तो मनुष्य या तो पशु हो सकता है या पिशाच । उत्कृष्टता, आदर्शवादिता, उदारता के पक्ष में कोई तर्क या तथ्य शेष न रह जायगा । बहिन और पत्नी के बीच जो अन्तर है, उसका समर्थन न हो सकेगा । वयोवृद्ध की सेवा करने की अपेक्षा अर्थशास्त्र के आधार पर उन्हें कसाईखाने के सुपुर्द करना पड़ेगा ।

अध्यात्म और धर्म की समूची आधारशिला भावनाओं के ऊपर रखी हुई है । उसे सक्षम बनाये रखने के लिए तत्त्व-ज्ञान-दर्शन और धर्म का समूचा ढाँचा खड़ा किया गया है । भावना की शक्ति, पत्थर में से भगवान प्रकट कर सकती है । वह न रहे तो भगवान भी पत्थर हो जायगा और परमार्थ-स्वार्थ के बीच अन्तर कर सकना कठिन हो जायगा । भावना के ऊपर यह सारा समाज टिका हुआ है और साथ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही मनुष्य का गौरव भी, इतना ही नहीं, उसकी अपनी शक्ति भी है, प्रेरणा भी । देश-भक्ति एवं पुण्य-परमार्थ के नाम पर मनुष्य अपना सब कुछ दान कर बैठता है । भक्ति-भावना में तल्लीन होकर शरीर की सुध-बुध खो बैठता है । झाड़ी में से भूत निकल पड़ता है और प्राण लेकर हटता है । भय और आशंका से ग्रस्त होने पर नींद हराम हो जाती है । निराश व्यक्ति जीवन की लाश भर ढोता है । भावना ही है, जिसके कारण बालक माता के पेट में स्थान पाते, दूध पीते और उसकी सेवा से लाभ उठाते हैं । यदि भावनाएँ निकल जायँ ,तो यह संसार नीरस और श्मशान के तुल्य भयानक प्रतीत होगा ।

कहा जा चुका है, कि भावनाओं को जीवन्त रखने के लिए, आध्यात्मिक साधनों और धार्मिक क्रिया-काण्डों का ढाँचा खड़ा किया गया है और उसे जीवन्त रखा गया है, यज्ञ भी उनमें से एक है । वह हमारे विचार, व्यवहार और आचरण में सम्मिलित होकर वैसे फलितार्थ उत्पन्न करता है , जिसके गुणगान गाते-गाते शास्त्रकार और आप्तजन थकते नहीं है ।

इन पंक्तियों में यज्ञ के कर्मकाण्ड की वैज्ञानिकता पर प्रकाश नहीं डाला जा रहा है, वरन् यह कहा जा रहा है कि उसकी शक्ति-सामर्थ्य श्रद्धा-भावना को बढ़ाती है एवं उस प्रयोग के चमत्कार दिखाती है ।

यज्ञाग्नि को परमात्मा का मुख माना गया है , जिसमें जो कुछ डाला जाता है, उसे तत्काल ग्रहण कर लिया जाता है । प्रतिमाओं का भोग लगाने में वस्तुएँ जहाँ की तहाँ रखी रहती हैं । यज्ञ की साक्षी में किये गये कार्यों के सम्बन्ध में यह विश्वास किया जाता है, कि इस में देव-साक्षी सम्मिलित हो गई और निर्धारण पत्थर की लकीर हो गया । विवाह में पति-पत्नी यज्ञाग्नि की परिक्रमा करके बिश्वास करते हैं कि वे जन्म-जन्मान्तरों के लिए एक दूसरे के साथ वैसे ही जुड़ गये हैं, जैसे कि बैल्डिंग द्वारा धातुओं को एक साथ जोड़ दिया जाता है ।

इसमें भावना प्रधान है । बच्चों के संस्कार होते हैं । नामकरण, अन्नप्राशन, मुंडन, विद्यारम्भ आदि में यज्ञ के बिना पूर्णता नहीं आती । यज्ञोपवीत का तो नामकरण ही इस आधार पर हुआ है कि यज्ञाग्नि के इस प्रतीक प्रसाद को कंधे पर, हृदय पर, कलेजे पर लपेट कर मनुष्य तादात्म्य बनता है और नर-पशु से नर-देव बनने की द्विजत्त्व की संकल्पपूर्वक अवधारणा करता है । वानप्रस्थ प्रभृति संस्कारों में भी यही ध्यान आजीवन रखा जाता है कि लोक-मंगल और आत्म-कल्याण के लिए जीवन समर्पित करने का जो व्रत लिया गया है, उसे आजीवन निबाहा जायगा ।

मरने के उपरान्त शरीर को चिता में समर्पित किया जाता है, वह भी अन्त्येष्टि यज्ञ है । उसमें मन्त्र बोले जाते हैं जिनका अर्थ होता है कि हमारा प्राण-यज्ञ प्रयोजनों में लगा रहे और जिस शरीर से आजीवन प्यार किया है, उसे भी यज्ञाग्नि की गोद में समर्पित करते हैं । वह हमारा जीवन-मरण का साथी है ।

होली का त्यौहार प्रसिद्ध है । उसका वर्तमान स्वरूप तो कूड़ा-कचरा जला देने जैसा है, किन्तु वह नवान्न यज्ञ है । खेतों में फसल जब पक कर तैयार होती है, तब स्वयं उसका उपयोग करने के स्थान पर सर्वप्रथम सामूहिक होलिका के रूप में यजन करते हैं । कच्चे अन्न को ही होला कहते है । यह उस उक्ति का क्रियान्वयन है कि "यज्ञ से बना हुआ ही खाना चाहिए ।" इसका सीधा अर्थ होता है, कि प्रथम परमार्थ को दिया जाय, बाद में पेट भरने की बात सोची जाय । यह मान्यता भारतीय देव-संस्कृति की मूलभूत भावनाओं का स्मरण कराती है और उसे अपनाने की प्रेरणा देती है ।

सभी शुभ कर्म यज्ञ के साथ सम्पन्न होते हैं । पितरों की सद्गति के लिए उनका आयोजन किया जाता है । नित्य कर्म में पंच यज्ञ-विधान सम्मिलित है । भले ही उसकी चिह्न-पूजा चूल्हे में पाँच छोटे ग्रास होम कर, बलिवैश्व के रूप में कर ली जाय । पर उस माध्यम से इस तथ्य का स्मरण किया जाता है, कि अपने खाने से पहले पिछलों की, अपनी कमाई में साझेदारी स्वीकार की जाय । सत्प्रयोजनों की सहायता करने में यदि अपने ग्रास कम करने पड़ें, तो उसके लिए भी तैयार रहा जाय । पेट भरना आवश्यक है, किन्तु उससे भी बड़ी बात है पारमार्थिक भावनाओं को जीवित रखना । इसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए प्रतीक रूप से कुछ क्रिया-कृत्य करते रहा जाय, ताकि दायित्त्वों का विस्मरण न होने पाये ।

यज्ञ एक दर्शन है । उसके साथ पारमार्थिक भाव-संवेदनाएँ अविच्छिन्न रूप से जुड़ी हुई हैं । हमें प्रतीक-पूजन के साथ उन आदर्शों को भी जीवनचर्या के साथ जोड़ कर रखना चाहिए जो सद्भावना संयम, उदारता के रूप में आहुतियाँ देते हुए कार्यान्वित की जाती हैं । इस आधार पर ही मनुष्य सच्चे अर्थों में गौरवशाली एवं सशक्त बनता है ।

यज्ञीय क्रिया-कृत्य में जितनी तकनीक है, उससे कहीं अधिक भाव-श्रद्धा का समावेश होता है । प्रयोग में आने वाली हर वस्तु को अभिमंत्रित किया जाता है । हवन कुण्ड, समिधा, शाकल्य, घृत, पात्र, यहाँ तक कि विभिन्न कार्यों में काम आने वाले जल तक को अभिमंत्रित किया जाता है । वह पानी नल या कुएँ से उसी प्रकार उपलब्ध नहीं किया जाता, जैसे कि पीने, नहाने, कपड़ा धोने आदि के लिए प्राप्त किया जाता है । किसी पवित्र सरोवर या जलाशय तक पीत वस्त्रधारी महिलाएँ रंगे हुए घट लेकर जाती है और जलाशय पर पूजा-उपचार करके उस जल को देव-प्रसाद मानकर यज्ञ-मण्डप में लाती हैं । कुण्ड का गड्ढे की तरह उपयोग नहीं किया जाता, वरन् उसके पंच भू संस्कार करके इस योग्य बनाया जाता है, कि यज्ञ के निमित्त स्थापित की गई, देव-अग्नि को उस पवित्र आसन पर स्थापित किया जा सके ।

आहुति देने वालों को स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन कर सम्मिलित होना आवश्यक है । जब यज्ञ मण्डप में प्रवेश किया जाता है, तब फिर एक बार पैर धोने पड़ते हैं । होताओं के लिए व्रत-उपवास एवं ब्रह्मचर्य का अनुशासन है । कोई वस्तु या कृत्य जो यज्ञ के सन्दर्भ में प्रयुक्त होता है, उसे श्रद्धा-भावनाओं एवं पवित्र मंत्रों से अभिमंत्रित किया जाता है ।

यज्ञ-प्रक्रिया में कोई भी विधि-विधान ऐसा नहीं है, जिसे उद्देश्यहीन कहा जा सके । पूजा की वेदी पर महादेवता की स्थापना हो जाती है । प्राण-प्रतिष्ठा के साथ वे सभी उपचार सम्पन्न किए जाते हैं, जो किसी मान्य अतिथि के आगमन पर किये जाते हैं । यह सारे विधान इस निमित्त हैं, कि प्रयुक्त होने वाली वस्तुओं को श्रद्धासिक्त बनाया जाय और जो होता, यजमान, आचार्य, उद्गाता, अध्वर्यु आदि इस अनुशासन को सँभालते हैं, उन्हें अपने-आपको देवोपम स्थिति में रखना होता है ।

यह बाह्य एवं आभ्यन्तरिक पवित्रीकरण से जुड़ा श्रद्धा-संयोजन ही यज्ञ का प्राण है । यजन - प्रक्रिया किसी गढ़े में हवन सामग्री डालकर जला कर चिह्न-पूजा के रूप में नहीं की जाती, बल्कि उसके हर विधि-विधान द्वारा उस प्रयोजन की पूर्ति की जाती है, जिसके लिए यज्ञ किया गया है । यज्ञ अर्थात् संघबद्ध होकर किया गया एक उच्चस्तरीय परमार्थ-प्रयोजन, जो अन्तर्जगत में दिव्यता के समावेश की प्रक्रिया पूरी करता है ।

जन-मानस में इस तरह के भाव-जागरण के लिए हम भावनाशील, दूरदर्शी, धर्म-प्रेमी व्यक्तियों को योजनाबद्ध रूप से कुछ सोचना व करना चाहिये । गायत्री-यज्ञों की उपयोगिता इस दृष्टि से भली भाँति समझी जा सकती है । उनका प्रचलन अब पूरे उत्साह के साथ गाँव-गाँव, नगर-नगर, क्षेत्र-क्षेत्र में तत्परतापूर्वक किया जाना चाहिये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गायत्री यज्ञों की विधि-व्याख्या

भावनात्मक नव-निर्माण का आधार है, व्यक्तिगत जीवन में पवित्रता और सामाजिक जीवन में न्याय निष्ठा का अधिकाधिक समावेश । इसी को और अधिक स्पष्ट किया जाय तो वैयक्तिक पवित्रता को शुचिता और समता के रूप में चित्रित किया जा सकता है । हम न केवल चिन्तन और कर्तृत्व की दृष्टि से उत्कृष्टता धारण किये रहें, वरन् दूसरों के साथ अपने व्यवहार में समता का, आत्मीयता का, उदारता का, सहयोग का, सद्व्यवहार का भी इतना अधिक समावेश करें कि मनुष्य में देवत्त्व की ज्योति जगमगाती दीखे । मनुष्य देवधारी में महामानव जैसी आभा फूटे ।

भावनात्मक नव निर्माण का सामाजिक पक्ष है न्याय-निष्ठा । इसे अधिक स्पष्टता पूर्वक समझना है तो एकता और समता के रूप में इसकी व्याख्या करनी पड़ेगी । बिखराव का केन्द्रीकरण, द्वैत की अद्वैत में परिणित से ही **वसुधैव कुटुम्बकम्** का, विश्व बन्धुत्त्व का आदर्श व्यवहार में आ सकेगा । हम सब एक हैं, का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए जाति, लिंग, देश, धर्म, भाषा आदि की समस्त भेद प्राचीरें गिरानी पड़ेंगी और सब प्राणियों में अपनी आत्मा का, अपने में विश्व-संवेदन का दर्शन करना होगा । इसी प्रकार ईश्वर प्रदत्त समता के मार्ग में जितने व्यवधान खड़े किये गये हैं, उन्हें समाप्त करके मानवी समता की सर्वतोमुखी व्यवस्था बनानी होगी । सामाजिक न्याय इन्हीं आदर्शों की आधारशिला पर खड़ा किया जा सकता है । नव निर्माण का सामाजिक जीवन में यही लक्ष्य है ।

मनुष्यों के रहने योग्य मानवी आदर्शों, रीति नीति में ओत-प्रोत जिस नई दुनिया को बनाने का युग निर्माण परिवार भागीरथ प्रयत्न कर रहा है इसे एक शब्द में कहें तो 'यज्ञ-युग' कह सकते हैं । भारतीय तत्त्व दर्शन में यज्ञ शब्द इसी व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । अग्निहोत्र तो उसका प्रतीक है, देश भक्ति की भावना के साथ जुड़े हुए अनेक कर्त्तव्यों के प्रति निष्ठा का प्रतीक राष्ट्रध्वज है । उसका मूल्य और महत्त्व इसी रूप में है । तीन रंगों के कपड़ों के सिले हुए टुकड़ों का प्रत्यक्षतः कोई अधिक महत्त्व नहीं । वह एक-दो रुपये का तुच्छ सा वस्त्र मात्र है , किन्तु जिन आदर्शों का वह प्रतिनिधि है,प्रतीक है, वे इतने महान हैं कि उन पर प्राणोत्सर्ग करना भी हँसी-खेल माना जाता रहा है । राष्ट्रध्वज के सम्मान की रक्षा में प्राण देने वाले वीर बलिदानियों की संख्या कम नहीं । वे कपड़े के टुकड़े के लिए नहीं वरन् उसके साथ जुड़ी हुई भावना के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करने के लिये ही बलिवेदी पर चढ़े थे । अग्निहोत्र ठीक उसी तरह की उच्च आदर्शवादिता का प्रतीक है । उसका आयोजन वायु-शुद्धि, रोग-निवृत्ति, प्राणप्रद वर्षा, मनोकामनाओं की पूर्ति जैसे भौतिक लाभों की दृष्टि से ही नहीं किया जाता, वरन् उसके साथ जुड़े हुए देव दर्शन को विश्वव्यापी बनाने का लक्ष्य रखकर यज्ञ-व्यवस्था में जुटा जाता है ।

युग निर्माण परिवार द्वारा संचालित यज्ञ-आन्दोलन का लक्ष्य न तो पंडिताऊ है और न भौतिक लाभों तक सीमित । सांस्कृतिक प्रतीक परम्परा की रक्षा उसमें होती है, सही, पर अपना उद्देश्य इन दिनों इस अभियान को गति देने में अत्यन्त उच्च कोटि का है । विश्व का भावनात्मक नव निर्माण आज की सब से बड़ी आवश्यकता है । सर्वनाश के गर्त में गिरने के लिए समुद्यत मानवी सभ्यता की गति उलटनी है । सामूहिक आत्म-हत्या के लिए आतुर मनुष्य जाति को अपने हाथ रोकने के लिए विवश करना है । सुविस्तृत भूखण्डों को जल-प्लावित करने वाली प्रचण्ड जलधारा को रोककर बाँध बनाने और संचित जल राशि से धरित्री को शस्य श्यामला बनाने के लिए नहरें खोदने में जो उद्देश्य रहता है, बिल्कुल वही प्रयोजन अपने यज्ञ-अभियान का भी है ।

इस वर्ष प्रत्येक समर्थ शाखा को अपने यहाँ गायत्री यज्ञ आहुति युग निर्माण सम्मेलन करने के लिये जुट पड़ने का अनुरोध किया गया है, उसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पीछे लक्ष्य स्पष्ट है कि उस क्षेत्र में नव जागरण की, नव निर्माण की चेतना को व्यापक एवं प्रखर बनाया जा सके । व्यक्ति-निर्माण के लिए न्याय निष्ठा जन-मानस में गहराई तक प्रतिष्ठापित कराने की आज आवश्यकता है । नव निर्माण का आधार यही है । शुचिता, समता, एकता, व समग्रता के चारों स्तम्भ यज्ञीय अग्निहोत्र में भली प्रकार ओतप्रोत हैं । उसके साथ जुड़े हुए विधि-विधान को सही ठीक तरह समझाया जा सके, तो निस्संदेह उतनी व्याख्या भर से उपस्थित लोगों के निर्माण को उपरोक्त चारों लक्ष्य भली प्रकार हृदयंगम कराये जा सकते हैं । निस्संदेह यज्ञीय प्रक्रिया का तत्त्व, दर्शन, भावनात्मक है, उसे चिंतन में कर्तृत्व में समाहित करने में ही लक्ष्य की पूर्ति होती है, पर इसके लिये प्रतीकात्मक आयोजनों का महत्त्व भी कम नहीं । मन्दिरों, तीर्थों, कथा कीर्तनों, धर्मानुष्ठानों के नित्य नैमित्तिक क्रिया-कृत्य इसी दृष्टि से बने हैं कि उन स्थूल अवलम्बनों के सहारे मानव-चेतना को देव दृष्टि अपनाने और देव मार्ग पर चलने के लिए आवश्यक नैतिक आधार मिल सके, अपने यज्ञ-आयोजन के पीछे भी यही दृष्टिकोण सन्निहित है । यों यज्ञ के भौतिक लाभ भी कम नहीं हैं, पर उनका मूल उद्देश्य सार्वजनीन भावनात्मक परिष्कार ही है । नक्शों की सहायता से भूगोल पढ़ाया जाता है, बाल फ्रेम के सहारे छोटे बच्चे गिनती गिनना सीखते हैं, पुस्तकों के सहारे पढ़ना सीखते हैं, जुलूस प्रदर्शनों में जोश उभरता है, रामलीला आदि कला कृत्यों के माध्यम से अभीष्ट लोक-शिक्षण किया जाता है । यदि एक क्षण के लिये उस स्तर पर भी यज्ञ-आन्दोलन को समझा जाय तो हर्ज नहीं । वैसे उसमें सूक्ष्म जगत के परिशोधन की और मानवी अन्तःकरण में दिव्य प्रकाश उत्पन्न करने की अत्यन्त उच्चकोटि की सामर्थ्य विद्यमान है और इस आन्दोलन के संचालकों की इसी असाधारण उपलब्धि को ध्यान में रखते हुए इस आन्दोलन को अग्रगामी बनाया है, पर यदि कोई चाहे तो वह सामयिक एवं प्रत्यक्ष उपयोगिता की कसौटी पर भी उतना ही खरा उतर सकता है जितना कि वह दिव्यदर्शियों की दृष्टि में सूक्ष्म जगत में दिव्य हलचलें उत्पन्न करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है ।

युग निर्माण अभियान के साथ यज्ञीय क्रिया-कृत्य को बहुत सोच-समझ कर जोड़ा गया है । सूक्ष्म जगत का परिष्कार, वायु शोधन आदि भौतिक लाभों की संभावना के अतिरिक्त तात्कालिक सब से बड़ा लाभ यह है कि धर्म-मंच के माध्यम से ही संभव हो सकने वाले भावनात्मक नव निर्माण के लिए यह श्रेष्ठतम प्रतीकात्मक आधार है । इस दृश्य आधार पर हम अदृश्य लोक-मानस का भली प्रकार परिष्कार ही नही, नव-निर्माण भी कर सकते हैं । अस्तु, जिन्हें भी युग निर्माण अभियान पर विश्वास हो, उन्हें यज्ञ-आयोजनों की उपयोगिता भी उसका प्रतीक आधार मानकर स्वीकार करनी चाहिए । और उसके लिये समान रूप से उत्साह प्रदर्शित करना चाहिए । भारतीय धर्म में इसकी महत्ता असंदिग्ध रूप से स्वीकार की गई है । किसी भी वर्ग सम्प्रदाय ने हिन्दू यज्ञ की गरिमा को अस्वीकार नहीं किया है ।

ज्ञान-यज्ञ, भूदान-यज्ञ, सफाई-यज्ञ, सर्वोदय - यज्ञ, सूत्र—यज्ञ, रक्त—दान—यज्ञ आदि लोकोपकारी कार्यों को यज्ञ संज्ञा दी जाती है और उन्हें वे लोग भी अपनाते हैं, जो अग्निहोत्र की उतनी उपयोगिता स्वीकार नहीं करते । अन्य धर्मों में भी उसकी महत्ता को किसी न किसी रूप में स्वीकार किया गया है । मसजिदों, गिरजाघरों, गुरुद्वारों, पारसी अग्नि मन्दिरों में धूपबत्ती, अगरबत्ती, दीपक, मोमबत्ती आदि जलाना एक प्रकार से धार्मिक कर्मकाण्ड का ही एक अंग माना जाता है । भविष्य में यज्ञविधान को विश्व व्यापी, सर्व धर्म स्वीकृत कर्मकाण्ड बनाना हो, तो धूपबत्ती एवं दीपक जलाने के दो आधार साथ-साथ प्रस्तुत करते हुए एक बार गायत्री मंत्र बोलते हुए यज्ञ की न्यूनतम प्रतीक-पूजा की जा सकती है । घृत-दीप, घृत - आहुति का प्रतीक हो सकता है । धूपबत्ती या अगरबत्ती हवन सामग्री का प्रतिनिधित्व कर सकती है । विश्व धर्म का एक मंत्र जब भी बनाना पड़ेगा , तब पूर्वाग्रह के, पक्षपात के आधार पर नहीं, वरन् मन में सन्निहित विशेषताओं के आधार पर गायत्री मंत्र ही 'विश्व-मंत्र' बनेगा । दीपक और अगरबत्ती जलाते समय उपस्थित लोग मिल-जुलकर सहगान के रूप में गायत्री-मंत्रोच्चारण करें, तो उतनी छोटी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रक्रिया में भी मंत्र की प्रतीक पूजा हो सकती है । महिलाएँ चूल्हे में से अग्नि निकाल कर उस पर बनाई रोटी के छोटे ग्रास घी और शक्कर में डुबोकर चढ़ाती हैं, चारों ओर जल की प्रक्रिया करती हैं । इतना तो यज्ञ-प्रतीक पूजा का प्रचलन अभी भी आस्तिक वातावरण के परिवारों में मौजूद है । इतना तो यज्ञ विधान से अपरिचित महिलाएँ भी कर लेती हैं, फिर यदि समझदार लोग चाहें तो उतना आसानी से कर सकते हैं और सभी धर्मों में प्रचलित वातावरण को सुगन्धित करने वाली यज्ञीय प्रक्रिया को थोड़ा और व्यवस्थित-परिष्कृत करके यज्ञ प्रतीक को विधि उपासना का एक अंग बना सकते हैं । इतने में किसी के विरोध या मतभेद का भी कोई कारण नहीं है । जिन्हें समाज-यज्ञ-प्रक्रिया की उपयोगिता का ज्ञान और विश्वास है, वे उस विधिविधान को अपना सकते हैं, जिसे भारतीय महा मनीषियों ने विनिर्मित और युग निर्माण योजना ने परिष्कृत किया है ।

यज्ञीय प्रक्रिया अब पंडितों के एकाधिकार की व्यवसायी सीमा में प्रतिबन्धित न रहेगी । ब्राह्मण वर्ग के लोग ही उसे करने और कराने का बन्धन बनाये रखें, यह अब किसी भी प्रकार सम्भव न हो सकेगा । स्वभावतः निहित स्वार्थ अपने अनुचित लाभों को छोड़ने के लिए सहज ही तैयार नहीं होते, वे क्रुद्ध होते हैं और जहाँ तक सम्भव होता है अपने स्वार्थों को हाथ से न निकलने देने के लिए उचित-अनुचित स्तर के झंझट भी खड़े करते हैं । पिछले दिनों यह होता रहा है, अब भी हो रहा है और जब तक उन्हें अपनी असफलता सुनिश्चित न दीखने लगेगी तब तक वे बाधाएँ उत्पन्न करते ही रहेंगे । यदि उनकी बात मानी जाय तो भारतीय संस्कृति के प्राण यज्ञ तत्त्व से उसी प्रकार हाथ खींचे रहना पड़ेगा - जिस प्रकार पिछले दिनों सर्व साधारण ने उसे अपने अधिकार-क्षेत्र से बाहर की बात मानकर उदासीनता बरती । यदि उस विज्ञान को व्यापक बनाना है तो उसे जन प्रक्रिया का ही रूप देना होगा और उसे सर्व साधारण की जानकारी एवं रुचि का विषय बनाना होगा । नव निर्माण का प्रतीक आधार जब हम यज्ञीय प्रक्रिया को बनाने चले हैं, तो यही एकमात्र उपाय है कि सिद्धान्त एवं व्यवहार से अधिकाधिक लोगों का अधिकाधिक परिचय कराया जाय ।

पिछले दिनों यज्ञीय कर्मकाण्ड मशीन की तरह अपने ढर्रे पर चलता रहता था । मन्त्रोच्चारण होता था, आहुतियाँ पड़ती थीं, तथा दूसरे क्रियाकृत्य होते थे । दर्शक उस रहस्यवाद को कौतुक-कौतूहल की दृष्टि से आश्चर्यचकित होकर देखते तो थे, पर यह न समझ पाते थे कि यह सब क्या और क्यों हो रहा है। स्पष्ट है कि ऐसा रहस्य कभी लोकप्रिय नहीं हो सकता । जिज्ञासाओं का समाधान हुए बिना, उपयोगिता समझे बिना, कभी कोई प्रक्रिया जनसाधारण द्वारा व्यापक रूप से अपनाई भी नहीं गई है । युग निर्माण योजना द्वारा यह प्रयास किया गया है कि यज्ञानुष्ठान के साथ जुड़े कर्मकाण्ड शृंखला के हर पहलू का संदेश जन-साधारण को अवगत कराया जाय । अपने यज्ञायोजन जहाँ भी हों , वहाँ यह प्रयास किया जाना चाहिए कि विधि विधान करते हुए उसकी शिक्षा प्रेरणा की साथ-साथ व्याख्या भी होती चले ।

धार्मिक कर्मकाण्डों का उद्देश्य ही जन साधारण का भावनात्मक प्रशिक्षण करना है । उनकी प्रत्येक क्रिया के साथ एक शिक्षा, प्रेरणा एवं भावना भी जुड़ी रहती है । क्रिया के साथ-साथ उस भावना का भी उदय हो, तो समझना चाहिए कि धर्मानुष्ठान का प्रयोजन ठीक तरह पूरा हुआ ।

केवल क्रिया ही चलती रहे और उसे करने तथा कराने वाले एक कौतूहल की तरह करते रहें तो यह चिह्न पूजा ही हुई, दुनिया दिखाने के लिए उसकी लकीर को पकड़ने-बाँधने जैसा उपचार किया गया है । आजकल विभिन्न कर्मकाण्ड केवल मन्त्रोच्चारण, पूजा-सामग्री को इधर से उधर करने तथा अंग-संचालन के कुछ क्रियाकलापों तक ही सीमित रहते हैं । विचारशील लोगों को इतने मात्र से सन्तोष नहीं हो सकता । वे जानना चाहते हैं कि आखिर इतना समय, श्रम, धन एवं विधि-प्रबंध का विनियोग किस-किस उद्देश्य के लिए किया गया ?

निस्संदेह मन्त्रोच्चारण से एक विशेष प्रकार की ध्वनि-तरंगें उत्पन्न होती हैं और उनका अभीष्ट-प्रयोजनों के संदर्भ से अभीष्ट परिणाम उत्पन्न होता है। पर केवल इतने तक ही इन कर्मकाण्डों को सीमित नहीं मान लेना चाहिए । उनके पीछे लोक-

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

शिक्षण की महान परम्परा भी सन्निहित है । हर क्रिया एक शिक्षा एवं प्रेरणा होती है, जिसकी जानकारी आचार्य द्वारा यजमान तथा उपस्थित लोगों को कराई ही जानी चाहिए । निर्दिष्ट कर्मकाण्ड के साथ-साथ जुड़ी हुई भावनाओं एवं विचारधाराओं को हृदयंगम कराया जा सके, तो ही आयोजन का उद्देश्य पूरा हुआ समझना चाहिये ।

कई व्यक्ति धार्मिक कर्मकाण्डों से वैज्ञानिक या भौतिक लाभ सिद्ध करने का प्रयास करते हैं । यह हास्यास्पद है । विज्ञान पदार्थ-विद्या तक ही सीमित नहीं, भावनाओं का उतार-चढ़ाव भी विज्ञान के अन्तर्गत ही आता है । हमें भली प्रकार समझ लेना चाहिये कि धार्मिक कर्मकाण्डों के जो वैज्ञानिक लाभ हैं, वे विशुद्ध भावनात्मक हैं । भावना अपने आप में विज्ञान की सर्वोत्कृष्ट शक्ति है, उसे सुधारना, अधिक महत्त्वपूर्ण एवं श्रेयस्कर है ।

यज्ञ व्यक्तिगत एवं सामूहिक जीवन के उत्कर्ष एवं सन्तुलन की शिक्षा देने वाला अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माध्यम है । आदर्शवादिता, उत्कृष्टता, मानवता, नैतिकता एवं सद्भावना के व्यापक प्रशिक्षण का तारतम्य जितनी अच्छी तरह यज्ञ-प्रक्रिया में सन्निहित हैं, उससे अच्छा माध्यम और कुछ हो नहीं सकता । उत्थान और पतन का, सुख और दुख का सारा आधार सद्भावनाओं और दुर्भावनाओं पर निर्भर है, इसलिए भौतिक सुख-समृद्धि की दृष्टि से भी और आत्मिक प्रगति की दृष्टि से भी यज्ञीय भावनाओं का महत्त्व असाधारण है । जो पुण्य-फल यज्ञ का लिखा है, वह अक्षरश: सही हो सकता है, बशर्ते कि हम यज्ञ-प्रक्रिया के साथ-साथ उसके साथ जुड़ी हुई भावनाओं को भी अन्त:करण में प्रतिष्ठित और परिष्कृत करें ।

यज्ञ करते हुए उसकी ही क्रिया की विवेचना एवं व्याख्या की जानी चाहिए, ताकि यजमान तथा उपस्थित व्यक्ति अपनी मनोभूमि को स्वार्थपरता की असुरता से ऊँचा उठाकर परमार्थ के देवत्त्व क्षेत्र में प्रविष्ट करा सकें ।

गायत्री हवन विधि की प्रक्रियाओं का परिचय आगे कराया जा रहा है -

जलयात्रा

यज्ञों में जितना जल-पूजा प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होता है, वह किसी अधिक पवित्र, अधिक बड़े जलाशय का होना चाहिए । उत्तम उद्देश्य के लिए, उत्तम साधन भी अपनाये जाने चाहिए । यज्ञ जैसे पवित्र कार्य के लिए नदी, सरोवर जैसे, अधिक प्राणियों का उपकार करने वाले, अधिक उदार, अधिक बड़े जलाशय का जल चाहिए । इसलिए घर के कुए का जल न लेकर बड़े माध्यम को तलाश करते हैं । महिलाऐं पुरुषों की अपेक्षा अधिक सहृदय, अधिक निश्छल, अधिक स्वार्थत्यागी और सेवाभावी होती हैं । इन आध्यात्मिक गुणों की अधिकता के कारण वे पुरुषों से अधिक पवित्र और श्रेष्ठ मानी जाती हैं । उनका श्रमदान लगने से जल और भी अधिक पवित्र हो जाता है ।

जलाशय का जल वैसे तो साधारण पानी ही होता है, पर जब मंत्र भावना के साथ उसे वरुणदेव का प्रतिनिधि मान कर लाया जाता है, तो भावना-तत्त्व के अनुरूप वह देव-पदार्थ बन जाता है । भाव सिंचित यह देव-जल, यज्ञ की सात्त्विकता एवं शक्ति बढ़ाता है ।

यज्ञशाला-प्रवेश

यज्ञशाला की भूमि को साधारण भूमि न मानकर उसमें देव भूमि होने की भावना एवं मान्यता स्थिर की जाती है । भूमि में विशेष देव-तत्त्व का आह्वान किया जाता है । इसके लिए 'ओ३म् भद्रं कर्णेभि' मंत्र बोलते हैं ।

पवित्रीकरण

देव उद्देश्य की पूर्ति के लिए मनुष्य को स्वयं भी देवत्त्व धारण करना होता है । ईश्वर की समीपता जिन्हें लेनी हो उन्हें अपने में ईश्वरीय गुणों को बढ़ाना पड़ता है । यज्ञ पवित्र है । सेवा और परमार्थ के सभी कार्य पवित्र होते हैं । उन्हें करने वाले के यदि स्वार्थ, कपट या कोई धूर्तता मन में भरे हुए हों तो प्रयोजन पूर्ण न होगा । शुभ कर्म को बाह्य दृष्टि से तो शुभ माना जाय, पर उस आयोजन के मूल में कर्त्ताओं की स्वार्थ भावनाएँ काम कर रही हों या उसका व्यक्तित्त्व कलुषित हो तो काम न चलेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसलिए यज्ञ कार्य में भाग लेने वालों को हर दृष्टि से पवित्र बनने का भी प्रयत्न करना चाहिए । अभिमंत्रित जल अपने शरीर पर छिड़क कर यज्ञ काल में अधिक पवित्र रहने, शरीर और मन से अशुभ काम न करने, शुभ कर्म बढ़ाने की प्रतिज्ञा की जाती है और आगे के लिए अधिक पवित्र बनने की भावना अन्त:करण में जमायी जाती है ।

आचमन

शरीर की शुद्धि के लिए पवित्रीकरण किया गया था । अब वाणी, मन और अन्तराल से पवित्रता अनुभव करने तथा भविष्य में इन तीनों को अधिक पवित्र बनाने की भावना के साथ तीन बार आचमन करते हैं । पहले आचमन के साथ वाणी को स्नान कराके पवित्र किया मानते हैं । दूसरे से मन को और तीसरे से आत्मा को । अपनी बाह्य और आन्तरिक पवित्रता देव-उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक है । इस तथ्य का अपने आपको स्मरण दिलाने के लिए तीन आचमन किये जाते हैं ।

शिखा-बन्धन

मस्तिष्क की गतिविधि ऊर्ध्वगामी रहे, इस आवश्यकता का स्मरण दिलाने के लिए शिर पर शिखा रखवाई जाती है । मन, मस्तिष्क और विचारों का निष्कृष्ट दिशा में गिरने लगना, यह मनुष्य का पतन है । भारतीय धर्म की आत्मा यही है कि मस्तिष्क में निरन्तर संयम, सदाचार, उदारता, सेवा एवं परोपकार के भाव ऊपर उठते रहें । यह जीवनोद्देश्य सिखाने वाली शिक्षिका-शिखा को भी यज्ञ कार्य में शीतल एवं चैतन्य करने के लिए पवित्र किया जाता है, गाँठ बाँधी जाती है, ताकि उसका प्रयोजन स्मरण बना रहे । गाँठ बाँधने का मुहावरा स्मरण रखने के लिए प्रयुक्त होता है । भारतीय धर्म का शिखा ध्वज हर हिन्दू के मस्तक रूपी किले के ऊपर गढ़ा फहराता रहता है । इसका हर शुभ कार्य से पूर्व अभिवादन किया जाता है । जैसे राष्ट्रीय झंडाभिवादन का उद्देश्य देशभक्ति की भावना जाग्रत करना है, उसी प्रकार शिखा ध्वज को फहरा कर गाँठ बाँधने के पीछे धर्म-भक्ति, कर्तव्य-भक्ति एवं आदर्शवादिता के प्रति निष्ठा को जाग्रत करना है। जो भी शुभ कार्य, यज्ञ-कार्य किया जाय, संकीर्ण स्वार्थपरता के लिए नहीं, वरन् ऊर्ध्वगामी, परमार्थ, लोक-कल्याण की भावना से किया जाय । ऊर्ध्वगामी शिखा का अभिवादन इसी तथ्य के स्मरण रखने के लिए किया जाता है । मस्तिष्क में तेजस्वी सद्भावना रूपी देवी की प्रतिष्ठापना करने के लिए **'चिद्रूपिणि'** मन्त्र बोला जाता है ।

प्राणायाम

प्राणवायु शरीर के भीतर रोम-रोम में पहुँच जाती है । हमारा कण-कण, रोम-रोम पवित्रता और आदर्शवादिता से परिपूर्ण हो, पशुता एवं निकृष्टता किसी भी कोने में छिपी न रहे, इसलिए श्वास के साथ मंत्र-शक्ति से विश्वव्यापी पवित्र प्राण को खींचा और अपने भीतर धारण किया जाता है । प्राणायाम की भावना यह है कि जो कुछ पवित्र तत्त्व संसार में व्याप्त हैं, उसे हम अपनी ओर खींचते हैं, इतना ही नहीं उसे अपने रोम-रोम में धारण करते हैं, जो कुछ अपवित्र अपने भीतर संचय था , उस शारीरिक और मानसिक विकार को साँस के साथ बाहर फेंकते जाते हैं । वे मानसिक दुर्बलता के कारण लौट कर कहीं फिर वापिस न आ जायें, इसका भविष्य में भली प्रकार ध्यान रखेंगे । पूरक, अन्त:कुंभक, रेचक और बाह्य कुंभक, इन प्राणायाम के चार अंगों के उपरोक्त चार प्रयोजन होते हैं ।

न्यास

इन्द्रियों के द्वारा ही सारे कार्य होते हैं, इसलिए इन उपकरणों का पवित्र रहना भी आवश्यक है । सबसे पहले अभिमंत्रित जल मुख को लगाया जाता है । मुख इन्द्रियों में सर्व प्रथम तथा सर्व प्रधान है । जिह्वा और वाणी की इन्द्रियाँ इसी में रहती हैं । वाणी से मीठे और हितकर वचन बोले, जीभ से सात्त्विक एवं भूख में कम आहार करे तभी उनकी पवित्रता रहेगी । इन आवश्यकताओं का स्मरण रखने के लिए मुख का न्यास किया जाता है ।

नाक से गन्दगी न सूँघनी पड़े अर्थात् हर जगह सफाई रखें । आँख से मन पर कुप्रभाव डालने वाले दृश्य न देखें । दुष्ट कर्म जहाँ होते हैं, वहाँ से दूर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहें या उनकी ओर से आँख फेर लें । कानों द्वारा विकारोत्तेजक, भड़काने वाले तथा कुमार्ग पर ले जाने वाले वचन सुनने का अवसर न आने दें । भुजाओं से निरन्तर पुरुषार्थ करें, उन्हें ठाली न रहने दें तथा किसी कुकर्म-अनाचार में हाथ न डालें । जंघाओं के स्पर्श का अर्थ कामेन्द्रिय के सदुपयोग से है । उसका निर्माण मुख्यतया मूत्रत्याग के लिए हुआ है । संतान-उत्पादन की नितान्त आवश्यकता पड़ने पर ही उसका वासनात्मक उपयोग करें, अधिकाधिक ब्रह्मचर्य पालें । मौन सदाचार की पवित्र मर्यादाओं का उल्लंघन तो कदापि भी न करें । इन्द्रियों को ही नहीं, सम्पूर्ण शरीर को इसी संयम एवं सदुपयोग की रीति-नीति से प्रयुक्त करें । इन भावनाओं का उद्‌बोध अभिमंत्रित जल का सात स्थानों पर स्पर्श करते हुए किया जाता है । यह न्यास है ।

पृथ्वी-पूजन

उपरोक्त पञ्च कर्मों द्वारा शरीर, मन, आत्मा, भावना, अन्तःकरण सभी चैतन्य संस्थानों में उदात्त, उत्कृष्टता की भावना की जाती है। अब जिस पृथ्वी पर यह यज्ञीय शुभ कार्य किया जा रहा है, उसे भी देव मान कर पूजते हैं । कृतज्ञता की यह श्रेष्ठ अभिव्यक्ति है । कृतज्ञता के बिना सारा अध्यात्म अधूरा है । जिन व्यक्तियों तथा पदार्थों की सहायता से हमारी जीवन-यात्रा सरल होती है, अथवा प्रगति का पथ प्रशस्त होता है, उन सबके लिए हमारे मन में अपार सद्‌भावना तथा कृतज्ञता रहनी चाहिए । चूँकि यज्ञ पृथ्वी पर किया जा रहा है, हम पले तथा बढ़े उसी पर हैं, जीवन-धारण भी उसी पर किया है इसलिए धरती माता अपनी सगी माता से भी अधिक पूज्य है । देश-भक्ति, विश्व-भक्ति इसी आध्यात्म भावना की अभिव्यक्ति है । पृथ्वी-पूजन के द्वारा हम अपनी मातृभूमि का अभिवादन करते हैं और देश भक्ति को सुदृढ़ बनाने की प्रतिज्ञा करते हैं । कृतज्ञता की यह स्वाभाविक प्रेरणा भी है ।

यज्ञोपवीत-धारण

यज्ञ कार्य में भाग लेने वाले, यज्ञीय भावनाएँ अपनाने एवं यज्ञ कर्म करते रहने की प्रतिज्ञा का व्रत-बंध लेकर यज्ञोपवीत धारण करते हैं । जिनका यज्ञोपवीत नहीं हुआ है, वे भी यज्ञ में सम्मिलित होने से पूर्व उसे धारण करते हैं, जिनका हो चुका है वे इसे बदलते हैं । स्त्रियों को इसकी छूट पिछले दिनों यह सोचकर दे रखी है कि उनके पति उसे पहन कर दुहरा उत्तरदायित्त्व उठा लेते हैं । यदि कोई विरोध या अड़चन प्रतीत न हो तो स्त्रियों को भी पुरुषों की भाँति ही यज्ञोपवीत पहनना चाहिए । जिनकी गोदी में छोटे बच्चे नहीं हैं, वे तो बड़ी आसानी से पहन सकती हैं ।

यज्ञोपवीत के ९ धागों में मानवता को सार्थक करने वाले नौ गुणों का सन्देश है । इन नौ गुणों को प्राण प्रिय मानने एवं उन्हें अपनाने, बढ़ाने की परिपूर्ण चेष्टा करने की प्रतिज्ञा यज्ञोपवीत धारण में सन्निहित है । (१) संयम, (२) साहस, (३) समर्थता, (४) विवेक, (५) पुरुषार्थ, (६) उदारता, (७) प्रसन्नता, (८) पवित्रता, (९) व्यवस्था । यह नौ गुण यज्ञोपवीत के नौ धागों में लपेट कर हर हिन्दू उसे हृदय पर, कलेजे पर, पीठ पर और कंधे पर धारण करता है । अर्थात् यह प्रतिज्ञा करता है कि वह व्यक्तित्त्व को विकसित करने वाले इन सद्‌गुणों को अपनाये रहे । इसी प्रधान धर्म कर्तव्य को याद दिलाने के लिए यज्ञोपवीत धारण करना होता है ।

वरण

यज्ञ चाहे वैयक्तिक हो, उसको ठीक तरह करने और कराने का उत्तरदायित्त्व दो व्यक्तियों को उठाना पड़ता है अन्यथा सबकी जिम्मेदारी किसी की भी जिम्मेदारी नहीं रहती और व्यवस्था बिगड़ती है । व्यवस्था जुटाने की जिम्मेदारी उठाने वाले को यजमान और मार्गदर्शन करने वाले को आचार्य कहते हैं । केवल मन्त्र पढ़ देने वाला ही आचार्य नहीं होता, वरन् उसकी जिम्मेदारी सारी व्यवस्था पर आदि से अन्त तक ध्यान रखने की है, ताकि समय पर कोई अभाव या कठिनाई प्रस्तुत न हो । दोनों एक दूसरे का वरण करते हैं, हाथ में कलावा बाँधते, तिलक लगाते हैं और प्रतिज्ञा करते हैं कि इस कार्य को ठीक तरह पूरा कराने में पूरी शक्ति, पूरी सावधानी और पूरी तन्मयता से कार्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करेंगे । पूरा समय देंगे और पूरी जिम्मेदारी वहन करेंगे । उत्तरदायित्त्व की यह भावना हमारे जीवन में निरन्तर हर क्षेत्र में बनी रहनी चाहिए । उत्तरदायित्त्व को समझना चाहिए और निबाहना यह वरण का उद्देश्य है । हर कार्य में सुयोग्य मार्ग दर्शक होना चाहिए । इस आवश्यकता की पूर्ति आचार्यवरण से होती है । एक दूसरे के साथ बँधते हैं, इसके लिए वरण किया जाता है और उस बन्धन को निबाहने के आश्वासन के लिए तिलक लगाया जाता है ।

संकल्प

कोई कार्य छोटा हो या बड़ा, पूर्ण करने तक लगन एवं दृढ़ता के साथ जुटे रहने के संकल्प द्वारा ही पूरा किया जा सकता है । ढीले मन से, गैर जिम्मेदारी से करने पर या तो वह पूरा ही नहीं होता या होता भी है तो उसमें बहुत त्रुटियाँ रह जाती हैं । जो करना हो पूरे मनोयोग से, पूरे उत्साह से, पूरी तत्परता, सावधानी एवं मेहनत से किया जाय। इसकी प्रतिज्ञा का नाम संकल्प है । संकल्प से मन में दृढ़ता आती है कि यह कार्य तो मुझे हर हालत में करना ही है । ऐसी सुदृढ़ प्रतिज्ञाऐं बड़े-बड़े कठिन कार्यों को पूरा करा देती है । छोटे-छोटे कार्यों में पूर्व संकल्प रहने और उसके पूरा करने पर गर्व एवं सन्तोष अनुभव करने का अभ्यास करते रहने से धीरे-धीरे मनोबल बहुत बढ़ जाता है। संकल्प-प्रक्रिया यज्ञ कार्य के लिए ही नहीं, हर कार्य के लिए आवश्यक है । उसे धर्मकृत्यों के लिए तो अपनाना ही चाहिए । क्योंकि प्रत्यक्ष स्वार्थ न रहने से उनमें शिथिलता आने की आशंका बहुत रहती है।

दीप-पूजन

दीपक सद्ज्ञान का प्रतीक है । ज्ञान देव का अभिनन्दन करना उसके गौरव और महत्त्व को समझना, दीप पूजन का उद्देश्य है । अज्ञान का अन्धकार हटाया ही जाना चाहिए, ज्ञान का प्रकाश फैलाया ही जाना चाहिए । कल्याण का इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं । शिक्षा द्वारा लौकिक ज्ञान तथा विद्या द्वारा अध्यात्म ज्ञान जितना ही विस्तृत होगा उतनी ही समृद्धि एवं विभूति बढ़ेगी । सद्ज्ञान को जीवन का प्रधान संबल, शुभ कर्मों का प्रधान आधार मान कर उसे पूजा जाता है और यह प्रकाश ग्रहण किया जाता है कि व्यक्तिगत जीवन में और सारे संसार में अधिकाधिक ज्ञान-प्रसार के लिए प्रयत्न किया जाना चाहिए ।

कलश-पूजन

जल शान्ति एवं शीतलता का प्रतीक है । पल्लवों की हरीतिमा विकास एवं स्नेह सौहार्द्र का सन्देश धारण किये हुए है । मृतिका पात्र दृढ़ता का प्रतीक है । इस प्रकार के वातावरण में ही देव-शक्तियों का निवास होता है । कलश में मन्त्रोच्चार द्वारा समस्त देव-शक्तियों का आह्वान किया जाता है और यह भावना दृढ़ की जाती है कि यही देवत्त्व की आत्मा में अवस्थित है । यों देवत्त्व विश्वव्यापी है । पर जहाँ जितनी दृढ़ भावना होती है, वहाँ उसकी उपस्थिति भी उसी अनुपात से होगी । भावनाओं की शक्ति असंदिग्ध और असामान्य है । उसके आधार पर देवत्त्व विनिर्मित एवं विकसित होता है । कलश को समस्त देवताओं की एक समग्र प्रतिमा मानने से विश्व देवत्त्व की प्रतिष्ठापना का उद्देश्य पूरा हो जाता है । गीता में विराट ब्रह्म का जो स्वरूप अर्जुन को दिखाये जाने का वर्णन है, उसका दृश्य प्रतीक यह कलश माना गया है । वेद सान्निध्य में हमारा यज्ञ-कार्य हो रहा है, यह भावना हर याज्ञिक के मन में अधिक श्रद्धा, अधिक स्फूर्ति, अधिक आनंद एवं अधिक तत्परता उत्पन्न करती है ।

पंच वेदी स्थापना

संसार के समस्त पदार्थ अग्नि, जल, पृथ्वी, वायु और आकाश इन पांच तत्त्वों से बने हैं । शरीर भी इन्हीं से बना है । इस निर्माण में प्रेरणा तो ईश्वर की है पर निर्माण के आधार यह तत्त्व ही हैं । अध्यात्म सिद्धान्त की मान्यता यह है कि चेतन की तरह जड़ की भी आत्मा होती है । इसी से नदी, सरोवर, पर्वत, वृक्ष, वनस्पति, मूर्ति आदि की प्रतीक पूजा भारतीय धर्म का अंग बनी हुई है । चेतन में ईश्वर की झाँकी करके उसके साथ सद्व्यवहार करना ही पर्याप्त नहीं, वरन् जड़ कहे जाने वाले पदार्थों के साथ भी वैसा ही सौम्य व्यवहार अपेक्षित है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यज्ञ में देव तत्त्वों का पूजन किया जाता है । पाँच-तत्त्वों को पाँच देवता मानकर उनकी यज्ञशाला के चार कोनों में तथा एक मध्य में वेदी स्थापित की जाती है । धूप, दीप, अक्षत, पुष्प, गंध, नैवेद्य आदि से उनका पूजन करते हैं । चौकियों पर षट्कोण बनाकर कलश स्थापन किया जाता है । मध्य वेदी पर सर्वतोभद्र बनाते हैं । पाँच तत्त्व जिनके द्वारा संसार बना है, उनकी आत्मा का आह्वान करके अपने निर्माताओं एवं जीवन-धारण के आधारों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हैं । साथ ही यह भावना भी हृदयंगम करते हैं कि इनका सदुपयोग करके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को ठीक रखें ।

प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान बताता है कि तत्त्वों के ठीक उपयोग न करने से समस्त शारीरिक रोग उत्पन्न होते हैं उनका ठीक उपयोग करने से वे दूर भी हो जाते हैं, शरीर स्थूल और मन सूक्ष्म है । शब्द, रूप, रस, गंध, स्पर्श । आकाश की तन्मात्रा शब्द अग्नि की तन्मात्रा रूप जल की तन्मात्रा रस, पृथ्वी की गंध और वायु की स्पर्श है । चेतन जगत में पाँच अनुभूतियाँ मनुष्य की मानसिक गतिविधियों की आधार रहती हैं । पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ इन्हीं तन्मात्राओं का रस लेती हैं और मन इन्हीं के पीछे लालायित व्याकुल होकर फिरता है । तन्मात्राओं के दुरुपयोग से हमारा मन कुममार्गगामी और सदुपयोग से सन्मार्गगामी बनता है । तत्त्व पूजन में तन्मात्राओं के सदुपयोग की, इन्द्रिय निग्रह और मानसिक पवित्रता की प्रेरणा सन्निहित है । पंच वेदी स्थापना एवं देव पूजन का प्रयोजन इसी तत्त्व ज्ञान पर ध्यान देना है ।

सर्वतोभद्र मंडल पूजन

तेतीस कोटि देवताओं का अर्थ है दिव्य शक्तियों का तेतीस श्रेणियों में विभाजन । भगवान की यों अनेक दिव्य शक्तियाँ हैं, पर मनुष्य जीवन में जिनकी अतीव आवश्यकता होती है, और जिनका सान्निध्य पाकर वह धन्य बन जाता है, उनकी संख्या तेतीस है—(१) गणेश—विवेक, (२) गौरी—तपश्चर्या, (३) ब्रहमा—निर्माण, (४) विष्णु—ऐश्वर्य, (५) रुद्र—दमन, (६) गायत्री--ऋतम्भर प्रज्ञा, (७) सरस्वती—शिक्षा, (८) लक्ष्मी—समृद्धि, (९) विष्णु—शक्ति, (१०) पृथ्वी—क्षमा, (११) अग्नि—तेज, (१२) वायु—गतिशीलता, (१३) इन्द्र—व्यवस्था, (१४) यम—न्याय, (१५) कुबेर—मितव्ययिता, (१६) अश्विनौ—आरोग्य, (१७) सूर्य--प्रेरणा, (१८) चन्द्र—शान्ति, (१९) मंगल—कल्याण, (२०) बुध—संतुलन, (२१) बृहस्पति—अनुशासन, (२२) शुक्र—संयम, (२३) शनि—तितीक्षा, (२४) राहु—संघर्ष, (२५) केतु—साहस, (२६) गंगा—पवित्रता, (२७) पितृ—दान, (२८) इन्द्राणी—श्रमशीलता, (२९) रुद्राणी—वीरता, (३०) ब्रह्माणी—नियमितता, (३१) अनंत—धैर्य, (३२) वस्तु—कला, (३३) आकाश—विशालता ।

उपरोक्त ३३ देवताओं की प्रतिमा, स्वरूप तथा चरित्रों का भी पुराणों में वर्णन मिलता है और ऐसा भी माना जाता है कि देव-पूजन से उनकी आत्माओं को आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए आमन्त्रित करते हैं । ईश्वर की शक्तियों या विभूतियों को खंड-खंड में आवाहन करके उसके समग्र विराट रूप का ही आवाहन करते हैं । जैसे शरीर के अवयवों की अलग-अलग मालिश की जाय तो भी वह अन्ततः समस्त शरीर की ही मालिश कहलायेगी । इसी प्रकार देव-पूजा में ईश्वर की अलग-अलग शक्तियों का स्मरण-पूजन करके भी उसके समग्र रूप का ही पूजन होता है ।

हर देवता को ईश्वर की एक महत्त्वपूर्ण शक्ति एवं प्रेरणा मानना चाहिए । इन सामर्थ्यों, विशेषताओं एवं विभूतियों को हम हृदयंगम करें, उन्हें अपने में बढ़ावें तो हम में दिव्य मानव देव पुरुष बन सकते हैं । तुच्छ को महान बना सकने वाली इन शक्तियों की महत्ता को समझने और उन्हें अपनाने के लिए मनोभूमि तैयार करने के लिए भी देव-पूजन किया जाता है । इन शक्तियों में उपरोक्त ३३ प्रमुख हैं, जिनका लघु सर्वतोभद्र मंडल में स्थापन पूजन किया जाता है ।

षोडशोपचार पूजन

किसी व्यक्ति के स्वागत सम्मान के लिए भारतीय शिष्टाचार के अनुसार १६ कार्य किये जाते हैं । (१) आवाहन-आइये, पधारिए कहकर सत्कार करना । (२) आसन-बैठने के लिए आसन देना । (३) पाद्य-थकान दूर करने के लिए पैर धुलाना ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(४) अर्घ्य-मुँह हाथ धुलाना । (५) आचमन-जल पिलाना । (६) स्नान कराना । (७) वस्त्र-यात्रा के मैले हुए वस्त्रों के स्थान पर स्वच्छ वस्त्र धारण कराना । (८) यज्ञोपवीत-धार्मिक उपहार प्रदान करना । (९) गन्ध-सुगंधित चन्दन, तेल आदि लगाना । (१०) पुष्प भेंट करना । (११) धूप-अगरबत्ती, चंदन आदि की खुशबू करना । (१२) दीप-आरती उतारना । (१३) नैवेद्य-भोजन कराना। (१४) तांबूल-सोंफ, सुपाड़ी आदि 'मुख शुद्धि' हेतु देना । (१५) प्रदिक्षणा परिक्रमा करना, चारों ओर घूमना । (१६) मन्त्र पुष्पाञ्जली-मधुर भाषण द्वारा विचार विनिमय करना । प्राचीन काल में द्रुतगामी वाहन न होने कारण यात्रा की थकान दूर करने के लिए, इतना शिष्टाचार आवश्यक भी था । देव-शक्तियों को सुन्दर अन्तरिक्ष की यात्रा करके यज्ञशाला तक पधारने की भावना की जाती है, तो उनके स्वागत का शिष्टाचार भी अभीष्ट है । पुरुष सूक्त अथवा श्री सूक्त के १६ मन्त्रों से उन्हीं स्वागत वस्तुओं से प्रतीक-पूजा की जाती है । इसमें देव-शक्तियों के प्रति अपनी आस्था, उनकी अनुकम्पा प्राप्त करने, उन्हें प्रसन्न करने का भाव है ।

पंच वेदी पूजन

मध्य सर्वतोभद्र की ३३ देवताओं वाली वेदी 'आकाश' तत्त्व की मानी जाती है । आकाश-ईश्वर-विचार क्षेत्र में ही इन देवताओं का निवास है । इसके अतिरिक्त अग्नि कोण में अग्नि देवता, नैऋत्य कोण में पृथ्वी, वायव्य कोण में वायु और ईशान कोण में वरुण की स्थापना पूजन किया जाता है । पाँच-पाँच वेद मन्त्र इस पूजा विधान के लिए नियत है ।

सामान्य देव-पूजन

वेद मन्त्रों से ३३ देवताओं का ही पूजन है । पौराणिक देवता इनके अतिरिक्त और भी अनेक हैं । ईश्वर की शक्तियों और महत्ताओं का कोई अन्त नहीं, उनकी संख्या कितनी भी अधिक क्यों न गिनाई जाय, न्यून एवं अपूर्ण ही रहेगी । पुराणकारों ने ३३ देवताओं के अतिरिक्त जिन अन्य देवताओं का वर्णन किया है, उनका अर्चन सामान्य देव पूजन में श्लोक मन्त्रों से किया गया है ।

नमस्कार

१६ नमस्कारों में देव युग्मों का तथा संसार के विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त देव शक्तियों का अभिनन्दन है। युग्मों में पहले नारी का पीछे नर का उल्लेख है। नारी की पवित्रता, उत्कृष्टता एवं प्रधानता का इसमें प्रतिपादन किया गया है और उसे विशेष सम्माननीय बताया गया है । जहाँ जिस स्थान में जो भी दिव्यता है उसे स्मरण करने और अभिवंदन करने से यह प्रयोजन माना गया है कि कहीं भी कोई श्रेष्ठता पाई जाय, उसका सम्मान, सहयोग एवं समर्थन किया जाय ।

पौराणिक षोडशोपचार और नमस्कार

जिस प्रकार वेद-मन्त्रों से देव पूजन होने के उपरान्त भी पौराणिक परम्परा मानने वालों की सुविधा के लिए सामान्य देव-पूजन सामान्य श्लोक मन्त्रों से किया जाता है, उसी प्रकार षोडशोपचार और नमस्कार के लिए भी पौराणिक श्लोक मंत्र हैं। प्रयोजन वही है, जो पहिले षोडशोपचार एवं नमस्कार में बताया जा चुका है ।

चन्दन-धारण

मस्तिष्क को शान्त, शीतल एवं सुगन्धित रखने की आवश्यकता का स्मरण कराने के लिए चन्दन धारण किया जाता है । हमें अपना मन: क्षेत्र क्षुब्ध, क्रुद्ध, आवेश ग्रस्त अशान्त नहीं होने देना चाहिए । उसे सन्तुलित एवं ठंडा रख कर विपन्न परिस्थितियों के समाधान तथा उन्नति का मार्ग सोचना चाहिए । अन्तर में ऐसी सद्भावनाएँ भरी रखनी चाहिए, जिनकी सुगन्ध से अपने को सन्तोष एवं दूसरों को आनन्द मिले । दुर्भावनाग्रस्त, दुर्गन्धित मस्तिष्क मनुष्य के गौरव को गिराता और पतन का द्वार खोलता है, इसलिए मस्तिष्क की सुव्यवस्था रखने की प्रेरणा देने वाले शीतल, सुगन्धित चन्दन को धारण किया जाता है ।

स्वस्तिवाचन

अपना, दूसरों का, सबका कल्याण होने की भावना की अभिव्यक्ति स्वस्तिवाचन में है । अकल्याण, पतन, विनाश, अशुभ शत्रु का भी न हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कोई दुख न पावे, बिगड़े हुए सुधरें, सुधरे हुए सेवा करें । हर व्यक्ति का शरीर, मन ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों में नहीं रचनात्मक प्रवृत्तियों में लगे । कल्याण की बात ही सोचें और कल्याण के लिए ही प्रयत्न करें । हर अन्त:करण में यही भावना रहे, हर व्यक्ति की शक्तियाँ इसी दिशा में लगें तो इस धरती पर सुख शान्ति की स्वर्गीय परिस्थितियाँ दृष्टिगोचर हों और विश्व शान्ति का आनन्द सर्वत्र बिखरे । इन भावनाओं का प्रकटीकरण स्वस्तिवाचन मन्त्रों में है। इन भावनाओं की अभिव्यक्ति संसार के वातावरण को प्रभावित किये बिना नहीं रह सकती और उनसे विश्वशान्ति की सम्भावना बढ़ती है ।

रक्षा-विधान

शुभ कार्यों के आयोजन में, सन्मार्ग पर चलने में अनेक विघ्न आते हैं । असुरता उन्हें असफल बनाने का प्रयत्न करती है । इसलिए उत्कृष्टता की योजना बनाने वाले हर व्यक्ति को पहले यह सोचकर चलना होता है कि उसे विघ्न की संभावना का ध्यान रखना तथा उनसे जूझने को तत्पर रहना है । जिनसे इस प्रकार की दृढ़ता एवं क्षमता नहीं होती, उनके ऊपर उठने के, श्रेष्ठ काम करने के मनसूबे अधूरे-असफल रह जाते हैं । अतएव यज्ञीय परम्परा अपनाने वाले भावनाशील धर्म-प्रेमियों को आवश्यक दृढ़ता एवं संघर्ष, क्षमता भी एकत्रित करनी चाहिए और संघर्ष के लिए पहले से ही तैयार रहना चाहिए । रक्षा विधान के लिए दशों दिशाओं में अक्षत, पीली सरसों इसीलिए फेंकी जाती है और परमेश्वर से प्रार्थना की जाती है कि वह इस प्रकार की संघर्ष परीक्षा में उत्तीर्ण होने की क्षमता प्रदान करें ।

पंच भू-संस्कार

जिस भू पर यज्ञ किया जाता है, उसकी अपवित्रता का निवारण एवं पवित्रता का संवर्धन आवश्यक है । खोदने, झाड़ने, छिड़कने, लीपने और उस पर ओ३म् लिखने की क्रिया, यज्ञ वेदी की पवित्रता के लिए है । हमें अपनी मनोभूमि को यज्ञीय आदर्श की पूर्ति के लिए खोदना चाहिए, आत्म निरीक्षण करना चाहिए, झाड़ना चाहिए, जो दोष दुर्गुण हों उन्हें हटाना चाहिए, झिड़कना चाहिए, ज्ञान और विवेक से तृष्णा-वासना की आग को शान्त करना चाहिए । लीपना चाहिए, आदर्शवादिता अपनाने के लक्ष्य को अन्त:करण में भावान्वित बनाना चाहिए । ओ३म् लिखना चाहिए-ईश्वर पर अटूट विश्वास रखना चाहिए । जिस प्रकार स्थूल ५ संस्कारों में यज्ञ कुण्ड अथवा वेदी को यज्ञाग्नि प्रज्ज्वलित करने के उपयुक्त बनाया जाता है वैसे ही दिव्य ज्योति में अन्त:करण में प्रकट हो सकने की पृष्ठभूमि आत्म शोधन की पाँच प्रक्रियाओं द्वारा करना चाहिए ।

कुण्ड-प्रतिष्ठा

यज्ञ कुण्ड मात्र गड्ढा नहीं है । यज्ञ भगवान की स्थापना के लिए बनाया गया देव-मन्दिर है । इसके लिए उसे मन्त्राभिषिक्त करना चाहिए । कुण्ड गाय के गोबर से लीप कर रखा जाय । अग्नि स्थापना से पूर्व उसका जल से अभिसिंचन करना चाहिए । कुण्ड के बीच स्वास्तिक बनाना चाहिए । उस पर अक्षत, पुष्प, चन्दन समर्पित करने चाहिए । यह कुण्ड का भीतरी पूजन हुआ ।

मेखला-पूजन

यज्ञ कुण्ड की बाहर की तीन सीढ़ियों में ब्रह्मा, विष्णु, महेश का आवाहन पूजन किया जाता है । ब्रह्मा निर्माण का, विष्णु-पोषण का और रुद्र-उपयोग का देवता है । हमें अपने जीवन का निर्माण करना चाहिए, उसे समर्थ, परिपुष्ट बनाना चाहिए और सुविकसित व्यक्तित्त्व का लोकमंगल के लिए सदुपयोग करना चाहिए ।

कुश-कण्डिका

कुशाएँ पवित्रता की प्रतीक हैं । चारों ओर पवित्रता का वातावरण बना रहने से यज्ञ सफल होता है । स्थान स्वच्छ रहे, प्रयोजनीय वस्तुएँ स्वच्छ हों, समिधा, सामग्री, घृत, याज्ञिकों के शरीर वस्त्र तथा मन सब कुछ शुद्ध हों । चारों दिशाओं में शुद्धता का वातावरण बनाये रखने का स्मरण दिलाने के लिए कुण्ड के चारों ओर कुशाऐं बिछाई जाती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रोक्षण

यज्ञ की हर वस्तु को अभिमंत्रित किया जाय । मन्त्रोच्चारण पूर्वक जल से छिड़का जाय । इसका तात्पर्य है कि वस्तुओं को सामान्य पदार्थ न मानकर यज्ञ के उपयुक्त पवित्र द्रव्य बना दिया जाय । पवित्रता की भावना के आरोपण से वस्तुओं का गुण पवित्र हो जाना विज्ञान सम्मत है । पवित्र उद्देश्य, पवित्र साधनों से ही प्राप्त हो सकता है । इसलिए हवन में प्रयोजनीय हर पदार्थ में पवित्रता की स्थापना एवं अभिवृद्धि के लिए प्रोक्षण किया जाता है ।

अग्नि स्थापना

यज्ञाग्नि को साधारण आग की तरह नहीं, वरन् भगवान विष्णु की प्रतिमा के रूप में प्रयुक्त किया जाता है । इसलिए उसे तेजस्वी ब्रह्म का प्रतिनिधि बनाने के लिए प्राण प्रतिष्ठा करते हैं । इसी मन्त्र विधान का कार्य अग्नि स्थापना है । यज्ञाग्नि को ब्रह्म तेज का प्रतीक मानकर उसके मुख में भोजन देने जैसी भावना आहुतियाँ देते समय याज्ञिक लोग करते हैं । इस प्रकार भावनात्मक हवन ही वास्तविक यज्ञ होता है । भाव रहित आयोजन तो सुगन्धित धुँआ करने जैसा साधारण लौकिक कर्म मात्र ही रह जाता है । यज्ञाग्नि को साक्षात् ईश्वर की उपस्थिति समझ कर याज्ञिक अपना आत्म निवेदन करे तथा उसके सान्निध्य का प्रकाश ग्रहण करें । भाव विभोरता की स्थिति लाने के लिए याज्ञिकों का यज्ञाग्नि के प्रति उच्च भक्ति भावना का तारतम्य बना रहे, यह उद्देश्य अग्नि में देवत्त्व की प्राण प्रतिष्ठापना का है । यही अग्नि स्थापना है । ससम्मान एवं मन्त्रोच्चारण पूर्वक अग्नि इसी भावना से स्थापित की जाती है ।

गायत्री-स्तवन

अग्नि में ईश्वररीय सत्ता की, माता गायत्री की प्राण प्रतिष्ठा हो जाने पर उसकी प्रार्थना, स्तुति की जाती है, गुणानुवाद गाये जाते हैं, ताकि स्थापना के साथ स्थिर हुई भावना का अधिकाधिक अभिवर्धन हो । स्तवन के मन्त्रों से यज्ञाग्नि में अवस्थित गायत्री माता के ऐश्वर्य का वर्णन याज्ञिकों की भक्ति-भावना को तरंगित करने के लिए है ।

अग्नि-प्रदीपन

प्रार्थना के उपरान्त अग्नि को पूरी तरह प्रज्ज्वलित करने के लिए पंखे से हवा की जाती है। हमारे अन्तःकरण में सत्प्रवृत्तियों की अग्नि भी पूरी तरह प्रज्ज्वलित रहे तो उससे अभीष्ट लक्ष्य प्राप्त होगा । अधूरी, अशिक्षित, मंद, आकांक्षा धुआँ देती और बुझती रहती है । इसलिए जीवन-यज्ञ की सफलता चाहने वाले को अपनी निष्ठा, श्रद्धा तथा दृढ़ता पूरी तरह प्रज्ज्वलित करनी चाहिए । ज्ञान, विवेक के पंखे से उसे झलना चाहिए, ताकि लौ पूरी तरह ऊपर उठने लगे ।

समिधाधान

प्रारम्भ में चार घृत में डुबाई हुई चार समिधाऐं होमी जाती हैं । ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास की परम्परा का हम स्मरण रखें । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों विभूतियों को समुचित मात्रा में संचित करके जीवन को सार्थक बनाएँ । ज्ञान, बल, धन और श्रम रूपी चार वर्णों का जीवन-क्रम में समन्वय रखें । इस प्रकार समन्वय पूर्ण जीवन ही सफल हो सकता है, एकांगी कार्यक्रम अपनाने से सर्वतोमुखी प्रगति नहीं हो सकती । व्यक्ति या समाज का सर्वांगीण विकास संतुलित विधि व्यवस्था अपनाने से ही सम्भव है । उसका स्मरण दिलाने के लिए यज्ञ कार्य में प्रथम चार समिधाऐं होमी जाती हैं । उन्हें स्नेहसिक्त किया जाता है । कठोरता नहीं, चिकनाई के साथ ही लचीली विधि-व्यवस्था ही सफल होती है, इसलिए यह चारों समिधाएँ घी में डुबो कर होमी जाती हैं ।

जल-प्रसेचन

जीवन में तेजस्विता, गर्मी, क्रियाशीलता आवश्यक है, उसे बढ़ाना ही चाहिए पर साथ ही उसके साथ शीतलता, शान्ति, विवेक, संयम एवं धैर्य का भी समन्वय रहना चाहिए । यज्ञ की तीव्रता को जल की शीतलता से घिरा रहना चाहिए । चींटी, कीड़े कुण्ड में गिरकर मरें नहीं, इसकी रोकथाम के लिए भी नाली में जल भरा जाता है । हमारी कार्य पद्धति किसी दीन दुर्बल असहाय, असमर्थ के लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हानिकारक सिद्ध न हो, किसी की सुरक्षा एवं शान्ति में हमारे उत्थान आयोजन के कारण बाधा का अनुभव न हो । इसका भी ध्यान रखा जाय । अग्नि के साथ जल का समन्वय एकांगी अपूर्णता को न अपनाने का संकेत करता है । शान्ति और क्रान्ति, मेल और त्याग, उपार्जन और दान, श्रम और विनोद, दमन और वर्धन दोनों का सन्तुलन वैसा ही रहना चाहिए जैसा कि इस सृष्टि में दिन और रात की भिन्नताओं का समन्वय है । हमें समन्वय की संतुलित गति पर चलना चाहिए । यज्ञ-कुण्ड की परिधि में जल प्रसेचन का यही प्रयोजन है ।

आज्याहुति होम

प्रथम घी की सात आहुतियाँ देनी पड़ती हैं । घृत को स्नेह भी कहते हैं । सत्कार्य प्रेमपूर्वक किये जाने चाहिए । प्रेम का समन्वय जिस कार्य में भी हो जाता है, उसी में आनन्द उपलब्ध होने लगता है । बिना प्रेम बेगार टालने की तरह कोई कार्य बेमन से कर दिया जाय तो लौकिक जगत में भी वह सफल नहीं होता, फिर अध्यात्म जगत में जहाँ प्रेम और श्रद्धा ही एक मात्र अवलम्बन है, कुछ कहने लायक प्रगति तब तक नहीं हो सकती, जब तक कि उसमें प्रेम की मात्रा का बढ़ा चढ़ा समन्वय न हो । यह प्रेम यज्ञ कार्य में ही किया जाय इतना ही पर्याप्त नहीं, वरन् जीवन की प्रत्येक गतिविधि स्नेह सिक्त हो, प्रत्येक प्राणी एवं पदार्थ से मोह त्याग कर सच्चा प्रेम किया जाय ।

गायत्री मंत्र की आहुतियाँ

सद्बुद्धि की देवी को गायत्री और सत्कार्यों के प्रेरक भाव को यज्ञ कहते हैं । गायत्री यज्ञ यह मान कर किया जाता है कि व्यक्ति और समाज का सच्चा कल्याण सद्विचारों और सत्कार्यों से ही सम्भव है। सुख, शान्ति, प्रगति और समृद्धि की समग्र एवं चिरस्थायी सम्भावना इन्हीं पर निर्भर है । इसलिए इनका अभिवर्धन करना मनुष्य का सर्वोत्कृष्ट धर्म कर्तव्य है । अपने पास जो विद्या, धन, ऐश्वर्य, सत्ता, प्रतिभा मौजूद हो, उसका उपयोग लोक-हित के लिए ही करना चाहिए । यही भाव आहुतियाँ देते समय मन में रहने चाहिए ।

साथ ही मन में अहंकार एवं स्वार्थ भी न रहना चाहिए । सत्कर्म करने पर कई बार अहंकार आता है, यश या प्रदर्शन की इच्छा होती है, इस क्षुद्रता को हटाने के लिए सोचना चाहिए कि जो यज्ञ में लगाया गया है वह मेरा नहीं ईश्वर का अंश है । इदं न मम का तात्पर्य है कि वह मेरा नहीं है । इसी प्रकार यह भी सोचना चाहिए कि यह मैं अपने लाभ के लिए नहीं, ईश्वर की, गायत्री माता की, विश्व-मानव की प्रसन्नता बढ़ाने के लिए कर रहा हूँ, अपनी किसी स्वार्थ सिद्धि के लिए नहीं । घी टपकाते हुए इदं न मम उसी प्रयोजन के लिए किया जाता है ।

स्विष्टकृत भोग

यज्ञ में जिन देव-शक्तियों को आमंत्रित किया गया है, वे तब सन्तुष्ट एवं प्रसन्न होती है, जब अपनी प्रकृति एवं प्रवृत्ति के अनुरूप कार्य भी होते देखती हैं । यह उनका प्रिय आहार है । मेवा, मिष्ठान्न आदि का आहार चारों वेदियों के सम्मुख क्रमशः उपस्थित करते हुए यह भावना रखी जाती है कि इनको जैसे स्थूल रूप से मधुर खाद्य पदार्थ समर्पित किये जा रहे हैं, वैसे ही संयम, सदाचार, पुरुषार्थ, परमार्थ के सूक्ष्म नैवेद्य भी इन्हें अर्पित करना है, ताकि उनकी सच्ची पूजा प्रतिष्ठा हो सके । मेवा, मिठाई, चरु (खीर, हलुआ आदि) फल यह चतुर्विध नैवेद्य संयम, सदाचार, पुरुषार्थ, परमार्थ के प्रतीक रूप में प्रस्तुत किये जाते हैं ।

बलिदान-संकल्प

बलिदान का अर्थ है, वह त्याग जिसके कारण अपने को कुछ कष्ट सहना पड़े । कितनी ही बुरी आदतें अपने अभ्यास में ऐसी घुल जाती हैं कि उनकी हानि को जानते हुए भी छोड़ने की हिम्मत नहीं होती । छोड़ा जाय तो जी दुख पाता है, कष्ट होता है । दुष्प्रवृत्तियों का अभ्यास तो सहज हो जाता है, पर उनका छोड़ना कठिन पड़ता है । इस कठिनाई को साहसपूर्वक शिरोधार्य करना और ब्रह्मार्पण के साथ अपनी आदत में समाविष्ट हुई बुराइयों को छोड़ देना सच्चा बलिदान है । अच्छा हो, सभी बुराइयाँ इस अवसर पर याज्ञिक लोग छोड़

दें और यज्ञानुष्ठान की तरह ही अपना जीवन भी यज्ञमय बना लें । इतना सम्भव न हो तो कम से कम एक बुराई का तो उस अवसर पर संकल्प पूर्वक त्याग कर ही देना चाहिए ।

स्विष्टकृत होम

जिस प्रकार देव-देवियों के सामने मधुर मिष्ठान्न नैवेद्य रूप से उपस्थित किया जाता है, उसी तरह यज्ञ में एक आहुति स्विष्टकृत की नैवेद्य द्वारा देकर देवताओं को प्रसन्न किया जाता है । विवेचन स्वष्टिकृत भोग में हो चुका है ।

पूर्णाहुति

कोई शुभ कार्य अधूरा न छोड़ा जाय । जिस सत्कर्म का संकल्प किया है उसे पुरुषार्थपूर्वक पूर्ण ही करना चाहिए । अपूर्णता से मनोबल घटता है और संकल्पों के पूर्ण करने में आत्मबल बढ़ता चला जाता है । यज्ञ कार्य पूर्ण हुआ, संकल्प पूरा किया गया, इसकी प्रसन्नता अभिव्यक्ति की घोषणा पूर्णाहुति है । छोटे या बड़े कार्यों की विचारपूर्वक योजना बनाना, उसे मनोयोग एवं तत्परतापूर्वक सम्पन्न करना और समस्त अड़चनों का सामना करते हुए पूर्णता तक पहुँचाना यही रीति-नीति लक्ष्य प्राप्ति की है । मनुष्य का गौरव लक्ष्य प्राप्ति में ही है । यज्ञीय पूर्णता का गौरव हर याज्ञिक करे, और जो प्रक्रिया यज्ञ-आयोजन के समय अपनाई थी वह हर कार्य में अपनावे, यह प्रेरणा पूर्णाहुति की है।

वसोधारा

घृत की अन्तिम बड़ी आहुति वसोधारा है । घृत अर्थात् स्नेह-सौजन्य । प्रारम्भ में घृत की सात आहुतियाँ दी थीं । उस प्रारम्भ का अन्त और भी बढ़ा-चढ़ा होना चाहिए । वसोधारा में घृत की अविच्छिन्न धारा टपकाई जाती है और अधिक घृत होमा जाता है । कार्य के आरम्भ में जितना उत्साह एवं त्याग हो, अन्त में उससे भी अधिक होना चाहिए। अक्सर शुभ कार्यों के आरम्भ में लोग बहुत साहस, उत्साह दिखाते हैं पर पीछे ठंडे पड़ जाते हैं। मनस्वी लोगों की रीति दूसरी ही है, वे यदि धर्म-मार्ग पर कदम बढ़ा देते हैं, तो हर कदम पर अधिक तेजी का परिचय देते हैं और अन्ततः उसी याज्ञिक कर्म में तन्मय हो जाते हैं । उस धारा को तोड़ते नहीं । वसोधारा की क्रिया यज्ञ-परम्परा को अविच्छिन्न रूप से आजीवन जारी रखने की है।

आरती

थाली में अनेक दीपक रखकर सभी दिशाओं में घुमाने और शंख, घड़ियाल बजाने के साथ खड़े होकर आरती उतारने का तात्पर्य यह है कि यज्ञ भगवान का सम्मान इस बात में है कि यह परमार्थ परायणता का ज्ञान-प्रकाश दशों दिशाओं में फैले । सर्वत्र उसी का शंख बजे, घंटा निनाद सुनाई पड़े । हर धर्म प्रेमी इस प्रयोजन के लिए उठ खड़ा हो । आरती में पैसे चढ़ाये जाते हैं, अर्थात् इस प्रयोजन के लिए सहयोग का परिचय दिया जाता है । यज्ञ भगवान की आरती प्रतिष्ठा, ज्ञान-दीपों के प्रकाश विस्तार से ही संभव है । यज्ञीय परम्परा इस अनुष्ठान तक ही सीमित न रहे, वरन् उसके विस्तार की व्यवस्था भी यज्ञ प्रेमी करेंगे, इसी का उद्घाटन प्रतीक रूप से आरती में किया जाता है ।

घृत-अवघ्राण

यज्ञीय स्नेह का लाभ सब लोग उठावें । स्वार्थ और वासना से भरा व्यामोह तो सूर्य की तरह चमकीला दीखने पर भी भीतर से विषैला होता है, पर यज्ञीय स्नेह, आदर्श से सिक्त प्रेम सभी के लिए मंगलमय होता है । पवित्र प्रेम का लाभ सभी लोग पूरी तरह उठावें । अपने सभी अंगों में, रोम-रोम में उसे धारण करें । यह भावना घृत अवघ्राण की है । टपकाये हुए घी को हाथों से मल कर अग्नि पर तपा कर चेहरे से लगाने की इस क्रिया की प्रेरणा यह है कि त्याग, सहयोग, उदारता से भरे भाव को अपने स्वभाव का अंग बनावें । एक दूसरे के साथ घर बाहर इसी आदर्श के अनुरूप व्यवहार करें ।

भस्म-धारण

जीवन का अन्त भस्म की ढेरी के रूप में होने वाला है, इसलिए मस्तिष्क में अपने अन्त की समीपता का, शरीर की क्षणभंगुरता का ध्यान रखते

हुए उस तरह की योजना बनावें, जिससे मनुष्य-जीवन सार्थक बन सके । यज्ञ की अवशेष भस्म को, यज्ञ-भावना को हमें मस्तक अर्थात् विचारों से ही धारण नहीं करना है, वरन् कंठ (वाणी) में, दाहिनी भुजा (कर्म) में, हृदय (निष्ठा) में भी धारण करना है । जीवन को सार्थक बनाने वाले यज्ञ-कार्यों में हमारे मन, वचन, कर्म तीनों का ही प्रयोग हो, यह भस्म धारण की भावना है ।

क्षमा-प्रार्थना

सफलता के लिए किये गये सत्प्रयत्नों का सिंहावलोकन करते समय हमें उन त्रुटियों का भी विचार करना चाहिए, जिनके कारण वह सफलता सर्वोत्कृष्टता के स्तर तक न पहुँच सकी । भले ही दूसरों की दृष्टि में हम सन्त या सफल दीखें पर फिर भी कुछ त्रुटियाँ अपने में रहनी संभव हैं । इनकी ओर से न तो आँख मूंदी जाय न उपेक्षा की जाय । यज्ञ कार्य में, जीवन विकास में, जो भी छोटी-बड़ी त्रुटियाँ दीखें उनके प्रति पश्चाताप करें और उन्हें हटाने की सतर्कता अपनायें । ईश्वर से भूलों के लिए क्षमा माँगें और उन्हें भविष्य में हटा सकने की शक्ति माँगें । यह क्षमा-याचना सज्जनता एवं विनम्रता का अभ्यास भी है ।

साष्टांग-नमस्कार

यज्ञ भगवान के प्रति, पारमार्थिक आदर्श के प्रति, अपनी अनन्य निष्ठा प्रकट करने और उसके चरणों में अपने को समर्पित करने के लिए साष्टांग नमस्कार किया जाता है । इस प्रकार नमस्कार करते समय मन में यह कामना रहनी चाहिए कि हमारा जीवन सदुद्देश्य में, यज्ञ कार्यों में समर्पित हो जाय, तो जीवनोद्देश्य का परम लाभ प्राप्त हो सके ।

शुभकामना

स्वार्थ का ही नहीं, हमें परमार्थ का भी समान रूप से चिन्तन और प्रयत्न करना चाहिए । भगवान से केवल अपने ही लाभ, सुख या स्वार्थ को पूर्ण करने की याचना नहीं करनी चाहिए, वरन् विश्व मंगल की कामना द्वारा अपने विकसित अन्तःकरण का परिचय देना चाहिए ।

मंत्र-पुष्पाञ्जलि

श्रद्धा और सद्भावना के प्रतीक-प्रतिनिधि पुष्प माने जाते हैं । यज्ञीय वातावरण में उपस्थित सद्भावना के प्रति, देवताओं के प्रति, अपनी श्रद्धा एवं आस्था प्रकट करने, उनका सम्मान करने के लिए सब लोग पुष्पों की श्रद्धाञ्जलि समर्पित करते हैं ।

अभिसिंचन

कलश में भरे हुए देव-जल, यज्ञीय भावनाओं से प्रभावित जल को उपस्थित लोगों पर मंत्रोच्चारण पूर्वक छिड़का जाता है, ताकि उनके शरीर एवं मन में भी वे भावना प्रवेश करें, जो यज्ञीय वातावरण में भरी हुई हैं । शान्ति और कल्याण के आशीर्वाद के साथ छिड़का हुआ यह अभिसिंचन शिरोधार्य करते हुए उपस्थित लोगों को यह भावना भी करनी चाहिए कि यज्ञीय भावनाएँ उनके अन्तःकरण में गहराई तक प्रवेश कर रही हैं ।

सूर्य-अर्घ्यदान

सूर्य देवता शक्ति, प्रकाश, क्रिया और चेतना का प्रतीक है । इनके सम्मुख अपने सद्भाव जल की धारा बहाते हुए यह भावना की जाती है, कि अपना जीवन ऐसा ही तेजस्वी, यशस्वी, परमार्थी, प्रकाशवान एवं सार्थक हो जैसा हमारे पूजा प्रतीक सूर्य भगवान का है

प्रदक्षिणा

जो विचार, जो भाव यज्ञ-आयोजन के समय हमें प्राप्त हुए हैं, उन्हें क्रिया रूप में परिणत करने के लिए कदम बढ़ाना प्रदक्षिणा का उद्देश्य है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की चतुर्विध जीवन साधना के लिए चार परिक्रमा की जाती हैं ।

सत्संकल्प पाठ

प्रत्येक धर्मानुष्ठान के अन्त में युग निर्माण का सत्संकल्प दुहराया जाना नितान्त आवश्यक है । एक व्यक्ति थोड़ा-थोड़ा करके बोले और शेष लोग उसे दुहरावें । उपस्थित लोगों के हाथ में एक-एक सत्संकल्प की पुस्तिका देनी चाहिए, ताकि वे उसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दुहरा भी सकें और यज्ञ प्रसाद के रूप में अपने घर नित्य दुहराने के लिए ले भी जा सकें । यज्ञ आदर्श की विवेचना संक्षेप में इस संकल्प में आ गई है । इसे धर्मशास्त्र एवं अध्यात्म तत्त्व ज्ञान का सार कह सकते हैं । यज्ञशाला छोड़ते हुए इन भावनाओं को साथ लेकर हर व्यक्ति विदा हो, यह सत्संकल्प पाठ के माध्यम से ही संभव हो सकता है ।

लोक-शिक्षण की दृष्टि से गायत्री यज्ञो के क्रिया-कृत्यों-कर्मकाण्डों को निम्न तथ्यों एवं उदाहरणों को जोड़कर व्याख्या की जाय तो उसमें सन्निहित प्रेरणाओं को उपस्थित जन समूह एवं याजक सहज ही हृदयंगम कर सकते हैं । नीचे कुछ संकेत-सूत्र हैं जिन्हें ध्यान में रखकर उदाहरणों की व्याख्या करना सरल होगा ।

पवित्रीकरण

आत्म परिशोधन, बारात-दूल्हे के स्वागत की तैयारी, दीपावली, लक्ष्मी, पूजन, सफाई, कलई से पहले बर्तन मांजना, रंगने से पहले कपड़ा साबुन से धोना, इंजेक्शन लगाने से पहले स्प्रिट लगाना, भगवान को मन में प्रतिष्ठित करने से पूर्व मन शुद्ध करना, अतः सर्वप्रथम पवित्री करण करना चाहिए ।

मलिनता मिटे तो जीवात्मा बनें । मनोविकार हटें तो मन्दिर तक, परमात्मा तक पहुँचे ।

अग्नि के ऊपर राख की परत, जीवात्मा पर छाये विकार मिटें, तो भगवान आयें, पवित्रता से श्रद्धा, श्रद्धा से भगवान उसी तरह आते हैं, जैसे भौंरे तितलियाँ फूलों की ओर, बादल सघन वृक्षों की ओर आकर्षित होते हैं ।

आचमनम्

मुख — महत्व — भोजन — स्वाद — तमोगुणी पदार्थ—पेट की सड़न—सड़ा हुआ माँस--चील कौवे—रोग—शोक—प्रथम आचमनम्—खाने के लिए न जियें—जीवन के लिए खायें—आहार संचय-कुत्ते-हकीम लुकमान—जीभ से कब्र खोदना—हित भुक्, मित भुक्, ऋतु भुक् ।

दूसरा उपयोग बोलना—वाणी असंयम—शत्रुता पैदा करना—क्रोध अपशब्द—विष्णु का कोप—क्षमा माँगी—धनुष से छूटा बाण—बोला गया शब्द--लौटते नहीं—

कागा काको लेत है, कोयल काको देत ।
मीठे वचन सुनाई के जग अपनो करि लेत ।।

विज्ञान—क्रोध वाले व्यक्ति का रक्त—खरगोश—मृत्यु—मधुर बोलें—संसार अपना ।

तीसरा आचमन—वाणी को भगवती सरस्वती की प्रतिमा देवत्त्व अभिव्यक्त करने—सत्परामर्श देने—नारद देवर्षि—पार्वती—ध्रुव—प्रहलाद—नन्द—दयानन्द—समर्थ रामदास—शिवाजी—चाणक्य—चन्द्रगुप्त—शृंगी ऋषि—राम का अवतरण—वशिष्ठ नहीं कर सके ।

सत्परामर्श मानें—न मानने वाले पछताये—पतन के गर्त में गिरे—रावण—पत्नी मन्दोदरी—बालि—तारा—विनाश—नारद बनें—शकुनि नहीं—दुर्योधन का विनाश ।

शिखा-बंधन

देश धर्म—संस्कृति विशाल—परमात्मा—प्रतीक—झंडा शिखा—यज्ञोपवीत हिन्दू संस्कृति—भगवती गायत्री की प्रतिमा—चोटी की संस्कृति—विचारों में देवत्त्व ।

प्राणायाम

प्राण+आयाम—प्राण तत्त्व आकर्षित करना—प्राणों की महत्ता—जीवन-मृत्यु--शरीर जलाना—साधना विज्ञान—चेतन परमाणु—अनुसंधान—चेतना—अविज्ञान रहस्यों—सिद्धियाँ—चमत्कार—दूरदर्शन, श्रवण, शाप—वरदान--प्राणवान—साधन सुविधाओं के बिना स्वर्ग जैसी स्थिति में—यशस्वी मनस्वी तेजस्वी— दीर्घ जीवन— प्राणों की सम्पदा—सक्रियता—रोगी—प्राणों की मात्रा—प्राणवान—रोगों के कीटाणुओं की शीशी—कुछ नहीं हुआ—महा प्राण से प्राण शक्ति खींचने की वैज्ञानिक पद्धति—जापान में डीप ब्रीदिंग प्राणायाम चिकित्सा, कागज में आग नहीं ला जा सकती, धातु चाहिए, चेतना से चेतना की शक्ति खींचना—क्रिया के साथ संकल्प।

दिखाई न देने पर भी—पृथ्वी हवा में गेंद की तरह तैर रही है—आकाश में हवा ही हवा—सूर्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊर्जा—एक बड़ी राशि पृथ्वी में भेजता है—प्रकाश कण टूटकर—आक्सीजन — प्राणायाम द्वारा खींचना ।

पेड़ की आकर्षण शक्ति से वर्षा—बादल—खदानों में सजातीय कणों को खींचना—सोने की खोज यंत्र—स्वर्ण कण किस दिशा में चल रहे हैं—भीतरी चुम्बक—प्राण खींचकर—अपने अन्दर धारण पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण—प्राणों का गुरुत्वाकर्षण—सूखी मिट्टी का ढेला, इच्छा मृत्यु परकाया प्रवेश, देशान्तर गमन शक्तिपात प्राण- शक्ति का खेल ।

प्राणायाम आक्सीजन खींचना श्रेष्ठ का संचय करना शक्ति सहयोग—बुराइयों का संचय रोग शोक—फेफड़े ऑक्सीजन खींचकर शरीर में बांट देते हैं, समाज व्यवस्था हेतु जीवनोपयोगी वस्तुओं को बाँट देना चाहिए ।

उचित और आवश्यक का अर्जन अनुपयुक्त को बाहर निकालना—प्राणायाम का द्वितीय चरण—समाज में व्याप्त मूढ़ मान्यताएँ अंध परम्पराएँ हटाने से ही नये जीवन का संचार होगा । खाली पेट में ही भोजन—नये के लिए पुराने का परित्याग इसी से भोजन चक्र चलता है ।

न्यास

सामान्य व्यक्ति—असामान्य व्यक्ति, शासनाध्यक्ष सरकारी अधिकारी, अधिक साधन-अधिकार अपने लिए नहीं समाज की व्यवस्था-भगवान के दिये हुए अंगों का उपयोग जीवात्मा, देवात्मा-मात्र भोग वासना में—निम्न योनियों में—मुख का स्पर्श अभक्ष्य, वाणी का उपयोग—नेत्र प्रभावित करने की क्षमता, तेजस्विता गांधारी दुर्योधन का शरीर वज्र—दमयन्ती बहेलिया तीक्ष्ण दृष्टि—संजय की दिव्य दृष्टि टेलीविजन धृतराष्ट्र को महाभारत का समाचार देते रहे—शिवजी कामदेव कुदृष्टि पतन माता बहिन अर्जुन—शिवाजी शत्रुओं की महिला ।

नासिका—सुगन्ध अपने देश में गन्दगी, एक अंग्रेज रात गन्दगी गाँव—कान सबकी सुने माने सत् परामर्श प्रहलाद ने पिता की न मानी, नारद की मानी । सती जी ने नारद का परामर्श माना । भुजाओं पुरुषार्थ पराक्रम परमार्थ परायणता—महाराणा प्रताप—कुन्ती भीम ब्राह्मण का बच्चा राक्षस—निश्चरहीन करौ महि भुज उठाय प्रण कीन भगवान राम—शिवाजी भवानी की तलवार—अर्जुन गाण्डीव भगवान सारथी—दान श्रेष्ठ कार्य में सहयोग राजा हरिश्चन्द्र भामाशाह, मान्धाता कर्ण—जंघाओं में ब्रह्मवर्चस् और संयम—नल खोल देने से जल बेकार नियन्त्रित उपयोग सिंचाई ब्रह्मचर्य का उपयोग लौकिक और आत्मिक सिद्धि—कामुकता गोंद निकालने से पेड़ कमजोर हनुमान दयानन्द बीकानेर के नरेश, घोड़ों की बग्घी—भीष्म पितामह अठारह दिन बाणों की शैय्या—जगत गुरु शंकराचार्य भगन्दर फोड़ा तीर्थयात्रा—सम्पूर्ण जीवन मनुष्य शरीर निरर्थक न चला जाय--एक राजा चन्दन का बगीचा—जहाँ जाना है उसे ठीक किया ।

पृथ्वी-पूजन

माता पालन – पोषण देती हैं—खोदने वालों को क्षमा अपने भीतर की रत्न राशि देती है । जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी—स्वर्ग के समान—अन्तरिक्ष यात्री अनुभव पृथ्वी सुन्दर ग्रह प्रकाश चन्द्रमा में पुस्तक पढ़ सकते हैं—सम्मान भगतसिंह सुखदेव राजगुरु रामप्रसाद बिस्मिल खुश रहो अहले वतन हम तो सफर करते हैं । महाराणा प्रताप जंगलों में भटके—देवता भी लालयित स्वयं परमात्मा जन्म—उपकारों को भूलें नहीं—प्रातः उठते ही कर्तव्य पालन—गन्दा न करें प्रदूषण साफ स्वच्छ हरीतिमा प्रणाम जनसंख्या का भार ।

देव-शक्तियाँ सहयोगी सहकारिता एक-एक बूँद जलराशि—मनुष्य जीवन में लाखों लोगों का योगदान अन्न, शिक्षा—संसार उदार सहकारिता शोषण स्वार्थ वृत्ति को संरक्षण समर्थन नहीं—स्वार्थवादी जंगली जानवर मधु – मक्खियाँ देवता एक कुण्ड में स्नान, बन्दर मिलजुल हनुमान विजयी—कुत्ते परस्पर लड़ते हैं—एक सिपाही की सेना, एक पक्षी जाल लेकर संगठन, रक्त की बूँद से सीता ।

देवपूजन

श्रेष्ठता का वरण—ब्रह्मचर्य वरण गुणानुवाद देववृत्तियों का चिंतन मनन चन्दन के समीप झाड़ी, सीप के मुँह में स्वाती बूँद मोती, पतंग आकाश में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उड़ती है । बेल वृक्ष पर चढ़ती है, पोला बाँस बाँसुरी, पत्नी पति की सम्पत्ति, कठपुतली, पारस लोहा, सोना, कल्पवृक्ष, टिड्डा घास के सम्पर्क में हरा, भृंग झिंगुर, साँप जल में नीले मिट्टी में मटमैले वृक्ष में हरे, आग लकड़ी—श्रीकृष्ण ग्वाल बाल, राम, अंगद, हनुमान, केवट, शबरी, जटायु, गिलहरी—चाणक्य चन्द्रगुप्त—देवपूजन देवतुल्य नमन वन्दन देवता प्रेरणा-रत्नावली तुलसीदास, विद्योत्तमा कालीदास, वशिष्ठ, विश्वामित्र, हरिश्चन्द्र, बुद्ध, आम्रपाली, अंगुलिमाल, गोपीचंद, भर्तृहरि ।

देवपूजन—परिपुष्ट करना—बच्चा समर्पण सब कुछ मिल जाता है । नचिकेता यमराज पंचाग्नि विद्या, भगवान राम विश्वामित्र, बला अतिबला, डा० राजेन्द्र प्रसाद, गाँधी, राष्ट्रपति, श्रेष्ठता को समर्पण—अक्सर प्रज्ञा अभियान मक्का का बीज हजार गुना होकर लौटता है ।

स्वस्तिवाचन

श्रेष्ठता कल्याण कारक श्रेय-प्रेय के खाते में कामवासना, कुत्ता सूखी हड्डी धन, चोरी मिलावट दहेज लिप्सा, जीवन में कूड़ा कचरा नहीं—आनन्द किसान बीज फसल, विद्यार्थी प्रारम्भ में पढ़ाई—पहलवान अखाड़ा—दूर दृष्टि श्रेय—तत्कालिक लाभ प्रेय—माँ नौ माह कष्ट तब पुत्रवती, भेड़ें, ऊन, रीछ, शिकारी, नाले सूख जाते हैं, गंगा हिमालय, मछली स्वाद, भौंरा गन्ध, कामुकता, हाथी भस्मासुर विनाश, हिरण्यकशिपु, रावण पतन, सिकन्दर प्रेय—सुभाष चन्द्र, महाराणा प्रताप, शिवाजी, राणा सांगा—इन्द्रियाँ प्रेम पीड़ा पतन—श्रेय समर्थ शक्तिशाली श्रद्धा सम्मान पिसनहारी, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, हजारी किसान, चन्दगीराम, श्रेय दयानन्द, अब्राहम लिंकन राष्ट्रपिता गाँधी, बिनोवा, बिखराव रोकना आतिशी शीशा किरणें बारूद की गोली, पानी बाँध, बैंक की पूंजी, अर्जुन मछली स्वयंम्बर जीता ।

रक्षाविधान

संसार, देव-शक्तियाँ, आसुरी-शक्तियाँ, मक्खी , मच्छर, पिस्सू, खटमल, बिच्छू, सर्प, बाघ, भेड़िये—रक्षा का साहस-दुष्ट गुण्डे, असहयोग विश्वामित्र राम धर्म संस्कृति की रक्षा, किसान फसल रक्षा, समाज चोर, दुष्ट तत्वों से लड़ना, देवताओं के आयुध राम धनुष बाण कृष्ण सुदर्शन, शंकर त्रिशूल—दुलार की आँख एक सुधार की—धर्म का असंतुलन, विनाशाय च दुष्कृताम् अवतार यज्ञ कृत्य से पूर्व आत्म रक्षा के उपाय ।

अग्निस्थापन

समान गुण मैत्री, चोर के साथ चोर शराबी, वेश्याओं, राजा की मैत्री संगीतकार, चंदन, सत्संग अग्नि के गुण तेजस्विता, उर्ध्वगामिता, वितरण, समानधर्मी, प्रकाश—साहस डाकू देश भक्ति—समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान, मेस्किको की मय सभ्यता, भारतीय डेनमार्क धेनुमार्ग में गौपालन जर्मन में संस्कृत भाषा, सारी पृथ्वी एक मानना ।

अग्निप्रदीपन

मंदाग्नि एक रोग, जठराग्नि, राजा ययाति बूढ़े, च्यवन ऋषि प्राण अग्नि शरीर में इन्द्रियों द्वारा सक्रिय, वाणी दुर्बल नचिकेता यमाचार्य, पंचाग्नि विद्या, पांच प्राण, सामान्य से असामान्य व्यक्ति, अग्नि प्रदीप्त करें—पदार्थ चौथी अवस्था ऊर्जा प्लाज्मा--अग्नि द्वारा बेल्डिंग, व्रत, संकल्प, यज्ञोपवीत ध्रुव, प्रहलाद, राम, भरत, सुजाता कन्या, विवाह संस्कार—सत्, चित, आनन्द—शरीर में अग्नि की भूमिका ।

समिधाधान

शरीर वृक्ष वनस्पति पर्यावरण जीव जन्तु—यज्ञ से जन्म—मृत्यु—आवाँ में मिट्टी का बर्तन तपता है, ब्राह्मण यज्ञ से, यज्ञ करना, कराना दान लेना—देना, वेद पढ़ना-पढ़ाना, ऋषि आश्रमों में अखंड अग्नियाँ, राम जंगल की ओर माता से अग्निहोत्र परम्परा बन्द न हो, सीताजी, गायत्री उपासना, यज्ञ, राम खोजते हुए सायंकाल संध्या यज्ञ कर रही होंगी, नर-नारी समान यज्ञ में—कबीर, रामानन्द, चवन्नी, राजा का भोज, हींग, तृप्त हो गये, कबीर एक पैसा भेजा, रामानंद हवन घृत सारे संसार को भोग, मिर्च का छौंक, वैज्ञानिक शिरोविच, घीगुग्गल, रेडियो विकिरण घट जाता है—अश्वमेध यज्ञ, वातावरण की शुद्धि, वाजपेय यज्ञ, राजसूय यज्ञ, प्रकृति असंतुलन—रावण के मरने पर अश्वमेघ यज्ञ,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

महाभारत के बाद पाण्डवों ने अश्वमेध यज्ञ--यज्ञ चिकित्सा मस्तिष्क में सुई नहीं--स्वास हमारे यज्ञों में थोड़ा घृत ओषधियाँ अन्न नहीं--यज्ञ विज्ञान की शोध दशरथ जी को पुत्र प्राप्ति पुत्रेष्टि यज्ञ, रावण ने यज्ञ द्वारा विजय हनुमान ने ध्वंस--पर्जन्य वर्षा, खाद से उपजाऊ शक्ति अन्तरिक्ष की खाद, ऊर्जा की वर्षा -- च्यवनप्राश से जवानी-पूर्व में आज नहीं, पदार्थों में शक्ति अभाव, प्राण के स्थान पर प्रदूषण यज्ञ धुंआ नहीं है, फिनाइल स्प्रिट, जैसा पोषण अगरबत्ती का धुंआ प्रसन्नता, रबर का धुंआ सड़न, नहीं मारक--पालन के गुण ।

गायत्री यज्ञ

नाद ब्रह्म, वेद की ऋचायें, छंद गायन, रागों के प्रयोग, शब्द विज्ञान, वेणुनाद, सर्प , राग--मल्हार वर्षा दीपक राग--अकबर तानसेन अग्निदाह पुत्री ने पखावज पर मल्हार शीतल किया,कवि गंग, पागल हाथी से रक्षा, गायत्री छंद चमत्कारी शब्द संयोजन, गीता में भगवान कृष्ण, गायत्री छंदसामहम, सार्वभौम उपासना सारा राष्ट्र गायत्री की उपासना, यज्ञ में प्रयोग महत्ता बढ़ा देता है, गायत्री माइक यज्ञ बैटरी, एकाकी लाभप्रद यज्ञ में सामूहिक शक्ति का--एकाकी सिपाही का पैर और सामूहिक मार्च पास्ट पुल को तोड़ देता है--शब्द शक्ति विज्ञान उपयोग कारखाने, कपड़ों की धुलाई, टासट्ड्यूसर यंत्र स्टील चादरों की कटाई--शरीर में शक्तियों सिद्धियों का जागरण, २४ चक्रों का जागरण, अशक्ति अज्ञान अभाव दूर होता है--शरीर में ऊर्जा के जागरण से--ब्रह्मा जी ने सृष्टि की संरचना, विश्वामित्र नयी सृष्टि अवतार उपासक, गायत्री प्रज्ञा, प्रज्ञावतार, सामान्यों से असमान्यों की भूमिका, अमृत पारस कल्प वृक्ष कामधेनु देवमाता, वेदमाता विश्व माता, माता-पिता संस्कृति के ।

स्विष्टकृत

चान्द्रायण साधना, इष्टा पूर्ति, प्रायश्चित्त, विधान पाप-पुण्य, गड्ढा खोदा, मिट्टी भरे स्वर्णदान, वस्त्रदान, गोदान, देवताओं की साक्षी में देव दक्षिणा, बुराइयाँ, सौगंध, अवांछनीयताओं का परित्याग, सत्प्रवृत्तियाँ अपनाने का संकल्प-अधर्म का नाश, धर्म का सस्थापन, ज्ञान यज्ञ का यजमान संकल्प पत्र, नशेबाज़ी, व्यक्तिगत बुराइयाँ, सत्प्रवृत्तियाँ, उपासना, अवांछनीयताओं का विरोध, वृक्षारोपण, दीवाल लेखन--नरमेध यज्ञ देवता पर्यावरण, पू० गुरुदेव के आशीर्वाद, विश्व कल्याण यश श्रेय ।

पूर्णाहुति

पूर्ण करने का संकल्प, गंगा का अवतरण, भागीरथ का संकल्प--महान सत्ता की खोज, जीवात्मा, देवात्मा परमात्मा--संकल्प की शक्ति समुद्र टिटहरी संकल्प, अगत्स्य ऋषि ।

वसोधारा

सतत् चलने का संकल्प, कछुए, खरगोश, किसान कुआं खोदा खुदा नहीं, चरैवेति--चरैवेति, सूर्य चन्द्रमा तारे पृथ्वी गतिशीलता--जापान इजरायल, परम्पराएँ उपयोगी--अनुपयोगी ।

आरती

ज्ञान का आलोक घर-घर, एक व्यक्ति को नहीं मिल बँटकर --देव ऋषि नारद बादल समुद्र खेत, शिक्षित अशिक्षित को पढ़ायें--ऋषि प्रयोगशाला , अपना शरीर दूसरों को लाभ, साधनाओं से मेंहदी पीसने वाले के हाथ, भगवान बुद्ध, शिष्यों से आलोक वितरण--ब्राह्मण वानप्रस्थ संन्यासी--प्रज्ञा अभियान ज्ञान का विस्तार, दीपक की तरह समयदान ज्ञानवान नहुष--

घृत अवघ्राण

फूल, चंदन, कपूर, सुगंध समीपवर्ती क्षेत्र, अग्नि, ओषधि, मंत्र आहुति का प्रभाव--चरु भगवान राम का जन्म--घृत अवघ्राण सूँघते हैं--रोग कीटाणुओं का शमन--मेधा बुद्धि--प्रदूषण का प्रभाव, मथुरा तेल शोधक कारखाना, ताजमहल क्षति, विदेशों में धनी फैक्टरी--यज्ञ धूम शक्तिवर्धक मस्तिष्क, इदं न मम अकेले नहीं, हम सब मिलकर, अदृश्य जगत सुन्दर प्राणी समुदाय को लाभ ।

भस्मधारण

जन्मेजय से शुकदेव ने प्रश्न किया, परीक्षित बंधन मुक्त--मृत्यु का ध्यान, सत्य का बोध, सिकंदर गौतम बुद्ध, यक्ष युधिष्ठिर--जीवन पथ से भटक न जाय, मृत्यु का स्मरण, सोने की भस्म मूल्यवान, जीवन की भस्म ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्षमा प्रार्थना

अपनी भूलों की क्षमा, पूर्वाग्रहों से संसार के झगड़े, गांधीजी गोलमेज सम्मेलन, राजकोट के राजा सत्याग्रह, क्षमा—सारी गलत बात बड़ों की न मानें, भूल हो जाने पर बच्चे से भी क्षमा—संस्कृति अहंकार अपराध निरहंकारिता—भूलें स्वीकार करना चर्च वैपतिस्मा ।

साष्टांग नमस्कार

मेरा बच्चा मेरा भोजन मेरी अपूर्णता—प्रगति में सहयोग, कृतज्ञता प्रगट करें, आभार, विराट—संत तुलसीदास सिया राम मय सब जब जानी, करहु प्रणाम जोरि जुग पानी—सारा शरीर परमार्थ के पथ पर ।

शुभकामना

अपने अलावा दूसरों के हित में सोचना करना, भले भलाई पै लहे अमृत जहर, भले सज्जन—बुरे लोग—दूसरों को आगे बढ़ाना भेद-भाव नहीं—डॉक्टर, पुरोहित, दृष्टि व्यापक, चिंतन बड़ा, एक सर्प संत काटने के लिए, मना फुसकारने के लिए नहीं ।

अभिसिंचन

एक राजा दो माली—शुभ कार्यों का अभिसिंचन, सद्कार्यों का अभिनंदन—सावन । बादल गर्मी—प्रज्ञा अभियान समय दान अंशदान ।

पुष्पांजलि

दो, और मिलेगा—सृष्टि का नियम वृक्ष प्राणी खेत में बीज, समुद्र, बादल, पेट, शरीर, मस्तिष्क, सुरक्षा, देवता, सुरक्षा, अनुदान, भीख नहीं पवित्रता—इकालॉजी—माता पिता बच्चों को देते हैं, धर्म पत्नी, पति की सम्पत्ति की स्वामिनी, सरकार टैक्स, यज्ञ समष्टि को ।

सूर्यार्घ्यदान

कलश का जल सड़ जायेगा, पूंजी गाड़कर रखना, उपयोग नहीं—बैंक में उपयोग, आलोक फैलाने वालों का अभिसिंचन—जल भाप वर्षा, अपना पात्र खाली भगवान के लिए—वाजिश्रवा दान गौओं, द्रौपदि दुर्वासा, अक्षय पात्र ।

प्रदक्षिणा

गुरुनानक यात्रा एक गाँव आबाद, बरबाद—एक स्थान पर जल सड़ जाता है—तीर्थ यात्रा ज्ञान का वितरण, वानप्रस्थ, प्रवज्या, नारद—पर्यटन नहीं लोक शिक्षण, बादल सरिता सूर्य चन्द्रमा संस्कृति ऋषि संत, अवतार राम, कृष्ण, बुद्ध

विसर्जन

नये सृजन के लिए विस्तृत होना, फैलाना, नये कार्यों को अच्छे ढंग से करना—संघारामों में शिक्षण, एक स्थान में तीन दिन से अधिक नहीं—यज्ञ समाप्त नहीं, घर-घर में करने का संकल्प ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विराट गायत्री परिवार एवं उसके संस्थापक-संरक्षक एक संक्षिप्त परिचय

इतिहास में कभी-कभी ऐसा होता है कि अवतारी सत्ता एक साथ बहुआयामी रूपों में प्रकट होती है एवं करोड़ों ही नहीं, पूरी वसुधा के उद्धार-चेतनात्मक धरातल पर सबके मनों का नये सिरे से निर्माण करने आती है । परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य को एक ऐसी ही सत्ता के रूप में देखा जा सकता है, जो युगों-युगों में गुरु एवं अवतारी सत्ता दोनों ही रूपों में हम सबके बीच प्रकट हुई, अस्सी वर्ष का जीवन जीकर एक विराट् ज्योति प्रज्ज्वलित कर उस सूक्ष्म ऋषि चेतना के साथ एकाकार हो गयी, जो आज युग परिवर्तन को सन्निकट लाने को प्रतिबद्ध है । परमवंदनीया माताजी शक्ति का रूप थीं, जो कभी महाकाली, कभी मां जानकी, कभी मां शारदा एवं कभी माँ भगवती के रूप में शिव की कल्याणकारी सत्ता का साथ देने आती रही है । उनने भी सूक्ष्म में विलीन हो स्वयं को अपने आराध्य के साथ एकाकार कर ज्योति पुरुष का एक अंग स्वयं को बना लिया । आज दोनों सशरीर हमारे बीच नहीं है किन्तु, नूतन सृष्टि कैसे ढाली गयी, कैसे मानव गढ़ने का साँचा बनाया गया, इसे शान्तिकुंज, ब्रह्मवर्चस, गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युगतीर्थ आँवलखेड़ा जैसी स्थापनाओं तथा संकल्पित सृजन सेनानी गणों के, वीरभद्रों की करोड़ों से अधिक की संख्या के रूप में देखा जा सकता है ।

परमपूज्य गुरुदेव का वास्तविक मूल्यांकन तो कुछ वर्षों बाद इतिहासविद्, मिथक लिखने वाले करेंगे किन्तु, यदि उनको आज भी साक्षात कोई देखना या उनसे साक्षात्कार करना चाहता हो तो उन्हें उनके द्वारा अपने हाथ से लिखे गये उस विराट परिमाण में साहित्य के रूप में युग संजीवनी के रूप में देख सकता है जो वे अपने वजन से अधिक भार के बराबर लिख गये । इस साहित्य में संवेदना का स्पर्श इस बारीकी से हुआ है कि लगता है लेखनी को उसी की स्याही में डुबा कर लिखा गया हो । हर शब्द ऐसा जो हृदय को छूता मन को, विचारों को बदलता चला जाता है । लाखों करोड़ों के मनों के अंतःस्थल को छू कर उसने उनका कायाकल्प कर दिया । रूसो की प्रजातंत्र की, कार्ल मार्क्स की साम्यवाद की क्रांति भी इसके समक्ष बौनी पड़ जाती है । उनके मात्र इस युग वाले स्वरूप को लिखने तक में लगता है कि एक विश्वकोश तैयार हो सकता है, फिर उस बहुआयामी रूप को जिसमें वे संगठनकर्ता, साधक, करोड़ों के अभिभावक, गायत्री महाविद्या के उद्धारक, संस्कार परम्परा का पुनर्जीवन करने वाले, ममत्व लुटाने वाले एक पिता, नारी जाति के प्रति अनन्य करुणा बिखेरकर उनके ही उद्धार के लिए धरातल पर चलने वाला नारी जागरण अभियान चलाते देखे जाते हैं, अपनी वाणी के उद्बोधन से एक विराट गायत्री परिवार एकाकी अपने बलबूते खड़े रहते दिखाई देते हैं तो समझ में नहीं आता, क्या-क्या लिखा जाय, कैसे छन्दबद्ध, लिपिबद्ध किया जाय, उस महापुरुष के जीवन चरित को ।

आश्विन कृष्ण त्रयोदशी विक्रमी संवत् १९६७ (२० सितम्बर १९११) को स्थूल शरीर से आँवलखेड़ा ग्राम जनपद आगरा जो जलेसर मार्ग पर आगरा से पंद्रह मील की दूरी पर स्थित है, में जन्मे श्रीराम शर्मा जी का बाल्यकाल-कैशोर्य काल ग्रामीण परिसर में ही बीता । वे जन्मे तो थे एक जमींदार घराने में, जहाँ उनके पिताश्री पं. रूपकिशोर जी शर्मा आसपास के दूर-दराज के राजघरानों के राजपुरोहित, उद्भट विद्वान, भागवत कथाकार थे किन्तु, उनका अंतःकरण मानव मात्र की पीड़ा से सतत विचलित रहता था । साधना के प्रति उनका झुकाव बचपन में ही दिखाई देने लगा । जब वे अपने सहपाठियों को, छोटे बच्चों को अमराइयों में बिठाकर स्कूली शिक्षा के साथ-साथ सुसंस्कारिता अपनाने वाली आत्मविद्या का शिक्षण दिया करते थे । छटपटाहट के कारण हिमालय की ओर भाग निकलने व पकड़े जाने पर उनने संबंधियों को बताया कि हिमालय ही उनका घर है एवं वहीं वे जा रहे थे । किसे मालूम था कि हिमालय की ऋषि चेतनाओं का समुच्चय बनकर आयी यह सत्ता वस्तुतः अगले दिनों अपना घर वहीं बनाएगी । जाति-पाँति का कोई भेद नहीं । जातिगत मूढ़ता भरी मान्यता से ग्रसित तत्कालीन भारत के ग्रामीण परिसर में एक अछूत वृद्ध महिला की जिसे कुष्ठ रोग हो गया था, उसी के टोले में जाकर सेवाकर उनने घरवालों का विरोध तो मोल ले लिया पर अपना व्रत नहीं छोड़ा । उस महिला ने स्वस्थ होने पर उन्हें ढेरों आशीर्वाद दिये। एक अछूत कहलाने वाली जाति का व्यक्ति जो उनके आलीशान घर में घोड़ों की मालिश करने आता था, एक बार कह उठा कि मेरे घर कथा कौन कराने आएगा, मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ । नवनीत जैसे हृदय वाले पूज्यवर उसके घर जा पहुँचे एवं कथा पूरे विधान से कर पूजा की, उसको स्वच्छता का पाठ सिखाया, जबकि सारा गाँव उनके विरोध में बोल रहा था ।

किशोरावस्था में ही समाज सुधार की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ उनने चलाना आरम्भ कर दी थीं । औपचारिक शिक्षा पाँचवीं तक ही पायी थी किन्तु, उन्हें इसके बाद आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि जो जन्मजात प्रतिभा सम्पन्न हो वह स्कूली पाठ्यक्रम तक सीमित कैसे रह सकता है । हाट-बाजारों में जाकर स्वास्थ्य-शिक्षा प्रधान परिपत्र बाँटना, पशुधन को कैसे सुरक्षित रखें तथा स्वावलम्बी कैसे बनें, इसके

छोटे-छोटे पैम्फलेट्स लिखने, हाथ की प्रेस से छपवाने के लिए उन्हें किसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी । वे चाहते थे, जनमानस आत्मावलम्बी बने, राष्ट्र के प्रति स्वाभिमान उसका जागे, इसलिए गाँव में जन्मे इस लाल ने नारी शक्ति व बेरोजगार युवाओं के लिए गाँव में ही एक बुनताघर स्थापित किया व उसके द्वारा हाथ से कैसे कपड़ा बुना जाय, अपने पैरों पर कैसे खड़ा हुआ जाय, यह सिखाया ।

पंद्रह वर्ष की आयु में वसंत पंचमी की वेला में सन् १९२६ में उनके घर की पूजा स्थली में, जो उनकी नियमित उपासना का तब से आगार थी, जबसे महामना पं० मदन मोहन मालवीय जी ने उन्हें काशी में गायत्री मंत्र की दीक्षा दी थी, उनकी गुरुसत्ता का आगमन हुआ अदृश्य छायाधारी सूक्ष्म रूप में । उनने प्रज्ज्वलित दीपक की लौ में से स्वयं को प्रकट कर उन्हें उनके द्वारा विगत कई जन्मों में संपन्न क्रिया कलापों का दिग्दर्शन कराया तथा उन्हें बताया कि वे दुर्गम हिमालय से आये हैं एवं उनसे अनेकानेक ऐसे क्रियाकलाप कराना चाहते हैं, जो अवतारी स्तर की ऋषि सत्ताएँ उनसे अपेक्षा रखती हैं । चार बार कुछ दिन से लेकर एक साल तक की अवधि तक हिमालय आकर रहने, कठोर तप करने का भी उनने संदेश दिया एवं उन्हें तीन संदेश दिए- १. गायत्री महाशक्ति के चौबीस-चौबीस लक्ष के चौबीस महा-पुरश्चरण जिन्हें आहार के कठोर तप के साथ पूरा करना था । २. अखण्ड घृतदीप की स्थापना एवं जन-जन तक इसके प्रकाश को फैलाने के लिए समय आने पर ज्ञानयज्ञ अभियान चलाना, जो बाद में अखण्ड ज्योति पत्रिका के १९३८ में प्रथम प्रकाशन से लेकर विचार-क्रांति अभियान के विश्वव्यापी होने के रूप में प्रकटा तथा ३. चौबीस महापुरश्चरणों के दौरान युगधर्म का निर्वाह करते हुए राष्ट्र के निमित्त भी स्वयं को खपाना, हिमालय यात्रा भी करना तथा उनके संपर्क से आगे का मार्गदर्शन लेना ।

यह कहा जा सकता है कि युग निर्माण मिशन, गायत्री परिवार, प्रज्ञा अभियान, पूज्य गुरुदेव जो सभी एक दूसरे के पर्याय हैं, की-जीवन यात्रा का यह एक महत्वपूर्ण मोड़ था, जिसने भावी रीति-नीति का निर्धारण कर दिया । पूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक 'हमारी वसीयत और विरासत' में लिखते हैं कि ''प्रथम मिलन के दिन समर्पण सम्पन्न हुआ । दो बातें गुरु सत्ता द्वारा विशेष रूप से कही गई, संसारी लोग क्या करते हैं और क्या कहते हैं, उसकी ओर से मुँह मोड़कर निर्धारित लक्ष्य की ओर एकाकी साहस के बलबूते चलते रहना एवं दूसरा यह कि अपने को अधिक पवित्र और प्रखर बनाने की तपश्चर्या में जुट जाना- जौ की रोटी व छाछ पर निर्वाह कर आत्मानुशासन सीखना। इसी से वह सामर्थ्य विकसित होगी जो विशुद्धतः परमार्थ प्रयोजनों में नियोजित होगी । वसंत पर्व का यह दिन गुरु अनुशासन का अवधारण ही हमारे लिए नया जन्म बन गया । सद्गुरु की प्राप्ति हमारे जीवन का अनन्य एवं परम सौभाग्य रहा ।''

राष्ट्र के परावलम्बी होने की पीड़ा भी उन्हें उतनी ही सताती थी जितनी कि गुरुसत्ता के आदेशानुसार तपकर सिद्धियों के उपार्जन की ललक उनके मन में थी । उनके इस असमंजस को गुरुसत्ता ने ताड़कर परावाणी से उनका मार्गदर्शन किया कि युगधर्म की महत्ता व समय की पुकार देख सुन कर तुम्हें अन्य आवश्यक कार्यों को छोड़कर अग्निकाण्ड में पानी लेकर दौड़ पड़ने की तरह आवश्यक कार्य भी करने पड़ सकते हैं । इसमें स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के नाते संघर्ष करने का भी संकेत था । १९२७ से १९३३ तक का समय उनका एक सक्रिय स्वयं सेवक-स्वतंत्रता सेनानी के रूप में बीता, जिसमें घरवालों के विरोध के बावजूद पैदल लम्बा रास्ता पारकर वे आगरा के उस शिविर में पहुँचे, जहाँ शिक्षण दिया जा रहा था, अनेकानेक मित्रों-सखाओं-मार्गदर्शकों के साथ भूमिगत हो कार्य करते रहे तथा समय आने पर जेल भी गये । छह-छह माह की उन्हें कई बार जेल हुई । जेल में भी वे बच्चों को शिक्षण देकर व स्वयं अंग्रेजी सीखकर लौटे । आसन-सोल जेल में वे श्री जवाहर लाल नेहरू की माता श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, श्री रफी अहमद किदवई, महामना मालवीय जी, देवीदास गाँधी जैसी हस्तियों के साथ रहे व वहाँ से एक मूलमंत्र सीखा जो मालवीय जी ने दिया था कि जन-जन की साझेदारी बढ़ाने के लिए हर व्यक्ति के अंशदान से-मुट्ठी फण्ड से रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाना । यही मंत्र आगे चलकर एक घण्टा समयदान बीस पैसा नित्य या एक दिन की आय एक माह में तथा एक मुट्ठी अन्न रोज डालने के माध्यम से धर्मघट की स्थापना का स्वरूप लेकर लाखों-करोड़ों की भागीदारी वाला गायत्री परिवार बनाता चला गया, जिसका आधार था प्रत्येक व्यक्ति की यज्ञीय भावना का उसमें समावेश ।

स्वतंत्रता की लड़ाई के दौरान कुछ उग्र दौर भी आये, जिनमें शहीद भगतसिंह को फाँसी दिये जाने पर फैले जन आक्रोश के समय श्री अरविन्द के किशोर काल की क्रांतिकारी स्थिति की तरह उनने भी वे कार्य किये, जिनसे आक्रान्ता शासकों के प्रति असहयोग जाहिर होता था । नमक आन्दोलन के दौरान वे आततायी शासकों के समक्ष झुके नहीं, वे मारते रहे परन्तु समाधि स्थिति को प्राप्त राष्ट्र देवता के पुजारी को बेहोश होना स्वीकृत था पर आन्दोलन से पीठ दिखाकर भागना नहीं । बाद में फिरंगी सिपाहियों के जाने पर लोग उठाकर घर लेकर आए । जरारा आन्दोलन के दौरान उनने झण्डा छोड़ा नहीं जबकि, फिरंगी उन्हें पीटते रहे, झण्डा छीनने का प्रयास करते रहे। उनने मुँह से झण्डा पकड़ लिया, गिर पड़े, बेहोश हो गये पर झण्डे का टुकड़ा चिकित्सकों द्वारा दाँतों में भींचे गये टुकड़े के रूप में जब निकाला गया तब सब उनकी सहनशक्ति देखकर आश्चर्य चकित रह गये । उन्हें तब से ही आजादी के मतवाले उन्मत्त श्रीराम मत्त नाम मिला। अभी भी आगरा में उनके साथ रहे या उनसे कुछ सीख लिए अगणित व्यक्ति उन्हें मत्त जी नाम से ही जानते हैं । लगानबन्दी के आँकड़े एकत्र करने के लिए उनने पूरे आगरा जिले का दौरा किया व उनके द्वारा प्रस्तुत वे आँकड़े तत्कालीन संयुक्त प्रान्त के मुख्य मंत्री श्री गोविन्द वल्लभ पंत द्वारा गाँधी जी के समक्ष पेश किये गये । बापू ने अपनी प्रशस्ति के साथ वे प्रामाणिक आँकड़े ब्रिटिश पार्लियामेण्ट भेजे, इसी

आधार पर पूरे संयुक्त प्रान्त के लगान माफी के आदेश प्रसारित हुए । कभी जिनने अपनी इस लड़ाई के बदले कुछ न चाहा उन्हें सरकार ने अपना प्रतिनिधि भेजकर पचास वर्ष बाद ताम्रपत्र देकर शांतिकुज में सम्मानित किया । उसी सम्मान व स्वाभिमान के साथ सारी सुविधाएँ व पेंशन उनने प्रधान मंत्री राहत फण्ड, हरिजन फण्ड के नाम समर्पित कर दीं । वैरागी जीवन का, सच्चे राष्ट्र संत होने का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है ?

१९३५ के बाद उनके जीवन का नया दौर शुरु हुआ, जब गुरुसत्ता की प्रेरणा से वे श्री अरविन्द से मिलने पाण्डिचेरी, गुरुदेव ऋषिवर रवीन्द्रनाथ टैगोर से मिलने शांति निकेतन तथा बापू से मिलने साबरमती आश्रम अहमदाबाद गये । सांस्कृतिक आध्यात्मिक मोर्चे पर राष्ट्र को कैसे परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त किया जाय, यह निर्देश लेकर अपना अनुष्ठान यथावत् चलाते हुए उनने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया जब आगरा में 'सैनिक' समाचार पत्र के कार्यवाहक संपादक के रूप में श्री कृष्णदत्त पालीवाल जी ने उन्हें अपना सहायक बनाया। बाबू गुलाब राय व पालीवाल जी से सीख लेते हुए सतत स्वाध्याय रत रह कर उनने अखण्ड ज्योति नामक पत्रिका का पहला अंक १९३८ की वसंत पंचमी पर प्रकाशित किया । प्रयास पहला था, जानकारियाँ कम थीं अत: पुन: सारी तैयारी के साथ विधिवत् १९४० की जनवरी से उनने परिजनों के नाम पाती के साथ अपने हाथ से बने कागज पर पैर से चलने वाली मशीन से छापकर 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका का शुभारंभ किया जो पहले तो दो सौ पचास पत्रिका के रूप में निकली, किन्तु क्रमश: उनके अध्यवसाय घर-घर पहुँचाने, मित्रों तक पहुँचाने वाले उनके हृदय स्पर्शी पत्रों द्वारा बढ़ती-बढ़ती नवयुग के मत्स्यावतार की तरह आज दस लाख से भी अधिक संख्या में विभिन्न भाषाओं में छपती व एक करोड़ से अधिक व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती है ।

पत्रिका के साथ-साथ 'मैं क्या हूँ' जैसी पुस्तकों का लेखन आरम्भ हुआ, स्थान बदला, आगरा से मथुरा आ गये, दो-तीन घर बदलकर घीयामण्डी में जहाँ आज अखण्ड ज्योति संस्थान है, आ बसे । पुस्तकों का प्रकाशन व कठोर तपश्चर्या, ममत्व विस्तार तथा पत्रों द्वारा जन-जन के अंत: स्थल को छूने की प्रक्रिया चालू रही । साथ देने आ गयीं परम वंदनीया माताजी भगवती देवी शर्मा, जिन्हें भविष्य में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका अपने आराध्य इष्ट गुरु के लिए निभानी थी । उनके मर्मस्पर्शी पत्रों ने, भाव भरे आतिथ्य, हर किसी को जो दुखी था-पीड़ित था, दिये गये ममत्व भरे परामर्श ने गायत्री परिवार का आधार खड़ा किया, इसमें कोई सन्देह नहीं । यदि विचारक्रांति में साहित्य ने मनोभूमि बनायी तो भावात्मक क्रांति में ऋषियुगल के असीम स्नेह ने ब्राह्मणत्व भरे जीवन ने शेष बची भूमिका निभायी ।

'अखण्ड ज्योति' पत्रिका लोगों के मनों को प्रभावित करती रही, इसमें प्रकाशित 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ से लोगों को गायत्री व यज्ञमय जीवन जीने का संदेश मिलता रहा, साथ ही एक आना से लेकर छह आना सीरज की अनेकानेक लोकोपयोगी पुस्तकें छपती चली गयीं। इस बीच हिमालय के बुलावे भी आये, अनुष्ठान भी चलता रहा जो पूरे विधि विधान के साथ १९५३ में गायत्री तपोभूमि की स्थापना, १०८ कुण्डी यज्ञ व उनके द्वारा दी गयी प्रथम दीक्षा के साथ समाप्त हुआ । गायत्री तपोभूमि की स्थापना के निमित्त धन की आवश्यकता पड़ी तो परम वंदनीया माताजी ने जिनने हर कदम पर अपने आराध्य का साथ निभाया, अपने सारे जेवर बेच दिये, पूज्यवर ने जमींदारी के बाण्ड बेच दिये एवं जमीन लेकर अस्थायी स्थापना कर दी गयी । धीरे-धीरे उदारचेताओं के माध्यम से गायत्री तपोभूमि एक साधना पीठ बन गयी । २४०० तीर्थों के जल व रज की स्थापना वहाँ की गयी, २४०० करोड़ गायत्री मंत्र लेखन वहाँ स्थापित हुआ, अखण्ड अग्नि हिमालय के एक अति पवित्र स्थान से लाकर स्थापित की गयी जो अभी तक वहाँ यज्ञशाला में जल रही है । १९४१ से १९७१ तक का समय परमपूज्य गुरुदेव का गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान में सक्रिय रहने का समय है । १९५६ में नरमेध यज्ञ, १९५८ में सहस्रकुण्डी यज्ञ करके लाखों गायत्री साधकों को एकत्र कर उनने गायत्री परिवार का बीजारोपण कर दिया । कार्तिक पूर्णिमा १९५८ में आयोजित इस कार्यक्रम में दस लाख व्यक्तियों ने भाग लिया, इन्हीं के माध्यम से देश भर में प्रगतिशील गायत्री परिवार की दस हजार से अधिक शाखाएँ स्थापित हो गयीं । संगठन का अधिकाधिक कार्यभार पूज्यवर परमवंदनीया माताजी पर सौंपते चले गये एवम् १९५९ में पत्रिका का संपादन उन्हें देकर पौने दो वर्ष के लिए हिमालय चले गये, जहाँ उन्हें गुरुसत्ता से मार्गदर्शन लेना था, तपोवन नंदनवन में ऋषियों से साक्षात्कार करना था तथा गंगोत्री में रहकर आर्ष ग्रन्थों का भाष्य करना था । तब तक वे गायत्री महाविद्या पर विश्वकोश स्तर की अपनी रचना गायत्री महाविज्ञान के तीन खण्ड लिख चुके थे, जिसके अब तक प्राय: पैंतीस संस्करण छप चुके हैं । हिमालय से लौटते ही उनमें महत्वपूर्ण निधि के रूप में वेद, उपनिषद्, स्मृति, आरण्यक, ब्राह्मण, योगवाशिष्ठ, मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान जैसे ग्रन्थों को प्रकाशित कर देव संस्कृति की मूल थाती को पुनर्जीवन दिया । परमवंदनीया माताजी ने उन्हीं वेदों को पूज्यवर की इच्छानुसार १९९१-९२ में विज्ञान सम्मत आधार देकर पुनर्मुद्रित कराया एवं वे आज घर-घर में स्थापित हैं ।

युग निर्माण योजना व 'युग निर्माण सत्संकल्प' के रूप में मिशन का घोषणा पत्र १९६३ में प्रकाशित हुआ । तपोभूमि एक विश्वविद्यालय का रूप लेती चली गयी तथा अखण्ड ज्योति संस्थान एक तप:पूत की निवास स्थली बन गया, जहाँ रहकर उनने अपनी शेष तप साधना पूरी की थी, जहाँ से गायत्री परिवार का बीज डाला गया था । तपोभूमि में विभिन्न शिविरों का आयोजन किया जाता रहा, पूज्यवर स्वयं

छोटे-बड़े जन सम्मेलनों, यज्ञायोजनों के द्वारा विचार क्रांति की पृष्ठभूमि बनाते रहे, पूरे देश में १९७०-७१ में पाँच १००८ कुण्डी यज्ञ आयोजित हुए। स्थायी रूप से विदाई लेते हुए एक विराट सम्मेलन (जून १९७१) में परिजनों में विशेष कार्य भार सौंप, परम वंदनीया माताजी को शांतिकुंज हरिद्वार में अखण्ड दीप के समक्ष तप हेतु छोड़ कर स्वयं हिमालय चले गये। एक वर्ष बाद वे गुरुसत्ता का संदेश लेकर लौटे एवं अपनी आगामी बीस वर्ष की क्रिया पद्धति बतायी। ऋषि परम्परा का बीजारोपण, प्राण प्रत्यावर्तन संजीवनी व कल्प साधना सत्रों का मार्गदर्शन जैसे कार्य उनने शांतिकुंज में सम्पन्न किए।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थापना अपनी हिमालय की इस यात्रा से लौटने के बाद ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान की थी, जहाँ विज्ञान और अध्यात्म के समन्वयात्मक प्रतिपादनों पर शोध कर एक नये धर्म वैज्ञानिक धर्म के मूलभूत आधार रखे जाने थे। इस सम्बन्ध में पूज्यवर ने विराट् परिमाण में साहित्य लिखा, अदृश्य जगत के अनुसंधान से लेकर मानव की प्रसुप्त क्षमता के जागरण तक साधना से सिद्धि एवं दर्शन-विज्ञान के तर्क, तथ्य प्रमाण के आधार पर प्रस्तुतीकरण तक। इसके लिए एक विराट ग्रन्थागार बना व एक सुसज्जित प्रयोगशाला। वनौषधि उद्यान भी लगाया गया तथा जड़ी बूटी, यज्ञविज्ञान तथा मंत्र शक्ति पर प्रयोग हेतु साधकों पर परीक्षण प्रचुर परिमाण में किये गये। निष्कर्षों ने प्रमाणित किया कि ध्यान साधना मंत्र चिकित्सा व यज्ञोपैथी एक विज्ञान सम्मत विधा है। गायत्री नगर क्रमशः एक तीर्थ, संजीवनी विद्या के प्रशिक्षण की एकेडमी का रूप लेता चला गया एवं जहाँ ९-९ दिन के साधना प्रधान, एक-एक माह के कार्यकर्त्ता निर्माण हेतु युग शिल्पी सत्र सम्पन्न होने लगे।

कार्यक्षेत्र में विस्तार हुआ। स्थान-स्थान पर शक्तिपीठें विनिर्मित हुईं जिनके निर्धारित क्रियाकलाप थे- सुसंस्कारिता, आस्तिकता संवर्धन एवं जन जागृति के केन्द्र बनना। ऐसे केन्द्र जो १९८० में बनना आरंभ हुए थे, प्रज्ञा संस्थान - शक्तिपीठ-प्रज्ञामण्डल-स्वाध्याय मंडल के रूप में पूरे देश व विश्व में फैलते चले गये। ७६ देशों में गायत्री परिवार की शाखाएँ फैल गयीं, ४६०० से अधिक भारत में निज के भवन वाले संस्थान विनिर्मित हो गये, वातावरण गायत्रीमय होता चला गया।

परमपूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्मीकरण में प्रवेश कर १९८५ में ही पाँच वर्ष के अंदर अपने सारे क्रिया कलापों को समेटने की घोषणा कर दी। इस बीच कठोर तप साधना कर मिलना-जुलना कम कर दिया तथा क्रमशः क्रिया कलाप परमवंदनीया माताजी को सौंप दिये। राष्ट्रीय एकता सम्मेलनों, विराट दीप यज्ञों के रूप में नूतन विधा को जन-जन को सौंप कर राष्ट्र देवता की कुण्डलिनी जगाने हेतु उनने अपने स्थूल शरीर छोड़ने व सूक्ष्म में समाने की, विराट से विराटतम होने की घोषणा कर गायत्री जयन्ती २ जून १९९० को महाप्रयाण किया। सारी शक्ति वे परमवंदनीया माताजी को दे गये व अपने व माताजी के बाद संघशक्ति की प्रतीक लाल मशाल को ही इष्ट आराध्य मानने का आदेश देकर ब्रह्मबीज से विकसित ब्रह्मकमल की सुवास को देव संस्कृति दिग्विजय अभियान के रूप में आरंभ करने का माताजी को निर्देश दे गये।

एक विराट श्रद्धांजलि समारोह व शपथ समारोह जो हरिद्वार में सम्पन्न हुए, में लाखों व्यक्तियों ने अपना समय समाज के नव निर्माण, मनुष्य में देवत्व के उदय व धरती पर स्वर्ग लाने का गुरु सत्ता का नारा साकार करने के निमित्त देने की घोषणा की। परमवंदनीया माताजी द्वारा भारतीय-संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने, गायत्री रूपी संजीवनी घर-घर पहुँचाने के लिए पूज्यवर द्वारा आरम्भ किये गये युगसंधि महापुरश्चरण की प्रथम व द्वितीय पूर्णाहुति तक विराट अश्वमेघ महायज्ञों की घोषणा की गयी। वातावरण के परिशोधन, सूक्ष्मजगत के नव निर्माण एवं सांस्कृतिक व वैचारिक क्रांति के निमित्त सौर ऊर्जा के दोहन द्वारा विशिष्ट प्रयोगों के माध्यम से विशिष्ट मंत्राहुतियों द्वारा सम्पन्न किये गये इन अश्वमेधों ने सारी विश्ववसुधा को गायत्री व यज्ञमय, वासंती उल्लास से भर दिया। स्वयं परमवंदनीया माताजी ने अपनी पूर्व घोषणानुसार चार वर्ष तक परिजनों का मार्गदर्शन कर सोलह यज्ञों का संचालन स्थूल शरीर से किया व फिर भाद्रपद पूर्णिमा १९ सितम्बर १९९४ महालय श्राद्धारंभ वाली पुण्य वेला में अपने आराध्य के साथ एकाकार हो गयीं। उनके महाप्रयाण के बाद दोनों ही सत्ताओं के सूक्ष्म में एकाकार होने के बाद मिशन की गतिविधियाँ कई गुना बढ़ती चली गयीं एवं जयपुर के प्रथम अश्वमेघ यज्ञ (नवम्बर ९२) से छब्बीसवें अश्वमेध यज्ञ शिकागो (यू. एस. ए. जुलाई ९५) तक प्रज्ञावतार का प्रत्यक्ष रूप सबको दीखने लगा है।

गुरुसत्ता के आदेशानुसार सतयुग के आगमन तक १०८ महायज्ञ देवसंस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु संपन्न होने हैं। युग संधि महापुरश्चरण की अंतिम पूर्णाहुति उसी के बाद होगी। प्रथम पूर्णाहुति नवम्बर १९९५ में कार्त्तिक पूर्णिमा के अवसर पर युगपुरुष पूज्यवर की जन्मभूमि आँवलखेड़ा में मनायी जा रही है। उनके द्वारा लिखे गये समग्र साहित्य के वाङ्मय का जो सत्तर खण्डों में फैला है, विमोचन भी यहीं सम्पन्न हो रहा है। विनम्रता एवं ब्राह्मणत्व की कसौटी पर खरे उतरने वाले वरिष्ठ प्रज्ञापुत्र ही उनके उत्तराधिकारी कहे जायेंगे, यह गुरुसत्ता का उद्घोष था एवं इस क्षेत्र में बढ़ चढ़कर आदर्शवादी प्रतिस्पर्धा करने वाले अनेकानेक परिजन अब उनके स्वप्नों को साकार करने आगे आ रहे हैं। 'हम बदलेंगे-युग बदलेंगे' का उद्घोष दिग-दिगन्त तक फैल रहा है एवं इक्कीसवीं सदी-उज्ज्वल भविष्य, सतयुग की वापसी का स्वप्न साकार होता चला जा रहा है, यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

❑❑❑

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य का जीवनदर्शन : समग्र वाङ्मय

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने जीवन भर जो अपनी लेखनी से लिखा, औरों को प्रेरित कर उनसे सृजनात्मक लेखन करवाया, पुस्तकों-पत्रिकाओं में जो प्रकाशित हुआ, समय-समय पर उनने अमृतवाणी के माध्यम से जो विचारों की अभिव्यक्ति की, विचारसार व सूक्तियाँ जो वे लिख गये या अनायास कभी कह गये तथा पत्रों के माध्यम से जो अंतरंग स्पर्श जन-जन को दिया, वह समग्र इस वाङ्मय के खण्डों में है । जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

१. युगद्रष्टा का जीवन-दर्शन
समग्र वाङ्मय का परिचय
२. जीवन देवता की साधना-आराधना
३. उपासना-समर्पण योग
४. साधना पद्धतियों का ज्ञान और विज्ञान
५. साधना से सिद्धि-१
६. साधना से सिद्धि-२
७. प्रसुप्ति से जाग्रति की ओर
८. ईश्वर कौन है, कहाँ है, कैसा है ?
९. गायत्री महाविद्या का तत्वदर्शन
१०. गायत्री साधना का गुह्य विवेचन
११. गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार
१२. गायत्री की दैनिक एवं विशिष्ट अनुष्ठान-परक साधनाएँ
१३. गायत्री की पंचकोशी साधना एवं उपलब्धियाँ
१४. गायत्री साधना की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि
१५. सावित्री, कुण्डलिनी एवं तंत्र
१६. मरणोत्तर जीवन : तथ्य एवं सत्य
१७. प्राणशक्ति : एक दिव्य विभूति
१८. चमत्कारी विशेषताओं से भरा मानवी मस्तिष्क
१९. शब्द ब्रह्म-नाद ब्रह्म
२०. व्यक्तित्व विकास हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ
२१. अपरिमित संभावनाओं का आगार मानवी व्यक्तित्व
२२. चेतन, अचेतन एवं सुपर चेतन मन
२३. विज्ञान और अध्यात्म परस्पर पूरक
२४. भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म
२५. यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान
२६. यज्ञ : एक समग्र उपचार प्रक्रिया
२७. युग-परिवर्तन कैसे और कब ?
२८. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-१
२९. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-२
(सतयुग की वापसी)
३०. मर्यादा पुरुषोत्तम राम
३१. संस्कृति-संजीवनी श्रीमद्भागवत एवं गीता
३२. रामायण की प्रगतिशील प्रेरणाएँ
३३. षोडश संस्कार विवेचन
३४. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व
३५. समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान
३६. धर्मचक्र प्रवर्त्तन एवं लोकमानस का शिक्षण
३७. तीर्थ सेवन : क्यों और कैसे ?
३८. प्रज्ञोपनिषद्
३९. नीरोग जीवन के महत्त्वपूर्ण सूत्र
४०. चिकित्सा उपचार के विविध आयाम
४१. जीवेम् शरदः शतम्
४२. चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य
४३. हमारी संस्कृति : इतिहास के कीर्ति स्तम्भ
४४. मरकर भी अमर हो गये जो
४५. सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक : सेवाधर्म के उपासक
४६. भव्य समाज का अभिनव निर्माण
४७. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता
४८. समाज का मेरुदण्ड सशक्त परिवार तंत्र
४९. शिक्षा एवं विद्या
५०. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-१
५१. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-२
५२. विश्व वसुधा जिनकी सदा ऋणी रहेगी
५३. धर्मतत्त्व का दर्शन व मर्म
५४. मनुष्य में देवत्व का उदय
५५. दृश्य जगत् की अदृश्य पहेलियाँ
५६. ईश्वर विश्वास और उसकी फलश्रुतियाँ
५७. मनस्विता प्रखरता और तेजस्विता
५८. आत्मोत्कर्ष का आधार- ज्ञान
५९. प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा
६०. विवाहोन्माद : समस्या और समाधान
६१. गृहस्थ : एक तपोवन
६२. इक्कीसवीं सदी : नारी सदी
६३. हमारी भावी पीढ़ी और उसका नवनिर्माण
६४. राष्ट्र समर्थ और सशक्त कैसे बने ?
६५. सामाजिक, नैतिक एवं बौद्धिक क्रान्ति कैसे ?
६६. युग निर्माण योजना-दर्शन, स्वरूप व कार्यक्रम
६७. प्रेरणाप्रद दृष्टान्त
६८. पूज्यवर की अमृतवाणी (भाग एक)
६९. विचारसार एवं सूक्तियाँ (प्रथम खण्ड)
७०. विचारसार एवं सूक्तियाँ (द्वितीय खण्ड)

वाङ्मय के आगे प्रकाशित होने वाले ३८ खण्ड निम्न विषयों पर होंगे--

७१. मनोविकारों की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि
७२. तनाव के कारण एवं उनके निवारण के उपाय
७३. चिन्तन का विधेयात्मक-निषेधात्मक स्वरूप
७४. पुरुषार्थ और मानवी जिजीविषा
७५. संकल्प बल का अनूठा प्रभाव
७६. बाल-विकास के विविध सोपान
७७. बाल मनोविज्ञान का सही उपयोग
७८. पारिवारिकता में सुसंस्कारों का योगदान
७९. पारिवारिक पंचशील और परिवार-निर्माण
८०. व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया
८१. विचार-विज्ञान का महत्त्व
८२. सामाजिक समस्याएँ और उनका समाधान
८३. समाज-निर्माण के विभिन्न चरण
८४. सामाजिक जीवन में सद्गुणों की भूमिका
८५. नर-नारी की सामान्य समस्याएँ और उनका समाधान
८६. नारी जागृति की बाधाएँ एवं उनके निराकरण के उपाय
८७. पारिवारिक जीवन: एक तप-साधना
८८. दाम्पत्य जीवन के संयुक्त दायित्व
८९. नीति-विज्ञान और नैतिकता
९०. कृषि, व्यवसाय और उद्योग की उन्नति के आधार
९१. पूज्य गुरुदेव के स्फुट विचार
९२. पूज्यवर की अमृतवाणी-२
९३. पूज्य गुरुदेव की दिव्य अनुभूतियाँ
९४. पूज्य गुरुदेव के लिखे स्मरणीय पत्र
९५. तंत्र महाविज्ञान विवेचन
९६. मंत्र महाविज्ञान विवेचन
९७. महापुरुषों के प्रेरक जीवन-प्रसंग
९८. प्रेरणाप्रद कथा एवं गाथाएँ
९९. हृदयस्पर्शी विविध कथाएँ
१००. शान्तिकुंज का प्रज्ञा अभियान
१०१. युग निर्माण मिशन का क्रमिक इतिहास
१०२. वेद-सार-चिन्तन
१०३. पुराण-शोध-सार
१०४. उपनिषद् और आरण्यकों की दार्शनिक विषयवस्तु
१०५. काव्य-गीत-मंजूषा
१०६. मिशन के रचनात्मक कार्यक्रमों का क्रमिक इतिहास
१०७. मिशन की लोक-व्यवहार संहिता
१०८. गुरुदेव की अपने आत्मीय जनों से अपनी बातें

Complete Work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org